CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

5.1

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिद्धान्त की आलोचना—मूलप्रवृत्ति और सहज-क्रिया—मूलप्रवृत्ति और सहज-क्रिया में अन्तर—मूलप्रवृत्तियों और आदतों में अन्तर—मूलप्रवृत्ति और बुद्धि का सम्बन्ध—मूलप्रवृत्तियाँ और उद्वेग।

—सुझाव, अनुकरण तथा सहानुभूति 127–139
(Suggestion, Imitation and Sympathy)
सुझाव का अर्थ—सुझाव की प्रक्रिया—सुझाव के स्वरूप—सुझावों का वर्गीकरण—सुझावग्राह्यता—सुझावग्राह्यता का वर्गीकरण—अनुकरण—अनुकरण का वर्गीकरण—सहानुभूति—सहानुभूति मूलप्रवृत्ति नहीं है।

—उद्वेग तथा स्थायीभाव 140–151
(Emotions and Sentiments)
उद्वेग का अर्थ—भाव—भाव तथा उद्वेग में अन्तर—परोपकारी उद्वेग—उद्वेग के सिद्धान्त—चित्तवृत्ति—स्थायीभाव—स्थायीभाव का वर्गीकरण—स्थायीभाव वादिता—स्थायीभाव का विकास—स्थायीभाव तथा चित्तवृत्ति—स्थायीभाव और उद्वेग—स्थायीभाव और संस्कृति—स्वभाव का स्थायीभाव।

1—चालक 152–154
(Drives)
चालक का अर्थ—चालकों के प्रकार—प्राणीशास्त्रीय—मनोवैज्ञानिक चालक—उद्दीपन।

2—मूलप्रवृत्तियों का सामाजिक जीवन में स्थान 155–169
(Place of Instincts in Social Life)
मूलप्रवृत्तियों के अनुयायियों के सम्प्रदाय—सामाजिक व्यवहार का मूलाधार, एक मूलप्रवृत्ति—सामाजिक जीवन में अनुकरण का महत्त्व—सामाजिक जीवन में सुझाव का महत्त्व—सामाजिक जीवन में सहानुभूति का महत्त्व।

13—विवेक और संकल्प का व्यक्तियों एवं समाज में कार्य 170–182
(Functions of Reason and Will in Individuals and Society)
विवेक की धारणा—विवेक का अर्थ—विवेचन (निर्णय) का अर्थ—इच्छा—संकल्प—ज्ञानात्मक व क्रियात्मक शक्तियों का विकास—संकल्प का अर्थ—विवेक तथा संकल्प का व्यक्तियों के जीवन में कार्य—विवेक तथा संकल्प का समाज में कार्य—विवेक और मनोभाव।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

V.I.G. 1990

14—संप्रेरणा 183–206
(Motivation)
संप्रेरणा का अर्थ—उत्तेजना और संप्रेरणा में अन्तर—संप्रेरणा और मानव व्यवहार—संप्रेरणाओं के प्रकार—संप्रेरणाएँ—सामाजीकृत जैविकीय चालक—सामान्य सामाजिक संप्रेरणाएँ—व्यक्तिगत सामाजिक संप्रेणाएँ—संप्रेरणाओं की सापेक्षिक शक्ति—संप्रेरणा सम्बन्धी कुछ सिद्धान्त।

15—मानव व्यवहार की गतिशीलता 207–208
(Dynamics of Human Behaviour)

तृतीय खण्ड

प्रक्रियाएँ और व्यक्तित्व
(Processes and Personality)

16—सामाजिक प्रत्यक्षीकरण 209–227
(Social Perception)
प्रत्यक्षीकरण का अर्थ—प्रत्यक्षीकरण और गत अनुभव—प्रत्यक्षीकरण के दो प्रमुख निश्चायक—प्रत्यक्षीकरणीय संगठन के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त—विपर्यय—विभ्रम—प्रत्यक्षीकरण और सामाजिक अन्तः-क्रिया—प्रत्यक्षीकरण और व्यक्तित्व का विकास—सामाजिक प्रत्यक्षीकरण।

17—सामाजिक अन्तःक्रिया 228–250
(Social Interaction)
सामाजिक अन्तःक्रिया । अर्थ—सामाजिक अन्तःक्रिया के प्रकार—सामाजिक उत्तेजना- ाजिक अन्तःक्रिया के स्वरूप—सामाजिक प्रक्रियाएँ—प्रतिस्पर्धा—प्र पर्धा और कार्यक्षमता—प्रतिस्पर्धा और आधुनिक समाज—सम्पाद्धि स्थिति और प्रतिस्पर्धा—प्रतिद्वन्द्विता—प्रतिस्पर्धा का मनोविज्ञ न—संघर्ष—अप्रत्यक्ष तथा प्रत्यक्ष संघर्ष—संघर्ष का समाजशास्त्री महत्त्व—सहयोग—व्यवस्थान—आत्मसात्—आत्मसात् और व्यव -सामाजिक अन्तःक्रिया के यन्त्र।

18—भाषा 251–258
(Language)
भाषा का महत्त्व—शब्दों की शक्ति—चिह्न और प्रतीक—मनुष्य का शारीरिक ढाँचा और भाषा—भाषा के तत्त्व—शक्ति में भाषा का विकास—भाषा, व्यक्ति और संस्कृति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

19—सामाजिक अभिवृत्तियाँ एवं अभिवृत्तियों का माप 259–290
(Social Attitudes and Attitude Measurement)

अभिवृत्ति का अर्थ–अभिवृत्ति और विश्वास–अभिवृत्ति और स्थायी-भाव–अभिवृत्ति और लक्षण–अभिवृत्ति और संप्रेरणा–अभिवृत्ति और निर्णय–अभिवृत्ति तथा अन्य आन्तरिक कारक–अभिवृत्तियों की विशेषताएँ–अभिवृत्तियाँ और सामाजिक अभिवृत्तियाँ–अभिवृत्तियों का विकास–मनुष्य का सामाजीकरण उसकी अभिवृत्तियों के द्वारा प्रदर्शित–अभिवृत्तियों में परिवर्तन-अभिवृत्तियों का माप –अभिवृत्तियों के माप में कठिनाइयाँ–अभिवृत्ति-माप की प्रणालियाँ–अभिवृत्ति मापक पैमाने–अभिवृत्ति मापक पैमानों के प्रकार–अभिवृत्ति मापक पैमानों की सीमाएँ।

20—मानव सीखना 291–318
(Human Learning)

सीखने का अर्थ–सीखना और परिपक्वता–व्यवहार की इकाइयां–आदत परिवार–मानव सीखने का कारक–सीखने की प्रतिक्रिया के महत्त्वपूर्ण अंग–सीखने की क्रिया के सम्बन्ध में प्रमुख सिद्धान्त।

21—सामाजीकरण 319–335
(Socialisation)

मनुष्य समाज से पृथक–समाज हमें मानव बनाता है–सामाज़ीकरण का अर्थ–सामाजीकरण और सीखना–सामाजीकरण और परिपक्वता–सामाजीकरण के माध्यम–सामाजीकरण के कारक––सामाजीकरण के सिद्धान्त–सामाजीकरण की व्यक्तित्व के विकास में भूमिका।

22—स्थिति और कार्य 336–348
(Status and Role)

स्थिति का अर्थ–स्थिति कानून में–सामाजिक स्थिति–स्थिति या पद–स्थित्ति, समाज और व्यक्ति–स्थिति, प्रत्येक समाज एवं समूह में–स्थिति और आत्म-परिभाषा–स्थिति के प्रकार–स्थिति और कार्य–कार्य की परिभाषाएँ–कार्य पारस्परिक–कार्य समूह–कार्यों के कुछ पक्ष–प्रतिष्ठा–व्यक्ति के मनोविज्ञान की अभिवृत्तियों और व्यक्तित्व के विकास में स्थिति और कार्य का महत्त्व।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

V.I.O.1990

चतुर्थ खण्ड
व्यक्तित्व और सामाजिक सम्बन्ध
(Personality and Social Relations)

23—व्यक्तित्व 349–374
(Personality)
'व्यक्तित्व' शब्द की व्युत्पत्ति—व्यक्तित्व क्या 'नहीं' है ?—व्यक्तित्व क्या है ?—व्यक्तित्व की परिभाषाएँ—व्यक्तित्व के आधार अथवा व्यक्तित्व के मुख्य निश्चायक—दैहिक ढाँचा—व्यक्तित्व का प्राणीशास्त्रीय सिद्धान्त—व्यक्तित्व का प्राणीशास्त्रीय आधार—मनोवैज्ञानिक ढाँचा—सामाजिक ढाँचा—परिपक्व व्यक्तित्व—व्यक्तित्व के प्रकार।

24—आत्म की उत्पत्ति एवं विकास 375–395
(Rise and Development of Self)
आत्म क्या है ?—'अहं' और आत्म में अन्तर—आत्म की उत्पत्ति एवं विकास—सामाजिक क्रिया यां अन्तःक्रिया—सामाजिक क्रिया की प्रकृति—तादात्म्य एवं आशा के प्रतिमान—अन्तःक्रिया में आत्म की उत्पत्ति—क्रिया तथा अभिवृत्तियों के सम्बन्ध में कार्य—'मैं' और 'मुझे' का सिद्धान्त—आत्म के विकास के सम्बन्ध में मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्त—इड, ईगो और सुपर ईगो—विकासक्रम के स्तर—आत्म का विकास—आत्म के विकास को प्रभावित करने वाले तत्त्व।

25—व्यक्तित्व तथा संस्कृति 396–417
(Personality and Culture)
संस्कृति का अर्थ—व्यक्तित्व और संस्कृति—मौलिक व्यक्तित्व ढाँचे के कुछ उदाहरण—संस्कृति और व्यक्तित्व—व्यक्तित्व के सांस्कृतिक कारक—संस्कृति और व्यक्तित्व के कुछ उदाहरण—व्यक्तित्व संस्कृति के प्रातीतिक पक्ष के रूप में।

पंचम खण्ड
व्यक्ति और समाज
(Individual and Society)

26—व्यक्ति और समाज 418–430
(Individual and Society)
एकांगी दृष्टकोण—व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध—मानव की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समाज पर विचित्र प्रकार की आश्रितता—समाज व्यक्तियों पर आश्रित—व्यक्ति और समाज एक-दूसरे पर आश्रित—समाज की सीमाएँ।

षष्टम खण्ड

मानव समूह और समूह प्रमाप
(Human Groups and Group Norms)

27—मानव समूह 431–447
(Human Group)
सामाजिक समूह का अर्थ—सामाजिक समूहों का वर्गीकरण—प्राथमिक और द्वैतीयक समूह—प्राथमिक समूह की परिभाषा—प्राथमिक समूहों की परिस्थितियाँ—प्राथमिक समूह का मनोवैज्ञानिक आधार—प्राथमिक समूह से लाभ-द्वैतीयक समूह—प्राथमिक और द्वैतीयक समूह, दो विपरीत आदर्श—प्राथमिक और द्वैतीयक समूहों में अन्तर।

28—सामाजिक प्रमाप 448–465
(Social Norms)
'सामाजिक प्रमाप' और 'समूह प्रमाप'—सामाजिक प्रमाप के तत्त्व—सामाजिक प्रमाप और वैयक्तिक व्यवहार—परम्परा (traditions)—प्रथा अथवा लोकाचार (customs)—प्रथा और कानून—रूढ़ियाँ (mores)—टेबू तथा सामाजिक नियन्त्रण।

29—सामाजिक नियन्त्रण 466–484
(Social Control)
सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ एवं परिभाषाएँ—आत्म-नियन्त्रण और सामाजिक नियन्त्रण—सामाजीकरण और सामाजिक नियन्त्रण—सामाजिक नियन्त्रण के उद्देश्य—सामाजिक नियन्त्रण के प्रकार—सामाजिक नियन्त्रण की पद्धतियाँ, साधन एवं माध्यम—सामाजिक नियन्त्रण की पद्धतियाँ—सामाजिक नियन्त्रण के साधन—सामाजिक नियन्त्रण के माध्यम—बल और सामाजिक व्यवस्था—सामाजिक बल के कार्य एवं सीमाएँ—परिवार और सामाजिक नियन्त्रण—सामाजिक नियन्त्रण में राज्य, सरकार और विधि—जनमत और सामाजिक नियन्त्रण—प्रचार और सामाजिक नियन्त्रण—शिक्षा और सामाजिक नियन्त्रण—सामाजिक नियन्त्रण में लेखक एवं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कलाकार–प्राथमिक समूहों में सामाजिक नियन्त्रण–द्वैतीयक समूहों में सामाजिक नियन्त्रण।

30—संस्कार और प्रतीक 485–498
(Rituals and Symbols)

संस्कार–संस्कारों की प्रकृति–संस्कार के कार्य का महत्त्व–प्रतीक–प्रतीकवाद–प्रतीकों की विशेषताएँ–प्रतीकों के प्रकार–प्रतीक के भेद–समाज और प्रतीक–धार्मिक जीवन में प्रतीक–भारतीय संस्कृति में प्रतीक।

31—किंवदन्तियाँ एवं पौराणिक कथाएँ 499–504
(Myths and Legends)

किंवदन्तियाँ एवं पौराणिक कथाएँ–किंवदन्तियां एवं विधियाँ (rites)–किंवदन्तियाँ और पौराणिक कथाओं की उत्पत्ति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण–किंवदन्तियों और पौराणिक कथाओं का सामाजिक और सांस्कृतिक महत्त्व।

32—फैशन 505–520
(Fashion)

फैशन और स्टाइल–फैशन का अर्थ एवं परिभाषाएँ–फैशन और प्रथा–फैशन की प्रकृति या विशेषताएँ–फैशन का मनोविज्ञान–वस्त्रों का मनोविज्ञान–फैशन के प्रसार के नियम–भारतीय स्त्रियाँ और वस्त्र–मानव व्यवहार के नियन्त्रण में फैशन की भूमिका–फैशन और संस्कृति–फैशन, धुन तथा झक (craze)।

33—नेतृत्व 521–560
(Leadership)

नेतृत्व का अर्थ–प्रभुत्व (dominance) और नेतृत्व–नेतृत्व की परिभाषाएँ–नेतृत्व की विशेषताएँ–प्रभुत्व के प्रकार–नेतृत्व के निश्चायक कारक–नेतृत्व के लक्षण–नेताओं के सम्बन्ध में सामान्य अनुमान–व्यक्तित्व के प्रकार और सामाजिक कार्य–नेतृत्व के प्रकार और पारिवारिक पृष्ठभूमि–नेतृत्व के प्रकार–बोगार्डस के अनुसार नेता के प्रकार–सर मार्टिन कान्वे के अनुसार नेताओं के प्रकार–नेतृत्व की प्रविधियाँ–नेता के कार्य–नेता और अनुयायियों का सम्बन्ध–नेतृत्व के सिद्धान्त।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सप्तम खण्ड

समूह व्यवहार एवं सामूहिक व्यवहार (Group Behaviour and Collective Behaviour)

34—भीड़ व्यवहार (Crowd Behaviour) 561–585

भीड़ का अर्थ–भीड़ की परिभाषाएँ–भीड़ के आवश्यक तत्त्व–अनौपचारिक भीड़–क्रियाशील भीड़–क्रियाशील भीड़ का मनोविज्ञान–क्रियाशील भीड़ की मानसिक विशेषताएँ–भीड़ और आक्रामक अथवा हिंसक भीड़ में अन्तर–भीड़ तथा समाज में अन्तर–भीड़ व्यवहार की व्याख्याएँ–श्रोतागण–श्रोतागण की विशेषताएँ–श्रोतागण का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण–भीड़ और श्रोतागण में अन्तर।

35—सामाजिक मन या समूह मन (Social Mind or Group Mind) 586–616

सामाजिक समूहों की दो विचारधाराएँ–सामाजिक मन की धारणा–सामाजिक मन सम्बन्धी विभिन्न सिद्धान्त–सामाजिक मन सम्बन्धी सिद्धान्त के तीन वर्ग–सामाजिक मन सम्बन्धी सिद्धान्तों का सारांश–क्या वास्तव में समूह मन का अस्तित्व है ?

36—सामान्य तथा संकल्प की अवधारणा (Conception of General Will) 617–637

रूसो का सामान्य संकल्प का सिद्धान्त–मैकडूगल और नोविकोव का मत–प्रोफेसर मैकेन्जी द्वारा सामान्य संकल्प का स्पष्टीकरण–बार्थ का सिद्धान्त–वुण्ट का सिद्धान्त–प्रोफेसर बोसांके का सामान्य संकल्पों का सिद्धान्त–विभिन्न मतों के आधार पर निष्कर्ष।

37—जनता तथा जनमत (Public and Public Opinion) 638–663

जनता का अर्थ–जनता और भीड़ में भेद–जनमत का अर्थ–जनमत की विशेषताएँ–जनमत और एकमत–जनमत और अभिवृत्ति–जनमत और स्थायी भाव–जनमत और सामान्य संकल्प–जनमत निर्माण की प्रक्रिया–प्राथमिक समाज में जनमत का निर्माण–समूह समाज में जनमत का निर्माण–प्रजातान्त्रिक और सर्वाधिकारवादी राज्य में जनमत का निर्माण–जनमत प्रजातन्त्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की एक प्रक्रिया के रूप में जनमत का प्रजातन्त्र में महत्त्व–प्रबुद्ध जनमत के निर्माण के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ–जनमत को प्रभावित करने वाले कारक–जनमत-निर्माण के साधन अथवा माध्यम–जनमत का माप।

38—प्रचार और प्रेस 664–693
(Propaganda and The Press)
प्रचार का अर्थ–सुझाव, प्रचार की क्रियाशीलता की कुंजी है–प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार या मनोविज्ञान–सुझाव, प्रचार का मूलभूत मनोवैज्ञानिक आधार–प्रचार, ज्ञानात्मक पुनर्संगठन की प्रक्रिया–अभिप्रेरणा, प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार–प्रचार के सिद्धान्त–प्रचार के प्रकार–प्रचार से बचाना–आधुनिक या औद्योगिक समाज में प्रचार के साधन–प्रचार और शिक्षा–प्रचार के प्रकार्य और महत्त्व–प्रचार एक अच्छा शब्द है, पर बुरा बन गया है–प्रचार की सीमाएँ–प्रेस और समाचार-पत्र–समाचार पत्र–प्रेस की स्वतन्त्रता–भारत में समाचार-पत्र।

अष्टम खण्ड
सामाजिक व्याधिकी का मनोविज्ञान
(Psychology of Social Pathology)

39—पूर्वधारणा 694–703
(Prejudice)
पूर्वधारणा का शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषा–पूर्वधारणा की विशेषताएँ–पूर्वधारणाओं के निर्माण में मनोवैज्ञानिक तत्त्व–पूर्वधारणा के प्रकार–पूर्वधारणा के कारण–क्या पूर्वधारणा जन्मजात प्रवृत्ति है?–पूर्वधारणा के परिणाम–निष्कर्ष।

40—रूढ़युक्तियाँ 704–709
(Stereotypes)
रूढ़युक्तियों की परिभाषा–रूढ़युक्ति और अभिवृत्ति–रूढ़युक्ति और पूर्वधारणा–रूढ़युक्तियाँ और वास्तविकता–रूढ़युक्तियों का निर्माण–समाज में रूढ़युक्तियों का लाभ–रूढ़ियुक्तियों का प्रयोगात्मक अध्ययन।

41—जनप्रवाद (अफवाह) 710–719
(Rumour)
जनप्रवाद का अर्थ–जनप्रवाद की परिभाषाएँ–जनप्रवाद की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशेषताएं–जनप्रवाद को फैलाने वाली परिस्थितियाँ–जनप्रवाद का वर्गीकरण–जनप्रवाद के निर्धारक तत्त्व–जनप्रवाद के प्रसार करने के साधन–जनप्रवाद के प्रसार में अवरोध ।

नवम खण्ड

व्यावहारिक मनोविज्ञान (Applied Psychology)

42—शीत युद्ध (Cold War) 720–725

शीत युद्ध का अर्थ–मनोवैज्ञानिक युद्ध के उद्देश्य–शीत युद्ध के कारण–शीत युद्ध की प्रविधियाँ–अन्तरराष्ट्रीय तनावों को कम करने में मनोवैज्ञानिकों की भूमिका ।

43—युद्ध का मनोविज्ञान (The Psychology of War) 726–747

युद्ध का चक्र एवं प्रक्रिया–युद्ध का अर्थ–युद्ध के स्वरूप–आधुनिक युद्ध की विशेषताएँ–आधुनिक युद्ध की सीमाएँ–आधुनिक युद्ध एवं सामाजिक प्रकरण–युद्ध के कारण–युद्ध के परिणाम–युद्ध का समाजशास्त्रीय महत्त्व ।

44—क्रान्ति का मनोविज्ञान (Psychology of Revolution) 748–762

क्रान्ति का अर्थ–हिंसा और क्रान्ति–क्रान्ति के कारक–क्रान्ति के कारण–क्रान्ति की पूर्व-दशाएँ–क्रान्ति का काल-क्रान्ति के दुष्परिणाम ।

दशम खण्ड

सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Factors in Social and Cultural Growth)

45—सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास के मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Factors in Social and Cultural Growth) 763–769

सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के मनोवैज्ञानिक कारक–प्रेरणा–मूलप्रवृत्तियाँ–संवेग–प्रत्यक्षीकरण–चिन्तन–बुद्धि–अनुकरण–मनोवृत्ति ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एकादश खण्ड

सामाजिक विघटन और सामाजिक तनाव
(Social Disintegration and Social Tensions)

46—सामाजिक विघटन 770–785
(Social Disintegration)

सामाजिक संगठन का अर्थ–सामाजिक संगठन की प्रकृति–सामाजिक संगठन और सामाजिक ढाँचा–सामाजिक संगठन के आवश्यक तत्त्व–सामाजिक विघटन का अर्थ–सामाजिक विघटन एक प्रक्रिया है–सामाजिक विघटन के लक्षण–सामाजिक विघटन के कारण–सामाजिक विघटन के परिणाम–सामाजिक विघटन के प्रमुख रूप।

47—समूह तनाव एवं साम्प्रदायिक तनाव 786–791
(Group Tensions and Communal Tensions)

समूह तनाव–श्रमिक तनाव–युवक तनाव–साम्प्रदायिक तनाव।

48—विचारवादी संघर्ष 792–797
(Ideological Conflicts)

अराजकतावाद–समाजवाद–साम्यवाद–गांधीवाद या सर्वोदय–पूंजीवाद–'वादी' संघर्ष।

49—सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक तनाव 798–80
(Social Change and Social Tensions)

सामाजिक परिवर्तन का अर्थ–परिभाषाएँ–सामाजिक परिवर्तन के कारक–सामाजिक परिवर्तन की सार्वभौमिकता–सामाजिक परिवर्तन के परिणाम–सामाजिक परिवर्तन के अवरोध–सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक तनाव।

50—भारतीय सामाजिक जीवन की कुछ वर्तमान समस्याएँ और उनको कम करने में सामाजिक वैज्ञानिकों की भूमिका 808–814
(Some Current Problems of Indian Social Life and Role of Social Scientists in their Reduction)

साम्प्रदायिकता–भाषावाद–प्रान्तवाद–क्षेत्रवाद–युवक क्षोभ–भ्रष्टाचार–राष्ट्रीय एकता की समस्या–समस्याएँ और सामाजिक वैज्ञानिकों की भूमिका।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

1

सामाजिक मनोविज्ञान का अर्थ एवं विषय-क्षेत्र

(Meaning and Scope of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक सम्बन्धों का मनोविज्ञान है। सामाजिक मनोविज्ञान को कभी-कभी मनोवैज्ञानिक समाजशास्त्र (Psychological Sociology) भी कहते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान एक ओर तो सामान्य मनोविज्ञान (General Psychology) की शाखा के रूप में विकसित हुआ और दूसरी ओर समाजशास्त्र की शाखा के रूप में। मनोविज्ञान व्यक्ति का अध्ययन करता है और समाजशास्त्र समाज का।

व्यक्ति और समाज एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। एक समय था जबकि कुछ लोग व्यक्ति को समाज से पृथक करके तथा कुछ लोग समाज को व्यक्ति से पृथक करके अध्ययन करना चाहते थे। परन्तु दोनों ही बातें सम्भव नहीं थीं, क्योंकि न तो व्यक्ति ही समाज से पृथक पाया जाता है और न समाज को ही व्यक्तियों से पृथक किया जा सकता है। दोनों एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। किम्बाल यंग ने इस विषय में लिखा है, "ऐतिहासिक दृष्टि से कुछ सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने यह मत बनाया कि एक समूह, जैसी कोई वस्तु नहीं है, सिर्फ व्यक्ति ही होते हैं। यह दृष्टिकोण उस समय का परिणाम है जबकि 'समूह मन', 'सामूहिक चेतना', इसी प्रकार के अन्य विषयों के सम्बन्ध में अत्यधिक वाद-विवाद होता था।"[1]

सामाजिक मनोविज्ञान की कुछ परिभाषाएँ
(Some Definitions of Social Psychology)

विद्वानों ने सामाजिक मनोविज्ञान की अनेक प्रकार से परिभाषाएँ की हैं। पाठकों की सहायता के लिए पहले तो हम कुछ निश्चित वर्गीकरण के अनुसार परिभाषाओं को प्रस्तुत करेंगे और बाद में कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषाओं का सन्दर्भ सहित विश्लेषण करेंगे। परिभाषाओं को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया गया है :

(अ) सामान्य
(ब) मानवीय अन्तःक्रिया का अध्ययन
(स) व्यक्ति का सामाजिक दशा में अध्ययन
(द) समाज में व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन

---

[1] Kimball Young, *A Handbook of Social Psychology* (1960), p. 3.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामान्य (General)

सामाजिक विज्ञानों ने एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार, "सामाजिक मनोविज्ञान को मनोविज्ञान की एक शाखा के रूप में व्यक्ति के प्रत्युत्तरों—जो समाज या सामूहिक स्थितियों से उत्पन्न उत्तेजनाओं से अनुकूलित होते हैं, का अध्ययन है; समाजशास्त्र की शाखा के रूप में या सामूहिक मनोविज्ञान के रूप में सामूहिक प्रत्युत्तरों या समूहों या अन्य झुण्डों के व्यवहार का अध्ययन है।"[1]

मानवीय अन्तःक्रियाओं का अध्ययन (Study of Human Interactions)

किम्बाल यंग की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान मनुष्यों के अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाओं के अध्ययन से सम्बन्धित है।"[2]

रॉस की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान, व्यक्तियों में उनके सम्बन्धों के परिणामस्वरूप जो मनोवैज्ञानिक धाराएँ उत्पन्न होती हैं, का अध्ययन करता है। यह उन कारणों को खोजने एवं ज्ञात करने का प्रयत्न करता है, जिनसे भावों में समरूपता तथा क्रियाओं में विश्वास या प्रण-शक्ति, व्यक्तियों के अन्तःक्रिया के कारण होती है।"[3]

सामाजिक मनोविज्ञान, किम्बाल यंग के अनुसार मनुष्यों के अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाएँ वे प्रक्रियाएँ हैं जो मनुष्यों के एक-दूसरे पर प्रभाव से उत्पन्न होती हैं। इसका अभिप्राय यह है कि जो भी व्यवहार मानव का होता है, उसका अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान करता है क्योंकि मानव सदैव अन्तःक्रिया करता रहता है और उसकी कोई भी क्रिया अन्तःक्रिया से रहित नहीं है। मानव दूसरे-दूसरे व्यक्तियों के सन्दर्भ में क्रिया करता है, इसलिए कहा जा सकता है कि मानव व्यवहार अन्तःक्रिया का ही प्रभाव है। (आगे किम्बाल यंग की परिभाषा की और अधिक विस्तृत व्याख्या की गई है।)

कुप्पुस्वामी की परिभाषा :

"इस प्रकार हम सामाजिक मनोविज्ञान की व्याख्या ज्ञान की उस शाखा से

---

1 L.L. Bernard in Encyclopaedia of Social Sciences, *Social Psychology*, p. 151, Vol. XIV.

2 "Social Psychology is concerned with the study of the interactional processes of human beings." Kimball Young, *A Handbook of Social Psychology*, (1960), p. 1.

3 "Social Psychology studies the psychic planes and currents that come into existence among men in consequence of their association. It seeks to understand and account for those uniformities in feeling, belief or volition and hence in action which are due to the interaction of human being, *i.e.*, to social causes." E.A. Ross, *Social Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करते हैं, जो सामाजिक परिस्थितियों में व्यक्तियों के एक-दूसरे के साथ अन्तःक्रियाओं से उत्पन्न सम्बन्धों का अध्ययन करता है।"[1]

वारेन की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान की वह शाखा है जो व्यक्ति के व्यवहार की खोज उस हद तक करता है जितना कि उसका व्यवहार अन्य व्यक्तियों को उत्तेजित करता है या उनके व्यवहारों के प्रति स्वयं प्रतिक्रिया होती है—की खोज करता है, और जो व्यक्ति की चेतना का उस हद तक वर्णन करता है जहाँ तक कि वह सामाजिक विषयों और सामाजिक प्रतिक्रियाओं की चेतना होती है।"[2]

वारेन की परिभाषा से भी स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के उस व्यवहार का अध्ययन करता है जो अन्य व्यक्तियों के व्यवहार को प्रभावित करता है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि सामाजिक मनोविज्ञान अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है।

व्यक्ति का सामाजिक दशा में अध्ययन (Study of Individual in Social Situation)

स्प्रॉट की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान उन मार्गों से सम्बन्धित है जिनमें एक व्यक्ति के आचरण एवं व्यवस्था अन्य व्यक्तियों के आचरण एवं व्यवस्थाओं से प्रभावित होते हैं।"[3]

शेरिफ की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार एवं अनुभवों का सामाजिक उत्तेजक स्थिति के सम्बन्ध में वैज्ञानिक अध्ययन है।"[4]

---

1 "We may, therefore, define Social Psychology as the branch of knowledge which studies the relationships arising out of the interaction of individuals with each other in social situations." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology* (1961), p. 5.

2 "Social Psychology is that branch of psychology which investigates the behaviour of the individual in so far as his behaviour stimulates other individuals, or is itself a reaction to their behaviour and which describes the consciousness of the individual in so far as it is consciousness of social objects and social reactions." Howard C. Warren (ed), *Dictionary of Psychology* (1934), p. 254.

3 Social psychology is concerned with the ways in which a person's conduct and dispositions are influenced by the conduct and dispositions of other people." W.J.H. Sprott, *Social Psychology* (1952), p. 1.

4 "Social Psychology is the scientific study of the experience and behaviour of individuals in relation to social stimulus situations." Muzafer Sherif and Carolyn W. Sherif, *An Outline of Social Psychology* (1956), p. 4.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति का व्यवहार जब अन्य व्यक्तियों के व्यवहार से प्रभावित होता है, तो उसे सामाजिक उत्तेजक स्थिति में माना जाता है। हर व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के लिए उत्तेजक है और उसे प्रभावित करता है। मानव का प्रत्येक व्यवहार किसी न किसी सामाजिक उत्तेजना का परिणाम होता है। इससे स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान मानव के हर व्यवहार का अध्ययन करता है क्योंकि मानव का हर व्यवहार सामाजिक होता है। शेरिफ ने इसी ओर संकेत किया है।

आल्पोर्ट की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के अन्य व्यक्तियों के सम्बन्धों में एवं सामाजिक दशाओं में व्यवहार का अध्ययन है।"[1]

आल्पोर्ट ने सामाजिक मनोविज्ञान की अति सरल परिभाषा की है। उसके अनुसार सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के उन व्यवहारों का अध्ययन है जो अन्य व्यक्तियों अथवा सामाजिक दशाओं के सन्दर्भ में होता है। मानव का व्यवहार सदैव अन्य व्यक्तियों या सामाजिक दशाओं में ही होता है क्योंकि व्यक्ति शून्य (vacuum) में कोई व्यवहार नहीं करता है। इस प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के हर व्यवहार का अध्ययन है।

क्लाइनबर्ग की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति का अन्य व्यक्तियों से सम्बन्धित व्यवहार का एक वैज्ञानिक अध्ययन है।"[2]

समाज में व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन (Study of Individual's Behaviour in Society)

क्रच और क्रचफील्ड की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान दूसरी तरफ समाज में व्यक्तियों के व्यवहार के प्रत्येक पहलू से सम्बन्धित है। सामाजिक मनोविज्ञान की इस प्रकार विस्तृत व्याख्या समाज में व्यक्तियों के व्यवहार से की जा सकती है।"[3]

क्रच और क्रचफील्ड ने स्पष्ट रूप से लिखा है कि सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के व्यवहार के प्रत्येक पहलू से सम्बन्धित है क्योंकि व्यक्ति का प्रत्येक व्यवहार

---

1 "Social Psychology is the study of behaviour of individuals in their relations to other individuals and in social situations." F.H. Allport, *Social Psychology*.

2 "Social Psychology is the scientific study of the behaviour of the individual as related to other individuals." Otto Klineberg, *Social Psychology*, p. 1.

3 "Social Psychology, on the other hand, is concerned with every aspect of the individual's behaviour in society. Social Psychology may, therefore, be broadly defined as the science of the behaviour of the individual in society." David Krech and Richard S. Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology* (1948), p. 7.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समाज में ही होता है और प्रत्येक व्यवहार सामाजिक होता है। इसीलिए उसने लिखा है कि सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के व्यवहार का अध्ययन करता है। यह सामाजिक मनोविज्ञान की अति विस्तृत परिभाषा है।

अकोलकर की परिभाषा :

"सामाजिक मनोविज्ञान समाज में व्यक्ति का अध्ययन है।"[1]

अकोलकर ने सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा अति संक्षेप में की है परन्तु यह परिभाषा अति स्पष्ट है। व्यक्ति जो भी व्यवहार करता है वह समाज के सन्दर्भ में करता है। इसलिए उसने लिखा है कि सामाजिक मनोविज्ञान समाज में व्यक्ति का अध्ययन है। व्यक्ति कभी, अपवाद छोड़कर, सदैव समाज में ही रहता है और व्यवहार करता है।

कुप्पुस्वामी की परिभाषा :

"संक्षेप में यह, समाज में व्यक्ति के विचारों, भावनाओं एवं अभिनयों का विवेचन है।"[2]

फ्रीमैन की परिभाषा :

"समाज मनोविज्ञान व्यक्ति के उन व्यवहारों तथा अनुभवों की व्याख्या करता है जो समाज के अन्य व्यक्तियों के व्यवहार द्वारा प्रभावित एवं प्रेरित होते हैं और समाज के अन्य व्यक्तियों के व्यवहार पर अपना प्रभाव भी डालते हैं।"[3]

फ्रीमैन ने भी सामाजिक मनोविज्ञान का अध्ययन-क्षेत्र व्यक्तियों के व्यवहारों को माना है, ये व्यवहार अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों से प्रभावित होते हैं। हर व्यक्ति अपने व्यवहार से अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों को प्रभावित करता है और अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों से प्रभावित होता है। सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के इन्हीं व्यवहारों का अध्ययन करता है।

सामाजिक अन्तःक्रिया का अर्थ
(Concept of Social Interaction)

किम्बाल यंग तथा अन्य सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने अन्तःक्रिया पर विशेष बल दिया है। हमें अन्तःक्रिया का अर्थ स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए। अन्त क्रियाएँ वे पारस्परिक क्रियाएँ होती हैं जिनके द्वारा व्यक्ति या समूह एक-दूसरे से परस्पर प्रभावित होते हैं। अब हम इसकी कुछ परिभाषाएँ प्रस्तुत करते हैं।

किम्बाल यंग की परिभाषा :

"विस्तृत रूप से परिभाषित अन्तःक्रिया उस तथ्य की संकेत करती है जो एक

---

1 "Social Psychology is the study of man in society." V.V. Akolkar, *Social Psychology* (1960), p. 1.

2 "In brief, it deals with thinking, feeling and acting of the individual in society." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology* (1961), p. 5.

3 See Ellis Freeman, *Social Psychology* (1936), p. 3.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति का प्रत्युत्तर—संकेत, शब्द या सकल शारीरिक क्रिया—दूसरे को उत्तेजना देता है और वह अपनी बारी पर प्रथम को प्रत्युत्तर देता है। मौलिक नमूना सदैव होने वाले पारस्परिक उत्तेजना और प्रत्युत्तर सम्बन्ध अ ⇌ व का युग्म है।"[1]

ग्रीन की परिभाषा :

"सामाजिक अन्तःक्रिया से उन परस्पर प्रभावों को समझा जाता है जो व्यक्तियों और समूहों द्वारा उनकी समस्याओं को सुलझाने के प्रयत्नों एवं उद्देश्यों तक पहुँचने में एक-दूसरे पर डाले जाते हैं।"

गिस्ट की परिभाषा :

"सामाजिक अन्तःक्रिया (वह) परस्पर प्रभाव होता है जो मनुष्य परस्पर उत्तेजना एवं प्रत्युत्तर के द्वारा एक-दूसरे पर डालते हैं।"[2]

डासन और गेटिस की परिभाषा :

"सामाजिक अन्तःक्रिया वह प्रक्रिया होती है जिसके द्वारा मनुष्य एक-दूसरे के मस्तिष्क में अन्तर्विष्ट होते हैं।"[3]

अन्तःक्रिया को एक उदाहरण के द्वारा सरलता से समझा जा सकता है। मान लीजिए संसार खेल का मैदान है। इस संसार में रहने वाले व्यक्ति खिलाड़ी हैं। खेल के नियम सामाजिक नियम हैं। जिन स्थितियों (positions) में वे खेलते हैं वह उनकी सामाजिक स्थिति (social status) है। उस विशिष्ट स्थिति में जिस प्रकार के कार्यों (games) की उनसे आशा की जाती है वे उनके कार्य (roles) हैं। प्रत्येक खिलाड़ी अपनी-अपनी स्थिति (position) में खेल प्रारम्भ होने से पूर्व खड़ा है। सीटी बजी और खेल प्रारम्भ हुआ। खेल प्रारम्भ होने के उपरान्त एक खिलाड़ी फुटबॉल लेकर आगे बढ़ता है, दूसरी ओर के तमाम खिलाड़ी सतर्क हो जाते हैं। केन्द्रीय खिलाड़ी प्रतिद्वन्द्वी से भिड़ जाता है। गोली सतर्कता की स्थिति में खड़ा हो जाता है और फुटबॉल आते ही उसे अपने हाथ में लेकर ऐसी ठोकर लगाता है कि वह केन्द्र से आगे बढ़ जाती है। अब तमाम खिलाड़ी अपनी-अपनी स्थितियों के

---

1 "Broadly defined, interaction refers to the fact that the response—gesture, word or gross bodily movement—of one individual is the stimulus to another, who, in turn, responds to the first. The basic model is the dyad A B in a recurring condition of inter-stimulation and response contact." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* (1960), p. 1.

2 "Social interaction is the reciprocal influences human beings exert on each other through interstimulation and response." Noel P. Gist, *Fundamentals of Sociology*, ed. by Eldridge and others, p. 363.

3 "Social interaction is a process whereby men interpenetrate the minds of each other." Dawson and Gettys, *An Introduction to Sociology*, p. 296.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुसार आगे बढ़ने लगते हैं, और सबकी दिशा परिवर्तित होती जाती है, इत्यादि इत्यादि। यह भी सामाजिक अन्त:क्रिया कहलाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक खिलाड़ी एक-दूसरे की स्थिति और कार्यों को प्रभावित करता है और अन्य खिलाड़ियों के कार्यों से प्रभावित होता रहता है। यह प्रभाव परस्पर मानसिक जागरूकता के फलस्वरूप होता है। मानव समाज में यह प्रक्रिया सदैव होती रहती है। प्रत्येक व्यक्ति की कुछ न कुछ सामाजिक स्थिति है और उसे उससे सम्बन्धित कार्य करने पड़ते हैं। इन कार्यों की पूर्ति करने के प्रयत्न में एक-दूसरे के सम्पर्क में आते हैं और इस सामाजिक सम्बन्ध के फलस्वरूप एक-दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। परस्पर प्रभावित करते रहने की प्रक्रिया को सामाजिक अन्त:क्रिया कहते हैं।

सामाजिक अन्त:क्रिया की मौलिक दशाएं (Basic Conditions of Social Interaction)

सामाजिक अन्त:क्रिया प्रारम्भ होने के लिए निम्न दो दशाओं का होना अत्यन्त आवश्यक है :

(अ) सामाजिक सम्बन्ध, और (ब) संचार।

(अ) **सामाजिक सम्बन्ध** (Social Contact)—सामाजिक सम्बन्ध के बिना यह क्रिया प्रारम्भ ही नहीं हो सकती; क्योंकि उसके बिना परस्पर प्रभाव पड़ नहीं सकता। किसी न किसी प्रकार सामाजिक सम्बन्ध अवश्य स्थापित होना चाहिए। गिलिन और गिलिन ने लिखा है, "इसलिए, सामाजिक सम्बन्ध अन्त:क्रिया का प्रथम चरण होता है।"[1] सामाजिक सम्बन्ध प्राथमिक या द्वैतीयक किसी भी प्रकार के हो सकते हैं। ये मित्रता या शत्रुता दोनों को ही जन्म देते हैं। जब कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से विचारों का आदान-प्रदान करने लगता है तो सामाजिक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। चाहे व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित हो या अप्रत्यक्ष रूप से अथवा किसी अन्य वस्तु के द्वारा ही सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करने में सफल हुआ हो।

(ब) **संचार** (Communication)—सामाजिक सम्बन्ध किसी न किसी प्रकार के ज्ञानेन्द्रियों के पारस्परिक सम्बन्ध के बिना कभी भी स्थापित नहीं हो सकता। कोई न कोई संचार का माध्यम प्रत्येक सामाजिक सम्बन्ध में पाया जाता है। शेरिफ तथा शेरिफ ने उचित ही लिखा है, "व्यक्तियों के बीच अन्त:क्रिया प्रमुख रूप से संचार पर ही आधारित है। इसलिए जब कभी भी हम मानव अन्त:क्रिया का हवाला देते हैं तो आवश्यक रूप से संचार अन्तर्निहित होता है।"[2]

संचार के माध्यम द्वारा सामाजिक अन्य:क्रिया कार्य करती है। संचार के साधन कुछ भी हो सकते हैं। प्रमुख संचार के साधन—भाषा, लिपि, सांकेतिक भाषा (gestures), टेलीफोन, प्रतीक (symbols), रेडियो इत्यादि हैं।

---

1 "Social contact, therefore, is the first phase of interaction." Gillin and Gillin, *Cultural Sociology* (1954), p. 492.

2 Sheriff and Sheriff, *An Introduction to Social Psychology* (1956), p. 11.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समाज और सामाजिक अन्तःक्रिया

सामाजिक अन्तःक्रिया समाज के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विलसन और कोल्ब ने लिखा है, "संस्कृति और समाज दोनों ही सामाजिक अन्तःक्रिया के परिणाम हैं।"[1] लम्ले ने भी इसका महत्त्व बताते हुए लिखा है, "और सम्बन्ध एवं अन्तःक्रिया हमारे जीवन के आधार-स्तम्भ हैं। वास्तव में वे वही हैं जो हम सामाजिक (शब्द) से समझते हैं। वे समाज के लिए उसी प्रकार हैं जैसे, ईंटें और चूना इमारतों के लिए होते हैं।"[2] बीसंज और बीसंज ने भी लिखा है, "समाज की जड़ें सामाजिक अन्तःक्रिया में गड़ी हुई हैं।"[3] इस प्रकार समाज का जन्म ही सामाजिक अन्तःक्रिया के कारण हुआ है और इसके बिना वह जीवित नहीं रह सकता, समाज सामाजिक सम्बंधों का जाल है। सामाजिक सम्बन्धों का जाल तभी निर्मित हो सकता है जबकि सामाजिक अन्तःक्रिया होती है। प्रत्येक क्षण समाज में विभिन्न प्रकार की सामाजिक अन्तःक्रिया रहती है, इसके अनेक स्वरूप होते हैं।

सामाजिक अन्तःक्रिया के स्वरूप : सामाजिक प्रक्रियाएँ

सामाजिक अन्तःक्रिया के विभिन्न स्वरूप होते हैं। अन्तःक्रिया के विभिन्न स्वरूपों को सामाजिक प्रक्रियाएँ (social processes) कहते हैं। सामाजिक प्रक्रियाओं की संख्या अगणित है। मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं की संख्या भी अनेक समाजशास्त्रियों के अनुसार भिन्न-भिन्न है। ये समस्त सामाजिक प्रक्रियाएँ—प्रतिस्पर्धा (competition), संघर्ष (conflict), सहयोग (co-operation), व्यवस्थान (accommodation) और आत्मसात् (assimilation) मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं के अन्तर्गत आ जाती हैं।

अन्तःक्रिया सम्बन्धों के मौलिक प्रतिमान

किम्बाल यंग ने लिखा है कि सामाजिक मनोविज्ञान तीन प्रकार के मौलिक अन्तःक्रिया सम्बन्धों में रुचि रखता है। ये तीन मौलिक अन्तःक्रिया सम्बन्ध निम्न हैं:

(अ) व्यक्ति से व्यक्ति (person-to-person)

(ब) व्यक्ति से समूह (person-to-group)

(स) समूह से समूह (group-to-group)

(अ) व्यक्ति से व्यक्ति (Person-to-Person)—व्यक्ति से व्यक्ति के सम्बन्ध को अन्तर वैयक्तिक (interpersonal) सम्बन्ध कहते हैं। इस प्रकार के

---

1 "Both culture and society are the products of social interaction." L. Wilson and William L. Kolb, *Sociological Analysis*, Harcourt (1949), p. 681.

2 "And contacts and interactions are the foundation stone of our life, indeed, they are what we mean by social; they are to society what bricks and mortar are to building." Lumley, *Principles of Sociology*, p. 98.

3 "Society is rooted in social interaction........" Biesanz and Biesanz, *Modern Society* (1954), p. 88.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ट होते हैं। इसमें प्रत्यक्ष सम्बन्ध पाये जाते हैं। जहाँ मित्रता होती है वहाँ पर व्यक्ति एक-दूसरे को प्रथम नाम या उपनाम से पुकारते हैं।

(ब) व्यक्ति से समूह (Person-to-Group)—इस प्रकार के सम्बन्ध में व्यक्ति को समूह में नाम या चिह्न से सम्बोधित किया जाता है। उदाहरण के लिए, वर्मा, शर्मा, गुप्त, सिंह इत्यादि। ये सम्बन्ध अधिक चेतन होते हैं।

(स) समूह से समूह (Group-to-Group)—तीसरे प्रकार के सम्बन्ध एक समूह और दूसरे समूह के बीच होते हैं। समूह के अनेक विभाजन किए जा सकते हैं। समूह का एक महत्त्वपूर्ण विभाजन प्राथमिक और द्वैतीयक में किया गया है। दूसरा विभाजन अन्तर समूह (In group) और वाह्य समूह के रूप में भी किया गया है।[1] अन्तर समूह में व्यक्ति अपनापन, एकता, लगाव एवं सदस्यता की भावना का अनुभव करता है। वाह्य समूह (Out group) के प्रति व्यक्ति उपेक्षा, परिवर्जन तथा शत्रुता की भावना रखता है।

किम्बाल यंग की परिभाषा का विश्लेषण

किम्बाल यंग ने अपने द्वितीय संशोधित संस्करण में सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा करते हुये लिखा है, "सामाजिक मनोविज्ञान मनुष्यों की अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाओं के अध्ययन से सम्बन्धित है।'[2] अपने प्रथम संस्करण में उन्होंने लिखा था, "सामाजिक मनोविज्ञान एक-दूसरे के साथ अन्तःक्रिया करते हुए व्यक्तियों एवं व्यक्ति के विचारों, भावनाओं, उद्वेगों और आदतों पर इस अन्तःक्रिया के प्रभावों के सन्दर्भ में होने वाले प्रभावों का अध्ययन है।"[3]

हमने सामाजिक अन्तःक्रिया के अर्थ पर विस्तार में प्रकाश डाला है। उसी के संदर्भ में समझने का प्रयत्न कीजिये कि अन्तःक्रिया का क्या अर्थ होता है। अन्तः-क्रिया के द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के मस्तिष्क में प्रविष्ट होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे को समझने का प्रयत्न करता है, स्वयं दूसरों को प्रभावित करता है और दूसरों से प्रभावित होता है। इसी प्रक्रिया को अन्तःक्रिया कहते हैं। जहाँ कहीं भी दो व्यक्ति होते हैं वे एक-दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। ऐसा कोई भी क्षण नहीं होता जब व्यक्ति दूसरों को प्रभावित नहीं करता या स्वयं दूसरों से प्रभावित नहीं होता। प्रत्येक क्षण हम एक-दूसरे को प्रत्युत्तर देते

---

1 समूहों के विषय में 'समूह' का अध्याय पढ़िए। अधिक विस्तार में पढ़ने के लिए लेखक की पुस्तक **'समाजशास्त्र की रूप रेखा'** पढ़िए।

2 "Social Psychology is concerned with the study of the interactional processes of human beings." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* (1960), Second Edition Revised.

3 "Social Psychology is the study of persons in their interactions with one another and with reference to the effects of this interplay upon the individual's thoughts, feelings, emotions and habits." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, First Edition, p. 1.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहते हैं। यह प्रत्युत्तर संकेत शब्द या सकल शारीरिक क्रिया के द्वारा होते हैं। किम्बाल यंग ने अन्तःक्रिया को सदैव होने वाले मौलिक नमूने के रूप में निम्न प्रकार से व्यक्त किया है :

अ ⇌ ब

अ ⇌ ब का यह युग्म (Dyad) सदैव होने वाले पारस्परिक उत्तेजना और प्रत्युत्तर सम्बन्धों का मौलिक नमूना है। इसका अर्थ यही है कि प्रत्येक व्यक्ति दूसरों को प्रभावित करता रहता है और स्वयं दूसरों से प्रभावित होता रहता है। अब अधिकांश मनोवैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार करते हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "यद्यपि हमारे क्षेत्र के उन लोगों के बीच जो प्रमुख रूप से मनोविज्ञान की प्रयोगशाला से बाहर आये हैं, व्यक्ति के रूप में व्यक्ति और उसके यन्त्रीकरण की प्रतिमाएँ अभी भी उनके मस्तिष्क पर प्रभाव डाल रही हैं; सामाजिक व्यवहार के किसी नमूने की इकाई के रूप में अ ⇌ ब अन्तःक्रियात्मक प्रतिमान अधिकाधिक स्वीकृत होता जा रहा है।'[1]

अन्तःक्रिया को हम पहले ही एक उदाहरण के द्वारा समझा चुके हैं। अन्तःक्रिया की मौलिक दशाएँ सामाजिक सम्बन्ध और संचार हैं। इनका भी विश्लेषण हम कर चुके हैं। समाज अन्तःक्रिया के अभाव में विकसित ही नहीं हो सकता। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान मानव अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है।

किम्बाल यंग ने अपने प्रथम संस्करण की परिभाषा में अन्तःक्रिया शब्द को विस्तृत रूप में प्रस्तुत किया था। व्यक्ति के विचारों, भावनाओं, उद्वेगों और आदतों पर दूसरे व्यक्तियों का प्रभाव पड़ता है और दूसरे व्यक्ति भी उनसे प्रभावित होते हैं। ऐसा तभी होता है जबकि व्यक्ति अन्तःक्रिया की स्थिति में होते हैं। मौलिक रूप से देखा जाय तो किम्बाल यंग की दोनों परिभाषाओं में कोई अन्तर नहीं है। सब क्रियाओं एवं प्रभावों को उन्होंने अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाओं के द्वारा व्यक्त किया है।

सामाजिक दशा का अर्थ
(Concept of Social Situation)

कुछ सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने सामाजिक दशा में व्यक्तियों के व्यवहार को सामाजिक मनोविज्ञान की विषय सामग्री बताया है। इनमें प्रमुख आल्पोर्ट (Allport), क्लाइनबर्ग (Klineberg), स्प्रॉट (Sprott) तथा शेरिफ (Sherif) हैं।

सामाजिक दशा का अर्थ भी अन्तःक्रिया की स्थिति से होता है। जब एक

---

1 "While the shades of individual *qua* individual and his mechanisms still lurk among those in our field who have come chiefly out of the laboratory of psychology, the recognition of the A B interactional pattern as the unit for any model of social behaviour is being more widely accepted." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* (1950), p. 6.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के साथ अन्तःक्रिया की स्थिति में होता है तो उस स्थिति को सामाजिक दशा (social situation) कहते हैं। स्प्रॉट ने सामाजिक दशा की परिभाषा करते हुए लिखा है, "सामाजिक दशा के द्वारा हम एक व्यक्ति का दूसरे एक या अधिक व्यक्तियों के साथ 'अन्तर्व्यवहार' को समझते हैं।"[1]

स्प्रॉट ने सामाजिक दशा पर अत्यधिक बल दिया है। उसने इस विषय में कहा है, "सामाजिक दशाओं का यह विवेचन जिसमें स्थिति में सामाजिक महत्त्वपूर्ण अन्तर कार्य करते हैं; अभिवृद्ध स्वयं सामाजिक दशा की केन्द्रीयकृत और प्रभावपूर्ण स्थिति लाने के लिए रहा है। यह वास्तव में सामाजिक मनोविज्ञान का प्रारम्भ एवं अन्त है। 'समाज', 'समूह' और 'सांस्कृतिक प्रतिमान' निर्मित वस्तुएँ हैं—सामाजिक दशा एक मुख्य अर्थ में वास्तव में स्थित है।"[2]

सामाजिक दशा उस दशा को कहते हैं जब एक व्यक्ति किसी उत्तेजना को प्राप्त करता है और उससे प्रभावित होता है। यह उत्तेजना किसी भी वस्तु से प्राप्त हो सकती है।

सामाजिक का अर्थ (Concept of Social)

'सामाजिक' शब्द से हमारा अभिप्राय उन व्यक्तियों से होता है जो समूह में अधिक व्यक्तियों से मिलते-जुलते हैं। परन्तु इस अर्थ में यह प्रयोग उचित नहीं है। जो व्यक्ति समूह के अन्य व्यक्तियों से अधिक मिलता-जुलता है उसे मिलनसार (sociable) कहते हैं और जो अधिक नहीं मिलता-जुलता उसे अमिलनसार (unsociable) कहते हैं।

'सामाजिक' शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयोग होता है। अरस्तू ने लिखा है, 'मनुष्य एक सामाजिक पशु है।' 'सामाजिक' शब्द का अर्थ है अपने समूह के प्रति जागरूकता (consciousness)। गिडिंग्स ने, इसी जागरूकता को जाति के प्रति जागरूकता (consciousness of kind) कहकर सम्बोधित किया है। जो व्यक्ति अपने समाज के प्रति जागरूक रहते हैं अर्थात् उनके सम्बन्धों को सुलभ एवं सरल बनाते हैं और उसके हितों की रक्षा करते हैं, उन्हें हम सामाजिक व्यक्ति कहते हैं। जो व्यक्ति समाज के हितों की ओर जागरूक नहीं होते, उन्हें असामाजिक व्यक्ति कहते हैं। जो व्यक्ति समाज के सम्बन्धों को सुलभ एवं सरल बनाने के स्थान पर अविश्वास करने की चेष्टा करते हैं, एक समाज के हितों को हानि पहुँचाते हैं, उन्हें समाज विरोधी (anti-social) व्यक्ति कहते हैं।

इसको एक उदाहरण द्वारा भली प्रकार समझाया जा सकता है। एक डाकू लोगों से बड़े प्रेम से मिलता है। उसका काम लोगों को लूटना और सामाजिक नियमों

---

1. "By a social situation is meant what might be called the 'inter-behaviour' of one human being with one or more other human beings." W. J. H. Sprott, *Social Psychology*, pp. 1-2.
2. W. J. H. Sprott, *Social Psychology* p. 5.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को तोड़ना है। एक वैज्ञानिक मानव-हित के लिए अपनी अनुसंधानशाला में दिन औ रात व्यस्त रहता है और किसी से नहीं मिलता। डाकू मिलनसार अवश्य है, पर समा विरोधी है; परन्तु वैज्ञानिक अमिलनसार होने पर भी सामाजिक है।

मानसिक (Psychical) दशा : सामाजिक दशा का प्रमुख तत्त्व

भौतिक दशा के विपरीत सामाजिक दशा में मानसिक दशा का पाया जाना अत्यन्त आवश्यक है। भौतिक दशा में वस्तुओं को एक-दूसरे का ज्ञान नहीं होता परन्तु सामाजिक दशा में एक-दूसरे का ज्ञान होना परमावश्यक होता है। सामाजि दशा का यही तत्त्व मानसिक दशा कहलाता है। भौतिक दशा कभी भी एक-दूसरे जागरूकता के द्वारा निश्चित नहीं होती। सामाजिक दशा कभी भी इस जागरूक के अभाव में हो ही नहीं सकती। जो दशा एक-दूसरे की जागरूकता के आधार निश्चित होती है, उसे हम सामाजिक दशा कहते हैं। पिता और पुत्र की दशा, प्रे और प्रेमिका की दशा, स्वामी और दास की दशा, उम्मीदवार और मतदाता की दश ये सभी सामाजिक दशाएँ हैं; क्योंकि इनमें एक-दूसरे के प्रति जागरूकता पायी जाती है। इन्हीं सामाजिक दशाओं को हम आर्थिक दशा, राजनैतिक दशा, व्यक्तिगत दशा प्रेमपूर्ण दशा, अवैयक्तिक दशा, द्वेषपूर्ण दशा, इत्यादि कहते हैं। परन्तु यह सं स्मरण रखना चाहिये कि इन सबमें एक-दूसरे के प्रति जागरूकता पायी जाती है। आवश्यक नहीं है कि सामाजिक दशा सहयोगी ही हो, वह द्वेष एवं ईर्ष्या से पूर्ण हो सकती है। दो सेनाएँ आपस में युद्ध के लिए तत्पर हैं; उनकी दशा द्वेष एवं से परिपूर्ण है, परन्तु वे एक-दूसरे के प्रति अत्यन्त जागरूक हैं। इस जागरूकता होने के कारण ये दशाएँ सामाजिक कहलायेंगी। इसी कारण समाजशास्त्री दोनों प्रकार की दशाओं का अध्ययन करते हैं। जो मानव समाज को एक सूत्र में बांध अथवा पृथक करती हैं।

सामाजिक उत्तेजक दशाएँ (Social Stimulus Situations)

सामाजिक दशा के लिए मानसिक दशा आवश्यक है। इससे स्पष्ट है सामाजिक दशा का आधार अन्तःक्रिया है। शेरिफ ने सामाजिक उत्तेजक दशाओं उल्लेख किया है। सामाजिक उत्तेजक दशाएँ वे दशाएँ हैं जिन दशाओं से उत्ते उत्पन्न होती है और अन्तःक्रिया सम्भव हो पाती है। शेरिफ तथा शेरिफ ने सामा उत्तेजक दशाओं की परिभाषा करते हुए लिखा है: "सामाजिक उत्तेजक दशा व्यक्ति (व्यक्तियों एवं समूहों) और सामाजिक संस्कृति की पृष्ठभूमि के सम्मिलित हैं।"[1]

मनुष्य को अनेक वस्तुओं से उत्तेजना प्राप्त होती है।

सामाजिक उत्तेजक दशाओं के सन्दर्भ में समाज और संस्कृति शब्दों का प्र

1 "Social stimulus situations are composed of people (individ and groups) and items of the sociocultural setting." Sherif Sherif, *An Introduction to Social Psychology* (1956), p. 4.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है। वास्तव में अन्तःक्रिया संस्कृति के प्रत्येक तथ्य से उत्पन्न होती है। हम कह सकते हैं कि प्रत्येक वस्तु कोई न कोई उत्तेजना प्रदान करती है, जिसके फलस्वरूप अन्तःक्रिया होती है।

सामाजिक उत्तेजक दशाओं का वर्गीकरण (Classification of Social Stimulus Situations).

शेरिफ तथा शेरिफ ने सामाजिक उत्तेजक दशाओं का वर्गीकरण किया है, जो निम्न हैं :

1. **अन्य व्यक्ति** (Other people)
   (अ) अन्य व्यक्ति उत्तेजक के रूप में (Other individuals as stimuli)
   (ब) समूह उत्तेजक दशाओं के रूप में (Groups as stimulus situations)
2. **सांस्कृतिक तत्त्व** (Cultural products)
   (अ) भौतिक संस्कृति (Material culture)
   (ब) अभौतिक संस्कृति (Non-material culture)

इस वर्गीकरण के अन्तर्गत समस्त व्यक्ति, समूह, नियम, आचार-विचार, साहित्य, सामाजिक नियन्त्रण अर्थात् अभौतिक संस्कृति एवं भौतिक संस्कृति के समस्त तत्त्व आ जाते हैं। ये सभी उत्तेजक का कार्य करते हैं।

उपरोक्त विश्लेषण से सामाजिक दशा और सामाजिक उत्तेजक दशाओं का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार का सामाजिक दशा में अध्ययन करता है। यह परिभाषा भी अब स्पष्ट हो गयी होगी।

सामाजिक मनोविज्ञान का विषय-क्षेत्र
(Scope of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान समाज में व्यक्ति का अध्ययन है। इससे स्पष्ट है कि समाज मनोविज्ञान व्यक्ति के उन समस्त अनुभवों और व्यवहारों का अध्ययन करता है, जो व्यक्ति समाज में रहते हुए करता है। इस आधार से देखा जाय तो सामाजिक मनोविज्ञान एक अत्यन्त विस्तृत विज्ञान है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति के समस्त व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। फिर भी सुविधा की दृष्टि से विद्वानों ने इसका विषय-क्षेत्र निर्धारित करने का प्रयत्न किया है। अब हम सामाजिक मनोविज्ञान के विषय-क्षेत्र के विषय में कुछ मनोवैज्ञानिकों के मत प्रस्तुत करेंगे :

क्लाइनबर्ग के अनुसार[1]

क्लाइनबर्ग ने सामाजिक मनोविज्ञान के विषय-क्षेत्र का विवरण निम्न प्रकार किया है :

(1) **सामान्य और सामाजिक मनोविज्ञान की व्याख्या** (Interpretation

---

1. Otto Klineberg, *Social Psychology*, pp. 15-16.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

of General and Social Psychology)—सामाजिक मनोविज्ञान सामान्य मनो- विज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है। इसके परिणामस्वरूप उसे सामान्य मनोविज्ञान के कुछ प्रमुख सिद्धान्तों—जैसे प्रेरणा (motivation), संवेग (emotions), प्रत्य- ज्ञान (perception), स्मृति (memory) इत्यादि की व्याख्या करनी पड़ती है। कु सामाजिक मनोविज्ञान के भी सिद्धान्त हैं, जैसे अनुकरण, निर्देश, पूर्वधारणा इत्यादि इन सिद्धान्तों की भी व्याख्या की जाती है।

(2) **बालक के समाजीकरण, संस्कृति और व्यक्तित्व के विकास का अध्ययन** (Study of the Socialization of the Child, Culture and Development of the Personality)—सामाजिक मनोविज्ञान बालक के समाजीकरण का विशेष रू से अध्ययन करता है। बालक का विकास किस प्रकार होता है और उसका व्यक्तित्व किस प्रकार बनता है, महत्त्वपूर्ण विषय है। भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में व्यक्तित्व क विकास भिन्न-भिन्न प्रकार से होता है। बच्चा कैसे सीखता है? सामाजिक मनोविज्ञान में आजकल व्यक्तित्व के अध्ययन पर विशेष बल दिया जा रहा है। आजकल इ विषय पर भी विशेष रुचि ली जा रही है कि व्यक्तित्व के विकास पर संस्कृतियों ए उपसंस्कृतियों का क्या प्रभाव पड़ता है।

(3) **वैयक्तिक एवं सामूहिक भेद** (Individual and Group Diffe- rences)—दो व्यक्ति एक से नहीं होते। उनमें कुछ न कुछ भेद अवश्य पाये जाते हैं इसी प्रकार समूहों में भी भिन्नता पायी जाती है। सामाजिक मनोविज्ञान इन भिन्नताओं का भी अध्ययन करता है।

(4) **अभिरुचि, मत, विचारों के आदान-प्रदान, प्रचार की विवेचना** (Analysis of Attitude, Opinion, Communication and Propaganda)—सामाजिक मनोविज्ञान अभिरुचियों, मतों, विचारों के आदान-प्रदान, प्रचार इत्यादि का अध्ययन करता है। विभिन्न अभिरुचियों का विकास किन सामाजिक परिस्थितियों होता है और विशिष्ट सामाजिक परिस्थितियाँ किन अभिरुचियों को जन्म देती यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। जनता के मत किस प्रकार बनते हैं और किस प्रकार ब जा सकते हैं? प्रचार का क्या महत्त्व है? इन समस्याओं पर भी सामाजिक म विज्ञान विचार करता है।

(5) **सामाजिक अन्तःक्रिया, नेतृत्व, समूह गति-विज्ञान** (Social Inter- action, Leadership, Group Dynamics)—सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक अन्तःक्रियाओं, नेतृत्व एवं समूह गति-विज्ञान का भी अध्ययन करता है।

(6) **सामाजिक व्याधिकी** (Social Pathology)—सामाजिक मनोविज्ञान उन अवस्थाओं का भी अध्ययन करता है जिनमें व्यक्ति समाज के साथ अपना सामंजस्य नहीं कर पाता।

(7) **राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय राजनीति के सामाजिक कारण** (Causes of National and International Politics)—सामाजिक मनोविज्ञान राष्ट्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं अन्तरराष्ट्रीय राजनीति के सामाजिक कारणों का भी अध्ययन करता है। इसके अन्तर्गत युद्ध, शीत युद्ध, क्रान्ति इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

कैज और शैंक के अनुसार[1]

कैज और शैंक के अनुसार सामाजिक मनोविज्ञान निम्न तीन प्रकार की समस्याओं का अध्ययन करता है :

(1) **सामाजिक उत्तेजक और सामाजिक उत्तेजक दशाएँ** (Social Stimuli and Social Stimulus Conditions)—सामाजिक मनोविज्ञान उन सामाजिक उत्तेजकों का अध्ययन करता है जिनके कारण अन्तःक्रिया उत्पन्न होती है। इसके अन्तर्गत जानदार एवं बेजानदार दोनों प्रकार की वस्तुएँ आ जाती हैं। सामाजिक उत्तेजक दशाओं का विस्तृत विवरण हम पहले ही दे चुके हैं।

(2) **सामाजिक उत्तेजनाओं से उत्पन्न होने वाली मनुष्य की प्रतिक्रियाएँ और अनुभव** (Men's Reactions and Experiences Arising from Social Stimulation)—सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं और अनुभवों का भी अध्ययन करता है। व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करता है। दूसरे लोग उसके साथ कैसा व्यवहार करते हैं। समस्त सामाजिक प्रक्रियाओं का अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान करता है।

(3) **व्यक्ति पर सामाजिक पर्यावरण के दीर्घकालीन प्रभाव** (The Long-run Effects of Social Environment on Individual)—सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति पर सामाजिक पर्यावरण के प्रभाव का भी अध्ययन करता है। सामाजिक पर्यावरण के फलस्वरूप ही व्यक्ति का एक निश्चित व्यक्तित्व बनता है। सामाजिक पर्यावरण व्यक्ति पर अनेक प्रकार के प्रभाव डालता है।

राबर्ट फ्रमकिन के अनुसार

राबर्ट फ्रमकिन ने सामाजिक मनोविज्ञान के विषय-क्षेत्र का एक विस्तृत विश्लेषण किया है। उनके अनुसार सामाजिक मनोविज्ञान निम्न समस्याओं का अध्ययन करता है :

(1) **मनुष्य के विषय में एक परिपक्व विचारधारा का विकास** (The Development of a Mature Conception of Man)—अधिकांश मनुष्य के अध्ययन करने वालों ने मनुष्य का चित्र अंकित करने के स्थान पर उसका हास्यजनक चित्र ही बनाया है। उन्होंने मनुष्य का पूर्णरूप से कभी भी अध्ययन नहीं किया अपितु उसकी प्रमुख विशेषताओं का ही अपने-अपने दृष्टिकोण से अध्ययन किया है। इसका परिणाम यह हुआ है कि मनुष्य का पूर्ण चित्र नहीं प्रस्तुत हो सका है। सामाजिक मनोविज्ञान मनुष्य का हर दृष्टि से अध्ययन करता है।

(2) **समाजीकरण प्रक्रिया की गतिशीलता** (The Dynamics of the

1. Katz and Schank, *Social Psychology*, pp. 1-2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Socialization Process)—सामाजिक मनोविज्ञान समाजीकरण का विशेष रूप से अध्ययन करता है। समाज एक बालक को पशु से मनुष्य किस प्रकार बनाता है यह एक महत्त्वपूर्ण अध्ययन का विषय है। शिकागो स्कूल के जार्ज मीड ने इस सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला है। भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में समाजीकरण की भिन्न-भिन्न प्रक्रियाएँ होती हैं।

(3) **सामाजिक अन्तःक्रिया की गतिशीलता** (The Dynamics of Social Interaction)—सामाजिक अन्तःक्रिया का अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान विशेष रूप से करता है। सामाजिक अन्तःक्रिया के स्वरूपों को सामाजिक प्रक्रियाएँ कहते हैं। सामाजिक प्रक्रियाओं; जैसे—प्रतिस्पर्धा, संघर्ष, सहयोग, व्यवस्थान, आत्मसात् इत्यादि का विशेष रूप से अध्ययन किया जाता है।

(4) **संचार की गतिशीलता** (The Dynamics of Communication)—संचार का अध्ययन किया जाता है। भाषा, जनमत प्रचार इत्यादि का भी अध्ययन होता है।

(5) **सीखने-सिखाने की क्रिया की गतिशीलता** (The Dynamics of the Teaching-Learning Process)—सामाजिक मनोविज्ञान शिक्षण के सिद्धान्तों का भी अध्ययन करता है। वालर (Waller) और लेविन (Lewin) ने इस दिशा में विशेष कार्य किया है।

(6) **वैयक्तिक और सामूहिक अन्तरों का विश्लेषण** (The Analysis of Individual and Group Differences)—इसके अन्तर्गत उन भिन्नताओं का अध्ययन होता है जो व्यक्तियों के बीच और समूहों के बीच पाये जाते हैं।

(7) **सामाजिक व्याधिकी का अध्ययन** (The Study of Social Pathology)—इसके अन्तर्गत उन समस्याओं का अध्ययन किया जाता है जिनमें व्यक्ति अपना सामंजस्य नहीं कर पाता। वैयक्तिक विघटन के समस्त विषयों का अध्ययन किया जाता है।

(8) **पारिवारिक सामंजस्य की गतिशीलता** (The Dynamics of Family Adjustment)—पारिवारिक सामंजस्य की समस्याओं का भी अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान में किया जाता है।

(9) **पक्षपात का अध्ययन** (The Study of Prejudice)—सामाजिक मनोविज्ञान पक्षपात का भी अध्ययन करता है। पक्षपात किसी भी प्रकार का हो सकता है। प्रजाति पक्षपात का विशेष रूप से अभी तक अध्ययन हुआ है।

(10) **अन्तःवैयक्तिक प्रतिस्पर्धा का अध्ययन** (The Study of Interpersonal Competition)—सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के बीच पायी जाने वाली प्रतिस्पर्धा का भी अध्ययन करता है।

(11) **समूह के निर्माण और विकास का अध्ययन** (The Study of the Formation and Development of the Group)—सामाजिक मनोविज्ञान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समूह का निर्माण किस प्रकार होता है, किस प्रकार वह विकसित होता है और उसमें किस प्रकार के सम्बन्ध पाये जाते हैं—का भी गहन अध्ययन करता है।

(12) **सामाजिक प्रत्यक्षीकरण का अध्ययन** (The Study of Social Perception)—सामाजिक मनोविज्ञान ज्ञानात्मक (cognitive) कारकों का भी अध्ययन करता है। प्रत्यक्षीकरण किस प्रकार व्यक्ति को प्रभावित करता है यह एक महत्त्वपूर्ण विषय है।

(13) **नेता और अनुयायी सम्बन्ध की गतिशीलता** (The Dynamics of the Leader-Follower Relationship)—सामाजिक मनोविज्ञान नेता और अनुयायी के सम्बन्धों का भी अध्ययन करता है। सेना, उद्योग, सरकार, राजनीति तथा अनेक अन्य क्षेत्रों में नेता अनुयायी समस्या पायी जाती है। ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं जहाँ यह सम्बन्ध न पाया जाता हो।

प्रश्न

1. 'सामाजिक मनोविज्ञान' की व्याख्या कीजिए और सामाजिक विज्ञानों में इसकी स्थिति का वर्णन कीजिए। आप कहाँ तक यह सोचते हैं कि सामाजिक मनोविज्ञान मानव व्यवहार का एक समन्वयात्मक विज्ञान निर्मित करने में सहायता कर सकता है?

(Define 'Social Psychology' and describe its status in social sciences. How far do you think that social psychology can help in building up integrated science of human behaviour? Agra. M. A. Sociology, 1960; Agra, M. A. Alternative Course in Sociology, 1961)

2. "सामाजिक मनोविज्ञान एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया करते हुए, व्यक्तियों एवं व्यक्ति के विचारों, भावनाओं, उद्वेगों और आदतों पर इस अन्तःक्रिया के प्रभावों के सन्दर्भ में होने वाले प्रभावों का अध्ययन है।" (किम्बाल यंग) इस कथन की आलोचना कीजिए।

("Social Psychology is the study of persons in their interactions with one another and with reference to the effects of their interplay upon the individual's thoughts, feelings, emotions and habits." (Kimball Young). Discuss this statement critically. Agra, M. A. Sociology, 1953, 1967, 1970)

3. "सामाजिक मनोविज्ञान समूह स्थिति में व्यक्ति का अध्ययन है; परन्तु वहाँ कोई भी ऐसी कठोर विभेद की रेखा नहीं है जो सामान्य मनोविज्ञान को एक तरफ एवं समाजशास्त्र या मानवशास्त्र को दूसरी तरफ रखे।" (क्लाइनबर्ग) इस कथन की आलोचनात्मक व्याख्या करते हुए सामाजिक मनोविज्ञान का विषय क्षेत्र बताइए।

("Social Psychology is concerned with the individual in the group situation. There is however no strict line of demarcation from General Psychology on the one hand and Sociology or Anthropology on the other." (Klineberg). Examine this statement critically and bring out the scope of Social Psychology. Agra, M.A. Sociology, 1952)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

4. "सामाजिक मनोविज्ञान समाज में व्यक्ति के व्यवहार का विज्ञान है।" आलोचना कीजिए।

("Social Psychology is the science of the behaviour of the individual in society." Comment. Rajasthan, M. A. Sociology, 1960)

5. सामाजिक मनोविज्ञान की व्याख्या कीजिए एवं इसके विषय क्षेत्र की विवेचना कीजिए।

(Define Social Psychology and discuss its scope. Agra, M. A. Sociology, 1968)

6. "सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के व्यवहार का अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध एवं सामाजिक स्थिति में अध्ययन है।" (आल्पोर्ट) विवेचना कीजिए।

("Social Psychology is the study of behaviour of individuals in their relations to other individuals and in social situations." (Allport) Discuss. Agra, M. A. Sociology, 1969)

7. "सामाजिक मनोविज्ञान मनुष्यों के अन्तःक्रियात्मक प्रतिक्रियाओं के अध्ययन से सम्बन्धित है।" (किम्बाल यंग) इसकी विवेचना कीजिए।

("Social Psychology is concerned with the study of the interactional processes of human beings." (K. Young) Discuss.

8. सामाजिक मनोविज्ञान के अर्थ एवं विषय-क्षेत्र का पूर्णरूपेण विवेचन कीजिए।

(Discuss fully the meaning and scope of Social Psychology. Agra, M. A. Sociology, 1963)

9. स्पष्ट कीजिए कि किस प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान समाज में व्यक्ति के व्यवहार के प्रत्येक पक्ष से सम्बन्धित है।

(Show how Social Psychology is concerned with every aspect of the individual's behaviour in Society. M.A. Sociology, Agra, 1965)

10. सामाजिक विज्ञान की शाखा के रूप में सामाजिक मनोविज्ञान के विषय-क्षेत्र की विवेचना कीजिए।

(Discuss the scope of Social Psychology as a branch of Social Science. Agra, M.A. Sociology, Alternative Course, 1967)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

2

सामाजिक मनोविज्ञान तथा अन्य विज्ञान
(Social Psychology and Other Sciences)

सामाजिक मनोविज्ञान एक सामाजिक विज्ञान है जो मानव प्रकृति का अध्ययन करता है। इसका अन्य सामाजिक विज्ञानों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह सामान्य मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र से अत्यधिक घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित है। जार्ज सिम्पसन ने लिखा है : "वैयक्तिक मनोविज्ञान, सामाजिक मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र मानव प्रकृति को देखने के तीन दृष्टिकोण हैं।"[1]

सामाजिक मनोविज्ञान के स्रोत
(Sources of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान का अन्य विज्ञानों से सम्बन्ध पर प्रकाश डालने के पूर्व हम सामाजिक मनोविज्ञान के स्रोतों का अध्ययन करेंगे। सामाजिक मनोविज्ञान अपनी विषय सामग्री किन विज्ञानों से प्राप्त करता है। सामाजिक मनोविज्ञान मानवीय अन्तःक्रियाओं का अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान सामान्य मनोविज्ञान से पर्याप्त सामग्री ग्रहण करता है। संवेग, उद्वेग, प्रत्यक्षीकरण, प्रेरणा, मूलप्रवृत्तियों इत्यादि के सम्बन्ध में सामान्य मनोविज्ञान से ग्रहण करता है। समाजशास्त्र और मानवशास्त्र से मनुष्य प्रकृति एवं समाजीकरण के विषय में सामग्री ग्रहण करता है। पशु या तुलनात्मक मनोविज्ञान से भी सामाजिक मनोविज्ञान लाभ उठाता है। सामाजिक मनोविज्ञान भाषा विज्ञान से भी सामग्री ग्रहण करता है। सामाजिक मनोविज्ञान प्राणीशास्त्र से भी लाभ उठाता है। बाल मनोविज्ञान एवं प्रजननशास्त्र भी सामाजिक मनोविज्ञान की समस्याओं पर प्रकाश डालते हैं। सामान्य मनोविज्ञान और अपराधशास्त्र भी सामाजिक समस्याओं के अध्ययन में सामाजिक मनोविज्ञान को सहायता करते हैं। साहित्य भी सामाजिक मनोविज्ञान को योग देता है।

सामाजिक मनोविज्ञान और सामान्य मनोविज्ञान
(Social Psychology and General Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान, सामान्य मनोविज्ञान या व्यक्ति मनोविज्ञान (Indivi-

---

1 "Individual Psychology, Social Psychology and Sociology are three ways of looking at human nature." George Simpson, *Man in Society*, (1954), p. 34.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

dual Psychology) से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है । सामाजिक मनोविज्ञान सामान्य मनोविज्ञान की एक शाखा है । सामाजिक मनोविज्ञान और सामान्य मनोविज्ञान के बीच भेद की रेखा खींचना अत्यन्त कठिन है । फ्राइड ने इस सम्बन्ध में उचित ही लिखा है : "वैज्ञानिक मनोविज्ञान और समाज या समूह मनोविज्ञान के बीच प्रथम दृष्टि में महत्त्वपूर्ण प्रतीत हो सकता है; परन्तु जब इसका गम्भीर परीक्षण किया जाय तो इसकी तीव्रता फीकी पड़ जाती है । यह सत्य है कि वैयक्तिक मनोविज्ञान एक व्यक्ति से सम्बन्धित होता है..........परन्तु बहुत ही कम और वह भी कुछ अपवादीय दशाओं में ही वैयक्तिक मनोविज्ञान व्यक्ति के अन्य व्यक्तियों के सम्बन्धों की अवहेलना कर सकता है । व्यक्ति के मानसिक जीवन में सदैव ही कोई दूसरा व्यक्ति, आदर्श या वस्तु किसी सहायक अथवा विरोधी के रूप में अवश्य उपस्थित रहता है । इसलिये आरम्भ से ही वैयक्तिक मनोविज्ञान सदा ही इस विस्तृत एवं पूर्ण रूप से उचित अर्थों में समाज मनोविज्ञान भी है ।"[1]

सामान्य मनोविज्ञान और सामाजिक मनोविज्ञान में मौलिक रूप से कोई विशेष अन्तर नहीं है । क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस विषय को अत्यन्त विस्तार में समझाने का प्रयत्न किया है । प्रथम, देखा जाय तो सामाजिक मनोविज्ञान एक मौलिक विज्ञान के रूप में व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार के सार्वभौमिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना चाहता है । यदि हम समान मानव व्यवहार की समस्याओं को समझना चाहते हैं तो हमें सामाजिक प्रक्रियाओं को समझना पड़ेगा । सामाजिक प्रेरणा (social motivation), सामाजिक प्रत्यक्षीकरण (social perception) और समाजिक शिक्षण के सिद्धान्त, प्रेरणा, प्रत्यक्षीकरण और शिक्षण के सिद्धान्तों के समान हैं और ये सिद्धान्त मनोविज्ञान के क्षेत्र के हैं । सामाजिक मनोविज्ञान इन सिद्धान्तों का अध्ययन मनोविज्ञान के क्षेत्र से करता है और फिर उन्हें सामाजिक क्षेत्र में प्रयोग करता है । इस प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान और सामान्य मनोविज्ञान समान हैं ।

सामाजिक मनोविज्ञान और सामान्य मनोवैज्ञानिक दोनों को ही विवश होकर व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन एक सामाजिक प्राणी के रूप में करना पड़ता है। मनुष्य का अध्ययन हम कहीं भी करें वह समाज से सदैव प्रभावित रहता है । चाहे वह बिलकुल ही अकेला क्यों न हो उस पर समाज की प्रतिछाया तो सदैव ही रहती है । क्रच तथा क्रचफील्ड ने उचित ही लिखा है, "सम्भवत: एकान्त में व्यक्ति के रूप में कोई वस्तु नहीं होती । व्यक्ति के समूह की सदस्यता का प्रभाव, उसका अन्य व्यक्तियों के साथ अनुभव, भूत एवं वर्तमान अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध उसके मनोवैज्ञानिक क्रियाओं तक पहुँचते हैं । इससे कोई तात्पर्य नहीं कि वे कितने साधारण या कितने विस्तृत हैं । परिणामस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक संसार में रहता है, चाहे को

1 S. Freud, *Group Psychology and the Analysis of the Ego*, pp. 1-2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी मनोवैज्ञानिक जो कुछ भी उसकी अभिरुचि हो, असामाजिक व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन नहीं कर सकता।"[1]

यह तथ्य और भी स्पष्ट हो जायेगा जब हम सामाजिक क्षेत्र की परिभाषा की व्यवस्था करेंगे। सामाजिक मनोवैज्ञानिक क्षेत्र क्या है ? सामाजिक मनोवैज्ञानिक वह क्षेत्र है जिसमें अन्य व्यक्ति उपस्थित हों। यह उपस्थिति चाहे प्रत्यक्ष रूप में हो या अप्रत्यक्ष रूप में। क्रच तथा क्रचफील्ड ने सामाजिक क्षेत्र की परिभाषा करते हुए लिखा है, "इसका बहुत स्पष्ट उत्तर यह है कि सामाजिक क्षेत्र की विशेषता व्यक्तियों की उपस्थित से है—इस भाव में कि वे चाहे प्रत्यक्ष रूप में तात्कालिक उपस्थिति हो, या उनकी उपस्थिति का मनोवैज्ञानिक घटनाओं से अस्तित्व (प्रत्यक्षीकरण, स्मरण-शक्ति, भय) है, जो व्यक्तियों से सम्बन्धित है।"[2]

सामाजिक क्षेत्र को हम एक उदाहरण के द्वारा समझ सकते हैं। हम एक कमरे में बन्द हैं और कपड़े बदल रहे हैं। अण्डरवीयर बदलते समय हम तोलिया लपेट लेते हैं जिससे नंगे न हो जायें। वास्तव में कमरा बन्द है और यदि हम नंगे हो भी जायें तो कोई अन्तर नहीं होता फिर भी सामाजिक चेतना के कारण वैसा नहीं करते। हम बन्द कमरे में भी अन्य व्यक्तियों से एवं समाज के नियमों से प्रभावित होते हैं। इसे हम दूसरे उदाहरण के द्वारा भी समझ सकते हैं। कृष्णा एक उत्सव में जाने की तैयारी कर रही है। वह अपनी शृंगार मेज के सामने खड़ी होकर सोचती है कि मैं कौन-सी साड़ी पहनूँ। उसके मस्तिष्क में यह स्पष्ट विचार है कि अन्य लोगों को वह साड़ी कैसी लगेगी। उसके मस्तिष्क में यह भी विचार है कि रत्नाकर को नीला रंग पसन्द है। इसलिये वह नीले रंग की साड़ी पहनती है। शृङ्गार गृह में वह अकेली रहते हुए भी मनोवैज्ञानिक रूप में प्रभावित हो रही है इसलिये वह सामाजिक क्षेत्र में है।

अतः ऐसा कोई भी क्षण नहीं होता जबकि व्यक्ति सामाजिक क्षेत्र से पृथक हो। कोई न कोई तत्त्व उस पर प्रभाव डालते रहते हैं। इससे स्पष्ट है कि व्यक्ति कभी शून्य में नहीं पाया जाता। मनुष्य जन्म से ही समाज मे रहता है। इसलिये प्रारम्भ से ही उस पर प्रभाव पड़ने लगता है। गर्नी[3] का मत हैं कि सामाजिक मनोविज्ञान ने सामान्य मनोविज्ञान से बहुत कुछ ग्रहण किया है।

मानव कभी भी एकाकी नहीं होता। उसके जीवन पर सदैव अन्य व्यक्तियों

---

1 "There probably exists no such being as an individual in isolation. ......As a consequence every man lives in a social world, and no psychologist, whatever his interests, does or can study the behaviour of a social man." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 8.

2 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 8.

3 Herbert Gurnnee, *Elements of Social Psychology*, p 10.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का प्रभाव पड़ता रहता है या पड़ा हुआ होता है। उसका व्यक्तित्व बिना दूसरों के प्रभाव के कभी भी विकसित नहीं हो सकता। किम्बाल यंग ने भी लिखा है कि "हमने अभी संकेत किया कि व्यक्ति का बिना अपने साथियों के सम्पर्क में आये एक व्यक्तित्व नहीं बन सकता और इस प्रकार समाज का मुख्य विचार व्यक्तियों की अन्त:क्रिया से है।"[1]

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो गया होगा कि सामाजिक मनोविज्ञान तथा सामान्य मनोविज्ञान एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं और इन्हें एक-दूसरे से पृथक् करना अत्यन्त कठिन है। अकोलकर ने उचित ही लिखा है, "इन कारणों से सामान्य मनोविज्ञान एवं सामाजिक मनोविज्ञान में सर्वथा स्वतन्त्र विभाग नहीं किये जा सकते; यह एक सुविधा का, एक श्रम विभाजन का विषय है, ये दो मनोविज्ञान नहीं हो सकते।"[2]

सामान्य मनोविज्ञान तथा सामाजिक मनोविज्ञान में यद्यपि अन्तर करना कठिन है तथापि ये दोनों एक-दूसरे से भिन्न हैं और यह भिन्नता दृष्टिकोण पर आधारित है। सिम्पसन ने इनके भेद की ओर संकेत करते हुए लिखा है, "ये तीनों विज्ञान जो मानव प्रकृति का प्रत्यक्ष अध्ययन करते हैं; वैयक्तिक मनोविज्ञान, सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र हैं। इन तीनों का एक-दूसरे से भेद किया गया है, वैयक्तिक मनोविज्ञान व्यक्ति का, सामाजिक मनोविज्ञान एक व्यक्ति का अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध और समाजशास्त्र समूह, जीवन एवं सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है।"[3]

सामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति का अध्ययन करता है और सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति का अन्य व्यक्तियों के सन्दर्भ में अध्ययन करता है। सामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति का सामान्य अध्ययन करता है। वह उसके सामाजिक पर्यावरण पर अधिक बल नहीं देता। सामान्य मनोविज्ञान के विषय में अकोलकर ने लिखा है, "वैयक्तिक या सामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति के मानसिक जीवन एवं व्यवहार का अध्ययन करते हैं। इसका उद्देश्य निर्भर सामान्यीकरणों पर पहुँचाता है, उदाहरण के लिए, व्यक्ति के

---

1 K. Young, *Handbook of Social Psychology* (1903), p. 5.

2 "For these reasons the division between General Psychology and Social Psychology can never be absolute. It is only a matter of convenience, a division of labour. There cannot be two psychologies." V.V. Akolkar, *Social Psychology*, Fourth ed., p. 15

3 "The three sciences which deal directly with human nature are Individual Psychology, Social Psychology and Sociology. These three sciences have been distinguished from one another by assigning the individual to psychology, the individual in relation to other individuals to social psychology and group life and social relationships to Sociology." George Simpson, *Man in Society* (1954), p. 35.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यवहार एवं मानसिक जीवन के नियमों, वैयक्तिक मनोविज्ञान व्यक्ति को अमूर्त दृष्टिकोण से देखता है, उसके सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन पर विशेष दृष्टि नहीं देता। यद्यपि तथ्य की दृष्टि से व्यक्ति की सदस्यता एक समूह या समूहों से उसका प्रत्यक्षीकरण, भावनाएँ, विचार, विश्वास, मनोवृत्ति एवं व्यवहार को निर्धारित करती है। वैयक्तिक मनोविज्ञान में व्यक्ति को एक संज्ञाशील जैविक समझा जाता है, जो क्रिया एवं प्रतिक्रिया अपनी ही परिवृत्ति की उत्तेजनाओं से करता रहता है। दूसरे शब्दों में, सामान्य मनोविज्ञान सामान्यीकरण व्यक्ति का अध्ययन है।"[1]

वास्तव में सामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति को एकांगी करके अध्ययन करता है। सामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति और उसके भौतिक पर्यावरण के सम्बन्धों का अधिक अध्ययन करता है। प्रत्यक्षीकरण, प्रेरणा, स्मरण, कल्पना-शक्ति, मूलप्रवृत्तियाँ, शिक्षण इत्यादि मनुष्य के व्यवहार के जैविकीय आधार हैं। इस प्रकार सामान्य मनोविज्ञान सामाजिक मनोविज्ञान से विभिन्न दृष्टिकोण रखता है।

व्यक्ति सामाजिक अवश्य रहता है कभी कम मात्रा में कभी अधिक। क्लाइन-बर्ग ने लिखा है, "सामाजिक मनोविज्ञान का विद्यार्थी उन तथ्यों का अध्ययन करता है जो अधिक सामाजिक हैं और सामान्य मनोविज्ञान का विद्यार्थी उन तथ्यों का जो बहुत ही कम सामाजिक हैं।" क्रच तथा क्रचफील्ड ने भी इसी विचार को निम्न शब्दों में व्यक्त किया है, "एक मौलिक विज्ञान के रूप में सामाजिक मनोविज्ञान मूल रूप में सामान्य मनोविज्ञान से भिन्न नहीं है।"[2]

सामान्य मनोविज्ञान तथा सामाजिक मनोविज्ञान एक-दूसरे से अत्यधिक घनिष्ठ होते हुए भी मानव व्यवहार का अध्ययन विभिन्न दृष्टिकोणों से करते हैं। सामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति के भौतिक पर्यावरण एवं जैविकीय आधारों पर अधिक बल देता है और सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के सामाजिक पर्यावरण या अन्य व्यक्तियों के साथ उसकी अन्तःक्रियाओं पर अधिक बल देता है।

सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र
(Social Psychology and Sociology)

सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। समाजशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान में कार्ल पियर्सन[3] ने कोई अन्तर नहीं माना है। वार्ड[4] ने भी इन्हें अत्यधिक समान कहा है। कुछ लोग तो सामाजिक मनोविज्ञान को मनोवैज्ञानिक समाजशास्त्र भी कहते हैं।

---

1 V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 13.
2 "As a basic science, Social Psychology does not differ in any fundamental way from Psychology in general." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 7.
3 Karl Pearson, *The Grammar of Science*, p. 521
4 Ward, *Pure Sociology*, 59.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक मनोविज्ञान का अध्ययन बिना समाजशास्त्र के असम्भव है। समाजशास्त्र समूह, समूह के वर्गीकरण एवं गुण, सामाजिक संस्थाएँ, सामाजिक ढाँचा, सामाजिक संगठन, सामाजिक उद्विकास, सामाजिक परिवर्तन इत्यादि का अध्ययन करता है और इन्हें सामाजिक मनोविज्ञान के लिए स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है। सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति की अन्त:क्रियाओं का अध्ययन सामाजिक सन्दर्भ में करता है और बिना इस सन्दर्भ के कुछ भी नहीं समझा जा सकता। किम्बाल यंग ने लिखा है, "हम कह सकते हैं कि यद्यपि हमारा बल व्यक्ति के दूसरों के साथ अन्त:-क्रिया पर है तथापि इस प्रकार की अन्त:क्रिया केवल उसी सामाजिक एवं सांस्कृतिक साँचे में समझी जा सकती है जिसमें वह घटित होती है।"[1]

सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र एक ही सिक्के के अंग हैं। दोनों विज्ञानों को अलग नहीं किया जा सकता। व्यक्तियों को बिना सामाजिक सम्बन्धों के नहीं समझा जा सकता और सामाजिक सम्बन्धों को बिना व्यक्तियों के नहीं समझा जा सकता। मैकाइवर तथा पेज ने उचित ही लिखा है, "दोनों विज्ञान अविभाजित वास्तविकता के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित हैं। व्यक्तियों को बिना अन्य व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध में नहीं समझा जा सकता; तथा सम्बन्धों को या सम्बन्धों की इकाई (या पद) से अलग करके नहीं समझा जा सकता।"[2]

सामाजिक मनोविज्ञान यह स्वीकार करता है कि मानव प्रकृति को बिना समाज के संगठन एवं संस्कृति को समझे हुए नहीं समझा जा सकता। अकोलकर ने उचित ही लिखा है : "सामाजिक मनोविज्ञान इस तथ्य को स्वीकार करता है कि मानवीय प्रकृति एवं व्यवहार को सन्तोषप्रद व्याख्या के लिए हमें समाजों के ढाँचे, संगठन एवं संस्कृतियों को समझना चाहिए; जिनसे व्यक्ति सम्बन्धित हैं।"[3]

सामाजिक मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र में अत्यधिक घनिष्ठ सम्बन्ध होते हुए भी उनके अध्ययन के दृष्टिकोण में महत्त्वपूर्ण अन्तर पाया जाता है। समाजशास्त्र सामाजिक समूहों, सामाजिक संगठन, सामाजिक परिवर्तन आदि का अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान समूह में व्यक्तियों के व्यवहार का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र व्यक्तियों के समूह का अध्ययन करता है और सामाजिक मनोविज्ञान समूह में व्यक्ति का अध्ययन करता है। मैकाइवर तथा पेज ने इसको स्पष्ट करते हुए

---

1 "We might say that while our major emphasis is on the individual in interaction with others, such interaction can only be understood within the social and cultural matrix in which it occurs." K. Young, *Handbook of Social Psychology*. (1960) p. 3.

2 "Both sciences are concerned with different aspects of an indivisible reality. Individuals cannot be understood apart from their relations with one another; the relations cannot be understood apart from the units (or terms) of the relationship." MacIver and Page, *Society*, p. 23.

3 V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 18.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिखा है : "जब हम व्यक्ति के व्यवहार की प्रकृति का अध्ययन करते हैं, व्यक्ति की चेतना का ढाँचा जो स्वयं सामाजिक सम्बन्धों को व्यक्त करता है, तो हम मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखते हैं। जब हम उनके सम्बन्धों का अध्ययन करते हैं तब हम समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखते हैं। दोनों विज्ञान अविभाजित वास्तविकता के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्धित हैं।"[1]

अन्य विद्वानों ने भी सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के बीच यही रेखा खींची है कि समाजशास्त्र समूह व्यवहार का अध्ययन करता है और सामाजिक मनोविज्ञान समूह में व्यक्ति के व्यवहार का। ऑटो क्लाइनबर्ग ने इस अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "साथ ही यह भी सत्य है कि समाजशास्त्री का मौलिक सम्बन्ध समूह व्यवहार से है और सामाजिक मनोवैज्ञानिक का सामूहिक दशा में व्यक्ति व्यवहार से।"[2] शेरिफ तथा शेरिफ ने भी इसी तथ्य पर प्रकाश डालते हुए लिखा है : "सामाजिक मनोविज्ञान में विश्लेषण की इकाई व्यक्ति होता है।"[3] समाजशास्त्र के दृष्टिकोण पर बल देते हुए फ्रीडमैन तथा अन्य ने लिखा है, "समाजशास्त्र वह सामाजिक विज्ञान है जो मानव समूह को अपने अध्ययन की प्रमुख समस्या मानता है।"[4]

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र का एक-दूसरे से अत्यधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है, परन्तु फिर भी दोनों के अध्ययन में दृष्टिकोण का अन्तर पाया जाता है।

सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र में जो घनिष्ठ सम्बन्ध है वह कई तथ्यों से स्पष्ट होता है, उनमें से कुछ निम्न हैं

(i) समाजशास्त्र समाज की उत्पत्ति, संरचना, कार्यों, परिवर्तन एवं समस्याओं आदि का अध्ययन करता है। समाज किन इकाईयों से मिलकर बनता है ? ये इकाईयाँ व्यक्ति हैं, इसलिये समाजशास्त्र को इन इकाईयों की विशेषताओं का भी ध्यान रखना पड़ता है। सामाजिक मनोविज्ञान इन इकाईयों एवं इनकी विशेषताओं का अध्ययन करता है। समाजशास्त्र सामाजिक मनोविज्ञान की इन उपलब्धियों के आधार पर समाज का अध्ययन करता है। इसी प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान समाजशास्त्र के अध्ययनों के सन्दर्भ में समाज में रहने वाले व्यक्तियों का अध्ययन करता है।

(ii) समाजशास्त्र सामाजिक समूहों का अध्ययन करता है, पर सामाजिक समूहों के अध्ययन के लिए समूह के निर्माण करने वाले व्यक्तियों के अध्ययन

---

1 MacIver and Page, *Society*, p. 23.
2 Otto Klineberg, *Social Psychology* (1956), pp. 6-7.
3 "In Social Psychology the individual is the unit of analysis." Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 29.
4 "Sociology is the social science which takes the human group as its central problem." Freedman, Hawley, Landecker and Miner, *Principles of Sociology*, p. 52.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की भी आवश्यकता होती है। इन व्यक्तियों का अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान करता है। इस प्रकार समाजशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं।

(iii) समाजशास्त्र सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करता है। सामाजिक समस्याएँ कहाँ से प्रारम्भ होती हैं ? ये व्यक्ति से प्रारम्भ होती हैं। व्यक्ति की समस्याओं का सामाजिक सन्दर्भ में सामाजिक मनोविज्ञान अध्ययन करता है। इस प्रकार समाजशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान एक-दूसरे की सहायता से अध्ययन करते हैं।

सामाजिक मनोविज्ञान एवं मानवशास्त्र
(Social Psychology and Anthropology)

मानवशास्त्र की परिभाषा करते हुए क्रोबर ने लिखा है, "मानवशास्त्र मानव का विज्ञान है।"[1] जैकब्स तथा स्टर्न ने लिखा है, "मानवशास्त्र सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर अब तक के मनुष्यों का शारीरिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास एवं व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है।"[2] मानवशास्त्र की परिभाषा देते हुए टर्नी हाई ने लिखा है, "मानवशास्त्र शाब्दिक अर्थ में मानव का विज्ञान है। मानवशास्त्र सम्पूर्ण मानव का विवेचनात्मक, तुलनात्मक एवं सामान्यात्मक अध्ययन है जिसके अन्तर्गत मानव शरीर-रचनाशास्त्र, शरीर-शास्त्र एवं मनोविज्ञान तथा वह संस्कृति जो उनकी आवश्यकताओं के प्रत्युत्तर में प्रभावित होती है, आते हैं।"[3] इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि मानवशास्त्र एक अत्यन्त विस्तृत शास्त्र है। मानवशास्त्र के दो प्रमुख भाग हैं—प्रथम, शारीरिक मानवशास्त्र तथा दूसरा, सांस्कृतिक मानवशास्त्र। मानवशास्त्र की विभिन्न शाखाओं का वर्गीकरण पृष्ठ 27 पर दिये हुए चित्र में देखिये।

सामाजिक मनोविज्ञान तथा मानवशास्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। सामाजिक मनोविज्ञान केवल समूह में व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन करता है; परन्तु मानवशास्त्र मानव का अनेक दृष्टिकोणों से अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान मानवशास्त्र की कुछ शाखाओं से तो विशेष रूप से सम्बन्धित है जैसे मानव उत्पत्ति-

---

1 "Anthropology is the science of man." Kroeber, *Anthropology*, (1948), p. 1.

2 "Anthropology is the scientific study of the physical, social and cultural development and behaviour of human beings since their appearance on earth." M. Jacobs and B. J. Stern, *General Anthropology*, (1955), p. 1.

3 "Anthropology means literally the science of man. Anthropology is the descriptive, comparative and generalizing study of man as a whole, including the factors of human anatomy, physiology and psychology and the culture which flows from them in response to their needs." Turney High, *General Anthropology*, p. 1.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानवशास्त्रीय विज्ञानों का वर्गीकरण

(Classification of Anthropological Sciences)

- मानवशास्त्र (Anthropology)
  - शारीरिक मानवशास्त्र (Physical Anthropology)
    - मानव उत्पत्तिशास्त्र (Human Genetics)
    - पुरातन मानवशास्त्र (Human Palaeontology)
    - प्रजातिशास्त्र (Enthnology)
    - मानवमिति (Anthropometry)
    - जीवमिति (Biometry)
  - सांस्कृतिक मानवशास्त्र (Cultural Anthropology)
    - प्रागैतिहासिक पुरातत्त्वशास्त्र (Prehistoric Archaeology)
    - सामाजिक मानवशास्त्र (Social Anthropology)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शास्त्र (Human Genetics), प्रजातिशास्त्र (Ethnology) तथा सामाजिक मानवशास्त्र (Social Anthropology.)।

सामाजिक मनोविज्ञान और शारीरिक मानवशास्त्र (Social Psychology and Physical Anthropology)

सामाजिक मनोविज्ञान और शारीरिक मानवशास्त्र एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हैं। मानव के शारीरिक लक्षणों के विषय में ज्ञान प्राप्त करना मनोविज्ञान के लिए अनिवार्य है। शारीरिक मानवशास्त्र प्रजाति का विशेष रूप से अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान प्रजाति मनोविज्ञान में रुचि रखता है। इसके फलस्वरूप सामाजिक मनोविज्ञान को शारीरिक मानवशास्त्र की सहायता लेनी पड़ती है।

सामाजिक मनोविज्ञान तथा सांस्कृतिक मानवशास्त्र (Social Psychology and Cultural Anthropology)

हरस्कोविट्स ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "सांस्कृतिक मानवशास्त्री मानव की उन पद्धतियों, जो उसने अपने प्राकृतिक पर्यावरण एवं सामाजिक पर्यावरण से सामंजस्य उत्पन्न करने के लिए निर्मित की हैं तथा प्रथाएँ किस प्रकार सीखी जाती हैं, स्थापित की जाती हैं एवं एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित की जाती हैं, का अध्ययन है।"[1] साधारण रूप से सांस्कृतिक मानवशास्त्र संस्कृति का विज्ञान है। संस्कृति की परिभाषा करते हुए हॉबल ने लिखा है, "संस्कृति सीखे हुए व्यवहार प्रतिमानों का कुल योग।"[2]

सामाजिक मनोविज्ञान भी मनुष्य और उसके सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण के बीच उत्पन्न सम्बन्धों का अध्ययन करता है। इस प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार को उस समय तक नहीं समझ सकता जिस समय तक वह उस व्यक्ति के समाज एवं संस्कृति को नहीं समझ लेता। व्यक्ति समाज का प्रतिफल है। विशेष रूप से व्यक्ति के व्यक्तित्व का अध्ययन बिना संस्कृत के अध्ययन के नहीं किया जा सकता। प्रत्येक समाज की संस्कृति व्यक्ति के व्यक्तित्व पर अपनी विशिष्ट छाप लगाती है। सामाजिक मनोविज्ञान संस्कृति की इस छाप को समझे बिना व्यक्तित्व को नहीं समझ सकता। न केवल संस्कृति अपितु उपसंस्कृतियों को भी समझना आवश्यक है। लिंटन की पुस्तक 'The Cultural Background of Personality', रूथ बेनीडिक्ट की पुस्तक 'Patterns of Culture' तथा अन्य पुस्तकें, थामस की पुस्तक 'Primitive Behaviour' तथा अन्य मानवशास्त्रियों की पुस्तकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि संस्कृति का विश्लेषण एवं विवेचन व्यक्तित्व के अध्ययन के लिए कितना आवश्यक है। इसी प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान के अन्य विषय जैसे पक्षपात, प्रचार, संचार, फैशन इत्यादि को समझने के लिए सांस्कृतिक मानवशास्त्र का अध्ययन

---

1 M. J. Herskovits, *Man and His Works* (1952), p. 3.
2 "Culture is the sum total of learned behaviour patterns." E. A. Hoebel, *Man in the Primitive World.* (1949), p. 4.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अत्यन्त आवश्यक है। समूह में व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए समूह को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

सांस्कृतिक मानवशास्त्र के लिए भी सामाजिक मनोविज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। आखिरकार मानवशास्त्र मानव का अध्ययन क्यों करता है ? उत्तर स्पष्ट है कि मानव व्यवहार एवं मानव प्रकृति को समझने के लिए। इन्हें तभी समझा जा सकता है जबकि सामाजिक मनोविज्ञान की सहायता ली जाये। रैडिन ने इस सम्बन्ध में उचित प्रश्न किया है, "मुझे यह स्पष्ट करने दो······ जो शायद संस्कृतियों के समस्त अनुसन्धानों का मुख्य अंग है। क्या हम कभी किसी सन्तोषजनक ज्ञान, जो मानव व्यवहार की संरचना करता है, पर पहुँच सकते हैं ?"

मनोविज्ञान का सांस्कृतिक मानवशास्त्र से कितना सम्बन्ध है यह हमें रीवर्स के कथन से स्पष्ट हो जायगा। रीवर्स ने लिखा है, "मानव के समस्त अध्ययनों का अन्तिम ध्येय चाहे ऐतिहासिक हो या वैज्ञानिक, मनोविज्ञान को व्याख्या उस सन्दर्भ में देनी होती है, विचारों, विश्वासों, स्थायीभावों और मूलप्रवृत्यात्मक प्रवृत्तियों, जो व्यक्ति का व्यवहार वैयक्तिक हो या सामूहिक, निश्चित करते हैं।"

सांस्कृतिक मानवशास्त्री अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिए सामाजिक मनोविज्ञान के सिद्धान्तों का प्रयोग करते हैं। क्लाइनबर्ग ने इस बात पर बड़ा जोर दिया है। इस प्रकार सांस्कृतिक मानवशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हैं।

सामाजिक मनोविज्ञान तथा अर्थशास्त्र
(Social Psychology and Economics)

"अर्थशास्त्र मनुष्य की उन क्रियाओं का अध्ययन करता है जो आवश्यकताओं की सन्तुष्टि के लिए, भौतिक साधनों की प्राप्ति के लिए की जाती हैं।"[1] अर्थशास्त्र आर्थिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है। अर्थशास्त्र और सामाजिक मनोविज्ञान में घनिष्ठ सम्बन्ध है। उदाहरणार्थ, अर्थशास्त्र व्यक्तियों की धनोपार्जन और व्यय सम्बन्धी क्रियाओं से सम्बन्धित है। इसमें सम्पत्ति के उत्पादन, वितरण, व्यय तथा आदान-प्रदान के नियमों का अध्ययन किया जाता है। इनमें व्यक्तियों के मानसिक जीवन के नियम अवश्य कार्य करते रहते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान किसी राष्ट्र की अनेक आर्थिक समस्याओं को सुलझाने में सहायक हो सकता है। क्यों हड़तालें होती हैं ? क्यों उत्पादन कम होता है ? किस प्रकार उत्पादन तथा उद्योग को उन्नत किया जाय ? श्रमिकों को किस प्रकार सन्तुष्ट रखा जाय ? महँगाई का सामना कैसे किया जाय ? इसी प्रकार के अनेक प्रश्नों को सामाजिक मनोविज्ञान हल करने में सहायक हो सकता

1 "Economics is the study of man's activities devoted to obtaining material means for the satisfaction of his wants." E.R. Fairchild, N. S. Buck and R. E. Slesinger, *Principles of Economics*. The Macmillan Co. New York (1954), p. 2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। व्यक्तियों की सामूहिक क्रियाओं में निहित प्रवृत्तियों तथा प्रेरकों, संवेग तथा आदतों का ज्ञान वांछनीय है। सामाजिक मनोविज्ञान आर्थिक समस्याओं को सुलझाने में भी सहायक होता है।

आर्थिक परिस्थितियाँ व्यक्तियों के मन और क्रियाओं को प्रभावित करती हैं। सामाजिक क्रियाओं पर तात्कालिक आर्थिक परिस्थितियों का भी प्रभाव पड़ता है। जैसे, यदि किसी राष्ट्र में अपराधियों की संख्या अधिक है तो सम्भव है कि वहाँ बेकारी हो, महँगाई हो या अकाल की परिस्थिति हो। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामाजिक मनोवैज्ञानिक को सामूहिक क्रियाओं का अध्ययन करते समय अर्थशास्त्र का ज्ञान होना भी अनिवार्य है।

इसी प्रकार अर्थशास्त्र को उपयोगी होने के लिए यह आवश्यक है कि वह मनोविज्ञान पर आधारित हो इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामाजिक मनोविज्ञान का ज्ञान अर्थशास्त्र के लिए योग्य आधार प्रदान करता है।

सामाजिक मनोविज्ञान तथा राजनीतिशास्त्र
(Social Psychology and Political Science)

सामाजिक मनोविज्ञान व राजनीतिशास्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। "राजनीतिशास्त्र उन पद्धतियों का अध्ययन है, जिनमें कि एक समाज अपने को संगठित करता है और राज्य का संचालन करता है।"[1] मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के साथ ही साथ एक राजनैतिक प्राणी भी है। राजनीतिशास्त्र इस प्रकार किसी राष्ट्र की शासन-व्यवस्था के नियमों का अध्ययन करता है। यह व्यक्तियों के लिए नियमों का निर्माण तथा उनको लागू भी करवाता है। राजशास्त्रज्ञ को पग-पग पर जनसमूह से प्रयोजन होता है, उसके लिए व्यक्तियों की समूह में होने वाली क्रियाओं का ज्ञान अनिवार्य है। राजनैतिक समस्याएँ सामाजिक समस्याएँ भी कही जा सकती हैं। राजनीतिज्ञ को सामाजिक मनोविज्ञान के नियमों का ज्ञान आवश्यक है। इसके अभाव में वह जनता को सन्तुष्ट नहीं रख सकता और सम्भव है उसका दल दुर्बल हो जाय।

राजनैतिक संस्थाएँ सामाजिक क्रियाओं को परिवर्तित करती रहती हैं। अब हम सामाजिक मनोविज्ञान व राजनीतिशास्त्र के पारस्परिक सम्बन्ध एवं अन्तर को देखेंगे :

(क) राजनीतिशास्त्र बाह्य सृष्टि विषयक विज्ञान है, सामाजिक मनोविज्ञान अन्तःसृष्टि विषयक। राजनैतिक नियमों का मानसिक नियमों से विशेष सम्बन्ध नहीं है। इसलिए राजनैतिक नियम सामाजिक प्रवृत्तियों, संवेगों तथा जनमत का विरोध करते हैं और विप्लव का कारण बनते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान का व्यवहार के आन्तरिक पक्ष से गहन सम्बन्ध है।

---

1 "Political Science is the study of the ways in which a society organizes and operates a state." Weinberg and Shabet, *Society and Man*,. p. 13.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ख) राजनैतिक नियम बाह्य होते हैं उन्हें दंड के भय से लागू किया जाता है तथा नियम का उल्लंघन करने वाला व्यक्ति दंड का अधिकारी होता है। किन्तु सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के सामूहिक क्रियाओं के स्वाभाविक नियमों का अध्ययन करता है।

(ग) सामाजिक मनोवैज्ञानिक तो व्यक्तियों के उन मानसिक स्तरों और प्रवाहों का अध्ययन करता है जो उनके पारस्परिक क्रिया, प्रतिक्रिया में निहित हैं। राजनीतिशास्त्र वाह्य सृष्टि विषयक है, सम्पूर्ण सामूहिक क्रियाओं का यह अध्ययन नहीं करता। इसके विपरीत सामाजिक मनोविज्ञान सामूहिक क्षेत्र में मानवीय जीवन के मानसिक तथा उससे सम्बन्धित बाह्य व्यवहार का अध्ययन करता है। इस दृष्टि से सामाजिक मनोविज्ञान का क्षेत्र राजनीतिशास्त्र से व्यापक है।

सामाजिक मनोविज्ञान और आचारशास्त्र
(Social Psychology and Ethics)

सामाजिक मनोविज्ञान और आचारशास्त्र का सम्बन्ध भी अटूट है। आचारशास्त्र 'क्या होना चाहिए', के प्रश्न का अध्ययन करता है। यह कहा जा सकता है कि वह मूल्यों का अध्ययन करता है। यह मूल्य हमारी संकल्पनात्मक क्रियाओं के मानदंड को निर्धारित करता है और उचित एवं अनुचित के स्वरूप का निर्णय करता है। समाज में ही रहकर व्यक्ति शुभ व अशुभ, उचित व अनुचित का ज्ञान प्राप्त करता है तथा क्रियाएँ करता है। सामाजिक-मनोविज्ञान सामाजिक क्रियाओं के मानसिक नियमों का अध्ययन करता है। आचारशास्त्रज्ञ को समाज में क्रियान्वित कामनाओं, प्रेरकों, प्रवृत्तियों, संवेगों आदि का अनिवार्य रूप से ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। सामाजिक मनोविज्ञान के भी कुछ विषय आचारशास्त्र के लिए अभिरुचिपूर्ण हैं, जैसे बुद्धि और संकल्प का सम्बन्ध, सामूहिक मन, रीति-रिवाज आदि। रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं की मनोवैज्ञानिक व्याख्या करते समय ज्ञात होता है कि सामाजिक मनोविज्ञान और आचारशास्त्र में गहन सम्बन्ध है। रीति-रिवाज जनता की विकासोन्मुख नैतिकता का प्रतिनिधित्व करते हैं, तथा इनसे नैतिक चेतना की अभिव्यक्ति होती है। समानता होते हुए भी इन दोनों शास्त्रों में भेद है। आचारशास्त्र हमको केवल आदर्श की चेतना देता है। वह समाज का चिर निःश्रेयस (highest good) की ओर पथ-प्रदर्शन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान का सम्बन्ध "है" से है तथा आचारशास्त्र का सम्बन्ध "होना चाहिये" से है।

सामाजिक मनोविज्ञान तथा रेडियो प्रविधि
(Social Psychology and Radio Technology)

सामूहिक व्यवहार (crowd behaviour) का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि किसी भी जन-वृन्द में अभिरुचि का सामान्य विषय होना चाहिए। इसके अभाव में सामूहिक व्यवहार सम्भव नहीं। जैसे कुछ अगुआ लोग या नेता अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व, सामाजिक स्थिति, बातचीत, मुद्रा और वक्तव्य द्वारा जनता के ध्यान को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आकर्षित कर लेते हैं, और संकेतों द्वारा व्यक्तियों की क्रियाओं को एकता और संगठन प्रदान करते हैं। प्रारम्भ में समाज का स्वरूप सरल था तथा जनमत निर्माण के साधन वार्तालाप, भाषण आदि थे। परन्तु जब समाज जटिल हो गया, शासन व्यवस्था का जन्म हुआ, नगरों का उत्थान हुआ तथा सन्देश-वाहन के साधन जटिल हो गये, जनमत निर्माण परोक्ष रूप से होने लगा। प्रेस, समाचारपत्र, रेडियो, टेलीफोन के द्वारा नेता लोग परोक्ष रूप से अपना प्रभाव डालकर जनता की सहायता लेने का प्रयास करने लगे।

वर्तमान काल में रेडियो सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण सन्देशवाहक है। जिसके माध्यम से विचार, शब्द-और क्रियाओं में सुगम रूप से एकता उत्पन्न की जा सकती है। मानसिक या शारीरिक क्रियाओं की अचेतन पृष्ठभूमि श्रवण संवेदनाओं द्वारा निर्मित हो जाती है। आकाशवाणी के श्रोताओं की मानसिक अवस्था पर ध्यान दिया जाय तो ज्ञात होता है कि उनकी व्यक्तिगत मनोवृत्तियाँ क्या हैं तथा सामाजिक झुकाव किस ओर है। अमरीका में कैन्ट्रिल और आल्पोर्ट ने कुछ प्रयोग किये जिनसे ज्ञात होता है कि अमरीका के मध्यम वर्ग के लोगों को ऐसे मनोरंजक प्रोग्राम रुचिकर होते हैं, जिनमें रोमांस, काम, अपराध और उच्च सामाजिक स्थिति के लिए संघर्ष आदि अभिव्यक्त किये गये हों। इस प्रकार हम देखते हैं कि जनमत निर्माण में रेडियो एक महान् प्रचार का माध्यम है। जनमत की मनोवैज्ञानिक व्याख्या करते समय सामाजिक मनोवैज्ञानिक को आकाशवाणी प्रविधि के महत्त्वपूर्ण तत्त्वों का ज्ञान होता है। अनेक श्रोतागण रेडियो द्वारा एक ही सन्देश, वार्ता, संगीत, वक्तव्य, समाचार आदि का श्रवण करते हैं और इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से जनमत एक विशेष रूप ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि रेडियो प्रविधि व्यक्तियों पर अपना विशेष प्रभाव डालती है। आकाशवाणी द्वारा प्रसारित प्रोग्राम संस्कृति, लोकाचार, विचार, भावनाओं, अभिरुचियों, प्रवृत्तियों, साहित्य, कला आदि की सामाजिक मनोवैज्ञानिक झाँकी देता है।

सामाजिक मनोविज्ञान और अपराधशास्त्र
(Social Psychology and Criminology)

अपराधशास्त्र मनुष्य के उन व्यवहारों का अध्ययन करता है जो मनुष्य सामाजिक नियमों के विरुद्ध करता हैं। सदरलैण्ड ने अपराधशास्त्र की परिभाषा करते हुए लिखा है कि 'अपराधशास्त्र अपराध को सामाजिक प्रमेय मानकर अध्ययन करने वाली ज्ञान की शाखा है।"[1] वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार, "अपराधशास्त्र अपराध का सामाजिक प्रमेय के रूप में वैज्ञानिक अध्ययन है या अपराधियों और उनके मानसिक गुणों उनकी आदतों एवं उनके अनुशासन इत्यादि का अध्ययन है।"[2]

---

1 "Criminology is the body of knowledge regarding crime as a social phenomenon." Sutherland, *Principles of Criminology*.

2 "The scientific study of Crime as a social phenomenon, or of criminals and mental traits, their habits, their discipline, etc." **Webster Dictionary.**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपराधशास्त्र अपराध का वैज्ञानिक अध्ययन है। प्रश्न यह उठता है कि अपराध क्या है ? मैनहीम ने लिखा है, "अपराध समाज विरोधी व्यवहार है।"[1]

इलियट तथा मैरिल ने अपराध की परिभाषा करते हुए लिखा है, "समाज विरोधी व्यवहार जो समूह द्वारा अस्वीकार किया जाता है और जिसके लिए समूह दण्ड निर्धारित करता है, अपराध के नाम से परिभाषित किया जा सकता है।"[2] इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अपराधशास्त्र मनुष्यों के समाज विरोधी व्यवहार का अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान भी समाज में मनुष्य के व्यवहार का अध्ययन करता है। यह व्यवहार समाज के अनुकूल भी हो सकता है और प्रतिकूल भी। जब यह समाज के प्रतिकूल होता है तो अपराध कहलाता है। इस प्रकार इस व्यवहार के अध्ययन का उत्तरदायित्व भी सामाजिक मनोविज्ञान पर है। अपराध-शास्त्र का सफल अध्ययन बिना सामाजिक मनोविज्ञान के कभी हो ही नहीं सकता। सामाजिक मनोवैज्ञानिक इस क्षेत्र में अत्यधिक सफल सिद्ध हुए हैं। अब तो एक नयी शाखा ही विकसित हो गयी है, जिसका नाम है अपराधी मनोविज्ञान।

मनोविश्लेषकों (Psychoanalysts) तथा मनोचिकित्सा विशेषज्ञ (Psychi-artists) ने अपराध के अध्ययन में विशेष सहायता पहुँचायी है। इनके अनुसार अपराध असाभान्य व्यवहार है जो प्राणिशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक कारणों से उत्पन्न होता है। मनोवैज्ञानिकों ने कई प्रकार के अपराधी बताये हैं जिनका आधार मनो-वैज्ञानिक है; जैसे—न्यूरोटिक (neurotic) अपराधी, साइकोपैथिक (psychopa-thic) अपराधी इत्यादि। बाल-अपराध के भी अनेक मनोवैज्ञानिक कारण हैं। इस प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान अपराधशास्त्र के अध्ययन में अत्यधिक सहायता पहुँचाता है। इनके सुधार के भी अनेक सिद्धान्तों का निर्माण सामाजिक मनोविज्ञान की सहायता से हुआ है। अपराधशास्त्र सामाजिक मनोविज्ञान के समाज-विरोधी व्यवहार का विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

सामाजिक मनोविज्ञान की स्थिति
(Status of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान ने अनेक विज्ञानों से ग्रहण किया है। उदाहरण के लिए प्राणिशास्त्र, दैहिक शास्त्र, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र इत्यादि से सामाजिक मनोविज्ञान ने सामग्री ग्रहण की है। कुछ लोगों का ऐसा मत है कि सामाजिक मनोविज्ञान समाजशास्त्र की शाखा है तथा कुछ लोगों का मत है कि यह मानवशास्त्र की शाखा है। वे सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र या मानव-शास्त्र या सामान्य मनोविज्ञान में कोई अन्तर नहीं मानते। क्लाइनबर्ग ने लिखा भी

---

1 "Crime is antisocial behaviour,........" H. Mannheim, *Criminal and Social Reconstruction*, p. 5.

2 "Crime may be defined as antisocial behaviour which the group rejects and to which it attaches panalities." Elliott and Merrill *Social Disorganisation*, Third Edition (1950), pp. 542-43.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि "वहाँ किसी भी प्रकार की विभेद की ऐसी कठोर रेखा नहीं है, जो सामान्य मनोविज्ञान को एक तरफ व समाजशास्त्र या मानवशास्त्र को दूसरी तरफ रखे।"[1]

इसमें सन्देह नहीं कि सामाजिक मनोविज्ञान ने इन विज्ञानों से सामग्री ग्रहण की है; और वह इन विद्वानों से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है। फिर भी सामाजिक मनोविज्ञान का एक स्वतन्त्र अस्तित्व है; क्योंकि उसके अन्तर्गत हम ऐसे विषयों का अध्ययन करते हैं जो नवीन हैं एवं स्वतन्त्र अस्तित्व रखते हैं। मानव व्यवहार के प्रति सामाजिक मनोविज्ञान एक नवीन दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। जिस प्रकार अन्य विज्ञान अपने-अपने दृष्टिकोण से मानव व्यवहार का अध्ययन करते हैं उसी प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान भी मानव व्यवहार का सामाजिक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन करता है। सामाजिक मनोविज्ञान मानव व्यवहार का एक स्वतंत्र विज्ञान है। सिम्पसन ने इस सम्बन्ध में उचित ही लिखा है, "इस प्रकार वैयक्तिक मनोविज्ञान, सामाजिक मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र मानव प्रकृति को देखने के तीन दृष्टिकोण हैं।"[2]

सामाजिक मनोविज्ञान का एक स्वतन्त्र अस्तित्व है और वह सामान्य मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र से पृथक है। सिम्पसन ने लिखा है, "ये तीनों विज्ञान मानव प्रकृति का प्रत्यक्ष अध्ययन करते हैं; वैयक्तिक मनोविज्ञान, सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र हैं। इन तीनों का एक-दूसरे से भेद किया गया है। वैयक्तिक मनोविज्ञान व्यक्ति का, सामाजिक मनोविज्ञान एक व्यक्ति का अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध और समाजशास्त्र समूह जीवन एवं सामाजिक सम्बन्धों का अध्ययन करता है।"[3]

सामाजिक मनोविज्ञान ने अपनी अध्ययन विधियाँ एवं प्रविधियाँ भी विकसित की हैं। इनके सहारे वह एक स्वतन्त्र विज्ञान होता जा रहा है। सामाजिक मनोविज्ञान की स्थिति सामाजिक विज्ञानों में स्पष्ट रूप से निर्धारित हो गयी है। सामाजिक मनोविज्ञान एक स्वतन्त्र विज्ञान के रूप में सामाजिक विज्ञानों के बीच प्रतिष्ठित है और मानव व्यवहार के अध्ययन की दृष्टि से उसका एक प्रतिष्ठित स्थान है।

---

1 "There is, however, no line of demarcation from General Psychology on the one hand and Sociology or Anthropology on the other." Otto Klineberg, *Social Psychology*.

2 "Thus, Individual Psychology, Social Psychology, and Sociology are three ways of looking at human nature." G. Simpson, *Man in Society*, p. 34.

3 "The three sciences which deal directly with human nature are Individual Psychology, Social Psychology and Sociology. These three sciences have been distinguished from one another by assigning the individual to psychology, the individual in relations to other individual to social-psychology, and group life and social relationships to sociology." G. Simpson, *Man in Society*, p. 34.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानव व्यवहार के समन्वित विज्ञान की ओर
(Towards an Integrated Science of Human Behaviour)

सामाजिक मनोविज्ञान मानव व्यवहार का एक ऐसा विज्ञान है जो मानव व्यवहार के समन्वित विज्ञान की दिशा में बढ़ रहा है। पहले सामान्य मनोविज्ञान व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन करता था और समाजशास्त्र सामाजिक समूहों एवं सामाजिक सम्बन्धों का। इस प्रकार मानव व्यवहार का विभिन्न कोणों से अध्ययन किया जा रहा था। मानवशास्त्र भी मानव व्यवहार पर विभिन्न संस्कृतियों के प्रभाव को प्रदर्शित कर रहा था। विभिन्न समाजों में विभिन्न मानव व्यवहार पाया जाता है। शारीरिक क्रियाओं के कारण भी मानव व्यवहार भिन्न होता है। सामाजिक मनोविज्ञान इन सभी दृष्टिकोणों का लाभ मानव व्यवहार के अध्ययन में कर रहा है। इसके परिणामस्वरूप सामाजिक मनोविज्ञान मानव व्यवहार को किसी एक दृष्टिकोण से अध्ययन नहीं कर रहा है, अपितु उसका दृष्टिकोण एक समन्वित दृष्टिकोण है। पहले समाज में विश्वास रखने वाले व्यक्ति के व्यवहार को सम्पूर्ण रूप से समाज में आधारित मानते थे और व्यक्ति को महत्त्व देने वाले सामाजिक व्यवहार व्यक्ति के व्यवहार का प्रतिफल मानते थे। इस पर व्यक्ति और समाज के अनेक विवाद थे। वास्तव में व्यक्ति का भी महत्त्व है और समाज का भी। दोनों का अपना-अपना स्थान है। सामाजिक व्यवहार के लिए कुछ वैयक्तिक आधार हैं और व्यक्ति के व्यवहार के आधार सामाजिक एवं सांस्कृतिक हैं। सामाजिक मनोविज्ञान में इन दृष्टिकोणों का समन्वय करके दोनों के वास्तविक महत्त्व को प्रकाश में लाया गया है। इस प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान मानव व्यवहार को एक समन्वित दृष्टिकोण प्रदान कर रहा है। इसके फलस्वरूप एक ऐसे विज्ञान की रचना होगी जो मानव व्यवहार को समन्वित दृष्टिकोण से अध्ययन करेगा। आजकल तो सामाजिक मनोविज्ञान ही एक ऐसा विज्ञान है जो मानव व्यवहार का अध्ययन एक समन्वित विज्ञान के रूप में कर रहा है।

प्रश्न

1. "वहाँ किसी भी प्रकार के विभेद की ऐसी कठोर रेखा नहीं है, जो सामान्य मनोविज्ञान को एक तरफ व समाजशास्त्र या मानवशास्त्र को दूसरी तरफ करे।" (क्लाइनबर्ग) आलोचना कीजिए।

("There is, however, no strict line of demarcation from General Psychology on the one hand and Sociology or Anthropology on the other." (Klineberg) Comment. Agra, M.A. Sociology, 1952)

2. सामाजिक मनोविज्ञान का समाजशास्त्र, मानवशास्त्र और अपराधशास्त्र से सम्बन्ध बताइए।

(Bring out the relationship of Social Psychology with Sociology, Anthropology and Criminology. Rajasthan, M.A. Sociology,))

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

3. सामाजिक मनोविज्ञान का अन्य सामाजिक विज्ञानों—विशेष सामान्य मनोविज्ञान, समाजशास्त्र और सांस्कृतिक मानवशास्त्र से सम्बन्ध बताइए

(Bring out the relationship of Social Psychology with o Social Sciences, specially with General Psychology, Sociology Cultural Anthropology.)

4. सामाजिक मनोविज्ञान की व्याख्या कीजिए और सामाजिक विज्ञा इसकी स्थिति का वर्णन कीजिए। आप कहाँ तक यह सोचते हैं कि सामाजिक विज्ञान मानव व्यवहार का एक समन्वयात्मक विज्ञान निर्मित करने में सहायता सकता है।

(Define Social Psychology and describe its status in So Sciences. How far do you think that Social Psychology can help building up integrated science of human behaviour? Agra, M Sociology, 1960; M.A. Alternative Course in Sociology, 1961)

5. सामाजिक विज्ञानों में सामाजिक मनोविज्ञान के स्थान का विश्लेषण कीजिए। सामाजिक समस्याओं के समझने में यह कहाँ तक सहायक है?

(Analyze the place of Social Psychology in Social Scien How can it be helpful in the understanding of social problem Agra, M.A. Sociology Alternative Course, 1963)

6. 'सामाजिक मनोविज्ञान की परिभाषा कीजिए। सामाजिक मनोवि और समाजशास्त्र के अन्तःसम्बन्धों का वर्णन कीजिए।

(Define 'Social Psychology'. Bring out the relationship betw social psychology and sociology. Agra, M.A. Sociology, 1964)

7. "सामाजिक मनोविज्ञान सामान्य मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के सीमावर्ती विज्ञान है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।

("Social Psychology is a border-line science between Ge Psychology and Sociology." Explain this statement. Agra, Sociology, 1968)

8. 'मनोविज्ञान में कोई भी अनुसन्धान अनिवार्य रूप से सामाजिक विज्ञान के सन्दर्भ में रहता है।' इस कथन की विवेचना कीजिए और साम मनोविज्ञान और समाजशास्त्र के बीच सम्बन्ध का विश्लेषण कीजिये।

('Any piece of research is psychology must, inevitably implications for social psychology.' Comment on this statemen discuss the relation between Social Psychology and Sociology. M.A. Sociology Alternative Course, 1966)

9. क्या सामाजिक मनोविज्ञान और समाजशास्त्र में भेद करना सम्भव विवेचना कीजिए।

(It is possible to distinguish between social psychology sociology? Discuss. Agra M. A. Sociology, Alternative C 1968)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

3

सामाजिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं आधुनिक प्रवृत्तियाँ

(Historical Background, Current Trends of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान मानव प्रकृति एवं व्यवहार का अध्ययन है। मनुष्य ने उन विज्ञानों की ओर अधिक ध्यान दिया जो उसके बारे में नहीं थे और उसकी भावनाओं को ठेस पहुँचाते थे। मनुष्य समाज की कल्पित मान्यताओं के विरुद्ध कुछ भी सुनने को तैयार नहीं है। इसका परिणाम यह हुआ कि सामाजिक मनोविज्ञान का जन्म बहुत देर में हुआ। विलि ने इस सम्बन्ध में उचित ही लिखा है, "मेरा विचार है कि विज्ञान की शाखाओं की उत्पत्ति का क्रम यह रहा है कि मानव के प्रतिष्ठा सम्बन्धी विभ्रमों को अति न्यून क्षति पहुँचाने वाले विज्ञान पहले उत्पन्न हुए। गणित सर्वप्रथम आया क्योंकि इसने मानव की प्रतिष्ठा को अति न्यून हानि पहुँचायी, दूसरे भौतिकशास्त्र आया यद्यपि इसने सांसारिक श्रेष्ठता का मनुष्य के विभ्रम को कम किया, फिर भी अद्‌भुत व्यक्ति को अक्षीण बनाये रखा। जीवशास्त्र की उपेक्षा की गयी; क्योंकि इसमें मनुष्य का पशुओं के समान विश्लेषण अन्तर्निहित है जबकि वह देवता बने रहने पर बल देता है, तथा मनोविज्ञान को आज तक इसलिए दूर रखा गया, क्योंकि इसकी स्वीकृति से हजारों गौरवशील संस्थाएँ समाप्त हो जायेंगी। यहाँ तक कि वैज्ञानिकों के अनगिनत पवित्र सिद्धान्त समाप्त हो जायेंगे।"

सामाजिक मनोविज्ञान का गर्भाशय

(Matrix of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि समझने के लिए पहले हम विचारधाराओ पर प्रकाश डालेंगे जिनके फलस्वरूप सामाजिक मनोविज्ञान की उत्पत्ति सम्भव हो सकी। वास्तव में जैसे-जैसे मनोविज्ञान विकसित होता गया और उसकी सीमाएँ बढ़ती गयीं वैसे-वैसे नवीन मनोविज्ञान बनते गये। वैसे तो प्रारम्भ से ही मानव विज्ञान के विषय में कुछ न कुछ कहा गया है, परन्तु विशेष रूप से प्लेटो तथा अरस्तू ने इस विषय में कहा है।

प्लेटो और अरस्तू

प्लेटो का मत था कि मनुष्य जिस प्रकार के समाज में रहता है उसी प्रकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की सामाजिक व्यवस्था सीख लेता है। मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्तियाँ होती हैं, परन्तु मनुष्य समाज के अनुसार इन प्रवृत्तियों को परिवर्तित कर लेता है। जन्मजात प्रवृत्तियों को शिक्षा के द्वारा परिवर्तित किया जा सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्लेटो ने सामाजिक शिक्षण के सिद्धान्त को उसी समय रखा था।

प्लेटो के शिष्य अरस्तू के विचार अपने गुरु से बिलकुल विपरीत थे। अरस्तू का विचार है कि समाज व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियों का परिणाम है। मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात और अपरिवर्तनशील होती हैं। इसी अपरिवर्तनशील मूल स्वभाव का परिणाम सामाजिक संगठन है। अरस्तू ने व्यक्ति को अत्यधिक महत्त्व दिया है और समाज को उसका परिणाम माना है।

एपीक्योरस का आनन्दवाद

अरस्तू के उपरान्त एक अन्धकार का युग आया। यूनान पराधीन हो गया। उस समय व्यावहारिक जीवन की समस्याएँ प्रमुख बन गयीं। एपीक्योरस का मत है कि जीवन का मुख्य उद्देश्य भय और दुःख से निवृत्ति प्राप्त करना है। एपीक्योरस ऐसे व्यवहार का समर्थन करता है जिससे सुख प्राप्त हो।

जीनो का आत्मसंयमवाद (Zenophene's Self-control)

एपीक्योरस के समय में जीनो भी था। जीनो का मत एपीक्योरस के भिन्न था। जीनो का मत है कि आत्मसंयम ही मनुष्य के लिए सब कुछ है।

देकार्ते (Descartes)

देकार्ते[1] का जन्म 1556 ई. तथा मृत्यु 1650 ई. में हुई। देकार्ते ने मनोविज्ञान का पुनरुत्थान किया। उसने मनोविज्ञान को अध्ययन के लिए एक नयी दिशा प्रदान की। देकार्ते ने यह मत रखा कि ज्ञान पुस्तकों में नहीं है, अपितु अनुभव में है। देकार्ते के कार्य के फलस्वरूप अनुभववाद का जन्म हुआ। अनुभववाद (empiricism) ने मनोविज्ञान को एक नयी विचारधारा प्रदान की।[2]

कानूनी मत (Legal point of view)

जोन लॉक ने अनुभव को महत्त्व दिया। लॉक (Locke) ने कहा कि बालक का मन जन्म के समय एक कोरी पट्टी की तरह होता है। अनुभव के साथ-साथ उस पट्टी पर चिह्न बनते जाते हैं। लॉक ने जन्मजात ज्ञान के मत का खण्डन किया।

सन् 1651 के लगभग अंग्रेज दार्शनिक थामस हॉब्स (Thomas Hobbes) ने मानव की मूल प्रकृति पर प्रकाश डाला। हॉब्स ने मनुष्य को अत्यन्त स्वार्थी कहा।

रूसो (Rousseau) ने कहा कि मनुष्य वस्तुतः शुद्ध, निस्वार्थी एवं परोपकारी होता है। समाज एवं सभ्यता के प्रभाववश ही मनुष्य कुकृत्यों की ओर उन्मुख होता है। समाज ही मनुष्य के विशुद्ध मन को कलुषित करता है। अतः मनुष्य

1 Regers, *A Student's History of Philosophy*, pp. 238-39.
2 Descartes, *Discourse Upon Method.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उचित व प्राकृतिक विकास के लिए उसे यथासम्भव समाज के बुरे प्रभावों से दूर रखना चाहिए।

उपयोगितावाद (Utilitarianism)

जेरिमि बेन्थम ने उपयोगितावाद का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उनका सिद्धान्त था कि मनुष्य स्वभाव से सुख की खोज में लगा रहता है। बेन्थम ने जनवादी विचारधारा का स्रोत प्रारम्भ किया। बेन्थम 1748 से 1832 ई. तक रहा।

सामाजिक मनोविज्ञान की उत्पत्ति
(Origin of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान के गर्भाशय का विवरण हम कर चुके हैं। इन विचारों ने सामाजिक मनोविज्ञान की ओर ध्यान आकर्षित कराया। अब लोग स्पष्ट रूप से मानव व्यवहार के विषय में विचार करने लगे थे।

हैगॅल का प्रभाव

हैगॅल जर्मनी का एक अत्यधिक प्रमुख विचारक हुआ है। हैगॅल ने मानव व्यवहार को सामाजिक दृष्टिकोण से अध्ययन करने पर बल दिया है। हैगॅल ने यह धारणा बनायी कि लोकात्मा (Volksgeist) परमात्मा से उत्पन्न या उसका मूर्तरूप है। हैगॅल की इस विचारधारा का अत्यधिक महत्त्व है। इस धारणा का प्रभाव विभिन्न दिशाओं में, साहित्य और कला के क्षेत्रों में और साथ ही कानून और भाषा, पुराण और प्रथा की व्याख्या में देखा जा सकता है। हैगॅल की राष्ट्रीय आत्मा की यह धारणा बहुत ही धूमिल रही है और यह नहीं कहा जा सकता कि कानून के इतिहास के क्षेत्र में इससे कोई परिणाम हुए या नहीं।

आगस्त कॉम्ट का यथार्थवाद

हैगॅल का समकालीन कॉम्ट था। कॉम्ट को समाजशास्त्र का जन्मदाता भी कहा जाता है। कॉम्ट ने यथार्थवाद (Positivism) के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। कॉम्ट ने यह विचार रखा कि विभिन्न युगों में विभिन्न प्रकार से समाज में एकता लाने के लिए ही युग-परम्पराओं का प्रचलन होता है।

स्पेन्सर का विकासवाद

हैगॅल तथा कॉम्ट में उपरान्त विकासवाद का सिद्धान्त विकसित हुआ। डार्विन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'जातियों की उत्पत्ति' (Origin of Species) 1859 में प्रकाशित की। हर्बर्ट स्पेन्सर इससे अत्यधिक प्रभावित हुआ और उसने संश्लेषणात्मक दर्शन (Synthetic Philosophy) को पुष्ट किया।

लजारु और स्टीन्थाल

लजारु और स्टीन्थाल पर भी हैगॅल का प्रभाव पड़ा। इन दोनों को प्रायः सामाजिक मनोविज्ञान का संस्थापक कहा जाता है। 1860 में इन्होंने लोक-मनोविज्ञान और भाषाविज्ञान के अध्ययन के लिए एक पत्र निकाला। लजारु ने लोक-मनोविज्ञान की परिभाषा करते हुए लिखा है, "लोकमनोविज्ञान का कार्य उन नियमों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को ढूंढ़ना है जो बहुत सारे लोगों के एक साथ रहने और इकट्ठे काम करने में काम करते हैं।

लोकमनोविज्ञान की विषय-सामग्री, भाषा, कला, धर्म और व्यवहार है। लजारु तथा स्टीन्थाल ने अनुभवमूलक विधि को इसकी अध्ययन पद्धति बताया है। इन्होंने लोकमनोविज्ञान के दो भाग किये। पहला भाग सभी समूहों या राष्ट्रों में समान रूप से पाये जाने वाले तथ्यों के पीछे रहने वाले सामान्य नियमों के अध्ययन के लिए और दूसरा, जिसे उन्होंने मनोवैज्ञानिक नृजाति शास्त्र (Psychological Ethnology) कहा, राष्ट्रों और समूहों की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के अध्ययन के लिए।

गिन्सबर्ग तथा कुछ अन्य मनोवैज्ञानिक लजारु तथा स्टीन्थाल को सामाजिक मनोविज्ञान का संस्थापक नहीं मानते। गिन्सबर्ग ने तो स्पष्ट लिखा है कि "सामाजिक मन के स्वरूप के बारे में उनके जो अरुचिकारक वर्णन हैं (जिनमें वे दो मौलिक विरोध रखने वाले सिद्धान्तों यानि हर्बर्ट का मनोविज्ञान और हैगॅल के दर्शन में समझौता करने की कठिनाई के शिकार मालूम पड़ते हैं) उनको छोड़कर, उनकी वास्तविक देन सामाजिक मनोविज्ञान के बजाय विस्तृत भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में है। जो कुछ भी हो, किसी ज्ञात प्रभाव का उनको श्रेय देना मुश्किल है।"

जर्मनी में विल्हेल्मवुन्ट का कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण है। वुन्ट के अनुसार सामाजिक मनोविज्ञान सामान्य मनोविज्ञान का एक आवश्यक अंग है। वुन्ट ने भाषा पौराणिक विचार और प्रथाओं इत्यादि की मानसिक उपजों का अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान का क्षेत्र बताया है।

बाल्डविन

विकासवाद के सिद्धान्त के विकास से तुलनात्मक मनोविज्ञान में बहुत महत्त्वपूर्ण काम हुआ और इसका सामाजिक मनोविज्ञान की समस्याओं पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। बाल्डविन ने 1857 में अपनी पुस्तक प्रकाशित की जिसका नाम 'Social and Ethical Interpretations in Mental Development' था और उसका उपनाम (Sub-title) 'A Study in Social Psychology' था। बाल्डविन ने अनुकरण, सुझाव तथा व्यवस्थापन के सिद्धान्तों द्वारा व्यक्ति के विकास को चित्रित किया। बाल्डविन का प्रभाव कूले तथा मीड पर पड़ा।

कूले तथा मीड

कूले ने व्यक्ति और समाज का अप्रत्यक्ष सम्बन्ध बताया। कूले ने व्यक्ति और समाज दोनों के ही पारस्परिक प्रभाव पर बल दिया। मीड ने अहं की उत्पत्ति एवं विकास का विश्लेषण प्रस्तुत किया। उसने अनुकरण और कार्यग्रहण का व्यक्तित्व के विकास में महत्त्व दर्शाया।

बैगहॉट, टार्डे, ले बाँ

सामाजिक जीवन में पाये जाने वाले सहज प्रवृत्ति, संवेग और अचेतन के तत्त्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को ये लोग प्रकाश में लाये। टार्डे ने अनुकरण के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। ले बाँ ने भी इसी तथ्य पर बल दिया है।

रॉस तथा मैकडूगल

सन् 1908 में सामाजिक मनोविज्ञान पर दो पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित हुईं। एक पुस्तक ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक मैकडूगल के द्वारा लिखी हुई थी और दूसरी अमरीकन समाजशास्त्री रॉस के द्वारा। मैकडूगल मानव व्यवहार को मूलप्रवृत्तियों पर आधारित मानता था। रॉस टार्डे से अत्यधिक प्रभावित हुआ था और उसके अनुकरण के सिद्धान्त को मानता था।

फ्रायड तथा युंग

धीरे-धीरे फ्रायड (Sigmund Freud) के मत का विकास हुआ। फ्रायड और उसके मत को मानने वालों ने लगभग सभी मानसिक समस्याओं का मूल कारण मानव-प्रकृति और समाज में चल रहे झगड़े को बताया। मनोविश्लेषणवादियों (Psychoanalysts) का सिद्धान्त था कि मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों और समाज में आपस का विरोध है और यह विरोध लगातार चलता रहता है। इस सिद्धान्त के अनुसार समाज का संगठन मनुष्य की मूलप्रवृत्तियों का परिणाम नहीं हो सकता, क्योंकि किसी भी घटना के कारण और परिणाम में द्वन्द्व कैसा? मनोविश्लेषणवादियों का कहना है कि समाज का विकास कुछ प्रतिबन्धों के रूप में हुआ है। ये प्रतिबन्ध मनुष्य को उसकी मूलप्रवृत्तियों द्वारा प्रेरित व्यवहार से रोकते हैं। ये ही प्रतिबन्ध मनुष्य को समाज के अन्य सदस्यों के नाम शान्ति तथा साहचर्य के साथ रहने के लिए बाध्य करते हैं। अतः समाज का विकास मनुष्य की मूलप्रवृत्तियों के प्रकाशन के नतीजे के तौर पर नहीं हुआ। समाज का विकास मनुष्य की मूलप्रवृत्तियों के दमनकारी एवं संशोधन करने वाले साधनों के रूप में हुआ है। इस मत से सभी विद्वान सहमत नहीं हैं। परन्तु मुक्त कण्ठ से प्रायः सभी ने माना है कि मनुष्य सन्तुष्ट न होने वाला और कुण्ठित है। वह सदा सामाजिक बन्धनों और प्राकृतिक प्रेरणाओं के बीच छटपटाता रहता है।

आल्पोर्ट

सन् 1924 में आल्पोर्ट ने अपनी पुस्तक प्रकाशित की। इन्होंने सामाजिक मनोविज्ञान को एक नया मोड़ दिया।

किम्बाल यंग

सन् 1927 और 1930 में किम्बाल यंग ने अपनी पुस्तकें प्रकाशित कीं। इन्होंने मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय-सांस्कृतिक सामग्री के एकीकरण पर बल दिया। इन्होंने सामूहिक व्यवहार और व्यक्तित्व के अध्ययन पर भी बल दिया।

अब सामाजिक मनोविज्ञान तीव्र गति से बढ़ रहा है। भारत में भी अब इसका विकास होता जा रहा है। मनोविज्ञान, समाजशास्त्र एवं मानवशास्त्र के पाठ्यक्रमों में इसे स्थान मिलता जा रहा है। आशा की जाती है कि शनैः-शनैः यह अपना उचित स्थान इस देश में प्राप्त कर लेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधुनिक प्रवृत्तियाँ
(Recent and Current Trends)

सामाजिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर हमने प्रकाश डाला। इससे यह स्पष्ट हो गया होगा कि सामाजिक मनोविज्ञान की उत्पत्ति एवं विकास किस प्रकार हुआ। अब हम आज के सामाजिक मनोविज्ञान की कुछ आधुनिक प्रवृत्तियों एवं विचारधाराओं पर प्रकाश डालेंगे। आधुनिक प्रवृत्तियों के विषय में लिखते हुए किम्बाल यंग ने छह प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों का उल्लेख किया है। ये आधुनिक प्रवृत्तियाँ निम्न हैं :

1. **अध्ययन पद्धति के रूप में परिवर्तन** (Change in the Methods of Study)—सामाजिक मनोविज्ञान की अध्ययन पद्धति पहले गुणात्मक (qualitative) थी। जीवन इतिहास का विशेष रूप से प्रयोग किया जाता था। बाद में विस्तृत वैयक्तिक अध्ययन (case study) का प्रयोग होने लगा। आजकल इस गुणात्मक अध्ययन पद्धति के स्थान पर गणनात्मक (quantitative) पद्धतियों पर बल दिया जाता है। निदर्शन प्रणाली (sampling method) का अधिकाधिक प्रयोग किया जाता है। प्रश्नावली, प्रक्षेपण परीक्षा विधि (projective tests), वर्ग श्रेणी (rating scale) एवं अन्य सांख्यिकीय (statistical) पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। सामाजिक मनोवैज्ञानिकों का विश्वास है कि उनका क्षेत्र अब अधिक विषयक एवं वैज्ञानिक होता जा रहा है।

2. **विषय सामग्री का प्रस्तुतीकरण** (Preservation of Subject Matter)—पहले सामाजिक मनोविज्ञान की विषय-सामग्री का प्रस्तुतीकरण विवरणात्मक होता था, अब इसके स्थान पर विश्लेषणात्मक (analytical) हो गया है।

3. **मूलप्रवृत्ति के सिद्धान्त के स्थान पर शिक्षण सिद्धान्त का प्रतिस्थापन** (Substitution of the Principle of Learning in Place of Principle of Instincts)—सामाजिक मनोविज्ञान में पहले मूलप्रवृत्ति का सिद्धान्त एक व्याख्यात्मक सिद्धान्त के रूप में था। अब यह सिद्धान्त उतना महत्त्वपूर्ण नहीं रहा है और उसका स्थान शिक्षण सिद्धान्त ने ले लिया है। शिक्षण सिद्धान्त व्यवहारवादियों की छाप है। इससे स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान पर आजकल व्यवहारवादी छाप है।

4. **सांस्कृतिक मानवशास्त्र का बढ़ता हुआ संघात** (Increasing Impact of Cultural Anthropology)—सामाजिक मनोविज्ञान पर सांस्कृतिक मानवशास्त्र का संघात बढ़ रहा है। अन्तरसांस्कृतिक-तुलनाओं के कार्य ने हमारे दृष्टिकोण को विस्तृत किया है और पूर्वात्मक अहंवाद (ethnocentrism) से बाहर निकलने में सहायता की है। व्यक्तित्व के अध्ययन में विशेष रूप से सामाजिक मनोविज्ञान सांस्कृतिक मानवशास्त्र की सहायता लेता है।

5. **चिकित्सालय और प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का बढ़ता हुआ प्रभाव** (Increasing Effect of Clinical and Experimental Psychology)—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक मनोविज्ञान पर चिकित्सालय तथा प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। मनोचिकित्सा भी अपना प्रभाव डाल रही है।

6. **सामाजिक मनोविज्ञान के नवीन मूलाधार—अन्तःक्रिया, कार्य और स्थिति** (New Foundation of Social Psychology—Interaction, Role and Status)—अन्तःक्रिया, कार्य और स्थिति के सिद्धान्त सामाजिक मनोविज्ञान के मूलाधारों के रूप में अधिकाधिक स्वीकार किये जाने लगे हैं। व्यक्ति को केवल शून्य में व्यक्ति के रूप में नहीं देखा जाता है। सामाजिक व्यवहार के विश्लेषण के लिए किसी भी नमूने की इकाई के रूप में अन्तःक्रिया प्रतिमान अधिकाधिक स्वीकृत होता जा रहा है। कार्य आशा (role-expectation) और कार्य-ग्रहण (role taking) के सिद्धान्त भी समूह के विश्लेषण में मान्य सिद्धान्त होते जा रहे हैं। समूह मन के सिद्धान्त को अन्तिमाघात लग चुका है और वह समाप्त हो चुका है।

शेरिफ एवं शेरिफ के अनुसार

शेरिफ तथा शेरिफ ने सामाजिक मनोविज्ञान की तीन निम्न आधुनिक प्रवृत्तियों की ओर ध्यान दिलाया है :

1. **वैज्ञानिक पद्धतियों एवं विधियों का प्रयोग** (Use of Scientific Methods and Techniques)—सामाजिक मनोविज्ञान में वैज्ञानिक पद्धतियों एवं विधियों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। सामाजिक मनोविज्ञान की विषय-सामग्री वैज्ञानिक पद्धतियों एवं विधियों के द्वारा प्रमाणित कर ली गयी है। शेरिफ तथा शेरिफ ने प्रयोगात्मक विधियों पर अत्यधिक बल दिया है। उन्होंने लिखा है, "जब कभी सम्भव हो, अत्यधिक प्रभावशाली पद्धतियाँ और प्रविधियाँ वे हैं, जिनसे प्रयोग सम्भव हो सके। प्रयोगात्मक पद्धतियों को प्राथमिकता तब देनी चाहिए यदि वे अध्ययन के लिए चुनी गयी समस्या की आवश्यक विशेषताओं को अपंग व विनाश न करती हों। प्रयोग एक नियमित प्रकार का अवलोकन है जो व्यवस्थित विचलनों के किसी तात्कालिक पहलू या पहलुओं (विचलनों) की समस्या की परीक्षा के लिए हो, जो अन्य पहलुओं को सम्मिलित नहीं करता या उनको स्थिर रख छोड़ता।।"[1]

शेरिफ तथा शेरिफ का यह भी मत है कि एक ही उपकल्पना को अनेक पद्धतियों के द्वारा अध्ययन करना चाहिए और यदि सबके परिणाम एक से ही निकलते हों तो ऐसे तथ्यों को अधिक विश्वास के साथ स्वीकार किया जा सकता है।

2. **आवश्यक यथादर्शन प्राप्त करना** (Achieving Necessary Perspective)—प्रायः हम वस्तुओं को अपने दृष्टिकोण से ही देखते हैं। इसे अहंवाद कहते हैं। अहंवाद की व्याख्या करते हुए शेरिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "उन उद्देश्यों, व्यक्तियों और घटनाओं का मूल्यांकन, इस सन्दर्भ में कि वे मूल्यों या सामाजिक नियमों,

---

1 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 760.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिनको उन्होंने आत्मसातीकरण या अन्तःव्यवस्थित कर लिया हो, जैसा उनका स्वयं का है……इसी प्रवृत्ति को अहंवाद कहा जाता है।"[1]

सामाजिक मनोवैज्ञानिक भी इस अहंवाद से प्रभावित हैं। उनका प्रत्येक अध्ययन इससे प्रभावित होता है। अनस्टैसी और फॉवले ने उचित ही कहा है, "अब तक सब प्रकार के व्यवहार अंतरंग की उत्तेजित पृष्ठभूमि के द्वारा प्रभावित किये जाते हैं, यह माना जाता है कि मनोवैज्ञानिक समस्त सांस्कृतिक समूहों में पाये जाने वाले मानव व्यवहारों के लिए सामान्यीकरण नहीं कर सकता। बहुत से वक्तव्य जो सामान्य मनोविज्ञान के शीर्षक के नीचे दिये जाते हैं वे वास्तव में किसी भी हद में सामान्य नहीं हैं, बल्कि वे मानव व्यवहारों पर आधारित हैं जो किसी एक संस्कृति में विकसित होते हैं।"[2]

यदि हमें विषयक (objective) विषय-सामग्री एकत्रित करनी है तो इस अहंवाद को समाप्त करना होगा। यह तभी हो सकता है जबकि हम अन्तरसांस्कृतिक तुलनाओं का सहारा लें। सांस्कृतिक मानवशास्त्र इसमें मदद कर सकता है और इसलिए उसका प्रभाव सामाजिक मनोविज्ञान पर बढ़ता जा रहा है। सामाजिक मनोविज्ञान के सिद्धान्त तभी सार्वभौमिक एवं मान्य हो सकते हैं जबकि उन सिद्धान्तों का परीक्षण अनेक समाजों और संस्कृतियों में कर लिया गया हो और वे खरे उतरे हों।

3. **अन्तःक्रियात्मक प्रभावों के संदर्भ में सामाजिक व्यवहार का अध्ययन** (Study of Social Behaviour in a Frame of Reference of Intracting Influences)—अन्तःक्रिया का महत्त्व सामाजिक मनोविज्ञान में बढ़ता जा रहा है। शेरिफ तथा शेरिफ ने इस विषय में लिखा है, "एक केन्द्रीय प्रवृति इन बाद के दस वर्षों में दोनों ओर से व्यक्ति और समूहों के (संस्कृति, समाज) प्रभावों के अध्ययन की ओर रही है, जैसी कि वे क्रिया, प्रतिक्रिया या अन्तःक्रिया व्यवहार और अनुभव के निर्धारण में करते हैं।"[3]

किम्बाल यग एवं शेरिफ व शेरिफ ने एक ही बातों की ओर संकेत किया है। शेरिफ व शेरिफ का पहला, दूसरा व तीसरा तथ्य क्रमशः यंग के पहले एवं पंचम, चतुर्थ तथा षष्ठ के समान है।

प्रश्न

1. सामाजिक मनोविज्ञान के विकास का सामाजिक विज्ञान के रूप में वर्णन कीजिए। इसने कहाँ तक मानवीय समूहों और उनकी गतिशीलता को उचित प्रकार से समझने में योग दिया है?

---

1 "They evaluate objects, persons, and events in terms of standards, values, or social norms which they have assimilated or internalized as their own......This tendency is referred to as *ethnocentrism*." *Ibid*, p. 761.

2 Anastasi and Foley, *Differential Psychology* (1949), p. 838.

3 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 765.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Discuss the development of Social Psychology in the field of Social Sciences. How far has it contributed towards a better understanding of human groups and their dynamics ? Agra, M. A. Alternative Course in Sociology, 1962)

2. सामाजिक मनोविज्ञान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की विवेचना कीजिए और सामाजिक मनोविज्ञान में आधुनिक प्रवृत्तियों पर विशेष रूप से प्रकाश डालिए।

(Discuss the historical background of Social Psychology and throw special light on the recent trends in Social Psychology.)

3. सामाजिक विज्ञान के रूप में सामाजिक मनोविज्ञान के विकास का वर्णन कीजिए। सामाजिक मनोविज्ञान में आधुनिक प्रवृत्तियों की विवेचना कीजिए।

(Describe the development of Social Psychology as a social science. Discuss the current trends in Social Psychology. Agra, M.A. Sociology, 1961.)

4. सामाजिक विज्ञानों की एक शाखा के रूप में सामाजिक मनोविज्ञान के विकास का विवेचन कीजिए। इसकी उपयोगिता और आधुनिक प्रवृत्तियों का विवेचन कीजिए।

(Discuss the development of Social Psychology as a branch of Social Sciences. Discuss its utility and current trends. Agra, M.A. Sociology, 1966.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

4

सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति एवं महत्त्व

(Nature & Importance of Social Psychology)

सामाजिक विज्ञानों को विज्ञानों की श्रेणी में रखा जाता है, परन्तु कुछ लोग इस पर आपत्ति करते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान भी एक सामाजिक विज्ञान है। परिणामस्वरूप जो आपत्ति लोग अन्य सामाजिक विज्ञानों के लिए उठाते हैं वही आपत्ति सामाजिक मनोविज्ञान के लिए भी उठाते हैं। सबसे प्रथम प्रश्न यह खड़ा होता है कि विज्ञान क्या है? विज्ञान के अर्थ को समझने के लिए पहले हमें यह समझना पड़ेगा कि वह क्या है जो विज्ञान नहीं है। इसको समझने के लिए हम सर्वप्रथम विज्ञान और इतिहास तथा विज्ञान और दर्शनशास्त्र के भेद को समझने का प्रयत्न करेंगे।

विज्ञान और इतिहास में भेद
(Difference between Science and History)

विज्ञान और इतिहास में काफी अन्तर है। विज्ञान सामान्य सिद्धान्तों से सम्बन्ध रखता है। जो घटनाएँ बार-बार घटती हैं विज्ञान उनसे अधिक सम्बन्धित है। स्मिथ ने इसे दृष्टि में रखते हुए स्पष्ट रूप से लिखा है, "विज्ञान के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण वे तथ्य हैं जो बहुत बार होते हैं, स्थिर हैं अथवा काल और स्थान पर बारम्बार घटित होते हैं। इसी कारणवश विज्ञान प्रकारों और वर्गों से सम्बन्धित है; यह सामान्य सिद्धान्तों अथवा एकरूपता के सिद्धान्त की खोज करता है।"[1]

इतिहास की पभिाषा करते हुए उल्फ ने लिखा है कि "इतिहास किसी विशेष राष्ट्र अथवा संस्थाओं, आविष्कारों अथवा अन्वेषणों से सम्बन्धित है न कि राष्ट्रों और संस्थाओं आदि के नियमों से। ऐसे सामान्य नियम, नृवंश विद्या, नरतत्त्वीय विज्ञान, समाजशास्त्र अथवा मनोविज्ञान से सम्बन्धित होने चाहिए जो विज्ञान हैं, इतिहास से नहीं।"[2]

इससे स्पष्ट है कि विज्ञान सामान्य घटनाओं का अध्ययन करता है, इसलिए

---

1 "For science the most important facts are those which occur many times, those which are constant or repeated in time and space. For this reason science is concerned with types and classes, it seeks general principles or uniformities." Smith, *The Sociology of Rural Life* (1953), p. 4.

2 A Wolf, *Essentials of the Scientific Method* (1930), p. 13.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह उन वस्तुओं से अधिक सम्बधित है जो प्रायः होती रहती हैं तथा जिनको हम सामान्य रूप से ढूंढ़ सकते हैं। इतिहास सामान्य से सम्बन्धित नहीं अपितु विशेष से सम्बन्धित है। इतिहास और विज्ञान के बीच यह एक बहुत बड़ा भेद है। टैगार्ट ने इतिहास और विज्ञान के बीच भेद करते हुए लिखा है, "विज्ञान उद्देश्यों, सत्ताओं, वस्तुओं तथा उनके सम्बन्धों से सम्बन्ध रखता है, इतिहास अपना सम्बन्ध घटनाओं से रखता है।"[1]

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि इतिहास उन वस्तुओं की अधिक चिन्ता करता है जो कभी-कभी होती हैं और जिनका विशिष्टता के कारण अपना एक स्थान होता है। विज्ञान ऐसी विशेष वस्तुओं से कोई भी सम्बन्ध नहीं रखता। स्मिथ ने इस विषय में लिखा है, "अद्वितीय वस्तु का कोई भी वैज्ञानिक मूल्य नहीं है।"[2]

विज्ञान एवं दर्शनशास्त्र में भेद
(Difference between Science and Philosophy)

दर्शनशास्त्र विशेषतया हर वस्तु को तर्क की कसौटी पर कसता है। यदि वे तथ्य तर्क की कसौटी पर सच्चे सिद्ध होते हैं तो उन्हें दर्शनशास्त्र में उचित मान लिया जाता है। स्मिथ ने इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "दूसरी तरफ दर्शनशास्त्र में उपयोगी और मूल्यवान होने की मुख्य कसौटी यह है कि एक कल्पना अथवा कथन पूर्व विश्वासों से समता रखता है।"[3]

विज्ञान में उपकल्पना का निर्माण किया जाता है तथा उसे तर्क की कसौटी पर रखा जाता है। यदि वे सत्य सिद्ध होते हैं तो उन्हें केवल उपकल्पना (hypothesis) के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। इसके उपरोक्त तथ्यों के अवलोकन के द्वारा उनका सत्यापन (verification) और पुनः सत्यापन (re-verification) किया जाता है। विज्ञान में प्रयोग सिद्ध करना (empirical verification) एक अनिवार्य वस्तु है। स्मिथ ने विज्ञान और दर्शन में भेद करते हुए लिखा है, "....दर्शनशास्त्र से भिन्न, विज्ञान समस्त कल्पना के प्रत्यक्ष प्रमाण की माँग करता है।"[4]

---

1 "Science deals with objects, entities, things, and their relation; history concerns itself with events." (Fredereck J. Teggart, *Theory of History* (1925), Yale University Press, New Heloen, p. 71.

2 "The unique is of little scientific value." (Smith, *The Sociology of Rural Life* (1953), p. 4.

3 "In philosophy, on the other hand, the cheif criterion of usefulness and value is that a hypothesis or proposition be consistent with previous assertions." Smith, *The Sociology of Rural Life* (1953), p. 5.

4 "....unlike philosophy, science demands the empirical verification of all hypothesis." Smith, *The Sociology of Rural Life* (1953), p.5.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage.Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विज्ञान का अर्थ
(Meaning of Science)

विज्ञान का अर्थ समझने से पहले हम, विज्ञान के विषय में जो भ्रम साधारण-तया लोगों में पाया जाता है, उस पर थोड़ा-सा प्रकाश डालेंगे ।

विज्ञान के विषय में भ्रम (Misconception About Science)

विज्ञान के विषय में एक साधारण भ्रम पाया जाता है । लोग विशिष्ट प्रकार की विषय सामग्री को ही विज्ञान समझते हैं । उदाहरण के लिए लोग भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र इत्यादि को ही विज्ञान समझते हैं । लोगों का भ्रम यहाँ तक है कि वे इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिकी को विज्ञान का पर्यायवाची समझ लेते हैं । विज्ञान का विषय सामग्री से कोई भी सम्बन्ध नहीं है ।

विज्ञान—एक व्यवस्थित ज्ञान (Science—A Systematic Knowledge)

विज्ञान एक व्यवस्थित ज्ञान है जो एक निश्चित पद्धति के द्वारा प्राप्त किया जाता है । इस पद्धति को वैज्ञानिक पद्धति (scientific method) कहते हैं । इसकी पुष्टि करते हुए विद्वानों ने अपने विचार निम्न प्रकार व्यक्त किये हैं :

स्मिथ : "अतः कोई वस्तु विज्ञान है अथवा नहीं, वह इस प्रश्न पर आधारित है कि वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग किया गया है अथवा नही ।"[1]

कार्ल पियर्सन : "सम्पूर्ण विज्ञान की एकता केवल उसकी पद्धति में निहित है न कि उसकी सामग्री में ।"[2]

ए. डब्ल्यू. ग्रीन : "विज्ञान अनुसन्धान का ढंग है ।"[3]

लॉरी नेल्सन : "ढंग विज्ञान का एक सांकेतिक गुण है क्योंकि यह परिणामों की मान्यताओं को निश्चित करता है ।"[4]

बीसन्ज और बीसन्ज : "विषय वस्तु से अधिक पद्धति यह निश्चित करती है कि विज्ञान की कसौटी क्या है ।"[5]

गिलिन एण्ड गिलिन : "विज्ञान अनुसन्धान का एक ढंग है ।"[6]

बरट्रेंड : "सारांश रूप में, विज्ञान शब्द ज्ञान के एक सुव्यवस्थित प्रबन्धित

---

1 T. Lynn Smith, *This Sociology of Rural Life* (1953), p. 3.

2 "The unity of all sciences consists alone in its methods not in its material." Karl Pearson, *The Grammer of Science*.

3 "Science is a way of investigation."(A.W. Green, *Sociology*, p.2[illegible]

4 "Method is the crucial quality of science, because it determines the validity of the results." Lowry Nelson, *Rural Sociology* (1955), p. 4.

5 "It is approach rather than contant that is test of science." J. Biesanz and M. Beisanz, *Modern Society* (1954), p. 3.

6 "Science is a way of investigation." Gillin and Gillin, *Cultural Sociology*, p. 7.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अंग को जो वैज्ञानिक ढंग के प्रयोग द्वारा प्राप्त किया जाता है, निर्दिष्ट करने के लिए प्रयुक्त होता है।"[1]

चर्चमैन और अकॉफ : "विज्ञान कर्मकुशल खोज है।"[2]

स्मिथ : "विज्ञान को प्रायः एक प्रयोगात्मक प्रामाणिक ज्ञान के रूप में बताया जाता है।"[3]

उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि विज्ञान उस ज्ञान को कहते हैं जो वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग के द्वारा प्राप्त किया जाता है। इस प्रसंग में हमारे लिए यह समझना भी आवश्यक है कि वैज्ञानिक पद्धति किसे कहते हैं। अब हम वैज्ञानिक पद्धति को समझाने का प्रयत्न करेंगे।

वैज्ञानिक पद्धति
(Scientific Method)

"वैज्ञानिक पद्धति उस व्यवस्थित पद्धति को कहते हैं जो सामग्री का संग्रहण एक निश्चित कसौटी के आधार पर करती है।" प्रमुख रूप के व्यवस्थित पद्धति के निम्न पाँच चरण होते हैं :

1. समस्या का वरण (Selection of the Problem),
2. उपकल्पना का निर्माण (Formulation of Hypothesis),
3. अनुभूतिपूर्ण परीक्षण (Empirical Testing),
4. वर्गीकरण एवं निरूपण (Classification and Description), एवं
5. सामान्यीकरण (Generalization)।

1. **समस्या का वरण** (Selection of the Problem)—सर्वप्रथम वैज्ञानिक पद्धति में समस्या का वरण किया जाता है। कोई भी ऐसी समस्या ढूंढ़ी जाती है जो अनुसन्धान के योग्य होती है। समस्या का अभिप्राय यहाँ पर विघटन के अर्थ में नहीं है। समस्या का अर्थ किसी भी उस तथ्य से है जो अनुसंधान के लिए चुना जाता है। समस्या का स्पष्टतया वरण करने के लिये सम्बन्धित साहित्य का गहन अध्ययन करना पड़ता है।

2. **उपकल्पना का निर्माण** (Formulation of Hypothesis)—वैज्ञानिक पद्धति का दूसरा चरण उपकल्पना का निर्माण होता है। उपकल्पना का अभिप्राय उस

---

1. "In essence, the term is used to denote a systematically organized body of knowledge obtained through the use of scientific method." Alvin L. Bertrand in Bertrand and Associates, *Rural Sociology* (1958), p. 4.
2. "Science is efficient enquiring." C. West Churchman and Russel L. Ackolf, *Method of Inquiry, An Introduction to Philosophy and Scientific Method* (1950), p. 10.
3. "Science is often referred to as experimentally verified knowledge." T. Lynn Smith, *The Sociology of Rural life* (1953), p. 6.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कथन से होता है जो एक दशा या वस्तु के दूसरी दशा या वस्तु के सम्बन्ध को व्यक्त करता है। जो उपकल्पना तथ्यों के द्वारा सिद्ध की जा सकती है उस कल्पना को कार्य करण उपकल्पना कहते हैं। जब कोई कार्यकरण उपकल्पना कुछ अवलोकनों द्वारा प्रमाणित हो जाती है तो उसे नियम कहते हैं। उदाहरण के लिए, आइन्सटाइन का सापेक्षता का नियम। नियम जब अनुभूतिपूर्ण परीक्षण के द्वारा सत्य सिद्ध हो जाते हैं, तब उन्हें सिद्धान्त (Law) कहते हैं।

3. **अनुभूतिपूर्ण परीक्षण (Empirical Testing)**—अनुभूतिपूर्ण परीक्षण के निम्न दो भाग महत्त्वपूर्ण हैं।

(अ) अवलोकन (Observation)।

(ब) तार्किक विषय (Inference)।

(अ) **अवलोकन (Observation)**—जो भी उपकल्पना बनायी जाती उसके लिए अवलोकन किया जाता है। इसके लिए मानव इन्द्रियों को यथार्थ प्रयोग में लाया जाता है। प्रायः ऐसे यन्त्रों का भी प्रयोग किया जाता है जिनसे सूक्ष्म से सूक्ष्म घटनाओं का भी अवलोकन किया जा सके। लॉरी नेल्सन ने लिखा "इसलिए इन्द्रियों को मापने की रीतियों द्वारा परिपूरक होने की आवश्यकता है।

प्रायः अवलोकन के बिना कोई भी तथ्य प्रमाणित नहीं किया जा सकता अवलोकन की परिभाषा करते हुए वुल्फ ने लिखा है कि "पहचानी हुई वस्तुओं घटनाओं के कार्य, उनके निश्चित सम्बन्ध भी हमारे मानसिक अनुभवों की प्र सतर्कता है।"[2]

अवलोकन को हम निम्न दो भागों में बाँट सकते हैं :

(क) केवल अवलोकन (Bare observation), एवं

(ख) प्रयोग (Experiment)।

(क) **केवल अवलोकन** (Bare Observation)—केवल अवलोकन अ महत्त्वपूर्ण है। वस्तुओं एवं घटनाओं का सादा अवलोकन सभी लोग करते हैं। वि में इस प्रकार के अवलोकन को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता।

(ख) **प्रयोग** (Experiment)—प्रयोग अवलोकन का एक व्यवस्थित है। इसमें निश्चित प्रकार से एवं यंत्रों की सहायता से अवलोकन किया जाता विज्ञान में इस अवलोकन को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है।

(ब) **तार्किक विषय** (Inference)—तार्किक विषय की निम्न परिभा इसके अर्थ को स्पष्ट करने में सहायक रहेंगी :

"अन्य पूर्व निर्मित निर्णयों के आधार पर अथवा उनके परिणामस्वरूप नि (विश्वास अथवा मत) का निर्माण किया जाता है। यह अवलोकन के आधार प

---

1 "The senses, therefore, need to be supplemented by device measurement." Lowery Nelson, *Rural Society*, p. 5.

2 A. Wolf. *Essentials of the Scientific Method*, p. 14.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सकते हैं अथवा अस्थायी रूप से स्वीकार किये जाते हैं या आगे विचार-विमर्श के लिए अथवा वाद-विवाद के लिए ग्रहण किये जाते हैं।"[1]

बरट्रेंड ने लिखा है, तार्किक विषय को ज्ञात तथ्यों से अज्ञात तथ्यों की ओर एक तर्कसंगत आधारभूत सिद्धान्त की विधि कहकर परिभाषित किया गया है।"[2]

तार्किक विषय उस विषय को कहते हैं जो तर्क की कसौटी पर कसा जा सके और परिमाणित किया जा सके। तार्किक विषय मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं :

(i) निगमन (Deduction) एवं

(ii) आगमन (Induction)।

(i) **निगमन** (Deduction)—निगमन वह पद्धति होती है जिसमें सामान्य से विशेष का पता लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यह सर्वविदित सिद्धान्त हैं कि जो पैदा हुआ है वह एक दिन मरेगा। इस तथ्य के आधार पर हम निगमन पद्धति का प्रयोग करते हुए यह कह सकते हैं कि कृष्ण पैदा हुआ है इसलिए वह एक दिन अवश्य मरेगा।

(ii) **आगमन** (Induction)—आगमन वह पद्धति है जिसमें विशेष से सामान्य का पता लगाया जाता है। वैस्टावे ने लिखा है, "सामान्य से विशेष अथवा अल्प सामान्य से अधिक सामान्य न्यायसंगत तर्क है।"[3]

आगमन पद्धति में घटनाओं का अवलोकन किया जाता है और इन विशिष्ट घटनाओं से सामान्य निष्कर्ष निकाले जाते हैं। उदाहरण के लिए, राम मरता है, कृष्ण मरता है, गोपाल मरता है। इस अवलोकन से निगमन पद्धति के आधार पर हम कह सकते हैं कि मानव मृत्युवान है।

अवलोकन तथा तार्किक विषय वैज्ञानिक पद्धति के परमावश्यक अंग हैं।

स्मिथ ने लिखा है, "वैज्ञानिक पद्धति का निष्कर्ष पक्षपात रहित यथार्थ निरीक्षण को प्राप्त करने तथा इन निरीक्षणों से तर्क को पूर्णतया यथार्थ बनाने से होता है।"[4]

4. **वर्गीकरण एवं निरूपण** (Classification and Description)—जो भी तथ्य अवलोकित किये गये हैं उनका वर्गीकरण करना अत्यन्त आवश्यक है। जब तक उनका वर्गीकरण नहीं किया जाता वे हमारे लिए व्यर्थ हैं। स्मिथ ने वर्गी-

---

1 A. Wolf, *Essentials of the Scientific Method*, pp. 17-18.

2 "Inference is defined as a process of logically reasoning from known facts to unknown fact." Bertrand and Associates, *Rural Society*, p. 7.

3 "...the legitimate inference is of the general from the particular, or of the more general from the less general." F. W. Westaway, *Scientific Method*, p. 178.

4 "The essence of the scientific method consists of skill in securing unbiased, pertenent observation and accuracy in making logical inferences from these observations." T. Lynn Smith, *The Sociology of Rural Life*, p. 5.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करण के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "प्रकृति में निश्चित व्यवस्था निर्धारित करने की सर्वाधिक पूर्व एवं सरलतम विधियों में से एक वर्गीकरण भी थी, आज भी यह अत्यधिक महत्त्व रखती है।"[1]

वर्गीकरण के निश्चित नियम हैं। जहाँ तक सम्भव हो वर्गीकरण का ए निश्चित आधार होना चाहिए। वैस्टावे ने इन नियमों की ओर संकेत करते हुए लिखा है "(1) वर्गीकरण का (उपवर्ग अत्यधिक निषेधक होंगे) केवल एक आधार होना चाहिए (2) वर्गीकरण सर्वग्राही होना चाहिए; (3) अविच्छिन्न वर्गीकरण में प्रत्येक पद निकटतम होना चाहिए; (4) यह वर्गीकरण उचित होना चाहिए।"[2]

वर्गीकरण का तात्पर्य यह है कि एक बिखरे हुए असम्बन्धित तथ्यों के ढेर को एक ऐसा व्यवस्थित स्वरूप दे दिया जाता है जिससे प्रत्येक वस्तु का दूसरी वस्तुओं से एक निश्चित सम्बन्ध हो जाता है। उन्हें ऐसे तार्किक समूहों में व्यवस्थित कर लिया जाता है कि उनमें सम्बन्ध और प्रतिमान उत्पन्न हो जाते हैं।

निरूपण भी वैज्ञानिक पद्धति का एक प्रमुख भाग है। जब वस्तुएँ वर्गीकृत हो जाती हैं तो इन्हीं वर्गीकृत समूहों को नाम दे दिया जाता है तथा इनके लक्षणों का निरूपण कर दिया जाता है। इस निरूपण के उपरान्त तथ्य स्पष्ट रूप से वैज्ञानिक आधार धारण कर लेते हैं।

5. **सामान्यीकरण** (Generalization)—स्वीकृत तथ्यों के आधार पर सामान्य नियमों का निर्धारण किया जाता है। सामान्य नियमों का ही दूसरा नाम वैज्ञानिक नियम है। वैज्ञानिक सिद्धान्त की परिभाषा करते हुए मैकाइवर ने लिखा है, "ऐसे सिद्धान्त का दूसरा नाम केवल सावधानीपूर्वक वर्णित और नियम रूप से आवर्तक घटनाओं का अनुक्रम है।"[3]

इन सामान्य सिद्धान्तों के द्वारा स्वीकृत तत्त्वों के व्यवहार का कुछ निश्चित दशाओं में वर्णन कर दिया जाता है। सामान्य अथवा वैज्ञानिक नियमों के बारे में कहा जाता है कि ये कभी भी परिवर्तित नहीं होते। पर यह कल्पना भ्रामक है। वैज्ञानिक सिद्धान्त सदैव कसौटी पर कसे जाते हैं और उन पर पूर्ण विचार एवं प्रयोग होते रहते हैं। इनके वैज्ञानिक होने की सबसे बड़ी कसौटी यह है कि भविष्य में जो भी चाहे उनकी प्रामाणिकता की सत्यता को प्रकट कर सके।

वैज्ञानिक सिद्धान्त प्रमाणित सिद्धान्त हैं। वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करने के लिए यह बड़ा ही आवश्यक हो जाता है कि उसका एक वैज्ञानिक ढंग या वैज्ञानिक धारणा हो। अब हम इस बात को समझाने का प्रयत्न करेंगे।

---

1 *Ibid*, p. 7.

2 F. W. Westaway, *Scientific Method*, p. 222.

3 "Such a law is simply another name for a carefully described and uniformly recurring sequence of condition." R. M. MacIver *Social Causation*, p. 5.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वैज्ञानिक धारणा या भावना
(Scientific Attitude or Spirit)

विज्ञान केवल वैज्ञानिक कसौटियों पर ही आधारित नहीं है। उसके लिए कुछ और भी कसौटियों का होना परमावश्यक है। यदि वैज्ञानिक प्रणाली को उन अन्य प्रणालियों का सहारा न मिले तो उसकी आत्मा ही निर्जीव हो जाय। इन कार्य-प्रणालियों को वैज्ञानिक धारणा या भावना कहते हैं। उनके प्रमुख तत्त्व निम्न-लिखित हैं :

(1) **जिज्ञासा** (Curiosity)—जिज्ञासा उस प्रवृत्ति का नाम है जिसके द्वारा किसी चीज को जानने एवं अनुसन्धान करने की प्रेरणा प्राप्त हो। जिज्ञासा सदैव नियमित एवं व्यवस्थित प्रकार की होती है। ज्ञान और स्वार्थ एक-दूसरे के पारस्परिक विरोधी हैं। ज्ञान केवल ज्ञान प्राप्ति में ही लगाया जाता है, स्वार्थ की सिद्धि में नहीं।

(2) **कर्मविषयता** (Objectivity)—कर्मविषयता वैज्ञानिक धारणा का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। उसके अन्तर्गत जो भी तथ्य एकत्र किये गये हैं संग्रहकर्ता को उन पर अपने दृष्टिकोण से विचार न करना चाहिए, अपितु जैसे भी वे हैं उन पर उसी ढंग से विचार किया जाये। अवलोकन के समय वैज्ञानिकों को भय एवं आशाओं से मुक्त रहना चाहिए। अनुसन्धानकर्ता, अवलोकन के समय अपने पूर्व निश्चित विचारों को काम में न लाये। कर्मविपयता उस स्थिति या दशा को कहते हैं जब अवलोकन पक्षपात रहित होता है। कार ने कर्मविषयता की व्याख्या करते हुए लिखा है, "सत्य की कर्मविपयता से यह अभिप्राय है कि दृष्टि विषयक संसार किसी व्यक्ति के विश्वासों, आशाओं या भय से स्वतन्त्र एक वास्तविकता है—जिसे हम सहज्ञान एवं कल्पना से नहीं, अपितु वास्तविक अवलोकन के द्वारा प्राप्त करते हैं।"[1]

इस परिभाषा से स्पष्ट है कि संसार एक वास्तविकता है और घटनाएँ किन्हीं सामान्य नियमों के द्वारा संचालित होती हैं। कर्मविषयता का अभिप्राय घटनाओं का उसी वास्तविकता से मूल्यांकन करना है जैसा कि मानव इन्द्रियों ने उसे देखा है। ग्रीन ने इसे और भी सुन्दर शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है—"कर्मविषयता प्रमाण का निष्पक्षता से परीक्षण करने की इच्छा एवं योग्यता है।"[2]

प्रथम तो व्यक्ति में भी इस इच्छा का होना बड़ा ही आवश्यक है कि वह वस्तु का अवलोकन पक्षपात रहित ढंग से करेगा और इस इच्छा के उदय के लिए

---

1 "Objectivity of truth means that phenomenal world is a reality independent of the beliefs, hopes or fears of any individual—all of which find out by institution and speculation but by actual observation." Lowell J. Carrs, *Analytical Sociology* (1955), p. 1.

2 "Objectivity is the willingness, and ability to examine evidence dispassionately." A. W. Green, *Sociology*, p. 2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति को साहसी, बुद्धिमान, स्वार्थरहित एवं तीक्ष्ण बुद्धि वाला होना परमावश्यक है। दूसरे, व्यक्ति कर्म-विश्लेषण तभी कर सकता है जब वह एक विशिष्ट प्रकार की योग्यता एवं क्षमता रखता हो। इस योग्यता एवं क्षमता का निर्माण विशिष्ट प्रकार के प्रशिक्षण द्वारा ही सम्भव है।

(3) **धैर्य** (Patience)—एक वैज्ञानिक के लिए धैर्यवान होना नितान्त आवश्यक है। उसे बड़ी सावधानी एवं सतर्कता से तथा बड़े धैर्य के साथ कार्य करना चाहिए तभी वह अपने कार्य में सफल हो सकता है।

(4) **साहस** (Courage)—एक वैज्ञानिक को अत्यधिक साहस की आवश्यकता पड़ती है। उससे जो कुछ भी लाभ या हानियाँ हुई हैं उनसे न तो उसे प्रसन्नता होनी चाहिए और न दुख। सदैव अपना काम साहस के साथ करते रहना चाहिए।

(5) **कठोर परिश्रम** (Hard Work)—उपरोक्त गुणों को अपने अन्दर उत्पन्न करने के लिए कठोर श्रम की आवश्यकता पड़ती है। व्यक्ति को रात-दिन कठोर परिश्रम करने की इच्छा अपने अन्दर उत्पन्न करनी चाहिए।

(6) **निर्माणक कल्पना-शक्ति** (Creative Imagination)—प्रत्येक वैज्ञानिक को निर्माणक कल्पना-शक्ति की बड़ी आवश्यकता होती है ताकि वह गम्भीर एवं जटिल समस्याओं को आसानी से सुलझा सके। सिद्धान्तों का निर्माण इस शक्ति के द्वारा होता है। कार्ल पियर्सन ने लिखा है, "इसलिए सिद्धान्त का आविष्कार निर्माणक कल्पना-शक्ति की विशिष्ट एवं असाधारण शक्ति है।"[1]

स्पष्ट है कि वैज्ञानिक भावना बड़ी जटिल है। वैज्ञानिक पद्धति के लिए यह भावना आत्मा के समान है। वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा अध्ययन करने में यह सदा ध्यान रखना चाहिए। सीर्ल्स ने यह बात बड़े ही अच्छे ढंग से व्यक्त की है—"तथ्यों के सामने एक छोटे बच्चे के समान बैठ जाओ और उन्हें वहाँ ले जाने दो जहाँ कि वे ले ही जायेंगे।"[2]

अब तक तो विज्ञान की व्याख्या एवं विश्लेषण ही किया गया है। अब हम इस बात को समझाने का प्रयत्न करेंगे कि विज्ञान क्या है?

विज्ञान क्या है ?
(What is Science)

'विज्ञान क्या है' का उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है कि विज्ञान वह ज्ञान है;

---

1 "The discovery of law is, therefore, the peculiar function of the creative imagination." Karl Pearson, *The Grammar of Science* (1900), p. 31.

2 "Get down before the facts as a little child, and let them lead you where they will." Herbert L. Searls, *Logic and Scientific Methods* (1948), p. 126.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(अ) जो वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा अध्ययन करके प्राप्त किया गया हो।

(ब) जो 'क्या है' का वर्णन मात्र हो।

(स) जिसकी बिना किसी व्याख्या के सार्वभौमिक व्याख्या हो।

(द) जो किन्हीं भी तथ्यों (facts) के द्वारा प्रमाणित हो।

(प) जो सदैव सत्यापन (verification) और पुनः सत्यापन (re-verification) की कसौटी पर प्रमाणित हो।

(फ) जो कार्य-कारण के सम्बन्ध (cause-effect relationship) स्थापित करता हो और उनकी व्याख्या करता हो।

(र) जो 'क्या है' के आधार पर भविष्य के लिए संकेत करता हो।

सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति
(Nature of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति वैज्ञानिक है और सामाजिक मनोविज्ञान एक विज्ञान है; क्योंकि सामाजिक मनोविज्ञान द्वारा जो ज्ञान प्राप्त होता है वह उपरोक्त सभी कसौटियों पर कसा जा सकता है। अब हम सामाजिक मनोविज्ञान को प्रत्येक कसौटी पर कसने का प्रयत्न करेंगे।

(1) सामाजिक मनोविज्ञान वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है (Social Psychology Employs Scientific Method)—सामाजिक मनोविज्ञान के बारे में जो भी ज्ञान प्राप्त किया जा रहा है वह वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा ही प्राप्त किया जा रहा है और भविष्य में इसके और अधिक प्रयोग की आशा की जा सकती है। सामाजिक मनोविज्ञान की अध्ययन पद्धतियाँ वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर विकसित हो रही हैं। इन अध्ययन पद्धतियाँ में से ये प्रमुख हैं: सामाजिक सांख्यिकीय पद्धति (statistical method), सामाजिक पर्यवलोकन (social survey), सामाजिक वैयक्तिक जीवन के अध्ययन की पद्धतियाँ (social case study method), सामुदायिक अध्ययन पद्धति (community study method), समाजमिति (sociometry), प्रयोगात्मक पद्धति (experimental method) आदि।

इन पद्धतियों में कठोर रूप से वैज्ञानिक पद्धतियों का अनुकरण किया जाता है। सर्वप्रथम तो एक उपकल्पना (hypothesis) का निर्माण किया जाता है, इसके बाद यन्त्रों एवं साधनों को चुना जाता है। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों में थर्मामीटर, टेलिस्कोप, माइक्रोस्कोप, मैग्नोमीटर, पोस्ट ऑफिस बॉक्स, टेस्ट-ट्यूब्स आदि का प्रयोग किया जाता है उसी प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान में भी समाजमिति के पैमाने (scales of sociometry), अनुसूची प्रणाली (schedules), प्रश्नावली (questionnaire), साक्षात्कार (interview) जीवन इतिहास (life history) इत्यादि यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। इसके बाद समस्त एकत्रित सामग्री का वितरण व्यवस्थित रूप में कर दिया जाता है और उनके आधार पर सामान्य विषय निधारित कर लिया जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding MoE-Grant-2

(2) **सामाजिक मनोविज्ञान 'क्या है' का वर्णन करता है (Social Psychology describes 'What Is')**—सामाजिक मनोविज्ञान समाज की घटनाओं एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। इस प्रकार भौतिकशास्त्र भौतिक नियमों एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है, उसी प्रकार सामाजिक मनोविज्ञान समाज के नियमों एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है।

(3) **सामाजिक मनोविज्ञान के सिद्धान्त सार्वभौमिक हैं (Social Psychological Principles are Universal)**—सामाजिक मनोविज्ञान जिन सिद्धान्तों का निर्माण करता है वे सार्वभौमिक हैं। उनमें अपवाद नहीं पाया जा सकता। यदि परिस्थितियाँ समान रहें तो प्रत्येक स्थान पर वह ज्यों का त्यों पाया जाता है।

(4) **सामाजिक मनोविज्ञान की विषय सामग्री तथ्यों द्वारा प्रमाणित की जा सकती है (The Data of Social Psychology can be Verified by Facts)**—सामाजिक मनोविज्ञान की विषय सामग्री किसी भी समय और किसी के द्वारा प्रमाणित की जा सकती है। यह सदैव उन प्रमाणों के हेतु तत्पर पाई जाती है।

(5) **सामाजिक मनोविज्ञान के सिद्धान्तों की परीक्षा (Verification of Principles of Social Psychology)**—सामाजिक मनोविज्ञान के सिद्धान्त प्रमाण और सिद्धान्त पुनः प्रमाणन (verification and re-verification) में सदैव सही निकलते हैं। इनकी सत्यता किसी भी समय आँकी जा सकती हैं।

(6) **सामाजिक मनोविज्ञान कार्य-कारण के सम्बन्धों की व्याख्या करता है (Social Psychology Analyses Cause-effect Relationships)**—सामाजिक मनोविज्ञान कार्य-कारण के सम्बन्धों की व्याख्या करता है और सम्बन्ध स्थापित करता है। घटनाएँ किस प्रकार की होती हैं यह बताता है। संक्षेप में, 'कैसे' का उत्तर हमें इससे प्राप्त हो जाता है।

(7) **सामाजिक मनोविज्ञान 'क्या है' के स्थान पर 'क्या होगा' की ओर संकेत करता है (Social Psychology Indicates 'What Would Be' on the Basis of 'What is')**—सामाजिक मनोविज्ञान 'क्या है' का तो अध्ययन करता ही है साथ ही 'क्या होगा' का भी अध्ययन करता है। परन्तु 'क्या होना चाहिए' पर सामाजिक मनोविज्ञान मौन रहता है।

इससे स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति वैज्ञानिक है या दूसरे शब्दों में यह ठीक है कि सामाजिक मनोविज्ञान विज्ञान है। प्राकृतिक वैज्ञानिकों की इसमें अनेक आपत्तियाँ हैं पर वे सामाजिक मनोविज्ञान के विज्ञान होने में बाधा उपस्थित करने में असमर्थ हैं।

सामाजिक मनोविज्ञान की वैज्ञानिक प्रकृति पर आपत्तियाँ
(Objections Against the Scientific Nature of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान की वैज्ञानिक प्रकृति पर अनेक आपत्तियाँ हैं। अब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन आपत्तियों पर प्रकाश डालेंगे तथा यह भी सिद्ध करने का प्रयत्न करेंगे कि ये आपत्तियाँ निराधार हैं।

(1) **कर्मविषयता का अभाव** (Lack of Objectivity)—प्राकृतिक वैज्ञानिकों का मुख्य आरोप यह है कि सामाजिक मनोविज्ञान के स्वीकृत तत्त्व (data) पक्षपात रहित (unprejudiced) नहीं हो सकते। भौतिक विज्ञान में विषय सामग्री का अवलोकन अधिक कर्मविषयता (objectivity) से होता है; क्योंकि भौतिक वैज्ञानिक ऐसे तथ्यों एवं वस्तुओं का अवलोकन करता है जिनसे उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता। सामाजिक मनोवैज्ञानिक को ऐसे तथ्यों का विश्लेषण करना पड़ता है जिनसे उसे स्वयं सम्बन्ध रखना पडता है। सामाजिक मनोविज्ञान, समाजशास्त्र की भाँति सामाजिक सम्बन्धों का विश्लेषण करता है। इन सामाजिक सम्बन्धों में सामाजिक मनोवैज्ञानिक घनिष्ट रूप से सम्बन्धितं है। इस घनिष्ट सम्बन्ध के कारण उसका तटस्थ रहना असम्भव-सा हो गया है। चार्ल्स वियर्ड ने स्पष्ट रूप से लिखा है कि सामाजिक वैज्ञानिक अभी भी अपने सामाजिक संसार में तटस्थ नहीं रह सकता। सामाजिक मनोवैज्ञानिक धर्म, परिवार आर्थिक संस्थाएँ, राजनैतिक संस्थाएँ, इत्यादि का विश्लेषण करता है और इन सबमें ही उसका दृष्टिकोण पूर्व निर्धारित होता। सामाजिक मनोवैज्ञानिक के सामने दूसरी समस्या समूह के अन्य व्यक्तियों का दबाव रहता है। वह कोई भी ऐसी बात नहीं कह सकता जो समूह के नैतिक आचार-विचारों एवं मूल्यों के विरुद्ध हो। सामाजिक मनोवैज्ञानिक के सामने तीसरी समस्या यह भी रहती है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने को प्रत्येक समस्या के विषय में पूर्ण अधिकारी (authority) समझता है जबकि वास्तविकता ऐसी नहीं होती। बरट्रेण्ड (Bertrand) ने लिखा है, "दूसरे शब्दों में, यह भूलते हुए कि वह केवल मात्र कुछ सीमित सांस्कृतिक सहभागिता रखता है, मानवीय सम्बन्धों में क्या सही है और क्या गलत है; इस प्रश्न पर प्रत्येक अपने आपको पूर्णतया भिन्न समझता है।"[1]

इसमें संदेह नहीं कि सामाजिक मनोवैज्ञानिक की विषय सामग्री अत्यन्त जटिल (complex) है। इसमें भी सन्देह नहीं कि सामाजिक मनोवैज्ञानिक के सामने अनेक कठिनाइयाँ आती हैं। इन कठिनाइयों के होते हुए भी सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने इन पर विजय प्राप्त करने का प्रयत्न किया है। प्रथम, जहाँ तक सामाजिक मनोवैज्ञानिक की विषय सामग्री की जटिलता का प्रश्न है उसका अत्यन्त सुन्दर उत्तर लुण्डबर्ग ने निम्न शब्दों में दिया है : "गोचर विषय की कोई अवस्था अथवा व्यवहार जटिल होता है जबकि हम इसे नहीं समझ सकते। जटिलता सदैव हमारी समझ अथवा दिये हुये व्यवहार की पूर्णता से सम्बन्धित होती है.............पूर्ण अथवा इन्द्रियजन्य शब्द के रूप में जटिलता परिभाषा के योग्य नहीं है। दूसरे शब्दों में.

[1] Bertrand and Associates, *Rural Sociology*, p. 7.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानव समाज की जटिलता विस्तृत रूप में इनके बारे में हमारी अज्ञानता का एक कार्य है।"[1]

जहाँ तक कर्म विषयकता का प्रश्न है वह प्रायः सुलझता-सा जा रहा है। जिस प्रकार एक डॉक्टर तापमापी के द्वारा अपना ताप माप सकता है, उसी प्रकार सामाजिक मनोवैज्ञानिक भी अपने यन्त्रों के द्वारा अधिक से अधिक कर्म विषयक अवलोकन करने का प्रयत्न कर रहे हैं। उदाहरण के लिए, सामाजिक विज्ञानों में ऐसे अनेक यन्त्र विकसित हो गये हैं; जैसे—सांख्यिकीय पद्धति विशेषतया समान्तर मध्यक (arithmetic average or mean), मध्यका (median), भूयिष्टक (mode), प्रमाप विचलन (standard deviation) इत्यादि; सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति (social survey method), वैयक्तिक विषय अध्ययन पद्धति (case study method), मानचित्र पद्धति (cartographic method), इत्यादि।

(2) **सामाजिक मनोविज्ञान के पास प्रयोगशालाएँ नहीं हैं** (Social Psychology has no Laboratories)—सामाजिक मनोविज्ञान के विज्ञान होने पर भौतिकशास्त्रियों को यह भी आपत्ति है कि इसके पास कोई भी प्रयोगशाला नहीं है और उनका दावा है कि प्रयोगशालाओं के अभाव में सामाजिक मनोविज्ञान विज्ञान नहीं बन सकता।

यह तर्क भी उचित नहीं है, वरन् बिलकुल थोथा एवं भ्रामक है कि वही ज्ञान विज्ञान हो सकता है जिसका अध्ययन प्रयोगशाला में किया जाय। इसमें सार्थकता का तो नाम है ही नहीं। कुछ लोगों की ऐसी कल्पना है कि परखनली में पड़े लाल हरे रंग के रसायन या मैग्नेटोमीटर (Magneto meter) द्वारा प्रमाणित सिद्धान्त ही केवल विज्ञान हो सकते हैं, पर यह कल्पना एकदम निरर्थक है। किसी वस्तु का अध्ययन कहाँ होता है। इससे उस वस्तु की वैज्ञानिकता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

द्वितीय, प्रयोगशाला में किस प्रकार से अध्ययन किया जाता है ? इसे हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि प्रयोगशाला पद्धति क्या है ? वास्तव में प्रयोगशाला पद्धति में अनेक कार्य प्रणालियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं, जिनका वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है :

(क) जिस ज्ञान को प्राप्त करना है उसे स्पष्टतया सूक्ष्मातिसूक्ष्म बना लेते हैं।

(ख) दूसरी परिस्थितियों एवं कारकों (factors) को बदल-बदल कर किसी वस्तु के विषय में ज्ञान प्राप्त किया जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि घटनाओं पर नियन्त्रण रखा जाता है।

---

1 "Any situation or behaviour of phenomena is complex when we do not understand it. Complexity is always relative to our understanding or mastery of a given behaviour.........Complexity is not definable in absolute or objective terms......The complexity of human society, in other words, is largely a function of our ignorance of it." G. A. Lundberg, *Social Research*, p. 18.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ग) ज्ञान प्राप्त करने में अवलोकन करते समय वस्तु के वास्तविक चित्र को ही चित्रित करते हैं और उस पर किसी भी प्रकार का आन्तरिक तथा बाह्य प्रभाव नहीं पड़ने देते।

(घ) यदि उन्हीं दशाओं एवं परिस्थितियों में वह प्रयोग फिर दोहराया जावे तो उसी प्रकार के परिणाम मिलने चाहिए या दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि वह प्रयोग किसी के द्वारा भी दोहराया जा सकता है।

यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो प्रयोगशाला पद्धति और वैज्ञानिक पद्धति में कोई मौलिक भेद नहीं है। प्रयोगशाला में वैज्ञानिक पद्धति का ही प्रयोग किया जाता है। हम यह बात पहले ही कह चुके हैं कि सामाजिक मनोविज्ञान वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है।

सामाजिक मनोविज्ञान भी प्रयोगशाला पद्धति का प्रयोग करता है। जिस प्रकार किसी भौतिकशास्त्री की प्रयोगशाला विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र के किसी एक भाग में होती है। उसी प्रकार सामाजिक मनोवैज्ञानिकों की प्रयोगशाला संसार का वह भाग होता है जिसके अन्दर उसका अध्ययन चलता रहता है। यदि हम यह कहें कि समस्त संसार ही सामाजिक मनोविज्ञान की प्रयोगशाला है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी।

प्राकृतिक वैज्ञानिकों को यह नहीं भूलना चाहिए कि न्यूटन (Newton), आर्कमिडीज (Archimedes), मारकोनी (Marconi) इत्यादि वैज्ञानिकों ने अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन प्रयोगशालाओं में बैठकर नहीं किया था। स्मरणीय बात तो यह है कि आज जिन प्रयोगशालाओं पर उन्हें गर्व है वे उन्हें बड़ी लम्बी अवधि के बाद प्राप्त हो सकी हैं। सामाजिक मनोविज्ञानों का ध्यान भी प्रयोगशाला निर्माण करने पर केन्द्रित है।

सामाजिक मनोविज्ञान पर कुछ विद्वानों को आपत्ति यह है कि इस विज्ञान का अध्ययन आधार प्रयोगात्मक नहीं है। इसी कमी से ये लोग उसे वैज्ञानिक अध्ययन की श्रेणी में नहीं रखते। वे इसे अवैज्ञानिक विषय बताते हैं।

सामाजिक मनोविज्ञान को इस प्रकार की शंकाओं में डालना उचित नहीं जँचता। यह तो कहा जा सकता है कि सामाजिक मनोविज्ञान के अध्ययन की समस्याएँ इतनी जटिल हैं कि उनको प्राथमिक अर्थात विषय की प्रारम्भिक स्थिति में समझना कठिन है, किन्तु अवैज्ञानिक कहना निराधार है। यह विज्ञान अन्तरराष्ट्रीय उद्योग, संघर्ष, पारस्परिक तनाव, जातीय पक्षपात, असंख्य भीड़ आदि का गहन और वैज्ञानिक विधियों से अध्ययन करता है। यह कहा जा सकता है कि ये विषय ही ऐसी प्रकृति के हैं जिनका प्रयोगात्मक अध्ययन कठिन है। फिर सामाजिक मनोविज्ञान ने आज अनेक विधियाँ खोज निकाली हैं, जो इन समस्याओं को प्रयोगात्मक रूप देती हैं। गार्डन आलपोर्ट (Gordon Allport), गार्डनर मर्फी (Gardner Murphy), कुर्ट लेविन (Kurt lewin), जी. एच. मीड (G. H. Mead), कूले (Cooley),

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS-Grant-2

डेवी (Devey), मैलिनॉस्की (Malinowski), लिन्टन (Linton), शेरिफ (Sheriff), लींड (Lynd) आदि सभी सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने इस विषय को वैज्ञानिक पद्धतियों के आधार पर अध्ययन करके इसकी महत्ता बढ़ाई।

जर्मन शिक्षा-शास्त्रियों ने सामाजिक मनोविज्ञान के उत्थान में पूर्ण सहयोग दिया। उन्होंने व्यक्ति के व्यवहारों पर सामाजिक प्रभावों (social influences) का तुलनात्मक अध्ययन कर विषय को महत्ता प्रदान की। उनमें से कुछ सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्ति का एकान्त में प्रयोगात्मक अध्ययन किया। दूसरे, कुछ लोगों ने उसी बीच में सामूहिक अध्ययन किये, फिर दोनों का तुलनात्मक अध्ययन कर निष्कर्ष निकाले। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि एक व्यक्ति की उपस्थिति दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करती है। माडे (Moede) ने व्यक्ति के व्यवहार की प्रतियोगिता (competition) तथा प्रतिस्पर्धा (rivalry) के प्रभाव का अध्ययन किया। एफ. एच. आलपॉर्ट (F. H. Allport) ने प्रयोगात्मक विधियों द्वारा मानव व्यवहार पर 1920 में होने वाले सामाजिक प्रभावों के अध्ययन किये। मर्फी और मर्फी (Murphy and Murphy) ने भी व्यक्तिगत अध्ययन कर प्रयोगात्मक विधि से विषय को महत्त्वशाली बनाया। उन्होंने सामाजिक मनोविज्ञान पर पुस्तक भी प्रकाशित की। इसका नाम एक्सपेरीमेण्टल सोशल साइकोलोजी (Experimental Social Psychology) था। यह पुस्तक सन् 1931 में प्रकाशित हुई। इस पुस्तक की सामाजिक मनोविज्ञान को काफी बड़ी देन है।

(3) **सामाजिक मनोविज्ञान अपनी विषय सामग्री को मापने में असमर्थ (Social Psychology Incapable of Measuring its Subject Matters)**-सामाजिक मनोविज्ञान के विरुद्ध एक यह भी आरोप लगाया जाता है कि सामाजिक मनोविज्ञान प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति अपनी विषय-सामग्री को माप नहीं पाता, इसलिए इसे विज्ञान नहीं कहा जा सकता। दूसरी आपत्ति यह भी उठायी गयी है कि सामाजिक मनोविज्ञान अपनी विषय-सामग्री का निरूपण नहीं कर पाता।

प्रथमतः, यह कहना कि सामाजिक मनोविज्ञान अपनी सामग्री को माप नहीं सकता, एक बहुत बड़ी भ्रान्ति है। सामाजिक मनोविज्ञान की सामग्री को मापने के लिए अनेक पद्धतियाँ विकसित हो रही हैं। उदाहरण के लिए, समाज विज्ञानों में अनेक प्रकार के अनेक यंत्र विकसित हो गये हैं; जैसे—सांख्यिकीय पद्धति विशेषतया समान्तर मध्यक (arithmetic average or mean), भूयिष्टक (mode), प्रमाप विचलन (standard deviation), सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति (social survey method), वैयक्तिक विषय अध्ययन पद्धति (case study method), मानचित्र पद्धति (cartographic method) इत्यादि। इससे स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान अपनी सामग्री को मापने के लिए नयें-नये यंत्र बना रहा है। इसी से सम्बन्धित दूसरी बात यह है कि विज्ञान और विषय सामग्री को मापने की क्षमता में कोई भी विशेष अनिवार्य सम्बन्ध नहीं है। यह कहना गलत है कि विज्ञान और माप में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। इसे हम एक उदाहरण के द्वारा भी समझा सकते हैं भूतत्त्वशास्त्री और

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शास्त्र जो बहुत कम मापने का कार्य करते हैं, वैज्ञानिक कहलाते हैं; परन्तु बढ़ई जो दिन भर मापने का कार्य करता है; वैज्ञानिक नहीं कहलाता। इससे स्पष्ट है कि विज्ञान के लिए माप अनिवार्य नहीं है। ग्रीन ने इस विषय में जोर देते हुए स्पष्ट रूप से लिखा है, "विज्ञान और माप के बीच वास्तव में कोई भी प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है।"[1]

जहाँ तक सामग्री के निरूपण का प्रश्न है, उसमें भी अब सामाजिक मनोविज्ञान को पर्याप्त सफलता हुई है। मौखिक निरूपण भी विज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गया है। जहाँ पर सख्यात्मक व्यवस्था कुछ नहीं कर पाती वहाँ पर मौखिक निरूपण कार्य करता है। नेल्सन ने लिखा है कि "मौखिक निरूपण, जिसका उद्देश्य सामाजिक प्रत्यक्ष विषय के गुणात्मक दृष्टिकोणों का आलेखन करना है, एक आवश्यक रूप में सामाजिक विज्ञानों के यन्त्र रूप में लगातार रहना चाहिए।'[2]

वैयक्तिक अध्ययन पद्धति इस प्रकार के निरूपण का एक ज्वलन्त उदाहरण है।[3] इस निरूपण पद्धति के कारण अनेक प्रकार के सम्बोध (concepts) विकसित हो जाते हैं। प्रत्येक विज्ञान इस प्रकार के सम्बोध विकसित करता है। उदाहरण के लिए जीवशास्त्रों के वर्गीकरणशास्त्र (Taxonomy) विकसित किया है। समाजशास्त्र में भी इस प्रकार के कुछ प्रयत्न किये गये हैं। इनमें से लेप्ले तथा यूबैंक के प्रयत्न अत्यन्त प्रसिद्ध हैं।[4]

सम्बोध सामाजिक मनोविज्ञान में एक विश्लेषण के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण यन्त्र (tool) हैं। अमरीका की समाजशास्त्रीय समितियों ने इन सम्बन्धों में एकता लाने के लिए एक नामिति का भी निर्माण किया था। सामाजिक मनोविज्ञान के लिए अन्य समाज विज्ञानों की भाँति सम्बोध अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। नेलसन ने इन सम्बोधों के महत्त्व पर प्रकाश डाला है :

"ये सम्बोध एक भाषा बन जाते हैं अथवा विद्यार्थियों में वार्तालाप का संचार बन जाते हैं तथा विचारों के आदान-प्रदान में सहायता पहुँचाते हैं।"[5]

4. **सामाजिक मनोविज्ञान एक यथार्थ विज्ञान नहीं है (Social Psychology is not an Exact Science)**—सामाजिक मनोविज्ञान यथार्थ ज्ञान नहीं है इसलिए उसे विज्ञान नहीं कहा जा सकता है। प्राकृतिक विज्ञान यथार्थ विज्ञान है

---

1. "There is actually no direct relationship between science and measurement." A. W. Green, *Sociology*, p. 2.
2. Lowry Nelson, *Rural Sociology*, p. 6.
3. देखिये लेखक की पुस्तकें : (1) **सामाजिक सूक्ष्मदर्शी** (Social Microscope), (2) **हिन्दू विवाह तथा परिवार की समस्याएँ** (Problems of Hindu Marriage and Family)।
4. See a summary of LePlay's '*Nomenclature*' in P. A. Sorokin : *Contemporary Sociological Theories*, pp. 70-72 and E. E. Eubank, *The Concept of Sociology* (1932).
5. Lowry Nelson, *Rural Sociology*, p. 6.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्योंकि उनमें जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है वे सदैव सत्य रहते हैं उदाहरण के लिए, आकर्षण की शक्ति के सिद्धान्त (Law of gravitation) को ले लीजिए। यदि एक गेंद आकाश की ओर फेंकी जाय तो वह कुछ दूर जाकर फि जमीन पर आकर गिर जायगी। इस गेंद को चाहे रामू इंगलैण्ड में फेंके, श्य अमरीका में और मोहन भारत में फेंके, पर गेंद तीनों की ही जमीन पर आ जायें यह प्रत्येक समय के लिए और प्रत्येक स्थान के लिए सत्य है। ऐसे ही अनेक यः सिद्धान्तों के कारण प्राकृतिक विज्ञानों को यथार्थ विज्ञान कहा जाता है। प यथार्थता और विज्ञान का कोई विशेष पारस्परिक सम्बन्ध नहीं है। प्रथम तो य थंता एवं यथार्थता सापेक्ष शब्द हैं, इसलिए यह भेद केवल अंशों का है। यह भी नहीं किया जा सकता कि समस्त प्राकृतिक विज्ञान यथार्थ विज्ञान होते ऋतु-विज्ञान (Meteorology) और खगोल विज्ञान (Astronomy) अयथार्थ वि हैं, फिर भी उन्हें विज्ञान माना जाता है। तब फिर सामाजिक मनोविज्ञान विज्ञान मानने पर क्यों आपत्ति की जाती है?

तृतीय, विज्ञान की प्रकृति गतिशील एवं नवीन है और कोई भी ज्ञान नहीं कहा जा सकता। विज्ञान कहे जाने वाले समस्त ज्ञान केवल अनुमान (appro mations) हैं। नित्य प्रति नवीन आविष्कार होते रहते हैं और नवीन सिद्धा का प्रतिपादन होता रहता है। इसलिए किसी भी विज्ञान को यथार्थ विज्ञान कहा जा सकता।

5. **सामाजिक मनोविज्ञान भविष्यवाणी नहीं कर पाता** (Social Psyc logy is Unable to Predict)—सामाजिक मनोविज्ञान भविष्यवाणी नहीं पाता, यह भी उसके विरुद्ध एक आरोप है। कई बार लोग यह कहते हैं कि साम मनोविज्ञान एक व्यक्ति विशेष के व्यवहार के विषय में भविष्यवाणी नहीं कर प वास्तव में यह धारणा अत्यन्त भ्रामक है। सामाजिक मनोविज्ञान का सम्बन्ध व गत व्यवहार से नहीं है। इसलिए उसके विषय में भविष्यवाणी करने का प्रश्न नहीं उठता। बरट्रेंड ने लिखा है, "इस आलोचना की असत्यता इस तथ्य पर है समाजशास्त्र व्यक्तिगत व्यवहार से सम्बन्धित नहीं है लेकिन प्रायः समूह व्यवह सम्बन्धित है।"[1]

भविष्यवाणी के विषय में हमें एक बात और ध्यान में रखनी है सामान्यतया यथार्थ विज्ञानों के निम्न चार सामान्य सम्बोध हैं:

(अ) निरन्तरता (regularity),

(ब) ढांचा (structure),

(स) कार्य (function),

(द) परिवर्तन (change)।

---

1 Bertrand and Associates, *Rural Sociology*, p. 6.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक मनोविज्ञान में अन्य सामाजिक विज्ञानों की भाँति एक पाँचवें सम्बोध (concept) की और भी आवश्यकता है।[1] इस सम्बोध को 'अर्थ का सबोध' (concept of meaning) कहते हैं। इसका अर्थ यह होता है कि किसी समूह या व्यक्ति का व्यवहार एक अपरिवर्तनीय प्रतिमान के अनुसार नहीं जाना जा सकता, अपितु उस अर्थ के द्वारा जाना जा सकता है जो वह व्यक्ति या समूह रखता हैं। यह अर्थ इस बात पर आधारित है कि व्यक्ति किस संस्कृति में पला है। यदि हमें इसका ज्ञान हो तो हम अधिक सफल भविष्यवाणी कर सकते हैं। हम जानते हैं कि यदि कोई व्यक्ति गाँधी जी के सिद्धान्तों का अनुयायी है तो वह थप्पड़ खाकर दूसरा गाल भी सामने कर देगा; परन्तु यदि वह क्रांतिकारी समूह का सदस्य है तो उसका हाथ अपने रिवाल्वर होगा। इसे हम परिस्थिति का अर्थ कहते हैं। इसी प्रकार यदि आप एक बड़े नगर के तीन या चार वर्षीय बालक से प्रश्न करें कि दूध कहाँ से आता है तो उसका उत्तर सम्भवतः यह होगा कि दूध वाले से या हलवाई से; परन्तु यदि यही प्रश्न आप एक ग्रामीण बालक से करेंगे तो वह तुरन्त किसी पशु का नाम लेगा।

इससे स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान में व्यवहार के विषय में भविष्य-वाणी करना सांस्कृतिक ज्ञान पर भी आधारित है। इसके अतिरिक्त भविष्यवाणी न करने की क्षमता भौतिक वैज्ञानिकों में भी है। बहुत से भौतिक नियम एवं रासायनिक प्रक्रियाएँ जो आजकल बड़ी सरल हैं, कुछ शताब्दियों पूर्व उनके विषय में कोई भी भविष्यवाणी करना असम्भव था। उदाहरण के लिए, भौतिक वैज्ञानिक हाइड्रोजन बम्ब (hydrogen bomb) की शक्ति के विषय में भविष्यवाणी नहीं कर सकते थे। आजकल भी जीवशास्त्री वाहकाणुओं (genes) और वर्णसूत्र (chromosomes) के विषय में अत्यन्त सीमित सीमाओं में भविष्यवाणी कर पाते हैं। कठोर परिश्रम के बाद अब यह सम्भव हो गया है। सामाजिक मनोविज्ञान में भी ऐसा करना प्रारम्भ हो रहा हैं और ऐसा विश्वास किया जाता है कि भविष्य में सम्भावनाओं पर और अधिक भविष्यवाणी की जा सकेगी। लुण्डबर्ग ने लिखा है, "ऐसा विश्वास करने का प्रत्येक कारण है कि हम इस शक्ति को बहुत अधिक बढ़ा सकते हैं।"[2]

सामाजिक मनोविज्ञान की वैज्ञानिक प्रकृति के विरुद्ध लगाये गये आरोपों का हमने वर्णन किया। इनके विश्लेषण के द्वारा पाठकों को यह ज्ञात हो गया कि ये आरोप मिथ्या थे। अतः सामाजिक मनोविज्ञान एक विज्ञान है। एक बात स्मरणीय है कि आरोप मिथ्या अवश्य हैं, परन्तु सामाजिक मनोविज्ञान एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों की सामग्री बड़ी जटिल है और सामाजिक सम्बन्धों के वैज्ञानिक अध्ययन में बड़ी कठिनाइयाँ आती हैं।

---

1 See John W. Benneth and Melvin M. Tunin, *Social Life*, Alferd A. Knoph Inc. New York. (1948), p. 82.

2 G. A. Lundberg, *Social Research*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक स्वीकृत तत्त्व (data) बड़ा ही जटिल प्रतीत होता है। वास्तव में इसकी जटिलता का प्रमुख कारण हमारी अज्ञानता है। किसी समय प्राकृतिक विज्ञानों के साधारण सिद्धान्त अधिक जटिल प्रतीत होते थे। रेडियो, वायुयान, परमाणु बम आदि असम्भव प्रतीत होते थे। बच्चे के लिए चलना भी एक समस्या है। जटिलता एक सापेक्ष शब्द है। उसे विषयक शब्दों में प्रयोग नहीं किया जा सकता है। लुण्डबर्ग ने जटिलता की परिभाषा करते हुए बड़े सापेक्षिक शब्दों में लिखा है कि "कोई भी दशा या घटना का व्यवहार जटिल होता है जबकि हम उसे नहीं समझते।"[1]

सामाजिक मनोविज्ञान के दो पक्ष
(Two Aspects of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान के, विज्ञान के रूप में निम्न दो पक्ष हैं :

(1) सैद्धान्तिक या मौलिक (Theoretical or Basic)।

(2) व्यावहारिक (Applied or Practical)।

(1) सैद्धान्तिक या मौलिक सामाजिक मनोविज्ञान (Theoretical or Basic Social Psychology)—सैद्धान्तिक विज्ञान के रूप में सामाजिक मनोविज्ञान मानवीय अन्तःक्रियाओं एवं उसके स्वरूपों का अध्ययन करता है। सामाजिक प्रेरणा, सामाजिक शिक्षण, व्यक्तित्व एवं अन्य सामाजिक प्रक्रियाएँ; जैसे—अनुकरण, प्रतिस्पर्धा, संघर्ष, सहयोग, व्यवस्थान, आत्मसात् इत्यादि का अध्ययन सामाजिक मनोविज्ञान एक मौलिक विज्ञान के रूप में करता है।

इस रूप में सामाजिक मनोविज्ञान सामान्य मनोविज्ञान के ही समान होता है। उपरोक्त समस्त प्रक्रियाएँ सामान्य मनोविज्ञान द्वारा भी अध्ययन की जाती हैं। सामाजिक मनोविज्ञान का ध्येय व्यक्ति के सामाजिक व्यवहार के सार्वभौमिक सिद्धान्तों की स्थापना करना है। कोई भी व्यक्ति शून्य में नहीं पाया जाता। हर व्यक्ति पर समाज का प्रभाव रहता है। कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिसे सामाजिक क्षेत्र न कहा जा सके। सामाजिक क्षेत्र और असामाजिक क्षेत्र में भेद करना सरल कार्य नहीं है। इनमें अंशों का अन्तर है।

(2) व्यावहारिक सामाजिक मनोविज्ञान (Applied or Practical Social Psychology)—सामाजिक मनोविज्ञान न केवल मनुष्य के सामाजिक व्यवहारों का अध्ययन करता है वरन् समाज की वास्तविक समस्याओं को भी सुलझाने का प्रयत्न करता है। उदाहरणार्थ; जातीय पक्षपात, अजातीय पक्षपात, युद्ध, शीत युद्ध, सामाजिक व्याधिकी इत्यादि समस्याओं को समझाने एवं सुलझाने का प्रयत्न करता है।

सामाजिक मनोवैज्ञानिक का कार्य, वास्तव में, समस्याओं को सुलझाना न

---

1 "Any situation or behaviour or phenomena is complex when we do not understand it." G. A. Lundberg, *Social Research* (195 p. 22.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपितु उस समस्या का सम्पूर्ण विश्लेषण प्रस्तुत करना है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस विषय में लिखा है, "सामाजिक समस्या सुलझाते हुए मनोवैज्ञानिक का उचित कार्य, विश्लेषक, चिकित्सक, कुशल परामर्शदाता का है और वह भी समस्त समस्या के एक पक्ष से सम्बन्धित है—व्यक्ति और व्यक्तियों के समूह—जो कि उसमें अन्तर्निहित हैं, के व्यवहार का पक्ष। और यहाँ पर भी यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि वहाँ और भी सामाजिक वैज्ञानिक हैं (उदाहरणार्थ, जिन्हें समाजशास्त्री कहा जाता है), जिनको सामाजिक मनोवैज्ञानिकों की इस समस्या में अवश्य भाग लेना चाहिए।"[1]

उदाहरण के रूप में, हम जातीय पक्षपात को ले सकते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान को इस पूर्व-आग्रह में पड़ने की आवश्यकता नहीं है, न उनके विकास और परिवर्तन को देखना है, वरन् उसका वास्तविक उद्देश्य तो जातीय पक्षपात को दूर करना, तथा पारस्परिक वैमनस्य और विरोध की भावनाओं का वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण करके उनका हल खोजना है। यही वस्तु है जो मनोवृत्तियों और व्यक्तित्व को प्रभावित करती है। सामाजिक क्रियाओं के ज्ञान से इस प्रकार के व्यवहार नियन्त्रित हो सकते हैं।

हम समस्या को समझ तो जाते हैं कि अमुक समस्या के समाधान के लिए हमें क्या करना है, किन्तु उसको व्यवहार में लाना बड़ा कठिन हो जाता है। उदाहरण के लिए, हम जातीय पक्षपात को ले लें। हम सब जानते हैं कि जातीय पक्षपात क्यों और किन परिस्थितियों में उत्पन्न होता है उसके दोष दूर करने के उपाय भी प्रत्यक्ष होते हैं; किन्तु उसे व्यावहारिक रूप देने से उन समूहों की इच्छाओं, सांस्कृतिक अभिमानों आदि में बड़ी बाधा पड़ती है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस समस्या पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "सामाजिक मनोविज्ञान सम्पूर्ण उपचार नहीं है, यह भविष्यवाणी, मूल्यांकन और परामर्श के लिए अमूल्यवान समझ प्रदान कर सकता है। यदि भविष्य में किसी समय सामाजिक मनोवैज्ञानिक वास्तव में वह सब कुछ जान ले जो प्रजातीय पक्षपात के मनोवैज्ञानिक आधारों के विषय में जानना आवश्यक है; तब समस्या के समाधान की वास्तविक सम्भावना समाज की अधिकांश व्यक्तियों की इच्छाओं और क्रियाओं पर निर्भर करेगी।"[2]

सामाजिक मनोविज्ञान की उपयोगिता या महत्त्व
(Utility or Importance of Social Psychology)

समाज विज्ञानों में सामाजिक मनोविज्ञान एक महत्त्वपूर्ण विज्ञान है। सामाजिक मनोविज्ञान कई दृष्टियों से उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण है। उनमें से कुछ निम्न हैं :

---

1. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 12.
2. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, pp. 12-13.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) सामाजिक मनोविज्ञान समाज में व्यक्तियों का अध्ययन करता है जो मानव व्यवहार के सिद्धान्तों का प्रतिपादन, विश्लेषण एवं स्पष्टीकरण करता है। समाज में मानव दूसरे मानवों के साथ रहता है और वह उनसे मिलजुल कर शान्ति पूर्वक रहना चाहता है। सामाजिक मनोविज्ञान की सहायता से व्यक्ति अन्य व्यक्ति के मनोविज्ञान को समझता है और उसके अनुसार व्यवहार करता है। इससे वह व्यक्तियों के साथ मिलजुल कर रहता है।

(2) जो समाज जितना अधिक संगठित होगा, वह उतना ही अधिक शक्तिशाली एवं सम्पन्न होगा। सामाजिक मनोविज्ञान के द्वारा प्राप्त ज्ञान से समाज अधिक संगठित बनाया जा सकता है।

(3) जिस समाज में जितना कम तनाव (tension) होगा, वह उतना ही प्र एवं सम्पन्न होगा। तनावों के कारण समाज में विघटन उत्पन्न हो जाता है। सामाजिक मनोविज्ञान के ज्ञान के द्वारा वैयक्तिक एवं सामूहिक तनावों को कम किया जा सकता है।

(4) हर समाज में कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जो असामाजिक व्यवहार करते हैं और समाज में गड़बड़ उत्पन्न करने का प्रयत्न करते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान असामाजिक व्यवहारों के कारणों का पता लगाता है और उन्हें दूर करने के उपाय बताता है। इस प्रकार असामाजिक व्यवहारों को रोका जा सकता है।

(5) सामाजिक मनोविज्ञान वंशानुसंक्रमण (heredity) का अध्ययन करता है और उसके प्रभावों को स्पष्ट करता है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वंशानुसंक्रमण की क्या सीमाएँ हैं जिनसे व्यक्ति बँधा हुआ है। इन सीमाओं को ध्यान रखते हुए समाज का विकास किया जा सकता है।

(6) सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तित्व का अध्ययन करता है। इस अध्ययन की सहायता से व्यक्तियों के व्यक्तित्व विकास में सहायता ली जा सकती है। अच्छे व्यक्तित्व निर्मित किये जा सकते हैं। समाज में व्यक्तियों के व्यक्तित्व जितने अच्छे होंगे, वह समाज उतना ही उन्नत होगा।

(7) सामाजिक मनोविज्ञान युद्ध के मनोविज्ञान का अध्ययन करता है। उन कारणों पर प्रकाश डालता है जिनके कारण यह होते हैं। आधुनिक समय में युद्ध कितना विनाशकारी है, यह हम सब जानते हैं। युद्ध से समस्त संसार के विनाश का भय है। इसलिए युद्धों को रोकना मानव के लिए अनिवार्य है। सामाजिक मनोविज्ञान युद्धों को रोकने एवं शान्ति की स्थापना में सहायक सिद्ध हो सकता है।

(8) वर्तमान समय में सामाजिक परिवर्तन की गति अति तीव्र है। आदर्श, मूल्य, जीवन प्रतिमान तीव्र गति से परिवर्तित हो रहे हैं। सामाजिक परिवर्तन की इस तीव्र गति से सामाजिक विघटन उत्पन्न हो रहा है। सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक परिवर्तन के कारणों, दिशाओं एवं प्रभावों का अध्ययन करता है। इसकी सहायता से हम सामाजिक परिवर्तन से उत्पन्न नयी दिशाओं को समझ सकते हैं और उनसे सामंजस्य कर सकते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(9) सामाजिक मनोविज्ञान राष्ट्रीय समस्याओं को हल करने में भी सहायक सिद्ध हो सकता है। साम्प्रदायिक तनावों (communal tensions) को सामाजिक मनोविज्ञान की सहायता से कम किया जा सकता है। भावात्मक एकता को देश में सामाजिक मनोविज्ञान की सहायता से स्थापित किया जा सकता है। युवकों में फैली बेचैनी एवं उपद्रव के कारणों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर रोका जा सकता है। इसी प्रकार की अनेक समस्याओं को सुलझाने में सामाजिक मनोविज्ञान सहायक हो सकता है।

(10) सामाजिक मनोविज्ञान अन्तरराष्ट्रीय तनावों को कम करने में भी सहायक हो सकता है। अन्तरराष्ट्रीय समस्याओं एवं तनावों का प्रमुख कारण मनोवैज्ञानिक होता है। इन समस्याओं को मनोवैज्ञानिक आधार पर हल किया जा सकता है।

(11) सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्तियों के बीच उत्पन्न हर प्रकार की समस्याओं को सुलझाने में सहायक सिद्ध हो सकता है। ये समस्याएँ चाहे मिल मालिकों और मजदूरों, मकान मालिकों और किरायेदारों, सरकार और जनता किसी की हों, सामाजिक मनोविज्ञान हमारी सहायता कर सकता है।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक मनोविज्ञान का आधुनिक समय में अत्यधिक महत्त्व एवं उपयोगिता है।

प्रश्न

1. सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति और विषय क्षेत्र की विवेचना कीजिए।
(Discuss the nature and scope of Social Psychology.)

2. क्या सामाजिक मनोविज्ञान को विज्ञान कहा जा सकता है ? यदि हाँ, तो तर्क दीजिए।
(Can Social Psychology be called a science ? If yes, give arguments.)

3. सामाजिक मनोविज्ञान के दो पहलुओं—मौलिक और व्यावहारिक—की विवेचना कीजिए।
(Discuss the two aspects—basic and applied—of Social Psychology.)

4. सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति का विवेचन कीजिए।
(Discuss the nature of Social Psychology. Agra M. A. Sociology, 1969.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

5

सामाजिक मनोविज्ञान की विधियाँ एवं प्रविधियाँ
(Methods and Techniques of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान की विधियाँ
(Methods of Social Psychology)

सामाजिक मनोविज्ञान की प्रकृति पर हमने पिछले अध्याय में प्रकाश डाला, उससे यह स्पष्ट हो गया होगा कि सामाजिक मनोविज्ञान एक सामाजिक विज्ञान है। सामाजिक मनोविज्ञान वैज्ञानिक पद्धतियों का प्रयोग करता है। सामाजिक मनोविज्ञान की प्रमुख विधियाँ निम्न हैं :

(1) अन्तर्दर्शन विधि (Introspection method),
(2) अवलोकन विधि (Observation method),
(3) प्रयोगात्मक विधि (Experimental method),
(4) तुलनात्मक विधि (Comparative method)।

(1) अन्तर्दर्शन विधि
(Introspection Method)

सामाजिक मनोविज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन करता है। मानव व्यवहार एक जटिल प्रक्रिया है। हम किस समय क्या सोच रहे हैं अथवा किस विषय पर हमारी क्या धारणा या मत है, इसको जानने के लिए हमसे ही प्रयत्न करना पड़ेगा और हम ही इसका विवरण दे सकते हैं। किसी भी समय कोई व्यक्ति क्या अनुभव करता है इसका उत्तर वह व्यक्ति स्वयं ही दे सकता है। इससे स्पष्ट है कि एक व्यक्ति की भावनाएँ, मत, धारणाएँ, उद्वेग इत्यादि का जानना दूसरे व्यक्ति के लिए अत्यन्त कठिन है। इन्हें तो स्वयं उसी व्यक्ति को बताना होगा जो इनका अनुभव कर रहा हो। क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस विषय में लिखा है, "व्यक्ति के स्वयं का तात्कालिक अनुभव.......मत या धारणाओं के वर्ग श्रेणी के लिए एक विशेष महत्त्वपूर्ण तथ्यों का स्रोत प्रस्तुत करता है। ये तथ्य वास्तव में व्यक्ति के स्वयं अनुभव में प्रत्यक्ष रूप से पहुँच जाते हैं।"[1]

किसी व्यक्ति के मन की बात को दूसरा देख या सुन नहीं सकता,

---

1. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 242.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनोवैज्ञानिक को उस व्यक्ति का सहारा लेना पड़ेगा तथा उसे ही अपने में प्रविष्ट होना पड़ेगा। संवेग, क्रोध, स्मृति या चिन्तन आदि मानसिक अवस्थाओं के अध्ययन के लिए उसे अपने मन को खोजना पड़ेगा। इस कार्य में उसे अपनी स्मृति का विशेष सहारा लेना होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि इन विषयों का अध्ययन उस समय तक नहीं हो सकता जब तक कि उस व्यक्ति से ही न पूछा जाये, जिसका हम अध्ययन करना चाहते हैं। इस विषय में आल्पोर्ट ने स्पष्ट रूप से लिखा है, "यदि हमें ज्ञात करना है कि व्यक्ति कैसे महसूस करते हैं और क्या अनुभव करते हैं, उनके क्या उद्देश्य हैं और क्या प्रेरणाएँ और तर्क उनके कार्य, जैसा वे करते हैं, क्यों न उनसे ही पूछा जाय ?"[1]

सामाजिक मनोविज्ञान मनुष्य के व्यवहार एवं अन्तःमानसिक जीवन (inner mental life) दोनों का ही अध्ययन करता है। अन्तःमानसिक जीवन का अध्ययन उस समय तक नहीं हो सकता जब तक व्यक्ति स्वयं ही उन्हें व्यक्त न करे। जब व्यक्ति अपने अन्तर की ओर देखता है तो वह अन्तर्दर्शन करता है।

कुछ लोगों का मत है कि अन्तर्दर्शन विधि एक भावात्मक, रहस्यपूर्ण तथा व्यक्तिगत पहलू है। इस प्रकार सोचना उचित नहीं है। अपने विषय में सूचना देना सम्भव है और इसके सहारे मनुष्य के व्यवहार के विषय में अनेक तथ्य ज्ञात होते हैं। इस पद्धति की कुछ सीमाएँ हो सकती हैं, किन्तु यह कहना कि यह पद्धति ही अवैज्ञानिक है, उचित नहीं। वुडवर्थ ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "यदि अनुभव विधि ठोस नहीं है तो समस्त वैज्ञानिक अवलोकन ठोस नहीं होंगे, क्योंकि वे सभी अवलोकनकर्ता से उसी तथ्य की मांग करते हैं।"[2]

अन्तर्दर्शन विधि की अनेक सीमाएँ हैं। अन्तर्दर्शन विधि द्वारा हम बालकों का अध्ययन नहीं कर सकते, क्योंकि वे अन्तर्दर्शन नहीं कर सकते। इसी प्रकार हम वन्य जातियों एवं अन्य लोगों का अध्ययन नहीं कर सकते जिनकी भाषा हम नहीं समझते। इस पद्धति की सबसे प्रमुख सीमा यह है कि दूसरा व्यक्ति हमें बताता है और इसलिए हमें पूर्णतया उस पर ही आश्रित होना पड़ता है। इन तथ्यों को हम अन्य प्रकार से प्रमाणित नहीं कर सकते। ऐसा भी हो सकता है कि वह व्यक्ति हमें अपनी गोपनीय वस्तुएँ सत्य न बताये। अन्य कारणों से भी वह असत्य तथ्य प्रस्तुत कर सकता है। आज के युग में तो इसकी सम्भावना और भी अधिक बढ़ गयी है। इससे स्पष्ट है कि यह पद्धति अधिक विश्वसनीय नहीं है।

अविश्वसनीय होते हुए भी इस विधि का सामाजिक मनोविज्ञान में एक विशेष स्थान है और सदैव बना रहेगा, क्योंकि अन्तःमानसिक जीवन के विषय में हम इसी पद्धति के द्वारा ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

1 "....if we want to know how people feel and what they experience, what their emotions and motives are like and the reasons for acting as they do, why not ask them ?" G. W. Allport.

2 R. S. Woodworth, *Contemporary School of Psychology*, p. 20.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) अवलोकन विधि
(Observation Method)

अवलोकन विधि सामाजिक-मनोविज्ञान की महत्त्वपूर्ण विधि है। अवलोकन का सामाजिक विज्ञानों में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। गुडे तथा हॉट ने इसके महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "विज्ञान अवलोकन से प्राप्त होता है एवं उसकी पुष्टि के लिए अन्ततः अवलोकन पर ही लौट आना पड़ता है।"[1] अवलोकन किसी प्रकार की विषय सामग्री प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। प्रायः समस्त विज्ञानों का विकास इसी अवलोकन विधि के द्वारा सम्भव हो सका है। अवलोकन विधि प्राथमिक सामग्री (primary data) के संकलन की एक प्रत्यक्ष पद्धति है। अवलोकन विधि की परिभाषा करते हुए यंग ने लिखा है, "अवलोकन-चक्षुओं द्वारा एक विचारपूर्ण अध्ययन को सामूहिक व्यवहार एवं जटिल सामाजिक संस्थाओं, साथ ही पूर्ण बनाने वाली पृथक इकाइयों के अन्वीक्षण हेतु प्रणाली के रूप में उपयोग किया जा सकता है।"[2]

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अवलोकन का अभिप्राय ऐसी प्रणाली से है जिसमें नेत्रों द्वारा नवीन तथा प्राथमिक तथ्यों का विचारपूर्वक संग्रहण किया जाता हो। अवलोकन प्रणाली एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें अनुसन्धानकर्ता अध्ययन के अन्तर्गत आये समूह के दैनिक जीवन में भाग लेते हुए अथवा उससे दूर बैठकर उनके सामाजिक व्यवहार का अपनी इन्द्रियों द्वारा अवलोकन करता हो। मोसर ने अवलोकन के मूलाधार को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "सुन्दर ढंग से अवलोकन को वैज्ञानिक जाँच-पड़ताल की शास्त्रीय पद्धति कहा जा सकता है। ....ठोस अर्थ में अवलोकन में कानों तथा वाणी की अपेक्षा आँखों का प्रयोग होता है।"[3]

अवलोकन विधि[4] के विवेचन से निम्न तथ्य मुख्य रूप से स्पष्ट हो जाते हैं :

(अ) प्राथमिक सामग्री (Primary Data)—अवलोकन विधि का उपयोग अधिकांश रूप से प्राथमिक सामग्री की प्राप्ति के लिए किया जाता है। ये तथ्य पहली बार ही संग्रहीत किये जाते हैं।

---

1 "Science begins with observation and must ultimately return to observation for its final validation." W. J. Goode and P. K. Hatt, *Methods in Social Research*, (1954) p. 199.

2 "Observation—a deliberate study through the eye—may be used as one of the methods for scrutinizing collective behaviour and complex institutions as well as the separate units composing the totality." P. V. Young, *Scientific Social Survey and Research* (1544), p. 199.

3 Observation can fairly be called the classic method of scientific enquiry......In the strict sense, observation implies the use of the eyes rather than of the ears and the voice." C. A. Moser, *Survey Methods in Social Investigation* (1958), p. 166.

4 रामबिहारी सिंह तोमर कृत : 'सामाजिक अनुसन्धान' अध्याय 8।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri Sarayu Trust Funding IKS-MoE-Grant-2

(ब) **प्रत्यक्ष अध्ययन** (Direct Study)—इस विधि के द्वारा सामग्री संग्रहण व्यक्तियों से प्रत्यक्ष रूप में किया जाता है। अवलोकनकर्ता को स्वयं अवलोकन करना पड़ता है और प्रत्यक्ष रूप से उसमें भाग लेना पड़ता है।

(स) **मानव इन्द्रियों का पूर्ण प्रयोग** (Full Use of Human Senses)—अवलोकन विधि में इन्द्रियों का प्रमुख रूप से प्रयोग करना पड़ता है। चक्षुओं का प्रयोग विशेष रूप से करना होता है।

(द) **विचारपूर्वक अध्ययन** (Deliberate Study)—अवलोकन एक प्रकार का विचारपूर्वक अध्ययन है।

(य) **सामूहिक व्यवहार** (Collective Behaviour)—अवलोकन सामूहिक व्यवहार के अध्ययन के लिए किया जाता है।

वैज्ञानिक अवलोकन के प्रमुख तत्त्व

वैज्ञानिक निरीक्षण के निम्न चार तत्त्व हैं :

(1) **कर्मविषयता** (Objectivity)—वैज्ञानिक अवलोकन कर्मविषयक होना चाहिए। उसमें किसी प्रकार का भी पक्षपात नहीं होना चाहिए। जो कुछ भी जैसा देखा जाये उसे वैसे का वैसा ही लिख देना चाहिए। किन्हीं भी पूर्व धारणाओं का प्रभाव अवलोकन पर नहीं पड़ना चाहिए। अवलोकनकर्ता को निष्पक्ष रूप से कर्मविषयक अवलोकन करना चाहिए।

(2) **निश्चितता** (Precision)—वैज्ञानिक अवलोकन का लक्ष्य निश्चितता होता है। किसी भी घटना के लिए 'सामान्य अनुमान' या 'लगभग' का प्रयोग नहीं किया जाता। निश्चित रूप से घटना के विषय में ठीक-ठीक अवलोकन करना पड़ता है और परिस्थिति का वर्णन स्पष्ट एवं यथार्थ होता है।

(3) **व्यवस्थित** (Systematic)—वैज्ञानिक अवलोकन व्यवस्थित होता है। वैज्ञानिक अवलोकन करते समय एक निश्चित व्यवस्था का प्रयोग करता है और उसी व्यवस्था के संदर्भ में अवलोकन करता है।

(4) **प्रामाणिकता** (Verification)—अवलोकन सत्य एवं उचित तभी माना जायेगा जबकि उसे प्रमाणित कर दिया जाये। जो कुछ एक व्यक्ति अवलोकन करता है वही अन्य व्यक्ति भी अवलोकन करेगा तो उस अवलोकन को प्रमाणित माना जायेगा।

अवलोकन विधि के प्रकार

अध्ययन विधियों के आधार पर इसे हम निम्न प्रकारों में विभक्त कर सकते हैं :

(1) सरल तथा अनियन्त्रित अवलोकन (Simple or Uncontrolled Observation), (2) व्यवस्थित अथवा नियन्त्रित अवलोकन (Systematic or Controlled Observation)।

सरल अथवा अनियन्त्रित अवलोकन (Simple or Uncontrolled

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri Gyaan Trust. Funding by IKS-MoE Grant-2

Observation)—सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करने में नियन्त्रित तथा अनियन्त्रित दोनों ही विधियाँ काम में लायी जा सकती हैं; किन्तु सामाजिक सम्बन्धों के जटिल जाल को समझने के लिए विशेषतया अनियन्त्रित विधि का प्रयोग ही होता है। इस तथ्य का समर्थन करते हुए गुडे तथा हॉट् ने लिखा है, "सामाजिक सम्बन्धों के बारे में अधिकतर ज्ञान जो लोगों के पास है, सहभागिक अथवा असहभागिक अनियन्त्रित अवलोकन के द्वारा प्राप्त किया गया है।"[1] उक्त विवेचन से सामाजिक विज्ञानों में अनियन्त्रित अवलोकन विधि का महत्त्व स्पष्ट हो जाता है। इसी तथ्य का स्पष्टीकरण करते हुए उन्होंने आगे सम्बोधित किया है कि मानव समाज एवं सामाजिक व्यवहार के बारे में प्राप्त ज्ञान उन परिस्थितियों से सीखा है जिनमें हमने स्वयं भाग लिया है।

अनियन्त्रित अवलोकन-विधि को जानने से पूर्व हमें उसका अर्थ स्पष्ट करना है। पी. वी. यंग ने लिखा है, अनियन्त्रित अवलोकन में हमें वास्तविक जीवन-परिस्थितियों की सूक्ष्म परीक्षा करनी होती है जिनमें यथार्थ के यन्त्रों के प्रयोग का अथवा अवलोकित घटना की शुद्धता की जाँच का कोई प्रश्न नहीं किया जाता।"[2] इसका तात्पर्य यही हुआ कि अनियन्त्रित अवलोकन द्वारा वास्तविक परिस्थितियों में भाग लेकर ही सामाजिक व्यवहार के बारे में सीखा जाता है। जब प्राकृतिक पर्यावरण एवं अवस्था में किन्हीं क्रियाओं का अवलोकन होता है एवं क्रियाएँ किसी भी बाह्य शक्तियों द्वारा संचालित एवं प्रभावित नहीं की जातीं तो ऐसा अवलोकन अनियन्त्रित अवलोकन कहलाता है। इसके विपरीत नियन्त्रित अवलोकन में शुद्धता के लिए परीक्षाएँ अथवा सहायक बातें एवं अवलोकन के लिए प्रामाणिक दशाएँ होती हैं।

अनियन्त्रित अवलोकन मानव-इन्द्रियों के उपयोग—देखना एवं सुनना—का सरलतम स्वरूप है जिसके द्वारा केवल सामाजिक सम्बन्धों के बारे में पर्याप्त आधारभूत ज्ञान प्राप्त नहीं किया जाता, बल्कि यह विभिन्न अनुसंधान कार्यों में सामग्री संकलन हेतु प्रमुख प्रणालियाँ भी प्रदान करता है।

अनियंत्रित अवलोकन के प्रधान दोष (Main Defects of Uncontrolled Observation)—अनियन्त्रित अवलोकन का सामाजिक जगत में इतना उपयोग होते हुए भी उसमें कुछ दोष अवश्य पाया जाता है। अनियन्त्रित अवलोकन के आन्तरिक पक्ष को देखें तो पता चलता है कि इसमें भी कई कमियाँ हैं। बर्नार्ड ने इसके मुख्य दोष की ओर संकेत करते हुए लिखा है, "इसमें खतरा है कि अनियन्त्रित अवलोकन सम्भवतया हमें यह भावना प्रदान करता है कि हमने जो कुछ देखा है उसके बारे में हम जो वास्तव में करते हैं उसकी अपेक्षा हम ज्यादा जानते हैं। तथ्य इतने वास्तविक एवं सजीव होते हैं और उनके बारे में हमारी भावनाएँ इतनी दृढ़ होती हैं कि कभी हम ज्ञान की विस्तृतता के लिए अपने भावों की पुष्टता की गलती करने लगते हैं।"[3]

1 W. J. Goode and P. K. Hatt, *Methods in Social Research.*
2 P. V. Young, *Scientific Social Surveys and Research*, p. 201
3 Jessie Bernards, *Field and Methods of Sociology*, p. 273.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. Funding: IKS-MoE-Grant-2

उक्त कथन से यही स्पष्ट होता है कि अवलोकन में अनियन्त्रितता के कारण अवलोकनकर्ता किसी भी तथ्य के अवलोकन एवं लेखन के लिए स्वतन्त्र होता है। इसके विपरीत नियन्त्रित अवलोकन में ऐसी बात नहीं आ पाती; क्योंकि उसमें बहुत थोड़ी जीवन-दशाओं का ही नियन्त्रित अवलोकन किया जाना सम्भव होता है।

इसके अतिरिक्त अनियन्त्रित अवलोकन विश्वसनीय कम ही होता है। जो अवलोकन एक बार किया गया है; दुबारा उसकी परीक्षा या सत्यापन करना कठिन है। इस प्रकार के अवलोकन में अनुसन्धानकर्ता अपने विचारों एवं अभिमति के प्रवेश में स्वतन्त्र होता है। विभिन्न अवलोकनकर्ता समान घटना का भिन्न-भिन्न रूप में अवलोकन करते हैं एवं भिन्न-भिन्न निष्कर्ष निकालते हैं। नियन्त्रित अवलोकन में यह बात नहीं होती। तथ्यों के सत्यापन के लिए समान नियन्त्रित दशा की पुनः उत्पत्ति की जा सकती है एवं अवलोकनकर्ता उसमें अपने विचारों के प्रवेश के लिए स्वतन्त्र भी नहीं होता।

व्यवस्थित अथवा नियन्त्रित अवलोकन (Systematic or Controlled Observation)—व्यवस्थित अवलोकन एक नियन्त्रित अवलोकन है। अनियन्त्रित अवलोकन साधारणतया व्यवस्थित नियन्त्रित अवलोकन का मार्ग प्रदर्शन करता है जिसमें निश्चित पूर्व-व्यवस्थित योजनाओं द्वारा अवलोकन किया जाता है। ज्यों-ज्यों हमारे विचार गहराई में उतरते जायेंगे, त्यों-त्यों हम अनियन्त्रित अवलोकन पर कम अवलम्बित होते जायेंगे। आज अनुसन्धानकर्ता अनियन्त्रित अवलोकन करने के पश्चात भी वह अपने नोट्स में अनुसूचियों, एवं प्रश्नावलियों द्वारा शेषपूर्ति (supplement) करने की आवश्यकता अनुभव करता है, क्योंकि वह अपने तथ्यों की यथार्थता को विभिन्न तरीकों से शुद्ध करना चाहता है। इस प्रकार अनियन्त्रित अवलोकन से नियन्त्रित अवलोकन की ओर अधिकाधिक ध्यान देने का प्रयत्न किया जा रहा है।

अनियन्त्रित अवलोकन की तरह इसमें भी अनुसन्धानकर्ता अवलोकन किये जाने वाले लोगों की क्रियाओं को अधिक सीमा तक नियन्त्रित नहीं करता। नियन्त्रित अवलोकन में अवलोकनकर्ता एक मध्यस्थ व्यक्ति होता है। स्थिति एवं प्राप्त सामग्री के बीच उसकी स्थिति होती है। वह तो केवल अनुसन्धान के विभिन्न साधोंन को सामग्री संग्रहण के हेतु प्रयुक्त करने वाला होता है। सामग्री संग्रहण का काम वे साधन स्वयं ही करते हैं। ऐसी स्थिति में नियन्त्रित अवलोकन में अधिकतम वैषमिकता एवं तटस्थता रखी जा सकती है। नियन्त्रित साधनों द्वारा समान दशा की पुनः उत्पत्ति की जा सकती है एवं घटनाओं की अनेक बार उन समान दशाओं में जांच की जा सकती है। इस प्रकार नियन्त्रित अवलोकन में सत्यापन आसान होता है। नियन्त्रित अवलोकन का यही लक्ष्य है कि अवलोकन में अत्यधिक वैषमिकता रखी जाय।

इस प्रकार नियन्त्रित अवलोकन में सामग्री संग्रहण निश्चित पूर्व व्यवस्थित योजनाओं के अनुसार किया जाता है। इन योजनाओं में परीक्षात्मक कार्य-प्रणालियाँ होती हैं। इन परीक्षात्मक कार्य-प्रणालियों के प्रयोग का उद्देश्य समुदाय के लोगों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funded by IKS-MoE-Grant-2

यथार्थ व्यवहार का अवलोकन, निरीक्षण एवं नोट करना है। इसमें विभिन्न प्रकार के संयन्त्रों का प्रयोग किया जाता है जिनका उद्देश्य लोगों के व्यवहारों एवं क्रियाओं को जैसी वे हैं, उसी के अनुरूप उनका अवलोकन करना है। इसमें इस बात का प्रयत्न किया जाता है कि स्थिति के वास्तविक चित्रण में कोई अन्तर न पड़ जाय।

उपर्युक्त विवेचन से नियन्त्रित अवलोकन में निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं:

(1) अवलोकन की जाने वाली इकाइयों की स्पष्ट परिभाषा।

(2) अवलोकन के लिए यथार्थ एवं सम्बन्धित तथ्यों का चुनाव।

(3) अवलोकन की दशाओं का समय, स्थान एवं व्यक्ति की दृष्टि से प्रमाणीकरण।

(4) सूचियों को लेखबद्ध करना।

(5) परिशुद्धता (accuracy) में सहायक होने वाले यान्त्रिक साधनों का सम्भव प्रयोग, जिसमें फोटोग्राफ, नक्शे, अनुसूचियाँ, साउण्ड रिकार्डर, मूवमेण्ट रिकार्डर तथा मोशन पिक्चर-आदि का प्रयोग सम्मिलित है।

नियन्त्रित अवलोकन के प्रकार

उक्त विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि नियन्त्रित अवलोकन दो प्रकार से हो सकता है: (1) घटना या अवलोकित की जाने वाली वस्तु के नियन्त्रण पर; (2) घटना का अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण।

(1) **घटना पर नियन्त्रण (Control Over Phenomena)**—नियन्त्रित अवलोकन का प्रथम प्रकार वह है जिसमें अवलोकन की जाने वाली घटना को किन्हीं निश्चित दशाओं में रखकर उसका अध्ययन किया जाता है। किसी समय उस प्रकार की दशाएँ उत्पन्न की जा सकती हैं और उस दशा में उक्त घटना का अवलोकन किया जा सकता है अथवा उन समान दशाओं में पहले प्राप्त तथ्यों की सत्यता की जाँच की जा सकती है। यद्यपि सामाजिक घटना के लिए इस प्रकार की प्रयोगशाला पद्धति से अध्ययन कठिन है, फिर भी सामाजिक वैज्ञानिक इस ओर प्रयत्नशील हैं। इसमें अवलोकन करने के लिए अवलोकनकर्ता पर कोई नियन्त्रण नहीं होता।

(2) **घटना का अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण (Control Over Observer of Phenomena)**—नियन्त्रित अवलोकन की इस दूसरी पद्धति में घटना पर नियन्त्रण नहीं किया जाता, बल्कि अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण होता है। दूसरे शब्दों में, सामाजिक घटना की प्रकृति को देखते हुए उस पर नियन्त्रण रखना कठिन है। ऐसी स्थिति में अवलोकनकर्ता पर ही नियन्त्रण रखा जा सकता है। जिसके कारण वह अपने अवलोकन में अभिमति एवं पक्षपात आदि के प्रवेश के लिए स्वतन्त्र नहीं होता। अवलोकन के अन्तर्गत, सहायता सूचना प्राप्ति में जितने अधिक साधन प्रयुक्त किये जायेंगे उतना ही अधिक अवलोकनकर्ता नियन्त्रित होता जायेगा। औपचारिक साक्षात्कार, अनुसूची, फोटोग्राफ, साउण्ड रिकार्डर, मूवमेण्ट रिकार्डर, नक्शे आदि इसी प्रकार के यन्त्र अथवा साधन हैं जो अवलोकनकर्ता को उसकी अभिमति के प्रवेश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के विरुद्ध नियन्त्रित करते हैं और यथार्थ अवलोकन एवं वास्तविक चित्रण के लिए प्रेरित एवं विवश करते हैं।

नियन्त्रित अवलोकन में उपयोग की जाने वाली निम्नलिखित सहायक चीजों का पी. वी. यंग ने उल्लेख किया है। जिनके प्रयोग से अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण रखा जा सकता है।

(अ) क्षेत्र के बारे में विस्तृत नोट्स (Detailed Field Notes)—पी. वी. यंग ने बताया है कि जहाँ तथ्यों को लेखबद्ध करने का स्वचालित यन्त्र नहीं मिलता वहाँ अनुसंधानकर्ता को यथाशीघ्र क्षेत्र के नोट्स विस्तृत रूप से लिख लेने चाहिए। ऐसा करना अध्ययन की उद्देश्य-पूर्ति में अत्यन्त सहायक होगा।

(ब) फोटोग्राफ (Photographs)—प्रदर्शन के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए प्रदर्शन योग्य चीजों के फोटोग्राफ भी लेना आवश्यक है। ऐसा करने से समूह के जीवन का यथार्थ चित्र सामने प्रतिलक्षित हो सकेगा।

(स) अनुसूचियाँ (Schedules)—नियन्त्रित अवलोकन में प्राप्त किये गये तथ्यों को लिखने के लिए भी अवलोकन अनुसूचियों को बनाकर साथ लेना आवश्यक माना गया है। इसके द्वारा अवलोकित घटनाओं को प्रामाणिकता दी जा सकती है। सामान्यतया ये रिक्त सारणियों के रूप में होती हैं जिनमें अवलोकित घटनाओं को भर देना होता है। अवलोकनकर्ता बिना लोगों से कुछ पूछे ही जो कुछ देखता-सुनता है उनको अनुसूची में भर देता है। इन भरी हुई अनुसूचियों में अवलोकनकर्ता कुछ परिवर्तन नहीं कर सकता।

(द) समाजमिति के पैमाने (Sociometric Scales)—समाजमिति के मापों को भी सामाजिक जीवन के विभिन्न कारकों को मापने के लिए आवश्यक माना गया है; जैसे—धारणाओं, व्यवस्थान, सामाजिक स्थिति, सामाजिक सहभागिता आदि की माप।

(य) नक्शे (Maps)—अवलोकन को अधिकाधिक नियन्त्रित बनाने के लिए नक्शों का प्रयोग भी अपेक्षित है। जहाँ तक नक्शे सामाजिक स्थितियों के बारे में स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करते हैं वहाँ वे फोटोग्राफ के सामन हीं उपयोगी हैं।

इसके अतिरिक्त भी कई अन्य भौतिक साधनों का प्रयोग किया जा सकता हैं; जैसे—साउण्ड, रिकार्डर, मूवमेण्ट रिकार्डर, फिल्म आदि। यदि अवलोकनकर्ता कुछ ग्रहण करने में असफल भी हो गया हो तो उसकी इस कमी को इन साधनों के द्वारा पूरा किया जा सकता है।

उपरोक्त सहायक साधनों के द्वारा अवलोकनकर्ता पर नियन्त्रण लगाया जाता है। इनके द्वारा वस्तु-स्थिति तो स्पष्ट हो ही जाती है और उनमें अवलोकनकता अपनी अभिरुचि के आधार पर कोई परिवर्तन भी नहीं कर सकता। जितना अधिक इन सहायक साधनों को सूचनाओं की शेष पूर्ति के लिए बढ़ाया जायगा अवलोकनकर्ता पर भी उतना ही नियन्त्रण बढ़ता जायेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) प्रयोगात्मक विधि
(Experimental Method)

प्रयोगात्मक विधि भी एक प्रकार की अवलोकन विधि ही है। प्रयोगात्मक विधि में अवलोकन निश्चित प्रकार से एक निश्चित उपकल्पना (hypothesis) के सन्दर्भ में होता है। केवल एक कारण बदलता रहता है एवं अन्य कारक स्थायी रहते हैं। अकोलकर ने इनमें अन्तर दर्शाते हुए लिखा है, "यह क्षेत्रीय अवलोकन से भिन्न है, फलदायक प्रयोग में प्रयोगकर्ता इस प्रकार स्थिति को व्यवस्थित करता है; उपकल्पना के प्रकाश में कुछ कारकों को स्थिर रखा जाता है तथा कुछ को एक ही समय में अस्थिर।"[1]

अकोलकर ने संक्षेप में कहा है, "दूसरे शब्दों में, यह वह अवलोकन है जो नियन्त्रित या प्रयोगशाला में स्थिर रहता है।"[2]

प्रयोगात्मक विधि तथा अवलोकन विधि में अन्तर बताते हुए हूलियालकर तथा अन्य ने लिखा है कि "अवलोकन एवं प्रयोग में अंशों में अन्तर के अधिक भेद है। किसी उचित प्रयोग में विचलनों को इस प्रकार नियन्त्रित किया जाता है, जो सम्भव नहीं है, जबकि कोई सिर्फ सामाजिक तत्त्वों का ही अवलोकन करता है।"[3]

प्रयोग की प्रक्रिया (The Process of Experiment)

प्रयोग की विधि की एक निश्चित एवं कठोर प्रक्रिया होती है और उसी प्रक्रिया के अनुसार कार्य करना पड़ता है। वास्तव में वह प्रक्रिया प्रयोगशाला विधि (laboratory method) के समान होती है। प्रयोगशाला विधि के विभिन्न चरणों पर पिछले अध्याय में प्रकाश डाल चुके हैं। प्रयोग की विधि में सर्वप्रथम हमें एक उपकल्पना (hyphothesis) का निर्माण करना पड़ता है। फिर प्रयोग करने के लिए आवश्यक यन्त्रों को एकत्रित करना पड़ता है। फिर हम उस सिद्धान्त का वर्णन करते हैं जिसके आधार पर प्रयोग किया जा रहा है। प्रयोग विधि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें एक कारक को छोड़कर अन्य सब कारक नियन्त्रित होते हैं। प्रयोगकर्ता जिस प्रकार चाहे इन कारकों को परिवर्तित कर सकता है।

प्रयोगकर्ता एक कारक में परिवर्तन करता है तथा अन्य कारकों को स्थायी रखता है। जो कारक स्थायी होते हैं उन्हें स्थायी कारक (constant factors) कहते हैं। इनमें से किसी पर परिवर्तन नहीं होता है। एक कारक को स्वतन्त्र रखा जाता

---

1 V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 32.

2 "In other words, it is observation under controlled or laboratory conditions." V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 32.

3 "The distinction between observation and experimentation is more than a difference in degree, In a valid experiment variables are controlled in a way that is not possible when one merely observes social phenomena." S. G. Hulyalkar, A. K. Jiandani & S. V. Kale, *Outlines of Social Psychology*, p. 32.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है और उसमें परिवर्तन होते रहते हैं। इस स्वतन्त्र रूप में परिवर्तित होने वाले कारक को स्वतन्त्र परिवर्त्य (independent variable) कहते हैं। जिस अवस्था में परिवर्तन आता है उसे आश्रित परिवर्त्य (dependent variable) कहते हैं। आश्रित परिवर्त्य एक या अधिक हो सकते हैं। जिन पर स्वतन्त्र परिवर्त्य का प्रभाव पड़ता है उन्हें ही आश्रित परिवर्त्य कहते हैं। यह निम्न चित्र द्वारा स्पष्ट हो जायेगा :

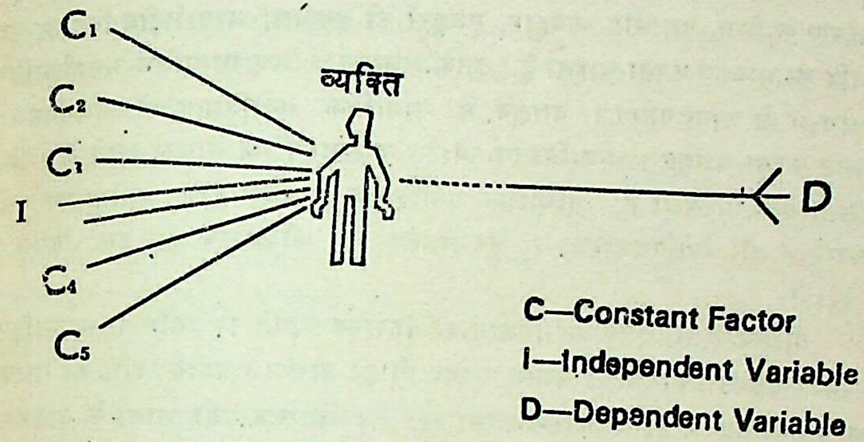

व्यक्ति पर C_1, C_2, C_3, C_4, C_5,................

इत्यादि स्थायी कारक प्रभाव डाल रहे हैं। ऐसा कारक है जो स्वतन्त्र परिवर्त्य है और समय-समय पर परिवर्तित प्रभाव डालता है। इसका प्रभाव यह होता है कि D में भी परिवर्तन आता है। इससे स्पष्ट है कि D प्रकार का परिवर्तन I के कारण होता है। इसी प्रकार प्रयोग विधि में कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। प्रयोग विधि में इस प्रकार अवलोकन किया जाता है और कारकों पर नियन्त्रण रखा जाता है।

प्रयोग विधि का महत्त्व

प्रयोग विधि का अत्यधिक महत्त्व है। प्रयोग विधि ही किसी भी ज्ञान को विज्ञान का स्वरूप प्रदान कर देती है। जितने भी भौतिक विज्ञान हैं उनमें प्रयोग विधि का ही प्रयोग किया जाता है। मर्फी तथा न्यूकोम्ब ने लिखा है, "प्रयोगात्मकता सर्वोत्तम विधि तथा विश्लेषण की प्राविधिक पूर्णता है।"[1]

सामाजिक मनोविज्ञान और प्रयोग विधि

सामाजिक मनोविज्ञान में प्रयोग विधि का प्रयोग अधिक से अधिक किया जा रहा है, परन्तु प्रयोग विधि की अनेक समस्याएँ एवं सीमाएँ हैं। सबसे बड़ी सीमा यह है कि प्रयोग विधि में कारकों पर नियन्त्रण करना पड़ता है, परन्तु सामाजिक घटना पर नियन्त्रण करना सरल नहीं है. प्रयोगशाला में वे सारी परिस्थितियाँ नहीं उत्पन्न की जा सकतीं जो वास्तविक अवस्था में होती हैं। उदाहरण के लिए, किसी व्यक्ति

---

1 "Experimentation is the crowning touch, the technical perfection of the analysis." Murphy and Newcomb, *Experimental Social Psychology*, p. 13.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का कोई सम्बन्धी मर जाता है और वह उसके कारण दुख से पीड़ित है। कुछ दिनों के बाद प्रयोगशाला में इसका अध्ययन नहीं किया जा सकता। प्रयोगशाला में जीवन की वास्तविक परिस्थितियों को उत्पन्न नहीं किया जा सकता।

दूसरी समस्या यह है कि सामाजिक मनोवैज्ञानिक अपने कारकों पर नियन्त्रण नहीं रख सकता और न उनमें अपनी सुविधा के अनुसार परिवर्तन ही ला सकता है। उदाहरण के लिए, वह भीड़ व्यवहार, मजदूरों की हड़ताल, अन्तर्राष्ट्रीय विरोध, युद्ध इत्यादि का अध्ययन करना चाहता है। इनके अध्ययन के लिए सामाजिक मनोवैज्ञानिक को क्षेत्र में ही जाना पड़ेगा। वास्तव में सामाजिक मनोविज्ञान को कर्म-विषयक अध्ययन करना चाहिए। अन्य विज्ञान भी इन कठिनाइयों का सामना करते हैं। ब्रिट ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "सामाजिक मनोविज्ञान ही केवल पूर्णतः प्रयोगात्मक नहीं है, परन्तु न तो ज्योतिषशास्त्र, न भूगर्भशास्त्र या जीवशास्त्र ही इस विषय में पूर्ण है।"[1]

वास्तव में सामाजिक मनोविज्ञान की वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करना चाहिए, इस प्रकार उसकी प्रयोगशाला समस्त संसार ही हो जायेगा। प्रयोग विधि का तात्पर्य केवल प्रयोगशाला में ही अवलोकन करना नहीं है। वैज्ञानिक प्रयोगशाला के बाहर भी प्रयोगविधि का प्रयोग कर सकते हैं। उन्हें निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए:

(क) सर्वप्रथम उन्हें एक उपकल्पना का निर्माण करना चाहिए।

(ख) इस उपकल्पना पर एक व्याख्याकारी उपकल्पना का निर्माण करना चाहिए।

(ग) व्याख्याकारी उपकल्पना का पुष्टीकरण तथ्यों के आधार पर करना चाहिए और यदि उपकल्पना तथ्यों की कसौटी पर खरी न उतरे तो उसे बदल देना चाहिए।

(घ) किसी भी प्रयोग की उपकल्पना का उचित निर्माण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यदि हम वैज्ञानिक अध्ययन करना चाहते हैं तो हमें पहले प्रयोग न करके एक उचित उपकल्पना का निर्माण करना चाहिए। जितनी अच्छी एवं सुलझी हुई हमारी उपकल्पना होगी उतना ही अच्छा हमारा प्रयोग होगा। मर्फी तथा न्यूकोम्ब ने लिखा है, "प्रयोगात्मकता सर्वोत्तम विधि है, तथा विश्लेषण की प्राविधिक पूर्णता है। यह समस्या की व्याख्या के बाद आता है, इसकी विशेषताएँ इतनी अच्छी तरह वर्णित हैं कि हम जानते हैं क्या नियन्त्रित एवं मापा जा सकता है।"[2]

---

1 "Social Psychology is not exclusively experimental; but neither is astronomy, botany, geology, or zoology for that matter." Brit *Social Psychology of Modern Life,* p. 15.

2 Experimentation is the crowning touch, the technical perfection of the analysis. It comes after the problem has been defined and its salient characteristics so well formulated that we know what can be controlled and measured." Murphy and Newcomb, *Experimental Social Psychology,* p. 13.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ङ) उपकल्पना के निर्माण के उपरान्त हमें यह ज्ञात हो जायगा कि, कौन से कारक स्थायी हैं और कौन से परिवर्त्य। इस ज्ञान के आधार पर हम प्रयोग कर सकते हैं।

प्रयोगशाला के बाहर भी जटिल सामाजिक घटना के अध्ययन कुछ मनोवैज्ञानिकों ने किये हैं। हार्टमैन (Hartmann) ने एक चुनाव में वोटरों से की गयी प्रार्थना के तार्किक एवं संवेगात्मक पक्षों का अध्ययन किया। लेविन (Lewin) तथा उसके साथियों ने भी एक अध्ययन, लड़कों के क्लब में पाये जाने वाले नेतृत्व के प्रतिमानों पर किया है।

प्रयोग विधि अपनी सीमाएँ रखते हुए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और इसका उपयोग बढ़ता जा रहा है; परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि अन्य पद्धतियों का कोई महत्त्व नहीं है। किसी सामाजिक व्यवहार को अध्ययन करने के लिए एक विधि अधिक उपयुक्त है तो दूसरी विधि अन्य किसी सामाजिक व्यवहार के अध्ययन के लिए है।

(4) तुलनात्मक विधि
(Comparative Method)

तुलनात्मक विधि का भी प्रयोग सामाजिक मनोविज्ञान में किया जाता है। इस विधि में पशु-पक्षियों के व्यवहार की तुलना सामाजिक मनुष्य से की जाती है; क्योंकि दोनों में कुछ प्रवृत्तियाँ जैसे क्रोध, प्रेम, भय आदि समान रूप से पाये जाते हैं। बहुत सारी प्रवृत्तियों में दोनों के व्यवहार समान हैं। पशु तथा पक्षियों के व्यवहार से मनुष्य के व्यवहार की तुलना की जाती है; परन्तु यह भी सत्य है कि मनुष्य ने पशु तथा पक्षियों से अधिक उन्नति की है और उसने समाज को एक नया रूप दिया है। पहले के मनुष्य के आचरणों से आज के मनुष्य के आचरणों में महान अन्तर हो गया है। यह सब अन्दर समाज के विकास के कारण ही हुआ है, इसलिए सामाजिक मनोविज्ञान इस अन्तर का कारण बताता है। आज का व्यक्ति अपने सामाजिक आचरणों पर नियन्त्रण रखता है।

सामाजिक मनोविज्ञान की प्रविधियाँ
(Techniques of Social Psychology)

अब हम सामाजिक मनोविज्ञान की प्रविधियों पर विचार करेंगे। यहाँ पर हम कुछ प्रमुख प्रविधियों पर ही प्रकाश डालेंगे।

वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि
(Case-study Technique)

सामाजिक मनोविज्ञान समाज मे मानव-व्यवहार का अध्ययन करता है। मानव-व्यवहार अधिकांश रूप में गुणात्मक होता है। गुणात्मक-व्यवहार का अध्ययन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करने के लिए वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि अत्यन्त उपयोगी है। इस विधि का प्रयोग सामाजिक विज्ञानों में दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि का अर्थ

वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि को समझाते हुए शॉ ने लिखा है, "दी हुई समस्या में सामाजिक अनुसन्धान सामग्री के ठोस एवं वैयक्तिक स्थितियों के स्वरूप में सामग्री-संचय के साथ प्रारम्भ होते हैं। वैयक्तिक-स्थिति एक व्यक्ति, एक संस्था, एक समुदाय अथवा एक समूह हो सकता है, जिसे अध्ययन की इकाई के रूप में समझा जाता है। वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि सम्पूर्ण परिस्थिति अथवा कारकों के सम्मिलन, प्रक्रिया का विवरण अथवा घटनाओं का अनुक्रम जिसमें व्यवहार घटित होते हैं, मानव व्यवहार का इसके सम्पूर्ण ढाँचे में अध्ययन तथा उपकल्पनाओं के निर्माण में सहायक वैयक्तिक-स्थितियों के विश्लेषण एवं तुलना पर जोर देती है।"[1] यांग शिन पाव ने लिखा है, "वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि को एक व्यक्ति के सर्वांगीण गहन अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसमें अनुसन्धानकर्ता अपनी सम्पूर्ण चतुरता एवं विधियों का प्रयोग करता है। अथवा यह विधि एक व्यक्ति के बारे में पर्याप्त सूचना का एक व्यवस्थित संग्रह है, जिसमें कोई व्यक्ति यह समझ सके कि वह पुरुष या स्त्री समाज की इकाई के रूप में कैसे कार्य करता या करती है।"[2] बीसंज तथा बीसंज ने लिखा है, "वैयक्तिक-जीवन के अध्ययन की पद्धति गुणात्मक विश्लेषण का एक स्वरूप है जिसमें एक व्यक्ति. परिस्थिति या संस्था का अति सतर्क एवं पूर्णावलोकन किया जाता है।"[3]

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि एक गहन अध्ययन की विधि है जो एक व्यक्ति परिवार, समिति, सस्था अथवा समुदाय का एक इकाई के रूप में गहन अध्ययन करती है। इसे बर्गस (Burgess) ने सामाजिक-सूक्ष्मदर्शी (Social-Microscope) भी कहा है।"[4]

---

1 Clifford R. Shaw, *Case Study Method*, Publication of the American Sociological Society, XXI, (1927), p. 149.

2 "The case study method may be defined as small inclusive and intensive study of an individual in which investigator brings to bear all his skills and methods or as a systematic gathering of enough information about a person to permit one to understand how he or she functions as a unit of society." Yang Hsin-Pao, *Factfinding with Rural People*, F. A. O. Publication, (1955), p. 57.

3 "The case study is a form of qualitative analysis involving the very careful and complete observation of a person, a situation or an institution." Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p. 11.

4 विस्तार में पढ़िये रामबिहारी सिंह तोमर, सामाजिक सूक्ष्मदर्शी, प्रकाशक श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri Sarayu Trust, Funding IKS-MoE-Grant-2

वैयक्तिक विषय अध्ययन विधि के संयन्त्र

वैयक्तिक-विषय-अध्ययन विधि के संयन्त्रों के अन्तर्गत व्यक्तियों की डायरियाँ, पत्र, जीवन-इतिहास तथा प्रलेख (documents) आते हैं। जीवन-इतिहास के अन्तर्गत पारिवारिक-पृष्ठभूमि, वे पारिवारिक घटनाएं जिन्होंने व्यक्ति के जीवन को प्रभावित एवं परिवर्तित किया, परिस्थितियों के प्रति व्यक्ति की प्रतिक्रियाएँ, जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाएँ, सम्पूर्ण जीवन के अनुभव, जीवन को प्रभावित करने वाले महत्त्वपूर्ण व्यक्ति एवं घटनाएँ, तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार भविष्य के प्रति धारणा इत्यादि आते हैं।

इस प्रविधि का प्रयोग मनोचिकित्सकों (psychiatrists), मार्ग-प्रदर्शन विशेषज्ञों तथा सामाजिक वैज्ञानिकों के द्वारा अधिक किया जाता है। यह विधि समस्या का सूक्ष्म परीक्षण करती है। इस विधि के द्वारा व्यक्ति की पूर्व स्थितियों का चित्र तथा घटनाओं की निरन्तर तस्वीर प्राप्त होती है। उपकल्पनाओं के निर्माण में यह विधि अत्यधिक सहायक होती है। इस विधि की अनेक सीमाएँ हैं। यह सीमित अध्ययन है तथा निदर्शन-प्रणाली पर आधारित नहीं है। यह अत्यधिक खर्चीली एवं समय लेने वाली प्रणाली है। सामग्री की विश्वसनीयता की जाँच सम्भव नहीं हो पाती। जीवन-इतिहास दोषपूर्ण एवं अवैज्ञानिक होते हैं।

(2) प्रश्नावली प्रविधि
(Questionnaire Technique)

प्रश्नावली प्रविधि का अत्यधिक प्रयोग होता है। प्रश्नावलियों द्वारा अध्ययन एवं सामग्री संग्रहण का प्रमुख उद्देश्य समय और धन की बचत करना है। जब विस्तृत क्षेत्र में अध्ययन करना होता है तो प्रश्नावली प्रविधि का प्रयोग किया जाता है।

प्रश्नावली प्रविधि का अर्थ

प्रश्नावली के अर्थ पर प्रकाश डालते हुए पोप ने लिखा है, "एक प्रश्नावली के प्रश्नों को एक समूह के रूप में, जिनका सूचनादाता को बिना एक अनुसन्धानकर्ता या प्रगणक की व्यक्तिगत सहायता के उत्तर देना होता है, परिभाषित किया जा सकता है। साधारणतया प्रश्नावली डाक द्वारा भेजी जाती है, लेकिन यह लोगों में वितरित भी की जा सकती है। प्रत्येक स्थिति में यह सूचना प्रदान करने वाले के द्वारा भरी जाती है।"[1] लुण्डबर्ग ने प्रश्नावली की परिभाषा करते हुए लिखा है, "मूल रूप से, प्रश्नावली प्रेरणाओं का एक समूह है जिसके प्रति शिक्षित लोग उत्तेजित किये जाते हैं

---

1 "A questionnaire may be defined as a set of questions to be answered by the informant without the personal aid of an investigator or enumerator. Usually the questionnaire is sent by mail, but it may be distributed in person, in either case it is filled out by the one supplying the information. J. D. Pope, *in Research Method and Procedure in Agriculture Economics*. Social Science Research Council, New York (1928), p. 63.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और वे इन उत्तेजनाओं के अन्तर्गत अपने व्यवहार का वर्णन करते हैं।"[1] प्रश्नावली प्रश्नों की एक तालिका होती है।

प्रश्नावलियों के प्रकार

प्रश्नावलियों के चार प्रमुख प्रकार होते हैं :

(अ) बन्ध अथवा प्रतिबन्धित प्रश्नावली (Closed questionnaire),

(ब) अप्रतिबन्धित प्रश्नावली (Open questionnaire),

(स) चित्रित प्रश्नावली (Pictorial questionnaire),

(द) मिश्रित प्रश्नावली (Mixed questionnaire)।

(अ) बन्ध अथवा प्रतिबन्धित प्रश्नावली—वह होती है जिसमें प्रश्नों के उत्तर श्रेणीबद्ध होता है। प्रमुख रूप से उत्तर हाँ या नहीं में देना होता है। उदाहरण के लिए निम्न प्रश्न हैं :

क्या आप विदेशी हैं ?	हाँ/नहीं
क्या आप मांस खाते हैं ?	हाँ/नहीं
क्या आप चीनी हैं ?	हाँ/नहीं
आपका धर्म क्या है ?	ईसाई/बौद्ध/हिन्दू/मुस्लिम।

(ब) अप्रतिबन्धित प्रश्नावली—वह है जिसमें प्रश्नों का उत्तर खुलकर दिया जा सकता है। उदाहरण के लिए निम्न प्रश्न हैं .

भारत की विदेश-नीति के विषय में आपके क्या विचार हैं ?

भारत-नेपाल सम्बन्धों के विषय में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

सहशिक्षा के विषय में आपके क्या विचार हैं ?

(स) चित्रित प्रश्नावली—इसमें चित्र होते हैं और प्रश्नों का उत्तर उन चित्रों पर निशान लगा कर देने होते हैं।

(द) मिश्रित प्रश्नावली—इसमें उपरोक्त तीनों प्रकार के प्रश्नों का मिश्रण हो सकता है।

प्रश्नावलियों के उपयोगी होने की अनिवार्यताएँ

प्रश्नावलियाँ तभी उपयोगी हो पाती हैं जबकि सूचनादाता शिक्षित हों और उत्तर देने की इच्छा रखते हों। सूचनादाताओं को विषय का ज्ञान होना भी अनिवार्य है। प्रश्नावली में कुछ सहायक सूचनाएँ भी होती हैं। इन सूचनाओं के द्वारा उत्तरों की सत्यता एवं असत्यता को ज्ञात किया जा सकता है।

प्रश्नावलियों की सीमाएँ

प्रश्नावली की अनेक सीमाएँ हैं। सर्वप्रथम तो यह कि अधिकांश लोग ...

---

1 "Fundamentally, the questionnaire is a set of stimuli to which literate people are exposed in order to observe their verbal behaviour under these stimuli." George A. Lundberg, *Social Research* (1942), p. 183.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही नहीं देना चाहते और इस कारण बहुत ही कम प्रश्नावलियाँ भरकर लौटती हैं। यह विधि केवल उच्च-शिक्षित व्यक्तियों का अध्ययन कर सकती है। सामग्री भी संकुचित रहती है, क्योंकि प्रश्न अधिक नहीं किये जा सकते। सार्वभौमिक प्रश्नों का निर्माण असम्भव होता है। इस प्रणाली के द्वारा किये गए अध्ययन को प्रतिनिधि नहीं माना जा सकता, क्योंकि इसमें निदर्शन प्रणाली का प्रयोग नहीं होता।

(3) नैदानिक प्रविधि
(Diagnostic Technique)

नैदानिक प्रविधि एक व्यक्ति से सम्बन्धित अध्ययन है। जब एक व्यक्ति की चिकित्सा निदान विशेषज्ञ (Therapy Diagnostician) करता है तो इस प्रविधि का प्रयोग करता है। इस प्रविधि में एक व्यक्ति का हर प्रकार से विश्लेषण किया जाता है।

(4) मनोविश्लेषण प्रविधि
(Psychoanalysis Technique)

मनोविश्लेषण प्रविधि अभी कुछ समय से ही प्रारम्भ हुई है। कभी-कभी ऐसा होता है कि कुछ घटनाएँ सामाजिक जीवन में ऐसी घटती हैं जो मनुष्य के कोमल मन में ग्रंथियाँ बना देती हैं और इन ग्रंथियों के कारण उसका जीवन दुखी हो जाता है। प्रायः मनुष्य स्वयं भी अपने भावों का पता नहीं लगा पाता और दुखी बना रहता है। मनोविश्लेषणवादी पहले इन ग्रन्थियों के कारण का पता लगाते हैं और फिर इनको दूर करने का उपाय करते हैं। मनुष्य में कुछ प्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं। प्रत्येक समाज के कुछ नियम होते हैं। इन नियमों के अनुसार मनुष्य को कार्य करना होता है। जब सामाजिक नियमों और जन्मजात प्रवृत्तियों में विरोध होता है तो व्यक्ति जन्मजात प्रवृत्तियों को दबा देता है और सामाजिक नियमों के अनुसार कार्य करता है। इसके परिणामस्वरूप मन में एक प्रकार की निराशा छा जाती है। यह निराशा अचेतन मन में चली जाती है, और वहाँ वास करने लगती है कभी भी यह निराशा अचेतन मन से चेतन मन में एकाएक निकल आती है आर व्यक्ति का व्यवहार विचित्र हो जाता है। इस विचित्र व्यवहार के कारण व्यक्ति समाज के लिए समस्या बन जाता है। मनोविश्लेषणवादी इस निराशा का पता लगाते हैं और उसका उपचार करते हैं।

(5) सांख्यिकीय प्रविधि
(Statistical Technaique)

सांख्यिकीय प्रविधि गणनात्मक सामग्री में प्रयोग की जाती है। इस प्रविधि के प्रयोग से गणित का प्रयोग बढ़ जाता है और निश्चितता भी बढ़ जाती है। कोई घटना कितनी बार घटित हुई इसका ज्ञान हमें इसके द्वारा हो जाता है। सांख्यिकीय माध्य का अत्यधिक महत्त्व है। सामाजिक जीवन के अध्ययन के परिणामस्वरूप संग्रहीत सामग्री की राशि इतनी अधिक होती है कि उसके द्वारा सामाजिक जीवन के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust Foundation/IKS-MoE-Grant-2

बारे में किसी भी प्रकार के निष्कर्ष पर पहुंचना अत्यन्त कठिन होता है। इस कार्य को सांख्यिकीय माध्यों ने अतिसुगम बनाकर सामाजिक अनुसंधान में महत्त्वपूर्ण योग दिया है।

सहसम्बन्ध (correlation) तथा अन्य सांख्यिकीय माप अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। धीरे-धीरे इनका उपयोग बढ़ता जा रहा है

(6) समाजमिति
(Sociometry)

समाजमिति एवं इसकी पद्धतियों का समाजशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों एवं मनोव्याधि-शास्त्रज्ञों द्वारा विस्तृत पैमाने पर उपयोग किया जाता है। समाजमिति एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा एक समूह के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों, उनके आकर्षण-विकर्षण एवं समूह की सम्बन्ध व्यवस्था में व्यक्तियों की सामाजिक स्थिति आदि को स्पष्ट, सरल एव संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। समूह के सदस्यों के बीच पाये जाने वाले पारस्परिक सम्बन्धों की सम्पूर्ण व्यवस्था को रेखीय निरूपण द्वारा सरलता एवं संक्षिप्तता से प्रस्तुत करने का यह महत्त्वपूर्ण माध्यम है, लेकिन यह प्रणाली कोई रेखाचित्र मात्र नहीं है। रेखाचित्रों में सम्बन्धों के आकर्षण-विकर्षण, व्यक्तियों द्वारा अन्य सदस्यों को दी जाने वाली माध्यमिकता, परस्पर समान व असमान आकर्षण रखने वाले व्यक्तियों आदि की व्याख्या एवं विश्लेषण सम्भव नहीं है। लेकिन समाजमिति की पद्धतियों द्वारा ऐसा सम्भव है। ब्रोनफेनब्रेनर समाजमिति की परिभाषा करते हुए लिखते हैं, "....समूह में व्यक्तियों के बीच स्वीकृति एव अस्वीकृति की मात्रा के माप के द्वारा सामाजिक स्थिति, ढाँचा एवं विकास के अन्वेषण विवरण एवं मूल्यांकन की प्रणाली है।"[1] होम ने लिखा है, "....एक समूह में व्यक्तियों के बीच आकर्षण एवं विकर्षण के माप के द्वारा सामाजिक स्वरूपों के अन्वेषण एवं संचालन के लिए एक प्रणाली के रूप में प्रयोग की जाती है।"[2] उक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि समाजमिति की प्रणाली के अन्तर्गत एक समूह के सदस्यों के बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों एवं उनमें परस्पर आकर्षणों एवं विकर्षणों की माप की जाती है। इस माप के द्वारा समूह में व्यक्तियों की स्थिति, सामाजिक ढाँचा आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है। जेनिंग्स न समाजमिति की परिभाषा करते हुए लिखा है "यह एक समूह के बीच एक समय में पाये जाने वाले सम्बन्धों के सम्पूर्ण ढाँचे को सरलतम एव रेखीय चित्र के रूप में प्रस्तुत करने का एक माध्यम है।

समाजमिति का प्रयोग सर्वप्रथम जे. एल. मोरेनो (J. L. Moreno) ने एक पब्लिक स्कूल में किया। इसके तुरन्त पश्चात छात्रों के एक स्टेट ट्रेनिंग स्कूल के अध्ययन में इस प्रणाली का प्रयोग किया।

---

1 Ulie Bronfenbrenner, *A Constant Frame of Reference for Sociometric Research*, 'Sociometry' VI (Nov. 1943), pp. 363-72.
2 J G. Home, *Survey of Sociometric Techniques with an Annotated Bibliography*, 'Sociometry' II (Oct. 1939), pp. 76-90.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समाजमिति के तथ्यों की व्याख्या एवं प्रस्तुतीकरण दो प्रणालियों द्वारा किया जा सकता है, वे हैं—समाजचित्र (Sociogram) एवं मैट्रिक्सटेबुल या समाज्ञसारणी (Matrix table or Sociomatix)।

(7) मनोवैज्ञानिक परीक्षाएँ
(Psychological Tests)

मनोविज्ञान में कुछ परीक्षण भी विकसित किये गये हैं। ये परीक्षण दो प्रकार के हैं : कर्मविषयक तथा अन्तरंग।

कर्मविषयक परीक्षण (Objective Tests)—वे परीक्षण हैं जो व्यक्ति की बुद्धि, योग्यताएँ, व्यवहार एवं अन्य तथ्यों की माप करते हैं। वे माप प्रायः होते रहते हैं। ये परीक्षण मनोवैज्ञानिक चिकित्साओं, मार्गदर्शन समितियों, कर्मचारी निर्वाचन, इत्यादि क्षेत्रों में होते रहते हैं।

अन्तरंग परीक्षण (Subjective Tests)—वे परीक्षण हैं जिन्हें आरोपणात्मक (projective) परीक्षण कहते हैं। आरोपणात्मक-परीक्षण व्यक्ति को कुछ कहने के लिए उत्तेजित करते हैं और फिर इस सामग्री से अपनी व्याख्या करते हैं। इन आरोपणात्मक परीक्षणों में प्रमुख निम्न हैं :

(अ) रोर्शा परीक्षण (Rorschach Test)—यह परीक्षण दस कार्डों का बना होता है। प्रत्येक कार्ड पर स्याही का एक धब्बा होता है जिसकी बाह्य रेखा अनियमित होती है। स्याही का धब्बा कोई न कोई चित्र प्रस्तुत करता है। जिसका परीक्षण किया जा रहा होता है उसे एक कार्ड दिखाया जाता है और उसे देखकर उसके मन में जो भाव उठें उनका उल्लेख कराया जाता है। इस प्रकार वह दसों कार्डों को देखकर अपने भाव प्रकट करता है। इससे यह ज्ञात हो जाता है कि आजकल इस व्यक्ति के अन्तरंग में क्या चल रहा है। रोर्शा ने इस परीक्‍.. को तैयार किया था। स्टर्न (Stern) ने इसी परीक्षण को बादलों के चित्रों के द्वारा बनाया है।

थीमेटिक अपरसेप्शन परीक्षण (Thematic Apperception Test)—इस परीक्षण को एच. ए. मरे (H. A. Murray) ने प्रोफेसर मॉरगन (Morgan) की सहायता से बनाकर सन् 1935 में प्रकाशित किया। सूक्ष्म रूप में इसे टी. ए. टी. (T.A.T) के नाम से पुकारते हैं। इस परीक्षण में कुछ चित्र होते हैं, जिन पर लोगों को एक कहानी बनानी होती है। प्रायः इसमें तीस चित्र होते हैं जिनमें से दस पुरुषों के लिए, दस स्त्रियों के लिए और दस स्त्री-पुरुष दोनों के लिए। चित्र एक-एक करके प्रस्तुत किया जाता है। इसके द्वारा हम व्यक्तियों की महत्वाकांक्षाएँ, प्रतिभाओं तथा भावों का पता लगाते हैं।

सायमण्ड का चित्र कहानी परीक्षण (Symond's Picture Story Test)—सायमण्ड ने टी. ए. टी. से कुछ भिन्न परीक्षण बनाया है। यद्यपि उसका आधार वही है। इसमें बीस चित्र होते हैं। यह किशोर बालकों एवं बालिकाओं के व्यक्तित्व के अध्ययन के लिए हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चिल्ड्रेन्स अपरसेप्शन परीक्षण (Children's Apperception Test)—यह परीक्षण सूक्ष्म रूप से C.A.T. भी कहलाता है। यह भी T.A.T. की ही तरह होता है, परन्तु बच्चों के अध्ययन के लिए होता है।

अन्य आरोपणात्मक परीक्षण (Other Projective Tests)—और भी अधिक आरोपणात्मक परीक्षण हैं। खेल मनोवैज्ञानिक नाटक तथा मौखिक आरोपणात्मक परीक्षण (Verbal) इनमें से महत्त्वपूर्ण हैं। V. P. T. (Verbal Projective Tests) के अन्तर्गत शब्द सम्बन्ध (word association) स्वयं विचार सम्पूर्ण करना, कहानी कहना और कहानी सम्पूर्ण करना इत्यादि आते हैं।

(8) वर्ग-श्रेणी माप
(The Rating Scale)

व्यक्ति की अभिवृत्ति को मापने का एक अच्छा ढंग है। यह अन्त:परिवर्तनीय इकाइयों (Interchangeable units) की बनी होती है। सामाजिक मनोविज्ञान में श्रेणियाँ साधारणत: वर्गीकरण (rating) तथा क्रम-विन्यास (ranking) पर आधारित हैं। वर्ग-श्रेणी मुख्य रूप से परिचय और साक्षात्कार पर निर्भर है, इसलिए यह अवलोकन को क्रमागत तथा भावात्मक बनाती है। प्राय: वर्ग-श्रेणी समान इकाइयों की बनी हुई होती है जिनके आधार पर अध्ययन किया जाता है। प्रोफेसर हैण्डरसन प्रिट ने वर्ग-श्रेणी का निम्नलिखित उदाहरण देकर बनी वर्ग-श्रेणी माप को पाँच पदों वाली श्रेणी में बाँटा है, जैसे—

Handerson's Rating Scale

1	2	3	4	5
अति पसन्द	साधारण पसन्द	उदासीन	साधारण नापसन्द	अति नापसन्द

इस वर्ग-श्रेणी में यह माना गया है कि प्रत्येक पद मूल्य की दृष्टि से एक-दूसरे के समान है अर्थात् उदासीन से लेकर साधारण पसन्द अथवा साधारण नापसन्द तक भावना का परिवर्तन, साधारण पसन्द से लेकर अति पसन्द अथवा अति नापसन्द तक भावना के परिवर्तन की मात्रा के समान है।

बोगार्डस महोदय ने वर्ग-श्रेणी माप के द्वारा व्यक्ति की अभिवृत्तियों को मापने पर बहुत से सफल प्रयोग किये हैं। आपने इस प्रकार के अनेक प्रयोग किये हैं जिनके द्वारा भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की सामाजिक दूरी को मापा जा सकता है। जब व्यक्ति अपने आप श्रेणी वर्गीकरण करता है तो उसको स्वयं वर्गीकरण कहते हैं।

(9) समूह स्थितियाँ
(Group Situations)

एक प्रविधि समूह स्थितियों की भी है। किसी भीड़ या श्रोताजनों (audience) की एक समूह स्थिति होती है और उसमें व्यक्ति का अपना एक स्थान होता है। इस प्रविधि के द्वारा यह अध्ययन किया जाता है कि भीड या श्रोताजन की समूह स्थितियाँ व्यक्ति पर क्या प्रभाव डालती हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रश्न

1. सामाजिक मनोविज्ञान में प्रयोगात्मक और गणनात्मक विधियों के प्रयोग और सीमाओं का वर्णन कीजिए।

(Describe the use and limitations of experimental and quantitative methods in social psychology. Agra, M. A. Alternative course in Sociology, 1962.)

2. सामाजिक मनोविज्ञान की विधियों एवं प्रविधियों का वर्णन कीजिए।

(Describe the methods and techniques of social psychology.)

3. संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए : (1) वैयक्तिक-विषय-अध्ययन, (2) समाजमिति, (3) रोर्शा परीक्षण, (4) थीमेटिक अपरसेप्शन परीक्षण; (5) आरोपणात्मक परीक्षण।

(Write short notes on : (i) Case Study, (ii) Sociometry, (iii) Rorschach Test, (iv) Thematic Apperception Test, (v) Projective Tests.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

6

मानव व्यवहार के दैहिक आधार

मनुष्य एक प्राणी है तथा अन्य प्राणियों के समान ही उसका भी एक दैहि आधार है। शरीर मनुष्य का एक आवश्यक अंग है।

मानव-शरीर की व्यवस्थाएँ
(Systems of Human Body)

मानव-शरीर के अंगों को हम नौ प्रमुख व्यवस्थाओं में बाँट सकते हैं जि आधार पर मानव-शरीर के अंग कार्य करते हैं एवं जीवित रहते हैं। ये निम्न हैं:

(1) **अस्थि-पंजरीय व्यवस्था** (Skeletal System)—सर्वप्रथम व्यक्ति अस्थि-पंजर होता है। इस अस्थि-पंजर के ढाँचे में न केवल हड्डियाँ होती हैं ब अन्य जोड़ भी होते हैं। इसमें 206 हड्डियाँ होती हैं। इस अस्थि-पंजरीय व्यव के कारण मनुष्य का ढाँचा स्थायी रहता है।

(2) **मांसपेशीय व्यवस्था** (Muscle System)—दूसरी व्यवस्था मांस का होती है, जिसके कारण शरीर के अंग फैल एवं सिकुड़ सकते हैं। मनुष्य की 6 से अधिक मांसपेशियाँ होती हैं। जब कभी भी शरीर हिलता है मांसपेशियाँ कार्य करती हैं।

(3) **स्नायु-मण्डल** (Nervous System)—मांसपेशियाँ इत्तफाक से ही हिलती हैं। वे तभी हिलती हैं जबकि उन्हें मस्तिष्क से ऐसा आदेश प्राप्त होता मनुष्य का शरीर एक रेडियो-टेलीविजन-टेलीफोन के जाल की तरह की एक व्य रखता है, जिसे स्नायु-मण्डल (nervous system) कहते हैं। इस पर हम चलकर विशेष रूप से प्रकाश डालेंगे।

(4) **पाचन-क्रिया व्यवस्था** (Digestive System)—पाचन-क्रिया व्य शरीर के उन अंगों के समूह का नाम है जो भोजन को पचाते हैं और उसमें से (energy) पैदा करते हैं। शरीर जब हिलता-डुलता है तो शक्ति का उपयोग है। यह शक्ति हमें भोजन से प्राप्त होती है।

(5) **सांस लेने सम्बन्धी व्यवस्था** (Respiratory System)—भो शक्ति प्राप्त करने के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है। शरीर में एक व्यवस्था होती है जिसके अन्तर्गत नाक, गला, फेफड़े इत्यादि आते हैं जिनके शरीर में हवा आती है और उसमें से ऑक्सीजन प्राप्त किया जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(6) **परिचालन व्यवस्था** (Circulatory System)—प्राप्त की गयी ऑक्सीजन को शरीर में परिचालन करने की आवश्यकता रहती है। रक्त इस कार्य को करता है। हृदय इसे खींचता है और रक्त धमनियों में परिचालन करता है।

(7) **लिम्फेटिक व्यवस्था** (Lymphatic System)—शरीर में एक स्वेद् होता है जिसका कोई रंग नहीं होता। वह कोषों को नहलाता है और भोजन प्रदान करता है। स्वेद् ग्रन्थियाँ स्वेद् स्राव को शुद्ध करती हैं।

(8) **अन्तरासर्गी व्यवस्था** (Endocrine System)—अन्तरासर्गी व्यवस्था के कारण अन्तरासर्गी ग्रन्थियों से हार्मोन नामक पदार्थ उत्पन्न होते हैं। ये हार्मोन विभिन्न व्यवस्थाओं को चालित रखते हैं और क्षण-क्षण पर शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति करते रहते हैं।

(9) **प्रजनन व्यवस्था** (Reproductive System)—शरीर के अंग काय करते रहते हैं और इसके फलस्वरूप कुछ कोष नष्ट हो जाते हैं। उत्पत्तिशीलन व्यवस्था के कारण उनकी उत्पत्ति होती रहती है। शरीर स्वयं अपने को एक नये प्राणी के रूप में उत्पन्न कर लेता है। यह सृष्टि इसी व्यवस्था के कारण चली आ रही है।

इस प्रकार हमने देखा कि शरीर कुछ निश्चित व्यवस्थाओं पर आधारित है और इन्हीं व्यवस्थाओं के कारण रहता और कार्य करता है। शरीर की इन व्यवस्थाओं पर मनुष्य के अधिकांश व्यवहार आधारित हैं। इसलिए मनुष्य के व्यवहार को समझने के लिए शरीर की इन व्यवस्थाओं को समझना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। मानव व्यवहार स्नायु-मण्डल (nervous system) पर प्रमुख रूप से आधारित है। इसलिए हम स्नायुमण्डल का विशेषरूप से अध्ययन करेंगे।

स्नायु-मण्डल
(Nervous System)

मन से नाड़ी मण्डल का घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह भी स्पष्ट रूप से सिद्ध हो चुका है कि स्नायु-मण्डल के अन्य भागों की अपेक्षा मस्तिष्क का सम्बन्ध मानसिक प्रक्रियाओं से अधिक है।

स्नायु-मण्डल स्नायुओं का एक समूह है जिसमें असख्या स्नायु एक जाल की तरह फैले हुए हैं। यह जाल अत्यन्त जटिल है। स्नायु-मण्डल टेलीफोन के स्विचबोर्ड के समान है। इसके द्वारा संदेश मन के पास पहुँचते हैं और वह उपयुक्त शरीर के अंग को कार्य करने का आदेश देता है।

स्नायु-मण्डल के विभिन्न भाग

स्नायु मण्डल को दो आधारों पर विभाजित किया जाता है: नाड़ी कोषों की स्थिति और नाड़ी-मण्डल की कार्यवाही के आधार पर। स्नायु कोषों की स्थिति या स्थान के अनुसार यह जानने का प्रयत्न किया जाता है कि कौन-से नाडी कोष मस्तिष्क और सुषुम्ना के अन्तर्गत पाये जाते हैं और कौन-से इनके बाहर। इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधार पर स्नायु-मण्डल के दो भाग किये जाते हैं। प्रथम, केन्द्रीय स्नायु-मण्डल तथा द्वितीय सीमान्त स्नायु-मण्डल।

स्नायु-मण्डल का विभाजन इस आधार पर होता है कि कौन-सा स्नायु कोष शरीर के किस हिस्से को नियन्त्रित करता है। स्नायु-मण्डल का जो भाग शरीर के बाह्य भाग को नियन्त्रित करता है उसे दैहिक स्नायु-मण्डल (sometic nervous system) कहते हैं और जो आन्तरिक भागों को नियन्त्रित करता है उसे स्वतः-चालित स्नायु-मण्डल (autonomic nervous system) कहते हैं।

दैहिक नाड़ी-मण्डल के दो प्रमुख भाग हैं: मस्तिष्क और सुषुम्ना (spinal cord)।

मस्तिष्क को फिर तीन भागों में बाँटा गया है: प्रथम भाग को अग्र मस्तिष्क (fore brain), द्वितीय भाग को मध्य मस्तिष्क (mid brain) और तीसरे को पृष्ठ मस्तिष्क (hind brain) कहते हैं। अग्र मस्तिष्क के दो भाग होते हैं: प्रथम, अन्तर्मस्तिष्क (diencephalon) तथा मस्तिष्क खण्ड (telencephalon)। अन्त-र्मस्तिष्क के भी चार भाग होते हैं: प्रथम, थैलेमस (thalamus), दूसरा, हाइपो-थैलेमस (hypothalamus), तीसरा, दृष्टि नाड़ी पथ (optic nerve tract) तथा चौथा, रेन्ना (Renna)।

मस्तिष्क खण्ड (Telencephalon) के तीन भाग होते हैं: प्रथम, घ्राण पिण्ड (olfactory bulb), दूसरा, मूल भूत नाड़ी पुंज तथा रेखांकित पिण्ड (basal ganglion and corpus striatum) और तीसरा, वृहन्मस्तिष्क (cerebrum)। वृहन्मस्तिष्क (cerebrum) के कार्यों के अनुसार चार खण्ड हैं: सम्मुख खण्ड (frontal lobe), मध्य खण्ड (parietal lobe), पृष्ठ खण्ड (occipital lobe) तथा शख खण्ड (temporal lobe)। पृष्ठ मस्तिष्क (hind brain) के दो भाग होते हैं: सुषुम्ना शीर्ष (medulla) तथा अनुमस्तिष्क (metcephalon)। अनु-मस्तिष्क (metcephalon) के भी दो भाग होते हैं: प्रथम सेतु (pons) तथा द्वितीय लघु मस्तिष्क (cerebellum)।

स्नायु-मण्डल के इस विभाजन को पृष्ठ 91 की टेबल में देखिए।

स्वतःचालित स्नायु-मण्डल (Autonomic Nervous System)

स्वतःचालित स्नायु-मण्डल केवल क्रियात्मक (motor) प्रकार की क्रियाएं ही करता है, इसलिए स्वतःचालित स्नायु-मण्डल को क्रिया-मण्डल (motor system) भी कहते हैं। यह हमारी अनैच्छिक क्रियाओं (non-voluntary activities) को नियन्त्रित करता है। अनैच्छिक क्रियाओं से हमारा तात्पर्य उन क्रियाओं से होता है जो शरीर में अपने आप होती रहती हैं, जैसे—हृदय-गति, रक्त-प्रवाह, रक्तचाप, नाड़ी-गति, अंगों की कार्य-गति, आँखों की पलकों का गिरना और उठना तथा अन्य सहज क्रियाएँ (reflex actions)। स्नायु-मण्डल को उत्तेजित करने के लिए किसी बाह्य उत्तेजना (external stimulus) की आवश्यकता नहीं पड़ती।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

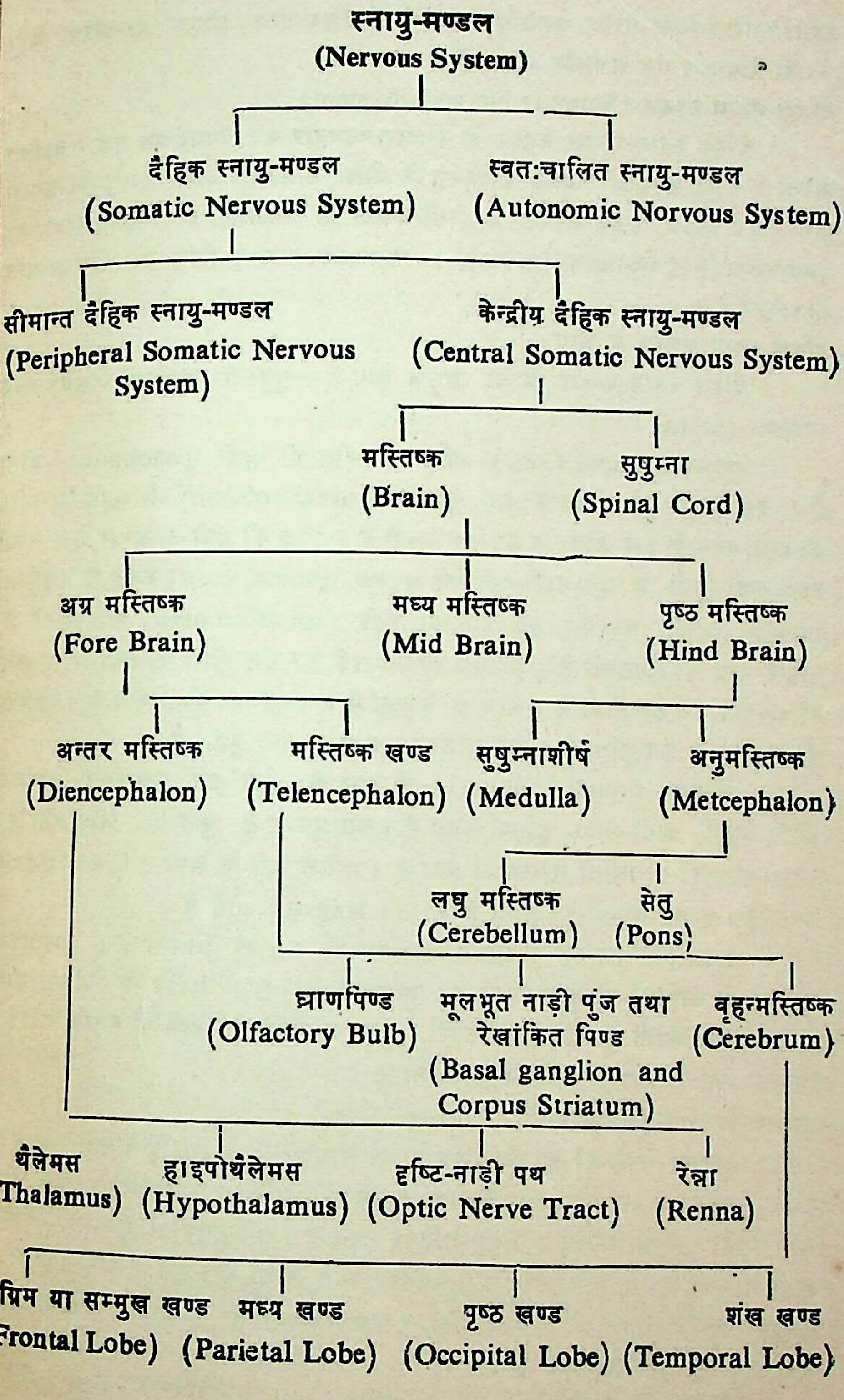

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वत:-चालित नाड़ी मण्डल आन्तरिक अंगों से ही क्रियाशील होकर आन्तरिक अंगों का ही नियन्त्रण एवं संचालन करता है।

दैहिक स्नायु-मण्डल (Somatic Nervous System)

दैहिक स्नायु-मण्डल मनुष्य के इच्छित व्यवहार को नियन्त्रित एवं संचालित करता है। यह जीव और वाह्य पर्यावरण के बीच सामंजस्य बनाये रखने का प्रयास करता है। दैहिक स्नायु-मण्डल में दोनों प्रकार की क्रियाएँ होती हैं—ज्ञानात्मक (sensory) और क्रियात्मक (motor)। मानव-व्यवहार के लिए यह भाग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

दैहिक स्नायु-मण्डल के भाग

दैहिक स्नायु-मण्डल के दो प्रमुख भाग हैं—सुषुम्ना (spinal cord) और मस्तिष्क (brain)।

सुषुम्ना (Spinal Cord)—पीठ में रीढ़ की हड्डी (backbone) होती है। इस हड्डी को मेरुदण्ड या पृष्ठवंश (spinal column) भी कहते हैं। रीढ़ की हड्डी गर्दन से शुरू होकर कमर तक जाती है। रीढ़ की हड्डी के अन्दर एक लम्बी नाड़ी-नली होती है, इस नाड़ी-नली को सुषुम्ना (spinal cord) कहते हैं। सुषुम्ना (spinal cord), पृष्ठवंश या रीढ़ की हड्डी (spinal column) के ऊपरी तिहाई भाग को अपनाती है। पृष्ठवंश की लम्बाई 27 इंच होती है, इसलिए सुषुम्ना की लम्बाई 18 इंच होती है। नीचे के 9 इंचों में मूल-सूत्रिका होती है। मूल सूत्रिका की लम्बाई 9 इंच होती है। मूल सूत्रिका एक सूक्ष्म तन्तु होता है।

पृष्ठवंश (Spinal Column)—में ऊपर से नीचे तक एक-दूसरे पर रखी और मिली छोटी-छोटी हड्डियाँ होती हैं। इस प्रकार के कुल 31 जोड़ होते हैं। जोड़ों को बड़ी सावधानी से लगाया गया है। प्रत्येक हड्डी के खण्ड को 'vertebra' कहते हैं। इनकी संख्या 33 होती है जो 31 जगह जुड़े होते हैं।

सुषुम्ना से पृष्ठवंश के प्रत्येक जोड़ पर दो नाड़ियाँ मिलती हैं। इस प्रकार सुषुम्ना की नाड़ियों की कुल संख्या 31 युग्म (Pairs) है। शरीर के विभिन्न भागों से ये नाड़ियाँ आती हैं और इस प्रकार सुषुम्ना का इन नाडियों के सहारे शरीर के विभिन्न अंगों से सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

सुषुम्ना के कार्य (Functions of Spinal Cord)

सुषुम्ना के कार्यों को दो प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है। पहला कार्य है कि नाड़ियों से जो प्रवाह प्राप्त होता है उसे यह मस्तिष्क में भेजती है। इन्हें लाने वाली नाड़ियों को ज्ञान-वाही नाड़ियाँ कहते हैं। मस्तिष्क या सुषुम्ना से क्रिया-वाही नाड़ियाँ प्रभाव को शरीर के अवयवों तक ले जाती हैं। इस प्रकार सुषुम्ना नाड़ियों की सहायता से मस्तिष्क तक सन्देश पहुँचाती हैं और मस्तिष्क के आदेश शरीर के अंगों तक पहुँचाती हैं।

सुषुम्ना का दूसरा कार्य समन्वय (integration) स्थापित करना है। ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नाड़ियाँ (association nerves) जो सुषुम्ना के अन्तर्गत पायी जाती हैं, समन्वय स्थापित करने का कार्य करती है। हम आग के पास हाथ ले जाते हैं, हाथ को गर्मी लगती है और हाथ पीछे खिच आता है। हाथ में गर्मी लगने और हाथ खिचने की क्रियाओं में समय का कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता। इसका कारण यह है कि हाथ में गर्मी लगने का ज्ञान किसी नाड़ी के द्वारा मस्तिष्क तक नहीं जाता और न मस्तिष्क से ही कोई आदेश आता है। होता यह है कि ज्ञान-वाही नाड़ी इस ज्ञान को सुषुम्ना के किसी केन्द्र तक ले जाती है और वहीं से क्रिया-वाही नाड़ी उस अग तक आदेश पहुँचा देती है। यह कार्य सुषुम्ना अपने आप करती रहती है। इस प्रकार की क्रियाओं को सहज-क्रिया (reflex action) कहते हैं, इन पर हम अगले अध्याय में विशेप रूप से प्रकाश डालेंगे।

मस्तिष्क (Brain)

मस्तिष्क सुषुम्ना के ऊपर और खोपड़ी से नीचे स्थित है। मस्तिष्क स्नायु-मण्डल का मुख्य केन्द्र है। यहाँ पर तरह-तरह की नाड़ियाँ भरी हुई हैं। मस्तिष्क में निस्ल शरीर पाया जाता है। निस्ल शरीर के कारण मस्तिष्क में भूरे रंग का एक पदार्थ पाया जाता है। यह भूरे रंग का पदार्थ बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस पदार्थ के कारण ही अधिकांश मानसिक क्रियाएँ होती हैं। मस्तिष्क के ही कारण मनुष्य बुद्धि-जीवी है। हमें स्पष्ट हो जाना चाहिए कि मस्तिष्क कितना महत्त्वपूर्ण अंग है।

मस्तिष्क विभाजन (Divisons of Brain)

मस्तिष्क को तीन प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है। वे हैं—अग्र-मस्तिष्क, मध्य मस्तिष्क तथा पृष्ठ मस्तिष्क।

मस्तिष्क (Brain)

- अग्र मस्तिष्क (Fore Brain)
- मध्य मस्तिष्क (Mid Brain)
- पृष्ठ मस्तिष्क (Hind Brain)

पृष्ठ मस्तिष्क (Hind Brain)—पृष्ठ मस्तिष्क सुषुम्ना के ठीक ऊपर मस्तिष्क का सबसे नीचे का भाग है। पृष्ठ मस्तिष्क के दो भाग हैं—सुषुम्ना शीर्ष (Medulla) तथा अनुमस्तिष्क (Metcephalon)। अनुमस्तिष्क (Metcephalon) के भी दो भाग हैं : लघु मस्तिष्क (Cerebellum) और सेतु (Pons)।

पृष्ठ मस्तिष्क (Hind Brain)

- सुषुम्नाशीर्ष (Medulla)
- अनुमस्तिष्क (Metcephalon)
  - लघु मस्तिष्क (Cerebellum)
  - सेतु (Pons)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुषुम्नाशीर्ष (Medulla)—सुषुम्नाशीर्ष की लम्बाई एक इंच होती है और इसका आकार सिरकटे मुण्ड की तरह होता है। यह सुषुम्ना के ऊपर बढ़ा हुआ भाग होता है। सुषुम्नाशीर्ष सुषुम्ना को मस्तिष्क के उच्च केन्द्रों से मिलता है।

सुषुम्नाशीर्ष के कार्य (Functions of Medulla)

सुषुम्नाशीर्ष के तीन प्रमुख कार्य हैं। इसका पहला कार्य है सम्बन्ध का कार्य। सुषुम्ना और मस्तिष्क के बीच प्रवाहित होने वाली नाड़ियाँ सुषुम्नाशीर्ष में से होकर जाती हैं। इस प्रकार यह नाड़ियों और मस्तिष्क के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। इसका दूसरा कार्य है मस्तिष्कीय-नाड़ियों को मार्ग-प्रदान करना। तीसरे इस क्षेत्र में स्वचालित नाड़ी-कोषों की संख्या बहुत पायी जाती है।

सुषुम्नाशीर्ष को मस्तिष्क का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं सक्रिय भाग (Vital part of the brain) कहते हैं। सुषुम्ना शीर्ष के द्वारा हृदय-गति, रक्त-चाप, सांस-गति इत्यादि नियन्त्रित होते हैं। सुषुम्ना शीर्ष पाचन-क्रिया का नियन्त्रण भी करता हैं। सुषुम्नाशीर्ष उत्तेजना को मस्तिष्क तक पहुँचाता है।

अनुमस्तिष्क (Metcephalon)—अनुमस्तिष्क के दो प्रमुख भाग हैं: पहला सेतु (pons) और दूसरा लघु मस्तिष्क (Cerebellum)।

सेतु (Pons)—सेतु सुषुम्नाशीर्ष के ठीक ऊपर होता है। इसकी आकृति हाथी के कपाल की तरह होती है।

सेतु का कार्य मुँह और चेहरे का संवेदना एवं गतियों पर नियन्त्रण करना है।

लघु मस्तिष्क (Cerebellum)—लघु मस्तिष्क, वृहन्मस्तिक (Cerebrum) के पृष्ठ खण्ड (Occipital lobe) के ठीक नीचे स्थित है। बहुत-सी नाड़ियों के द्वारा लघु मस्तिष्क का सम्बन्ध सुषुम्ना और वृहन्मस्तिष्क से है।

लघु मस्तिष्क का प्रमुख कार्य व्यक्ति की नाड़ी-क्रियाओं को नियन्त्रित एवं संचालित करना है। केन्द्रों के प्रवाह लघु मस्तिष्क से होकर मांसपेशियों, जोड़ों और ग्रन्थियों में जाते हैं। लघु-मस्तिष्क शारीरिक गतियों को नियन्त्रित एवं सन्तुलित करता है। लघु मस्तिष्क के ही कारण हम शरीर की अनेक गतियाँ कर पाते हैं, जैसे-उठना, बैठना, खड़े होना, चलना, करवट लेना इत्यादि। इसके सहारे अनेक अवचेतन कार्य होते हैं। लघु मस्तिष्क मनुष्य के शरीर का सन्तुलन रखता है। यदि लघु मस्तिष्क को क्षति पहुँच जाये तो व्यक्ति सरलता से चल-फिर भी नहीं सकता। लघु मस्तिष्क के अभाव में शरीर का सन्तुलन समाप्त हो जाता है। इस प्रकार साधारण क्रियाओं के लिए लघु मस्तिष्क का अत्यधिक महत्त्व है।

मध्य मस्तिष्क (Mid Brain or Mesencephalon)—अग्र मस्तिष्क तथा पृष्ठ मस्तिष्क के बीच मध्य मस्तिष्क सम्बन्ध स्थापित करता है। मध्य मस्तिष्क से होकर ज्ञान-वाही नाड़ियाँ ऊपर की ओर जाती हैं और क्रिया-वाही नाड़ियाँ नीचे की ओर जाती हैं। मध्य मस्तिष्क ज्ञानात्मक-क्रियाओं को नियन्त्रित करता है। मनुष्य की अपेक्षा छोटे जीवों में मध्य मस्तिष्क का महत्त्व अधिक होता है; क्योंकि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

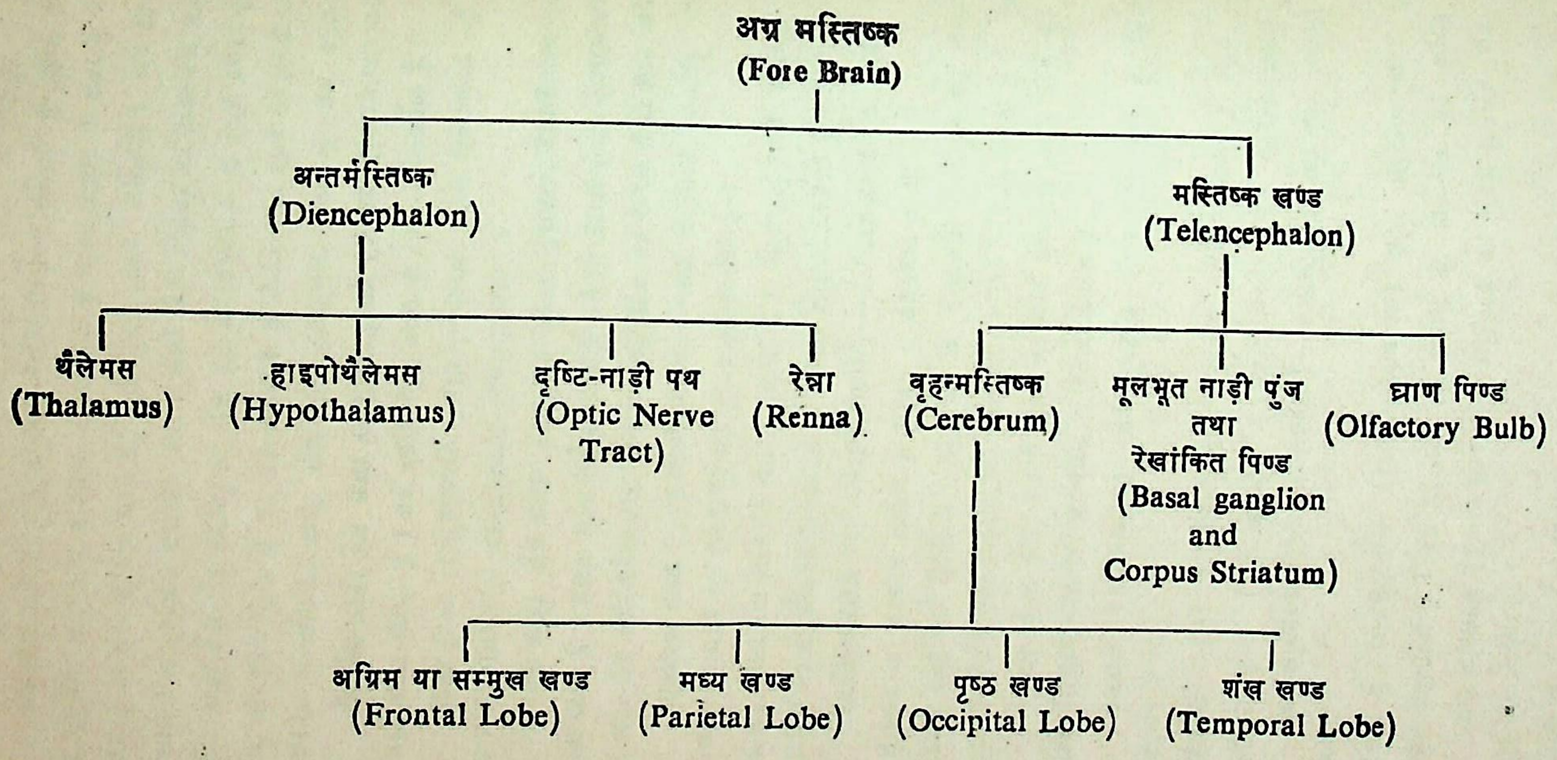

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाग दृष्टि और ध्वनि संवेदनाओं का भी नियन्त्रण करता है। मनुष्य में यह कार्य वृहन्मस्तिष्क करता है।

अग्र मस्तिष्क (Fore Brain)—मस्तिष्क का सबसे विस्तृत एवं महत्त्वपूर्ण भाग अग्र मस्तिष्क है। अग्र मस्तिष्क को कार्यों के अनुसार दो भागों में बाँटा जा सकता है: अन्तर्मस्तिष्क (Diencephalon) और मस्तिष्क-खण्ड (Telencephalon)।

अन्तर्मस्तिष्क (Diencephalon)—अन्तर्मस्तिष्क को चार भागों में बाँटा जा सकता है: (1) थैलेमस (Thalamus), (2) हाइपोथैलेमस (Hypothalamus), (3) दृष्टि-नाड़ी-पथ (Optic nerve tract) और (4) रेटिना (Renna)।

थैलेमस (Thalamus)—वृहन्मस्तिष्क (Cerebrum) के नीचे और लघु मस्तिष्क (Cerebellum) के बगल में इसका स्थान है।

थैलेमस में से नाड़ी-प्रवाह ऊपर की ओर जाता है और नीचे की ओर आता है। प्रायः यहीं से इन प्रवाहों को प्रसारित (relay) किया जाता है। उचित दिशा का निर्णय यहीं पर होता है। थैलेमस को टेलीफोन एक्सचेंज की उपमा दी जाती है। थैलेमस का सम्बन्ध मनुष्य के संवेगों के प्रकाशन से भी है।

हाइपोथैलेमस (Hypothalamus)—हाइपोथैलेमस के ठीक नीचे पाया जाता है। स्वचालित नाड़ी-मण्डल से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। हाइपोथैलेमस हमारे शरीर का आन्तरिक सन्तुलन बनाये रखता है। हाइपोथैलेमस हमारी नींद, भूख तथा अन्य ग्रन्थियों की क्रियाओं को नियन्त्रित करता है।

मस्तिष्क खण्ड (Telencephalon)—अग्र मस्तिष्क सम्पूर्ण मस्तिष्क का सबसे बड़ा एवं महत्त्वपूर्ण भाग है। अग्र-मस्तिष्क का सबसे बड़ा और महत्त्वपूर्ण भाग मस्तिष्क खण्ड है। इसके तीन प्रमुख भाग हैं: (1) घ्राण पिण्ड (olfactory bulb) (2) मूलभूत नाड़ी पुंज तथा रेखांकित पिण्ड (basal ganglion and corpus striatum) तथा (3) वृहन्मस्तिष्क (cerebrum)।

घ्राण पिण्ड (Olfactory Bulb)—घ्राण पिण्ड शंख-खण्ड के ऊपर भीतर की ओर पाया जाता है। यह स्वाद और गन्ध के लिए महत्त्वपूर्ण है।

मूलभूत नाड़ी पुंज तथा रेखांकित पिण्ड (Basal Ganglion and Corpus Striatum)—मूलभूत नाडी पुंज और रेखांकित पिण्ड से उन कोष-शरीरों के तन्तुओं का बोध होता हैं जो वृहन्मस्तिष्क के ऊपर और नीचे की तरफ आते-जाते हैं। मूलभूत नाड़ी पुंज भूरे पदार्थों का एक ढेर वृहन्मस्तिष्क के नीचे रहता है। यह नाड़ी पुंज व्यक्ति के विभिन्न आकृति, आसन तथा कुछ गतियों का नियन्त्रण करता है। इस मूलभूत नाड़ी पुंज के एक भाग को रेखांकित पिण्ड कहते हैं। यह भाग थैलेमस के ऊपर और वृहन्मस्तिष्क के बीच जटिल रूप में बहुत कोषों से भरा है।

वृहन्मस्तिष्क (Cerebrum)—वृहन्मस्तिष्क मनुष्य के लिए प्रकृति की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देन है। वृहन्मस्तिष्क ही मनुष्य की उच्च मानसिक क्रियाओं को नियन्त्रित एवं संचालित करता है। इसमें शरीर की सभी चेतन क्रियाओं के केन्द्र पाये जाते हैं। निम्न कोटि के जीवों में वृहन्मस्तिष्क नहीं पाया जाता।

वृहन्मस्तिष्क को चार खण्डों में विभाजित किया जा सकता है। ये खण्ड हैं: (1) सम्मुख खण्ड (Frontal lobe), (2) मध्य खण्ड (Parietal lobe), (3) पृष्ठ खण्ड (Occipital lobe) तथा (4) शंख-खण्ड (Temporal lobe)।

सम्मुख खण्ड (Frontal Lobe)—सम्मुख खण्ड वृहन्मस्तिष्क का अग्रिम खण्ड है और सब खण्डों से बड़ा है। इसी क्षेत्र द्वारा हमारी ऐच्छिक (voluntary) क्रियाएँ संचालित होती हैं। मनुष्य के विचार, शिक्षण, सोचना आदि क्रियाएँ इसी खण्ड द्वारा संचालित एवं नियन्त्रित होती हैं। तर्क एवं चिन्तन का निर्देशन भी यही खण्ड करता है।

मध्य खण्ड (Parietal Lobe)—मध्य खण्ड के कारण हमें स्पर्श, गर्मी तथा ताप की संवेदना होती है। मध्य खण्ड ज्ञान-क्षेत्रों में से एक है।

पृष्ठ खण्ड (Occipital Lobe)—पृष्ठ खण्ड मस्तिष्क के सबसे पीछे रहता है। इस खण्ड से हमें संवेदना होती है। दृष्टि-नाड़ी इस क्षेत्र में आकर समाप्त होती है।

शंख खण्ड (Temporal-Lobe)—शंख खण्ड से हमें सुनने की संवेदना होती है। हम कान से जो सुनते हैं वह अपना स्थान इसी खण्ड में ग्रहण करता है।

प्रश्न

1. दैहिक केन्द्रीय स्नायु-मण्डल का विवरण दीजिए।
   (Describe the somatic central nervous system.)
2. मस्तिष्क के विभिन्न भागों का वर्णन कीजिए।
   (Describe the various parts of the brain.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

7

ट्रॉपिज्म और सहज क्रिया
(Tropism and Reflex Action)

मानव-व्यवहार अत्यन्त जटिल है; फिर भी कुछ व्यावहारिक प्रतिमान स्प दिखायी पड़ते हैं। कुछ क्रियाएँ अनेक प्राणियों में बिना अधिक हेर-फेर के होती दिखायी पड़ती हैं। इस दृष्टि से पशु मनोविज्ञान ने विशेष प्रकाश डाला है। मन् भी एक सामाजिक पशु है, इसलिए अन्य पशुओं की तरह उसका भी व्यवहार है। तुलनात्मक मनोविज्ञान ने पशु-व्यवहार एवं मनुष्य-व्यवहार में सम्बन्ध स्था करने का प्रयत्न किया है।

गिलहरी (squirrel) को जब अखरोट मिलता है तो सदैव कुछ को विशेष ढंग से तोड़ती है और कुछ को जमीन में गाड़ देती है। गिलहरी हमेशा प्रकार का व्यवहार करती है। बार-बार अखरोट देने पर भी उसका व्यवहार रहता है। कुछ को खा लेती है और कुछ को जमीन में गाड़ देती है। हमारी की पलकों को ही लीजिए। जब-जब कोई वस्तु आँख की ओर बढ़ती है तो जाती हैं। पलकों के इस प्रकार झुकने को पलक झपकना (blinking of eyes) कहते हैं। पलकें हमेशा उसी प्रकार झुकती हैं। जब दीपक जलता पतंगे दीपक की ओर बढ़ते चले जाते हैं और दीपक के चारों ओर चक्कर रहते हैं। यह बार-बार होता है और इन क्रियाओं में कोई हेर-फेर नहीं होता। ये न्तर क्रियाएँ (consecutive actions) बिना अधिक हेर-फेर के होती रहती हैं।

प्रतिमान प्रतिक्रियाओं का अर्थ
(Concept of Pattern Reactions)

जो क्रियाएँ बिना अधिक हेर-फेर के निरन्तर रूप से होती हैं उन्हें प्रति प्रतिक्रियाएँ कहते हैं। थाउलस ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है "इन्हीं या न्यून समान क्रियाओं का प्रचलित नाम प्रतिमान प्रतिक्रियाएँ है।"[1]

प्रतिमान प्रतिक्रियाएँ कुछ तो जन्मजात होती हैं और कुछ सीखी जाती

---

1 "A general name for these more or less uniform actions is tern reactions." R. H. Thouless, *General and Social Psych* Third edition (1951), p. 18.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थम प्रकार की प्रतिमान क्रियाएँ वे हैं जिनका आधार जन्मजात होता है। इस कार की प्रतिमान प्रतिक्रियाओं को निम्न तीन भागों में बाँटा जा सकता है

(1) ट्रॉपिज्म (Tropism)
(2) सहज क्रियाएँ (Reflex actions)
(3) मूलप्रवृत्तियाँ (Instincts)

दूसरे प्रकार की प्रतिमान प्रतिक्रियाएँ वे हैं जो मनुष्य के बार-बार प्रयत्न करने से एवं पर्यावरण के प्रभाव से उत्पन्न होती हैं। इनके अन्तर्गत आदतें, इत्यादि आती हैं। जब हम दाढ़ी बनाते हैं तो हाथ अपने आप चलता रहता है। यह आदत के कारण होता है।

ट्रॉपिज्म
(Tropism)

ट्रॉपिज्म का अर्थ (Concept of Tropism)—ट्रॉपिज्म की परिभाषा थाउलस ने निम्न शब्दों में की है : "ट्रॉपिज्म वह अति सरल प्रकार की योग्य एवं अनुकूल (या लाभप्रद) प्रतिमान प्रतिक्रिया है, जिससे हम इस तथ्य से स्पष्ट रूप से पहचानते हैं कि प्राणी पर भौतिक या रासायनिक उत्तेजना का सीधा प्रभाव होता है।"[1]

इस प्रकार की प्रतिक्रिया उन पौधों में पायी जाती है जिनकी जड़ें नीचे की ओर पृथ्वी के आकर्षण केन्द्र (gravitational field) की दिशा में बढ़ती हैं। इसे भ्यावर्तना (positive geotropism) कहते हैं। इसी तरह कुछ पौधों का तना प्रकाश की ओर उगता है इसे सूर्यावर्तना (positive heliotropism) कहते हैं। उदाहरण के लिए, कमल के फूलों को लीजिए। वे सूर्य के निकलने पर खिलते हैं तथा सूर्य के अस्त होने के साथ-साथ मुरझा जाते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि साधारण पशु प्राणियों (कीड़े-मकोड़े) की गति भी ट्रॉपिज्म है। एक कोष्ठ वाले (Unicellular organism), जैसे—प्रजीव सुतार (protozoon Euglena) प्रकाश की ओर तैरते हैं और मांसभक्षी का डिम्भ (larve of the blow fly) प्रकाश से अन्धकार की तरफ जाते हैं। जो अन्धकार की ओर जाते हैं उन्हें अप्रकाशवर्तित (negatively phototropic) कहते हैं और जो प्रकाश की ओर जाते हैं उन्हें प्रकाशवर्तित (positively phototropic) कहते हैं।

ट्रॉपिज्म (tropism) के सिद्धान्त के अनुसार इन अन्तरों को यह मानकर समझाने की कोशिश की गयी है कि प्राणी के एक ओर प्रकाश पड़ने से उसकी, (प्रकाश पड़ने वाले भाग की) गतिशील इन्द्रियाँ (locomotor organs) दूसरे भाग

---

[1] "The tropism is the simplest form of adaptive (or useful) pattern reaction, distinguished by the fact it is rigidly determined by the direct action on the organism of physical or chemical stimuli." R. H. Thouless.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की गतिशील इन्द्रियों से कम सिकुड़ती हैं। इसके कारण प्राणी (organism) प्रकाश की ओर मुड़ जाता है और जब वह प्रकाश की ओर हो जाता है तो उसके दोनों ओर के भाग पर बराबर प्रकाश पड़ता है। इसी कारण वह प्रकाश की ओर चला जाता है।

ट्रॉपिज्म के सिद्धान्तों की आलोचना

ट्रॉपिज्म के सिद्धान्त के द्वारा इस पशु व्यवहार को इतनी सरलता से समझाया गया है; परन्तु यह इतना सरल नहीं है। प्रारम्भ में अवलोकनकर्ताओं को इस व्यवहार का सीधा-सादा नुस्खा इसलिए ठीक लगा होगा, क्योंकि उन्होंने व्यवहार की अन्तिम क्रिया पर ही ध्यान दिया और हर क्रम पर विचार नहीं किया। जेनिंग्स (Jennings) ने इस प्रकार के विभिन्न परीक्षण किये और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इतने सरल व्यवहार को भी इस सिद्धान्त द्वारा नहीं समझाया जा सकता। एकदम मुड़कर जाना जैसा कि ट्रॉपिज्म के सिद्धान्त द्वारा मान लिया गया है, परीक्षण में नहीं पाया गया। इस व्यवहार की प्रतिक्रिया एक निश्चित प्रकार की है जिसे जेनिंग्स ने अन्वीक्षा-विभ्रम-व्यवहार (trial and error behaviour) कहा है।

सहज क्रिया
(Reflex Action)

प्रतिभान प्रतिक्रियाओं का एक स्वरूप सहज क्रिया है। सहज क्रिया के उदाहरण हैं। पलक झपकाना, छींक आना, आग से पीछे हटना, आँख के तारे का कम प्रकाश में फैल जाना और अधिक प्रकाश में बन्द हो जाना इत्यादि। प्रक्रियाएँ एक निश्चित प्रकार की सेवा करती हैं। जब आँखों की ओर कोई आती है तो पलकें झुक जाती हैं और आँखों को ढक लेती हैं। इस प्रकार की आँखों की रक्षा करती है। नाक की आन्तरिक झिल्ली (inner membrane) में जब खुजलाहट होती है तो छींक आती है और खुजलाहट समाप्त हो जाती है। एक प्रकार के सुख का अनुभव होता है। इसी प्रकार जब प्रकाश अधिक होता है आँख के तारे का व्यास इस प्रकार कम हो जाता है कि पुतली (retina) पर हानिकारक प्रभाव न पड़े। ये क्रियाएँ एक निश्चित प्रकार की सेवा करती हैं। से कुछ प्रतिक्रियाएँ चेतन अवस्था में होती हैं और कुछ अचेतन अवस्था में जाती हैं।

पिछले अध्याय में सुषुम्ना का विवरण देते हुए बताया गया कि सुषुम्ना का एक कार्य शरीर में समन्वय स्थापित करना भी है। साहचर्य नाड़ियाँ जो के अन्तर्गत पायी जाती हैं, समन्वय स्थापित करने का कार्य करती हैं। हम पास हाथ ले जाते हैं, हाथ को गर्मी लगती है और हाथ पीछे खिंच आता है में गर्मी लगने और हाथ पीछे खिचने की क्रियाओं में समय का कोई विशेष नहीं पड़ता। इसका कारण यह है कि हाथ मे गर्मी लगने का ज्ञान किसी नाड़ी मस्तिष्क तक नहीं जाता और न मस्तिष्क से ही कोई आदेश आता है। हाथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि ज्ञानवाही-नाड़ी इस ज्ञान को सुषुम्ना के किसी केन्द्र तक ले जाती है और वहीं से क्रिया-वाही नाड़ी उस अंग तक आदेश पहुंचा देती है। यह कार्य सुषुम्ना अपने आप करती रहती है। इस प्रकार की क्रियाओं को सहज क्रिया (reflex action) कहते हैं।

सहज क्रिया की कार्य प्रणाली (Working of the Reflex Action)

सहज क्रिया को तीन ढाँचों (structures) की आवश्यकता होती है। एक अवयव वह होता है जो उत्तेजना को प्राप्त करता है; उसे प्राप्तकर्ता (receptor) कहते हैं। एक नाड़ी इस उत्तेजना को उस अवयव तक ले जाती है जो प्रतिक्रिया करता है। इस उत्तेजना ले जाने वाली नाड़ी को प्रवाहक (conductor) कहते हैं। तीसरा वह अवयव या मांसपेशी है जो प्रतिकार करती है; उसे कार्य साधक (effector) कहते हैं। इससे स्पष्ट है कि जो उत्तेजना ग्रहण की गयी, वह सुषुम्ना के किसी भाग तक गयी, परन्तु मस्तिष्क तक नहीं गयी। सुषुम्ना के जिस बिन्दु तक यह उत्तेजना गयी, उसे सहज केन्द्र (reflex centre) कहते हैं। हमने देखा कि एक सहज क्रिया के लिए तीन ढाँचों की आवश्यकता होती है : प्राप्तकर्त्ता (receptor), प्रवाहक (conductor) और कार्य-साधक (effector) जो एक साधारण सहज क्रिया में सक्रिय भाग लेते हैं। इन तीनों को सहज धनु (reflex arc) कहते हैं। इसे निम्न चित्र में देखा जा सकता है। एक उत्तेजना प्राप्त हुई उसे प्राप्तकर्त्ता या ज्ञानवाही नाड़ी ने सुषुम्ना के एक केन्द्र तक पहुँचा दिया। सुषुम्ना के उस केन्द्र से ही क्रियावाही नाड़ी ने मांसपेशी तक कार्य करने का आदेश पहुँचा दिया और क्रिया हो गयी। इस प्रकार सहज-धनु का निर्माण हो गया।

सहज क्रिया का अर्थ (Concept of Reflex Action)

थाउलस की परिभाषा :

"सहज क्रिया वह साधारण स्वाभाविक प्रतिमान प्रतिक्रिया है जिसमें क्रिया के द्वारा कोई भी लाभप्रद कार्य किया जाता है।"[1]

शेरिंगटन की परिभाषा :

"सहज क्रियाएँ वे प्रतिक्रियाएँ हैं जिनमें प्रारम्भिक प्रक्रिया, एक प्रवाहक के माध्यम द्वारा, किसी नाड़ी (या अवयव) को उस प्रक्रिया को समाप्त करने की शक्ति प्रदान करती है, जबकि इस नाड़ी (या अवयव) में स्वयं कार्य को समाप्त करने की शक्ति नहीं है और न प्राकृतिक दशा में ही उसमें प्रक्रिया प्रारम्भ करने की शक्ति है।"[2]

अतः हम कह सकते हैं कि सहज क्रिया :

(1) एक प्रतिमान प्रतिक्रिया है। (प्रतिमान प्रतिक्रिया वह प्रक्रिया है जो बार-बार अभिन्न रूप से प्रथम बार के समान होती है।)

---

1. "The reflex is also a simple innate pattern reaction in which a movement of a serviceable kind is carried out." R. H. Thouless, *General and Social Psychology*, p. 20.
2. C. S. Sherrington, *The Integrative Action of the Nervous System*, London, 1906.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) की प्रकृति जन्मजात (innate disposition) है।
(3) से प्राणी को सदैव लाभ ही होता है।

साधारण सहज क्रिया (Simple Reflex Action)

एक सहज क्रिया जो शेष सहज क्रियाओं से अलग कर ली जाती है, साधारण सहज क्रिया कहलाती है। दूसरे शब्दों में हम यूं कह सकते हैं कि एक उत्तेजना तीनों ढाँचों से होकर रुक जाय तो इसे साधारण सहज क्रिया कहेंगे।

शेरिंगटन का कथन है कि साधारण सहज क्रिया एक काल्पनिक एवं प्रक्रिया है, क्योंकि कोई भी क्रिया एक सहज धनु होकर समाप्त नहीं हो जाती, कई सहज धनु निरन्तर होते रहते हैं।

सहज क्रिया-शृंखला (Chain Reflex)

सहज क्रिया-शृंखला के लगातार होने वाली सहज क्रियाएँ हैं जो पहली क्रिया पूर्ण होकर दूसरी के लिए उत्तेजना बन जाती है और इसी प्रकार अनेक क्रियाएँ एक के बाद दूसरी होती रहती हैं।

उदाहरण के लिए, हम एक मेंढक (Toad—एक प्रकार का मेंढक जो की तरह का होता है और मक्खी खाता है) को लें। एक मक्खी बैठी है। मेंढक आँख में मक्खी का प्रतिबिम्ब पड़ा। मक्खी उत्तेजक (stimuli) है। इस उत्ते को मेंढक की आँख ने प्राप्त किया। इस प्राप्त की हुई उत्तेजना को एक नस जि तक ले जाती है। जिह्वा बाहर निकल पड़ती है। यह एक साधारण सहज हुई। इसके उपरान्त यही क्रिया दूसरी सहज क्रिया के लिए उत्तेजना बन जा और जिह्वा और आगे बढ़ती है, मक्खी को छूती है, पकड़ कर मुँह के अन्द जाती है और अन्त में निगल जाती है। इस प्रक्रिया में कई सहज क्रियाएं इन सहज क्रियाओं को हम सहज क्रिया शृंखला (Chain reflex) कहते हैं।[1]

सहज क्रिया की आलोचना

सहज क्रिया कई बार चेतन अवस्था में होती है और उसका सम्बन्ध मस्ति से होता है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि प्रवाहक (conductor) उत्तेजना को मस्तिष्क के पास पहुँचाता है और उसके बाद मस्तिष्क उसे कार्यसाधक (Effe के पास। परन्तु शरीर की रचना की जितनी सरल व्यवस्था की गयी है, उतनी वास्तव में नहीं है। सहज क्रिया का सिद्धान्त शरीर की मशीन को अति सरल कर चला है; परन्तु नवीन शरीरशास्त्रियों ने शरीर की मशीन के ऊपर जो प्र डाला है वह इस सरल सिद्धान्त का अनुमोदन नहीं करता।

सहज क्रिया तथा ट्रॉपिज्म में अन्तर

आपने सहज क्रिया और ट्रॉपिज्म का अध्ययन पिछले पृष्ठों में किया दोनों ही प्रतिमान प्रतिक्रियाएँ हैं और दोनों को ही किसी प्रकार की उत्ते (भौतिक या रासायनिक) की आवश्यकता होती है।

---

1 J. Loeb, *Comparative Physiology of Brain*, London, 1901.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant2

अनुकूलित सहज क्रिया

जब हमारे सामने सुन्दर भोजन रखा होता है तो मुँह से लार बहने लगती है। पैंवलोव (Pavlov) ने एक कुत्ते के साथ इसी प्रकार का एक परीक्षण किया।

इन दोनों में निम्नलिखित अन्तर है :

ट्रॉपिज्म (Tropism)	सहज क्रिया (Reflex Action)
(1) ट्रॉपिज्म बुद्धि-रहित (mechanical) क्रिया है।	(1) एक सहज क्रिया बुद्धि-रहित भी हो सकती है और बुद्धि-सहित भी। जब अचेतन अवस्था में होती है तब बुद्धि-रहित होती है और जब चेतन अवस्था में होती है तो बुद्धि-सहित।
(2) यह घातक और लाभकारी दोनों ही हो सकती है।	(2) यह सदैव लाभकारी होती है।
(3) इस प्रक्रिया में एक ही ढाँचा प्राप्तकर्त्ता प्रवाहक, और कायसाधक होता है।	(3) इस प्रक्रिया में तीन विभि ढाँचे होते हैं।
(4) इस प्रक्रिा म सम्पूर्ण-प्राणी (whole organism) प्रतिकार करता है।	(4) इस प्रक्रिया में केवल प्राणी का एक अवयव (organ) प्रतिक्रिया करता है जिसे हम कार्यसाधक कहते हैं।
(5) इस प्रक्रिया में क्रिया चेतन अवस्था में होती है।	(5) इस प्रक्रिया में क्रिया कुछ चेतन अवस्था में होती है और बुद्धि द्वारा निश्चित होती है।
समानता	
(1) ट्रॉपिज्म के लिए किसी न किसी प्रकार के भौतिक या रासायनिक उत्तेजक (stimulus) का होना आवश्यक है।	(1) सहज क्रिया में भी किसी न किसी प्रकार से भौतिक या रासायनिक उत्तेजक का होना आवश्यक है।

कुत्ते के सामने जब भोजन आता ह तो उसकी लार टपकने लगती है। भोजन उत्तेजक (stimulus) का कार्य करता है। इस प्रकार की सहज क्रिया को अप्रतिबन्धित्त सहज क्रिया (unconditioned reflex action) कहते हैं। पैवलोव ने कुत्ते के सामने जब भोजन प्रस्तुत किया तो घण्टी भी बजायी, स्वाभाविक रीति से भोजन को देखकर कुत्ते की लार टपकने लगी। जब बार-बार ऐसा किया गया तो फलस्वरूप कुत्ते ने घण्टी को भोजन का परिचायक समझा और घन्टी बजने पर कुत्ते की लार टपकने लगती। यह भी देखा गया कि भोजन न प्रस्तुत होने पर भी घण्टी बजने से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust Funding IKS-MoE-Grant-2

ही कुत्ते की लार टपकने लगी। अब घण्टी की नवीन उत्तेजना लार टपकाने के लि पर्याप्त है; क्योंकि घण्टी के साथ भोजन जुड़ा हुआ है। इस प्रकार की सहज क्रि को प्रतिबन्धित सहज क्रिया (conditioned reflex action) कहते हैं।

इसे एक अन्य उदाहरण के द्वारा भी समझाया जा सकता है। मान लीजि राम और श्याम हमेशा साथ-साथ रहते हैं। किसी दिन अकेला श्याम दिखायी पड़े उसको देखते ही राम की भी याद आ जायेगी। यह सम्बन्ध के कारण होता है। कु लोगों ने प्रतिबन्धित सहज क्रिया को सम्बन्धित सहज क्रिया (association refl action) भी कहा है।

प्रश्न

1. सहज क्रिया और मूलप्रवृत्ति में भेद कीजिए।

(Distinguish between reflex action and instinct. Agra, M, A Sociology, 1953, 1957, 1960)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४

मूलप्रवृत्तियों की सामान्य प्रकृति
(General Nature of Instincts)

उन्नीसवीं एवं बीसवीं सदी के प्रारम्भ तक मानव-व्यवहार की व्याख्या मूलप्रवृत्तियों (instincts) के आधार पर होती रही है।[1] इसके पहले कि हम मूलप्रवृत्ति को व्यवहार के आधार के रूप में समझें, हमारे लिए आवश्यक है कि हम मूलप्रवृत्तियों के सामान्य स्वरूप को समझ लें।

मूलप्रवृत्ति (instinct) शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम देकार्ते (Descartes) ने किया। यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने सर्वप्रथम इस दृष्टि से विचार किया। अरस्तू के अनुसार आत्मा के तीन प्रकार हैं: वनस्पति-आत्मा (vegetative soul), पशु-आत्मा (animal soul) और मानव-आत्मा (human soul)। देकार्ते ने अरस्तू से इस सम्बन्ध में प्रेरणा ली। देकार्ते ने मूलप्रवृत्तियें को बुद्धि-रहित माना। वह पशु और मनाव में भेद करता था। अठारहवीं शताब्दी में हार्टले (Hortley)[2] ने मानव और पशु-व्यवहार में समानता दिखाने का प्रयत्न किया। जर्मनी में इसी समय ली रॉय (Le Roy) ने भी हार्टले के विचारों का समर्थन किया और मनुष्यों एवं पशुओं के व्यवहार में केवल इतना ही अन्तर पाया कि पशु-व्यवहार अपनी साधारण आवश्यकताओं के कारण सरल है और मानव व्यवहार पशु-व्यवहार की तुलना में जटिल है। उन्नसवीं शताब्दी में डार्विन के पशु और मानव व्यवहार की समानता को स्पष्ट रूप से सिद्ध कर दिया। 1859 ई. में डार्विन की पुस्तक 'जातियों की उत्पत्ति' (Origin of the Species) प्रकाशित हुई। इस पुस्तक ने एक तहलका मचा दिया और यह सिद्ध कर दिया कि मानव प्राणियों की विकास-शृंखला की अन्तिम कड़ी है। यह सिद्धान्त विकासवादी सिद्धान्त कहलाता है। हर्बर्ट स्पेन्सर (Herbert Spencer) ने इस सिद्धान्त को अत्यधिक प्रचलित किया। इस सिद्धान्त से प्रभावित होकर स्पाल्डिंग (Spalding) ने पशुओं पर प्रयोग प्रारम्भ किये और यहीं से पशु-मनोविज्ञान का प्रारम्भ हुआ। 1876 में डार्विन ने बाल-मनोविज्ञान के अध्ययन करने का परामर्श दिया। स्पेन्सर ने तुलनात्मक मनोविज्ञान के अध्ययन पर बल दिया है।[3] इनके कारण यह सिद्ध होने लगा कि मूलप्रवृत्तियाँ मानव-व्यवहार की आधार हैं।

---

1 Brett, *History of Psychology*.
2 Hartley, *Observations on Man*.
3 J. C. Flugal, *A Hundred Years of Psychology*, pp. 114-39.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि हम विशिष्ट रूप से उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक के विचारों को सारांश में कहना चाहें तो कह सकते हैं कि मूलप्रवृत्तियों के विषय में निम्न विचार थे :

(1) मूलप्रवृत्तियाँ ही पशु-व्यवहार का आधार है।
(2) मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात हैं।
(3) मूलप्रवृत्तियों की प्रेरणा अन्ध प्रेरणा है।

मूलप्रवृत्ति से प्रेरित व्यवहार पशु एवं मानव-व्यवहार में अनेक रूपों में पाया जाता है और हम दिन-प्रतिदिन की क्रियाओं में इनको देखते रहते हैं। कुछ ऐसे उदाहरणों पर अब हम विचार करेंगे।

फेबरे का उदाहरण

फेबरे (Fabre) ने दीर्घशृंगक प्रजाति की तितली (cerambyx) व्यवहार का बड़ा सुन्दर चित्रण किया है। यह कीड़ा, कीट डिम्ब सम्बन्धी (larva) और कोशितीय (pupal) का समय, बलूत के पेड़ (Oak-tree) के अन्दर बिताता है और बलूत के पेड़ की लकड़ी खाता है। प्रारम्भ में यह एक अंतड़ी के टुकड़े समान होता है। यह न देख सकता है, न सुन सकता है और न इसमें कोई बुद्धि होती है। फेबरे ने इसको मुँहदार अतड़ी का एक टुकड़ा (a fragment of intestine with a mouth) कहा है। यह कीड़ा बलूत के पेड़ पर रेंगता हुआ च... जाता है। फिर बलूत के पेड़ में एक छिद्र बना लेता है और उसी छिद्र में चला जाता है। उस छिद्र के दरवाजे पर तीन तहों का झिल्लीदार दरवाजा बनाता है। ये खड़िया की तरह होती हैं जिससे बाहर के शत्रु आक्रमण न कर सकें। कमरे में कोशित (pupa) बन जाता है। उस कोशित में कीड़े का मुँह द्वार की ओर है। यदि उसका सिर द्वार की ओर न हो तो वह तितली बनने पर मुड़ नहीं पा... और उसी में बन्दी होने की सम्भावना रहेगी। कुछ दिनों में कोशित टूट जा... और तितली झिल्लीदार द्वारों को तोड़ती हुई पुष्पों का मधुर रसपान ... लगती है।[1]

यह है एक छोटे कीड़े की कहानी, जो नित्यप्रति घटित होती रहती है। इसको देखकर मस्तिष्क चक्कर खाने लगता है और बुद्धि चकित रह जाती है। क्रिया का अवलोकन करने से पता लगता है कि यह कार्य उस कीड़े ने बड़ी ... एवं बुद्धिमत्ता से अपने उद्देश्य की पूर्ति करने के लिए किया है और उसने इस ... को इतनी पूर्णता से समाप्त किया है मानो उसने अत्यधिक अनुभव द्वारा कार्य को सीखा होगा। हम पहले ही बता चुके हैं कि इस कीड़े का कोई भी मा... स्तर नहीं है और न इसका शारीरिक विकास ही उच्च श्रेणी का है। न तो ... सकता है और न सुन ही सकता है: न इसकी बुद्धि का ही विकास हुआ है। ...

---

1 S. H. Fabre, *The Wonders of Instinct* (English Transl... London, 1918.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार्य का कोई पूर्व अनुभव भी नहीं है, न किसी ने इसे शिक्षा ही दी है। इस पर भी उसने इतनी कुशलता से इस कार्य को पूरा किया है। इसी प्रकार का कार्य उसकी जाति के अनेक कीड़े करते हैं। इसी प्रवृत्ति को जो आन्तरिक रूप से कार्य करती हैं और पशु-व्यवहार को निर्देशित करती है, हम मूलप्रवृत्ति कहते हैं।

कीड़े-मकोड़ों के उदाहरण

ऐसे कीड़ों के बहुत से उदाहरण पाये जाते हैं जो अपने अण्डे ऐसे स्थान पर देते हैं जहां कुछ-न-कुछ उनके पैदा होने वाले कीड़ों को खाने के लिए मिल जायेगा। उदाहरणस्वरूप, कुछ कीड़े अपने अण्डे सड़े हुए मांस पर देते हैं। कीड़े पैदा होने पर उसी मांस को खाते हैं। कुछ कीड़े अपने अण्डे किसी विशिष्ट फूल के बीजों (ovules) पर देते हैं, जिससे कीड़े पैदा होने पर अपना भोजन प्राप्त कर सकें। अतः हम देखते हैं कि सड़े मांस की दुर्गन्ध या विशिष्ट फूल की सुगन्ध इन कीड़ों की ज्ञानेन्द्रियों को उत्तेजना देती है और मूलप्रवृत्तियों के कारण ये कीड़े अपने अण्डे उन्हीं विशिष्ट स्थानों पर देते हैं।

कुछ कीड़े इससे भी कठिन प्रक्रिया द्वारा अपने पैदा होने वाले बच्चों के भोजन की व्यवस्था कर देते हैं। बर्र (mason wasp) अपने अण्डे देने के पहले कुछ कीड़ों (caterpillars) को डंक मार कर अधमरा कर देता है और फिर उन्हें एक छोटे से गड्ढे में थोड़ी-सी कीचड़ या मिट्टी डालकर दबा देता है। उसके ऊपर अण्डे देकर उड़ जाता है। इसके आगे क्या हुआ यह बर्र ने कभी नहीं देखा। अण्डों से बर्र के बच्चे पैदा होते हैं और ये दबे हुए अधमरे कीड़ों का ताजा मांस खाते हैं और बड़े हो जाते हैं।

निम्न श्रेणी के रीढ़ की हड्डी वाले (Lower Vertebrate) प्राणियों के उदाहरण

(अ) गिलहरी—एक गिलहरी को पैदा होते ही उसकी जाति (species) की दूसरी गिलहरियों से पृथक कर दीजिये और सम्पूर्ण पृथक एवं भिन्न पर्यावरण में पालिये। इस पर भी जब उसे कड़े छिलके के फल दिये जायेंगे तो वह उनमें से कुछ खायेगी और कुछ काष्ठ फल भूमि में गाड़ देगी। यह सब उसी प्रकार करती है जिस प्रकार उसकी जाति की अन्य गिलहरियाँ करती हैं

(ब) पालतू कुत्ता—कहते हैं कि कुत्ता एक बुद्धिमान पशु है। जब कुत्ता एक शशक (rabbit) के पिछले भाग को देखता है तो उसके शिकार की मूलप्रवृत्ति जाग उठती है, वह होश-हवास खोकर उसके पीछे दौड़ने लगता है और जैसे ही वह अपने शिकार को पास से देखता है, भौंकना शुरू कर देता है। इसका फल स्पष्ट है कि शिकार भाग जाता है; परन्तु कुत्ता ऐसा क्यों करता है ? उत्तर स्पष्ट है कि वह ऐसा मूलप्रवृत्ति के कारण करता है। उसके पूर्वज झुण्ड में शिकार करते थे और भौंककर अपने साथियों को सचेत करते थे, परन्तु अब पालतू कुत्ता यद्यपि अकेले शिकार करता है तथापि अपनी जाति की भौंकने की मूलप्रवृत्ति अब भी उसमें शेष है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूलप्रवृत्ति का अर्थ
(Concept of Instinct)

मूलप्रवृत्ति और स्वाभाविक (instinctive) शब्दों का अत्यधिक प्रयोग किया गया है। परन्तु दुख का विषय है कि इस शब्द का अनुपयुक्त प्रयोग विभिन्न अंगों में केवल साधारण लोगों ने किया है बल्कि बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा भी किया गया है। इसका परिणाम यह हुआ कि इन शब्दों का वैज्ञानिक अर्थ नष्ट हो गया है। इस पर भी इस शब्द का प्रयोग सामाजिक मनोविज्ञान में करना ही पड़ता है। यद्यपि कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि इस शब्द का प्रयोग नहीं करना चाहिए। न्यूकोम्ब ने लिखा है, "मूलप्रवृत्तियों का अस्तित्व हो या न हो, हम इस शब्द के प्रयोग का परित्याग केवल इसलिए करेंगे क्योंकि यह एक भ्रान्तिमूलक शब्द है।"[1]

कुछ भी हो इस शब्द का प्रयोग हो या न हो, इसके स्वरूप एवं क्षेत्र को समझे बिना मानव के व्यक्तिगत या सामूहिक व्यवहार को नहीं समझा जा सकता। मूलप्रवृत्तियों का विवरण वैसे तो बहुत समय से हो रहा था परन्तु डा० मैकडूगल ने इसका अति सुन्दर विश्लेषण अपनी पुस्तक 'सोशल साइकालाजी' (An Introduction to Social Psychology) में किया है। यद्यपि उनके विचारों से सब मनोवैज्ञानिक पूर्णतया सहमत नहीं हैं तथापि उनकी परिभाषा को अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने मान्यता प्रदान की है। उन्होंने सबसे बड़ा कार्य यह किया है कि शब्द के अर्थ को वैज्ञानिक आवरण पहनाया है।

मैकडूगल ने मूलप्रवृत्ति की परिभाषा निम्न शब्दों में की है: "मूलप्रवृत्ति एक आन्तरिक मनःशारीरिक प्रवृत्ति है जो अपने स्वामी के लिए एक निश्चित वर्ग की वस्तुओं को इन्द्रियगोचर होने तथा ध्यान देने और इस प्रकार की वस्तु के इन्द्रियगोचर होने, एक विशेष प्रकार की उद्वेगात्मक उत्तेजना का अनुभव तथा इसके सम्बन्ध में एक विशेष प्रकार का व्यवहार हो या कम से कम इस प्रकार के व्यवहार की आन्तरिक प्रेरणा का होना निश्चित करती है।"[2]

मैकडूगल ने मूल-प्रवृत्तियों की यन्त्र रचना का भी विवरण दिया है। उसके अनुसार प्रत्येक मूलप्रवृत्ति की तीन मानसिक क्रियाएँ होती हैं: ज्ञानात्मक (cognitive), उत्तेजनात्मक (affective), क्रियात्मक (conactive) क्रियाएँ।

इन तीनों प्रकार की क्रियाओं की, जो कि मनःशारीरिक क्रिया (psycho-

---

1 T. M. Newcomb, *Social Psychology*, p. 85, Second impression (1955) Tavistock Publication Ltd.

2 "An instinct is an inherited or innate psycho-physical disposition which determines its possessor to perceive, and to pay attention to, objects of a certain class, to experience an emotional excitement of a particular quality upon perceiving such an objcet and to act in regard to it in a particular manner or, at least, to experience an impulse to such action." W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 25.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

physical process) मूलप्रवृत्तियों के व्यवहार में होती हैं, यद्यपि हम देख नहीं सकते तथापि इन क्रियाओं के विषय में ऐसा विश्वास एवं दृढ़ता के साथ कहा जा सकता है कि ये क्रियाएँ होती हैं। मैकडूगल ने इसकी पुष्टि निम्न प्रकार से समझा कर की है :

(1) ज्ञानात्मक (cognitive),
(2) उत्तेजनात्मक (affective),
(3) क्रियात्मक (conative)।

इसको यों भी कह सकते हैं कि प्रत्येक मूलप्रवृत्ति सर्वप्रथम किसी वस्तु के विषय में ज्ञान कराती है और इस ज्ञान के कारण उस वस्तु के प्रति एक प्रकार की उत्तेजना मिलती है और इस उत्तेजना के कारण उस वस्तु को पाने या करने या इसके विपरीत दूर होने की इच्छा होती है।

हमारा शारीरिक ढाँचा भी इसकी पुष्टि करता है। किसी वस्तु के कारण ज्ञानेन्द्रिय उत्तेजित होती है और यह उत्तेजना मस्तिष्क तक मस्तिष्क सम्बन्धी ज्ञान-तन्तुओं (sensory-nerves) द्वारा पहुँचती है और फिर एक व्यवस्थित एवं सुसम्बन्धित प्रेरणाओं की धारा को बाहर ले जाने वाली नाड़ियाँ (efferent nerves) कार्यशील अवयवों या मांसपेशियों तक पहुँचाती हैं।

मन:प्रक्रिया (psychical process) की ज्ञानात्मक क्रिया (cognitive process) को मान लेना इसलिए उचित है कि ओजस्वी उत्तेजना (nervous excitation) मस्तिष्क के उस भाग में होती है जिसकी उत्तेजना के कारण ज्ञान-तन्तुओं का कार्य प्रारम्भ होता है और उत्तेजनात्मक क्रिया (effective process) का मान लेना इसलिए उचित है कि प्राणी किसी कार्य के करने के पूर्व उद्वेगात्मक उत्तेजना का अनुभव करता है। कई बार इन उद्वेगों के लक्षण स्पष्टतया दिखायी भी पड़ते हैं और क्रियात्मक-क्रिया (conative process) का मान लेना इसलिए भी उचित है कि प्रत्येक मूलप्रवृत्ति के जागृत होते ही और उद्वेग उठते ही प्राणी उस कार्य को करने के लिए प्रयत्नशील हो जाता है। या हम यो कह सकते हैं कि यह क्रिया तब तक रोकी नहीं जा सकती जब तक कि पूरी न हो जाय या अन्य शक्तिशाली प्रवृति को उत्तेजित न कर दे या प्राणी अपने सतत एवं अटूट प्रयत्नों के फलस्वरूप शक्तिहीन न हो जाये। किसी कार्य को करने के पूर्व हमें किसी वस्तु को देख कर ज्ञानात्मक भाव उत्पन्न होता हैं। यह ज्ञानात्मक भाव किसी न किसी उद्वेग द्वारा अनुगामित होता है। हर उद्वेग एक मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार को जन्म देता है।

कुछ अन्य विद्वानों द्वारा मूलप्रवृति की परिभाषाएँ

गिन्सबग ने मूलप्रवृत्ति की परिभाषा निम्न शब्दों में दी है : "मूलप्रवृत्तीय व्यवहार उस न्यून या अधिक जटिल कार्य-शृंखला या व्यवहार का द्योतक है जो प्रजाति के लिए उन हितकर निश्चित उद्देश्यों का अनुकूलन करते हैं, जो वंशगत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निश्चित होते हैं और व्यक्तिगत प्राणी के पूर्व अनुभव से स्वतन्त्र होते हैं।"[1] गिन्सबर्ग ने मूलप्रवृत्तीय (instinctive) व्यवहार उस कार्य-शृंखला या व्यवहार को बताया है जो वंशानुक्रमण (heredity) के द्वारा निश्चित होते हैं, जन्मजात होते हैं अर्थात जन्म से ही प्राप्त होते हैं और उन्हें सीखने की आवश्यकता नहीं होती, स्वतः ही व्यक्ति उन्हे करने लगता है, किसी पूर्व अनुभव की आवश्यकता नहीं होती। मूलप्रवृत्तियाँ प्रजाति के लिए हितकर होती हैं क्योंकि इसी व्यवहार से प्राणी अनकूलन करता है और जीवित रहता है।

डा० पेखाम और मिसेज पेखाम मूलप्रवत्ति की परिभाषा निम्न शब्दों में करते हैं: "मूलप्रवृत्ति शब्द के अन्तर्गत हम उन सब जटिल कार्यों को लेते हैं जो बिना किसी पूर्व अनुभव के उसी प्रकार से किये जाते हैं जिस प्रकार से उस लिंग और प्रजाति के सब सदस्यों द्वारा किये जाते हैं।"

डा० पेखाम और मिसेज पेखाम ने भी मूलप्रवृत्ति उस व्यवहार को कहा है जो बिना सीखे ही प्राणी उसी प्रकार अपने आप करने लगता है जिस प्रकार उसको प्रजाति के अन्य प्राणी करते हैं। इस प्रकार मूलप्रवृत्ति जन्मजात होती है और उसके लिए पूर्व अनुभव की आवश्यकता नहीं होती है।

किरबी और स्पेन्स की परिभाषा: "पशुओं की मूलप्रवृत्तियों को हम वे विशेष गुण कहते हैं जो सृजनकर्त्ता द्वारा उनको प्रदान किये जाते हैं, जो शिक्षा, अवलोकन या अनुभव से पूर्ण स्वतन्त्र होते हैं और जिनके द्वारा वे कुछ ऐसे निश्चित कार्य, जो प्राणी की भलाई के लिए प्रेरणा देते हैं, करते हैं।"

किरबी और स्पेन्स ने मूलप्रवृत्ति की अपनी परिभाषा बहुत ही स्पष्ट एवं विशुद्ध की है। मूलप्रवृत्ति जन्मजात होती हैं, जो सृजनकर्ता द्वारा ही प्रदान की जाती हैं, इन्हें किसी भी रूप में सीखा नहीं जाता और न ही किसी पूर्व अनुभव या शिक्षा की आवश्यकता होती है। ये ऐसी प्रेरणाएँ होती हैं जो सदैव प्राणी की भलाई के लिए ही होती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं और प्राणी स्वतः ही अपनी भलाई के लिए व्यवहार करने लगता है।

कुछ अन्य यन्त्रवादी मनोवैज्ञानिकों का मत है कि मूलप्रवृत्ति एक प्रकार की प्रतिक्षेप शृखलाएँ (chain reflexes) होती हैं। हर्बर्ट स्पेन्सर इसी मत का प्रतिपादन करते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने हर्बर्ट स्पेन्सर के विचार की तीव्र आलोचना की है। इसके विषय में विस्तारपूर्वक हम आगे विचार करेंगे।

मूलप्रवृत्तियों की विशेषताएँ
(Characteristics of Instincts)

हमने संक्षेप में मूलप्रवृत्तियों के स्वरूप पर विचार किया। अब हम मूलप्रवृत्ति की विशेषताओं पर प्रकाश डालेंगे। मूलप्रवृत्तियों में निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं

---

1 M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 1, Methuen and Co. Ltd., London, Eighth Edition, 1951.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) **अनुकूलता की प्रवृत्ति (Adaptive Character)**—प्रत्येक मूलप्रवृत्ति में पूर्वनिश्चित परिस्थिति से अनुकूलता की प्रवृत्ति रहती है; जैसे—तितली का कीड़ा (cerambyx group) कितनी सुन्दरता से अपनी परिस्थिति के अनुसार अनुकूलन करता चला जाता है। इस अनुकूलता को हमें जानबूझ कर बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य न समझना चाहिए; क्योंकि उस कीड़े में कोई बुद्धि नहीं होती और वह जो कुछ भी करता है उसी प्रकार से उसकी जाति के सभी अन्य कीड़े भी करते हैं। तात्पर्य यह है कि मूलप्रवृत्ति में अनुकूलता की वह प्रवृत्ति पायी जाती है जो उस जाति के सारे सदस्यों के लिए पूर्व निश्चित होती है।

(2) **मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं (Instincts are Innate)**—मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं। इनको सीखने की हमें कोई आवश्यकता नहीं होती। दो प्रमुख कारणों से. एक तो यह कि मूलप्रवृत्तियाँ एक जाति में सामान्य रूप से पायी जाती हैं और दूसरी यह कि प्रथम बार में ही कार्य बड़ी कुशलता से होता है।

हम इन प्रवृत्तियों को जन्मजात तभी मानेंगे जब एक जाति के सदस्यों का व्यवहार एकसा हो, परन्तु उन पर किसी और बात के कारण व्यवहार की समानता न आयी हो। कई बार अनुकरण या शिक्षा से पशुओं या मनुष्यों का व्यवहार समान हो सकता है। बहुत समय तक इन समानताओं को सामाजिक तत्त्वों के कारण बताया जाता था; परन्तु परीक्षण तथा अवलोकन दोनों ने ही सिद्ध कर दिया है कि एक जाति के सदस्यों में समान व्यवहार सामाजिक प्रभाव के कारण ही नहीं होता; जैसे तितली के कीड़े का उदाहरण हम देख ही चुके हैं। इसी प्रकार हमने गिलहरी के उदाहरण पर भी विचार किया। यद्यपि गिलहरी को उसकी जाति की अन्य गिलहरियों से जन्म के बाद ही पृथक कर दीजिए परन्तु उनमें वे गुण बिना सिखाये या देखे ही आ जायेंगे जो उसकी जाति में जन्म से ही पाये जाते हैं।

भूख लगने पर छोटा बच्चा पैदा होने के उपरान्त ही चिल्लाने लगता है। एक कुत्ते का बच्चा पानी म प्रथम अवसर पर ही तैरने लगता है। चिड़ियों के बच्चे बिना किसी शिक्षा के उड़ने लगते हैं। ये सारे गुण उनमें जन्मजात होते हैं। जिनसे सिद्ध होता है कि मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं।

(3) **नवीन परिस्थितियों में अति न्यून परिवर्तन (The Smallest of the Extent to which They can be Modified to Meet with Moval Factors in the Situation)**—मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रियाओं में बहुत ही कम परिवर्तन नयी परिस्थिति में हो सकते हैं। एक जाति के सदस्यों के लिए पूर्व निश्चित परिस्थितियाँ होती हैं और यदि इन पूर्व निश्चित परिस्थितियों में कोई अन्तर हो जाये तो मूलप्रवृत्तियाँ कोई विशेष परिवर्तन करके अनुकूलन नहीं कर सकतीं। वही प्राणी जो इतनी उद्भूत क्रियाओं द्वारा अपनी पूर्व निश्चित परिस्थिति को कुशलतापूर्वक निभाता है, तनिक भी परिवर्तन होने पर सारी कला भूल जाता है और कई बार तो यहाँ तक होता है कि वह अपने प्राण भी दे देता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि मधुमक्खियों का छत्ता जहाँ पर लगा हो उस जगह से हटाकर थोड़ी दूर पर लगा दिया जाये या छत्ते के द्वार को दूसरी ओर कर दिया जाये तो बाहर की मधुमक्खियाँ पुराने स्थान पर लौटेंगी और वे घूम-घूमकर मर जायेंगी बजाय इसके कि उस छत्ते में, जो नयी स्थिति में है, घुस जायें।

फेबरे[1] ने लिखा है कि सरल-चीड़-संयात्री पादिक (pine processionary caterpillar) की कतार को तोड़कर उसके दोनों सिरों को उसने जोड़ दिया। इस परिवर्तन के कारण वे सात दिन तक बिना भोजन पाये गुलदस्ते के चारों ओर गोले में चक्कर लगाते रहे। जब वह गोला टूट गया और कतार बन गयी तब वे अपने घोंसले तक पहुँच सके। इसी प्रकार से पेखाम्स[2] ने ततैये (wasp) पर परीक्षण किये और अवलोकन किया कि वह पहले अपने नीड़ का निर्माण करता है और इसके उपरान्त कीड़े (caterpillar) को ढूँढ़ता है और डंक मारता है एवं घसीटकर अपने घोंसले तक ले जाता है। कई बार ऐसा देखा गया है कि शिकार नीड से बहुत दूर होता है और उसे नीड़ तक ले जाने में बहुत समय लगता है। इस कारण वह शिकार को विवश होकर छोड़ देता है यद्यपि उसके पास अति सरल मार्ग है कि वह अपना नीड़ शिकार के निकट बना ले। इस प्रकार यह विदित हुआ कि पूर्व निश्चित परिस्थिति के अतिरिक्त नवीन स्थिति से अनुकूलन करने में प्राणी असमर्थ रहता है।

(4) **सम्पूर्ण जाति में सामान्य रूप से समान गुण पाये जाते हैं** (Universality Among Members of the Same Species)—मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार एक जाति के सब सदस्यों में सामान्य रूप से पाये जाते हैं। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि यह व्यवहार सीखने से नहीं आते, परन्तु जन्मजात होते हैं। यदि हम प्राणी विशेष को उसके अन्य सदस्यों से पृथक कर दें और फिर उसके व्यवहार को देखें तो वह व्यवहार वैसा ही होगा जैसा कि उस जाति के अन्य सदस्यों का होता है। इस पर स्थान आदि का प्रभाव नहीं होता।

(5) **प्रथम क्रिया में ही अद्भुत पूर्णता पायी जाती है** (The Remarkable Degree of Perfection of Their First Performance)—मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार जब प्रथम बार ही होता है तब ऐसा लगता है कि करने वाला बड़ा ही बुद्धिमान एवं कुशल है; क्योंकि कार्य का प्रत्येक अंग बड़ी निपुणता से किया जाता है। एक बतख का बच्चा जब पानी में प्रथम बार ही उतारा जाता है तो शान्ति से तैरता दिखायी पड़ता है। चिड़िया का बच्चा अपने आप फड़फड़ाकर उड़ने लगता है। अतः इन क्रियाओं में अद्भुत पूर्णता पायी जाती है।

इस पर भी हमें अतिशयोक्ति (exaggeration) से बचना चाहिए। प्रथम बार में ही सदैव अद्भुत पूर्णता नहीं होती। इसके कई उदाहरण हैं: एक विशि...

---

1 Fabre, *The Wonders of Instinct.*
2 G. W. and E. G. Peckhams, *On the Instincts and Habits of Solitary Wasps*, Madison Wis, 1958.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का बच्चा प्रथम बार नीड़ छोड़ता है तो उतना अच्छा नहीं उड़ता जितना कि वह कुछ दिनों बाद उड़ता है। परन्तु प्रथम बार में इतना अवश्य उड़ लेता है कि पृथ्वी पर गिरने से बच जाये। यह उसकी प्राणिशास्त्रीय आवश्यकता है और यदि ऐसा न होता तो चिड़ियों के बच्चे जो पृथ्वी से काफी ऊपर उत्पन्न होते हैं, अपनी पहली ही उड़ान में मर गये होते।

अभी तक यह निश्चित नहीं हो पाया है कि यह उन्नति अभ्यास के द्वारा होती है या परिपक्वता (maturity) के कारण।

(6) **मूलप्रवृत्तियों का एक लक्ष्य होता है (The Instincts have always an End in View)**—प्रत्येक मूलप्रवृत्ति का कोई न कोई लक्ष्य अवश्य होता है। जैसा हमने देखा कि किसी वस्तु का बोध होने के कारण एक विशिष्ट प्रकार का उद्वेग उत्पन्न होता है और यह उद्वेग एक विशिष्ट क्रिया करने के लिए उत्तेजित करता है। यह लक्ष्य लगभग पूर्व निश्चित होता है।

मूलप्रवृत्तियों का वर्गीकरण
(Classification of Instincts)

मूलप्रवृत्तियों के वर्गीकारण की अनेक चेष्टाएँ की गयी हैं; परन्तु इस सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों के बीच कभी भी समझौता नहीं हो सका। मैकडूगल और फ्रायड ने इस दृष्टि से सर्वप्रथम कार्य किया। विलियम जेम्स ने 32 मूलप्रवृत्तियाँ बतायीं। वारेन ने 26 और थार्नडाइक ने 40-मूलप्रवृत्तियाँ बतायीं। बर्नार्ड तथा वुडवर्थ ने 110 मूल-प्रवृत्तियाँ गिनायीं। इसी प्रकार अन्य मनोवैज्ञानिकों ने इनकी गणना करायी। हाल यह हुआ कि मूलप्रवृत्ति का अर्थ ही अस्पष्ट होने लगा। बर्नार्ड ने एक व्याख्या की और यह सिद्ध किया कि मूलप्रवृत्ति नामक शब्द का 5684 विभिन्न अर्थों में प्रयोग किया गया है। कुछ समय बाद इसमें कुछ व्यवस्था एवं क्रमबद्धता आयी। कुछ महत्त्वपूर्ण वर्गीकरण निम्न हैं।

कर्कपैट्रिक के अनुसार

(क) आत्मा की मूलप्रवृत्ति।
(ख) सन्तानोत्पत्ति की मूलप्रवृत्ति।
(ग) सामूहिक जीवन की मूलप्रवृत्ति।
(घ) परिस्थितियों के अनुकूल जीवन को ढालने की मूलप्रवृत्ति।
(ङ) आदर्श पालन की मूलप्रवृत्ति।

ड्रीवर के अनुसार

(1) रुच्यात्मक (Appetitive), (2) प्रतीकारात्मक (Reactive)।

वुडवर्थ के अनुसार

(1) शरीर की रक्षा के लिए मूल आवश्यकताओं से सम्बन्धित प्रतिक्रियाएँ; जैसे—प्यास, भूख, कष्ट, इत्यादि से रक्षा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) अन्य व्यक्तियों के सम्बन्ध में प्रतिक्रियाएँ जैसे सामूहिक जीवन, काम-तृप्ति इत्यादि।

(3) खेल सम्बन्धी प्रतिक्रियाएँ।

उनका मत है कि इन तीन प्रमुख विभागों में समस्त मूलप्रवृत्तियों का समावेश हो जाता है।

थाउलस[1] के अनुसार

(अ) आत्मरक्षा की मूलप्रवृत्ति।

(ब) सन्तानोत्पत्ति की मूलप्रवृत्ति।

(स) सामूहिक जीवन की मूलप्रवृत्ति।

मैकडूगल[2] के अनुसार

मैकडूगल का कहना है कि प्रत्येक मूलप्रवृत्ति एक विशिष्ट प्रकार के सहवर्ती उद्वेग (accompanying emotion) द्वारा अनुगामित होती है। जबकि एक प्रमुख मूलप्रवृत्ति उत्तेजित होती है तो वह एक विशिष्ट प्रकार की उत्तेजना द्वारा अनुगामित होती है। इस विशिष्ट प्रकार की उत्तेजना को मौलिक उद्वेग कहते हैं। उसने कुछ मूलप्रवृत्तियों और उनके सहवर्ती उद्वेगों की सूची भी दी है :

मूलप्रवृत्ति (Instinct)	सहवर्ती उद्वेग (Accompanying Emotion)
(Instincts of well; defined emotional tendency)	
पलायन (flight)	भय (fear)
निवृत्ति (repulsion)	घृणा (disgust)
जिज्ञासा (curiosity)	आश्चर्य (wonder)
युयुत्सा (pugnacity)	क्रोध (anger)
पुत्रकामना (parental)	कोमल (tender)
आत्मगौरव (self-assertion	आत्माभिमान (elation)
दैन्य (submission)	आत्महीनता (subjection)
(Instincts of less well defined emotional tendency)	
भोग (sex)	काम (lust)
सामूहिक जीवन (gregarious)	एकाकीपन (loneliness)
संचय (acqusition)	स्वत्व (ownership)
विधायकता (constructive)	कृतिभाव (creativeness)
शरणागति (appeal)	करुणा
भोजन की खोज (food-seeking)	भूख
हास (laughter)	आमोद

---

1 Thouless, *General and Social Psychology*.
2 McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, Ch. [illegible]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ सामान्य मूलप्रवृत्तियाँ

(1) निर्देश (suggestion),
(2) सहानुभूति (sympathy),
(3) अनुकरण (imitation),
(4) खेल (play),
(5) आवृत्ति की प्रवृत्ति (routine-tendency) ।

पशु और मानव मूलप्रवृत्तियों में भेद
(Difference in Animal and Human Instincts)

पशु और मानव मूलप्रवृत्तियों में भेद है । वैसे तो व्यवहार को प्रेरित करने वाली मूलप्रवृत्तियाँ पशु और मनुष्य एवं अन्य प्राणियों में समान ही हैं, परन्तु फिर भी उनमें अंशों का अन्तर है । मानव व्यवहार में निश्चित रूप से अन्तर पाया जाता है ।

मूलप्रवृत्तियों की एक विशेषता यह है कि नवीन परिस्थितियों में अतिन्यून परिवर्तन सम्भव होता है । कहने का तात्पर्य यह है कि नवीन परिस्थितियों में मूल-प्रवृत्तियाँ बहुत ही कम अंशों में परिवर्तन करके सामंजस्य स्थापित कर पाती हैं । पशुओं में परिवर्तन की यह शक्ति मनुष्यों की तुलना में बहत कम होती है । मनुष्य ही अधिक परिवर्तन की क्षमता रखता है ।

मानव व्यवहार का विश्लेषण करते समय हम स्पष्ट रूप से इस तथ्य पर प्रकाश डालेंगे कि मनुष्य केवल मूलप्रवृत्तियों से ही प्रेरित नहीं होता, बल्कि विवेक, अनुभव एवं शिक्षा भी उसके व्यवहार पर प्रभाव डालते हैं । यहाँ पर इतना लिखना पर्याप्त होगा कि मनुष्य का व्यवहार बहुत कुछ अनेक कारकों पर आधारित है । इतना ही नहीं मनुष्य अपने विवेक, अनुभव व शिक्षा के बल पर अपनी मूलप्रवृत्तियों में प्रायः इतना परिवर्तन कर लेता है कि मूलप्रवृत्ति के वास्तविक रूप को पहचानना भी दुष्कर हो जाता है । उदाहरण के लिए, एक भूखा बालक भूख लगने पर रो पड़ेगा या अपनी माता से भोजन माँगेगा । वह पशुओं के समान दूसरे का रोटी नहीं छीनेगा । काम-प्रवृत्ति से प्रेरित एक निराश प्रेमी अपना समय समाज सेवा तथा अन्य कार्यों में लगाता है । यहाँ पर वह काम-प्रवृत्ति से प्रेरित है, परन्तु उसका व्यवहार इतना परिवर्तित है कि उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती । मनुष्य अपनी मूल-प्रवृत्तियों में भी अत्यधिक परिवर्तन करने में समर्थ है । परिवर्तनशीलता के इन्हीं आधारों पर समाज की सभ्यता एवं संस्कृति की अट्टालिका खड़ी है ।

मैकडूगल की मूलप्रवृत्ति के सिद्धान्त की कुछ प्रमुख विशेषताएँ

मैकडूगल के मूलप्रवृत्ति के सिद्धान्त को इतना विस्तार दिया गया कि सन् 1908 और उसके कुछ समय के बाद तक अनेक मनोवैज्ञानिक इस सिद्धान्त को मानने लगे और ऐसा समझा जाने लगा कि मानव-व्यवहार को इस सिद्धान्त के आधार पर सरलतापूर्वक समझा जा सकता है । अब हम उस सिद्धान्त की कुछ प्रमुख विशेषताओं पर, जिन पर मैकडूगल ने जोर दिया है, विचार करेंगे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) प्रत्येक मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया के तीन मानसिक पहलू होते हैं : (अ) ज्ञानात्मक (cognitive), (ब) उत्तेजनात्मक (affective), और सक्रियात्मक (conative)।

(2) मस्तिष्क के तीन भाग होते हैं : (अ) केन्द्र पर पहुँचाने वाला भाग (afferent), (ब) केन्द्रीय भाग (central), (स) बाहर की ओर ले जाने वाला भाग (efferent)।

प्रथम भाग, बोध हुई वस्तु को प्राप्त करता है और उसे केन्द्र तक पहुँचाता है। केन्द्र या द्वितीय भाग उसे निर्देशित करता है। और तृतीय भाग उसे बाहर की ओर ले जाकर कार्य करने के लिए प्रवृत्त करता है।

(3) केन्द्रीय भाग सदैव अपरिवर्तित रहता है।

(4) प्रत्येक मूलप्रवृत्ति एक उद्वेग द्वारा अनुगामित होती है।

(क) मैकडूगल का कहना है कि प्रत्येक मूलप्रवृत्ति एक विशिष्ट प्रकार के सहवर्ती उद्वग द्वारा अनुगामित होती है। इस विशिष्ट प्रकार की उत्तेजना को मौलिक उद्वेग कहते हैं। (ख) उसने कुछ मूलप्रवृत्तियों और उनके सहवर्ती उद्वेगों की सूची भी दी है।

(5) मूलवृत्तियों का मानव-व्यवहार में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। मैकडूगल ने मानव-व्यवहार से मूलप्रवृत्तियों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। उसका कहना है कि प्राणी व्यवहार के पीछे चालक-शक्ति मूलप्रवृत्तियों की होती है। उन्होंने निम्न शब्दों में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किए हैं : "हम कह सकते हैं कि मूलप्रवृत्तियाँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्पूर्ण मानव-व्यवहार की प्रमुख चालक होती है।"[1] उन्होंने अपने विचार की पुष्टि में आगे लिखा है, ये प्रेरणाएँ मानसिक शक्तियाँ हैं जो व्यक्तियों और समाजों के सम्पूर्ण जीवन का निर्माण करती हैं और उसे बनाये रखती हैं। उनमें ही हम जीवन, मस्तिष्क और इच्छा के प्रमुख रहस्य की समस्या पाते हैं।"[2] मैकडूगल इतने से संतुष्ट नहीं हुए हैं। मूलप्रवृत्तियों को उन्होंने प्राणी व्यवहार का आधार भी मान लिया। उनका कहना है कि यदि मूलप्रवृत्तियाँ न हों तो प्राणी मृतक के समान हो जायगा। उन्होंने लिखा है, "इन मूलप्रवृत्तीय स्वभाव को उनकी शक्तिशाली प्रेरणाओं एवं परिवर्तकों के साथ हटा लीजिए तो प्राणी किसी भी प्रकार के कार्य योग्य न रह जायगा। वह इस प्रकार से शक्तिहीन, निश्चल एवं

---

1 "We may say, then, that directly or indirectly the instincts are the prime movers of all human activity......" W. McDougall: *An Introduction to Social Psychology*, p. 38.

2 "These impulses are the mental forces that maintain and shape all the life of individuals and societies, and in them we are confronted with the central mystery of life and mind and will." *Ibid*, p. 38.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गतिहीन हो जायगा जैसे एक अद्‌भुत घड़ी जिसकी प्रमुख कमानी (spring) निकाल ली गयी हो या भाप का इंजन, जिसकी अग्नि हटा दी गयी हो।[1]

मैकडूगल के मूलप्रवृत्ति के सिद्धान्त की आलोचना
(Criticism of McDougall's Theory of Instinct)

मैकडूगल ने अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन इतने सुन्दर ढंग से किया है कि कोई भी तर्कवादी व्यक्ति उन्हें स्वीकार कर लेगा। उसके सिद्धान्त द्वारा प्राणी-व्यवहार को समझने में अमूल्य सहायता प्राप्त हुई है। इस पर भी उसका सिद्धान्त आलोचना के प्रहारों से नहीं बच सका है।

उसके सिद्धान्त के विरुद्ध निम्न महत्त्वपूर्ण आलोचनाएँ प्रस्तुत की जाती हैं :

(1) मस्तिष्क के त्रिविभाजन की आलोचना

(अ) गिन्सबर्ग ने मस्तिष्क के विभाजन की शक्ति की आलोचना की है। उसका कहना है कि मस्तिष्क का तीन भागों में विभाजन सत्यता की दृष्टि से बहुत दूर है। तीनों ही एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं और विशेषतया उत्तेजना और क्रिया तो एक-दूसरे से पृथक किये ही नहीं जा सकते।

(आ) मैकडूगल ने एक मूलप्रवृत्ति के जोड़ने को समुच्चयबोधक (conjunction) माना है। डॉ० स्टाउट ने इसका विरोध किया है। उनका मत है कि पशुओं में एक विशिष्ट ज्ञानात्मक प्रवृत्ति होती है। मैकडूगल ने यह सिद्ध नहीं किया है कि ज्ञानात्मक स्वभाव एक पृथक ढाँचा है। मैकडूगल का दैहिक सिद्धान्त (physiological theory), जिसके आधार पर उसने मस्तिष्क के तीन भाग माने हैं, कल्पना पर आधारित है।

(2) 'प्रत्येक मूलप्रवृत्ति एक उद्वेग द्वारा अनुमानित होती है' के सिद्धान्त की आलोचना

(i) शैण्ड द्वारा आलोचना[2]

(अ) एक मूलप्रवृत्ति बिना किसी उद्वेग के उत्तेजित हुए हो सकती है; जैसे—एक चिड़िया नीड़ का निर्माण करती है या शिकार करती है, उस समय यह आवश्यक नहीं है कि एक विशिष्ट प्रकार का ही निश्चित उद्वेग उत्पन्न हो जैसा कि मैकडूगल का मत है।

(ब) एक मौलिक उद्वेग (primary emotion) कई मूलप्रवृत्तियों के क्रियात्मक स्वभावों से सम्बन्धित हो सकता है जबकि मैकडूगल का यह मत है कि प्रत्येक मूलप्रवृत्ति का एक विशिष्ट एवं पूर्व निश्चित मौलिक उद्वेग ही होता है।

---

1 "Take away these instinctive dispositions with their powerful impulses, and the organism would become incapable of activity of any kind ; it would be inert and motionless like a wounderful clock-work whose main spring had been removed or a steam engine whose fires had been drawn." *Ibid*, p. 38.

2 Shand, *Foundations of Character*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उदाहरणस्वरूप, जब भय (fear) का उद्वेग पैदा होता है। पलायन (flight) मूल-प्रवृत्ति का सहवर्ती उद्वेग भय (fear) है तो इसके कारण विभिन्न प्रकार का व्यवहार हो सकता है, न केवल पलायन। हम भाग सकते हैं, छिप सकते हैं, चुप रह सकते हैं, मूर्तिवत् खड़े रह सकते हैं, तीव्र स्वर में चिल्ला सकते हैं और पलायन भी कर सकते हैं।

(स) एक मूलप्रवृत्ति कई उद्वेगों को उत्तेजित कर सकती है जबकि मैकडूगल का कहना है कि मूलप्रवृत्ति एक विशिष्ट एवं निश्चित उद्वेग को ही उकसा सकती है। उदाहरणतः, चिड़ियों के उड़ने की मूलप्रवृत्ति न केवल भय के उद्वेग से सम्बन्धित है बल्कि क्रोध, प्रसन्नता या शारीरिक सुख के लिए भी चिड़िया उड़ती है

(ii) **गिन्सबर्ग द्वारा आलोचना**[1]

गिन्सबर्ग का मत है कि उद्वेग उस समय उत्तेजित होता है जब किसी प्रेरणा का अवरोध किया जाता है या देर की जा सकती है, अथवा अत्यधिक उत्तेजना हो जाती है जिसे कार्य सन्तुष्ट नहीं कर पाता। जब किसी मूलप्रवृत्ति का क्रियात्मक पहलू सन्तुष्ट हो जाता है तो उद्वेग अति न्यून स्तर पर होता है। मान लीजिए हम भाग रहे हैं और कोई भयानक पशु हमारा पीछा कर रहा है जब तक हम भाग रहे हैं, हमारे अन्दर कोई भय उत्पन्न नहीं हो रहा है। बीच में एक दीवार आ जाती है और हम भागना बन्द कर देते हैं उस समय हमारे अन्दर अत्यधिक भय उत्पन्न होता है। अतः उद्वेग मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार के सन्तुष्ट होने पर नहीं, वरन् जब उसमें बाधा उपस्थित होती है तब उत्पन्न होता है।

ड्रीवर और रीवर्स का भी यही मत है।

(iii) **डॉ. विलियम ब्राउन द्वारा आलोचना**

डॉ. विलियम ब्राउन ने भी गिन्सबर्ग का समर्थन करते हुए कहा है कि मैकडूगल ने स्वयं ही लिखा है कि एकाकीपन के उद्वेग की सहवर्ती मूलप्रवृत्ति सामाजिक है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि जब तक मनुष्य की दूसरों के साथ रहने की मूलप्रवृत्ति की सन्तुष्टि होती रहती है अर्थात जब तक वह दूसरे मनुष्यों के साथ रहता है तब उसे कोई उद्वेग अनुभव नहीं होता, परन्तु जब उसमें बाधा उपस्थित होती है अर्थात उसे दूसरे मनुष्यों से पृथक करके अकेले में रहने को परिस्थिति बाध्य करती हैं तब अकेलेपन का उद्वेग उत्तेजित होता है।

इसका अनुभव हम अपने दैनिक जीवन में करते हैं यदि मनुष्य को अकेले रखा जाय तो वह अकेलेपन का उद्वेग अनुभव करेगा और चूंकि समाज में रहना उसकी मूलप्रवृत्ति है अतः उसकी पूर्ति न होने पर उस उत्तेजना के कारण दुख होगा। इसी प्रकार हमें काम का उद्वेग उत्तेजित करता है, यदि हम मैथुन कर लेते हैं तो उद्वेग समाप्त हो जाता है और यदि उसमें बाधा उत्पन्न होती है तो यह उद्वेग उत्तेजित होता जाता है, यहाँ तर्क कि मनुष्य की बुद्धि भी भ्रष्ट कर देता है। इस प्रकार

1 M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, (1951), p. 9.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनेक उदाहरण दिये जाते हैं। जिनसे सिद्ध होता है कि उद्वेग उस समय उत्पन्न होता है जबकि मूल प्रवृत्ति के व्यवहार में बाधा उपस्थित होती है।

(iv) जयदेवसिंह द्वारा आलोचना[1]

जयदेवसिंह का मत है कि कुछ मूल प्रवृत्तियों क उद्वेगों को सरलता से पहचाना नहीं जा सकता।

(v) थाउलस द्वारा आलोचना

थाउलस का मत है कि उद्वेग प्राणी को अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार का व्यवहार करने का अवसर प्रदान करता है। उसने लिखा है, "उद्वेग वह प्रेरणा शक्ति है जो ज्ञानयुक्त अस्थिर व्यवहार की उसी प्रकार सेवा करती है जिस प्रकार स्वाभाविक मूलप्रवृत्तीय व्यवहार् अपरिवर्तनशील प्रतिक्रियाओं की आवश्यकताओं की सेवा करता है।"[2]

(3) मूलप्रवृत्ति को मानव-व्यवहार का आधार मानने वाले सिद्धान्त की आलोचना

(1) लॉयड मॉर्गन (Liyod Morgan) ने मैकडूगल के इस सिद्धान्त की आलोचना की है कि मूल प्रवृत्तियाँ मौलिक तत्त्व हैं और सारा मानव-व्यवहार इसी पर आधारित है। उसका कहना है कि यह विभिन्न व्यवहारों के स्वरूपों के वर्ग का नाम है न कि मौलिक तत्त्व है

(2) डॉ वुडवर्थ का कहना है कि हम जीवन की प्रत्येक रुचि के लिए विभिन्न मूलप्रवृत्तियों तक सीमित नहीं हैं। वास्तव में प्रत्येक मानव के गुण एवं शक्ति का आन्तरिक पहलू होता है। उन्होंने लिखा है, "संगीत की योग्यता के साथ संगीत में रुचि, सख्या के सम्बन्धों (गणित) को रखने के साथ-साथ संख्या में रुचि, यन्त्र कलाओं की योग्यता के साथ यन्त्रों में रुचि होती है। और इसी प्रकार यह रुचि सारी योग्यताओं में, जो सब लोगों में सामान्य रूप से पायी जाती है, होती है।"

वुडवर्थ ने मैकडूगल के सिद्धान्त की और भी आलोचना की है। हो सकता है कि मैकडूगल पशु-जगत के व्यवहार का आधार मूलप्रवृत्तियों को समझे, परन्तु मानव-व्यवहार में अनेकानेक नवीन लक्ष्य उत्पन्न होते रहते हैं और उन सबको मूलप्रवृत्तियों के आधार पर नहीं समझाया जा सकता। अतः मैकडूगल का कहना कि मानव-व्यवहार की प्रमुख चालक मूलप्रवृत्तियाँ हैं, स्वीकार नहीं किया जा सकता। मानव जीवन कहीं अधिक विस्तृत है। हमारे लिए संसार केवल इसलिए रुचिकर नहीं है कि वह हमें भोजन, घर और प्रमुख मूलप्रवृत्तियों की संतुष्टि प्रदान करता है बल्कि इसलिए भी कि हम में वह शक्ति पायी जाती है जिससे हम प्रवृत्ति को अपनी रुचि के अनुसार, अपनी इच्छाओं के अनुरूप बना लेते हैं।

---

1 Jaidev Singh, *A Manual of Social Psychology*. The City Book House, Kanpur, Second Edition (1951), p. 21.

2 R. H. Thouless, *General Social Psychology*, Second Edition, Reprinted (1944), p. 94.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) गिन्सबर्ग के मतानुसार मैकडूगल का यह विचार अनुचित है कि प्रा केवल मूलप्रवृत्तियों का जोड़ मात्र है। उनका कथन है कि यह निर्विवाद सत्य है मानव चरित्र वंशानुसंक्रमण (heredity) पर आधारित है। इसका आधार मू प्रवृत्तियों और उद्वेगों में पाया जाता है, पर वंशानुसंक्रमण की प्रवृत्तियाँ एकाकी में ही नहीं पनप सकतीं। अतः उसको ही आधार मान लेना सरासर भूल है।

मूलप्रवृत्तियाँ सदैव परिवर्तित होती रहती हैं। इसको हम युद्ध के उदाहरण समझ सकते हैं। युद्ध केवल मूलप्रवृत्ति के कारण नहीं होता, बल्कि युद्ध शक्ति अपने हाथ में रखने के लिए होता है। इसके द्वारा हम केवल मारने या नाश क की मूलप्रवृत्ति को ही पूरा नहीं करते, बल्कि बड़ी ही जटिल समस्याएँ एक युद्ध सम्मिलित रहती हैं और इसके कारणों का विश्लेषण केवल मूलप्रवृत्ति ही नहीं सकती, बल्कि अनेक कारण, जिनका नाश करने में मूलप्रवृत्ति से कोई भी सम्ब नहीं होता, युद्ध को जन्म देते हैं।

(4) हॉबहाउस का कथन है कि मानव-व्यवहार को निश्चित एवं निर्दे करने वाली केवल मूलप्रवृत्तियाँ ही नहीं होतीं, बल्कि सामाजिक परम्परा भी प्रमुख प्रभाव डालती है। हमारा कोई भी व्यवहार केवल शुद्ध मूलप्रवृत्तियों के का नहीं होता, क्योंकि मानव-व्यवहार निश्चित एवं विशिष्ट प्रकार का नहीं होता। उ अनेक परिवर्तन होते रहते हैं। उन्होंने इसका उदाहरण भूख और प्यास से दिया उन्होंने लिखा है, "भूख और प्यास निस्सन्देह मूलप्रवृत्तियों की प्रकृति की है, प भूख और प्यास को सन्तुष्ट करने की पद्धतियाँ अनुभव एवं शिक्षा द्वारा अपना जाती हैं।[1]

मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं और वंशानुसंक्रमण में पायी जाती हैं हॉबहाउस का कहना है कि बिना सामाजिक पर्यावरण के ये तत्त्व विकसित नहीं पाते, अतः इनको ही मानव-व्यवहार का आधार मानना किसी प्रकार भी उ नहीं है। उन्होंने लिखा है, "वंशानुसंक्रमण मनुष्य में क्षमता, सुप्रवृत्ति, प्रकृति परन्तु पारस्परिक संघर्ष एवं पर्यावरण के कारण क्षमताएँ पूर्ण होती हैं, सुप्रवृ उत्साहित या हतोत्साहित होती है, प्रकृति का विकास या विनाश होता है।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि मैकडूगल के मूलप्रवृत्तीय सिद्धान्त में अनेक पाये जाते हैं; परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं होता कि इस सिद्धान्त में कोई नहीं है।

कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि मूलप्रवृत्ति शब्द का प्रयोग नहीं क चाहिए। उन्होंने इसके लिए प्रेरणाएँ (drives) या प्रेरक शक्तियाँ (moti आदि शब्दों को प्रयोग करने का सुझाव दिया है।

---

1 L. T. Hobhouse, *Morals in Evolution*, p. 11.
2 L, T. Hobhouse, *Mind in Evolution*, p. 105.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूलप्रवृत्ति और सहज क्रिया
(Instinct and Reflex Action)

क्या मूलप्रवृत्ति सहज शृंखला है ?

हर्बर्ट स्पेन्सर तथा दूसरे यन्त्रवादी मनोवैज्ञानिकों (Mechanistic School) का मत है कि मूलप्रवृत्ति केवल सहज शृङ्खला मात्र है। यह मत अधिकांश मनोवैज्ञानिकों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है। अनेक तर्क यह सिद्ध करने के लिए दिये गये हैं कि मूलप्रवृत्ति सहज शृङ्खला (chain reflexes) नहीं है। उनमें से कुछ पर हम प्रकाश डालेंगे।

फ्रॉयड (Freud) का कथन है कि मूलप्रवृत्तियों का उद्गम स्थान आभ्यान्तरिक (internal) है न कि सहज (reflex) के समान किसी बाह्य उद्दीपक (external stimulus) से प्रारम्भ होता है। फिर सहज से भिन्न मूलप्रवृत्तियों को उत्तजन दीर्घकालीन तथा बहुत कुछ नित्य होता है। मूलप्रवृत्तियों के इन दो लक्षणों को भूख-प्यास की मूल प्रवृत्तियों से स्पष्ट किया जा सकता है। भूख-प्यास का आदि कारण आभ्यान्तरिक होता है और वह सहज से भिन्न होकर कुछ समय तक जागी रहता है।

फिर प्रत्यक मूलप्रवृत्ति में कारक बल (impetus), विषय-वस्तु (object) तथा उद्देश्य (end) पाया जाता है। कारक बल से तात्पर्य यह है कि मूलप्रवृत्ति के क्रियाशील होने पर पिण्ड स्नायु में गति होती है, जैसे शरीर में भूख लगने पर अनेक स्नायुओं का संचालन होता है ताकि भोजन प्राप्त हो सके, अर्थात् पैर चलना, हाथ से पकड़ना, लार का टपकना आदि। इसी प्रकार मूलप्रवृत्ति का यह फ्रॉयड का विश्लेषण मैकडूगल के सिद्धान्त से बहुत मिलता है, क्योंकि इसके अनुसार भी प्रत्येक मूलप्रवृत्ति में उद्वेग तथा कारक बल पाया जाता है।

थाउलस[1] के अनुसार सहज क्रिया और मूलप्रवृत्ति में दो प्रमुख अन्तर हैं। प्रथम, मूलप्रवृत्ति की पूर्ति अपने उद्देश्य की पूर्ति की प्रेरणा से निश्चित होती है और सहज क्रिया प्रतिगामी उत्तेजक द्वारा। हम चिड़ियों के घोंसला बनाने में मूलप्रवृत्तीय व्यवहार को ले सकते हैं। जब चिड़िया एक तिनका अपनी चोंच में दबाती है तो वही सहज क्रिया प्रदर्शित नहीं करती। वह कभी अपने शरीर के किसी अवयव को चलाती है तो कभी किसी को। उसकी गति किसी उत्तेजक द्वारा निश्चित नहीं होती, बल्कि घोंसला बनाने के उद्देश्य की प्रेरणा से होती है, जो उसकी जाति की प्रत्येक चिड़िया के लिए अनोखी होती है। उसे व्यवहार कहा जाता है। हो सकता है कि प्राणी प्रथम बार मूलप्रवृत्तीय व्यवहार को भूतकालीन उत्तेजक (past stimuli) के द्वारा मानता हो न कि उद्देश्य की प्रेरणा से।

थाउलस का दूसरा आरोप यह है कि एक प्रकार की उत्तेजना से एक ही

1 *Ibid.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार के व्यवहार की आशा की जाती है; परन्तु प्रत्यक्ष मानव-व्यवहार में ऐसा नहीं होता। मान लिया कि नालायक (idiot) शब्द की ध्वनि से सहज क्रिया आरम्भ होती है और इसके कारण दाहिना हाथ उठता है और कहने वाले के गाल पर थप्पड़ पड़ जाता है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि नालायक शब्द को ले जाने वाली धमनी अन्य शब्दों को ले जाने वाली धमनियों से पृथक है; परन्तु वास्तविक व्यवहार में इस प्रकार नहीं होता। इसी शब्द को सुनकर एक ही व्यक्ति विभिन्न प्रकार के व्यवहार विभिन्न समय एवं परिस्थितियों में कर सकता है।

मैकडूगल का मत है कि मूलप्रवृत्तियाँ मनःशारीरिक (psycho-physical) क्रियाएँ हैं, इनको केवल शारीरिक (physical) नहीं समझना चाहिए। सहज क्रिया केवल क्रियात्मक होती है; परन्तु मूलप्रवृत्तियाँ ज्ञानात्मक और उत्तेजनात्मक भी होती हैं। मूलप्रवृत्ति शारीरिक और मानसिक दोनों ही हैं। वे केवल शारीरिक नहीं हो सकतीं। यह ठीक है कि मूलप्रवृत्तियों का उद्गम स्थान शरीर के कुछ अंगों में रहता है, परन्तु इसका आधार मानसिक भी है। अतः मूलप्रवृत्ति की मनःशारीरिक प्रक्रिया के समान, ज्ञानात्मक, उत्तेजनात्मक और क्रियात्मक पहलुओं पर भी विचार करना होगा।

जयदेवसिंह का भी मत है कि मूलप्रवृत्ति में चेतन प्रक्रिया रहती है जो इसे सहज क्रिया से पृथक करती है। उनके विचार से "एक मूलप्रवृत्ति को सहज क्रिया कभी नहीं समझा जा सकता।"[1]

मूलप्रवृत्ति और सहज क्रिया में अन्तर
(Distinction Between Instinct and Reflex Action)

मूलप्रवृत्ति और सहज क्रिया में अनेक भेद हैं। उनमें से प्रमुख निम्न हैं:

मूलप्रवृत्ति	सहज क्रिया
(1) मूलप्रवृत्ति सम्पूर्ण परिस्थिति की प्रतिक्रिया होती है। उसकी उत्तेजना केवल एक क्रिया तक सीमित नहीं रहती, बल्कि उद्देश्य की पूर्ति तक रहती है।	(1) सहज क्रिया एक विशिष्ट उत्तेजना की प्रतिक्रिया के रूप में होती है।
(2) यह सम्पूर्ण प्राणी की प्रक्रिया है, अर्थात् इसमें शरीर का एक या एक से अधिक, कोई भी अवयव भाग लेता है जैसे चिड़ियों की घोंसला बनाने की मूलप्रवृत्ति। इस मूलप्रवृत्ति के कारण चिड़िया उड़ती है, तिनके उठाती है, पेड़ पर जमा करती है और गा-गाकर अपने घोंसले का निर्माण करती है।	(2) यह केवल स्थानीय प्रतिक्रिया होती है। जैसे कोई हमारी आँख की तरफ अंगुली लाता है तो आँख अपने आप बन्द हो जाती है। इसका शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं।

1 "An instinct can, therefore, be never mistaken for reflex activity." Jaidev Singh, *A Manual of Social Psychology*, The City Book House, Kanpur (1951), p. 13.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) इसमें अनेक क्रियाएँ असाधारण एवं जटिल प्रकार की होती हैं।	(3) उत्तेजना के प्रतिरूप केवल एक ही साधारण प्रतिक्रिया होती है और वह भी उचित और सरल ढंग की।
(4) इसमें उद्देश्य के अनुसार प्रतिक्रिया के विभिन्न भागों में अनेक परिवर्तन होते रहते हैं।	(4) यह अपरिवर्तनीय (stereotyped) क्रिया होती है।
(5) यह केवल दैहिक प्रतिक्रिया नहीं है, बल्कि यह इच्छा, प्रेरणा, भावना, चित्तवृत्ति आदि द्वारा निश्चित होती है।	(5) यह केवल शारीरिक प्रतिक्रिया है।
(6) यह उस समय तक समाप्त नहीं होती जब तक इच्छा या उद्देश्य पूरा नहीं होता।	(6) यह प्रतिक्रिया होकर समाप्त हो जाती है यदि दूसरी उत्तेजना प्राप्त न हो।
(7) यह प्रकृति में परिवर्तक होती	(7) यह प्रकृति में परिवर्तक नहीं होती।
(8) इसमें चेतन अवस्था पायी जाती है। ज्ञानात्मक और उत्तेजनात्मक दोनों ही मानसिक प्रक्रियाएँ पायी जाती हैं। मूलप्रवृत्ति और सहज क्रिया में सबसे बड़ा अन्तर यही है कि सहज क्रिया में मानसिक प्रक्रिया नहीं पायी जाती।	(8) इसमें कोई भी चेतन अवस्था नहीं होती, अर्थात् इसमें केवल क्रियात्मक प्रक्रिया ही होती है, मानसिक प्रक्रियाएँ नहीं होतीं।

मूलप्रवृत्तियों और आदतों में अन्तर
(Difference Between Instincts and Habits)

कुछ लोग मनुष्य के व्यवहार को मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार की संख्या देते हैं, ऐसा करना उचित नहीं है। आलपोर्ट का कहना है कि बिना सोचे-समझे सामान्यीकरण करना उचित नहीं है। कुछ क्रियाएँ परिस्थिति, अनुभव एवं शिक्षा के कारण धीरे-धीरे आदतों में परिणित हो जाती हैं, डनलप का भी मत है कि यद्यपि मूलप्रवृत्तियाँ आदतें डालने का आधार हैं फिर भी मूलप्रवृत्तियों और आदतों में अन्तर है। जेम्स ने आदतों को मनुष्य का दूसरा स्वभाव कहा है। जब हम किसी क्रिया को बार-बार करते हैं तो इन पुनरावृत्ति के फलस्वरूप हम भविष्य में उस क्रिया को अचेतन अवस्था में भी कर लेते हैं, इसे आदत कहते हैं।

मूलप्रवृत्तियों और आदतों में कई अन्तर हैं। मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात होती हैं परन्तु आदतें सीखी जाती हैं और इसलिए अर्जित होती हैं। मूलप्रवृत्तियाँ एक निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रेरणा देती हैं और क्रिया का मार्गदर्शन करती हैं। आदतें अपने अभ्यास के फलस्वरूप क्रियात्मक प्रेरणा का कार्य करती हैं। मैकडूगल के अनुसार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदतों में प्रेरणात्मक शक्ति नहीं है। कुछ लोगों का मत है कि मैकडूगल का विचार उचित नहीं है।

मूलप्रवृत्तियाँ सार्वभौमिक होती हैं और आदतें वैयक्तिक होती हैं। प्र व्यक्ति की अलग-अलग आदतें होती हैं। कभी-कभी समूह की भी आदतें होत जिन्हें हम जनरीति (folkways) कहते हैं। जनरीतियाँ भी उस विशिष्ट समूह ही होती है। यह आवश्यक नहीं है कि समूह की जनरीतियाँ समान ही हों। स्थानीय होती हैं। किसी समाज में एक प्रकार की आदतों को प्रोत्साहन दिया है तो दूसरे समाज में दूसरे प्रकार की आदतों को।

मूलप्रवृत्ति और बुद्धि का सम्बन्ध

(Relation Between Instinct and Intelligence)

कुछ विद्वानों का मत है कि मूलप्रवृत्ति और बुद्धि दो विपरीत शब्द हैं; प यह सत्य नहीं है। डॉ. मैकडूगल का कहना है, "यह मानकर कि सम्पूर्ण पशु व्य मूलप्रवृत्ति और बुद्धि दोनों के ही कारण होता है, हमें उस प्राचीन भूल का परि अवश्य कर देना चाहिए।"[1]

प्रो. स्टाउट का कहना है कि मूलप्रवृत्ति और बुद्धि प्रारम्भ से ही सह करती है। उनके अनुसार, "मूलप्रवृत्तीय व्यवहार, प्रारम्भ से ही जो कुछ भी मान क्रिया के योग्य पशु होता है, कार्य में लाता है।"[2]

कुछ लोगों का आरोप है कि मूलप्रवृत्तीय व्यवहार में पहले बुद्धि किस प्र से काम आ सकती है जबकि पशु आश्चर्यजनक व्यवहार प्रथम बार ही करता है उसे सीखने, अवलोकन करने या अनुभव करने का कोई अवसर प्राप्त नहीं हो गिन्सबर्ग का कहना है कि मूलप्रवृत्ति अनुभव से स्वतन्त्र एवं जन्म से ही होती है।

कुछ विद्वानों का मत है कि बुद्धि मूलप्रवृत्तियों के क्षेत्र में विकास पाती है जैसे-जैसे विकास होता जाता है वैसे-वैसे बुद्धि प्रबल शक्ति बन जाती है और वर्तनशील मूलप्रवृत्तीय व्यवहारों को लोचदार बनाती है।

मानव-व्यवहार मे मूलप्रवृत्ति और बुद्धि दोनों का सन्तुलन सदैव चलता है। यदि हम अपने दैनिक जीवन के व्यवहारों का अवलोकन करें तो ज्ञात हो कई बार हमारे अन्दर विचित्र प्रकार की उत्तेजनाएँ (जो मूलप्रवृत्तियाँ के कारण हैं) उत्पन्न होती हैं, परन्तु हम अपनी बुद्धि द्वारा उन्हें सन्तुलित करते हुए, उन में परिवर्तित कर देते हैं जो समाज द्वारा मान्य होते हैं। उनका कहना है कि प्रवृत्ति और बुद्धि दोनों एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं।

मेरे विचार से यह विवाद बुद्धि शब्द के विभिन्न अर्थों के कारण है, न कि के आधार पर। दोनों ही पूर्णतया स्पष्ट हैं। यदि बुद्धि से हमारा तात्पर्य मा

---

1 W. McDougall, *The Energies of Men*, p. 32.
2 G. F. Stou , *A Manual of Psychology*, p. 336.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समता या मानसिक अवस्था से है तो वह प्रत्येक पशु में एवं उसके मूलप्रवृत्तीय व्यवहार में पायी जाती है। यदि बुद्धि से हमारा तात्पर्य उन अपनायी हुई प्रवृत्तियों से है जो प्रत्यक्ष या परोक्ष शिक्षा द्वारा प्राप्त की जाती हैं तो बुद्धि प्रथम मूलप्रवृत्तीय व्यवहार में नहीं पायी जाती। यद्यपि यह सिद्ध करना उच्च श्रेणी के पशुओं के व्यवहार के उदाहरण पे कठिन है और विशेषतया मनुष्य के जटिल व्यवहारों के कारण तो सम्भव नहीं है, तथापि हम वह प्रश्न दोहरा सकते हैं कि तितली के कीड़े (cerambyx) का मूलप्रवृत्ताय व्यवहार किस प्रकार से समझाया जा सकता है। यदि बुद्धि शब्द का अर्थ एक ही लिया जाय तो विवाद समाप्त हो सकता है।

बुद्धि की अनेक परिभाषाएँ करने का प्रयत्न किया गया है। थाउलस ने लिखा है, "मूलप्रवृत्तीय प्रतिक्रिया का अनुकूलन ही बुद्धि है।"[1]

निस्सन्देह मूलप्रवृत्ति और बुद्धि एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। इतना होते हुए भी इन दोनों में कुछ स्पष्ट अन्तर पाये जाते हैं जिनके आधार पर हम एक-दूसरे को यद्यपि एकदम पृथक तो नहीं कर सकते, फिर भी इन्हें पहचान सकते हैं।

मूलप्रवृत्ति और बुद्धि में निम्न अन्त अन्तर पाये जाते हैं :

मूलप्रवृत्ति	बुद्धि
(1) मूलप्रवृत्ति जन्म स पूण होती है।	(1) बुद्धि जन्म से पूर्ण नही होती। यह अवस्था के साथ-साथ बढ़ती जाती है और पूर्णता तक कभी नहीं पहुँचती।
(2) यह अनुभवरहित होती है।	(2) यह अनुभव एवं अवलोकन द्वारा सीखी जाती है।
(3) इसमें भावी ज्ञान नहीं होता, यद्यपि उपदेश पाया जाता है।	(3) इसमें भावी ज्ञान उद्देश्य के लिए होता है।
(4) मूलप्रवृत्तीय व्यवहार में क्रमशः विभिन्न अवस्थाओं में निश्चित रीति के अनुसार व्यवहार होता है और परिवर्तन अति न्यून सीमा में होता है।	(4) इसमें विभिन्न अवस्थाओं में विभिन्न प्रकार का व्यवहार हो सकता है। वह कभी पूर्व निश्चित नहीं रहता, बल्कि परिस्थिति के अनुसार लक्ष्य को दृष्टि में रखकर परिवर्तित होता है।
(5) मूलप्रवृत्तीय व्यवहार की सामान्य प्रथानुसार साधारण घटनाक्रम में यदि कोई बाधा उपस्थित हो जाय तो सम्पूर्ण क्रिया समाप्त हो जाती है।	(5) इसमें ऐसा नहीं होता। यदि उद्देश्य की प्राप्ति में एक उपाय असफल होता है तो दूसरे उपाय अपना लिये जाते हैं।
(6) मूलप्रवृत्तीय व्यवहार की पद्धतियाँ अपवर्तनशील एवं यन्त्रवत् होती हैं।	(6) इसकी पद्धतियाँ अधिक अनुकूलन करने के योग्य एवं परिवर्तनशील होती हैं।

[1] "Adaptability of instinctive response is intelligence." R. H. Thouless, *General and Social Psychology*, Second Edition, Reprinted (1944), p. 49.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूलप्रवृत्तियाँ और उद्वेग
(Instincts and Emotions)

मूलप्रवृत्तियों और उद्वेगों में अनेक प्रकार की समानता है। मूलप्रवृत्तियाँ और उद्वेग दोनों ही सार्वभौमिक होते हैं। मूलप्रवृत्तियाँ और संवेग दोनों ही सम्पूर्ण शरीर की प्रतिक्रिया होते हैं, न कि किसी एक विशेष इद्रिय की मूलप्रवृत्तियों के समान। उद्वेगों का भी एक निश्चित ध्येय होता है।

मूलप्रवृत्ति और उद्वेग में कुछ महत्त्वपूर्ण अन्तर भी पाये जाते हैं। मूलप्रवृत्ति के व्यवहार की उत्तजना आन्तरिक होती है। उद्वेग के व्यवहार की उत्तेजना बाह्य होती है। उद्वेगात्मक व्यवहार की उत्तेजना सामाजिक पर्यावरण पर आधारित रहती है। सामाजिक पर्यावरण उद्वेगों की दिशा, स्वभाव, स्वरूप तथा सीमा को निर्धारित करता है।

प्रश्न

1. मूलप्रवृत्ति, अभिवृत्ति तथा स्थायीभाव में स्पष्ट भेद कीजिए। व्यक्ति के व्यवहार को ये कैसे प्रभावित करते हैं ?

(Distinguish clearly between instinct, attitude and sentiment. How far do they effect individual's behaviour ? Agra, M. A. Sociology, 1960)

2. सहज क्रिया, मूलप्रवृत्ति तथा आदतों में स्पष्ट भेद कीजिये और प्रत्येक के उदाहरण दीजिए।

(Draw a clear distinction between reflexes, instincts and habits with examples of each. Agra, M.A. Sociology, 1953, 1967)

3. मैकडूगल के मूलप्रवृत्तियों एवं उद्वेगों के सिद्धान्त का संक्षिप्त विवरण दीजिए। उसकी पूर्णता की विवेचना कीजिए।

(Give a brief account of McDouall's theory of instincts and emotions. Discuss its adequacy. Agra, M.A. Sociology, 1956, 19...

4. टिप्पणी लिखिए : सहज क्रिया, ट्रॉपिज्म, मूलप्रवृत्ति, उद्वेग।

(Write short notes on : Reflex Action, Tropism, Instinct, Emotions. Rajasthan. 1960)

5. आप मूलप्रवृत्तियों से क्या समझते हैं ? ऐसी दो मूलप्रवृत्तियों के उदाहरण देकर पूर्णरूप से समझाइए।

(What do you understand by 'instincts' ? Describe fully ... such instincts. Rajasthan, M.A., 1959)

6. मूलप्रवृत्ति और बुद्धि में क्या अन्तर है ?

(What is the relation between instinct and intelligence ?)

7. मूलप्रवृत्तियों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write a short note on instincts. Agra M.A. Sociology, 19... 1967, 1969)

8. मूलप्रवृत्ति की परिभाषा कीजिए। इसकी मुख्य विशेषताओं का विवेचन कीजिए।

(Define instinct. Discuss its chief characteristics. Agra. M.A. Sociology, 1970)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

9

सुझाव, अनुकरण तथा सहानुभूति
(Suggestion, Imitation and Sympathy)

सुझाव, अनुकरण तथा सहानुभूति को मैकडूगल ने अविशिष्ट (non-specific) मूलप्रवृत्तियाँ कहा है और इनको मनुष्य के व्यवहार में अत्यधिक महत्वपूर्ण माना है। अब हम इन तीनों पर क्रमश: विचार करेंगे। इनका अर्थ समझने के उपरान्त अगले अध्यायों में, इनका सामाजिक जीवन में क्या कार्य एवं महत्त्व है, पर विचार करेंगे।

सुझाव का अर्थ
(Meaning of Suggestion)

सुझाव शब्द से हम साधारण भाषा में किसी ऐसे विचार या भाव को समझते हैं जो किसी दूसरे के द्वारा दिया जाता है, परन्तु सामाजिक मनोविज्ञान में इस शब्द का अर्थ इससे कहीं अधिक विस्तृत एवं जटिल है। इसका अर्थ समझने के लिए कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिकों ने निम्न परिभाषाएँ दी हैं :

मैकडूगल : "सुझाव एक सन्देशवाहन की प्रक्रिया है जो अतार्किक आधार पर होते हुए भी विश्वास के साथ स्वीकार कर ली जाती है।"[1] सुझाव को मैकडूगल ने संदेशवाहन की एक प्रक्रिया माना है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को संदेश देता है और दूसरा व्यक्ति बिना सोचे-विचारे या तर्क किये उसे विश्वास के साथ स्वीकार कर लेता है। सुझाव का कोई तार्किक आधार नहीं होता है, उसे यूं ही बिना सोचे-विचारे स्वीकार कर लिया जाता है और विश्वास कर लिया जाता है।

किम्बाल यंग : "सुझाव एक प्रकार का सन्देशवाहन का लक्षण है जो शब्दों, चित्रों या किसी दूसरे माध्यम द्वारा अस्पष्ट एवं अतार्किक आधार पर होते हुए भी उस बात को स्वीकार करने के लिए उद्यत करता है।"[2] किम्बाल यंग ने भी मैकडूगल की ही भाँति सुझाव को संदेशवाहन का एक लक्षण या प्रक्रिया कहा है, जिसका कोई तार्किक आधार नहीं होता है, फिर भी उसे विश्वास के साथ स्वीकार कर लिया जाता है। सुझाव संदेशवाहन के किसी भी माध्यम—शब्दों, चित्रों, संकेतों आदि के द्वारा दिया जा सकता है।

---

1. W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 83.
2. K. Young, *Handbook of Social Psychology*, Routledge and Kegan Paul, London, Fifth Imperssion (1953), p. 110.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थाउलस : "सुझाव शब्द से साधारणतया वह प्रक्रिया समझी जाती है जिसके द्वारा एक प्रकार के विचार एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को प्रकट एवं प्रदान किये जाते हैं और इस क्रिया का विवेकशील अनुनय (Persuasion) से कोई सम्बन्ध नहीं होता।"[1] थाउलस ने सुझाव को वह प्रक्रिया माना है जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को विचार प्रदान करता है और दूसरा व्यक्ति बिना सोचे-विचारे उस विचार को स्वीकार कर लेता है। सुझाव की प्रक्रिया को विवेक या तर्क से कोई सम्बन्ध नहीं होता है।

सुझाव एक प्रकार की प्रक्रिया है जिसके कारण बिना सोचे-समझे अतार्किक विचारों को भी स्वीकार कर लिया जाता है।

सुझाव की ऊपर दी हुई परिभाषाओं के अनुसार सुझाव को एक प्रक्रिया मानते हैं, जिसमें तीन कार्य हैं। सुझाव के द्वारा एक उत्तेजना मिलती है और व्यक्ति सुझाव ग्राह्यता (suggestibility) के कारण बिना सोचे-समझे उनको मान लेता है। चार्ल्स बर्ड के अनुसार सुझाव इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में केवल उत्तेजना के अंग मात्र को परिलक्षित करता है। उन्होंने लिखा है, "सामान्यतया मनोवैज्ञानिकों में सुझाव सम्पूर्ण प्रक्रिया के उत्तेजना के पहलू का बोध कराता है।"[2]

सुझाव की परिभाषा करते हुए उन्होंने इसे और भी स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। उन्होंने लिखा है, सब सुझाव सम्पूर्ण स्थितियों के पक्ष में हैं या उत्तेजनाओं के ऐसे प्रतिमान हैं जिन्होंने सीखने की क्रिया द्वारा उन प्रतिक्रियाओं के पुनर्स्थापन में जो मौलिक रूप से उत्तेजना के सम्पूर्ण प्रतिमान से सम्बन्धित या प्राप्त की गई हैं, प्रभाव प्राप्त कर लिया है।[3]

सुझाव की प्रक्रिया
(Process of Suggestion)

इन परिभाषाओं से ज्ञात हुआ कि सुझाव एक प्रकार की मानसिक प्रक्रिया है जो विचार के प्राप्तकर्ताओं का अतार्किक, अवैज्ञानिक या सर्वसाधारण रीति से अस्वीकृत होते हुए भी स्वीकार करने को बाध्य करती है। अब हमें यह देखना है कि ऐसा क्यों होता है।

सुझाव की प्रक्रिया मस्तिष्क में आये हुए विचारों के लिए एक ऐसी भूमिका की रचना करती है जो तार्किक विश्लेषण की शक्ति को कम एवं समालोचक शक्ति को समाप्त कर देती है और सुझावकर्ता के लक्ष्य की प्राप्ति हो जाती है, अर्थात् सुझाव स्वीकार कर लिया जाता है। इससे स्पष्ट है कि सुझाव की प्रक्रिया मस्तिष्क की स्थिति पर निर्भर करती है। यदि यह स्थिति सुझाव के अनुकूल होती है तो सुझाव

1 R. H. Thouless, *General and Social Psychology*, University Tutorial Press London, Third Edition (1951), p. 247.
2 Charles Bird, *Social Psychology*, (1940), p. 258.
3 *Ibid*, p. 259.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तुरन्त स्वीकार कर लिया जाता है। अतः हमें उन परिस्थितियों एवं दशाओं पर विचार करना चाहिए जिनमें सुझाव तुरन्त स्वीकार कर लिया जाता है।

सुझावों का वर्गीकरण
(Froms of Suggestion)

सुझाव निम्न प्रकार के हो सकते हैं :

(1) भाव चालक सुझाव (ideo-motor suggestion),

(2) प्रतिष्ठा सुझाव (prestige suggestion),

(3) स्वतः सुझाव (auto suggestion),

(4) सामूहिक सुझाव (mass suggestion),

(5) प्रतिषेध सुझाव (contra suggestion)।

(1) **भाव चालक सुझाव** (Ideo-motor Suggestion)—यह सुझाव मस्तिष्क सम्बन्धी ज्ञान तन्तुओं (sensory nerves) में प्रारम्भ होता है। इस क्षेत्र बिनेट ने अनेक अवलोकन एवं परीक्षण किये हैं। यह सुझाव अचेतन अवस्था में होता है। अचेतन मस्तिष्क में यह जन्म लेकर हमारे ऊपर प्रभाव डालता है। उदाहरणस्वरूप, हम नृत्य देख रहे हैं। थोड़ी देर में नर्तकी के साथ-साथ हमारे पैर भी बैठे ही बैठे गति करने लगते हैं।

(2) **प्रतिष्ठा सुझाव** (Prestige Suggestion)—इसके विषय में हम काफी लिख चुके हैं। यहाँ पर यह समझ लेना पर्याप्त होगा कि इसका अत्यधिक प्रभाव होता है। पण्डित नेहरू कहीं भाषण देने जाते थे तो लाखों लोग एकत्रित हो जाते थे। जिस चल चित्र में नरगिस, मधुबाला, वैजयन्तीमाला, सुरैया, राजकपूर, दिलीपकुमार, अशोक कुमार इत्यादि प्रसिद्ध सिने कलाकार होते हैं वह बड़ी धूमधाम से चलता है।

इस्टाबुक ने लिखा है कि यह सुझाव "सब कुछ या कुछ नहीं" प्रकार का होता है।

(3) **स्वतः सुझाव** (Auto Suggestion)—इस प्रकार के सुझाव में व्यक्ति स्वयं अपने लिए सुझाव निर्दिष्ट करता है। इसमें उस व्यक्ति का मन उसे सुझाव देता है। इस प्रक्रिया को पार्ट करना कह सकते हैं।

(4) **सामूहिक सुझाव** (Mass Suggestion)—यह सुझाव समूह द्वारा दिया जाता है। इसमें व्यक्ति अनुभव करता है कि विशिष्ट कार्य जब समूह कर रहा है तो उस करने में क्या हानि है। वह अपनी शक्ति को बढ़ी हुई समझता है।

(5) **प्रतिषेध सुझाव** (Contra Suggestion)—जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है कि इसका प्रभाव उल्टा होता है। जो सुझाव दिया जाता है, सुझाव पाने वाला उसके विपरीत कार्य करता है। जब एक सुझाव अत्यधिक जोर देकर दिया जाता है तो इसका प्रभाव विपरीत होता है। एक बार एक न्यायाधीश ने ज्यूरी के सदस्यों को जो देकर कहा कि उन्हें अमुक प्रकार का निर्णय देना है। इसका फल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह हुआ कि उन्होंने उसके सुझाव के विपरीत निर्णय दिया। ऐसा कई बार होता है कि जब सुझाव देने वाला प्राप्तकर्ता की प्रतिष्ठा की चिन्ता न करते हुए आज्ञाकारी रूप में सुझाव देता है तो उसका विपरीत प्रभाव होता है।

सुझाव के स्वरूप
(Classification of Suggestions)

सुझाव को निम्न वर्गों में बाँटा जा सकता है :

(1) प्रत्यक्ष सुझाव (direct suggestion),
(2) परोक्ष सुझाव (indirect suggestion),
(3) सकारात्मक सुझाव (positive suggestion),
(4) नकारात्मक सुझाव (negative suggestion)।

(1) **प्रत्यक्ष सुझाव** (Direct Suggestion)—प्रत्यक्ष सुझाव उस को कहते हैं जिसमें स्पष्ट रूप से लक्ष्य को व्यक्त कर दिया जाता है। इस प्रकार के सुझाव व्यापारिक विज्ञापनों में पाये जाते हैं।

(2) **परोक्ष सुझाव** (Indirect Suggestion)—परोक्ष सुझाव जिसमें लक्ष्य स्पष्ट नहीं किया जाता, बल्कि लक्ष्य की भूमिका का निर्माण होता है। उदाहरणस्वरूप, चुनाव के दिनों में लोगों को यह सुझाव दिया जाता उम्मीदवार में अमुक गुण होने चाहिए। इससे लक्ष्य स्पष्ट नहीं होता। उम्मीदवार का नाम बताया जाता है और यह भी कहा जाता है कि वह गुणों वाला व्यक्ति है।

(3) **सकारात्मक सुझाव** (Positive Suggestion)—सकारात्मक वे सुझाव हैं जो किसी कार्य को करने के लिए प्रेरणा देते हैं।

(4) **नकारात्मक सुझाव** (Negative Suggestion) नकारात्मक वे सुझाव हैं जो किसी कार्य को न करने के उद्देश्य से दिये जाते हैं; जैसे—पालिका या विकास बोर्ड के 'पानी बचाओ आन्दोलन' में वे सुझाव देते हैं 'जल नष्ट न कीजिए।'

प्रभावपूर्ण सुझाव के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ

(1) **बार-बार दोहराना** (Repetition)—बार-बार जब किसी विचार की पुनरावृत्ति होती है तो वह शीघ्र स्वीकार कर लिया जाता है। हिटलर ने कहा था "एक झूठ को बार-बार दोहराया जाय तो वह सत्य प्रतीत होता है।"[1]

इसके अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। चुनावों के समय में संकेतपट (signboards) एवं विज्ञापन पत्र लगाये जाते हैं और उनके द्वारा दिया जाता है कि 'अ को वोट दो।' इसके कारण हमारा मस्तिष्क उस स्थिति

1 "If a lie is repeated very often, it appears to be true." quoted by K. Young, *Handbook of Social Psychology.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाता है और जब हमें चुनाव स्थान पर कोई व्यक्ति यह सुझाव देता है कि 'अ' को वोट दो तब हम बिना सोचे-समझे इसे स्वीकार कर लेते हैं।

इसी प्रकार के सुझाव पुनरावृत्ति करते हुए विज्ञापनों में दिये जाते है। जैसे हिन्दुस्तान के चाय बोर्ड ने अनेक स्थानों पर लिख रखा है, 'यह शख्स और इसका भाई पीता है हमेशा चाय', 'चाय पीयो बहुत दिन जीयो' इत्यादि।

(2) **विश्वासपूर्ण स्वर का प्रयोग (Confident Tone)**—सुझाव देते समय एक विश्वासपूर्ण स्वर का प्रयोग करना चाहिए जिससे यह दिखायी पड़े कि कहने वाला सम्पूर्ण विश्वास उस विचार में रखता है।

(3) **सुझाव देने वाले की प्रतिष्ठा (Prestige of Suggestor)**—सुझाव इस बात पर भी आधारित होता है कि वह किसके द्वारा दिया जा रहा है। सुझाव देने वाले की प्रतिष्ठा भी जितनी उच्च होगी उतनी ही शीघ्रता से सुझाव स्वीकार किया जायेगा। मान लीजिए इन्दिरागांधी आज कोई सुझाव दें, सब उसको तुरन्त स्वीकार कर लेंगे। इसी प्रकार हम अपने दैनिक जीवन में देखते हैं कि जब कोई सुझाव दिया जाता है तो उसके पीछे किसी न किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति की शक्ति लगा दी जाती है। वाद-विवाद में भी लोग इसका सहारा लेते हैं। अरस्तू, प्लेटो, मनु इत्यादि के नाम तुरन्त, इनकी जिह्वा तक आ जाते हैं। आजकल हम प्रत्येक नेता के भाषण में सुनते हैं कि गांधीजी, पूज्य बापू ऐसा चाहते थे। इसका एक बड़ा ही मनोरंजक उदाहरण इस प्रकार है : एक रसायनशास्त्र के प्राध्यापक ने अपने श्रोताओं से कहा कि जो बोतल वे उसके हाथ में देख रहे हैं, उसके अन्दर एक अत्यधिक तीव्र एवं तीक्ष्ण सुगन्ध वाला रसायन है। वह देखना चाहता है कि गन्ध कितनी देर में फैलती है। उसने प्रार्थना की कि जैसे गन्ध आप तक पहुँचे, आप हाथ खड़ा कर दें। उसने अपना चेहरा एक तरफ करते हुए उस तरल पदार्थ को रूई पर डाला और विराम-घड़ी (stop watch) को देखने लगा। 15 सैकण्ड में पहली पंक्ति के लोगों ने हाथ खड़े कर दिये और 45 सैकण्ड में सारे श्रोताओं ने अपने हाथ खड़े कर दिये। जिसका अभिप्राय यह था कि गन्ध को उन्होंने सूँघ लिया है; परन्तु बोतल में कोई विशिष्ट तरल पदार्थ न होकर शुद्ध जल था।

इस प्रक्रिया को सबसे अधिक आश्चर्यचकित अवस्था में हम वशीकरण विद्या (hypnotism) में पाते हैं। जादूगर अपने तमाशा देखने वालों को वशीभूत कर लेता है और फिर वह जो भी सुझाव देता है उनको लोग स्वीकार कर लेते हैं।

(4) **मस्तिष्क की व्यवस्था की प्रतिकूल क्रियाएँ (Abnormal States of the Brain)**—सुझाव मस्तिष्क की अवस्था की प्रतिकूल व्यवस्थाओं में अत्यधिक सफल रूप से कार्य करता है। इसके अन्तर्गत हम निम्न बातों को ले सकते हैं :

(अ) मानसिक बीमारियाँ, जैसे वात रोग या वातोन्माद (hysteria), चित्त विकृतियाँ (neurosis), मनो-विकृतियाँ (psychosis) इत्यादि।

(ब) जब लोग थके हुए हों तो उनसे किसी प्रकार की भी बातें स्वीकार करायी जा सकती हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(स) मदिरा एवं अन्य मादक वस्तुओं के प्रभाव में।

(द) लघु अवस्था में।

(य) भावावेश में।

(5) **ज्ञान की कमी** (Lack of Knowledge)—जिन लोगों में ज्ञान की कमी पायी जाती है वे सुझाव शीघ्रता से स्वीकार कर लेते हैं।

(6) **बाह्य परिस्थितियाँ** (External Conditions) सुझाव को स्वीकार कराने में बाह्य परिस्थितियाँ भी सहायता करती हैं; जैसे—अत्यधिक रोशनी, सजावट, धूमधाम, गाने-बजाने और विशिष्ट प्रकार की व्यवस्थाएँ इत्यादि।

(7) **परिस्थितियों के अनुकूल सुझाव का होना** (Suggestion Favourable to Situation)—जब सुझाव परिस्थितियों के अनुकूल होता है तो शीघ्र स्वीकार कर लिया जाता है। जैसे साम्यवादी समझाने के लिए कहते हैं कि साम्यवाद पूंजीपतियों को समाप्त करेगा और अन्न एवं वस्त्र सबको दिलायेगा। यह परिस्थितियों के अनुकूल है। यही कारण है कि साम्यवाद दरिद्र देशों में सरलता से फैल जाता है।

(8) **जटिल समस्याओं के सम्बन्ध में** (Regarding Complex Problems)—यदि समस्याएँ जटिल होती हैं और उनके सम्बन्ध में कोई सुझाव दिया जाता है तो वह शीघ्र स्वीकार कर लिया जाता है। इसका कारण स्पष्ट है कि वे उन बातों को समझ ही नहीं पाते, जैसा कि हम दैनिक जीवन में लोगों को यह कहते हुए पाते हैं कि ईश्वर ऐसा करता है, उसकी इच्छा इत्यादि।

(9) **अन्य विश्वासों के अनुरूप होना** (To be Alike Other Beliefs)—सुझाव वह शीघ्र स्वीकार किया जाता है जो व्यक्तियों के अन्य विश्वास के अनुरूप होता है। शेष विश्वास इसीलिए आधार बन जाते हैं।

(10) **प्रकृति एवं चरित्र की असमानताएँ** (Dissimilarities of Nature and Character)—सुझावों को स्वीकार करने में व्यक्ति की प्रकृति भी महत्वपूर्ण भाग लेती है। यदि किसी की प्रकृति दूसरों की बात मानने वाली है या उसका स्वभाव है तो सुझाव ही स्वीकार कर लिया जायगा। यह व्यक्तियों के चरित्र पर आधारित है। कुछ लोग प्रत्येक कार्य समझकर करते हैं, अतः उनसे यह आशा नहीं की जा सकती कि बिना सोचे-समझे वे किसी बात को स्वीकार कर लेंगे।

सुझावग्राह्यता
(Suggestibility)

सुझावग्राह्यता वह पक्ष है जो सुझाव के आन्तरिक पहलू से सम्बन्धित है। सुझावग्राह्यता से हमारा अभिप्राय व्यक्ति की तत्परता (readiness) या उत्सुकता से है जिसके कारण वह सुझाव ग्रहण करने को तत्पर हो जाता है। व्यक्ति की यह तत्परता उसके अनेक आन्तरिक तत्त्वों पर आधारित होती है। यह मानसिक पक्ष है और व्यक्तित्व का एक प्रमुख अंग है। सुझावग्राह्यता व्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्दर भी तत्पर रहती है। लॉज[1] ने इस विषय में एक प्रयोग किया है। उन्होंने अपने विद्यार्थियों को ताँबे का एक तार पकड़ने को कहा। पहली बार उन्होंने उसमें करेण्ट छोड़ा और तार कुछ देर बाद गर्म हो गया है। जब विद्यार्थियों से उन्होंने पूछा तो इन्होंने तार की गर्मी बतायी। बाद में उन्होंने तार विद्यार्थियों को फिर पकड़ाया और कहा कि जब तार गर्म हो जाय तो विद्यार्थी बताएँ। इस बार उन्होंने करेण्ट नहीं छोड़ा और तार गर्म भी नहीं हुआ, परन्तु विद्यार्थियों ने थोड़ी देर बाद कहा कि तार गर्म हो गया है। यह सुझावग्राह्यता के कारण हुआ।

सुझावग्राह्यता का वर्गीकरण
(Classification of Suggestibility)

सुझावग्राह्यता के निम्न दो भाग हैं :

(1) वैयक्तिक सुझावग्राह्यता (individual suggestibility),
(2) परिस्थितिक सुझावग्राह्यता (conditional suggestibility)।

(1) वैयक्तिक सुझावग्राह्यता (Individual Suggestibility)—प्रायः सुझावग्राह्यता प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न-भिन्न अंशों में पायी जाती है। एक ही सुझाव का प्रभाव व्यक्ति-व्यक्ति पर भिन्न होता है। किसी व्यक्ति पर प्रभाव अधिक पड़ता है और किसी पर कम। ऐसा कहा जाता है कि बालकों और वृद्धों में सुझावग्राह्यता अधिक पायी जाती है। बालक और वृद्ध सुझावों को बहुत जल्दी मान लेते हैं। ऐसा भी कहा जाता है कि स्त्रियाँ भी अत्यधिक सुझाव मान लेती हैं, इसलिए उनमें भी सुझावग्राह्यता अधिक पायी जाती हैं। बहिर्मुखी (extroverts) व्यक्तित्व वाले व्यक्ति भी अन्तर्मुखी (introverts) व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों की अपेक्षा सुझाव सरलता से स्वीकार कर लेते हैं। व्यक्ति-व्यक्ति में सुझावग्राह्यता के अन्तर का कारण उनकी आयु, लिंगभेद, बौद्धिक योग्यता, अज्ञानता और शारीरिक एवं मानसिक परिस्थितियाँ होती हैं।

(2) परिस्थितिक सुझावग्राह्यता (Conditional Suggestibility)—यह सुझावग्राह्यता व्यक्ति की शारीरिक अवस्था एवं मानसिक स्थिति पर आधारित होती है। चित्तवृत्ति का भी इसमें बहुत बड़ा हाथ होता है। लोगों में सम्मोहन (hypnotism) कारण से भी सुझावग्राह्यता बढ़ जाती है। मादक वस्तुओं के सेवन या थकावट से भी इसमें वृद्धि होती है। प्रायः देखा गया है कि लोग मीटिंगों (meetings) में शुरू-शुरू में बहुत नुक्ताचीनी करते हैं; परन्तु थक जाने के उपरान्त प्रत्येक बात शीघ्र स्वीकार कर लेते हैं। इसलिए कुछ चतुर अधिकारी मीटिंग में शुरू में ऐसे मसले रखते हैं जिनमें उनका कोई स्वार्थ न हो, और बाद को ऐसे प्रस्ताव रखते हैं जिनमें उनका स्वार्थ होता है। लोग थके होने के कारण शीघ्र सुझाव स्वीकार कर लेते हैं। इस प्रकार उन्हें अधिक कठिनाई नहीं उठानी पड़ती। हिटलर भी

---

[1] J. H. Lodge, *The Illusion of Warmth Test for Suggestibility*, Forum Educational (1926), pp. 180-86.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधिकतर सभाएँ रात्रि को करता था जिससे उसके सुझाव थकावट के कारण स से स्वीकार कर लिए जायँ। सुझावग्राह्यता की और भी परिस्थितियाँ होती हैं जि कारण व्यक्ति शीघ्र सुझाव ग्रहण करता है। जो व्यक्ति सुझाव देता है उ प्रतिष्ठा पर भी सुझावग्राह्यता आधारित रहती है। कुछ लोगों का मत है कि भोजन के बाद या किसी सफलता के उपरान्त भी व्यक्ति शीघ्र सुझावग्रहण क है। सुझावग्राह्यता मानव की वह स्थिति है जिसमें वह मस्तिष्क का लापरवा प्रयोग करता है।

सुझावग्राह्यता और सुझाव में अन्तर

साधारणतया मनोवैज्ञानिक सुझाव और सुझावग्राह्यता में कोई अन्तर मानते, परन्तु कुछ दोनों में अन्तर मानते हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "सुझाव उत्तेजक माना जा सकता है और सुझावग्राह्यता वह आन्तरिक पहलू है जो सम्बन्धित है।"[1] कई विद्वानों ने सुझावग्राह्यता को आन्तरिक मानसिक क्रिया क है जो मस्तिष्क को ऐसा बना देती हैं कि वह शीघ्र सुझाव स्वीकार कर ले। सु तथा सुझावग्राह्यता एक ही मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के दो पहलू हैं—भाव-पक्ष (sub tive side) और वस्तु-पक्ष या बाह्य-पक्ष (objective side)। सुझाव वैज्ञानिक प्रक्रिया के वस्तु-पक्ष या बाह्य-पक्ष की ओर संकेत करता है और जिस एक सुझाव एक व्यक्ति विशेष को स्वीकार होता है या ग्राह्य होता है, वह उसका पक्ष होता है जिसे सुझावग्राह्यता कहते हैं। अतः सुझावग्राह्यता उस व्यक्ति की सिक दशा या अवस्था है जिसके आधार पर वह एक विशेष सुझाव प्रभावि होता है।

कुछ विद्वानों ने सुझाव के विषय में दो सिद्धान्त बताये हैं। (1) एक क्रिया प्रकार की उत्तेजना के प्रति प्रतिक्रिया जो दूसरी प्रतिक्रियाओं से स्वभाव में होती है, पायी जाती है और इन विशेष प्रकार की प्रतिक्रियाओं को सुझाव का दिया जाता है। (2) व्यक्ति इन विशिष्ट प्रकार की प्रतिक्रियाओं के करने में भिन्न शक्ति रखते हैं और इन व्यक्तिगत भिन्नताओं के कारण व्यक्तित्व के आध लक्षण हैं, इन लक्षणों को सुझावग्राह्यता का नाम दिया गया है।

ये दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। कोई व्यक्ति एक सुझाव को क्यों स्वी करता है? इसका उत्तर यह है कि उसमें सुझावग्राह्यता पायी जाती है और यदि प्रश्न किया जाता है कि किसी व्यक्ति में सुझावग्राह्यता क्यों पायी जाती है? उत्तर यह दिया जाता है कि वह प्रारम्भ से ही सुझावों को स्वीकार करता आ अतः उसके अन्दर सुझावग्राह्यता का विकास हो गया है। अतः स्पष्ट है कि धारणा दूसरी पर और दूसरी पहली पर अवलम्बित है।

---

1 "Suggestion may be considered the stimulus and suggesti the internal phase related thereto." Kimbal Young; *A T book of Social Psychology*, Routledge and Kegan Paul London, Fifth impression., (1953), p. 110.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुझावग्राह्यता-लब्धि
(Coefficient of Suggestibility)

सुझावग्राह्यता-लब्धि निकालने का सूत्र निम्न है :

$$\text{सुझावग्राह्यता-लब्धि (Coefficient of suggestibility)} = \frac{\text{स्वीकार किये गए सुझावों की संख्या (No. of suggestions Accepted)}}{\text{दिये हुए सुझावों की संख्या (No. of suggestions given)}}$$

जितने सुझाव दिये जाते हैं उनकी संख्या नोट करली जाती है। उनमें से कितने सुझाव स्वीकार किये गये उनकी संख्या निकाली जाती है। स्वीकार किये गये सुझावों की संख्या को दिये गये सुझावों से भाग दे दिया जाता है, जो भागफल आता है, वह सुझावग्राह्यता-लब्धि होता है। मान लीजिए 16 सुझाव दिए गये और 10 स्वीकार हुए, तो

$$\text{सुझावग्राह्यता-लब्धि} = \frac{10}{16} = \cdot 625$$

सुझावग्राह्यता-लब्धि प्राय: प्रतिशत में दी जाती है।

अनुकरण
(Imitation)

अनुकरण शब्द का प्रयोग बिना किसी रोकथाम के हुआ है। इसको इन कार्यों के अनुकरण में प्रयोग किया गया है; जैसे जब दूसरे जम्हाई लेते हैं तो जम्हाई लेना, जब दूसरे दौड़ते हैं तब दौड़ना, मातृभाषा को सीख जाना या समाज के अनुरूप व्यवहार करना। कहने का तात्पर्य है कि वे सारे कार्य, जो चेतनावस्था या अचेतनावस्था में किये जाते हैं, इसके अन्तर्गत आ जाते हैं। बेगहॉट और टार्डे ने तो वह सब कुछ अनुकरण के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिया है जिसे सांस्कृतिक मानवशास्त्र में प्रसरण (diffusion) कहते हैं। बाल्डविन ने तो सारी ही साधारण एवं जटिल सीखने की प्रक्रियाओं को अनुकरण के अन्तर्गत माना है। टार्डे अनुकरण के अन्तर्गत सुझाव और सहानुभूति को भी मानते हैं। यद्यपि इन परिस्थितियों में इसकी परिभाषाएँ करना कठिन है, फिर भी विद्वानों ने निम्न परिभाषा की हैं :

थाउलस : "अनुकरण एक प्रतिक्रिया है जिसके लिए उत्तेजक दूसरे की उसी प्रकार की प्रतिक्रिया का ज्ञान है।"[1]

मैकडूगल : "अनुकरण केवल एक मनुष्य द्वारा उन क्रियाओं, जो दूसरे के शरीर सम्बन्धी व्यवहार से सम्बन्धित हैं, की नकल करने पर लागू होता है।"[2]

---

1 "Imitation is a reaction for which the stimulus is the perception of another's similar reaction." R. H. Thouless, *General and Social Psychology*, Third Edition, (1951), p. 251.

2 "Imitation is applicable only to copying by one individual of the actions, the bodily movements of another." W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुकरण नकल करने की प्रक्रिया है। व्यक्ति दूसरों की जो नकल बिना सोचे-वि करता है, वह अनुकरण कहलाता है। मैकडूगल ने अनुकरण को शरीर स व्यवहार की नकल ही माना है।

मीड : "अनुकरण दूसरों के व्यवहारों या कार्यों को जानबूझ कर अ को कहते हैं।[1] मीड के अनुसार अनुकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति बूझ कर दूसरों के व्यवहार या कार्यों को अपना लेता है।

अनुकरण का वर्गीकरण
(Classification of Imitation)

मैकडूगल ने अनुकरण को निम्न पाँच भागों में विभाजित किया है, जो पहले तीन स्पष्ट हैं और शेष दो अस्पष्ट।

(1) **द्योतक क्रियाएँ या अनुकरण** (Expressive Actions or Imitations)—वह अनुकरण है जो एक-दूसरे के भाव के कारण उत्पन्न होता है, है अनुकरण कहलाता है। यह अनुकरण सहानुभूति की तरह का होता है।

एक बच्चा जब दूसरे को मुस्कराते देखता है तो मुस्करा देता है या बच्चे को रोते चिल्लाते सुनकर चिल्लाने लगता है या दूसरे बच्चे को भय से प करते देखकर स्वयं भी उनका अनुकरण करता है और भागने लगता है। इस प्र का अनुकरण प्रत्येक पशु जातियाँ करती हैं। भीड़-व्यवहार बहुत कुछ इसी प्र के कारण होता है।

(2) **भाव चालक अनुकरण** (Ideo-motor Imitation)—भाव-च अनुकरण वह अनुकरण है जो भावों द्वारा चालित होता है। इसे जानबूझक स्वतः अनुकरण भी कहते हैं। इसी कारण बच्चे दूसरों की नकल किया करते हैं।

(3) **आदर्श व्यवहारों का अनुकरण** (Imitation of Ideal Action) कई बार ऐसा होता है कि हम किसी व्यक्ति विशेष को आदर्श मान लेते हैं उसके आदर्शों का अनुकरण करते हैं।

(4) जब किसी कार्य के फल का अनुकरण किया जाता है।

(5) वे छोटे बच्चे, जो जानबूझकर अनुकरण नहीं कर सकते, अनु करते हैं।

गिन्सबर्ग ने अनुकरण को तीन वर्गों में विभाजित किया है :

(1) **प्राणिशास्त्रीय अनुकरण** (Biological Imitation)—यह अनु अचेतन होता है और मूलप्रवृत्तीय व्यवहारों के रूप में पाया जाता है।

(2) **भावचालक अनुकरण** (Ideo-motor Imitation)—इसका विश्ले

---

1 "Imitation is self-conscious assumption of another's acts or ro George H. Mead, Quoted by K. Young, *A Handbook of S Psychology*, p. 110.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मैकडूगल के वर्गीकरण में दे चुके हैं। यह अनुकरण हमें समाज के अनुरूप बनने एवं स्वभाव के निर्माण करने में बड़ी सहायता करता है।

(3) **विवेकशील या सप्रयोजन अनुकरण** (Rational or Purposeful Imitation)—यह वह अनुकरण है जो जानबूझकर किया जाता है। उदाहरण-स्वरूप जापान और टर्की द्वारा पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण करना।

सहानुभूति
(Sympathy)

सहानुभूति एक प्रकार की कोमलता है जो दूसरे व्यक्ति, जिसके साथ सहानुभूति की जाती है, के साथ होती है। यह एक विशिष्ट प्रकार का उद्वेग है, जैसे—दूसरे के दुख में दुखी होना और दूसरे के सुख में सुखी होना। इसका प्राचीन एवं आधारभूत नियम यह है कि जो भावना या उद्वेग दूसरों में हो उसी भावना या उद्वेग का अनुभव स्वयं भी होने लगता है।

इसकी परिभाषा करते हुए जयदेवसिंह ने लिखा है, "यह दूसरों की भावना का शीघ्र बोध होना, एक समूह के सदस्यों में उद्वेगों का उप-पादकत्व (Induction) होता है।[1] ड्रेवर (Drever) ने सहानुभूति की परिभाषा करते हुए लिखा है, "सहानुभूति वह प्रवृत्ति है जो दूसरों के भावों और संवेगों का अनुभव कराती है, जो कि उनके भावों अथवा सवेगों के प्राकृतिक अभिव्यक्ति चिह्नों के प्रत्यक्षीकरण या अनुभव करने के तुरन्त पश्चात होती है।" ड्रेवर का कहना है कि सहानुभूति एक प्रवृत्ति है, जो व्यक्ति को यह प्रेरणा या क्षमता प्रदान करती है कि वह दूसरों के भावों या संवेगों का अनुभव करे और प्रभावित हो।

सहानुभूति सामूहिक मूलप्रवृत्ति वाले सम्पूर्ण पशुओं में पायी जाती है। ये पशु जब भयभीत होकर या क्रुद्ध होकर आवाज करते हैं तो इनकी जाति के अन्य सदस्य उस आवाज को सुनकर वैसी ही आवाज करने लगते हैं।

सहानुभूति के प्रकार

सहानुभूति दो प्रकार की होती है—(1) निष्क्रिय सहानुभूति (Passive Sympathy), और (2) सक्रिय सहानुभूति (Active Sympathy)।

निष्क्रिय सहानुभूति (Passive Sympathy)—निष्क्रिय सहानुभूति वह सहानुभूति है जो केवल अनुभव कर ली जाती है, पर किया कुछ नहीं जाता। निष्क्रिय सहानुभूति दो प्रकार की होती है—(i) परेशानी, भय या दुख के साथ सहानुभूति (sympathy with distress, fear and pain) और (ii) आनन्द तथा प्रसन्नता के साथ सहानुभूति (sympathy with pleasure and joy)। जब हम किसी के दुख या सुख में उसी प्रकार की अनुभूति करते हैं, तो ये निष्क्रिय सहानुभूति होती है।

[1] "It is sensitiveness to other person's feelings, the induction of emotions among members of a group." Jaidev Singh, *A Manual of Social Psychology.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सक्रिय सहानुभूति (Active Sympathy)—सक्रिय सहानुभूति वह सहानुभूति है जिससे हम द्रवित हो उठते हैं और व्यवहार के लिए प्रेरित होते हैं। सक्रिय सहानुभूति में हम व्यवहार करने अर्थात सहायता देने के लिए तत्पर हो जाते हैं। किसी भिखारी की पुकार एवं दीन अवस्था हम में सक्रिय सहानुभूति जगाती है, जिसके कारण हम उसे कुछ देते हैं। माता-पिता में अपने बच्चों के प्रति सक्रिय सहानुभूति पायी जाती है।

सहानुभूति को प्रभावपूर्ण बनाने वाली परिस्थितियाँ

(1) **समूह के प्रति सहानुभूति**—सहानुभूति अपने-अपने समूह के सदस्यों के प्रति अत्यधिक होती है। यदि चीन में एक लाख व्यक्ति मर जायँ तो ब्यावर निवासियों को कोई चिन्ता नहीं होगी और यदि ब्यावर के दस व्यक्ति भी मकरेड़ा तालाब में डूबकर मर जायँ तो ब्यावर की जनता की सहानुभूति उमड़ पड़ेगी।

(2) **परिस्थिति को स्वयं देखना**—सहानुभूति जागृत होने में विपत्ति को स्वयं देखना भी एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। मान लीजिए एक कार दुर्घटना हो जाती है और कुछ व्यक्ति मर जाते हैं; तो जिन व्यक्तियों ने उसकी दुर्दशा को देखा है उनमें अवश्य सहानुभूति उत्पन्न हो जाती है और जो लोग सुनते हैं वे कुछ दुख-सुख का अनुभव करते हैं। जो व्यक्ति समाचार पत्र पढ़ते हैं वे यह कहते हुए पृष्ठ उलट देते हैं कि ऐसी घटनाएँ तो होती ही रहती हैं।

(3) **प्रतीकों एवं चिह्नों द्वारा प्रदर्शन**—दुर्घटनाओं का ऐसे प्रतीकों एवं चिन्हों द्वारा प्रदर्शन, जो लोगों की समझ में आ सके, सहानुभूति उत्पन्न करता है। असाम में ब्रह्मपुत्र हर वर्ष हाहाकार करती हुई लाखों व्यक्तियों के अरमानों को बहा देती है। लोग इसे समाचार पत्र में पढ़ते हैं लेकिन उन पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता; परन्तु जब यही दृश्य भारतीय समाचार चलचित्र में प्रदर्शित किया जाता है तो सहानुभूति उत्पन्न हो जाती है।

सहानुभूति मूलप्रवृत्ति नहीं है
(Sympathy is not an Instinct)

कुछ लेखकों ने सहानुभूति को एक मूलप्रवृत्ति माना है परन्तु इस विचार का मैकडूगल सरीखे व्यक्ति ने भी विरोध किया है। उन्होंने इन्हें मिथ्या मूलप्रवृत्ति (Pseudo-instincts) कहा है।

सहानुभूति मूलप्रवृत्ति के कारण नहीं होती, परन्तु मस्तिष्क के विशिष्ट प्रकार के अनुकूलन के कारण उत्तेजित होती है।

प्रश्न

1. सुझाव सहानुभूति और अनुकरण का पूर्ण विवरण दीजिए।
(Describe fully suggestion, sympathy and imitation.)
2. सुझाव क्या है ? समझाइए।
(What is suggestion ? Illustrate. M. A., Rajasthan, 1958

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

3. अनुकरण और सुझाव में भेद कीजिए। यह दर्शाइए कि अनुकरण और सुझाव मानव सीखने में महत्त्वपूर्ण कारक हैं।

(Distinguish between imitation and suggestion. Show how imitation and suggestion are important factors in human learning. Agra, M.A. Sociology, 1963)

4. सहानुभूति पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write a short note on sympathy. Agra, M. A. Sociology, 1963, 1970)

5. सुझाव और मूलप्रवृत्तियों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write a short note on suggestion and instincts. M. A. Sociology, 1967)

6. अनुकरण की परिभाषा कीजिए। टार्डे द्वारा प्रस्तुत अनुकरण के नियमों का विवेचना कीजिए।

(Define imitation. Discuss the laws of imitation presented by Tardé. Agra, M.A. Sociology, 1970)

7. सुझाव की परिभाषा कीजिए। प्रभावपूर्ण सुझाव के लिए किन दशाओं का होना अनिवार्य है ?

(Define suggestion. What are the essential conditions for effective suggestions. Agra, M.A. Sociology, 1970)

नोट : 'टार्डे द्वारा अनुकरण का सिद्धान्त' अध्याय 12 में देखिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

10

उद्वेग तथा स्थायीभाव
(Emotions and Sentiments)

उद्वेग का अर्थ
(Meaning of Emotions)

मनुष्य की जन्मजात प्रवृत्तियों में उद्वेग का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। हम प्रतिदिन किसी न किसी प्रकार के उद्वेग का अनुभव करते रहते हैं। क्रोध, भय, तथा इनसे अन्य मिलते-जुलते अनुभवों को उद्वेग कहते हैं। कुछ विद्वान भाव के रूप को ही उद्वेग कहते हैं। यह मत उचित नहीं है। उद्वेग बाह्य परिस्थितियों उत्पन्न होता है और जटिल एवं सक्रिय होता है। उद्वेग में मानसिक पहलू के साथ शारीरिक परिवर्तन भी महत्त्व रखते हैं। वुडवर्थ ने मानसिक तथा शारीरि दोनों पहलुओं पर जोर दिया है। उसने उद्वेग को जीव की वह उत्तेजित मानसि अवस्था माना है जिसमें एक निश्चित, क्रियात्मक वृत्ति (conative tendency) है। किसी बाह्य उत्तेजना के उपस्थित होने पर क्रियात्मक वृत्ति जागृत होती है इसके परिणामस्वरूप शरीर में कई प्रकार के परिवर्तन होते हैं। पी. टी. यंग ने इस परिभाषा करते हुए लिखा है, "उद्वेग सम्पूर्ण व्यक्ति में छिद्रान्वेषी असन्तुलन है उत्पत्ति में मनोवैज्ञानिक होता है जिसमें व्यवहार, चेतन, अनुभव आभ्यन्तरीय सम्मिलित है।"[1] थाउलस के अनुसार: "एक उद्वेग साधारणतया एक व्यक्ति स्थिति के प्रति वह प्रतिक्रिया है जिसमें वह अपने आप में स्वयं के संकट के प्रति अपनों के प्रति क्रोध, आदि पाता है।"[2]

मैकडूगल ने लिखा है, "....और एक विशेषात्मक गुण की उद्वेगात्मक उत्ते अर्थात् किसी भी मुख्य मूलप्रवृत्ति की क्रिया का इच्छात्मक पहलू प्राथमिक कहला सकता है।"[3]

---

1 P. T. Young.

2 "An emotion is generally the response of a person to the situa in which he finds himself—fear to his own danger, to his injury, and so on." R. H. Thouless, *General and Social Psycho logy*, p. 76.

3 W. McDougall : *An Introduction to Social Psychology*, pp. 40-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उद्वेग में भाव होते हैं। अब हम भाव (Feeling) को समझाने का प्रयत्न करेंगे तथा फिर उद्वेग और भाव में अन्तर समझाने का प्रयत्न करेंगे।

भाव
(Feeling)

भाव एक सरल मानसिक प्रक्रिया है जिससे प्राणी सुख या दुख का अनुभव करता है। हम कह सकते हैं कि सुख या दुख की चेतन अनुभूति को भाव कहते हैं। भाव उत्पन्न होते हैं और तत्काल समाप्त हो जाते हैं। इसलिए भावों को चंचल तथा क्षणिक कहते हैं। भाव का सम्बन्ध प्राणी के किसी अंग विशेष से नहीं रहता बल्कि सम्पूर्ण शरीर से रहता है। एक समय में एक ही प्रकार के भाव का अनुभव होता है। भाव के समय हमारी मनोवृत्ति आत्मगत होती है।

भाव तथा उद्वेग में अन्तर
(Difference Between Feeling and Emotion)

भाव और उद्वेग में गुणात्मक अन्तर नहीं पाया जाता है। दोनों ही भावात्मक मानसिक अवस्था से सम्बन्धित हैं।

उद्वेग तथा भाव में अनेक अन्तर हैं। उद्वेग जटिल भावात्मक मानसिक प्रक्रिया है। भाव सरल भावात्मक मानसिक प्रक्रिया है। भाव की उत्पत्ति किसी उत्तेजना या क्रिया की सफलता या विफलता से होती है; परन्तु उद्वेगों के साथ ऐसा नहीं होता। भाव उद्वेगहीन भी हो सकता है। किन्तु उद्वेग सदैव भाव-युक्त होता है। भाव दो प्रकार के होते हैं—सुखद या दुखद। उद्वेग कई प्रकार के होते हैं। व्यक्ति भाव की अवस्था में सामान्य रहता है। उद्वेग की स्थिति में व्यक्ति सामान्य नहीं रहता, अपितु अधिकांशतः असमान्य अवस्था में रहता है। उद्वेग की अवस्था में व्यक्ति भौचक्का हो जाता है और उसमें सोचने-विचारने की शक्ति लुप्त हो जाती है। भाव व्यक्ति की व्यक्तिगत अवस्था पर प्रकाश डालता है; परन्तु उद्वेग व्यक्ति के साथ-साथ बाह्य उत्तेजना एवं परिस्थिति पर भी प्रकाश डालता है। भाव की अवस्था में जो शारीरिक परिवर्तन होते हैं उनका ज्ञान सरलता से नहीं होता; परन्तु उद्वेग की अवस्था में होने वाले शारीरिक परिवर्तन स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

परोपकारी उद्वेग
(Altruistic Emotion)

थाउलस ने दूसरे व्यक्तियो द्वारा प्रेरित उद्वेगों को दो भागों में बाँटा है। प्रथम को उसने सहानुभूतिक उद्वेग (sympathetic emotions) तथा दूसरे को असम्बन्धित उद्वेग (disinterested emotions) कहा है। मान लीजिए एक व्यक्ति भय से चिल्लाता है या जब हम अपने किसी मित्र को रोते देखते हैं तो इनसे हमारे अन्दर भी उद्वेग उत्पन्न होता है। ऐसे उद्वेग को हम सहानुभूतिक उद्वेग कहते हैं। जब हम देखते हैं कि कोई व्यक्ति बस से कुचल गया है या कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की निन्दा कर रहा है तो हमारे अन्दर एक उद्वेग उत्पन्न होता है। इस प्रकार उद्वेग को हम असम्बन्धित उद्वेग कहते हैं।

थाउलस ने इन दोनों प्रकार के उद्वेगों को एक शब्द देने का भी प्रयत्न किया है। उसने इन्हें परोपकारी उद्वेग (altruistic emotions) का नाम दिया है। थाउलस ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "यदि यह इच्छित है कि सामान्य शब्द का प्रयोग किया जाय तो उद्वेगों की प्रवत्तियों को सम्मिलित कर लें, वे परोपकारी उद्वेग कहला सकते हैं।"[1]

सामाजिक व्यवहार में परोपकारी उद्वेगों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पशु-जगत में सहानुभूतिक उद्वेग का प्रमुख स्थान है। मनुष्यों में सहानुभूतिक उद्वेग का महत्त्व उस समय होता है जब काफी संख्या में मनुष्य एक जगह पर हों। भीड़ में इस उद्वेग का महत्वपूर्ण स्थान है। ले बां (Le Bon) ने इस पर अत्यधिक प्रकाश डाला है। असम्बन्धित उद्वेग मनुष्यों में अधिक रखता है। जब व्यक्ति सुनता है कि उसके समुदाय के दस व्यक्ति डूबकर मर गये हैं तो उसमें उद्वेग उत्पन्न होता है। इसी उद्वेग के कारण तमाम समाज-कल्याण एवं सुरक्षा की योजनाएँ बन सकीं। थाउलस ने इस उद्वेग पर अत्यधिक बल दिया है। उसने तो यहाँ तक लिखा है कि यह उद्वेग यदि सब व्यक्तियों में रहे तो युद्ध ही न हो। उसने लिखा है, "बहुत ही कम युद्ध हों यदि सब राष्ट्र उत्साही सैन्यवादियों के प्रभाव से मुक्त हो जावें, जिनकी काल्पनिक स्थिति के प्रति हितों से परे आवेगों की शक्ति इतनी अधिक दुर्बल होती है कि उन संकटों के प्रति जो युद्ध उत्पन्न करेगा उन्हें सन्तोषप्रद प्रतिक्रिया के अयोग्य बना देती है।"[2]

उद्वेग के सिद्धान्त
(Theories of Emotions)

उद्वेग के विषय में मनोवैज्ञानिकों ने कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। इन सिद्धान्तों में से तीन प्रमुख सिद्धान्तों का हम यहाँ पर विश्लेषण करेंगे।

जेम्स-लैंग का सिद्धान्त

विलियम जेम्स[3] तथा लैंग[4] ने उद्वेग के सम्बन्ध में अपने-अपने सिद्धान्त रखे जो बहुत कुछ एक-दूसरे से मिलते थे। इसके कारण उनका वर्णन एक साथ होता है। संक्षेप में जेम्स-लैंग के सिद्धान्त के अनुसार (visceral and vasomotor changes) की संवेदनाओं को ही उद्वेग कहते हैं।

जेम्स ने कहा कि हम इसलिए नहीं चिल्लाते कि हमें दुख है बल्कि हम दुख का अनुभव करते हैं इसलिए चिल्लाते हैं। जेम्स ने लिखा है, "मेरा सिद्धान्त यह

1 R. H. Thouless, *General and Social Psychology*, p. 77.
2 R. S. Thouless, *General and Social Psychology*, p. 82.
3 W. James, *The Principles of Psychology*, (Two Vols.) London (1905).
4 C. Lange, Uper Gemuths bewegungen, Leipzig, (1887).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि किसी परिस्थिति के प्रत्यक्षीकरण के बाद शारीरिक परिवर्तन होता है, और इसी परिवर्तन की चेतना उद्वेग है। सामान्य लोगों का कहना है कि हम लोग किसी तरह की क्षति उठाते हैं और दुखी होते हैं तभी रोते हैं, शत्रु को देखते हैं, क्रोधित होते हैं, तब उसे पीटते हैं। किन्तु मेरा कहना है कि हम लोग इसलिए रोते हैं कि विषाद का अनुभव करते हैं। इसलिए काँपते और भागते हैं कि भय का अनुभव करते हैं।"

जेम्स के अनुसार उद्वेग की प्रक्रिया निम्न है :

(1) भयानक परिस्थिति या प्रत्यक्षीकरण।

(2) इस प्रत्यक्षीकरण से उत्पन्न कई प्रकार के शारीरिक परिवर्तनों का होना।

(3) शारीरिक परिवर्तनों के अनुरूप अन्तरावयव संवेदनाओं का होना।

(4) इन संवेदनाओं की चेतना या उद्वेग की अनुभूति।

इस प्रकार उसने उद्वेग का आधार शारीरिक रखा है। इस सिद्धान्त का सबसे बड़ा लाभ यह है कि इस सम्बन्ध में प्रयोग द्वारा यथार्थ का पता लगाया जा सकता है।

जेम्स-लैंग के सिद्धान्त की आलोचना

शेरिंग्टन ने कुत्तों की रीढ़ की हड्डी हटा दी और जब उन पर प्रयोग किया तो उद्वेगात्मक व्यवहार वैसा ही रहा। इससे स्पष्ट है कि अन्तरावयव परिवर्तन और उद्वेग का कोई सम्बन्ध नहीं है।

इस सिद्धान्त की सच्चाई जानने के लिए केनन[2] ने भी बिल्लियों पर प्रयोग किया। उसने आपरेशन सहानुभूति मंडल की नाड़ियों को निकालकर अन्तरावयव परिवर्तनों को असम्भव कर दिया। उद्वेगात्मक व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया। इससे स्पष्ट है कि जेम्स का शारीरिक परिवर्तन पर बल उचित नहीं है।

एक चालीस वर्षीय महिला की गर्दन टूटने से मस्तिष्क से सहानुभूतिक नाड़ियों का सम्बन्ध विच्छेद हो गया। ऐसा होने पर भी उद्वेगात्मक प्रवृत्तियाँ वैसी ही बनी रहीं।

जेम्स-लैंग के सिद्धान्त में कई दोष हैं फिर भी उसका अत्यधिक महत्त्व है; यद्यपि इस सिद्धान्त को पूर्णरूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता फ़िर भी इसे एकदम छोड़ा भी नहीं जा सकता।

मैकडूगल का सिद्धान्त

मैकडूगल ने उद्वेगों का प्रमुख आधार मूलप्रवृत्तियों को माना है। उनका

1 C. S. Sherrington, *The Integrative Action of the Nervous System*, London (1906).
2 W. B. Cannon, *Bodily Changes in Pain, Hunger, Fear and Rage*, (1915).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहना है कि मूलप्रवृत्तियों की चेतना ही उद्वेग है। प्रत्येक मूलप्रवृत्ति के साथ उद्वेग होता है, उन्होंने लिखा है, "तब हर एक मूलप्रवृत्ति की दशाएँ, उद्वेगात्मक उत्तेजना का एक प्रकार, जिसका गुण विशेषात्मक एवं अपने आप में विचित्र होता है। एक विशेषात्मक गुण की उद्वेगात्मक उत्तेजना किसी भी मूलप्रवृत्ति की क्रिया का इच्छात्मक पहलू उद्वेग कहला सकता है।"[1]

मैकडूगल का यह सिद्धान्त सत्य प्रतीत नहीं होता कि प्रत्येक मूलप्रवृत्ति के साथ उद्वेग होता है। इसकी अनेक आलोचनाएँ की गयी हैं। उनमें से प्रमुख निम्न हैं।

लोगों का कहना है कि उद्वेग उस समय उत्पन्न होता है जब मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार में बाधा पड़ती है। रीवर्स ने लिखा है, "इसमें कम संदेह है कि विशेषतया उस समय अधिक व्यक्त हो जाता है जबकि पलायन की क्रिया में हस्तक्षेप या हस्तक्षेप की आशंका हो और यह सम्भावना हटाई नहीं जा सकती। साधारण और बिना बाधा के किसी संकट से जानवरों का पलायन भय के उद्वेग सह अनुगामित नहीं होता।"[2]

मूलप्रवृत्यात्मक क्रिया उद्वेग को उत्पन्न नहीं करती बल्कि यह उस समय उत्पन्न होता है जब मूलप्रवृत्ति के क्रियात्मक व्यवहार में कोई बाधा पड़ती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि उद्वेग मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार में बाधा पड़ने से उत्पन्न होता है। उद्वेग भावात्मक होता है जबकि मूलप्रवृत्ति क्रियात्मक होती है। इस प्रकार सिद्धान्त उचित नहीं है और आजकल इसकी कोई मान्यता नहीं है।"[3]

अग्रिम मस्तिष्क प्रदेशीय (Hypothalamic) सिद्धान्त

इस सिद्धान्त को कैनन तथा बार्ड ने प्रतिपादित किया। इस सिद्धान्त के अनेक नाम हैं, जैसे आकस्मिक सिद्धान्त (emergency theory of emotions), कैनन-बार्ड सिद्धान्त, अग्रिम मस्तिष्क प्रदेशीय सिद्धान्त इत्यादि।

इस सिद्धान्त के अनुसार अनुभव और व्यवहार एक-दूसरे से स्वतन्त्र हैं और इसमें हाइपोथैलेमस का अत्यधिक महत्त्व है। इस सिद्धान्त के अनुसार वृहन्मस्तिष्क वल्क (cereburm), उद्वेगात्मक अनुभूति (emotional experience) और अन्तर मस्तिष्क (diencephalon), उद्वेगात्मक व्यवहार (emotional behaviour) के केन्द्र हैं। थैलेमस तथा हाइपोथैलेमस अन्तरमस्तिष्क के ही दो भाग हैं। अन्तरा... और वृहन्मस्तिष्क का सम्बन्ध विच्छेद कर देने पर भी हाइपोथैलेमस और वृहन्मस्तिष्क का सम्बन्ध सुरक्षित रहता है। इसके कारण सुषुम्ना नाड़ी के टूट जाने पर भी संवेगात्मक अनुभूति और व्यवहार सम्भव है। इस प्रकार इस सिद्धान्त ने जेम्स तथा...

---

1 W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, (19... pp. 40-41.

2 W. H. R. Revers, *Instinct and the Unconsciousness*, Cambri... (1920).

3 इसकी आलोचना 'मूलप्रवृत्तियों की सामान्य प्रकृति' के अध्याय में पढ़िए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2

सिद्धान्त की कमी को पूरा किया है। यह सिद्धान्त हाइपोथैलेमस पर अधिक बल देता है, परन्तु शरीर के अन्य भाग भी उद्वेग उत्पन्न करने में भाग लेते हैं। यह सिद्धान्त अधिकांश अंशों में मान्य होते हुए भी इसे पूर्णरूप से नहीं माना जा सकता।

चित्तवृत्ति
(Mood)

चित्तवृत्ति उद्वेग से मिलता-जुलता एक मानसिक अनुभव है। चित्तवृत्ति उद्वेग से तीव्रता में कम परन्तु अधिक समय तक रहने वाली होती है। थाउलस ने चित्तवृत्ति की परिभाषा करते हुए लिखा है, "चित्तवृत्ति भावना की स्थिति है जो उद्वेगों से अधिक अभिवृद्ध, किसी बाह्य वस्तु या स्थिति से कम सम्बन्धित और व्यवहार के मध्य जिसमें कम आवेगात्मकता पायी जाती है।"[1]

जब उद्वेग कम होता है तो वह अपना प्रभाव चित्त पर छोड़ ाता है। उद्वेग के उपरान्त चित्त की इस मानसिक क्रिया को चित्तवृत्ति कहते हैं। जब चित्त-वृत्ति में क्रोध होता है तो अकारण ही क्रोध जागृत हो जाता है। चित्तवृत्ति का प्रभाव शरीर पर अत्यधिक पड़ता है। चित्तवृत्ति का प्रयोग हम नित्यप्रति ही करते हैं और पूछते रहते हैं कि मूड कैसा है?

चित्तवृत्ति और उद्वेग में अन्तर

उद्वेग और चित्तवृत्ति में वैसे तो कोई स्पष्ट अन्तर नहीं दिखायी पड़ता। प्रभाव में उद्वेग चित्तवृत्ति से अधिक तीव्र होता है। उद्वेग क्षणिक होता है परन्तु चित्तवृत्ति अधिक देर तक रुकती है। चित्तवृत्ति का किसी पदार्थ या परिस्थिति से सम्बन्ध नहीं होता। उद्वेग किसी परिस्थिति से उत्पन्न होता है। चित्तवृत्ति उद्वेग और शारीरिक अवस्था दोनों से उत्पन्न होती है। जब मनुष्य बीमार रहता है या पाचन-क्रिया ठीक नहीं रहती तो मनुष्य की चित्तवृत्ति ठीक नहीं रहती और वह चिड़चिड़ा हो जाता है।

स्थायी भाव
(Sentiments)

जब हम प्रेम, घृणा इत्यादि पर ध्यान देते हैं तो स्थायीभाव पर विचार करते हैं। शैंड तथा मैकडूगल प्रेम, घृणा, मान (respect) को स्थायीभाव कहते हैं। शैंड ने स्थायीभाव की परिभाषा करते हुए लिखा है कि स्थायीभाव वे उद्वेग हैं जो वृहत् व्यवस्थाओं में संगठित हो जाते हैं। मैकडूगल ने स्थायीभाव की परिभाषा करते हुए लिखा है, "एक स्थायीभाव किसी वस्तु के विचार के प्रति केन्द्रित उद्वेगात्मक तत्परताओं

---

1 "Moods are feeling states more prolonged than emotions, less connected with any external object or situation, and with less impulsion to any course of behaviour." R.H. Thouless, *General and Social Psychology*, p. 74.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का संगठित क्रम है।"[1] गिन्सबर्ग ने स्थायीभाव की परिभाषा करते हुए है, "एक स्थायीभाव इस प्रकार से एक वस्तु को घेरे हुए उद्वेगों का एक समूह विभिन्न उद्वेगों की एक बहुत बड़ी संख्या उस वस्तु से सम्बन्धित विभिन्न पर अनुभव करने की एक प्रवृत्ति या अनुप्रेरणा है।" इन परिभाषाओं से स्पष्ट स्थायीभाव उद्वेगों का एक पुंज या समूह है जो स्थायी होता है और किसी विचार के प्रति केन्द्रित होता है। जब भी वह वस्तु, व्यक्ति या विचार सामने हैं, व्यक्ति इन्हीं उद्वेगों को प्रदर्शित करता है।

स्थायीभाव किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति केन्द्रित भावों को कहते हैं। कोई उद्वेग बार-बार होता है तो स्थायी हो जाता है तब उसे स्थायीभाव कहते स्थायीभाव, शैंड के अनुसार, उद्वेग के कारण उत्पन्न हुई आदत है। स्थायी इच्छात्मक एवं भावात्मक दोनों भाव होते हैं।

स्थायीभाव केवल किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति ही नहीं होता अपितु विषयों के प्रति भी होता है; जैसे—सत्यता, ईमानदारी इत्यादि।

स्थायीभाव का वर्गीकरण
(Classification of Sentiments)

स्थायीभाव को तीन प्रमुख वर्गों में बाँटा गया है: (1) मूर्त वि (concrete particular), (2) मूर्त सामान्य (concrete general), अमूर्त (abstract)। जब हम किसी एक व्यक्ति से प्रेम या घृणा करते हैं मूर्त विशिष्ट स्थायीभाव कहते हैं। जब हम कहते हैं कि समस्त प्राणियों से प्रेम चाहिए तो यह मूर्त सामान्य स्थायीभाव हुआ। अमूर्त स्थायीभाव वह होता हम अमूर्त विषयों के प्रति विकसित करते हैं; जैसे—न्याय के प्रति प्रेम, अ निर्दयता के प्रति घृणा। इसी प्रकार सत्यता, पवित्रता, राष्ट्रध्वज, इत्यादि जो स्थायीभाव विकसित होते हैं, उन्हें अमूर्त स्थायीभाव कहते हैं।

स्थायीभाववादिता
(Sentimentalism)

स्थायीभाववादिता उन उद्वेगों को कहते हैं जो केवल भाव के लिए ही होते हैं और क्रिया से उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता। जेम्स ने लिखा है, " भावात्मकता का स्रोत उद्वेगों का मस्तिष्क कार्य प्रेरक के रूप में स्थान प्रा की अपेक्षा अपने स्वयं में उलझ जाना या लगाव होता है। हर भावना का या उलझाव जो इसके उचित कार्य की ओर नहीं ले जाता, उन्नत स्था त्मकता था।"[2]

1 "A sentiment is an organized system of emotional disp centred about the idea of some object." McDougall, *An duction to Social Psychology*, p. 137.

2 William James, *The Varieties of Religious Experience*, (1907).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मैकडूगल के अनुसार : "भावुक वह व्यक्ति है जो स्थायीभावों के प्रति स्थायीभाव निर्मित करता है।"[1]

स्थायीभाववादिता वास्तव में स्थायीभाव के प्रति स्थायीभाव होता है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति देशभक्ति के प्रति स्थायीभाव विकसित करता है। यह एक स्थायीभाव के प्रति स्थायीभाव विकसित करना है।

स्थायीभाव का विकास
(Development of Sentiments)

स्थायीभाव का विकास होता है। वे समाज के कारण विकसित होते हैं। मैकडूगल ने लिखा है, "स्थायीभावों का संगठन विकसित मस्तिष्क में अनुभव के मध्य निश्चित होता है अर्थात् स्थायीभाव मस्तिष्क के ढाँचे में ऐसा विकास है जो वंशानुक्रमण व्यवस्था में मूल रूप से नहीं दिया गया।"[2]

शैंड ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "हर स्थायीभाव अपने क्रम में भी उद्वेगों, विचारों, इच्छात्मक प्रतिक्रियाओं और चरित्र के गुणों को सम्मिलित कर लेता है जो उनमें लक्ष्य की प्राप्ति के लिए लाभप्रद हैं और उन सब निर्णायक अंगों को निरस्त कर देता है जो विरोधी या अतिरिक्त हैं।[3]

स्थायीभाव तथा चित्तवृत्ति
(Sentiment and Mood)

स्थायीभाव चित्तवृत्ति से भी अधिक स्थायी होता है। चित्तवृत्ति उद्वेग के उपरान्त थोड़ी देर तक रहती है, परन्तु स्थायीभाव बना ही रहता है और उसका काल अधिक होता है। स्थायीभाव आन्तरिक होता है एवं स्पष्ट नहीं दिखायी पड़ता, जबकि चित्तवृत्ति स्पष्ट दिखायी पड़ती है।

स्थायीभाव और उद्वेग
(Sentiment and Emotion)

स्थायीभाव और उद्वेग में पहले कोई अन्तर नहीं माना जाता था; परन्तु शैंड ने सर्वप्रथम इनमें अन्तर प्रदर्शित करने का प्रयत्न किया। स्थायीभाव हमारे मन में स्थायी बना रहता है, परन्तु उद्वेग क्षणिक होता है और कुछ देर के लिए आता है और समाप्त हो जाता है। एक स्थायीभाव अनेक उद्वेगों को जन्म देता है। स्थायीभाव में कई उद्वेग मिले रहते हैं। स्थायीभाव अव्यक्त रूप से हमारे मन में विराजमान रहता है और इसकी चेतना हमें या दूसरों को नहीं होती, परन्तु उद्वेग तुरन्त व्यक्त हो जाता है और उसका अनुभव हमें या दूसरों को तुरन्त होता है। स्थायीभाव का

1. "The sentimentalist is the person who forms sentiments about sentiments." W. McDougall, *An Outline of Social Psychology*, London (1923).
2. W. McDougall, *An Introduction to Psychology*, p. 137.
3. Shand, *Law of Organisation of the Sentiments.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम्बन्ध किसी आदर्श या वस्तु से रहता है और सदैव बना रहता है। उद्वेग परिस्थिति से उत्पन्न होता है और उस परिस्थिति के बिना उसका कोई नहीं होता। स्थायीभाव समाज से सीखे जाते हैं, अर्थात् अर्जित होते हैं, उद्वेग जात भी होते हैं। स्थायीभाव एक मानसिक रचना है और वह मानसिक बनी रहती है। उद्वेग एक मानसिक प्रक्रिया है जो कुछ देर होकर जाती है।

स्थायीभाव और संस्कृति
(Sentiment and Culture)

स्थायीभाव अर्जित (acquired) होते हैं। इससे स्पष्ट है कि स्थायी संस्कृति से घनिष्ठ सम्बन्ध है। सम्बन्ध से ही वे ग्रहण किये जाते हैं। किम ने लिखा है, "स्थायीभाव सांस्कृतिक अनुकूलन की उत्पत्ति है, वे हमारे तत्त्वों से सम्बद्ध हो सकते हैं, या वे सापेक्षिक रूप में अपनी शक्ति और शीघ्रगामी हो सकते हैं।"[1]

उदाहरण के लिए प्रेम, घृणा, दया, प्रसन्नता, सुख, दुख इत्यादि ऐसे भाव हैं जो संस्कृति पर आधारित हैं। व्यक्ति विशेष रूप से अमूर्त स्थायीभाव से ही ग्रहण करता है। संस्कृति की ही परिस्थितियाँ हमें यह सिखाती हैं कि प्रकार के स्थायीभाव बनाएँ। देशभक्ति एवं राष्ट्रभक्ति का स्थायीभाव हम से ही सीखते हैं। यदि समुदाय देशभक्ति पर बल देता है और यह सिद्धान्त करता है कि हमें देश पर बलिदान हो जाना चाहिए जो हमारे अन्दर देश स्थायीभाव इसी के अनुरूप पाया जायेगा। उदाहरण के लिए जापानियों, अंग्रेजों में अत्यधिक देशभक्ति पायी जाती है; परन्तु कुछ देशों में नहीं पायी यह विभिन्न देशों की संस्कृति पर आधारित है। हमारे देश में स्वतन्त्र देशभक्ति का स्थायीभाव अधिक पाया जाता था; क्योंकि उस समय हमारी सं पर अत्यधिक बल देती थी। आजकल की परिस्थितियाँ ऐसी हो गयी हैं कि हम ध्यान नहीं दे रहे हैं, इसलिए इस स्थायीभाव का जो विकास होना नहीं हो रहा है।

आजकल हम लोग अन्तर्राष्ट्रीय बन्धुत्व का नारा लगा रहे हैं। देश से अनेक प्रकार का आदान-प्रदान हो रहा है। अब हम मानवमात्र से सीख रहे हैं। यह इस समय की संस्कृति है। इसलिए हमारे अन्दर विश्व स्थायीभाव विकसित हो रहा है। लोग अमरीका में काले लोगों से घृणा क्योंकि वहाँ की संस्कृति ने उन्हें ऐसा ही करना सिखाया है। यह अब उन भाव बन गया है। हम अपने देश में जाति के आधार पर या क्षेत्र आ

---

1 "Sentiments are products of cultural conditioning; K. *A Handbook of Social Psychology*, p. 80.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

[आ]धार पर एक-दूसरे से घृणा करते हैं, यह भी संस्कृति का ही प्रतिफल है। इस [प्र]कार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं।

स्थायीभाव हमारे मौलिक मूल्यों एवं समाज के उद्देश्यों से नियन्त्रित एवं संचा-[लि]त होता है। मूल्य संस्कृति द्वारा प्रदान किये जाते हैं। आदर्श भी संस्कृति की ही [दे]न होता है। आदर्श संस्कृति में ही जन्म लेते हैं और संस्कृति द्वारा ही पोषित होते [हैं]। स्थायीभाव इन्हीं के अनुसार विकसित एवं संगठित होते हैं। इस प्रकार हम [क]ह सकते हैं कि स्थायी भाव संस्कृति द्वारा प्रतिबन्ध होते हैं। अकोलकर ने भी [य]ही मत प्रदर्शित किया है। उन्होने लिखा है, "ये अभिवृत्तियाँ एवं स्थायीभाव अनुभव [क]े फल हैं।"[1] अनुभव भी समाज एवं संस्कृति का ही प्रतिफल है।

अमूर्त स्थायीभाव कई प्रकार के होते हैं। उदाहरणार्थ, बौद्धिक (intellectual) [स्]थायीभाव, नैतिक (ethical) स्थायीभाव, सौन्दर्यात्मक (aesthetic) स्थायीभाव, [ध]ार्मिक (religious) स्थायीभाव इत्यादि। ये स्थायीभाव किसी भी समाज की संस्कृति [प]र आधारित होते हैं। ये स्थायीभाव अमूर्त हैं और इनकी दिशा का निर्धारण एवं [नि]र्देशन समाज की संस्कृति के द्वारा ही होता है। मान लीजिये एक राष्ट्र के प्रतीक [ध्]वज के लिए जो भावनाएँ उत्पन्न होती हैं वे समाज द्वारा ही प्रतिपादित होती हैं। [स]माज ही यह व्यवस्था करता है कि ध्वज के प्रति लोगों में श्रद्धा बढ़े और एक [स्]थायीभाव का निर्माण हो। वैसे देखा जाय तो एक ध्वज केवल कपड़े का एक टुकड़ा [हो]ता है जिसका कोई विशेष मूल्य नहीं होता। संस्कृति के कारण ही हमारे अन्दर उसके [प्र]ति एक स्थायीभाव का निर्माण होता है और हम उसके लिए प्राण भी न्यौछावर [क]र देते हैं। ध्वज का मान अपना मान समझते हैं। इसी प्रकार एक प्रेमी अपनी [प्रे]मिका से प्राप्त रुमाल के प्रति स्थायीभाव विकसित कर लेता है और उसे इतना [प्]यार करता है कि किसी भी कीमत पर उसे किसी को नहीं देना चाहता। वैसे देखा [ज]ाय तो रुमाल केवल एक कपड़े का टुकड़ा है और अन्य व्यक्तियों के लिए उसका कोई [म]हत्त्व नहीं है, परन्तु चूँकि उस व्यक्ति ने उस रुमाल के प्रति एक स्थायीभाव विकसित [क]र लिया है। इसलिए उसके मस्तिष्क में उसके प्रति इतना महत्त्व है। वह उस [रु]माल के प्रति अत्यधिक भावुक होता है। यह भी संस्कृति की ही देन है। व्यक्ति [ऐ]सा व्यवहार करना अपनी संस्कृति से सीखता है।

स्थायीभाव संस्कृति के स्थायित्व के लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। मकडूगल [ने] लिखा है, "पुनः हमारे मूल्य और गुण के निर्णय हमारे स्थायीभावों में गहरे गडे हुए [हैं] और हमारे नैतिक सिद्धान्तों का भी समान स्रोत है, क्योंकि वे नैतिक मूल्य के [नि]र्णयों द्वारा बनते हैं।"[2]

स्थायीभाव का विकास व्यक्तियों एवं समाज के लिए अत्याधक महत्त्वपूर्ण

---

1. "These attitudes and sentiments are products of experience." V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 72.
2. W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 138.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। मैकडूगल ने लिखा है, "स्थायीभावों का विकास व्यक्तियों व समाजों के वि व कार्य में अत्यधिक महत्त्व का है; यह इच्छात्मक एवं क्रियात्मक जीवन का है; स्थायीभावों के अभाव में हमारा उद्वेगात्मक जीवन, बिना किसी क्रम, एक या किसी प्रकार की निरन्तरता के केवल अव्यवस्था होना और हमारे सब सामा सम्बन्ध और कार्य जो उद्वेगों एवं आवेगों पर आधारित हैं, तुल्य रूप में अव्यव भविष्य-कथन के अयोग्य और अस्थायी हो जाते हैं।"[1]

स्थायीभाव और संस्कृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। समाजीकरण की प्र सांस्कृतिक होती है। समाजीकरण की प्रक्रिया में भी स्थायीभाव का-प्रमुख हाथ है। स्थायीभाव बचपन से ही संस्कृति पर आधारित होते हैं, माता-पिता का प्रभाव पड़ता है। मैकडूगल ने इस सम्बन्ध में उचित ही लिखा है, "नवशिशु अनि पूर्वक अपने चरित्र को उनसे एकाकार कर लेता है जो उसके आसपास होते अपरिपक्व सामग्री, स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ, जिनका विवेचन हमने पिछले अध्या किया है, उन व्यक्तियों और वस्तुओं के प्रति जो बार-बार उन्हें उद्दीप्त कर केन्द्रीकृत हो जाती हैं या लगाव की स्थिति प्राप्त कर लेती हैं। इस प्रकार चिर उद्वेगिक आदतें या अभिवृत्तियाँ, जिन्हें हम स्थायीभाव—पसन्दगी या नापसन्दगी या घृणा, आदर, प्रशंसा, कृतज्ञता, भय, ग्लानि के स्थायीभाव कह सकते हैं, बनती हैं ये सभी अनिवार्य रूप में निर्देशित और पैतृक उदाहरणों पर प्रतिरूपित होते हैं।

स्थायीभाव संस्कृति से अत्यधिक प्रतिबन्धित है। व्यक्ति में संस्कृति अनुसार स्थायीभाव विकसित होते हैं। मनुष्य स्थायीभाव के कारण एक प्रकार विकसित करता है जो संस्कृति का प्रतिफल है। व्यक्ति समाज में रहते हुए कुछ के लिए डरने लगता है और अपने मूलप्रवृत्त्यात्मक व्यवहार को दबाते हुए भी द्वारा प्रतिपादित स्थायीभावों के अनुसार कार्य करने लगता है। मनुष्य को सदै बात का डर लगता है कि 'समाज क्या कहेगा' ? इसके 'क्या कहेगा' कारण का व्यवहार अत्यधिक संस्कृति के अनुरूप बन जाता है। उसे अपने वे कार्य जो के अनुसार बुरे हैं, छिपाने के लिए विवश होना पड़ता है। शैंड ने लिखा है, " स्थायीभाव के साथ, जिसे मनुष्य प्राप्त करता है, एक नया भय भी प्राप्त है। अपने आप से प्रेम करके वह अपनी प्रतिष्ठा, सम्पत्ति या शक्ति या जो करते हैं, उसे उन्हें खो देने का भय होता है, ये सब स्थायीभावों के एसे लक्ष्य जानवरों में नहीं मिलते। इन नये लक्ष्यों के लिए मनुष्य को नये साधन प्राप्त करने हैं। भय के कारण मनुष्य को अपने बुरे विचार और कार्य छिपा लेने पड़ते हैं मूलप्रवृत्तीय या सीखा गया ढंग इन मुख्य वस्तुओं को छिपाने का कार्य नहीं सकता। वह शांति, छल या झूठ का नया मार्ग खोज निकालता है।"[3]

---

1 W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 13
2 W. McDougall, *Character and the Conduct of Life*, pp. 53-5
3 Shand, *Foundations of Character*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्थायीभाव सांस्कृतिक प्रतिबन्धों के प्रतिफल हैं। स्थायीभावों को संस्कृत के द्वारा ही जन्म मिलता है एवं संस्कृति ही पालन-पोषण करती है, इसलिए स्थायीभावों को अनिवार्य रूप से संस्कृति के अनुकूल होना ही पड़ता है।

स्वभाव तथा स्थायीभाव
(Temperament and Sentiment)

मनुष्य की कुछ धारणाएँ एवं स्थायीभाव बन जाते हैं। मनुष्य के शरीर के अन्दर भी कुछ रासायनिक परिवर्तन होते रहते हैं जिनके कारण उसके इच्छा करने एवं चिन्तन की कुछ निश्चित स्थायी प्रवृत्ति बन जाती है। स्थायीभाव, उद्वेग एवं शरीर में रासायनिक परिवर्तनों से उत्पन्न प्रवृत्तियों के फलस्वरूप मनुष्य की जो स्थायी प्रवृत्ति बन जाती है उसे उसका स्वभाव कहते हैं। स्वभाव व्यक्ति की एक स्थायी मानसिक अवस्था है। स्वभाव मनुष्य के उद्वेगों, विचारों तथा अन्य भावों एवं अनुभवों को एक विशेष दिशा प्रदान करता है और व्यक्ति मूलरूप से उसी दिशा के अनुसार व्यवहार करता है। स्थायीभाव स्वभाव का एक अंग है।

प्रश्न

1. मैकडूगल के मूलप्रवृत्तियों और उद्वेगों के सिद्धान्त का संक्षेप में वर्णन कीजिए और इसकी पर्याप्तता की विवेचना कीजिए।

(Give a brief account of McDougall's theory of instincts and emotions. Discuss its adequacy. Agra, M. A. 1956.)

2. उद्वेगों का वर्णन कीजिए।

(Describe emotions.)

3. उद्वेगों के विभिन्न सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।

(Describe the various theories of emotions.)

4. स्थायीभाव को समझाइए तथा इसका चित्तवत्ति एवं उद्वेग से भेद बताइए।

(Explain sentiment and distinguish it from mood and emotions.)

5. स्थायीभाव सांस्कृतिक अनुकूलन की उत्पत्ति है। विवेचना कीजिए।

('Sentiments are products of cultural conditioning.' Discuss. Agra, M. A. 1962.,

6. भाव और उद्वेगों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write a short note on Feeling and Emotions. Agra, M. A. 1963, 1965, 1969)

7. सहानुभूति, भाव और उद्वेग में भेद कीजिए। मानव व्यवहार पर सहानुभूति और भाव का प्रभाव दर्शाइए।

(Distinguish between Sympathy, Feeling and Emotions. Show the impact of sympathy and feeling on human behaviour. Agra, M. A. Sociology, 1964.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

11
चालक
(Drives)

चालक का अर्थ
(Concept of Drives)

हर प्राणी की कुछ न कुछ प्राणिशास्त्रीय आवश्यकताएँ होती हैं जिनके बि वह जीवित नहीं रह सकता। किसी भी संस्कृति में उसने जन्म लिया हो, इन आ श्यकताओं की पूर्ति आवश्यक है। शरीर में इन आवश्यकताओं के कारण एक प्र का तनाव उत्पन्न होता है, जिसे कुछ चालक उत्पन्न करते हैं। ये चालक हमें करने के लिए विवश करते हैं। चालक मनुष्य की शारीरिक आवश्यकताओं आधारित होते हैं। किम्बाल यंग ने चालक की परिभाषा करते हुए लिखा है, " चालक तीव्र उत्तेजना होती है जो प्राणी में एक तीव्र असन्तुलन से उत्पन्न होती जो उसे प्रतिक्रिया करने या प्रत्युत्तर देने को प्रोत्साहित करती है।"[1]

हिलगार्ड ने भी चालक की परिभाषा निम्न शब्दों में दी है: "एक आव कता के मनोवैज्ञानिक परिणामों को हम चालक कहते हैं।"[2]

चालकों के प्रकार
(Forms of Drives)

चालक तीन प्रकार के होते हैं: (1) प्राथमिक, (2) अर्जित, (3) उद्वेगिक। प्राथमिक चालक वे चालक होते हैं जो हमारे आन्तर-अं (tissue) क्रिया की अवस्था से उत्पन्न होते हैं। इसके अन्तर्गत भूख, प्यास, लेना इत्यादि हैं। ये सभी प्राणियों में पाये जाते हैं। टालमैन ने प्राथमिक चा को दो भागों में बाँटा है: (1) भूख, (2) घृणा।

दूसरे प्रकार के चालक अर्जित होते हैं। इनकी मूल प्रेरणा हमें समाज से होती है। इनका समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति में आत्मगौरव की भ

---

1 "A drive is a strong stimulus resulting from some disequilib in the organism which impels it to respond or react." K. Yo A Handbook of Social Psychology, p. 38.

2 "The psychological consequence of a need we call a dri Hilgard, *Introduction to Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक अर्जित चालक है। किसी चीज का शौक संगीत, शिक्षा, प्रतिष्ठा की इच्छा इत्यादि अर्जित चालक हैं। इन अर्जित चालकों के आधार भी प्राथमिक चालक ही रहते हैं। किम्बाल यंग ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "संस्कृति के संघात से हम सब द्वैतीयिक चालकों की वृहद् संख्या प्राप्त करते हैं, यह प्रायः तीव्रता से प्राथमिक चालकों पर आधारित होती हैं।"[1]

प्राथमिक चालक कई बार मनुष्य में दब जाते हैं और उनका महत्त्व स्पष्ट नहीं दिखायी पड़ता। उदाहरण के लिए, कामप्रवृत्ति एक भयंकर चालक के रूप में व्यक्ति में काम कर रही होती है, परन्तु व्यक्ति उसे व्यक्त नहीं कर सकता; क्योंकि उसे समाज के नियमों के अनुसार चलना पड़ता है। वह इस चालक को अन्य प्रकार से प्रयोग करता है। कभी-कभी तो हमें अपने कामप्रवृत्ति के चालक को इतना दबाना पड़ता है कि उसके सम्बन्ध में बातचीत भी नहीं की जा सकती। किम्बाल यंग ने लिखा है, "जन्मजात चालकों का महत्त्व सामाजिक निषेधों के पीछे छिपा हो सकता है।"[2]

उद्वेगिक चालक वे चालक हैं जो उद्वेग की अवस्था में उत्पन्न होते हैं। ये चालक आन्तरिक नहीं होते, अपितु किसी सामाजिक कारण या परिस्थिति से उत्पन्न होते हैं।

प्राणिशास्त्रीय-मनोवैज्ञानिक चालक
(Bio-Psychological Drives)

जब बच्चा पैदा होता है तो माता तथा अन्य व्यक्तियों पर आश्रित रहता है। उसकी यह आश्रितता उसमें कई प्रकार की प्राणिशास्त्रीय-मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को उत्पन्न करती है। उदाहरण के लिए, संगीत की आवश्यकता, उद्वेगिक सुरक्षा इत्यादि। अकोलकर ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "माता या नर्स की आवश्यकता बहुत सी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की जड़ होती है, उदाहरण के लिए सम्पर्क की, सम्बन्धित होने की, उद्वेगात्मक सुरक्षा की, स्वीकृति या समर्थन की आवश्यकताएँ। यह मनुष्य के दूसरों पर प्राणिशास्त्रीय आश्रितता का अवश्यम्भावी परिणाम है। ये आवश्यकताएँ दूसरे क्रम की आवश्यकताएँ कहला सकती हैं।"[3]

ये आवश्यकताएँ चालकों को जन्म देती हैं। इन चालकों को प्राणिशास्त्रीय-मनोवैज्ञानिक चालक कहते हैं।

उद्दीपन
(Incentive)

जब आवश्यकता उत्पन्न होती है तो उसकी पूर्ति के लिए चालक उत्पन्न होता है और जिस वस्तु से यह आवश्यकता पूर्ति होती है उसे उद्दीपन कहते हैं। उद्दीपन

---

1 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 38.
2 *Ibid*, p. 38.
3 V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 56.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की परिभाषा करते हुए हिलगार्ड ने लिखा है, "आवश्यकताएँ चालक को जन्म देती हैं। चालक बढ़े हुए असन्तुलन की दशाएँ होती हैं जो कार्य की ओर, तैयारी के व्यवहार की ओर ले जाती हैं।" उद्दीपन बाह्य पर्यावरण में कोई वस्तु होती है, जो आवश्यकता की सन्तुष्टि करता है और काम में आई क्रिया द्वारा चालक को कम कर देता है।

व्यक्ति की आदतें जब से पड़ती हैं तो उन्हें शक्ति की आवश्यकता होती और भूख लगती है। भूख एक चालक है। भूख को मिटाने के लिए हम भोजन करते हैं, भोजन उद्दीपन (incentive) है। जो क्रिया हमें भोजन करने के लिए लाती है उसे ध्येय निर्देशित क्रिया कहते हैं, और भोजन करने की क्रिया को ध्येय प्राप्ति क्रिया कहते हैं। हिलगार्ड ने एक सूत्र बनाया है जिसे उसने आवश्यकता-चालक-उद्दीपन सूत्र (need-drive-incentive formula) कहा है।

प्रश्न

1. जैविक-मनोवैज्ञानिक चालक क्या होते हैं? दो ऐसे चालकों का विवरण दीजिए।

(What are bio-psychological drives? Describe fully two such drives. Rajasthan, M. A. 1958)

2. आवश्यकता, चालक, उद्दीपन सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

(Discuss need-drive-incentive theory.)

---

1 Hilgard, *Introduction to Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

12

मूलप्रवृत्तियों का सामाजिक जीवन में स्थान

(Place of Instincts in Social Life)

सामाजिक व्यवहार को कई प्रकार से समझाने का प्रयत्न किया गया है। हम सामाजिक व्यवहार की गतिशीलता पर अध्याय 15 में विशेष रूप से प्रकाश डालेंगे। यहाँ हम यह देखने का प्रयत्न करेंगे कि मूलप्रवृत्तियों का समाज में क्या स्थान है और वे कहाँ तक सामाजिक व्यवहार के लिए उत्तरदायी हैं ? वैसे मनुष्य के सामाजिक व्यवहार के विश्लेषण में निम्न दो विचारधाराएँ प्रमुख हैं :

(1) बुद्धिवादी (intellectualists),

(2) अबुद्धिवादी या बुद्धिवाद के विरोधी (anti intellectualists)।

बुद्धिवादियों के अनुसार मनुष्य अपनी इच्छाओं के आधार पर ध्येय बनाता है और उस निश्चित ध्येय की प्राप्ति के लिए उपयुक्त साधन जुटाता है, फिर अपने ध्येय की पूर्ति करता है। इनके अनुसार सामाजिक व्यवहार का प्रमुख आधार चेतन विचार-प्रक्रिया में है। बुद्धि के महत्त्व पर इन्होंने बल दिया है। अगले अध्याय में हम विवेक (reason) और संकल्प (will) पर प्रकाश डालेंगे।

अबुद्धिवादी या बुद्धिवाद के विरोधियों का मत है कि सामाजिक व्यवहार का आधार आन्तरिक-प्रवृत्तियाँ या मूलप्रवृत्तियाँ हैं। ये हमारे समस्त व्यवहार के नीचे रहती हैं। चेतन विचार-प्रक्रिया सामाजिक व्यवहार का आधार नहीं है। संक्षेप में, इनका तात्पर्य यह है कि बुद्धि का प्रायः इन प्रवृत्तियों से कोई सम्बन्ध नहीं है।

मूलप्रवृत्तियों के अनुयायियों के सम्प्रदाय

(Schools of Followers of Instincts)

मूलप्रवृत्तियों के सिद्धान्त को मानने वाले विद्वानों के निम्न तीन सम्प्रदाय हैं :

(1) कुछ विद्वान किसी एक ही प्रेरणा को सामाजिक जीवन के लिए प्रारम्भिक व अत्यधिक प्रमुख मानते हैं।

(2) कुछ विद्वान केवल एक ही प्रेरणा को महत्त्वपूर्ण न मानकर बहुत-सी प्रेरणाओं को सामाजिक व्यवहार के लिए आवश्यक मानते हैं। परन्तु वे सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक प्रेरणा की गणना निश्चित करने में असमर्थ हैं।

(3) तीसरा वर्ग उन विद्वानों का है जो सामाजिक व्यवहार के लिए अनेक प्रवृत्तियों को महत्त्वपूर्ण मानकर उनकी गणना भी निश्चित करने का प्रयत्न करते हैं। इन विद्वानों में विलियम मैकडूगल का स्थान प्रमुख है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक व्यवहार का मूलाधार—एक मूलप्रवृत्ति (Basis of Social Life—One Instinct)

सामाजिक व्यवहार को केवल एक मूलप्रवृत्ति पर आधारित बताने वाले विद्वानों में ट्रॉटर, फ्रायड, एडलर इत्यादि हैं। इनके विचारों का निम्न विवरण है :

डॉ. ट्रॉटर का सामाजिक व्यवहार के मौलिक तत्त्वों के विषय में विचार

डॉ. ट्रॉटर ने सम्पूर्ण सामाजिक व्यवहार को संघात मूलप्रवृत्ति (gregarious instinct) के कारण बताया है। उनका कथन है कि इस मूलप्रवृत्ति के प्रभाव से न केवल सदस्य झुण्ड में रहते हैं, अपितु उनके मस्तिष्क की बनावट में ऐसा आश्चर्यजनक परिवर्तन होता है कि वे एक-दूसरे के साथ सहयोग करने लगते हैं। उनके अन्दर सुझाव-ग्रहण-क्षमता इतनी बढ़ जाती है कि जो कुछ भी समाज के प्रतिष्ठ प्राप्त विचार होते हैं, शीघ्र स्वीकार कर लिये जाते हैं। कोई भी विचार चाहे कितना अतार्किक क्यों न हो, बिना सोचे ही स्वीकार कर लिया जाता है। इसीलिए मनुष्य मूलप्रवृत्ति के कारण समूह को महत्त्वपूर्ण एवं सर्वश्रेष्ठ स्थान देता है। इसी कारण समाज द्वारा निर्धारित सारे नियमों एवं व्यवहारों को मनुष्य स्वीकार करता चला जाता है। सम्पूर्ण सामाजिक व्यवहार का रहस्य इस संघात मूलप्रवृत्ति में निहित है।

आलोचना

(1) संघात मूलप्रवृत्ति एक मौलिक मूलप्रवृत्ति नहीं है, बल्कि एक ऐसा शब्द है जिसके अन्दर कई तथ्य सम्मिलित हैं।

(2) सुझाव-ग्रहण-क्षमता संघात मूलप्रवृत्ति के कारण सदैव उत्तेजित नहीं होती, बल्कि इसके लिए विभिन्न परिस्थितियों का होना आवश्यक होता है। पिछले अध्याय में सुझाव को प्रभावपूर्ण बनाने की परिस्थिति पर विचार किया जा चुका है।

(3) संघात मूलप्रवृत्ति के कारण मनुष्य एक समूह में एकत्रित हो सके हैं या हो सकते है; परन्तु यह एक असंगठित समूह (जिसे भीड़ कह सकते हैं) ही बनेगा। इसके विपरीत समाज एक सुसंगठित सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। अतः केवल समूह में एकत्रित होने की मूलप्रवृत्ति हमारे व्यवहार को नहीं समझा सकती है।

(4) मानव अत्यन्त जटिल है और सामूहिक व्यवहार उससे भी जटिल है। इस कारण मानव सामाजिक संगठन को एक मूलप्रवृत्ति का परिणाम नहीं माना जा सकता। सामाजिक व्यवहार कई तथ्यों पर आधारित है। यह जन्मजात भी है और शिक्षा, अवलोकन तथा अनुभव के फलस्वरूप भी।

(5) डॉ. ट्रॉटर का यह कहना, कि समूह में एकत्रित होते ही मानव की बनावट बदल जाती है, अतार्किक है।

(6) डॉ. ट्रॉटर ने मानव व्यवहार की प्रक्रिया को बड़ी सरल रीति से समझाने का प्रयत्न किया है। यह उत्तर अवैज्ञानिक-सा दिखता है। जैसे कुछ लोग बुद्धि की पहुँच के बाहर की घटना होने पर सरल-सा उत्तर देते हैं, "ईश्वर ने किया है"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2.

ईश्वर इच्छा आदि। इसी प्रकार ट्रॉटर ने भी सामाजिक व्यवहार को समझाया हैं कि यह सारा व्यवहार संघात मूलप्रवृत्ति के कारण होता है।

(7) ऐसा लगता है कि डॉ. ट्रॉटर ने सामाजिक व्यवहार का विश्लेषण अनेक परिस्थितियों में करने का प्रयत्न नहीं किया, इसी कारण उन्होंने एक मूलप्रवृत्ति को इतना महत्त्व दिया है।

फ्रायड के विचार

फ्रायड एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक है। फ्रायड ने मानव व्यवहार को काम-प्रवृत्ति पर आधारित बताया है। इस काम-प्रवृत्ति को फ्रायड ने 'लिबिडो' (Libido) कहा है। फ्रायड के अनुसार लिबिडो मनुष्य के समस्त व्यवहार को चालित करती है। लिबिडो मनुष्य के अज्ञात मन में निवास करती है। इसमें समस्त अनैतिक एवं काम सम्बन्धी प्रवृत्तियाँ एकत्र हैं। फ्रायड ने इसे 'इड' (Id) कहा है। उसने मानव-व्यक्तित्व को निम्न तीन भागों में बाँटा है।

(अ) इदम (Id)—यह मनुष्य के व्यक्तित्व का वह भाग है जो सदैव पशुवत काम-प्रवृत्तियों को सन्तुष्ट करने की चेष्टा करता है। यह सबसे मुख्य भाग है। यह मन का अज्ञात भाग है। यह प्राचीन तथा पाशविक मूलप्रवृत्तियों का भाग है। यह 'वासना-तृप्ति-सिद्धान्त' से शासित होता है; समाज के नैतिक नियमों का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इदम् काम-शक्ति का भण्डार है। यह काम-शक्ति से ओत-प्रोत रहता है और इसके अन्दर नीति-अनीति, अच्छा-बुरा आदि कुछ भी नहीं होता। जो भावनाएँ समाज के द्वारा अनैतिक समझ कर दबा दी जाती हैं वे इसमें चली आती हैं और एकत्रित होती रहती हैं। यह दबायी गयी वासनाओं और इच्छाओं का भण्डार है। इदम् में ही पूर्वजों से प्राप्त गुण व विशेषताएँ रहती हैं।

(ब) आत्म या नैतिक मन (Super-ego)— आत्म नैतिक वृत्तियों का विभाग है। नीतिशास्त्र में अन्तःकरण की कल्पना से यह मिलता-जुलता है। आत्म बाल्यकाल से ही माता-पिता, पड़ोसी एवं गुरुजनों की शिक्षा द्वारा बनता है। आत्म का विकास पर्यावरण पर आधारित होता है। इस विभाग का कार्य विशेष रूप से मर्यादाओं एवं नैतिक नियमों के आधार पर मानव की पशुवत प्रवृत्तियों से संघर्ष करना और उनकी क्रियाओं के प्रदर्शन का दमन करना है।

इदम् और आत्म में सदैव संघर्ष चलता रहता है। इस संघर्ष के फलस्वरूप मनुष्य में भाव-ग्रन्थियाँ पड़ जाती हैं। आत्म अहम् पर भी शासन करता है। आत्म के अन्दर कठोर नीति और अनीति की भावना रहती है जिसके कारण आत्म का शासन अहम् पर चलता है। आत्म का अधिकांश भाग अज्ञात होता है।

(स) अहम् (Ego)—अहम् बुद्धि व तर्क का विभाग है। अहम् का कार्य दोनों विरोधी प्रवृत्तियों—इदम् और आत्म—के बीच बौद्धिक सन्तलन स्थापित करना है। मन का यह भाग चेतन और विचारशील है। इसका सम्बन्ध अधिकतर बाह्य जगत एवं वास्तविक जीवन से है। अहम् अपना विचारशील क्रिया से इदम् की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उच्छृंखल मूलप्रवृत्तियों को सामाजिक मर्यादाएँ तोड़ने से रोकता है और साथ ही ऐ ऐसे उपाय भी निकालता है जिससे इदम् का सामाजिक नियमों के कारण बिल ही दमन हो जाय। अहम् व्यक्तित्व में सन्तुलन स्थापित करता है। यह सामाजि नियमों एवं मूलप्रवृत्तियों के बीच सामंजस्य उत्पन्न करता है।

अहम् तीन विपरीत शक्तियों की क्रिया-प्रतिक्रियाओं में सामंजस्य स्थापि करता है। एक ओर इदम् की प्राकृतिक इच्छाएँ हैं जो काम-प्रवृत्ति से प्रेरित हो हैं। दूसरी ओर समाज और समाज के नियम हैं। तीसरी ओर आत्म है जो नैति नियमों का भण्डार है और कठोरता से नैतिक नियमों का पालन कराता है। अ इन तीनों शक्तियों के बीच सामंजस्य स्थापित करता है। अहम् निद्रावस्था में प्रतिबन्ध रखता है जिसके कारण इदम् का असली स्वरूप स्वप्न में भी प्रकट न होता है।

फ्रायड का सामूहिक व्यवहार का आधार काम-शक्ति या लिबिडो को मान है। इसी काम-शक्ति के कारण व्यक्ति एक-दूसरे के सम्बन्ध में आते हैं और सामाजि व्यवहार करते हैं। काम-शक्ति के कारण ही मनुष्य अनेक कार्यों को करने में प्र होता है।

फ्रायड की आलोचना

फ्रायड ने लिबिडो का प्रयोग अत्यन्त विस्तृत अर्थों में किया है। फ्राय इस शब्द का प्रयोग करते समय मनमानी बरती है। काम-वासना, पर वर्गीय प्रे माता-पिता का प्रेम, मित्रों का प्रेम इत्यादि सभी के लिए लिबिडो को आधार मा है। ऐसा लगता है कि फ्रायड की लिबिडो कोई ऐसी थैली है जिसमें सब कुछ भ हुआ है। फ्रायड की यह व्याख्या तर्कपूर्ण नहीं है, क्योंकि उसने अकारण ही का प्रवृत्ति पर अत्यधिक बल दिया है। अतः फ्रायड का यह सिद्धान्त मान्य नहीं है।

एडलर के विचार

एडलर फ्रायड का अनुयायी रहा है। बाद को उसने फ्रायड का साथ छो दिया। एडलर का कहना है कि 'शक्ति की इच्छा' ही सामाजिक व्यवहार का आ है और जीवन का ध्येय है। लोग केवल जीवित रहने के लिए ही संघर्ष नहीं क अपितु वास्तविक संघर्ष शक्ति प्राप्त करने के लिए करते हैं। परोपकार, सेवा, लि आदि गुण व्यर्थ हैं और ये गुण व्यक्ति को कमजोर बनाते हैं। व्यक्ति को बल और शक्तिशाली बनाना चाहिए; क्योंकि संसार ऐसे ही लोगों के लिए है। उत् बुद्धि, अहंकार और शक्ति ही व्यक्ति के गुण होने चाहिए। हीनता की भावना विजय प्राप्त करनी चाहिए। व्यक्ति सदैव ऊपर उठने का प्रयास करता रहता 'प्रभुता की इच्छा' या 'शक्ति की इच्छा' की मूलप्रवृत्ति से ही समस्त सामा व्यवहार निर्देशित होता है। एडलर ने भी इस तथ्य को अत्यधिक महत्त्व दिया वास्तव में सामाजिक व्यवहार किसी एक मूलप्रवृत्ति पर आधारित नहीं है।

सामाजिक व्यवहार और मूलप्रवृत्तियों की संख्या अनिश्चित (Social L and Indefinite Number of Instincts)—दूसरे वर्ग में वे मनोवैज्ञानि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आते हैं जो मूलप्रवृत्तियों को सामाजिक व्यवहार का आधार मानते हैं; परन्तु इसके लिए एक से अधिक मूलप्रवृत्तियों को उत्तरदायी ठहराते हैं, यद्यपि ये मनोवैज्ञानिक इन मूलप्रवृत्तियों की संख्या निश्चित नहीं कर पाते। उनका कहना है कि सामाजिक व्यवहार के आधार के रूप में एक से अधिक मूलप्रवृतियाँ कार्य करती हैं; परन्तु उनकी संख्या निश्चित कर सकना सम्भव नहीं है। विलियम जेम्स इन विद्वानों में प्रमुख हैं। उन्होंने अपनी पुस्तक में अनेक मूलप्रवृत्तियों का वर्णन किया और इस तथ्य का उल्लेख किया है कि पशुओं की अपेक्षा मनुष्यों में अनेक मूलप्रवृत्तियाँ होती हैं जो उनके वैयक्तिक तथा सामाजिक व्यवहार की गतिशीलता को निर्धारित करती हैं।

सामाजिक व्यवहार और निश्चित मूलप्रवृत्तियाँ (Social Behaviour and Definite Instincts)—तीसरा वर्ग उन विद्वानों का है जो सामाजिक व्यवहार की आधारभूत मूलप्रवृत्तियों की निश्चित संख्या का उल्लेख करते हैं। उनमें विलियम मैकडूगल मुख्य हैं। अब हम इनके विचारों का विश्लेषण करेंगे।

विलियम मैकडूगल के विचार

मैकडूगल ने मानव व्यवहार के सम्बन्ध में 14 मूलप्रवृत्तियाँ और कुछ सामान्य प्रवृत्तियों को माना है। सामान्यत: ये सभी मानव व्यवहार एवं सामाजिक व्यवहार के लिए आवश्यक हैं, परन्तु विशेष रूप से 5 मूलप्रवृत्तियों को सामाजिक व्यवहार का आधार माना है। ये मूलप्रवृत्तियाँ हैं—पुत्र कामना, सामूहिक जीवन, आत्म गौरव, दैन्य और सहानुभूति।

पुत्र कामना की मूलप्रवृत्ति को उन्होंने अत्यधिक महत्त्व दिया है। इस मूल-प्रवृत्ति से सम्बन्धित वात्सल्य भावना के ही कारण करुण संवेगों का संचार होता है। मैकडूगल का मत है कि इसी प्रवृत्ति के कारण पशुओं और मनुष्यों में एक-दूसरे के प्रति प्रेम रहता है। इसी प्रवृत्ति के कारण मनुष्य में भावों का विकास होता है और सदाचार की नींव पड़ती है। जब-जब यह मूलप्रवृत्ति अपने अनुसार पूर्ण होती रहती है तब-तब समाज में अच्छे व्यवहार का जन्म होता है और जब-जब इस प्रवृति की संतुष्टि में बाधा पड़ती है तब-तब घृणा और क्रोध का विकास होता है और व्यक्ति समाज विद्रोही कार्य करता है। क्रोध और "कोमलता के उद्वेग में आश्चर्यजनक सम्बन्ध है। मैकडूगल ने लिखा है, "कोमल उद्वेग और क्रोध में यह घनिष्ठ सम्बन्ध मनुष्य के सामाजिक जोवन में अत्यन्त महत्त्व का है और इसका सही ज्ञान नैतिक स्थायी भावों के एक ही सिद्धान्त के लिए अत्यन्त आवश्यक है; क्योंकि इस प्रकार से उत्पन्न क्रोध हमारे नैतिक रोष का अंकुर है और नैतिक रोष में न्याय और सार्वजनिक विधि का बड़ा भाग मुख्यत: पाया जाता है। इस प्रकार यद्यपि यह विरोधास्पद प्रतीत होगा कि परोपकार और दण्ड समान रूप से अपनी तीव्रतर और बहुत आवश्यक जड़ें पितृ मूलप्रवृत्ति में रखते हैं।"[1] पुत्र कामना की मूलप्रवृत्ति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण

[1] W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 62.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। इस मूलप्रवृत्ति के कारण परिवार का आधार बनता है और परिवार समाज समुदाय की महत्त्वपूर्ण इकाई है। इसके महत्त्व को दर्शाते हुए मैकडूगल ने लि "पितृ मूलप्रवृत्ति परिवार का आधार है और कुछ अपवादों के साथ वे सब, जि प्रश्न पर गम्भीर ध्यान दिया है, इस बात से सहमत हैं कि परिवार का स्थायित्व सामाजिक स्थिति के लिए और हर समुदाय के स्थायित्व के लिए मुख्य दशा है

मैकडूगल ने दूसरी प्रवृत्ति समूह-प्रवृत्ति को समाज में महत्त्वपूर्ण मा इस मूलप्रवृति के कारण लोग समूह में रहते हैं और एक-दूसरे का साथ दे मनुष्य एक सामाजिक प्राणी इसी मूलवृत्ति के कारण है। मैकडूगल ने इस में लिखा है, "वे सब आकर्षण जो समान व्यक्तियों में मिलते हैं जिसे गिडिंग्स ने की चेतना' कहा है, मैं सोचता हूँ कि यूथचारी आवेग का कार्य समझा चाहिए। जो मानसिक जीवन के ऊँचे स्तर पर दूसरे आवेगों के साथ करता है।"[2]

इन दो मूलप्रवृत्तियों के अतिरिक्त मैकडूगल ने सामूहिक जीवन के आत्मगौरव तथा दैन्य की मूलप्रवृत्तियों पर भी बल दिया है। आत्मगौरव की प्रवृत्ति के कारण समाज में नेतृत्व की भावना विकसित होती है। यदि सम नेता न हो, तो समाज संगठित रूप से कार्य नहीं कर सकता। दैन्य की मूलप्रवृ कारण व्यक्ति आत्म-समर्पण करते हैं और दूसरों को आदेश मानते हैं। वि से सामाजिक जीवन में इन प्रवृत्तियों का अधिक महत्त्व है।

शरणागति की मूलप्रवृत्ति भी सामाजिक व्यवहार में विशेष भाग ले यदि लोग एक-दूसरे की सहायता न मागें तो सहयोग विकसित ही नहीं हो प्रायः कहा जाता है कि माता बालक को दूध ही न पिलाती यदि बालक रोकर दैन्य दशा का मार्मिक प्रदर्शन न करता। जब व्यक्ति मुसीबत में आता है तो स्थिति का प्रदर्शन करता है और इसके परिणामस्वरूप दूसरे लोगों में सहानु संचार होता है और वे उसकी सहायता करते हैं।

सहानुभूति की मूलप्रवृत्ति भी सामाजिक जीवन में एक महत्त्वपूर्ण भाग है। जब कोई व्यक्ति समुदाय के एक सदस्य को रोते देखता है तो उसके मन नुभूति उत्पन्न होती है। पशुओं में तो इस सहानुभूति की अत्यधिक मात्रा हो छोटे पतंगे से लेकर वनमानुष तक के जीवन में इस प्रवृत्ति का अत्यधिक मह होम्स ने लिखा है कि डंक मारने वाले पतंगों में से एक क्रुद्ध हो जाता है तो व्यवहार को देखकर पूरा समूह क्रुद्ध हो जाता है। कोहलर ने लिखा भी है वनमानुष के चिल्लाने पर सब वनमानुष चिल्लाने लगते हैं। जब एक सियार चि है तो सब सियार चिल्लाते हैं। सहानुभूति लोगों में संचारित होती है जब ए भौंकता है तो अन्य कुत्ते भी भौंकने लगते हैं, जब एक जानवर भागता है

1 W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, pp. 2
2 *Ibid*, pp. 257-58.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जानवर भी भागने लगते हैं, मैकडूगल ने पशुओं में इसको अत्यधिक महत्त्व दर्शाते हुए लिखा है, "इस प्रकार की अपरिपक्व सहानुभूति वह संयोग शृंखला है जो जानवरों के समाज को एक जगह बाँधती है—एक समूह के सभी सदस्यों के कार्य को समरूपक बना देती है उन्हें बुद्धिमान के अभाव में भी कुछ मुख्य सामाजिक लाभों को प्राप्त कराने में सहायक होती है।"[1]

मनुष्यों में भी यह इसी प्रकार कार्य करती है। जब दूसरे लोग हँसते हैं तो हम भी हँसने लगते हैं। जब दूसरा व्यक्ति दुखी होता है तो हम भी दुखी हो जाते हैं। मैकडूगल ने मानव-सहानुभूति के विषय में लिखा है, "मानवीय सहानुभूति की जड़ें मूलप्रवृत्तीय पूर्व तत्परताओं के आन्तरिक पक्षों के समान विशेषीकरण में हैं; प्रारम्भिक शिशु अवस्था में प्रायः सम्पूर्ण सहानुभूत्यात्मक आवेग इसी सरल प्रकार का है और सम्पूर्ण जीवन में हम इसी प्रत्यक्ष ढंग से अपने साथियों की भावनाओं व आवेगों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं।"[2]

आलोचना

(1) सामाजिक उद्वेगों को अन्य प्रवृत्तियों से उत्पन्न मानना ही अवैज्ञानिक है। सामाजिक भावनाएँ जटिल नवीन प्रतिक्रियाएँ होती हैं न कि केवल पुरानी भावनाओं की विस्तार मात्र। आज मानव जीवन इतना जटिल हो गया है कि इसे केवल वात्सल्य उद्वेग के विस्तार मात्र से ही नहीं समझाया जा सकता। वात्सल्य उद्वेग संतान कामना की मूलप्रवृत्ति का सहवर्ती उद्वेग है। यह उद्वेग साधारणतया एक परिवार के सदस्यों के बीच उत्पन्न होता है। सामाजिक जीवन में परिवार से बहुत दूर के व्यक्तियों से सम्बन्ध होता है। आज के युग में जबकि हम विश्वबन्धुत्व की ओर बढ़ रहे हैं और प्रत्येक मनुष्य विश्व समुदाय के कार्यों में सहयोग दे रहा है तो यह कल्पना करना कि सारा व्यवहार इस मूलप्रवृत्ति के कारण है, मिथ्या है।

(2) प्रत्येक उपकारी व्यवहार को कोमल उद्वेग के विस्तार मात्र से नहीं समझाया जा सकता। उदाहरणार्थ; ज्ञान, विज्ञान, सौन्दर्य, सत्य, कला, शिक्षा के प्रति प्रेम किसी भी प्रकार वात्सल्य उद्वेग पर आधारित नहीं है।

(3) जब कोई उद्वेग मनुष्य में उत्तेजित होता है तो वह उसे एक प्रकार के व्यवहार करने के लिए ही बाध्य नहीं करता, बल्कि एक उद्वेग के कारण अनेक दिशाओं में मनुष्य व्यवहार करता है।

(4) समाज रक्षा एवं अन्य सम्बन्धित कार्य आत्मरक्षा सम्बन्धी मूलप्रवृत्ति का विकसित रूप नहीं हो सकता, समस्त मूलप्रवृत्तियाँ अपने निश्चित उद्देश्यों के लिए

---

1. "Sympathy of this crude kind is the cement that binds animal societies together, renders the actions of all members of a group harmonious, and allows them to reap some of the prime advantages of social life in spite of the lack of intelligence." W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, pp. 79-80.
2. W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 80.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रेरित होती हैं, उनका निश्चित स्वार्थ होता है और वे उनकी पूर्ति करके समाप्त जाती हैं।

(5) कोई भी व्यक्ति जब किसी की आज्ञा को स्वीकार करता है तो मैक के अनुसार वह आज्ञाकारी इसलिए है कि दैन्य की मूलप्रवृत्ति उसमें पायी जा और वह इस प्रवृत्ति के कारण आज्ञा पालन करता है। हम प्रश्न करें, कोई दुष्ट क्यों है और दुष्टता का व्यवहार क्यों करता है? तो मैकडूगल के इसका उत्तर होगा कि उसमें दुष्टता की मूलप्रवृत्ति पायी जाती है इसीलि दुष्टता का व्यवहार करता है। आश्चर्य यह है कि वही व्यक्ति एक समय दु का व्यवहार करता है और दूसरे समय सदाचार का। अब उसमें कौन-सी मूलप्र पायी जाती है वास्तव में मूलप्रवृत्तियों का सिद्धान्त एक भ्रमात्मक सिद्धान्त है, सामाजिक व्यवहार के विश्लेषण में कोई भी सहायता नहीं पहुँचाता। वैज्ञ विश्लेषण करने के स्थान पर हमारी तर्क शक्ति पर मूलप्रवृत्ति का ताला लग है और हम सब व्यवहार मूलप्रवृत्तियों के कारण मान लेते हैं।

(6) सामाजिक व्यवहार केवल मूलप्रवृत्तियों पर ही आधारित न बल्कि सामाजिक कारणों के अनुसार भी होता है। मनुष्य जब से सामाजिक बनता है उसी समय से सामाजिक जीवन उसके लिए महत्त्वपूर्ण बन जा गिन्सबर्ग ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "आदमी जिस क्षण एक सामाजिक जाता है तभी से उसके लिए सब से ज्यादा महत्त्व सामाजिक जीवन का हो है।"[1] इससे स्पष्ट है कि सामाजिक व्यवहार के लिए सामाजिक कारक भी पूर्ण हैं।

(7) उद्वेग में अनेक प्रकार की भावनाएँ रहती हैं। स्वार्थ की भाव रहती है और स्वार्थरहित भावना भी रहती है। शैंड ने इस सम्बन्ध में लि "प्रत्येक उद्वेग में निःस्वार्थपरता छिपी रहती है, क्योंकि जो उत्तेजनाएँ उसको करती हैं उनमें से कुछ ऐसी होती हैं, जो स्वयं अपने हित के बजाय दूसरों के उसे सक्रिय करती हैं।"[2] जो कुछ भी हो वात्सल्य का उद्वेग सारे निःस्वा व्यवहार का मूल नहीं हो सकता।

(8) डॉ. मैकडूगल नैतिकता की भावना का मूल आधार आत्मगौरव शरणागति व दैन्य नामक मूलप्रवृत्तियों पर आधारित करते हैं। फिर क्या का कि कुछ लोग नैतिक नियमों का पालन करते हैं और कुछ नहीं करते। मूलप्र का सिद्धान्त इन्हें समझाने में असमर्थ है। इसमें संदेह नहीं है कि मूलप्रवृ सिद्धान्त का कुछ भाग सत्य है और ये मूलप्रवृत्तियाँ सामाजिक व्यवहार को

---

1 "From the moment in which man becomes a social animal most important thing to him is the social life." M. Gi *The Psychology of Society*, p. 16.

2 Shand; *Foundations of Character*, p. 49.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करती हैं; परन्तु यह सत्य नहीं है कि समस्त सामाजिक व्यवहार केवल इन प्रवृत्तियों के कारण ही होता है। इसके लिए शिक्षा, अनुभव, अवलोकन तथा अन्य सामाजिक कारण भी उत्तरदायी हैं।

बेगहॉट[1] और टार्डे[2] का सिद्धान्त

बेगहॉट और टार्डे ने सामाजिक संगठन एवं व्यवहार को सुझाव-अनुकरण के सिद्धान्त द्वारा समझाने का प्रयत्न किया है। सर्वप्रथम सन् 1873 में बेगहॉट ने इस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। इसी सिद्धान्त को 23 वर्ष उपरान्त टॉर्डे ने अत्यधिक विस्तृत रूप से पुनः प्रस्तुत किया।

बेगहॉट का सिद्धान्त (Theory of Bagehot)—बेगहॉट ने सामाजिक संगठन एवं व्यवहार का मौलिक आधार अनुकरण के सिद्धान्त में पाया। वस्त्रों में फैशन, लिखने की शैली, राजनैतिक और धार्मिक व्यवहार, सबमें ही अनुकरण पाया जाता है। उसका कहना है कि अनुकरण स्वतः एवं अचेतन होता है और यह मानव समूहों पर आश्चर्यजनक प्रभाव डालता है। अनुकरण के अन्तर्गत वह सुझाव की प्रक्रिया को भी सम्मिलित कर लेता है। उसने अनुकरण को ही रीति-रिवाज एवं सामाजिक रूढ़ियों का जन्मदाता बताया है। ये रूढ़ियाँ ही मनुष्यों को सामाजिक व्यवहार के अनुरूप होने के लिए बाध्य करती हैं और सामाजिक नियन्त्रण रखती हैं।

टॉर्डे का सिद्धान्त (Theory of Tarde)—ऐसा लगता है कि टार्डे ने बेगहॉट के सिद्धान्त से अलग रहकर अपने अनुकरण के सिद्धान्त का निर्माण किया है। उसके सिद्धान्त की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं :

(1) उसका कहना है कि सामाजिक प्रगति एक समूह के सदस्यों के परस्पर सम्बन्धों का फल होती है। यह परस्पर सम्बन्ध तीन रूपों में प्रगट होता है—(i) पुनरावृत्ति, (ii) विरोध, (iii) अनुकूलन।

वह इस सिद्धान्त को न केवल सामाजिक प्रक्रिया में मानता है बल्कि भौतिक प्रक्रिया में भी मानता है। इसके विभिन्न स्वरूपों को हम (पृष्ठ 165) के चार्ट द्वारा व्यक्त कर सकते हैं।

यहाँ हम सामाजिक दृष्टिकोण से विचार करेंगे। पुनरावृत्ति का सामाजिक स्वरूप अनुकरण है। यह सामाजिक प्रगति में महत्त्वपूर्ण भाग लेता है। विरोध का सामाजिक स्वरूप युद्ध, प्रतिद्वन्द्विता, प्रतियोगिता, विचार-विमर्श एवं विवाद होते हैं। सामाजिक अनुकूलन से तात्पर्य होता है सामाजिक पर्यावरण से अनुकूलन करना। इसकी विस्तृत विवेचना हम पर्यावरण के अर्थ वाले अध्याय में कर चुके हैं।

(2) सम्पूर्ण सामाजिक प्रक्रिया का अनुकरण और आविष्कार पर आधारित किया जा सकता है।

---

1. Bagehot, *Physics and Politics*, (1873).
2. Tarde, *'Lois'de, Imitation* (1896). The Laws of Imitation by Persons.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) किसी समाज की प्रगति अन्वेषण पर आधारित है।

(4) अन्वेषण की शक्ति नवीन विचारों के सम्बन्धों पर आधारित है। जिस देश में जनसंख्या अधिक होती है वहाँ अधिक आविष्कारों की सम्भा रहती है।

(5) किसी आविष्कार का स्वीकार किया जाना अनुकरण पर आधा होता है।

(6) सामाजिक अनुरूपता एवं सदृश्यता अनुकरण पर आधारित है। भी विचार या कार्य-प्रणाली का जब दूसरों के द्वारा पुनरावर्तन किया जाता है वह समाज में फैलती है और सामाजिक अनुरूपता उत्पन्न होती है।

(7) किसी आविष्कार का अनुकरण दो सामाजिक कारणों पर आ रहता है—(i) तार्किक, (ii) असाधारण तार्किक।

जब कोई नया विचार आता है और वह उस समय के समाज द्वारा विचारों के अनुसार होता है तो वह शीघ्र स्वीकार कर लिया जाता है। इसे ता सामाजिक प्रक्रिया कहते हैं।

असाधारण तार्किक वे कारण होते हैं जो समाज के सर्वमान्य विचा विपरीत होते हुए भी कुछ परिस्थितियों वश निम्न कारणों से स्वीकार क जाते हैं :

(अ) अनुकरण अन्दर से बाहर की ओर बढ़ता है। इसका अभिप्राय कि किसी विचार को स्वीकार करने एवं किसी कार्य को करने के पूर्व हमारी सिक स्थिति उसके पक्ष में होनी चाहिए। उदाहरणस्वरूप, यूरोप में पहले साहित्य के प्रति लोगों की रुचि बढ़ती गयी। इस बढ़ती हुई रुचि ने फ्रेंच वेशभू लिए आधार निर्माण किया। कुछ समय उपरान्त फ्रेंच वेशभूषा सम्पूर्ण यूरो छा गयी।

(ब) कई बार आविष्कार करने वाले की प्रतिष्ठा भी एक महत्त्वपूर्ण डालती है। यद्यपि साधारण स्थिति में उस आविष्कार को लोग स्वीकार क तैयार न होते, परन्तु वह आविष्कार एक विशिष्ट प्रतिष्ठित व्यक्ति द्वारा इसलिए उसे स्वीकार कर लिया जाता है। महात्मा गाँधी ने खद्दर के कपड़े का रिवाज इतना बढ़ा दिया कि आज बड़े-बड़े लोग पहनते हैं।

(स) कई बार नयी वस्तु में एक प्रकार का आकर्षण होता है। इस लोग स्वीकार कर लेते हैं।

टार्डे ने कहा है कि "समाज अनुकरण है।" उसने अनुकरण के अन्तर्गत और सहानुभूति सभी मानसिक पारस्परिक सम्बन्धों को सम्मिलित कर लिया है।

आलोचना

(1) इसमें कोई सन्देह नहीं कि अनुकरण समाज में एक महत्त्वपूर्ण रखता है, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि सब कुछ अनुकरण के कारण है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

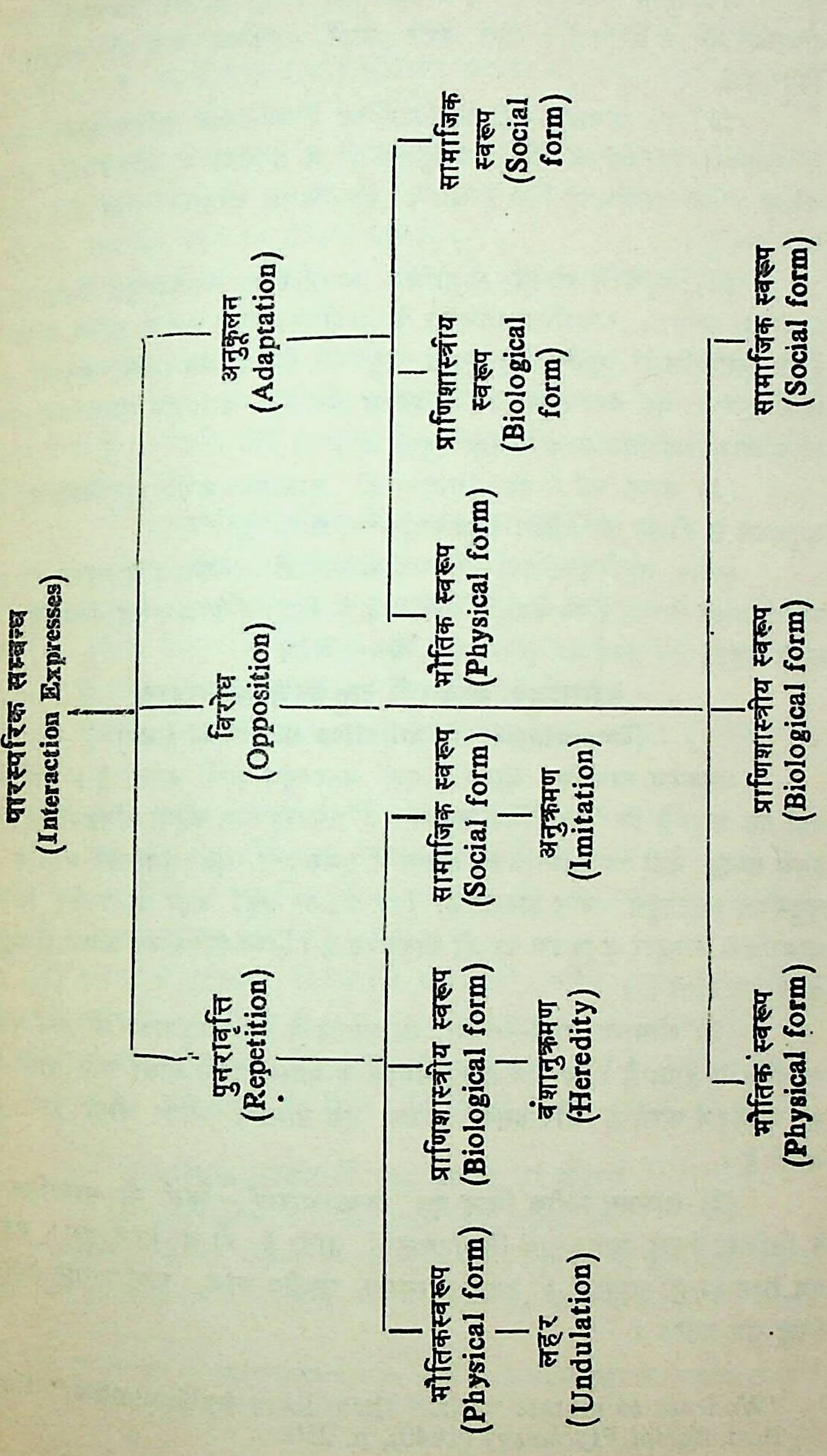

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) टार्डे ने अनुकरण के अन्तर्गत सारी ही परस्पर सम्बन्धी मान[सिक] क्रियाओं को ले लिया है। ऐसा करके उसने अनुकरण शब्द को अर्थहीन [बना] दिया है।

(3) यह आवश्यक नहीं कि जिस देश में जनसंख्या अधिक होगी उ[स] में आविष्कार भी अधिक होंगे। आधुनिक युग में इंगलैण्ड ने भारत और चीन [की] अपेक्षा अधिक आविष्कार किये हैं जबकि इंगलैण्ड की आबादी चीन और भार[त से] कहीं कम है।

(4) अनुकरण को ही सामाजिक व्यवहार का आधारभूत सिद्धान्त [नहीं] माना जा सकता। सामाजिक व्यवहार के आधारभूत तत्त्व एक न होकर अनेक हैं, वे मूलप्रवृत्तियाँ, सुझाव, सहानुभूति, अनुकरण, शिक्षा, अवलोकन, अनुभव, [सामा]जिक परम्परा एवं अन्य तत्त्वों पर आधारित होते हैं। अतः हमें सामाजिक व्य[वहार] का आधार किसी एक तत्त्व में नहीं ढूँढ़ना चाहिए।

(5) चार्ल्स बर्ड ने इस सिद्धान्त की आलोचना करते हुए लिखा है, "[हम] अनुकरण से सीखने की अपेक्षा अनुकरण करना सीखते हैं।"[1]

सुझाव, सहानुभूति तथा अनुकरण का सामाजिक जीवन में महत्त्व एवं [कार्य] पर थोड़ा-सा विचार हमने बेगहॉट और टार्डे के सिद्धान्त के अन्तर्गत किया है। [अब] उनके महत्त्व एवं कार्य पर पृथक-पृथक विचार करेंगे।

सामाजिक जीवन में अनुकरण का महत्त्व
(Importance of Imitation in Social Life)

अनुकरण सामाजिक जीवन में एक महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। टार्डे [ने] यहाँ तक कहा है कि "सामाजिक अनुकरण है"; परन्तु ऐसा कहना अतिशयोक्ति है। इसमें सन्देह नहीं कि सामाजिक जीवन में एकरूपता एवं समानता लाने के [लिए] अनुकरण महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि [सारा] सामाजिक व्यवहार अनुकरण पर ही आधारित है। निम्न सामाजिक प्रक्रियाएं अनु[करण] के कारण होती हैं।

(1) **सामान्य भाषा**—किसी भी समाज में एक मातृभाषा या अन्य भा[षा] का विकास होता है। बचपन से ही समाज के सदस्य उसमें बोली जाने वाली [भाषा] का अनुकरण करते हैं और इसके कारण एक सामान्य भाषा लोगों द्वारा [अपनाई] जाती है।

(2) **सामान्य प्रतीक चिह्न एवं विचारधाराएँ**—किसी भी सामाजिक [समूह] के निश्चित चिह्न, प्रतीक एवं विचारधाराएँ होती हैं जो अनुकरण द्वारा स[र्वमान्य] एवं सामान्य हो जाती हैं। उदाहरणस्वरूप, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय गान तथा [अन्य] चिह्न एवं प्रतीक।

---

1. "We learn to imitate rather than learn by imitation." Ch[arles] Bird, *Social Psychology* (1940), p. 250.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) **सामान्य वेशभूषा एवं फैशन**—प्रत्येक समाज की विशिष्ट सामान्य वेशभूषा बन जाती है, जैसे—हमारे देश में स्त्रियां धोती और साड़ियां पहनती हैं। राष्ट्रीय वेशभूषा के रूप में अचकन और चूड़ीदार पाजामा का रिवाज बढ़ता जा रहा है। अनुकरण फैशन की बड़ी सहायता करता है।

(4) **सामाजिक व्यवहार एवं रीति-रिवाज**—अनुकरण के कारण सामाजिक व्यवहार एवं रीति-रिवाज भी एक विशिष्ट प्रकार के होते है, जैसे—विवाह करने की पद्धतियाँ, सम्बोधन करने की रीतियाँ इत्यादि।

(5) **आविष्कारों का फैलना**—अनुकरण के कारण आविष्कार संसार के एक कोने से समस्त संसार में फैल जाते हैं।

(6) **सामान्य संस्कृति एवं सभ्यता**—अनुकरण के कारण एक समूह की संस्कृति एवं सभ्यता समान हो जाती है। समाज की अधिकांश समानताएँ अनुकरण के कारण होती हैं। जयदेव सिंह ने लिखा है, "सामाजिक एकरूपता एवं सादृश्य का श्रोत अनुकरण है।"[1]

सामाजिक जीवन में सुझाव का महत्त्व
(Importance of Suggestion in Social Life)

सुझाव हमारे सामाजिक जीवन पर अत्यधिक प्रभाव डालता हैं। सुझाव की प्रक्रियाओं से हमारा दैनिक जीवन भरा पड़ा है। पग-पग पर सुझाव की प्रक्रिया चलती रहती है। सुझाव के कारण निम्न प्रक्रियाएँ समाज में होती हैं:

(1) सुझाव सामाजिक एकता को उत्पन्न करता है जो समाज के लिए अति आवश्यक है।

(2) सुझाव नवीन विचारों को फैलाने में महत्त्वपूर्ण कार्य करता है।

(3) नेता और अनुगामियों का सम्बन्ध सुझाव के कारण ही चल पाता है। नेता अपने अनुगामियों के सम्मुख विचारों को रखता है और अनुगामी उसे प्रतिष्ठित सुझाव होने के कारण तुरन्त स्वीकार कर लेते हैं।

(4) समाज के सर्वमान्य निगम एवं व्यवस्थाएँ व्यक्ति द्वारा बिना किसी आलोचना के स्वीकार कर ली जाती हैं। यह प्रतिष्ठित सुझाव के कारण होता है। व्यक्ति सोचता है कि समाज के सारे व्यक्ति इन्हें स्वीकार करते हैं, अतः ये सुझाव लाभकारी ही होंगे। इस प्रकार वह बिना सोचे-समझे ही उन सुझावों को स्वीकार लेता है।

सामाजिक जीवन में सहानुभूति का महत्व
(Importance of Sympathy in Social Life)

सहानुभूति सामाजिक जीवन में एक महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। यह मनुष्य एवं पशु दोनों ही के जीवन में समरसता और एकता का निर्माण करती है। पशु-

1 "The source of social similarity and conformity is imitation." Jaidev Singh, *A Manual of Social Psychology*, p. 42.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जगत की एकता तो केवल सहानुभूति के कारण ही है। डॉ० मैकडूगल ने इ... अत्यधिक जोर देते हुए लिखा है, "इस प्रकार की प्राकृतिक सहानुभूति ही सी... जो पशु समाजों को आपस में बाँधती है।[1]

न केवल पशु-जगत में ही इसका महत्त्व है, अपितु सम्पूर्ण सहानुभूति... आधार इन्हीं उद्वेगों में पाया जाता है। हम अपने दैनिक जीवन में देखते हैं कि... बचपन में जिस साधारण सहानुभूति का अनुभव करते थे वही हमारे सम्पूर्ण ... में कार्य करती है। जब कभी हम किसी दुखी को देखते हैं तो हमारे मन में सहा... जागृत हो उठती है और हम भी दुखी हो जाते हैं।

एक प्रसन्नचित्त व्यक्ति दूसरों को भी प्रसन्न कर देता है और एक रोने... दूसरे को भी रोने के लिए बाध्य कर देती है। जब हम दूसरों के दुखी उद्वे... देखते हैं तो हमारे अन्दर भी सहानुभूति के कारण पीड़ा होने लगती है। ज... दूसरों को भयभीत देखते हैं तो स्वयं भी भयभीत हो उठते हैं। क्रोध, क्रोध को... देता है। वास्तव में वात्सल्य उद्वेग हमारे अन्दर कम्पन उत्पन्न कर देता... सहानुभूति के कारण ही होता है।

अधिकतर सामाजिक व्यवहार सहानुभूति के कारण होता है। सहानु... मित्रता एवं एकता की जननी है। थाउलस ने उचित ही लिखा है, "नि... अधिकतर सामाजिक व्यवहार का श्रोत सहानुभूति ही है।"[2]

सहानुभूति समाज में उपकारी कार्यों की आधारशिला है। उपकारी के... सहानुभूति के कारण होती हैं। लंगड़े, लूलों, दुखी, दरिद्रों एवं पीड़ित व्यक्तियों... सहायतार्थ जो भी कार्य किये जाते हैं, वे सहानुभूति के कारण ही होते हैं।

प्रश्न

1. समाज में मूलप्रवृत्तियों के कार्यों की विवेचना कीजिए।
(Discuss the role of instincts in society.)

2. "सम्पूर्ण मानव क्रिया के प्रमुख चालक मूलप्रवृत्तियाँ हैं। वे, वे श... हैं, जो व्यक्ति और समाज के जीवन को बनाते हैं।" (मैकडूगल) व्यक्ति को स... के लिए मूलप्रवृत्तियों के सिद्धान्त के विरुद्ध आलोचना के सन्दर्भ में इस वक्तव्य... विवेचना कीजिए।

("Instincts are prime movers of all human activity. They... the forces that shape the life of the individuals and society." (... Dougall) Discuss the statement in the light of the criticism th...

---

1 "Sympathy of this crude kind is the cement that binds a... societies together. W. McDougall, '*An Introduction to S... Psychology*.

2 "Sympathy is unquestionably the source of much socia... behaviour." R. S. Thouless, *General and Social Psychology*, T... Edition (1953), p. 251.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

levelled against the theory of instincts in the understanding of man. Agra, M. A. 1962.)

3. "मूलप्रवृत्तियाँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से समस्त मानव क्रियाओं के प्रमुख चालक हैं।" आलोचनात्मक वर्णन कीजिए।

("Instincts are directly or indirectly the prime mover of all human activity." Discuss critical. Agra, M. A. Sociology, 1968.)

4. अपने बाद के समाजशास्त्रीय कार्य में, फ्रायड ने अपने को बच्चे एवं माँ-बाप के सम्बन्धों को निर्भरता के आधार पर जानने से पृथक किया और वहाँ से अपने मूलप्रवृत्ति के सिद्धान्त के विस्तार की ओर मुड़ा, विवेचना कीजिए।

(In his later sociological work, Freud turns away from the pursuit of the relations of child and parent on the basis of dependency, and returns to the elaboration of his instinct theory of sociology, Discuss. Agra, M. A. 1964.)

5. इड और अहम् में भेद बताइए।

(Differentiate between the 'Id' and the 'Ego'. Agra, M. A. 1959.)

6. इड, अहम् और आत्म पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write short notes on Id, Ego and Super-ego.)

7. सामाजिक जीवन में सुझाव की महत्ता की व्याख्या कीजिए तथा यह प्रदर्शित कीजिए कि विज्ञापनों एवं राजनैतिक प्रचारों में किस प्रकार यह कार्य करता है।

(Explain the significance of suggestion in social life and show how it works in advertisements and political propaganda. Agra, M. A. 1956.)

8. सामाजिक जीवन में सुझाव, सहानुभूति एवं अनुकरण के कार्यों की व्याख्या कीजिए।

(Explain the role of suggestion, sympathy and imitation in social life. Agra, M. A. Sociology, 1968.)

9. अनुकरण की परिभाषा कीजिए। टार्डे द्वारा प्रस्तुत अनुकरण के नियमों का विवेचन कीजिए।

(Define imitation. Discuss the laws of imitation as presented by Tarde. Agra, M. A. Sociology, 1970.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

13

विवेक और संकल्प का व्यक्तियों एवं समाज में कार्य
(Fuuctions of Reason and Will in Individuals and Society)

पिछले अध्यायों में हमने सामाजिक व्यवहार की व्याख्या मूलप्रवृत्तियों अन्य ऐसे तत्त्वों के आधार पर किया जो प्राय: जन्मजात होते हैं। इस अध्या हम विवेक (reason) और संकल्प (will), जो बौद्धिक शक्तियाँ हैं, को सम का प्रयत्न करेंगे और यह भी देखने का प्रयत्न करेंगे कि इनका व्यक्तियों के व्यव में एवं समाज में क्या हाथ है।

विवेक और संकल्प के अर्थ ठीक रूप से समझाने का प्रयत्न किसी ने भी किया है। अबुद्धिवादियों ने विवेक और संकल्प का विरोध किया है; परन्तु उसके स्पष्ट करने का बिलकुल भी प्रयत्न नहीं किया है। यहाँ पर हम पहले इनके अर्थों समझाने का प्रयास करेंगे।

विवेक की धारणा
(Concept of Reason)

विवेक का अर्थ समझने के पूर्व उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि समझना आवश है। देकार्ते (Descartes) ने विवेक का सम्बन्ध आत्मा से बताया है।[1] हा (Hobbes) ने 1651 में एक लेख लिखा जिसका शीर्षक था 'मानव स्वभाव अ मन के बुनियादी तत्त्व'। इसमें उसने मन के दो भाग बताए। उसने लिखा है कि की शक्तियाँ दो प्रकार की होती हैं : (1) ज्ञानात्मक (cognitive), कल्पना (imaginative) अथवा प्रत्ययात्मक (conceptive) और (2) प्रेरणात (motive)।" ज्ञानात्मक को हाब्स ने विवेक माना है। हाब्स ने लिखा है ज्ञानात्मक (विवेक) से मेरा जो अभिप्राय है उसे समझने के लिए यह स्मरण र और मानना कि हमारे मन में हमसे बाहर की वस्तुओं के ऐसे प्रतिबिम्ब अथवा उत्पन्न हुआ करते हैं कि यदि एक मनुष्य जीवित रह जाय और शेष संसार नष्ट जाय तो भी उन प्रतिबिम्बों तथा उन तमाम वस्तुओं को, जिन्हें उसने देखा था जिनका उससे साक्षात्कार हुआ था, को सुरक्षित रख सकेगा। अपने अनुभव से प्र

---

1 Descartes, *The Passions of the Soul* and also Benjamin Ra *The Classical Psychologists*, specially pp. 168—90.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति जानता है कि जिन वस्तुओं की एक बार कल्पना की जाती है उनकी अनुपस्थिति अथवा उनका नाश उस कल्पना का नाश नहीं कर सकता, जिसके द्वारा उनका अनुभव किया गया था। इन कल्पनाओं तथा बाहर की वस्तुओं के गुणों के चित्रों को ही प्रत्यय, कल्पना, विचार, सूचना अथवा ज्ञान कहा जाता है और उस विभाग या शक्ति को, जिसके द्वारा हम इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं—यहाँ पर मैं ज्ञानात्मक शक्ति अथवा प्रत्ययात्मक शक्ति कहता हूँ—जानने और समझने की शक्ति। इससे स्पष्ट है कि हाब्स ने विवेक को बाह्य वस्तुओं के चित्रों का भण्डार माना है।

जॉन लॉक ने भी विवेक के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त किये हैं। उनके अनुसार मानसिक शक्ति जन्मजात है और विवेक इस मानसिक शक्ति के आधार पर ज्ञान संग्रहण करता है।

विवेक का अर्थ समझने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसके सम्बन्ध में प्रचलित एक भ्रान्ति को भी समझ लेना चाहिए। प्रायः यह एक धारणा है कि अनुभव और विवेक दो सर्वथा पृथक वस्तुएँ हैं। यह एक बहुत बड़ी भ्रान्ति है। इन लोगों का कहना है कि अनुभव या संवेदना (sensation) वस्तुओं को प्रत्यक्ष रूप में देखती हैं और विवेक इनके बीच सम्बन्ध स्थापित करता है। विवेक यह सम्बन्ध-स्थापना का कार्य अपनी शक्ति एवं प्रकृति के आधार पर करता है। उसका अनुभव से कोई सम्बन्ध नहीं है।

यह विचार भ्रमात्मक है। वास्तव में अनुभव और विवेक एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं और वे किसी भी प्रकार पृथक नहीं किये जा सकते। दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध है और वे एक-दूसरे पर आश्रित हैं। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "ज्ञान के प्रारम्भ से ही प्रत्यक्ष और विचार अवियोज्य रूप से सम्बन्धित हैं, यहाँ तक कि जानने का कम से कम विकसित रूप भी अनिवार्यतः भेद करने, तुलना करने और परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य होता है।"[1] जो कुछ भी हम देखते हैं या प्रत्यक्षीकरण करते हैं वह केवल शून्य-मस्तिष्क से देखने की ही क्रिया नहीं है, अपितु किसी भी वस्तु के प्रत्यक्षीकरण पर हम एक अनुभव करते हैं। अनुभव सदैव एक क्रमिक विकास की प्रक्रिया है। जिस प्रकार एक मकान बनाया जाता है, एक ईंट के ऊपर दूसरी ईंट रखी जाती है और प्रत्येक ईंट का दूसरी ईंट से एक विशिष्ट सम्बन्ध होता है उसी प्रकार प्रत्येक अनुभव पूर्व प्रत्यक्षीकरण एवं संवेदना पर आधारित होता है और उसमें एक सम्बन्ध पाया जाता है। अनुभव और विवेक में घनिष्ठ सम्बन्ध है। विवेक सामान्य सिद्धान्त निर्माण करता है। सामान्य सिद्धान्त विशिष्ट अनुभवों पर ही आधारित होते हैं। बिना अनुभवों के कोई भी सामान्य सिद्धान्त नहीं बन सकता। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "सामान्य सिद्धान्तों का मूल्य केवल वहीं तक है जहाँ तक कि वे अनुभव की

---

[1] M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 35.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामग्री को परस्पर सम्बन्धित कहते हैं।"[1] इस प्रकार अनुभव और विवेक में दामन का साथ है। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "परन्तु अनुभव और विवेक के दूसरे पर निर्भर होते हैं।"[2] इसी तथ्य को समझाते हुए गिन्सबर्ग ने लिखा है, "और उसकी व्याख्या करने वाले सिद्धान्तों का हम सापेक्षिक दृष्टि से वर्णन क परन्तु सामग्री केवल दी नहीं जाती, उसमें आरम्भ से ही विचार और विवेक मौजूद रहते हैं। दूसरी ओर विवेक का अपने आप में कोई अर्थ या मूल्य नहीं यदि होता है तो तभी जब वह प्राप्त सामग्री के सहसम्बन्धों का प्रतिनिधित्व है।"[3] इस प्रकार अनुभव और विवेक में पृथक्कीकरण करने के प्रयास केवल भ्र हैं। इनमें अंशों का अन्तर है। मनुष्य की निम्न अवस्था पर विवेक की मात्रा और अनुभव की अधिक होती है। मनुष्य की उच्च अवस्थाओं में विवेक स्थान ऊँचा होता है और उसकी मात्रा भी बढ़ जाती है। अपने देश में प्रसिद्ध है कि 'पढ़े नहीं हैं परन्तु गुने अवश्य हैं'। इसका अभिप्राय: यही है कि लेकर सामान्य सिद्धान्तों का अध्ययन करके विवेक तो विकसित नहीं हुआ है; जीवन में नित्यप्रति के अनुभवों के साथ-साथ विवेक की प्राप्ति भी हो गयी है। अनुभव के आधार सामान्य सिद्धान्तों की कल्पना कर सकते हैं और जीव सामंजस्य स्थापित कर सकते हैं। हम देखते हैं कि विश्वविद्यालयों से निकले व्यक्तियों को 'कुछ अनुभव करो' की शिक्षा हर तरफ से मिलती है। हर जगह में यह एक शर्त रहती है कि इतने वर्ष का अनुभव होना चाहिए। इसका क्या प्राय है? इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि विश्वविद्यालय की शिक्षा के द्वारा सा सिद्धान्तों का ज्ञान या विवेक का विकास तो हो गया है; परन्तु बिना प्रत्यक्ष के यह विवेक उतने मूल्य का नहीं है जितना होना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि मव और विवेक एक-दूसरे के बिना अर्थहीन हैं। गिन्सबर्ग ने उचित ही लि "प्रत्यक्ष विचार के बिना अन्धा है और विचार प्रत्यक्ष के बिना खोखला है।"[4]

इस सम्बन्ध में एक भ्रान्ति और है। कुछ लोगों का मत है कि व्यक्ति इकाई नहीं है, अपितु इसके अनेक भाग हैं जो स्वतन्त्र रूप से कार्य करते हैं। अनुसार जब शारीरिक अंग अनुभव करते हैं तो मन इसमें कोई भाग नहीं यह एक भ्रमात्मक धारणा है। सरल से सरल अनुभव में भी मन का भाग र और व्यक्तित्व एक इकाई रूप में सदैव कार्य करता है। आत्मा तथा शरीर भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। व्यक्तित्व की इकाई पर प्रकाश डालते हुए गिन्सबर्ग ने

---

1 M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 36.

2 "But the empirical and the rational are mutually interdepend M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 36.

3 *Ibid*, p. 36.

4 "Sense without thought is blind, and thought without sens empty." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 36.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है, "परन्तु निश्चित रूप से ऐसा कहा जा सकता है कि चेतन व्यक्तित्व इस प्रकार टुकड़ों में बँटा हुआ नहीं हो सकता। विवेक, अनुभव, संकल्प और आवेग आत्मा की अभिव्यक्ति के तरीके हैं, आत्मा की अपने को कायम रखने और अपना अस्तित्व प्रदर्शित करने की विधियाँ हैं।"[1] व्यक्तित्व निश्चय करता है और इस निश्चय करने में उसकी आन्तरिक शक्तियों में द्वन्द्व होता है, परन्तु व्यक्तित्व और बाह्य परिस्थितियों में संघर्ष नहीं होता। गिन्सबर्ग ने उचित ही लिखा है, "इसमें कोई सन्देह नहीं है कि संघर्ष होता है; परन्तु यह संघर्ष आत्मा के अन्दर ही होता है, आत्मा और किसी बाह्य वस्तु के बीच नहीं।"[2] इस विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुभव या प्रत्यक्ष का विवेक से घनिष्ट सम्बन्ध है और इन्हें पृथक नहीं किया जा सकता। यह भी स्पष्ट हो गया है कि व्यक्तित्व एक इकाई है और उसके विभिन्न भाग एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं। अब हम विवेक के अर्थ को भली प्रकार समझ सकते हैं।

विवेक का अर्थ
(Meaning of Reason)

विवेक का अर्थ शब्दकोष के अनुसार है, "एक आधारभूत व्याख्यात्मक सिद्धान्त; मन की वह शक्ति जो निष्कर्ष निकाल सकती है और उचित एवं सत्य का निर्णय कर सकती है।" इसमें हमें ज्ञात होता है कि विवेक मन की वह शक्ति है जो सामान्य सिद्धान्तों का निर्माण कर सकती है और सत्य एवं उचित का असत्य एवं अनुचित से भेद कर सकती है। तर्क विवेक का एक प्ररूप है। विवेक की परिभाषा करते हुए गिन्सबर्ग ने लिखा है, "प्रत्यक्ष वह है जो हमें अनुभव की कच्ची सामग्री देता है, दूसरी ओर विचार या विवेक वह शक्ति है जो स्वयं अपने अन्दर से एक रहस्यात्मक ढंग से सिद्धान्त उत्पन्न करके उन सिद्धान्तों की रोशनी में प्रत्यक्ष से प्राप्त सामग्री की तुलना एवं विश्लेषण करती है।"[3] विवेक मन की एक शक्ति है जो तर्क के द्वारा अपनी क्षमता के आधार पर सामग्री का विश्लेषण कर सकती है और विभिन्न तत्त्वों में पारस्परिक सम्बन्ध एवं भेद स्थापित कर सकती है एवं सामान्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर सकती है और साथ ही नैतिक नियमों को आधार प्रदान कर सकती है।

विवेचन (निर्णय) का अर्थ
(Meaning of Judgement)

शब्दकोष के अनुसार, "विवेचन करने का कार्य सत्य की प्राप्ति के लिए विचारों की तुलना करना है।"[4] विवेचन का अर्थ स्पष्ट है। यह विवेक की शक्ति

---

1. M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 36.
2. *Ibid*, p. 37.
3. *Ibid*, p. 35.
4. "Judgement—act of judging, the comparing of ideas to elicit truth." *Chambers's Twentieth Century Dictionary*, p. 576.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर आधारित होता है, इसे सम्पूर्ण चेतन मन के आधार पर किया जाता है। नि एक प्रकार से विवेक की प्रक्रिया का फल या परिणाम है। विवेक एक आ शक्ति है और विवेचन या निर्णय इस शक्ति से प्रेरित एक क्रिया है। विवे विवेचन में अंशों का अन्तर है, दोनों ही मानसिक प्रक्रियाएँ हैं।

निर्णय में प्रेरक शक्ति नहीं पायी जाती। संकल्प में प्रेरक शक्ति पायी है। मैकडूगल ने लिखा है, "अब केवल निर्णय में प्रेरक शक्ति नहीं होती वर निर्णय 'मैं यह करूँगा और यह नहीं' केवल उस पद्धति की अभिव्यक्ति है क्रियान्वित इच्छा बाह्य रूप से अभिव्यक्त होती हैं, जबकि एक-दूसरी कार्य प को माँगने वाली परिस्थितियाँ भविष्य में रहती हैं। निर्णय इस प्रकार इच्छ क्रियाओं का सार नहीं वरन् परिणाम है।"[1] निर्णय में हम एक निश्चय कर परन्तु कार्य करना प्रारम्भ ही कर देंगे यह आवश्यक नहीं है। हम निर्णय करते कई कार्यों में से एक को छाँट लेते हैं।

इच्छा
(Desire)

इच्छा भी एक आवश्यक तत्त्व है। प्रोफेसर हाबहाउस ने इच्छा की परि करते हुए लिखा है, "इच्छा वह आवेग है जो एक विचार द्वारा विशेषित होता है गिन्सबर्ग ने लिखा है, "फिर भी यह स्पष्ट रहना चाहिए कि इच्छा, आवेग भाव से अलग और भिन्न प्रकार की वस्तु नहीं है। बल्कि इसके विपरीत विचारों से सक्रिय होने वाला आवेग ही है।"[3] इच्छा एक प्रकार का आवेग मनुष्य में उत्पन्न होता है और उसे कार्य करने के लिए प्रेरित करता है। स्थान संकल्प से निम्न स्तर का होता है, संकल्प अधिक बलवान होता है।

संकल्प
(Will)

संकल्प के अर्थ को समझने के पूर्व हमें यह समझना आवश्यक है कि ज्ञान शक्तियों का विकास किस प्रकार होता है, क्योंकि ज्ञानात्मक शक्तियों (cogn forces) के विकास के साथ ही साथ क्रियात्मक (conative) शक्तियों क विकास होता है। इस सम्बन्ध में गिन्सबर्ग ने लिखा है, "मैं समझता हूँ, अ माना जाने लगा है कि संकल्प केवल चेष्टा (conation) का एक उत्कृष्ट समझा जा सकता है, जो चेष्टा के निम्न रूपों पर निर्भर होता है और उनको अन्दर समाविष्ट करता है, और चेष्टा के क्षेत्र में विकास, ज्ञान के क्षेत्र में विका साथ-साथ चलता है।"[4]

---

1 W. McDougal, *An Introduction to Social Psychology*. p. 206.
2 "Desire is an impulse qualified by an idea." Hobhouse.
3 M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 38.
4 *Ibid*, p. 37.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज्ञानात्मक व क्रियात्मक शक्तियों का विकास
(Development of Cognitive and Conative Forces)

प्रत्येक ज्ञानात्मक स्तर के विकास के साथ-साथ क्रियात्मक स्तर का भी विकास होता है। अब हम इस पर प्रकाश डालेंगे।

प्रथम स्तर : प्रत्यक्षीकरण (Perception)—आवेग या मूलप्रवृत्तियाँ

हमें प्रारम्भ में संवेदनाएँ (sensations) होती हैं और कुछ-कुछ लगता है पर ये अर्थहीन होती हैं। कुछ समय बाद ये संवेदनाएँ सारयुक्त (meaningful) होती हैं तो इन्हें प्रत्यक्षीकरण या प्रत्यक्ष ज्ञान कहते हैं। प्रत्यक्ष ज्ञान के अनुरूप ही क्रियात्मक शक्तियों में भी विकास होता है। इस स्तर पर क्रियात्मक पक्ष में आवेग या मूलप्रवृत्तियाँ होती हैं। इस स्तर पर आवेग एवं मूलप्रवृत्तियों की शक्तियों का नियन्त्रण नहीं हो पाता। भाव की प्रमुखता रहती है। जो कुछ भी हम करते हैं वह इन्हीं के सहारे करते हैं। जिन भावों से हमें सुख का अनुभव होता है, वह हम दोबारा फिर करते हैं और जिनसे दुख का अनुभव होता है उन्हें प्रतिबन्धित करने का प्रयत्न करते हैं। इस स्तर पर हम पूर्ण रूप से आवेगों द्वारा ही नियन्त्रित एवं निर्देशित होते हैं। पशु इसी स्तर पर हैं।

दूसरा स्तर : ज्ञानात्मक स्तर—इच्छा

प्रथम स्तर से जब हम ऊपर उठते हैं तो प्रत्यक्षीकरण के ज्ञान के स्तर पर आते हैं। इस स्तर पर न केवल हम संवेदनाओं का अनुभव कर सकते हैं एवं प्रत्यक्षीकरण करके तात्कालिक परिस्थिति को समझ सकते हैं, अपितु मन का विकास इतना हो जाता है कि हम भूतकाल के अनुभवों का स्मरण कर सकें एवं उसके आधार पर भविष्य का भी एक चित्र बना सकें। कहने का तात्पर्य यह है कि ज्ञानात्मक स्तर पर मन कार्य करना प्रारम्भ कर देता है, फलस्वरूप हम सोच-विचार सकते हैं। क्रियात्मक क्षेत्र में भी इसी के अनुरूप विकास होता है और अब व्यक्ति में एक इच्छा शक्ति विकसित हो जाती है और उसी से प्रेरित होकर हम कार्य करते हैं। इच्छा विचार द्वारा विशेषित आवेग है। इच्छा को हम विचार-युक्त आवेग भी कह सकते हैं।

स्थायीभाव

इस अवस्था में हमारे आवेग तथा उद्वेग एक जटिल व्यवस्था में व्यवस्थित हो जाते हैं। इस व्यवस्था को स्थायीभाव कहते हैं।[1] स्थायीभाव सामाजिक संगठनों एवं व्यक्तियों के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। स्थायीभाव ज्ञानात्मक पक्ष में विचार के स्तर पर ही सम्भव हैं। विचार ज्ञानात्मक पक्ष में एक उच्च स्तर है।

---

1 स्थायीभाव के विषय में विस्तारपूर्वक उल्लेख "उद्वेग एवं स्थायीभाव" के अध्याय में किया गया है। इस प्रसंग के लिए पाठकों को उसे अवश्य पढ़ना चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जब मनुष्य विचार या कल्पना के ज्ञानात्मक स्तर पर होता है तो क्रिया स्तर में भी विकास होता है। व्यक्तित्व का विकास इस स्तर पर निश्चित होता है। संकल्प भी इसी स्तर पर पाया जाता है। संकल्प और व्यक्तित्व का घनिष्ठ सम्बन्ध है। अब हम संकल्प के अर्थ को समझने का प्रयत्न करेंगे।

संकल्प का अर्थ
(Meaning of Will)

संकल्प के द्वारा प्रेरित क्रियाएं सम्पूर्ण व्यक्तित्व के झुकाव को प्रदर्शित करती हैं। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि संकल्प के कार्य को नये और विलक्षण कारण की उपज नहीं समझना चाहिए, बल्कि एक ऐसा मानना चाहिए जो हमारे स्वभाव के किसी गहराई में जड़ जमाये हुए विशाल ... से आता है, रुचियों के किसी अपेक्षाकृत स्थायी संगठन से आता है, जो कहा जा सकता है कि हमारे व्यक्तित्व अथवा आत्मा की स्थायी प्रवृत्ति बन गया है।[1]

संकल्प (Will) एक प्रकार की स्थायी प्रवृत्ति होती है, जो एक व्यक्ति के व्यक्तित्व अथवा आत्मा की स्थायी प्रवृत्ति होती है और जो व्यक्ति के स्वभाव में गहरी जड़ें जमा लेता है और इस स्थायी आधार पर व्यवहार के लिए प्रेरणा देता है। संकल्प एक प्रकार का दृढ़ निश्चय होता है।

प्रो. जेम्स ने लिखा है कि संकल्प नैतिक संघर्षों में निर्बल आवेग का ... देता है। प्रायः आदर्श आवेग मूलप्रवृत्यात्मक प्रवृत्ति से निर्बल होता है। ... जेम्स ने निम्न प्रकार से व्यक्त किया है :

"I (Ideal impulse) is itself weaker than P (the native propensity.)"

I+E (Effort of will) strong than P.

प्रो. स्टाउट ने संकल्प का विवरण देते हुए लिखा है, "संकल्प निर्णय से मर्यादित व परिभाषित एक इच्छा होती है, वह जब तक हमारे अन्दर रहती है ... इच्छित लक्ष्यों की प्राप्ति ला सकते हैं।"[2]

स्टाउट ने स्पष्ट लिखा है कि संकल्प (Will) एक इच्छा (Desire) है, पर यह इच्छा निर्णय (judgement) से मर्यादित या परिभाषित होती है। वह इच्छा बहुत सोच-विचार कर निर्णय लेकर की जाती है। इस प्रकार संकल्प सोच-विचार की गयी बलवती इच्छा है। जो व्यक्ति के व्यक्तित्व में स्थायी होती है।

मैकडूगल के अनुसार निर्णय संकल्प का एक प्रभाव है, उसका सार ... मैकडूगल ने संकल्प की परिभाषा देते हुए लिखा है, "संकल्प इच्छा का सहायक ...

---

1 M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 39.

2 "Volition is a desire qualified and defined by the judgement that so far as in us lies, we shall bring about the attainment of desired end." Prof. Stout, *Mind*, Vol. V.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुनर्स्थापक होता है या स्वसम्बन्धित स्थायीभाव से उत्तेजित एक आवेग के सहयोग से उत्पन्न क्रियात्मकता है।[1]

गिन्सबर्ग ने संकल्प की परिभाषा करते हुए लिखा है, "संकल्प सक्रिय करने की शक्ति से शून्य एक विचार मात्र नहीं है, बल्कि हमारे समग्र चेष्टात्मक स्वभाव का संश्लिष्ट रूप, एकता है। यह अनिवार्यतः एक संगठन का ही तत्त्व है, सामंजस्य की दिशा में किया जाने वाला प्रयास है, जो चेष्टात्मक और भावात्मक रुचियों के जटिल संगठनों के बीच और उनके द्वारा काम करता है और इसकी जो शक्ति है वह हमारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व की शक्ति है।"[2] इस प्रकार संकल्प वह शक्ति है जो हमारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व से प्रभावित होती है। संकल्प में क्रियात्मक या चेष्टात्मक एवं ज्ञानात्मक दोनों ही शक्तियाँ पायी जाती हैं। गिन्सवर्ग ने लिखा है, "इसलिए संकल्प के अन्दर चेष्टा और ज्ञान बहुत ही घनिष्ट रूप में गुँथे हुए हैं।"[3]

ऐच्छिक क्रियाओं के पीछे भी आवेग एवं भाव होते हैं, परन्तु इन आवेगों एवं भावनाओं को विचार एवं आदर्श एक निश्चित दिशा में संगठित कर देते हैं और इनमें एक सन्तुलन उत्पन्न कर देते हैं। व्यक्तित्व की शक्ति ही संकल्प को शक्ति प्रदान करती है। गिन्सबर्ग ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "इस प्रकार संकल्प का कार्य वह है जो सम्पूर्ण व्यक्तित्व या आत्मा से उत्पन्न होता है, जो हमारे चरित्र को बनाने वाली गहरी रुचियों को प्रकट करता है, और कोई मनुष्य कितनी एकता अथवा संगठन की मात्रा प्राप्त कर चुका है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि वह काम करने के किसी ऐसे संगठनकारी सिद्धान्त को ढूंढ़ पाने में सफल हुआ है या नहीं जो उसके जीवन को सार्थक बना सकें, किसी ऐसे विशाल और दूरगामी लक्ष्य को चुन सका या नहीं जो उसके सभी आवेगों में सामंजस्य स्थापित कर दे और उसकी सभी रुचियों को आत्मसात् कर दे।"[4] व्यक्तित्व का सिद्धान्त इस दृष्टि से प्रायः माना जा चुका है। संकल्प क्रिया में लगी हुई सम्पूर्ण आत्मा (total self in action) है। मैकडूगल का मत है कि आत्मा का विचार ही संकल्प को शक्ति प्रदान नहीं करता, बल्कि आत्माभिमान का स्थायीभाव (self regarding sentiment) संकल्प को शक्ति प्रदान करता है। मैकडूगल ने लिखा है, "वे क्रियाएँ, इच्छाएँ व विरक्तियाँ जो सम्बन्धित स्थायीभाव के मध्य उत्पन्न होती हैं, वे प्रेरक शक्तियाँ हैं जो स्वयं दुर्बल, आदर्श प्रेरणाओं में योग देकर नैतिक प्रयत्नों में उसे किसी हमारी प्राथमिक पशु

---

1. "Volition is the supporting or reinforcing of a desire or conation by the co-operation of an impulse excited within the system of the self-regarding sentiment." W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 214.
2. M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 40.
3. "In will, therefore, conation and cognition are very closely linked." M. Ginsberg, *The Psychology of Socitey*, p. 40.
4. *Ibid*, p. 40.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रवृत्ति की तीव्रतर इच्छा पर स्वामित्व देती है और चेतना से उस इच्छा की स्
का विचार निकाल देने के योग्य बना देती है।"[1]

गिन्सबर्ग ने मैकडूगल के इस स्थायीभाव का विरोध किया है। उसके
आत्मसम्मान की भावना का, एक संगठनकारी तत्त्व के रूप में, बड़ा महत्त्व है;
इससे जिस एकता की प्राप्ति होती है वह बहुत ही संकीर्ण और सहानुभूति
हो सकती है। हम कठिनता से ही ऐसे मनुष्य की प्रशंसा करेंगे जो भले कर्म
करता है कि वह स्वयं प्रसन्न रह सके। व्यापक लक्ष्यों के लिए अनुराग से
अधिक एकता की प्राप्ति हो सकती है, और ऐसे लक्ष्यों को अपने में बहुमूल्य
चाहिए, केवल इसलिए उनका मूल्य नहीं होना चाहिए कि वे आत्माभिमान की
प्रवृत्ति को तृप्त करते हैं।

विवेक तथा संकल्प का व्यक्तियों के जीवन में कार्य
(Role of Reason and Will in Individuals)

विवेक और संकल्प का व्यक्ति के जीवन में अत्यधिक महत्त्व है। प्रायः
जाता है कि व्यक्ति एक विवेकशील प्राणी है। विवेक ही व्यक्ति को अन्य
से उच्च स्तर पर ले जाता है। विवेक मनुष्यों का एक मूल्यवान आभूषण
यह गुण मनुष्य के पास न होता तो वह निरा पशु ही बना रहता। अव
व्यक्तियों में विवेक की कमी होती है वे पशु समान होते हैं।

विवेक का प्रमुख कार्य निर्देशन एवं संगठन का होता है। विवेक
का कार्य करता है एवं व्यक्तियों में सन्तुलन स्थापित करता है। गिन्सबर्ग ने
"इस प्रकार महत्त्वपूर्ण कार्य मार्ग-प्रदर्शन एवं संगठन करने का हो जाता है
इसको विकास और संगठन करने वाले तत्त्व के रूप में, सामंजस्य के प्रयास के
देख सकते हैं।"[2] विवेक का कार्य सिद्धान्त एवं व्यवहार दोनों क्षेत्रों में है।
ने इन कार्यों के सम्बन्ध में लिखा है, "सिद्धान्त की दुनिया में विवेक अनुभव के
अलग तत्त्वों को जोड़ने का और किसी एकता प्रदान करने वाले सिद्धान्त के
आधार खोज निकालने का प्रयास करता है। व्यवहार की दुनिया में विवेक
एक सामंजस्यपूर्ण रूप देने का प्रयत्न करता है।"[3] विवेक मनुष्य में एक संयम
करता है। कुछ लोगों का मत है कि विवेक कुछ सामाजिक सिद्धान्तों को अनु
सामग्री पर लादता है; परन्तु यह विचार उचित नहीं है। विवेक तर्क का व्या
पहलू है। विवेक आवेगों में संघर्ष होने पर बीच-बचाव नहीं करता;
सिद्धान्तों एवं लक्ष्यों का निर्माण करता है जिससे संवेगों का एकीकरण हो सके
व्यक्तित्व के अभिन्न अंग बन सकें। वास्तव में जीवन में अनेक संघर्षों का कार

---

1 W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 2

2 M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 41.

3 *Ibid*, p. 41.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के जीवन में विवेक की कमी है। हमारे समाज में अभी तक संगठन एवं एकता की महान कमी है। अनेक प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती रहती हैं। व्यक्ति समाज से सामंजस्य नहीं स्थापित कर पाता। इस सबका कारण विवेक की कमी है। हमारी वास्तविक समस्या यह है कि अभी एकता एवं संगठन के नाम पर हमने कुछ भी प्राप्त नहीं किया है। इसलिए समाज में विवेक की अत्यधिक आवश्यकता है। गिन्सबर्ग ने उचित ही लिखा है, "इससे स्पष्ट है कि जिस चीज की हमें जरूरत है वह तर्क की कम मात्रा नहीं बल्कि अधिक मात्रा की है, जिससे व्यक्ति और समाज के सामंजस्यपूर्ण विकास के विषय में अधिक ज्ञान हो सके।"[1]

विवेक और संकल्प का समाज में कार्य
(Role of Reason and Will in Society)

विवेक उद्देश्यपूर्ण होता है। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "यह बहुत ही वृहत् रूप से स्वीकृत है कि विवेकपूर्ण व्यवहार की अपनी विभिन्नता उसकी उद्देश्यात्मकता है।"[2]

विवेक समाज में भी उद्देश्यों को विकसित करता है। सामाजिक आन्दोलन कुछ सामान्य सिद्धान्तों पर आधारित रहते हैं। विवेक और सामाजिक आन्दोलनों का घनिष्ट सम्बन्ध है। व्यवहार और विवेक में भी घनिष्ट सम्बन्ध है। विवेकशील व्यवहार समाज के लिए आवश्यक है। गिन्सबर्ग ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "तब मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि विवेक का चरित्र में कार्य प्रयत्न के लक्ष्यों को स्पष्ट व परिभाषित करना है; उन्हें एक-दूसरे से सम्बन्धित करना है, बाह्य व आन्तरिक शक्तियों की प्रकृति को प्रत्यक्ष करना है जो उनके समझने के लिए आवश्यक है; सभी सम्बद्ध भागों का विस्तृत विनिमय और उनके साथ अधिक से अधिक निष्पक्षता पर जोर देने और व्यक्ति या व्यक्तियों के मध्य विरोध होने पर; शक्ति या दमन के प्रयोग को हटा देने और ऐच्छिक स्वीकृति उत्पन्न करने के स्थान पर प्राप्त करना है।"[3]

विवेक का कार्य समाज को एक सूत्र में बाँधने का है। विवेक इस प्रकार के सिद्धान्तों का निर्माण करता है जिनसे समाज में संगठन की वृद्धि होती है और एकता की स्थापना होती है।

सामाजिक आन्दोलन कभी-कभी आवेगों पर आधारित होते हैं। उदाहरण के लिए, लोग कहते हैं कि हिन्दू-मुसलमान कभी एक नहीं हो सकते। यह एक भ्रमात्मक सिद्धान्त है। सामाजिक पक्षपातों की नींव ऐसे ही सिद्धान्तों पर खड़ी हुई है, जिनमें कोई विवेक नहीं पाया जाता। कुछ लोग नारा बुलन्द करते हैं कि 'धर्म खतरे में है', 'इस्लाम खतरे में है', 'हिन्दू धर्म नष्ट हो जायेगा' इत्यादि। ये नारे कुछ एकता अवश्य

1. M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 42.
2. M. Ginsberg, *Reason and Unreason in Society*, p. 240.
3. *Ibid*, p. 245.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पैदा करते हैं, परन्तु विवेकात्मक आधार पर उचित नहीं हैं। ये उद्वेगों पर आ[illegible] हैं। इनमें जबरदस्ती यौक्तिकीकरण (rationalization) करने का प्रयत्न [illegible] गया है। कुछ सिद्धान्त विवेक पर भी आधारित होते हैं। उदाहरण के लि[illegible] कहना बिलकुल ठीक है कि फ्रांस के विश्वकोषकारों (French Encyclopa[illegible] का प्रभाव अस्त-व्यस्त समूह को संगठन प्रदान करने का था। उनके जनतन्त्र, स[illegible] इत्यादि के सिद्धान्तों का आशातीत प्रभाव हुआ। कार्लमार्क्स, बर्ट्रेण्ड रसल इ[illegible] विचारों का प्रभाव समाज के एकीकरण में विशेष रूप से हुआ है। भारत में [illegible] गांधी के विचारों का भी अत्यधिक प्रभाव पड़ा है और भारतीय समाज में [illegible] गतिविधियाँ एकीकरण की ओर हुई हैं। कभी-कभी अकेला वाक्य भी [illegible] प्रभाव उत्पन्न करता है। उदाहरण के लिए, 'दुनिया के मजदूरो ! एक हो [illegible] 'अंग्रेजो भारत छोड़ो', 'काश्मीर हमारा है', 'लड़ाई को खत्म करने के लिए [illegible] 'V for victory' इत्यादि। इन वाक्यों में अनुभूतियों, विचारों और आवेगों [illegible] का ढेर शामिल हो जाता है और इनसे उत्पन्न प्रतिक्रियाएँ आश्चर्य में डाल दे[illegible] होती हैं।

समाज सामाजिक संस्थाओं पर खड़ा है। प्रत्येक सामाजिक संस्था [illegible] उद्देश्य होता है। सामाजिक संस्थाओं का उद्देश्य मनुष्य के जीवन में सामंजस्[illegible] करता है। हमें इस बात की खोज करनी चाहिए कि सामाजिक संस्थाएँ अपने [illegible] की कहाँ तक पूर्ति कर रही हैं। वास्तव में सामाजिक संस्थाएँ एक व्यक्ति के [illegible] से नहीं निकली हैं। ये आवश्यकताओं के अनुसार मनुष्य के विचारों से विक[illegible] हैं। इन्होंने 'प्रयास और भूल' (trial and error) के सिद्धान्त को अपना[illegible] इस कारण इनमें अनेक कमियाँ पायी जाती हैं। इन कमियों को हम उनके [illegible] विश्लेषण के द्वारा और विवेक के प्रयोग के द्वारा दूर कर सकते हैं। विवेक ह[illegible] प्रदर्शन करेगा कि सामाजिक संस्था का उद्देश्य क्या होना चाहिए। इस आ[illegible] हम उनमें सुधार कर सकते हैं और समाज में अधिक सामंजस्य उत्पन्न कर [illegible]

विवेक और मनोभाव
(Reason and Passion)

विवेक के अर्थ एवं प्रकृति पर हम प्रकाश डाल ही चुके हैं। उद्वे[illegible] हमने एक अलग अध्याय में प्रकाश डाला है। मनोभाव और विवेक के [illegible] ह्यूम ने लिखा है, "विवेक मनोभावों का दास है और ऐसा होना भी चाहि[illegible] और आज्ञापालन के अतिरिक्त इसका कभी भी कोई दूसरा काम हो ही नहीं [illegible] ह्यूम ने 'पैशन' से सभी आवेगात्मक क्रियाओं को लक्षित किया था। ह्यूम [illegible] कि व्यक्ति विवेक से बहुत कम कार्य करता है। विवेक सदैव भावों के [illegible]

1 "Reason is and ought to be the slave of the passions, [illegible] never pretend to any other office than to serve and obey." Hume.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नाचता है। इन्द्रियाँ ही व्यक्ति से जो कुछ कराती हैं वही वह करता है। ह्यूम के विचार को रिबट ने भी व्यक्त किया है। रिबट ने लिखा है, "चरित्र में मुख्य मूल-प्रवृत्तियाँ, वृत्तियाँ, आवेग, इच्छाएँ और भावनाएं हैं और कुछ नहीं।"

ह्यूम की विचारधारा का ड्रीवर ने भी समर्थन किया है, उसने लिखा है, "मनुष्यों से साधारण व्यावहारिक कार्य में हम अंकों या मनोस्थितियों की युक्तिपूर्ण चित्तवृत्तियों की ओर व्यवहार की व्याख्या और समझने के लिए नहीं देखते; परन्तु हम उनकी भावनाओं; स्थायीभावों और आदतों; उनकी पूर्व तत्परताओं और उनके चरित्र के बारे में क्या जानते हैं, की ओर देखते हैं।"[1]

इस प्रकार इन विचारों से पता लगता है कि मनुष्य केवल उद्वगा का दास है और अपनी बुद्धि से कुछ भी नहीं करता। विवेक का स्थान गौण है। यह विचार सत्य अवश्य है; परन्तु पूर्ण रूप से सत्य नहीं है। व्यक्ति का व्यवहार बुद्धि और जन्म-जात प्रवृत्तियों दोनों से संचालित होता है। मनुष्य जैसे-जैसे विकास के पथ पर बढ़ता जा रहा है, वैसे ही वैसे बुद्धि और विवेक का प्रयोग अधिक करता जा रहा है। अत्यधिक विवेकशील व्यक्ति अपने मनोभावों, उद्वेगों इत्यादि को बिलकुल दबा देता है। ऐसी अवस्था में हम देखते हैं कि विवेक मनोभावों पर शासन करता है। मनुष्य अपने विकास के जितने निम्न स्तर पर होता है उतना ही अधिक वह मनोभावों, उद्वेगों, आवेगों इत्यादि से संचालित होता है और जितना ही अधिक उसका विकास हो जाता है वह विवेक के द्वारा संचालित होता है। हम अपने दैनिक जीवन में देखते हैं कि बच्चे जरा-जरा सी बात पर मरने-मारने को तैयार हो जाते हैं; परन्तु बड़े लोग अपने विवेक से कार्य करते हैं और शान्त रहते हैं। ग्रामों में जरा-जरा सी बातों पर लाठियाँ तन जाती हैं और खून हो जाते हैं; परन्तु नगरों में लोग संयम से काम लेते हैं। प्रायः अशिक्षित वर्ग बात-बात पर गाली-गलौज करने लगता है; परन्तु शिक्षित लोग ऐसा नहीं करते। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि विवेक केवल मनोभावों का दास नहीं है।

विवेक का व्यक्ति एवं समाज के जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य है। इसके कार्यों पर हम प्रकाश डाल चुके हैं। विवेक विचारों पर आधारित होता है। विचार में बड़ी शक्ति होती है। इसका भी विवरण हम दे चुके हैं। कभी-कभी तो विचार संसार को हिला देता है और सारी शक्तियाँ मुँह ताकती रहती हैं। रसल ने लिखा है, "अन्ततः विचार की शक्ति किसी भी अन्य मानवीय शक्ति से बढ़कर है।........ सही प्रकार का विचार दुर्लभ और मुश्किल होता है, फिर भी निर्बल (नपुंसक) या शक्तिहीन नहीं होता।"[2]

---

1. James Drever, *The Psychology of Everyday Life*, pp. 19-20.
2. "The power of thought, in the long run. is greater than any other human power......The right kind of thought is rare and difficult but not impotent." Bertrand Russell.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रश्न

1. विवेक, निर्णय और संकल्प में भेद कीजिए। इनमें से प्रत्येक सामाजिक व्यवहार में क्या कार्य करता है ?

(Distinguish between reason, judgement and will. What does each play in social behaviour ? Agra, M. A. 1953.)

2. "विवेक मनोभावों का दास है और होना भी चाहिए।" (ह्यूम)

"Reason is and ought to be the slave of passion." (Hume) Agra, M.A. 1952.

3. विवेक और संकल्प के कार्यों का पूर्ण विवेचन कीजिए।

("Discuss fully the roles of reason and will. Rajasthan, M.A. 1960.)

4. विवेक और संकल्प पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write a short note on reason and will. Agra, M.A. Sociology, 1963, 1969.)

5. व्यक्तियों और समाज में विवेक एवं संकल्प के कार्यों का वर्णन कीजिए।

(Narrate the functions of Reason and Will in Individuals and society. Agra, M. A. Sociology, 1965.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

motivation – of concept

14

संप्रेरणा

(Motivation)

V.I.G.

मानव-व्यवहार की अनेक व्याख्याएँ की गयी हैं। प्रायः हम व्यक्ति की क्रियाओं (बाह्य-व्यवहार) को देखकर ही उसकी व्याख्या करना चाहते हैं। एक बच्चा रोता और चिल्लाता है और हम उसे बुरा-भला कहने लगते हैं एवं उसी व्यवहार में इसका कारण ढूँढ़ने लगते हैं। वास्तव में मानव व्यवहार बड़ा जटिल है। एक व्यक्ति नदी के किनारे जाता है और उसके अन्य साथी नदी में उतर पड़ते हैं। गर्मी के दिन हैं और नदी में केवल घुटने तक पानी है। फिर भी 'क' नदी में नहीं उतरता और जब उसके मित्र उसको घसीटते हैं तो वह चिल्लाता है और बच्चों सरीखा व्यवहार करता है। वैसे 'क' बड़ा समझदार एवं योग्य व्यक्ति है। उसके इस व्यवहार पर सब लोग आश्चर्य में पड़ जाते हैं। उसके व्यवहार की व्याख्या उस समय की तात्कालिक परिस्थियाँ नहीं कर सकतीं। नदी में डूबने का भय नहीं है फिर भी श्रीमान 'क' ऐसा व्यवहार क्यों करते हैं। श्रीमान 'क' एक क्रान्तिकारी नेता हैं और कई बार वीरता के साथ गोलियों का सामना कर चुके हैं। स्पष्ट है कि उनके इस व्यवहार को समझने के लिए उनके आन्तरिक व्यवहार को समझना पड़ेगा। मैक्लीलैण्ड ने लिखा है, "प्रतिक्रियाएँ (responses) इतनी विभिन्न दिखती हैं कि हम उनमें कोई अर्थ नहीं पाते, कोई पुनरावृत्तीय विधित्व तब तक नहीं निकाल सकते जब तक कि हम सतही घटना के पीछे पहुँचकर अन्तर्हित प्रेरणाओं (motives) उद्देश्यों या लक्ष्यों में व्याख्या ढूँढ़ने का प्रयत्न न करें।"[1]

व्यवहार को समझने का कई दृष्टियों से प्रयत्न किया जाता है। कोई व्यवहार कैसा है, क्या है और क्यों किया जाता है? ये सभी विषय समझने के हैं। इन सभी दृष्टियों से मनोवैज्ञानिकों ने मानव-व्यवहार को समझने का प्रयत्न किया है। इस सम्बन्ध में मैक्लीलैण्ड ने लिखा है, "लक्षण मनोविज्ञान पुनरावर्तित प्रतिक्रियाओं और व्यवहार की समबद्धताओं की व्याख्या करने के लिए, मानव व्यवहार के 'कैसे' को समझाने के लिए विकसित हुआ नियोजन और मनोवृत्ति शब्दावली मनुष्य क्या जानता

1 David C. McClelland, *Personality*, William Sloane Associates, New York, p. 383.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है; उसके मस्तिष्क के सारांश 'क्या है' की समस्या को हल करने के लिए विक... हुआ। प्रेरणा शब्दावली 'क्यों' प्रश्न के उत्तर में विकसित हुई—व्यक्ति ऐसा व्यव... जैसा वे करते हैं क्यों करते हैं ?"[1]

कोई व्यवहार क्यों किया जाता है ? इसका उत्तर यही है कि उसके क... लिए एक आन्तरिक संप्रेरणा रहती है। क्यों का उत्तर हमें इसी से प्राप्त होता... क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "संप्रेरणा का प्रश्न, क्यों का प्रश्न है।"[2] सं... का सम्बन्ध कारणत्व (causation) से है और संप्रेरक का तात्पर्य कारण से... है। हम क्यों भोजन करते हैं, क्यों पढ़ते हैं, क्यों कपड़े पहनते हैं, क्यों सोते हैं... नौकरी करते हैं इत्यादि प्रश्नों से संप्रेरणा सम्बन्धित है।

संप्रेरणा का अर्थ
(Concept of Motivation)

संप्रेरणा वह आन्तरिक शक्ति है जो एक व्यक्ति को कार्य करने के... प्रेरित अथवा उत्तेजित करती है। संप्रेरणा व्यक्ति की क्रियाओं को संचालित... है और दिशा प्रदान करती है। व्यक्ति की लगभग समस्त क्रियाएँ संप्रेरणाओं के... ही प्रेरित होती हैं। संप्रेरणा व्यक्ति में तनाव एवं असन्तुलन उत्पन्न करती है... उसे कार्य करने के लिए बाध्य करती है। संप्रेरणा तीन कार्य करती है :

(1) कार्य को प्रारम्भ करवाती है,

(2) क्रियाओं को गतिशीलता प्रदान करती है, और

(3) जब तक उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो जाती, तब तक क्रियाओं को... निश्चित दिशा की ओर प्रेरित करती है।

'मोटिवेशन' (motivation) शब्द लैटिन की उसी धातु का है... 'motion, move, motor,' बने हैं। अत: स्पष्ट है कि 'मोटिवेशन' का अर्थ है... देना, कार्य के लिए प्रेरित करना।

शैफर तथा अन्य ने संप्रेरणा की परिभाषा करते हुए लिखा है, "प्र... करने की वह प्रवृत्ति है जो चालक द्वारा प्रारम्भ होती है तथा अनुकूलन द्वारा... होती है।"[3] संप्रेरणा एक प्रवृत्ति (tendency) है, जो चालक (drive) द्वारा प्र... होती है और क्रिया के लिए प्रेरित करती है और जब अनुकूलन हो जाता...

---

1 David C. McClelland, *Personality*, p. 383.

2 "The question of motivation is the question 'why'. D. Krec... Richard S. Crutchfield, *Theory of Problems of Social Psych...* (1948), p. 29.

3 "A motive may now be defined as a tendency to activity ini... by a drive and concluded by an adjustment." Schaffer, G... and Scheon.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समाप्त होती है। किम्बाल यंग ने भी लिखा है, "प्रेरणा एक व्यक्ति की आन्तरिक स्थिति होती है जो उसे क्रियाएँ करने के लिए प्रेरित करती हैं।"[1]

"ऐसी स्थिति में हम कहते हैं कि व्यक्ति प्रेरित है अर्थात कार्य की ओर गतिवान या किन्हीं प्रतिक्रियाओं की ओर जो असन्तुलन या कठिनाई को हटाकर सन्तुलन स्थापित करेंगे, खींचा जा रहा, बलपूर्वक ले जाया जा रहा, या परोक्षरूप से प्रेरित किया जा रहा है :

संप्रेरणा की परिभाषाओं से स्पष्ट है कि यह एक आन्तरिक शक्ति है जो आवश्यकता के कारण उत्पन्न होती है और मनुष्य को व्यवहार करने के लिए प्रेरित करती है।

शेरिफ और शेरिफ ने लिखा है, "हम प्रेरणा शब्द को ऐसे व्यापक शब्द के रूप में प्रयोग करेंगे, जो उन सब आन्तरिक कारकों को ढँक ले जो विभिन्न प्रकार के उद्देश्य संचालित व्यवहार को जन्म देते हैं; ऐसे आन्तरिक प्रभावों को दर्शाने के लिए जैसे कि आवश्यकताएँ जो सावयवकी दशा में प्रादुर्भूत व सन्निहित होती हैं; वे इच्छाएँ जो उन पर आधारित हैं साथ ही साथ समाज से प्राप्त इच्छाएँ, महत्त्वाकांक्षाएँ और रुचियाँ।"[2]

संप्रेरणा वह आन्तरिक शक्ति है जो आवश्यकता एवं चालक से उत्पन्न होती है और उद्दीपन (incentive) से समाप्त होती है। हिलगार्ड ने इस सम्बन्ध में निम्न सूत्र बताया है :

आवश्यकता	चालक	उद्दीपन
Need	Drive	Incentive

हिलगार्ड ने लिखा है, "आवश्यकता चालक को जन्म देती है, चालक बढ़े हुए असंतुलन की दशाएँ होती हैं तो कार्य की ओर तैयारी में व्यवहार की ओर ले जाती है। उत्तेजक बाह्य वातावरण की कोई वस्तु होती है जो आवश्यकता की संतुष्टि करती है और काम में आयीं क्रिया क्रिया द्वारा चालक को कम कर देती है।[3]

संप्रेरणा एक आन्तरिक शक्ति है जो व्यक्ति को कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। हमें भूख लगती है तो हम व्याकुल हो उठते हैं और भोजन ढूंढ़ने लगते हैं। हमें प्यास लगती है तो हम पानी प्राप्त करने के प्रयत्न करते हैं। हम परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होना चाहते हैं इसलिए हम परिश्रम से अध्ययन करते हैं।

उत्तेजना और संप्रेरणा में अन्तर
(Difference Between Stimulus and Motivation)

प्रथम अध्याय में हम उत्तेजना के सम्बन्ध में लिख चुके हैं। उत्तेजता व्यक्ति

1 "Motive is an internal state of an individual which induces him to activities." K. Young.
2 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 367.
3 Hilgard, *Introduction to Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को किसी एक विशेष समय पर उत्तेजित करती है और उससे प्रतिक्रिया कर[ाती]
है। संप्रेरणा व्यक्ति के अन्तर में एक स्थायी तत्त्व के रूप में होती है जो व्यक्ति[के]
व्यवहार का नियन्त्रण सदैव करती रहती है। उत्तेजना प्रायः एक वाह्य वस्तु [या]
परिस्थिति होती है। संप्रेरणा एक आन्तरिक वस्तु है। शेरिफ तथा शेरिफ ने लि[खा]
है, "प्रेरणाएँ आन्तरिक कारकों के अति उत्तम उदाहरण हैं।"[1]

संप्रेरणा एक आन्तरिक तत्त्व है। इसे न तो किसी ने देखा है और न कोई
देख ही सकता है। इसका केवल व्यवहार के द्वारा अनुमान लगाया जा सकता है।
किम्बाल यंग ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "यह स्वीकार किया जाना चाहिए
प्रेरणा या चालक जिसे हम निर्मित; अनुमानित एक मध्यवर्ती भिन्नतापरक [कारक]
कह सकते हैं, होती है; किसी ने प्रेरणा को क्रिया में नहीं देखा है, यह देखी नहीं [जा]
सकती वरन् निरीक्षण योग्य व्यवहार से अनुमानित की जा सकती है।"[2]

संप्रेरणाएँ व्यक्ति की वह अन्तर्निहित शक्ति हैं, जो व्यक्ति को क्रिया क[रने]
की प्रेरणा देती हैं। व्यवहार से ही संप्रेरणा का अनुमान लगाया जा सकता है।
संप्रेरणा व्यक्ति के व्यवहार में उद्देश्य की दिशा निर्धारित कर देती है। मनुष्य [की]
कुछ जैविकीय आवश्यकताएँ हैं; जैसे—भूख, प्यास, साँस लेना इत्यादि, जिनकी [पूर्ति]
के लिए व्यक्ति कार्य करता है। संप्रेरणाएँ सामाजिक आधार भी लिए हुए होती हैं।
कोई व्यक्ति अपनी सौ रुपये की आय में ही प्रसन्न रहता है और कोई व्यक्ति ह[जार]
रुपये की नौकरी ढूँढ़ता है। कोई विद्यार्थी यदि तृतीय श्रेणी में ही पास हो जाये [तो]
बड़ा प्रसन्न होता है, परन्तु कोई दूसरा विद्यार्थी यदि प्रथम श्रेणी नहीं प्राप्त करता [तो]
उसे अत्यन्त दुख होता है। कोई व्यक्ति अपनी झोंपड़ी में ही प्रसन्न रहता है तो [कोई]
महल प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। ऐसा क्यों होता है ? प्रत्येक व्यवहार के [पीछे]
एक संप्रेरणा रहती है।

संप्रेरणा और मानव व्यवहार
(Motivation and Human Behaviour)

मानव-व्यवहार में संप्रेरणा का अत्यधिक महत्त्व है। संप्रेरणा ही व्यक्ति [को]
कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। यदि भूख की आवश्यकता व्यक्ति को भो[जन]
प्राप्त करने के लिए प्रेरित न करे तो शायद संसार में अधिकांश कार्य बन्द हो जा[यें]।
लोग कहते ही हैं कि यदि भगवान पेट न बनाता तो शायद कोई व्यक्ति कार्य [न]
करता। यह कथन सत्य है, परन्तु समाज एक ऐसी वस्तु है जो शायद पेट न भी [हो]
तो व्यक्ति को इसी प्रकार कार्य में व्यस्त रखता। हम समाज में रहकर केवल [पेट]
के लिए ही कार्य नहीं करते अपितु अनेक अन्य आवश्यकताएँ, जो समाज से [उत्पन्न]
हुई हैं, की पूर्ति के लिए कार्य करते हैं। हर व्यक्ति अपने पड़ोसियों से उच्च[तर]

---

1 "Motives are examples *par excellence* of internal factors." S[herif] and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 365.

2 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 19.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर रहना चाहता है। इस आवश्यकता से कार्य करने की संप्रेरणा उत्पन्न होती है।

मानव प्रकृति के ऊपर अनेक वाद-विवाद होते हैं। कोई इसे सहयोगी कहता है, तो कोई ईर्ष्यालु। कोई इसे भली प्रकृति को मानता है तो कोई इसे स्वभाव से ही दुष्ट कहता है। प्रश्न यह है कि मानव-प्रकृति है क्या ? इस पर किसी ने भी प्रकाश नहीं डाला है। मानव-प्रकृति वास्तव में इन्हीं संप्रेरणाओं पर आधारित है।

मानव-व्यवहार के लिए संप्रेरणाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि अपने विस्तृत अर्थों में प्रेरणा सारे व्यवहार का आधारभूत पहलू है।"[1]

संप्रेरणाओं के प्रकार
(Kinds of Motivations)

संप्रेरणाओं को उनकी उत्पत्ति के आधार पर दो प्रमुख भागों में बाँटा जा सकता है। प्रथम, वे संप्रेरणाएँ जिनकी उत्पत्ति जैविकीय आधारों पर होती है, इसलिए वे जन्मजात होती हैं। दूसरी, वे जिनकी उत्पत्ति सामाजिक आधारों पर होती है। इन्हें समाज-जनित संप्रेरणाएँ कहते हैं। समाज-जनित या सीखी हुई अथवा अर्जित संप्रेरणा को तीन उपविभागों में बाँटा जा सकता है। प्रथम, वे चालक जिनका समाजीकरण हो जाता है। दूसरी, सामान्य सामाजिक संप्रेरणाएँ तथा तीसरी, व्यक्तिगत सामाजिक संप्रेरणाएँ।

संप्रेरणाएँ (Motivations)

- जैवजनित या जन्मजात (Biogenic or Innate)
- समाजजनित या अर्जित (Sociogenic or Acquired)
  - सामाजीकृत जैवकीय चालक (Socialized Biological Drives)
  - सामान्य सामाजिक संप्रेरणाएँ (General Social Motivation)
  - व्यक्तिगत सामाजिक संप्रेरणाएँ (Personal Social Motivation)

जैवजनित या जन्मजात (Biogenic or Innate Motivations)

मनुष्य किसी भी प्रकार के समाज में क्यों न रहता हो उसकी कुछ आवश्यकताएँ ऐसी हैं जो सभी स्थानों पर सभी मनुष्यों में समान रूप से पायी जाती हैं। ये आवश्यकताएँ जन्मजात होती हैं। उदाहरण के लिए, भूख, प्यास, यौन इच्छा,

---

1 "It should be clear, then, that in its broadest sense motivation is a fundamental aspect of all behaviour." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 33.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नींद इत्यादि। ये जैवकीय आवश्यकताएँ होती हैं। इन्हें सीखने की आवश्य... नहीं पड़ती। ये अधिकांश रूप से दैहिक रचना के फलस्वरूप उत्पन्न होती हैं। ... हम कुछ ऐसी संप्रेरणाओं पर प्रकाश डालेंगे।

भूख (Hunger)—हम जिस पदार्थ के बने हैं वह नित्य क्षीण होता रह... और इसलिए उसकी पूर्ति भी बराबर होती रहनी चाहिए। जब हमें काफी ... तक कुछ खाने को नहीं मिलता तो हमारे आमाशय में पीड़ा अथवा कचोटन ... होती है और इन अनुभूतियों का अनुभव होता है। भूख इसी अनुभूति को कहते हैं। ... आमाशय की दीवारों की मांसपेशियों में सिकुड़न पड़ने लगती है और यही सिकु... पीड़ा की अनुभूति उत्पन्न करती है। भूख की पीड़ाओं और आमाशय के आकुं... में सम्बन्ध होता है, इस पर प्रयोग[1] करके भी देखा गया है। भूख की पीड़ाएँ ... आमाशय के आकुंचन दोनों ही रक्त की रासायनिक दशा पर निर्भर हैं। ... मनुष्य के शरीर में प्रोटीन, विटामिन, कार्बोजों इत्यादि की कमी होती है तो म... इनकी चाह करने लगता है।

जब मनुष्य भूखा होता है तो वह भोजन प्राप्त करने के लिए क्रियाशील ... उठता है। भूख की संप्रेरणा अत्यधिक तीव्र होती है। चूहों पर किए गये प्रयोगों ... ज्ञात हुआ है कि यदि चूहों को भोजन न दिया जाये तो उनकी गति में वृद्धि ... जाती है और ऐसा तब तक होता रहता है जब तक कि उन्हें भोजन प्राप्त न हो जा...

भूख मनुष्य पर अनेक प्रकार के प्रभाव डालती है। भूख व्यक्ति को ... कार्य करने से रोक देती है और सारा ध्यान भूख पर ही चला जाता है। कहा... प्रसिद्ध है 'भूखे भजन न होय गोपाला, ये लो अपनी कण्ठी माला'। मनोवैज्ञानि... ने भी अनेक प्रयोग करके यही पाया है कि भूख एक अत्यन्त प्रमुख आवश्यकता ... ऐसा एक प्रयोग मिनेसोटा विश्वविद्यालय में किया गया है। बत्तीस अन्तःप्रेरित ... विरोधियों ने इस प्रयोग के लिए अपने को प्रयोजित किया। यह प्रयोग एक ... चला। तीन महीने उनको सामान्य भोजन दिया गया, फिर छह महीने उनको ... आधा भूखा रखा गया। फिर तीन महीने उन्हें पुनर्स्थापित किया गया।[2] ... विषय में लिखा गया है, "भोजन में ही तल्लीन हो जाने के कारण उन लोगों के ... उन कार्यों में एकाग्र होना असम्भव हो गया, जिनको सम्पन्न करने का वे ... बौद्धिक निर्णय कर चुके थे। यदि कोई कुछ पढ़ने का प्रयत्न करता था तो वह ... हो भोजन के सम्बन्ध में दिवास्वप्न देखने लगता था। कभी वह अतीत में किसी ... भोजन की याद करता था और कभी किसी विशेष खाद्य-पदार्थ को खा सकने ...

---

1 Cannon, *The Handbook of General Exeprimental Psych...* (1934), p. 250.

2 A. Keys, J. Brozek A. Henschel, O. Mickelsen and H. L. Ta..., *Experimental Starvation in Man*; University of Minnesota, ... see Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, Ch. 13.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अवसर को खो देने की बात भी याद आने लगती थी। शीघ्र ही मिलने वाले भोजन के विषय में वह घण्टों सुखद कल्पनाएँ किया करता था।"[1] इन लोगों में अनेक प्रकार की ऐसी आदतें पड़ गयीं जो सामान्यतया सामान्य व्यक्तियों में नहीं होती। उदाहरण के लिए, ये लोग प्लेटें चाटने लगे और उँगलियाँ चूसने लगे। इनमें और भी अनेक असभ्य व्यवहार विकसित हो गये। कुछ लोग तो भोजन की तलाश में रहते थे और एक दो ने तो भोजन की चोरी भी की। इनका मन किसी काम में नहीं लगता था। वे भोजन के ही स्वप्न देखते रहते थे। प्रेम, काम, रोमांस इत्यादि की भावनाएँ उनमें उठती ही नहीं थीं। एक व्यक्ति से उसकी प्रेमिका मिलने आयी। उस समय का विवरण देते हुए लिखा गया है, "ऐसा विरला ही व्यक्ति था जिसने भुखमरी के अन्त तक प्रणय क्रिया निरन्तर रखी हो। प्रफुल्लित रोमांस निष्प्राण हो गये और कुछ व्यक्तियों को यह आश्चर्य था कि किस प्रकार उस विशेष लड़की में वे इतनी रुचि रखते थे; एक सहयोगी लड़की भुखमरी के लम्बे दिनों में दूर के नगर से उसे देखने आयी और उसने उसका उत्कृष्ट प्रेम निराशाप्रद रूप से उथला पाया। उसकी प्रेमप्रद प्रतिक्रियाओं का संग्रह टूट चुका था।"[2]

भोजन के अभाव में उनका जीवन बिलकुल नीरस हो गया। इस सम्बन्ध में लिखा गया है, "भोजन के मध्य समय अब भार बन गया था; यह समय अब अधिक समय तक ऐसा अवसर नहीं समझा जाता था जिसमें वे वस्तुएँ कर ली जायँ जिन्हें मुझे करना है या मैं करना चाहता हूँ, वरन् एक ऐसा समय जिसे मुझे ढोना है, जिसे अगले भोजन तक मारना है जो कभी भी बहुत तेजी से नहीं आता।"[3]

इस प्रकार भूख अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है और जीवन के महत्त्वपूर्ण कार्य इसके रहते हुए नहीं हो सकते। कार्लमार्क्स ने इसी कारण आर्थिक कारण को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

प्यास (Thirst)—प्यास भूख से भी अधिक बलवती है। आदमी कुछ दिन तक भूखा रह सकता है, परन्तु अधिक दिन प्यासा नहीं रह सकता। प्यास की संप्रेरणा मुंह और गले की श्लेष्मिक कला के सूखेपन में उत्पन्न होती है। मनुष्य का मुँह और गला सूखने लगता है। यह प्यास का चिह्न है।

यौन संप्रेरक (Sex Motive)—प्रजनन ग्रन्थियों, यानी पुरुषों में वृषणों से और स्त्री में डिंभाशय से स्रवित होने वाले हार्मोन या रस यौन संप्रेरणा के आधार हैं। मनुष्य के विकास के साथ-साथ यौन-इद्रियाँ भी विकसित होती हैं और जब वे विकसित हो जाती हैं तो मनुष्य में यौन प्रेरणाएँ होने लगती हैं। कभी-कभी व्यक्ति इतना कामातुर हो जाता है कि सामाजिक नियमों एवं मान्यताओं को भी भूल जाता

---

1 Guetzkow and Bowman, *Man and Hunger*, A Psychological Manual for Relief Workers, p. 32.

2 *Ibid*, p. 24.

3 *Ibid*, p. 19.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। यहां तक कि अत्यधिक संयम करने वाले व्यक्ति भी अपना संयम छोड़ने विवश हो जाते हैं। विश्वामित्र और मेनका का उदाहरण अत्यन्त प्रसिद्ध है।

फ्रायड ने यौन-संप्रेरणा पर अत्यधिक बल दिया है। उसके अनुसार व्यक्ति एक काम शक्ति होती है जिसे लिबिडो कहते हैं। यह शक्ति जन्म से ही होती फ्रायड के अनुसार व्यक्ति का व्यवहार इसी से प्रेरित होता है।

अन्य जैवजनित प्रेरक[1] **(Other Biogenic Motive)**—शेरिफ तथा शे ने इन संप्रेरणाओं की निम्न सूची दी है :

जैवजनित-प्रेरणाएँ अत्यन्त आवश्यक हैं और हमारी अनेक समाज-जनि आवश्यकताएँ इन्हीं पर आधारित हैं। समाज इन जैवजनित आवश्यकताओं का समाजीकरण करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इनकी पूर्ति विभिन्न समाजों विभिन्न प्रकार से होती है।

समाजीकृत जैविकीय चालक
(Socialized Biological Drives)

जैवजनित की आवश्यकताओं का समाजीकरण हो जाता है। मनुष्य समाज में पैदा होता है और इसलिए वह समाज से प्रभावित होता है। भूख, प्यास, यौन सम्बन्ध इत्यादि पर समाज का प्रभाव पड़ता है।

भूख का ही उदाहरण लीजिए, ऐसा नहीं है कि हमें भूख लगे और हम एक भोजन पर टूट पड़ें। समाज हमें यह सिखाता है कि हम भूख की तृप्ति कब करें कैसे करेंगे और किस से करेंगे ? भूख से सम्बन्धित अनेक क्रियाओं के विषय में समाज में अनेक प्रकार के नियम होते हैं। मनुष्य को उनका पालन करना पड़ता है। एक जन्मजात संप्रेरणा है। उसकी तृप्ति करने के ढंग अर्जित होते हैं। भोजन सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न नियम होते हैं। निम्न क्रियाओं सम्बन्ध में नियम होते हैं :

(1) भोजन में कौन-कौन से पदार्थ होंगे ? (2) खाना किस प्रकार पका जायेगा ? (3) खाना कौन पकायेगा ? (4) खाना किस समय खाया जायेगा (5) खाना कहाँ खाया जायेगा ? (6) खाना किस तरह बैठकर खाया जायेगा (7) खाना खाते समय के नियम। (8) खाना किस प्रकार के बर्तन में खाया जायेगा ? (9) खाना किन लोगों के साथ खाया जायेगा ?

इनके अतिरिक्त भी अन्य कार्यों के विषय में निश्चित नियम होते हैं। प्रत्येक क्रिया प्रायः निश्चित रहती है।

हम समाज में रहते हुए कुछ नियमों का पालन करते हैं और उसके कारण हमारी जैवजनित प्रेरणाओं में अनेक परिवर्तन हो जाते हैं। इनमें से कुछ निम्न हैं :

---

1 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 375.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) प्रेरणाओं में एक प्रकार की विशिष्टता आ जाती है और सामाजिक छाप लग जाती है।

(2) ये अत्यन्त जटिल हो जातीं हैं क्योंकि इनमें सामाजिक इच्छाएँ भी मिल जाती हैं।

(3) उद्दीपन तक पहुँचने के कुछ साधन निश्चित हो जाते हैं और कुछ समय में ये साधन भी लक्ष्य बन जाते हैं।

(4) मुख्य प्रेरणाओं के साथ कई नयों उत्तेजनाओं का साथ हो जाता है जिसके फलस्वरूप प्रेरणा अधिक क्रियाशील हो जाती है।

इसे हम यौन प्रेरणा के आधार पर समझा सकते हैं। यौन प्रेरणा एक जन्म-जात प्रेरणा है। पशु इस प्रेरणा से प्रेरित होकर मैथुन प्रारम्भ कर देते हैं। उनके उद्दीपन में कोई विशेष नियम कार्य नहीं करते। मनुष्य समाज में रहता है, शिक्षा एवं अनुभव से समाज के नियमों को सीखता है और नयी प्रेरणाओं को जन्म देता है। मनुष्य काम-प्रेरणा से प्रेरित होकर चाहे जिसके साथ ही मैथुन नहीं करने लगता। समाज के नियमों के अनुसार उसे एक विशिष्ट स्त्री से ही मैथुन करने का अधिकार रहता है। कोई व्यक्ति एक स्त्री विशेष से इतना आकर्षित होता है कि उसकी काम-वृत्ति उसी स्त्री को देखकर जागृत होती है। मनुष्य अपना जीवन-साथी चुनने में केवल यौन क्रिया पर ही ध्यान नहीं देते, अपितु अनेक अन्य कारणों पर भी बल देते हैं। अनेक अन्य गुण; जैसे—सुन्दरता, रंग, शिक्षा, व्यवहार, प्रकृति, घर-गृहस्थी का कार्य इत्यादि पर भी बल दिया जाता है। कभी-कभी मनुष्य में यौन प्रेरणा का स्वरूप ही परिवर्तित हो जाता है। वे केवल साथ रहना ही प्रमुख उद्देश्य मानते हैं। विवाह के सम्बन्ध में अनेक विचारधाराओं के अनुसार जीवन-साथी के 'companion' होने की क्षमता होनी चाहिए। प्रेम करने की विधि और रोमांस पर भी अनेक देशों में विशेष बल दिया जाता है। ये सामाजिक लक्ष्य जैवकीय-संप्रेरणाओं के साथी इतने घुलमिल जाते हैं कि जैवकीय-संप्रेरणाएँ पीछे रह जाती हैं और ये समाज-जनित नवीन प्रेरणाएँ प्रमुख हो जाती हैं।

सामान्य सामाजिक संप्रेरणाएँ
(General Social Motivations)

सामान्य सामाजिक संप्रेरणाएँ समाज-जनित होती हैं। ये समाज से सीखी जाती हैं और और अर्जित होती हैं। शेरिफ तथा शेरिफ ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "समाज-जनित प्रेरक वे होते हैं जो मनुष्य के द्वारा उसके सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठ-भूमि से प्राप्त किये जाते हैं।"[1] समाज अनेक प्रकार के नियम निर्धारित करता है। इस सम्बन्ध में रीवर्स ने लिखा है, "मोटा में ऐसे बहुत-से व्यक्ति आते हैं जो जनसंख्या

---

[1] "Sociogenic motives are those derived by the individual from his socio-cultural setting." Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 403.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के आधे के तुल्य हैं, जिन्हें प्रथा के अनुसार किसी जानवर का मांस खाने से, कि फलों के खाने से और किन्हीं पेड़ों को छूने से रोक दिया जाता है; बहुत से कि में इस प्रकार के प्रतिबन्ध का आधार यह है कि व्यक्ति प्रश्न में आया जानवर या स्वयं समझा जाता है। उसकी माँ को उसके जन्म से पर्व उस जानवर या पौ प्रभाव प्राप्त किया समझा जाता है।"[1]

हम अपने समाज में ही देख सकते हैं कि एक हिन्दू भूख के कारण अपने त्याग सकता है या आवश्यकता पड़ने पर दूसरे मनुष्य का मांस खा सकता है, गाय का मांस खाना उसके लिए एक कठिन कार्य है। इसी प्रकार एक मुस सूअर का माँस नहीं खाता। समाज अनेक अन्य प्रकारों से भी मनुष्य की प्रेर को निश्चित करता है।

कुछ सामान्य सामाजिक प्रेरणाएँ होती हैं। कुछ सामाजिक सामान्य संप्रे इतनी प्रबल हैं कि लोग उनको जन्मजात मानते हैं, परन्तु ऐसा उचित नहीं। इस सम्बन्ध में लिखा है, "अतः यह मानने की कोई आवश्यकता नहीं है कि मानवीय संपर्क के लिए एक प्रबल इच्छा जन्मजात होती है। यह मानना कहीं तर्कसंगत लगता है कि यूथचारिता सीखी जाती है। चूँकि सभी लोग असहायता परावलम्बन की एक अवधि के मध्य से गुजरते हैं, इसलिए सभी को यूथचा सीखनी पड़ती है। इधर "मौलिक प्रकृति तथा सर्वजन्म सुलभ परिवेश मे सीखी हुई प्रतिक्रियाओं के सामान्य रूपों" के लिए एक नया शब्द गढ़ा गया है नोट्रोप (coenotrope)। यह शब्द दो ग्रीक शब्दों से निकला है, जिसका सामान्य आदत।

सभी कोएनोट्रोपों यानी सामान्य आदतों की सूची बनाने का प्रयास नि सिद्ध होगा। यूथचारिता के अतिरिक्त ऐसी अन्य दो सामान्य आदतें अग्रलिखि (1) अनुकरण की प्रवृत्ति, जिसे प्रायः सभी मानव प्राणी सीख लेते हैं, अनुकरण करना लाभदायक प्रतीत होता है, और (2) जब हमारी अपनी सामर्थ्य हमारी सहायता नहीं कर पाती तब अपने से अधिक शक्तिशाली व्य लोकोत्तर शक्तियों से सहायता करने के लिए याचना की प्रवृत्ति। इन प्रेरणा भी उत्पत्ति मानवीय असहायता और प्रारम्भिक वर्षों में दूसरों के द्वारा पालन किये जाने की आवश्यकता से होती है।"[2]

सामान्य सामाजिक प्रेरणाएँ अनेक हैं। इनकी संख्या के विषय में वैज्ञानिकों में मतभेद है। प्रमुख सामान्य सामाजिक प्रेरणाएँ निम्न हैं :

(1) सामूहिकता (gregariousness)
(2) आत्म-स्थापन (self-assertion)

---

1 W. H. R. Rivers, *The History of Malenesian Society*, (1924), I, p. 151.

2 N. L. Munn, *Psychology*; pp. 130-31. Translation by Atma Shah.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) अर्जनात्मकता (acquisitiveness)
(4) युयुत्सा (pugnacity)

(1) **सामूहिकता** (Gregariousness)—सामूहिकता वह अर्जित प्रेरणा है जिसके कारण मनुष्य समूह में रहना चाहता है। इसी प्रेरणा के फलस्वरूप मनुष्य को एक सामाजिक प्राणी कहा जाता है। मैकडूगल ने इसे एक जन्मजात मूलप्रवृत्ति कहा है जो उचित नहीं है। सामूहिकता मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य अकेला नहीं रह सकता। जेम्स ने लिखा है, "अलग रहना उसके लिए सबसे बड़ा अभिशाप था, एकांतवास बहुतों के द्वारा यन्त्रणा की बहुत ही अप्राकृतिक पद्धति मानी गयी है। एक रेगिस्तानी द्वीप में लम्बे समय तक बन्द व्यक्ति के लिए दूर किसी खेल में मानव पर छाप की दृष्टि बहुत ही कोलाहलमय और रोमांचकारी अनुभवों में से एक होगी।"[1]

मनुष्य समूह में ही पैदा होता है और समूह में ही जीवित रहता है। हर व्यक्ति की समूह में रहने की इच्छा होती है। शाम को हम सभी कहीं न कहीं ऐसी जगहों पर जाना चाहते हैं जहाँ काफी लोग हों। लखनऊ में हजरतगंज, दिल्ली में कनाट प्लेस, जयपुर में मिरजा इस्माइल रोड, बम्बई में मैरिन ड्राइव, इन्दौर में टाउन हाल, नैनीताल में माल रोड, कानपुर में माल रोड, शिमला में अपर माल रोड, इत्यादि जगहों पर लोग शाम को जाते हैं। काफी सुसंस्कृत लोग भी अपने को इस भाव से नहीं रोक पाते। मैकडूगल ने लिखा है, "सुसंस्कृत मस्तिष्क भी झुण्ड के आकर्षण से स्वयं को विमुक्त नहीं रख सकते।"[2]

सामूहिकता यद्यपि सब समाजों में पायी जाती है फिर भी जन्मजात नहीं है। यह समाज में रहकर सीखी जाती है। ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे पता लगता है कि यह जन्मजात नहीं है। भेड़ियों द्वारा कुछ बच्चे उड़ा लिये गये थे और उन्होंने उन्हें पाला। बाद को जब ये बच्चे मिले तो उनमें सामूहिकता की प्रवृत्ति अधिक नहीं पायी गयी। इससे स्पष्ट है कि यह जन्मजात प्रवृत्ति नहीं है। यह अर्जित की जाती है।

(2) **आत्म-स्थापन** (Self-assertion)—आत्म-स्थापन भी एक प्रबल प्रेरणा है। आत्म-स्थापन की प्रेरणा प्रायः सभी समाज के व्यक्तियों में पायी जाती है। अल्फ्रेड एडलर ने शक्ति की इच्छा को एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रेरणा माना है। जीवन के प्रारम्भ से ही प्रत्येक व्यक्ति यह चाहता है कि वह अन्य लोगों से ऊँचा रहे और सारे लोग उसके आधीन रहें।

आत्म-स्थापन की प्रेरणा प्रायः सभी समाजों में पायी जाती है। इस कारण इसे भी कुछ मनोवैज्ञानिकों ने जन्मजात कहा है, ऐसा उचित नहीं है। मैकडूगल ने

1. Prof. James, *Principles of Psychology.*
2. W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 74.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी इस सम्बन्ध में लिखा है, "यह मूलप्रवृत्ति आवश्यक रूप से सामाजिक है दर्शकों की उपस्थिति के अस्तित्व में आती है।"[1]

कुछ समाजों में यह भावना पायी ही नहीं जाती। मन ने अपनी पुस्तक एक मिशनरी तथा एक इण्डियन का वार्तालाप प्रस्तुत किया है। इस वार्तालाप स्पष्ट है कि इण्डियन किसी प्रकार विचार करते हैं। वार्तालाप निम्न है :

मिशनरी : भाई, तुम किसी बड़े शहर में जाकर किसी कारखाने में नौकरी क्यों कर लेते ?

भारतीय : अच्छा मान लीजिए मुझे नौकरी मिल जाती है, तब ?

मि. : अगर तुम्हें नौकरी मिल जाती है तो तुम्हें रुपया मिलेगा और उससे सी चीजें खरीद सकोगे।

भा. : उससे क्या होगा ?

मि. : अगर तुम अपना काम ठीक ढंग से करते रहे तो तुम्हारी पदोन्नति तुम फोरमैन बन जाओगे और अधिक रुपया पाने लगोगे।

भा. : उससे क्या होगा ?

मि. : अगर तुम खूब डटकर काम करते रहोगे तो किसी दिन कारखा सुपरिन्टेंडेंट बन जाओगे।

भा. : इससे क्या होगा ?

मि. : अगर तुम और भी अधिक परिश्रम से काम करते रहो और इस व्या विषय में सारा ज्ञान प्राप्त कर लो, तो तुम एक दिन मैनेजर बन जा

भा. : अगर मान लीजिए मैं मैनेजर ही हो गया, तो मुझे उससे लाभ क्या है

मि. : अगर तुम योग्य मैनेजर सिद्ध हुए तो तुम अपना स्वतन्त्र व्यापार कर सकते हो और पहले की अपेक्षा अधिक रुपया पैदा कर सकोगे

भा. : उससे क्या होगा ?

मि. : अरे भाई, अन्ततः तुम्हारे पास इतना रुपया हो जायेगा कि तुम्हें करने की जरूरत ही नहीं रहेगी।

भा. : अरे भाई, ठीक यही तो मैं अब भी कर रहा हूँ। जो मेरे पास उसको फिर से प्राप्त करने के लिए इतना सिर दर्द मोल लेने जरूरत ? गोरे मनुष्य के हृदय में एक अशान्त-सागर सा लहरा किन्तु एक भारतीय नक्षत्रों के स्वप्न देखता है और देखता रहता है

न्यूगिनी के अरापेश (Arapesh) नाम की वन्य जाति के सदस्यों में स्थापन की प्रेरणा बिलकुल नहीं पायी जाती। वहाँ पर कोई भी व्यक्ति बनना चाहता। जूनी तथा होनी इण्डियन्स में इस संप्रेरणा का अभाव पा है। ये लोग आपस में एक-दूसरे से आगे नहीं बढ़ना चाहते।

---

1. W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*, p. 53.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) **अर्जनात्मकता (Acquisitiveness)**—अर्जनात्मकता वह प्रेरणा है जिसके आधार पर व्यक्ति वस्तुओं को अर्जन करना चाहता है तथा उनका संग्रह करना चाहता है। मैकडूगल ने इसके विषय में लिखा है, "संग्रहण और विभिन्न वस्तुओं को इकट्ठा करने का आवेग एक या दूसरे माध्यम से सभी मानवीय प्राणी दिखाते हैं और यह एक वास्तविक मूलप्रवृत्ति के कारण है। यह बहुत से जानवरों में अन्धे और अबुद्धिमत्तापूर्ण पद्धति से दिखायी देता है जो अपरिपक्व मूल प्रवृत्तियों की विशेषता होती है।"[1]

मैकडूगल इसे भी एक जन्मजात प्रवृत्ति मानता है। यह उचित नहीं है। अर्जनात्मकता एक अर्जित संप्रेरणा है और समाज से सीखी जाती है। कुछ समाजों में इसका अभाव पाया जाता है। मध्य आस्ट्रेलिया की अनेक आदिम जातियों में यह प्रेरणा बिलकुल नहीं पायी जाती। पाचलैच (Potchlatch) की प्रथा के अनुसार व्यक्ति अपना सब कुछ दे डालता है और इस प्रकार समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। भिन्न-भिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न जीवन-आदर्श होते हैं और व्यक्ति इन्हीं जीवन-आदर्शों में नियन्त्रित होता है।

(4) **युयुत्सा (Pugnacity)**—युयुत्सा वह प्रवृत्ति है जो युद्ध करने के लिए प्रेरित करती है। प्रायः लोगों का यह मत है कि युद्ध इसी के कारण होते हैं। कुछ लोग इस प्रवृत्ति को भी जन्मजात मानते हैं, इसलिए युद्ध की प्रवृत्ति को एक आवश्यक वस्तु समझते हैं। युद्ध करना या लड़ना मनुष्य की प्रकृति है। वास्तव में यह एक भ्रम है। यह प्रवृत्ति भी समाज पर आधारित है और समाज से ही सीखी जाती है। जूनी वन्य जाति के लोग अत्यन्त शान्तिप्रिय होते हैं और कभी भी झगड़ा नहीं करते।

युयुत्सा की प्रवृत्ति अधिकांश समाजों में पायी जाती है। लोग आपस में लड़ते-झगड़ते रहते हैं। प्रथम एवं द्वितीय महायुद्ध तो हो ही चुके हैं। छोटे-मोटे युद्ध राष्ट्रों के बीच होते रहते हैं। कुछ समाजों में युयुत्सा की प्रवृत्ति को बड़ा महत्त्व देते हैं। मुडंगूमर जाति में यह प्रवृत्ति अत्यधिक प्रबल है। यह आदमखोर (cannibal) जाति है। छोटी-छोटी बातों पर ये मनुष्य को मार डालते हैं। इनके बच्चों को प्रारम्भ से ही लड़ने-झगड़ने की शिक्षा दी जाती है।

व्यक्तिगत सामाजिक संप्रेरणाएँ
(Personal Social Motivations)

मनुष्य में संप्रेरणाएँ जैविक एवं सामाजिक होती ही हैं। वह कुछ ऐसी संप्रेरणाएँ भी विकसित कर लेता है जो यद्यपि समाज से सीखी हुई होती हैं, परन्तु उसकी व्यक्तिगत हो जाती हैं। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी व्यक्तिगत कुछ इच्छाएँ, लालसाएँ, उद्देश्य एवं पसन्द इत्यादि होती हैं। ये भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न होती हैं, इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार एक-दूसरे से भिन्न होता है। निम्न

---

[1] W. McDougall, *An Introduction to Social Psychology*. p. 75.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ ऐसे व्यक्तिगत तत्त्व हैं जिनके आधार पर किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत सामाजि संप्रेरणाओं को समझाया जा सकता है :

(1) मद्यपान (drug addiction),
(2) जीवन-लक्ष्य (life-goal),
(3) आकांक्षा का स्तर (level of aspiration),
(4) अभिरुचि और अभिवृत्ति (interests and attitudes),
(5) आदत की शक्ति (force of habit),
(6) अचेतन प्रेरणा (unconscious motivation)।

(1) **मद्यपान** (Drug Addiction)—मद्यपान एक ऐसी प्रेरणा है व्यक्ति में धीरे-धीरे पड़ जाती है। व्यक्ति मद्यपान का आदी हो जाता है और उ शरीर भी उसकी आवश्यकता अनुभव करने लगता है। शराब पीने वाला बिना श के नहीं रह सकता। भाँग खाने वाला बिना भाँग के नहीं रह सकता। चीन के अफीम के इतने आदी थे कि वे अपने देश को ही खो बैठे; परन्तु अफीम खाना छोड़ा। यह उनके देश का ही लक्षण हो गया था। मद्यपान एक ऐसी लत है जो कठिनाई से छूटती है। बीड़ी-सिगरेट भी ऐसी ही लतें हैं। मद्यपान की ऐसी पड़ जाती है कि व्यक्ति अपने नशे की पूर्ति के लिए कोई भी काम कर सकता यह एक प्रबल प्रेरणा है।

(2) **जीवन-लक्ष्य** (Life-goal)—प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ के लक्ष्य बन जाते हैं और फिर व्यक्ति उन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। लोगों का कहना है कि जीवन-लक्ष्य बचपन में ही निर्धारित हो जाते हैं। कोई प्रोफेसर बनना चाहता है, कोई डॉक्टर, कोई वकील, कोई इंजीनियर इत्यादि। प्रकार के लक्ष्य बनने में अनेक कारक कार्य करते हैं। आसपास के व्यक्तियों, पड़ो अध्यापकों, मित्रों आदि का प्रभाव पड़ता है। कई बार लोग अपने उच्च लक्ष्य प्राप्ति भी इनके सहारे करना चाहते हैं। मान लीजिए कोई व्यक्ति समाज की करना चाहता है। वह डाक्टर, नर्स या सामाजिक कार्यकर्ता बनकर करता है। सन्दे नहीं है कि व्यक्ति अपने लक्ष्यों को अधिकांशत: प्राप्त नहीं कर पाते और लिए उनको काफी प्रयत्न करना पड़ता है।

यदि हम इस दृष्टि से सूक्ष्म अध्ययन करें और पता लगाएँ तो हमें ज्ञात कि व्यक्तियों के कार्यों के पीछे उनके जीवन-उद्देश्यों की प्रेरणाएँ काम कर जीवन-उद्देश्य व्यक्ति को परिश्रम करने की शक्ति प्रदान करते हैं। जीवन व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्देशन करता है। अनेक व्यक्तियों की जीवनियों लगा है कि अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्ति चेतन एवं अचेतन दोनों में कार्य करता है।

(3) **आकांक्षा का स्तर** (Level of Aspiration)—प्रत्येक कुछ न कुछ आकांक्षा पायी जाती है। आकांक्षा का अभिप्राय स्पष्ट उद्देश्य है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोई व्यक्ति यह आकांक्षा रखता है कि उसके पास बँगला हो, कार हो तथा आराम की वस्तुएँ हों। कोई व्यक्ति चाहता है कि उसकी आमदनी दो सौ रुपये माहवार हो। कोई चाहता है कि उसकी आमदनी पाँच सौ रुपया माहवार हो। ये आकांक्षा के अनेक स्तर हैं। व्यक्ति-व्यक्ति की आकांक्षा का स्तर पृथक-पृथक होता है। आकांक्षाओं से प्रेरित होकर व्यक्ति कार्य करता है। आकांक्षाहीन व्यक्ति कार्य नहीं कर सकता।

आकांक्षा का स्तर व्यक्ति के सामाजिक एवं आर्थिक पर्यावरण के द्वारा निश्चित होता है। जो व्यक्ति प्रारम्भ में अमीर घराने में पैदा होता है उसकी आकांक्षाएँ आर्थिक दृष्टि में ऊँची होती हैं। जो लोग गरीब घरानों में पैदा होते हैं उनकी आकांक्षाएँ आर्थिक दृष्टि से अधिक ऊँचे स्तर की नहीं होतीं। आकांक्षाओं के निर्माण में पड़ोसियों, रिश्तेदारों एवं अन्य परिचितों का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

आकांक्षा का स्तर गिरता-उठता भी रहता है। प्रायः देखा गया है कि भारतीय नवयुवक जब एम.ए. की परीक्षाएँ देते हैं तो उनकी आकांक्षाएँ बहुत ऊँची होती हैं। आई.ए.एस., आई.एफ.एस. या चार-पाँच सौ से कम की नौकरी उनको निम्न स्तर को दिखायी पड़ती है। एम.ए. पास करने के बाद एक-दो वर्ष वेकार रहकर वे डेढ़-दो सौ की नौकरी भी स्वीकार कर लेते हैं और उनकी आकांक्षाओं का स्तर गिर जाता है। यह भारतीय नवयुवकों में निराशा एवं कुण्ठा उत्पन्न करता है। प्रारम्भ से ही आकांक्षाओं के विषय में कुछ प्रकाश पड़ता रहना चाहिए।

(4) **अभिरुचि और अभिवृत्तियाँ (Interests and Attitudes)**—अभिरुचि एक व्यक्ति की पसंद होती है। कुछ वस्तुओं की ओर वह अधिक झुकता है और कुछ की ओर कम। अभिरुचि सकारात्मक होती है। जिस ओर व्यक्ति की अभिरुचि होती है वह उसे प्रिय लगती है। अभिरुचियाँ व्यक्ति के पूर्व अनुभवों पर आधारित होती हैं। जिन वस्तुओं या कार्यों से व्यक्ति को भूतकाल में आनन्द की अनुभूति हुई होती है वह उन वस्तुओं एवं कार्यों को पसंद करने लगता है। पुनरावृत्ति से वह उनका आदी हो जाता है। व्यक्ति को संप्रेरणा इन अभिरुचियों से भी प्राप्त होती है।

अभिवृत्तियाँ व्यक्ति की धारणाएँ या झुकाव होती हैं। ये सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार की होती हैं। किन्हीं वस्तुओं के प्रति हमारी धारणा अच्छी होती है और किन्हीं के प्रति बुरी। जिन वस्तुओं के प्रति हमारी धारणा अच्छी होती है उनके प्रति हम झुकते हैं और जिनके प्रति बुरी होती है उनसे दूर भागते हैं। इस प्रकार अभिवृत्तियाँ हमारी संप्रेरणाओं पर प्रभाव डालती हैं।

(5) **आदत की शक्ति (Force of Habit)**—जब कोई कार्य हम बार-बार करते हैं तो वह हमारी आदत बन जाती है। आदत आदमी को लकीर का फकीर बना देती है। आदतें मनुष्य में ऐसे कार्य करती हैं जैसे वे मानव-स्वभाव की जन्मजात प्रवृत्तियाँ हैं। यदि हमें प्रातः पाँच बजे उठने की आदत है तो पाँच बजे हमारी आँख अवश्य खुल जायेगी। यदि हमको गाली देने की आदत है तो गाली अपने आप निकल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जायेगीं। आदत एक ऐसी गोली है जिसे छोड़ने के लिए घोड़ा दबाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। स्वचालित बन्दूक के समान आदत अपने आप कार्य करती रहती है।

आदत की इस स्वतन्त्र प्रकृति के कारण इसके विषय में क्रियात्मक स्वतन्त्रता का सिद्धान्त बनाया गया है। इस सिद्धान्त के अनुसार आदतें स्वसंचालित और स्वतन्त्र होती हैं। ये आवश्यकताओं, इच्छाओं, आकांक्षाओं इत्यादि से नियन्त्रित नहीं होतीं।

आदतें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती हैं। इनके विषय में प्रो. जेम्स ने लिखा है, "आदत समाज का विराट् गतिपालक-चक्र और उसका सबसे अधिक मूल्यवान संरक्षक है। वही हम सबको कानून की सीमा के भीतर रखती है और लक्ष्मी के वरद पुत्रों को गरीबों के ईर्ष्यालु विद्रोह से बचाये रखती है। वही जीवन के कठोरतम और कुत्सिततम रास्तों को उन लोगों से रिक्त हो जाने से बचाये रखती है जो उन पर अब तक चलते रहे हैं। वही मछुए और नाविक को जाड़े-भर समुद्र में रखती है; वही खानों के मजदूरों को अंधकार में विजाड़ित रखती है। वही रेगिस्तानों और बर्फीले प्रदेशों के निवासियों के आक्रमण से हमारी रक्षा करती है।"[1]

आदतें हमें अपने जीवन के लिए व्यवसाय चुनने में भी सहायता करती हैं। प्रो. जेम्स ने लिखा है, "वही हमें जीवन-संग्राम को हमारे प्रारम्भिक चुनाव या हमारी प्रकृति के अनुसार क्षेत्र में जारी रखने के लिए, और किसी प्रतिकूल व्यवसाय से किसी तरह निपटने के लिए विवश करती हैं, क्योंकि हम जिस योग्य हैं उसके लिए कोई दूसरा रास्ता है ही नहीं, और एक नये श्रीगणेश के लिए बहुत बिलम्ब हो चुका है। वे समाज के भिन्न-भिन्न वर्गों को मिश्रित होने से बचाए रखती हैं। 25 वर्ष की आयु के होते-होते तरुण डाक्टर, तरुण पादरी अथवा तरुण वकील में उनके व्यवसाय के अनुरूप उनका लहजा और तौर-तरीके निश्चित हो जाते हैं।"[2]

आदत एक अर्जित वस्तु है। यह मनुष्य को अनेक कार्यों को करने की प्रेरणा देती है। हम जब कठिन कार्यों को करते हैं और कोई हमसे प्रश्न करता है कि हम कैसे कर लेते हैं तो सरल भाव से यह उत्तर निकल पड़ता है कि आदत पड़ गयी है।

(6) अचेतन संप्रेरणा (Unconscious Motivation)—अचेतन संप्रेरणा भी व्यक्ति के जीवन में महत्त्वपूर्ण भाग लेती है। इन प्रेरणाओं के अनुसार व्यक्ति को यह ज्ञात नहीं रहता कि वह ऐसा क्यों कर रहा है। ये अचेतन मन में स्थित रहती हैं। फ्रायड ने सर्वप्रथम हमारा ध्यान इस ओर आकर्षित कराया। फ्रायड ने एक नापसंदगी की अचेतन संप्रेरणा के विषय में निम्नलिखित विवरण दिया है, "एक बार मैं स्नाइडर नाम के एक व्यक्ति से मिला और न जाने क्यों उसको देखते

---

[1] "Habit is the enormous fly-wheel of society, its most preci[ous] conservative agent...William James, *The Principles of Psych[ology]*, Vol. I (1890), p. 121.

[2] *Ibid*, p. 121.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसके (चरित्र के) विषय में मुझे सन्देह होने लगा.........उसके प्रति अपने दुर्भाव का मैं कोई निश्चित कारण नहीं पा सका। अचानक एक दिन मुझे यह याद आया कि कई वर्ष पूर्व मैंने एक कहानी पढ़ी थी, जिसमें स्नाइडर नामक एक पात्र बहुत ही दुष्ट चित्रित किया गया था। यह कारण याद आने पर वास्तविक स्नाइडर के प्रति मेरी सारी दुर्भावना दूर हो गयी और वह मेरा एक बहुत अच्छा मित्र बन गया।"

मन ने अपनी पुस्तक में एक इसी प्रकार का उदाहरण दिया है : एक प्रोफेसर अपने मकान से अधिक दूर तक नहीं जाया करते थे। वे इस भय का कारण नहीं जानते थे। जब उनका मनोविश्लेषण किया गया तो बातचीत के सिलसिले में उन्हें याद आया कि जब वे तीन साल के थे तो एक बार घर से निकलकर रेल की पटरियों तक पहुँच गये थे। वहाँ पर एक रेलगाड़ी आ रही थी। उसके इंजन को देखकर वे बुरी तरह से भयभीत हो गये थे। बड़े होकर वे इस घटना को भूल गये; परन्तु यह उनके अचेतन मन में पड़ी हुई थी और भय का कारण बनी हुई थी। इसी प्रकार बैग्बी ने एक उदाहरण दिया है : एक लड़की को पानी से अत्यधिक भय लगता था। वह पानी मात्र से ही डरती थी। उसे कई लोग पकड़कर नहलाते थे। जब वह सफर करती तो रेलगाड़ी की खिड़कियों को केवल इसलिए बन्द कर लेती थी जिससे वह नदियों एवं झरनों को न देख सके। बीस वर्ष की आयु में उसकी चाची उससे मिलने आयी। उसकी चाची उससे 13 वर्ष के उपरान्त मिल रही थी। उसकी चाची ने उस लड़की से कहा, 'मैंने कभी नहीं कहा है', इसको सुनते ही उस लड़की को बाल्यकाल की घटना याद हो आयी। जब वह सात वर्ष की थी तो अपनी चाची के साथ एक बाग में घूम रही थी। इस लड़की ने अपनी माँ से प्रतिज्ञा की थी कि वह चाची को छोड़कर कहीं नहीं जायेगी। परन्तु वह चाची को छोड़कर इधर-उधर घूमने लगी। बाद में वह एक झरने के बीच में दबी पायी गयी। उसकी चाची ने उसे निकाला और उसके कपड़ों को सुखाया। बाद में चाची ने उसको आश्वासन दिया कि वह इस घटना की चर्चा उसकी माँ से नहीं करेगी। लड़की इस घटना को भूल गयी थी; परन्तु भय का स्मरण उसके अचेतन मन में था और इसी कारण वह पानी से भयभीत रहती थी।

इस प्रकार की अचेतन प्रेरणाओं का ज्ञान हमें अनेक प्रकार की विकृतियाँ करने के लिए प्रेरित करता रहता है। विस्मृति, बोलने की भूलें, लिखने की भूलें, पहचानने की भूलें, वस्तुओं को इधर-उधर रखकर भूल जाने की आदत इसके उदाहरण हैं।

अचेतन संप्रेरणाएँ व्यक्ति को प्रेरित करती रहती हैं और व्यक्ति कार्य करता रहता है। इसीलिए अनेक व्यवहारों की हम क्यों करते हैं, इसका कोई उत्तर नहीं खोज पाते।

संप्रेरणाओं की सापेक्षिक शक्ति
(Relative Strength of Motivations)

कई बार यह विवाद होता है कि कौन-सी प्रेरणाएँ अधिक शक्तिशाली हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जैवजनित या समाजजनित ?. सामान्यतया जैवजनित प्रेरणाएँ अधिक शक्ति होती हैं; क्योंकि इनके बिना मनुष्य का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता है। फि यह सदैव अवसर का प्रश्न है। महात्मा गाँधी जो अनशन करते थे उसका समाजजनित प्रेरणाएँ था। वे जैवजनित प्रेरणाओं की चिन्ता नहीं करते फिर भी सामान्य रूप से साधारण परिस्थितियों में जैवजनित संप्रेरणाएँ शक्तिशाली हैं।

कुछ लोग जैवजनित प्रेरणाओं में भी यह जानने का प्रयत्न करते हैं कि सी सबसे अधिक शक्तिशाली है। कुछ लोगों का विचार है कि भूख अधिक शालो है और कुछ लोगों के अनुसार यौन-प्रेरणा। इस दृष्टि से अनेक प्रयोग गये हैं। वास्तव में यह वाद-विवाद ही व्यर्थ है।

मैसलो ने इस दृष्टि से समन्वयात्मक दृष्टिकोण रखा है। उसने दैहिक श्यकताओं को सबसे अधिक शक्तिशाली माना है। उसके अनुसार, "यह बिलकुल है कि मनुष्य रोटी के लिए रहता हैं जब कोई रोटी न हो पर उस समय मनु इच्छाओं को क्या होता है जब रोटियों की प्रचुरता हो और उसका पेट असा से भरा हो; वहाँ एकदम दूसरी और बृहत्तर आवश्यकताएँ अस्तित्व में आती हैं वहाँ पर शारीरिक भूख के अतिरिक्त प्रभाव पाती हैं और जब वे अपनी संतुष्ट हो जाती हैं तब और अधिक ऊँची आवश्यकताएँ अस्तित्व में आती हैं इसी प्रकार यह क्रम चलता रहता है।"[1]

मैसलो ने प्राणी की दृष्टि से आवश्यकताओं के मौलिक महत्त्व को रखते हुए निम्न सूची महत्त्व के अनुसार प्रस्तुत की है :

(1) दैहिक आवश्यकताएँ (physiological needs),

(2) सुरक्षा सम्बन्धी आवश्यकताएँ (safety needs)

(3) स्नेह एवं अपनेपन की आवश्यकताएँ (love and belonging ne

(4) मान-सम्मान की आवश्यकताएँ (esteem needs—'need achievement and recognition'),

(5) आत्म-सत्यता की आवश्यकताएँ (self-actualization needs),

(6) जानने और समझने की इच्छाएँ (the desires to know understand)।

इन आवश्यकताओं पर किसी न किसी ने अत्यधिक महत्त्व दिया है। आवश्यकताओं पर प्राणिशास्त्रियों ने, सुरक्षा पर हार्नी (Horney) ने, अपनेपन पर मनोविश्लेषकों ने, मान-सम्मान पर एडलर ने, आत्म-सत्यता पर (Goldstein) ने प्रकाश डाला है। मैसलो का विचार है कि जानने एवं स बारी काफी देर में आती है। निम्न कहानी के द्वारा उसने इसे समझने

1 A. H. Maslow, *A Theory of Human Motivation in Psych* *Review*, 50, pp. 370-96.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किया है : "हमें कहना चाहिए कि अ किसी संकटासीन जंगल में कई सप्ताहों तक रहा है जहाँ पर जीवित रहने का प्रयास वह अवसरीय भोजन व जल प्राप्त करके कर सका है; ब न केवल जीवित रह रहा है वरन् उसके पास एक छिपी गुफा, एक बन्दूक और बन्द रखने योग्य द्वार भी है। स के पास यह सब है और उसके साथ अन्य दो व्यक्ति भी हैं। ब के पास भोजन, बन्दूक, साथी, गुफा तो है ही इसके अतिरिक्त उसका सबसे प्रिय मित्र भी है। अन्त को इ उसी वन में इन सब वस्तुओं के साथ अपने समूह का आदर प्राप्त नेता है। संक्षिप्तता की दृष्टि से हम इन सब व्यक्तियों को केवल जीवित, सुरक्षित, वस्तु प्राप्त, प्रेम प्राप्त और आदर प्राप्त कह सकते हैं।"[1]

मैसलो के अनुसार जैसे-जैसे इन आवश्यकताओं की पूर्ति होती जाती है वैसे ही वैसे मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य बढ़ता जाता है। उसने इस सम्बन्ध में लिखा है, "लेकिन यह अभिवृद्धि आवश्यकता सन्तुष्टि का एक क्रम है; साथ ही साथ यह उन्नत मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य के अंशों का भी क्रम है।[2]

यह सापेक्षिक स्तरण केवल समझने के लिए है। इस विचारधारा ने आवश्यकता-हताशा (need-frustration) के सिद्धान्त के स्थान पर आवश्यकता-सन्तुष्टि (need-gratification) के सिद्धान्त को प्रस्तुत किया है। संप्रेरणाओं की योजना में इसका भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

संप्रेरणा सम्बन्धी कुछ सिद्धान्त
(Some Theories Relating to Motivation)

मूलप्रवृत्तियों को भी कुछ लोग महत्त्वपूर्ण संप्रेरणा मानते हैं। यहाँ पर हम संप्रेरणा सम्बन्धी कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों पर प्रकाश डालेंगे।

फ्रायड की विचारधारा

फ्रायड ने सर्वप्रथम प्रेरणाओं पर विस्तार में प्रकाश डाला है। फ्रायड के अनुसार संप्रेरणा के निम्न महत्त्वपूर्ण लक्षण हैं :

(1) समस्त व्यवहार संप्रेरित है (All Behaviour is Motivated)—फ्रायड पहला व्यक्ति है जिसने मनुष्य के समस्त व्यवहार के लिए कोई न कोई कारण माना है। उसने भूलचूक, वाणी की भूलें, लिखने की भूलें, परिहास, स्वप्न इत्यादि सभी का विश्लेषण किया है। फ्रायड ने यहाँ तक कहा है कि जब व्यक्ति से अचानक कोई संख्या चुनने को कहा जाता है तो जो संख्या वह चुनता है उसके पीछे भी कोई न कोई संप्रेरणा रहती है। इस प्रकार फ्रायड ने प्रत्येक व्यवहार को संप्रेरित माना है।

(2) संप्रेरक स्थिर होते हैं (Motives are Persistent)—फ्रायड के अनुसार संप्रेरणाएँ स्थिर होती हैं और निरन्तर कार्य करती रहती हैं। कई बार वे

[1] A. H. Maslow, *Some Theoretical Consequences of Basic Need Gratification*, '*Personality*', 16, p. 409.
[2] *Ibid*, p. 409.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चेतन मस्तिष्क से निकलकर अचेतन मस्तिष्क में चली आती हैं, परन्तु बनी रहती हैं। फ्रायड ने इसे भूलचूक के विश्लेषण से सिद्ध किया है। उसने लिखा "लेकिन तीव्रतर और अत्यधिक हलके विषयों का सामान्य गुण जिसमें त्रुटिपूर्ण अवसर कार्य हिस्सा लेते हैं, किसी घटना को अस्वागत प्राप्त, दबी हुई मनोवैज्ञानिक सामग्री के सन्दर्भ देने की योग्यता पर निर्भर है जो यद्यपि चेतना से धकेल दिया है तो भी अपने को अभिव्यक्त करने की योग्यता से पूर्णतया नहीं लूटा गया है।"[1]

(3) संप्रेरणाएँ विषय से अज्ञात अचेतन होती हैं (Motives are Unconscious, Unknown to the Subject)—संप्रेरणाएँ अचेतन होती हैं। इसके विषय में हम पहले लिख चुके हैं। फ्रायड ने इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम विस्तार में प्रकाश डाला है।

(4) संप्रेरणाएँ प्रकृति में अनिवार्यत: तनावात्मक होती हैं (Motive is Essentially Tensional in Character)—फ्रायड ने संप्रेरणाओं को ... से ही तनावात्मक माना है। तनाव के कारण प्रेरणा में शक्ति होती है। ... अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। फ्रायड ने मनुष्य के स्वभाव को ईर्ष्यालु एवं अक्खड़ ... है। इस सम्बन्ध में उसने लिखा है, "..................इस सबके पीछे कड़वा ....वह जो प्राय: उत्सुकता से मना कर दिया जाता है कि मनुष्य ... प्रेम की इच्छा लिए हुए मैत्रीपूर्ण साथी ही नहीं होते, वरन् जो आक्रमित हो ... से अपनी रक्षा करते हैं, लेकिन यह कि उनके मूलप्रवृत्तीय प्राप्ति के भाग के ... आक्रमणात्मक इच्छा की शक्तिशाली मात्रा गिनी जानी चाहिए। इसका परिणाम ... होता है कि उनका पड़ोसी उनके लिए न केवल एक सम्भव सहायक व यौन वस्तु ... है, वरन् वह उनके लिए एक ऐसा प्रलोभन भी है जिसके ऊपर उनकी आक्रमणात्मक इच्छा की संतुष्टि करे, जिसकी शक्ति का शोषण बिना मुआवजे के करे; जिसे ... उसकी सहमति के योग के अर्थों में उपयोग में लावे; जिसे यंत्रणा दे और मार ... 'मनुष्य मनुष्य के लिए भेड़िया है' कौन ऐसा है जिसमें अपने स्वयं के जीवन ... की गवाही ने सामने इन सबको मना करने की शक्ति हो।"[2]

फ्रायड के अनुसार व्यक्ति का प्रमुख कार्य अपनी चिन्ताओं एवं तनाव ... दूर करना रहता है। तनाव को कम करना आवश्यक है। यह तथ्य प्रयोजन ... दृष्टिकोण के अनुसार ही है।

(5) केवल एक संप्रेरणा है, लिबिडो (Libido), जो समस्त प्र... लिए उत्तरदायी है—फ्रायड ने समस्त प्रेरणाओं का आधार लिबिडो को बता...

---

[1] Freud, *The Psychopathology of Everyday Life, The Basic Wr... of Sigmund Freud*, translated and edited by A. A. Brill (... p. 178.

[2] S. Freud, *Civilization and its Discontents.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द को उसने दो प्रेरणाएँ बतायीं। वे थीं—लिबिडो या जीवन की मूलप्रवृत्ति (life instinct) और दूसरी मृत्यु की मूल-प्रवृत्ति (death instinct)।

(6) **संप्रेरणा की प्रकृति मूलभूत मूलप्रवृत्त्यात्मक है (Motivation is basically Instinctual in Nature)**—फ्रायड ने संप्रेरणा को जन्मजात एवं वृत्त्यात्मक माना है। फ्रायड ने अपने इस सिद्धान्त को समझाते समय लिबिडो को क विकास-क्रम में प्रस्तुत किया है। उसने संप्रेरित व्यवहार को शरीर की भाषा में स्तुत किया है। फ्रायड के अनुसार संप्रेरणाओं के विकास में प्रारम्भिक बचपन का अधिक महत्त्व होता है।

र्क्संवादी विचार

मार्क्स ने भी संप्रेरणा को समझाने का प्रयत्न किया है। मार्क्स के विचारों सामाजिक मनोविज्ञान में अधिक महत्त्व नहीं है; क्योंकि मनोवैज्ञानिकों ने इस र ध्यान नहीं दिया।

मार्क्सवादी विचारधारा ने प्रेरणाओं का आधार सामाजिक ढांचे को माना सामाजिक ढांचे में भी आर्थिक-प्रणाली पर अधिक बल दिया गया है। उनके सार प्रेरणा का मूलभूत-आधार आर्थिक प्रणाली है।

विश्लेषणात्मक सम्प्रदाय

युंग ने इस सम्प्रदाय को जन्म दिया। युंग ने जीवन-इच्छा पर महत्त्व दिया।

वैयक्तिक सम्प्रदाय

एडलर ने इस सम्प्रदाय को जन्म दिया। उसके अनुसार शक्ति की इच्छा समस्त प्रेरणाओं का मूलाधार है। बच्चे जब छोटे होते हैं तो देखते हैं कि बड़ों तुलना में उनकी आवश्यकताएँ कम पूरी होती हैं। इस प्रकार उनमें एक हीनता भावना विकसित हो जाती है और वे शक्ति प्राप्त करके इस भावना को दूर ना चाहते हैं।

र्यात्मक स्वत्वता का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन आल्पोर्ट ने किया। इनके अनुसार जैवजनित रणाएँ समाज-जनित संप्रेरणाओं या मनोवैज्ञानिक संप्रेरणाओं (psychogenic tives) को जन्म देती हैं। मनोवैज्ञानिक संप्रेरणाओं का एक बार जन्म हो जाने वे स्वतन्त्र हो जाती हैं और स्वयं अपनी ही शक्ति से संचालित होती हैं। आल्पोर्ट का यह सिद्धान्त अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मैक्लीलैंड ने इस सम्बन्ध में लिखा "उसने, इसलिए कार्यकारी स्वायत्तता की शब्दावली विकसित की जो प्रेरणाओं स्वतन्त्रता के लिए एक प्रकार की घोषणा थी।"[1]

---

1. "He, therefore, developed the concept of *functional autonomy* which was a kind of 'Declaration of Independence' for motives."
David C. McClelland, *Personality*, p. 403.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अवयवीवाद (Gestalt View)

लैविन ने अवयवीवाद का सिद्धान्त प्रस्तुत किया। लैविन वर्तमान
के अनुसार ही मानव-व्यवहार को समझने का प्रयत्न करते हैं। व्यक्ति
क्षेत्र को समझकर व्यवहार करता है। लैविन ने मनोवैज्ञानिक क्षेत्र की प
है और भौतिक क्षेत्र से इसका भेद भी किया है।

भारतीय ग्रन्थों के अनुसार

भारतीय दर्शन के अनुसार प्रेरणा का मूलभूत आधार अर्थ, धर्म,
मोक्ष हैं। हम सुख-साधनों को इकट्ठा करने का प्रयत्न करते हैं। यही
कुछ हम कर्तव्य-भावना से प्रेरित होकर करते हैं वही धर्म है। काम-प्रवृत्ति
एवं सन्तानोत्पत्ति के लिए करते हैं। हमारा चरम आदर्श अगले संसार में
रहने को कहता है या हम ईश्वर में विलीन हो जाना चाहते हैं, जिससे कष्ट
पड़ें। यही मोक्ष है। वास्तव में ये हमारे उद्देश्य हैं और प्रेरणाएँ प्रदान
फिर भी आन्तरिक प्रेरणा का उत्तर हिन्दू-दर्शन नहीं दे पाया है।

समाजशास्त्रीय सिद्धान्त

समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के अनुसार प्रेरणाएँ समूह पर आधारित
प्रत्येक समूह में भिन्न प्रेरणाएँ पायी जाती हैं। सामूहिक नियमों (group
का इन पर विशेष प्रभाव पड़ता है।

व्यक्ति ही अपने प्रेरकों के विषय में भली प्रकार से जानता है,
क्या जानें। लिण्डस्मिथ और स्ट्रॉस इस सम्बन्ध में लिखते हैं, "व्यक्ति
अर्थ में अपने उद्देश्यों का अधिकारी है, क्योंकि वह दूसरों की अपेक्षा
जानता है कि उसके मस्तिष्क में क्या है। यद्यपि विवेकीकरण और दमन
ने उसे कुरूप कर दिया हो सकता है।"[1]

संप्रेरणा यद्यपि प्राणी की दैहिक-आवश्यकताओं से शुरू होती है
उसका विशेष सम्बन्ध व्यक्ति से रहता है। जब उसका सम्बन्ध व्यक्ति से
है तो उसका आधार व्यक्ति की स्थिति (status) और कार्यों (roles) से
हो जाता है। व्यक्ति उस प्रकार के कार्य करता है जैसी उससे आशा की
यही आशाएँ उसके आन्तरिक संगठन में इस प्रकार बैठ जाती हैं कि वह
संचालित एवं प्रेरित होता है। वास्तविक संप्रेरणाएँ यहीं से प्रारम्भ
मैक्सवेबर तथा अन्य समाजशास्त्रियों ने इन्हीं कारकों पर महत्त्व दिया है।
जो वास्तव में समझी जा सकती हैं, अर्थपूर्ण होती हैं और भाषा के माध्यम
झायी जा सकती हैं। दूसरे व्यक्तियों का मूल्यांकन इसमें विशेष महत्त्व रख
संप्रेरणाओं को व्यक्ति एक-दूसरे से व्यक्त करते हैं। सामाजिक प
में इनका ज्ञान हमें होता है। हम अपने कार्यों के उद्देश्य प्रस्तुत करते हैं
को उनसे सहमत कराते हैं।

---

1 **Lindesmith and Strauss,** ***Social Psychology.***

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मैक्सवेबर एक प्रेरक की परिभाषा करते हुए लिखते हैं, "समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से प्रेरणा, शब्दकोष में एक ऐसा शब्द है जो कार्यकर्ता स्वयं और दूसरे परीक्षकों को उसके कार्य का संतोषप्रद कारण प्रतीत होता है।"[1]

कभी-कभी एक ही व्यवहार के विभिन्न प्रेरक बताये जाते हैं। यदि वही व्यवहार करके व्यक्ति सफल हो जाता है तो उसे एक संप्रेरणा के आधार पर बताया जाता है और यदि व्यक्ति विफल हो जाता है तो उसी व्यवहार को विभिन्न प्रेरणा के आधार पर बताया जाता है। किसी ने ठीक कहा है :

"Firmness in heroes, kings and seamen,
That is, when they succeed; but greatly blamed
As obstinacy, both in men and women,
Whenever their triumph pales or star is tamed..."[2]

संप्रेरणाएँ समाज से सीखी जाती हैं। संप्रेरणाएँ भिन्न-भिन्न वर्गों में भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। यदि एक व्यक्ति किसान है तो उसकी संप्रेरणाएँ कुछ होंगी और यदि एक व्यक्ति मजदूर है तो उसकी संप्रेरणाएँ भिन्न होंगी। एक धनी वर्ग के व्यक्ति की संप्रेरणाएँ इनसे भिन्न होंगी। वेबर ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "वे प्रेरणाएँ जो व्यक्तियों को कार्य करने के लिए प्रेरित करती हैं, विभिन्न वर्गों के अनुसार भिन्नता रख सकती हैं—जब मनुष्य एक स्थिति परिवर्तित करता है, वह प्रेरणाओं के एक क्रम से दूसरे क्रम की ओर जा रहा होता है।"[3]

समूह एक शक्तिशाली वस्तु है। व्यक्ति को समूह के अनुसार बनना पड़ता है। सामाजिक संप्रेरणाएँ भी समूह से ही सीखनी पड़ती हैं। लिंडस्मिथ एवं स्ट्रॉस ने लिखा है, "प्रेरणाएँ सामाजिक जीवन में अनुभव से सीखी जाती हैं; समूह से समूह में भिन्न होती हैं और सामाजिक संदर्भ में सापेक्षिक होती हैं।"[4]

प्रश्न

1. संप्रेरणा का क्या अर्थ होता है ? उत्तेजना और संप्रेरणा में क्या अन्तर है ?

(What is the meaning of motivation ? What is the difference between stimulus and motivation ?)

2. सामाजिक संप्रेरणा पर टिप्पणी लिखिए।

(Write short note on social motivation. Agra, M. A. 1961.)

---

1. Max Weber, *The Theory of Social and The Economic Organization*, Translated by A. M. Henderson and Talcott Parsons.
2. *Don Juan*, Canto XIV, pp. 89 ff.
3. Max Weber.
4. "Motives are learned in social experience, vary from group to group, and are relative to a social context." Lindesmith and Strauss, *Social Psychology* (1958), p. 310.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

3. संप्रेरणाओं के प्राप्त करने पर टिप्पणी लिखिए।

(Write short note on 'Acquisition of Motives'. Agra, M. 1962.)

4. संप्रेरणाओं के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

(Throw light on the kinds of motives.)

5. संप्रेरणा सम्बन्धी सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।

(Describe the theories regarding motivations.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

15

मानव व्यवहार की गतिशीलता
(Dynamics of Human Behaviour)

मानव व्यवहार को समझने का प्रयत्न अनेक दृष्टियों से किया गया है। इसी कारण इसके विषय में अत्यधिक मत एवं सम्प्रदाय उत्पन्न हुए हैं। मानव व्यवहार को समझने के लिए किसी भी एकांगी दृष्टिकोण को नहीं अपनाया जा सकता। कोई सम्प्रदाय एक पक्ष पर प्रकाश डालता है तो दूसरा दूसरे पक्ष पर। एक पक्ष को ही अधिक महत्त्व देना उचित नहीं है। मानव व्यवहार स्थिर नहीं है। उसमें गतिशीलता पायी जाती है। समय-समय पर परिस्थितियों के अनुसार उसमें परिवर्तन होते रहते हैं। मनुष्य के दैहिक विकास के साथ-साथ अनेक परिवर्तन दैहिक अंगों में भी हुए हैं, जिससे मानव व्यवहार में परिवर्तनों का अनुमान ही नहीं लगाया जा सकता। अतः हमें यह मानना पड़ेगा कि मानव व्यवहार गतिशील है।

शेरिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "प्राणीशास्त्रीय व सामाजिक विज्ञानों में आधुनिक झुकाव मनुष्य के व्यवहार को प्राणीशास्त्रीय-सामाजिक उत्पत्ति समझने की है। व्यवहार उन प्रतिक्रियाओं का परिणाम है; जिनमें प्राणीशास्त्रीय कारक व सामाजिक प्रभाव अविभाज्य रूप से सम्बन्धित है—यह सन्दर्भ शब्दावली की मुख्य बातों में से एक है।"[1]

व्यवहार अनेक तत्त्वों पर आधारित है। ये तत्त्व दैहिक, प्राणीशास्त्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि हैं। व्यवहार का विश्लेषण इन सबके ही सन्दर्भ में करना चाहिए।

व्यवहार की गतिशीलता को समझाते हुए क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "व्यक्ति के व्यवहार के किसी भी वर्णन में हम अपना विवरण किसी क्रियात्मक संचालक शक्ति के सन्दर्भ में प्रारम्भ करते हैं जिसे व्यक्ति चाहता है, जिसका प्रयत्न करता है या जिससे वह डरता है। इसके अतिरिक्त हम उस वस्तु या दशा को विशेषीकृत करते हैं जिसके प्रति शक्ति संचालित होती है; वह धन के लिए प्रयत्न करता है; वह शांति चाहता है और रुग्णावस्था से डरता है। इन दो विभिन्न तत्त्वों के पारस्परिक सम्बन्ध का अध्ययन अर्थात संचालक शक्ति और वह वस्तु या दशा जिसके प्रति संचालक शक्ति चालित होती है, व्यवहार की क्रियात्मकता या उद्देश्य का अध्ययन है।"[2]

---

1. Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 365.
2. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 29.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वास्तव में व्यवहार के विषय में अनुमान लगाने में कोई भी कसर नहीं गयी है। अध्याय 6 से लेकर अध्याय 14 तक हमने व्यवहार के किसी न कारक पर प्रकाश डाला है। व्यवहार की गतिशीलता की दृष्टि से अध्याय 6, एवं 14 अधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

कुछ लोगों का मत है कि मनुष्य एक पशु होने के कारण अन्य पशुओं के ही प्रेरित होता है। वे मनुष्य व्यवहार का कारण दैहिक-बनावट में ढूंढ़ना चाहे अध्याय 6 में हमने इस दृष्टि से विचार किया है। कुछ लोगों ने मूलप्रवृत्ति ही मानव व्यवहार का स्रोत माना है। इसमें मैकडूगल सर्वप्रथम थे। मैकडू विचारों पर हमने अध्याय 8 और 12 में विचार किया है। मैकडूगल ने प्रवृत्तियों पर आवश्यकता से अधिक बल दिया है। टार्डे का अनुकरण का सि मानव व्यवहार के एक प्रमुख पक्ष पर प्रकाश डालता है; फिर भी इस सिद्धान् ही पूर्ण रूप से उचित मान लेना ठीक नहीं है। उद्वेग और स्थायीभाव भी जीवन में प्रमुख भाग लेते हैं। डॉ. ट्राटर, फ्रायड, एडलर, यंग, हार्नी, विलियम इत्यादि ने मूलप्रवृत्तियों को एक न एक रूप में मानव व्यवहार का आधार मा प्रयत्न किया है। इसके विपरीत कुछ लोगों ने विवेक और संकल्प पर विशे दिया है। संप्रेरणा के सिद्धान्तों में हमने फ्रायड, मार्क्स, लैविन, एडलर, यंग, भारतीय दर्शनशास्त्र, मैक्स वेबर एवं समाजशास्त्रीय विचारधाराओं पर डाला है। इन विचारधाराओं से तो यह ज्ञात हो ही गया होगा कि इन मानव व्यवहार के कारणों के किसी एक पक्ष पर अधिक बल दिया है।

वास्तव में मानव व्यवहार का कोई भी केवल एक आधार नहीं है और किसी एक सिद्धान्त पर बल ही देना चाहिए। मानव व्यवहार के कारणों के के लिए मानव से सम्बन्धित समस्त पर्यावरण पर बल देना चाहिए। यदि हमार समन्वयात्मक दृष्टिकोण (integrated approach) रहे तो हम मानव व्यवहा भली प्रकार से समझ सकते हैं। मानव-व्यवहार की गतिशीलता को समझने के समस्त सामाजिक विज्ञानों एवं प्राकृतिक विज्ञानों की सहायता लेनी चाहिए अन्तर-अनुशासनीय दृष्टिकोण पर बल देना चाहिए। शेरिफ तथा शेरिफ सम्बन्ध में लिखा है, "तब विज्ञानों के मध्य सहयोग; विभिन्न विश्लेषण के स्त व्यक्ति या समूह और उसकी उत्पादक वस्तुओं का इकाई के रूप में प्रयोग कर प्राप्त ठोस सूचना को परस्पर बांधने के लिए एक आवश्यकता बन जाता है।"[1]

---

1 Sherif and Sherif. *An Outline of Social Psychology*, p. 30.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

16

सामाजिक प्रत्यक्षीकरण
(Social Perception)

मनुष्य के ज्ञान प्राप्ति का प्रथम चरण संवेदना (sensation) है। जब कोई उत्तेजक (stimulus) प्राणी को उत्तेजित करता है, तो सर्वप्रथम ज्ञानेन्द्रिय को प्रभावित करता है। वे इसे हमारे मस्तिष्क के ज्ञानकेन्द्र तक पहुँचाती हैं। उत्तेजना के इस गुण मात्र की चेतना प्रदान करने वाली मानसिक प्रक्रिया को संवेदना कहते हैं। इसके द्वारा हमें उत्तेजना के गुणों का आभास मात्र होता है।

संवेदना का विभाजन अनेक आधारों पर किया जा सकता है। हम इसका विभाजन ज्ञानेन्द्रियों के आधार पर करेंगे। ज्ञानेन्द्रियों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। वे हैं : (1) बाह्य ज्ञानेन्द्रिय (exteroceptors); (2) आन्तरिक ज्ञानेन्द्रिय (interoceptors); (3) मध्य ज्ञानेन्द्रिय (proprioceptors)। बाह्य ज्ञानेन्द्रिय के अन्तर्गत वे ज्ञानेन्द्रियाँ आती हैं जो बाह्य उत्तेजनाओं को ग्रहण करती हैं, जैसे—आँख, कान, नाक, जीभ, त्वचा इत्यादि। आन्तरिक ज्ञानेन्द्रियों के अन्तर्गत वे ज्ञानेन्द्रियाँ आती हैं जो आन्तरिक उत्तेजनाओं को ग्रहण करती हैं; जैसे—अन्तड़ी, हृदय इत्यादि। मध्य ज्ञानेन्द्रिय का सम्बन्ध मांसपेशी और जोड़ों में पायी जाने वाली ज्ञानेन्द्रियों से है। बाह्य ज्ञानेन्द्रिय से सम्बन्धित संवेदना को विशिष्ट संवेदना (specific sensation), आन्तरिक ज्ञानेन्द्रिय से सम्बन्धित को अन्तरावयव संवेदना (organic sensation) और मध्य ज्ञानेन्द्रिय से सम्बन्धित को स्नायविक या गति संवेदना (muscular or kinesthetic sensation) कहते हैं। (विशिष्ट संवेदनाओं के वर्गीकरण को पृष्ठ 210 के चार्ट में व्यक्त किया गया है।

संवेदना केवल उत्तेजना का बोध है। उदाहरण के लिए, हम कभी-कभी कहते हैं कि आवाज आ रही है। यह ध्वनि संवेदना है। इसी को जब हम कहते हैं कि कालेज के घण्टे की आवाज आ रही है, तो संवेदना अर्थपूर्ण हो जाती है। जब संवेदना अर्थपूर्ण हो जाती है, तो उसे प्रत्यक्षीकरण (perception) कहते हैं। केवल आवाज की चेतना मात्र संवेदना है और अर्थपूर्ण संवेदना की चेतनता प्रत्यक्षीकरण है। इसे हम निम्न सूत्र के द्वारा भी व्यक्त कर सकते हैं :

प्रत्यक्षीकरण	=	संवेदना	+	अर्थ
(Perception)		(Sensation)		(Meaning)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसे अनेक उदाहरणों के द्वारा समझाया जा सकता है। कई बार हम कहते हैं कि बू आ रही है, यह संवेदना है। बाद में हम कहते हैं कि खुशबू या बदबू आ रही है, यह प्रत्यक्षीकरण है। किसी उड़ती हुई चीज को देख भर लेना संवेदना है,

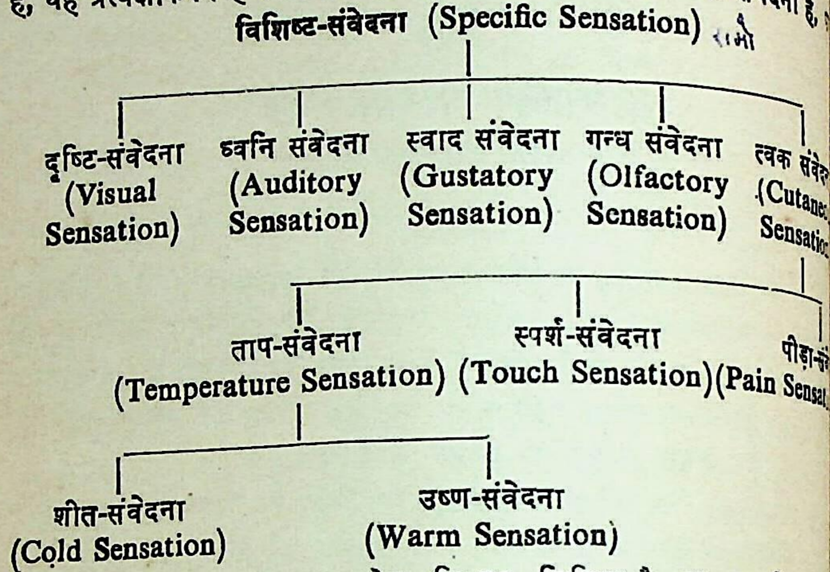

उसे देखकर इस बात का ज्ञान होना कि वह चिड़िया है या हवाई जहाज, प्रत्यक्षीकरण है।

प्रत्यक्षीकरण की मानसिक क्रिया में निम्नांकित चरण विद्यमान हैं :

(1) उत्तेजना की उपस्थिति,

(2) ज्ञानेन्द्रिय का उत्तेजना को ग्रहण करना, स्नायु प्रवाहों की उत्पत्ति,

(3) इन स्नायु प्रवाहों का मस्तिष्क के ज्ञान केन्द्र में पहुँचना,

(4) एक विशेष प्रकार की संवेदना का अनुभव,

(5) प्रत्यक्षीकरण।

प्रत्यक्षीकरण का अर्थ
(Concept of Perception)

प्रत्यक्षीकरण वह संवेदना है जिसमें कुछ अर्थ होता है। प्रत्यक्षीकरण ज्ञान की महत्त्वपूर्ण सीढ़ी है। बिना अर्थ के समस्त ज्ञान बेकार है। संवेदना के द्वारा उत्तेजना का चिह्न-मात्र प्राप्त होता है। उसी चिह्न की व्याख्या करने वाली क्रिया प्रत्यक्षीकरण है। प्रत्यक्षीकरण वह ज्ञानात्मक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी उत्तेजना का तात्कालिक ज्ञान होता है। किम्बाल यंग ने प्रत्यक्षीकरण की परिभाषा करते हुए लिखा है, "प्रत्यक्षीकरण भौतिक एवं सामाजिक दोनों प्रकार की वस्तुओं के संवेदन, अर्थ लगाने एवं व्याख्या करने की क्रिया को कहते हैं।"[1] इस परि

1 "Perception refers to the activity of sensing, interpreting and appreciating objects both physical and social." K. Young, *Handbook of Social Psychology*, p. 59

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से स्पष्ट है कि प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रिया में संवेदना (sensation) प्राप्त की जाती है, उस संवेदना की व्याख्या की जाती हैं और फिर उसे समझा जाता है। इस प्रकार प्रत्यक्षीकरण संबेदनाओं को अर्थ प्रदान करता है।

"प्रत्यक्षीकरण की व्याख्या संवेदना+अर्थ से की जा सकती है।"[1]

प्रत्यक्षीकरण और गत अनुभव
(Perception and Past Experience)

पूर्व-अनुभूति के आधार पर ही हम संवेदना का अपने ढंग से अर्थ लगाते हैं। गत अनुभव ही प्रत्यक्षीकरण का आधार है। यही कारण है कि भिन्न-भिन्न व्यक्ति समान उत्तेजना का भिन्न-भिन्न अर्थ लगाते हैं। हवाई जहाज का ही उदाहरण लीजिए, मान लीजिए एक हवाई जहाज ऐसे जंगली क्षेत्र में उतरता है, जहाँ के लोगों ने हवाई जहाज कभी नहीं देखा। वे हवाई जहाज को देखकर क्या समझेंगे? उनके लिए तो हवाई जहाज एक विशेष प्रकार की चिड़िया होगी। यदि मान लीजिए किसी ने मोटर देखी है, तो वह हवाई जहाज की आवाज सुनकर उसे उड़ने वाली मोटर कहेगा। जिसने हवाई जहाज पहले देखा है या उसके विषय में सुन रखा है या चित्र देखा है, वह फौरन उनको पहचान जायगा। अगर कोई हवाई जहाजों का जानकार या विमान चालक उसे देखेगा, तो वह यह भी बता देगा कि वह किस प्रकार का हवाई जहाज है, जेट या डाकोटा या बौम्बर। पहचानने की शक्ति के विकास के साथ प्रत्यक्षीकरण अधिक से अधिक स्पष्ट और सत्य होता जाता है।

साधारण लोग जड़ी-बूटियों को घास-फूस समझकर फेंक देते हैं, किन्तु वैद्यों की दृष्टि उन्हें तुरन्त पहचान लेती है और वे उनको संभाल कर रख लेते हैं। इसी प्रकार जो लोग पढ़ना-लिखना नहीं जानते उनके लिए पुस्तकें व्यर्थ होती हैं। इससे स्पष्ट है कि गत अनुभव ही संवेदना में अर्थ जोड़ने में सहायता करता है।

यहाँ पर एक बात समझ लेना आवश्यक है। संवेदना की अनुभूति प्रत्यक्षीकरण से अलग नहीं हो सकती। प्रत्यक्षीकरण ही सरलतम मानसिक क्रिया है। इसी क्रिया को ठीक समझने के लिए इसका विश्लेषण हम संवेदना के अर्थ के रूप में कर लेते हैं। इस सम्बन्ध में बोरिंग तथा अन्य ने लिखा है, "साधारण पशुओं के लिए उनके भौतिक पर्यावरण में यही एक केन्द्रीय घटनाएँ हैं, वे घटनायें जो उसके वास्तविक सम्पर्क में आती हैं, जो उसकी क्रियाओं के आदर्श बनाती हैं, उच्च श्रेणी के पशुओं के लिए ज्यादा दूरी की घटनाएँ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं।"[2]

वास्तविकता नाम की कोई चीज नहीं होती। वास्तव में जो कुछ हम साक्षात्कार करते हैं वह कुछ दशाओं में वैसा दिखायी पड़ता है। वस्तुएँ एवं घटनाएँ बहुत ही स्थूल और स्पष्ट प्रतीत होती हैं। हम समझते हैं कि ससार वैसा ही है, जैसा हम उसको प्रत्यक्ष रूप में देखते हैं, परन्तु बात इतनी सरल नहीं है। संसार एक

1 "Perception may be defined as sensation plus meaning."
2 Boring, Langfield and Weld.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पहेली बना हुआ है। भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने अपने सूक्ष्म यन्त्रों द्वारा और वि... के द्वारा यह दिखाया है कि जो ठोस चीज हम अपने हाथ में देखते हैं वह वा... ठोस नहीं है। यह पदार्थ के छोटे-छोटे टुकड़ों से बनी है और यह सब कण... अपने दायरों (orbits) में चन्द्रमा की तरह घूम रहे हैं और इन कणों के ... काफी स्थान है। ✓

✓ प्रत्यक्षीकरण के दो प्रमुख निश्चायक
(To Major Determinants of Perception)

प्रत्यक्षीकरण के संगठन के दो प्रमुख निश्चायक हैं। जो कुछ भी प्रत्य... हम करते हैं, वह इन पर आधारित होता है। पहला है—ढाँचे सम्बन्धी ... (structural factors) और दूसरा—कार्य सम्बन्धी कारक (functional fac...

ढाँचे सम्बन्धी कारक (Structural Factors)

क्रच तथा क्रचफील्ड ने इसकी व्याख्या करते हुए लिखा है, "ढाँचे ... कारकों से तात्पर्य उन कारकों से है जो भौतिक उत्तेजना की प्रकृति से पू... ली गयी है और स्नायविक प्रभाव से है जो वे व्यक्ति के स्नायु-संस्थान में ... करते हैं।"[1]

ढाँचे सम्बन्धी कारकों के विषय में कुछ महत्त्वपूर्ण नियम निर्धारित ... हैं। इस सम्बन्ध में वर्दीमीयर (Wertheimer) के अध्ययन उल्लेखनीय हैं। ... ने भी इन पर प्रकाश डाला है।[2] इसमें महत्त्वपूर्ण कारक हैं: (1) स... (2) समीपता, (3) समरूपता, (4) अविच्छिन्नता, (5) समान गति, (6) ... करण, (7) आच्छादित स्वरूप। अब हम देखेंगे कि इन कारकों का प्रत्यक्षी... क्या प्रभाव पड़ता है।

(1) **समानता** (Similarity)—समानता या सदृश्य वस्तुओं को ह... इकाई के रूप में देखते हैं। अन्य असमान वस्तुओं को हम उससे पृथक दे... उदाहरण के लिए, यदि लाल, हरे और काले रंग के बिन्दु उत्तेजना के रूप में ... किये जायँ, तो हम लाल रंग के बिन्दुओं को एक इकाई के रूप में देखेंगे ... प्रकार हरे रंग के बिन्दुओं की इकाई होगी और काले रंग के बिन्दुओं की ... इकाई होगी। इससे स्पष्ट है कि समानता प्रत्यक्षीकरण में इकाइयों का ... करती है।

---

1 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Ps...* (1948), p. 81.

2 E. B. Newman, Perception in E. G. Boring, H. S. Langfe... H. P. Weld, *Foundation of Psychology* (1948), Wiley, New ... D. Katz, *Gestalt Psychology* (1950), Ronald, New York ... Wertheimer, *Laws of Perceptual Forms*, W. D. Ellis (... *Sourcebook of Gestalt Psychology* (1939), Harcourt. Brace ... York.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-3

(2) **समीपता** (Proximity)—जो वस्तुएँ एक-दूसरे के निकट या समीप होती हैं, वे भी एक इकाई के रूप में दिखायी पड़ती हैं। निकट की वस्तुएँ एक-दूसरे से सम्बन्धित-सी लगती हैं। मान लीजिए कि सामने कुछ पेड़ हैं। तीन पेड़ एक-दूसरे के समीप हैं, फिर कुछ दूरी पर चार पेड़ पास-पास हैं। तो पहले तीन पेड़ एक इकाई में दिखायी देंगे और दूसरे चार पेड़ दूसरी इकाई में।

(3) **समरूपता** (Symmetry)—जो वस्तुएँ समरूप होती हैं, उनकी भी एक इकाई बन जाती है।

(4) **अविच्छिन्नता** (Good Continuation)—जो वस्तुएं क्रमबद्ध दिखायी देती हैं, वे भी एक इकाई बन जाती हैं।

(5) **समान गति** (Common Movement)—ढाँचे सम्बन्धी कारकों में समान गति भी एक महत्त्वपूर्ण कारक है।

(6) **समूहीकरण** (Grouping)—हमें एक साथ सब वस्तुएँ नहीं दिखायी पड़तीं। जो एक समूह में होती हैं, वे इकाई के रूप में दिखायी पड़ती हैं।

(7) **आच्छादित स्वरूप** (Closed Form)—यदि कोई आकृति अपूर्ण हो, फिर भी वह पूर्ण दिखायी देती है यदि उसका स्वरूप आच्छादित हो।

गैस्टाल्टवादियों के अनुसार ढाँचे सम्बन्धी कारक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। उनके अनुसार यही कारक निश्चायक हैं। इस कारण प्रत्यक्षीकरण के सम्बन्ध में इनका दृष्टिकोण समझना आवश्यक है।

प्रत्यक्षीकरण में गैस्टाल्ट दृष्टिकोण

ढाँचे सम्बन्धी कारकों के विश्लेषण से स्पष्ट हो गया होगा कि प्रत्यक्षीकरण में व्यवस्था होती है। हमें उत्तेजनाएं एक समूह के रूप में दिखायी पड़ती हैं। कुछ उत्तेजनाएँ आकार के रूप में दिखायी पड़ती हैं और कुछ आधार के रूप में। प्रत्येक चित्र का एक आकार और आधार होता है। आकार स्पष्ट एवं निश्चित स्वरूप का होता है। आधार अनिश्चित होता है और उसकी कोई रूपरेखा नहीं होती। एक दीवार पर आप अपनी छाया देखिए। छाया आकार है और दीवार आधार है। छाया की आकृति निश्चित एवं स्पष्ट है। दीवार की कोई रूपरेखा नहीं है। गेरट ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "चित्र (figure), आधार (ground) से अधिक स्पष्टतः संगठित किया जाता है।"

रूबिन (Rubin) ने सबसे पहले आकार और आधार भूमि के मनोविज्ञानिक महत्त्व पर प्रकाश डाला। इसके बाद गैस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों ने इस विचार को आगे बढ़ाया।

आकार और आधार एक-दूसरे से स्वतन्त्र नहीं होते। वे एक-दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। शेरिफ और शेरिफ ने लिखा है, "चित्र एवं आधार स्वतन्त्र नहीं हैं; प्रत्येक एक-दूसरे के गुणों को प्रभावित करते हैं।"[1]

---

1 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 60.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक चित्र की शोभा उसके आधार पर ही आधारित होती है। मान लीजिए एक अध्यापक पढ़ा रहा है और पीछे शोर हो रहा है, तो इस आकार के लिए शोर का आधार है। लड़कों का प्रत्यक्षीकरण उसी प्रकार का होगा। वास्तव में आकार के लिए आधार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। कौफका ने उचित ही लिखा है, "आधार एक साधारण समतल को बताता है जिसके ऊपर चित्र बनाया जाता है।"[1]

सामाजिक मनोविज्ञान में आधार और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। सामाजिक अन्तःक्रियाओं के अध्ययन को इससे अत्यधिक लाभ होता है। कभी आधार ही आकार को निश्चित करता है। मान लीजिए एक स्थान पर कोई मर गया है और सारे लोग दुखी हैं। वहाँ पर यह आशा नहीं की जाती कि कोई व्यक्ति हँसेगा। यदि कोई आकर हंसता है, तब वह सबको आश्चर्य में डाल देगा, क्योंकि उसका व्यवहार आधार से सामंजस्य नहीं रखता है।

कभी-कभी आकार और आधार अदलते-बदलते भी रहते हैं। आकार आधार का रूप ले लेता है और आधार आकार का।

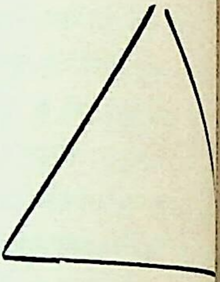

उत्तम आकार का नियम—गैस्टाल्टवादियों के अनुसार मनुष्य आकार को पूर्ण इकाई के रूप में देखता है। यदि कोई आकार पूर्ण नहीं होता और उसमें रिक्त स्थान रहता है फिर भी मनुष्य उसे पूर्ण इकाई के रूप में देखता है।

साथ के चित्र को देखिए। देखते ही हम इसे त्रिकोण समझेंगे। यद्यपि इसमें तीसरा कोण मिला नहीं है, फिर भी प्रत्यक्षीकरण में त्रिकोण दृष्टिगत होता है। चित्र पूरा नहीं है, फिर भी हम उसे एक पूर्ण इकाई के रूप में देखते हैं। अपूर्ण को पूर्णता प्रदान करना एक स्वाभाविक क्रिया है जो आनन्द-दायक है।

प्रत्यक्षीकरण पूर्ण इकाई का होता है (Perception is of Complete Unit)—प्रत्यक्षीकरण सदैव पूर्ण इकाई का होता है; उसके पृथक-पृथक भागों का नहीं। सेब को देखकर सम्पूर्ण सेब का प्रत्यक्षीकरण होता है। सेब को देखकर उसके पीलेपन व गुलाबीपन से दृष्टि-संवेदना होती है, उसकी खुशबू से गन्ध-संवेदना होती है और छूने से स्पर्श-संवेदना होती है। तीनों तरह का संवेदन एक ही साथ होता है। इन संवेदनाओं का अर्थ जोड़ने पर हमें केवल एक सेब का प्रत्यक्षीकरण होता है। गैस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों का मत है कि प्रत्यक्षीकरण सदैव पूर्ण इकाई का होता है, उसके पृथक-पृथक भागों का नहीं होता।

---

1 "The ground serves as a general level (nivean) upon which figure appears." KoffKa, 'Perception', *An Introduction to Gestalt Theories*, Psychological Bulletin (1922), 19, pp. 531-85.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कई बार चिर-परिचित आकार भी दृष्टि में नहीं आते, क्योंकि वे एक बड़े आकार के भाग बन जाते हैं। शेरिफ तथा शेरिफ ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "कई बार वे इतने अधिक भव्य होते हैं, इतने अधिक उद्देश्य या पद, जो काफी समय से सम्बन्धित हों, को बोधित करते हैं, और जबकि वे किसी बड़े ढाँचे के आवश्यक अंग हों, नहीं पहचाने जाते। वे पद जब बड़े ढाँचे के अंग हों अधिक समय तक जिसके साथ हम इतने अधिक सम्बन्धित हैं, दूसरे सम्बन्धों में वे पूर्ण ढाँचे में योग्यतानुसार अपनी सदस्यता के द्वारा अब ज्ञात होते हैं।"[1]

उदाहरण के लिए निम्न चित्र देखिए :

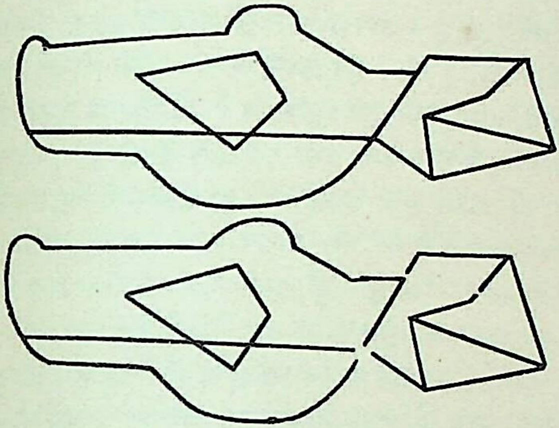

छिपा हुआ '7'
(After W. Kohler)

इन चित्रों से स्पष्ट है कि प्रत्यक्षीकरण एक इकाई के रूप में होता है, न कि पृथक भाग के रूप में।[2]

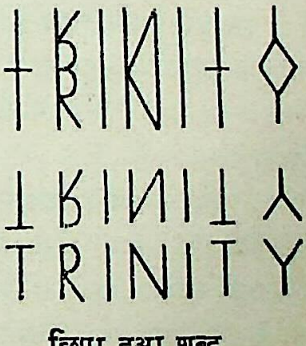

छिपा हुआ शब्द
(After Prothro and Teska)

क्रिया सम्बन्धी कारक

प्रत्यक्षीकरण संगठन के क्रिया सम्बन्धी कारक भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। अभी तक हमने उत्तेजना के ढाँचे सम्बन्धी कारक पर प्रकाश डाला है। क्रिया सम्बन्धी कारकों की परिभाषा करते हुए क्रच तथा क्रचफील्ड लिखते हैं, "प्रत्यक्षीकरणीय संगठन के कार्य सम्बन्धी कारक दूसरी तरफ वे हैं जो मुख्यतः आवश्यकताओं, चित्तवृत्ति, गत अनुभव और व्यक्ति की स्मृति से उत्पन्न होते हैं।"[3]

---

1 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 58.
2 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, Ch. 2.
3 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 82.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वप्रथम यह शब्द म्यूंजिगर (Muenzinger) ने प्रयोग किया था।[1] इन्हीं कारकों के लिए ब्रूनर (Brunner) तथा गुडमैन (Goodman) 'व्यावहारिक निश्चायक' (behavioural determinants) शब्द का प्रयोग कि... इन्होंने इनकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "व्यवहारात्मक निश्चयात्मक वे... एवं अनुकूलित अवयव के कार्य हैं, जो उच्च स्तर के कार्यों, जिसमें प्रत्यक्षीकरण सम्मिलित है, नियन्त्रित एवं शासित करने की ओर ले जाती है।[2]

प्रत्यक्षीकरण के संगठन पर मनुष्य की इन आन्तरिक मानसिक अवस्थाओं... प्रभाव पड़ता है और वस्तुएँ हमें इनके आधार पर ही दिखायी पड़ती हैं।... प्रत्यक्षीकरण सापेक्ष होता है। शेरिफ तथा शेरिफ ने उचित ही लिखा है, "इस... की अशुद्ध रिपोर्ट दर्शाती है कि "हम केवल अपनी आँखों से ही नहीं देखते या... कानों से नहीं सुनते, हम अपने पूर्ण व्यक्तित्व से देखते एवं सुनते हैं और कुछ... स्थितियों में हमारी आँखें और कान अस्त्र बन जाते हैं जो हमारी इच्छाओं, हि... और पक्षपात की पूर्ति करते हैं।"[3] शेरिफ तथा शेरिफ ने यह स्पष्ट किया है कि... कुछ हम प्रत्यक्षीकरण करते हैं वह वास्तविकता नहीं होती है, क्योंकि हम केवल... से ही नहीं देखते हैं या कानों से ही नहीं सुनते हैं, आँखें और कान तो केवल बाह्... की संवेदना को मस्तिष्क तक पहुँचाते हैं और फिर अर्थ लगाकर प्रत्यक्षीकरण... सम्पूर्ण व्यक्तित्व करता है। उन तटस्थ संवेदनाओं को हम किस प्रकार... क्या अर्थ देते हैं, यह हमारे व्यक्तित्व के गत अनुभवों पर आधारित होता है।... की व्याख्या करने एवं अर्थ लगाने में हमारे व्यक्तित्व में विद्यमान हमारी... आकांक्षाएँ, इच्छाएँ, रूढ़ियुक्तियाँ, धारणाएँ, चित्त, पक्षपात आदि अपना प्रभाव... हैं। इस प्रकार हम कहते हैं कि सम्पूर्ण व्यक्तित्व प्रत्यक्षीकरण करता है (... person perceives), न कि व्यक्ति की कोई एक ज्ञानेन्द्रिय। आँख और का... केवल अस्त्र मात्र हैं जो हमें जैसा हम प्रत्यक्षीकरण करना चाहते हैं वैसा करने... हमारा सहयोग देते हैं।

क्रच तथा क्रचफील्ड ने भी इस तथ्य का समर्थन करते हुए लिखा है, "... जैसी दिखायी देती हैं वैसी बहुत कम होती हैं, व्यक्तियों के उद्वेग, चित्त... व्यक्तित्वों और स्वभावों को निश्चित करते एवं रंग देते हैं, जो कुछ वे बाहर... देती हैं।"[4] क्रच तथा क्रचफील्ड ने उपरोक्त तथ्य को और भी अधिक स्प... सरल भाषा में व्यक्त कर दिया है कि वस्तुएँ जैसी कि हम उन्हें देखते हैं या हमें...

---

1 K. Muenzinger, *Psychology—The Science of Behaviour* (... Haryer, New York.

2 Brunner and Goodman, 'Value and need as organising fact... perception', *Abnormal Social Psychology*, (1942), pp. 33-44.

3 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 40.

4 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Ps...logy*, p. 91.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ती हैं वैसी वास्तव में वे नहीं होती हैं क्योंकि वास्तविकता हम देख ही नहीं पाते, हम तो केवल उतना ही देखते हैं जो हमारा व्यक्तित्व देख सकता है। जो कुछ भी होता है उस पर हमारे उद्वेग, चित्तवृत्तियाँ, व्यक्तित्व और स्वभाव अपना रंग चढ़ा देते हैं। जिस प्रकार हम यदि हरे रंग के शीशों का चश्मा पहने हैं, तो हर वस्तु उसी प्रकार की दिखेगी, उसी प्रकार व्यक्ति जो कुछ देखता है वह अपने व्यक्तित्व, उद्वेग, चित्तवृत्तियों एवं स्वभाव के चश्मे के अन्दर से देखता है।

इस विषय में अनेक परीक्षण किये गये हैं। ब्रूनर तथा गुडमैन[1] ने एक परीक्षण किया। उन्होंने एक समूह गरीब बच्चों का लिया और दूसरा अमीर बच्चों का। उनसे विभिन्न सिक्कों का आकार (size) पूछा गया। दोनों समूहों के प्रत्यक्षीकरण में अनेक अन्तर पाये गये। गरीब बच्चों ने अधिक मूल्य वाले सिक्कों का आकार बड़ा बताया। इस परीक्षण से इन्होंने निम्न दो महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को बनाया :

(1) एक वस्तु का सामाजिक मूल्य जितना ही अधिक होगा, उस पर प्रत्यक्षीकरण में उतना ही अधिक व्यावहारिक निश्चायकों का प्रभाव पड़ेगा।

(2) सामाजिक मूल्यवान वस्तु की जितनी अधिक आवश्यकता व्यक्ति को होगी उतना ही अधिक व्यावहारिक निश्चायकों का महत्त्व बढ़ जायेगा।

लेवाइन, चेइन और मर्फी[2] ने भी इस पर एक परीक्षण किया। उन्होंने कुछ अस्पष्ट चित्र कालेज के लड़कों को उस समय दिखाए जब वे भूखे थे। इन लड़कों को उन चित्रों में खाने की वस्तुएँ दिखायी पड़ीं। फिर यही चित्र उन लड़कों को दिखाए गये जो भूखे नहीं थे। उन लड़कों ने चित्रों में कुछ और ही देखा। इस प्रकार समान चित्रों को भिन्न-भिन्न रूपों में देखा गया। इन चित्रों का ढाँचा समान था; परन्तु कार्य सम्वन्धी कारकों के कारण ये भिन्न-भिन्न को दिखायी पड़े।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रत्यक्षीकरण में कार्य सम्वन्धी कारकों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है।

ढाँचे सम्बन्धी एवं कार्य सम्बन्धी कारकों में अन्त:सम्बन्ध

प्रत्यक्षीकरण में ढाँचे सम्वन्धी कारकों एवं कार्य सम्वन्धी कारकों, दोनों का ही महत्त्व है। एक के अभाव में दूसरे के प्रभावों को नहीं समझा जा सकता। क्रच तथा क्रचफील्ड ने उचित ही लिखा है, "कोई भी अकेले कार्य नहीं करता, प्रत्येक प्रत्यक्षीकरण में दोनों प्रकार के कारक अन्तर्निहित होते हैं।"[3]

---

1 J. S. Brunner and C. C. Goodman, 'Value and need as organising factors in perception', *Abnormal Social Psychology* (1942), pp. 33–44.

2 R. Levine, I. Chein and G. Murphy, 'The relation of intensity of a need to the amount of perceptual distortion' (1942), *Psychology*, pp. 283–93.

3 "Neither set operates alone; every perception involves both kinds of factors." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 83.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रायः देखा गया है कि प्रयोगात्मक मनोवैज्ञानिक ढाँचे को महत्त्व देते हैं सामाजिक मनोवैज्ञानिक कार्य को। यह उचित नहीं है। दोनों का ही महत्त्व मनुष्य का प्रत्यक्षीकरण दोनों ही कारकों से प्रभावित होता है।

प्रत्यक्षीकरणीय संगठन के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त
(Important Principles of Perceptual Organization)

प्रत्यक्षीकरणीय संगठन से सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त हैं। क्रच क्रचफील्ड ने उनका सुन्दर विश्लेषण किया है। उनके अनुसार वे सिद्धान्त निम्न

(1) प्रत्यक्षीकरण और ज्ञान प्रायः व्यवस्थित एवं अर्थपूर्ण होता है।

(2) प्रत्यक्षीकरण की क्रिया एक चयनात्मक क्रिया है।

(3) उप-ढाँचे का प्रत्यक्षीकरण अधिकतर सम्पूर्ण ढाँचे की विशेषता ही होता है।

(4) जो वस्तुएं या घटनाएँ स्थान, समय या रूप के कारण एक-दूसरे निकट होती हैं, वे एक समान ढाँचे के भाग के रूप में प्रत्यक्ष होती हैं।

(1) प्रत्यक्षीकरण व्यवस्थित एवं अर्थपूर्ण होता है (Perception Organized and Meaningful)—प्रत्यक्षीकरण व्यवस्थित एवं अर्थपूर्ण होता इसमें कभी भी अव्यवस्था नहीं पायी जाती। इसे अनेक उदाहरणों के द्वारा समझा जा सकता है। ऐश (Asch) ने एक ऐसा अध्ययन किया। उसने 'energ assured, talkative, cold, ironical, inquisitive, persuasive' शब्द व्यक्ति के व्यक्तित्व के लिए पढ़े और सुनने वालों से उस व्यक्ति के विषय में को कहा। उन्होंने उसके विषय में पहले शब्दों के आधार पर विवरण लिख ऐश ने दूसरे परीक्षण में दो समूहों के सामने दो सूचियाँ पढ़ीं—एक 'intelli industrious, impulsive, critical, stubborn, envious'; और 'envious, stubborn, critical, impulsive, industrious, intelli दोनों सूचियों में वही शब्द थे, परन्तु उनका क्रम उल्टा था। शब्द समान होते उनका विवरण लोगों ने भिन्न दिया। इसका कारण यह था कि वे पहले शब्द सुनकर ही बहुत-सी कल्पनाएँ कर लेते थे। ऐश ने इस परीक्षण के सम्बन्ध में कि लोग जब पहला शब्द सुनते हैं तो एक विस्तृत एवं निर्देशित कल्पना अपने में बना लेते हैं और बाद में कही जाने वाली विशेषताएं पृथक से नहीं ली ज बल्कि प्रथम शब्द की पूरक ही समझी जाती हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रत्यक्ष व्यवस्थित एवं अर्थपूर्ण होता है।

इस प्रकार प्रत्यक्षीकरण व्यवस्थित एवं अर्थपूर्ण रहता है।

(2) प्रत्यक्षीकरण की क्रिया चयनात्मक है (Perception in Selecti जो भी उत्तेजनाएँ हमारे सामने आती हैं, उन सबको ही हम प्रत्यक्ष नहीं करते,

1 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psych* pp. 84–109.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उनमें से कुछ को करते हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "कोई भी हर वस्तु का पूर्ण प्रत्यक्षीकरण नहीं करता, जैसी कि वह वस्तु है, कुछ चीजें प्रत्यक्षीकरण के बाहर भी रह जाती हैं।"

हम एक बाजार में से गुजरते हैं। वहाँ पर हजारों वस्तुएँ हमारे प्रत्यक्ष के लिए होती हैं, पर हम उनमें से कुछ को चुन लेते हैं। कई बार हमारे मित्र शिकायत करते हैं कि उन्होंने आवाज भी दी, फिर भी हमने कोई उत्तर नहीं दिया। प्रत्यक्षीकरण कुछ ही उत्तेजनाओं का होता है। इस प्रकार हम चयन करते हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "आदर्श रूप से, केवल कुछ ही भौतिक उत्तेजना संगठित प्रत्यक्षीकरण के निर्माण करने में 'प्रयोग' की जाती हैं, जबकि बाकी उत्तेजना या तो कभी भी प्रयोग नहीं की जाती या बहुत ही कम कार्य करती हैं, कहने का तात्पर्य यही है कि प्रत्यक्षीकरण चयनात्मक है।"

चयनात्मक प्रकृति समस्त मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में पायी जाती है। प्रत्यक्षीकरण में पाया जाना इसका एक विशिष्ट प्रकार है। शेरिफ तथा शेरिफ ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "प्रत्यक्षीकरणीय चयनात्मकता सामान्य मनोविज्ञान की चयनात्मकता का एक विशेष विषय है, प्रत्यक्षीकरण चयनात्मक है, इसी प्रकार सीखना, सोचना, याद करना और कल्पना करना है।"[1]

क्रच तथा क्रचफील्ड का मत है कि चयन की प्रक्रिया कार्य सम्बन्धी कारकों पर आधारित हैं। इसी कारण उन्होंने लिखा है, "........this selectivity is functional." इसे विस्तार सहित समझाते हुए उन्होंने लिखा है, "वे उद्देश्य जो प्रत्यक्षीकरण के चयन में महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं, वे उद्देश्य जो दबाव डालकर उच्चरित किये जाते हैं वे प्रायः वे उद्देश्य हैं जो प्रत्यक्षीकरण में तात्कालिक प्रयोजन के लिए प्रयोग होते हैं।"[2]

अन्य मनोवैज्ञानिकों ने भी इसके पक्ष पर बल दिया है। कार्य सम्बन्धी कारक चयन में महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं। परन्तु कुछ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार ढाँचे सम्बन्धी कारक भी कम महवत्त्वपूर्ण नहीं होते।

शेरिफ तथा शेरिफ ने कार्य सम्बन्धी कारकों को चयन में महत्त्व देते हुए लिखा है, "यह मनोवैज्ञानिक चयन के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों का समावेश करता है तथा नाटकीय प्रदर्शन से सामने लाता है; इसको हम केवल अपनी आँखों से ही नहीं देख सकते या केवल अपने कानों से ही नहीं सुन सकते, परन्तु हम उस समय अपनी इच्छाओं, मनोवृत्तियों और उद्वेगों के सहित, अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व के साथ देखते एवं सुनते हैं।[3]

1. Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 87.
2. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology* p. 88.
3. Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 84.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इससे स्पष्ट है कि प्रत्यक्षीकरण क्रिया एक चयनात्मक क्रिया है। इसमें सम्बन्धी कारक और ढाँचे सम्बन्धी कारक दोनों ही महत्त्वपूर्ण हैं। किसी के महत्त्व को कम नहीं किया जा सकता। शेरिफ तथा शेरिफ ने इस प्रकार के कारकों की एक सूची दी है।

अब हम देखेंगे कि चयन (selection) में आवश्यकताओं, मानसिक अवस्था, चित्तवृत्ति, इत्यादि का क्या प्रभाव पड़ता है।

आवश्यकता (Need)—मान लीजिए दो व्यक्ति एक होटल में गये। एक बहुत प्यासा है और दूसरा बहुत भूखा। मीनू (menu) दोनों के सामने रखा। प्यासा व्यक्ति पहले पीने की वस्तुओं को देखेगा और फिर खाने की। पर भूखा व्यक्ति पहले खाने की वस्तुओं को देखेगा और फिर पीने की। प्रत्यक्षीकरण में यह चयन या चुनाव आवश्यकता के कारण होता है। इसी प्रकार अन्य क्षेत्रों में भी होता है।

मानसिक अवस्था (Mental Set)—हमारी मानसिक अवस्था पर भी आधारित है। आप रोज लोगों को कपड़े पहनते देखते हैं, पर अधिक ध्यान नहीं देते। एक दिन आप स्वयं कपड़े खरीदने जा रहे हैं, उस दिन आप विशेष रूप से लोगों के कपड़ों को देखते हैं और उनके चित्र अपने मस्तिष्क में बनाते जाते हैं। यह आपकी मानसिक अवस्था है।

मरे (Murray) ने इसका एक सरल परीक्षण किया। उसने लड़कियों को एक व्यक्ति के विषय में चित्र दिखाकर पूछा। फिर उसने उन्हें 'हत्या' नामक खेल खिलाया। बाद को फिर उस व्यक्ति के बारे में पूछा। इस बार लड़कियों को वह व्यक्ति अत्यधिक चालबाज एवं तीखा दीखा। इसका कारण स्पष्ट है कि हत्या का खेल खेलने के बाद उनका मस्तिष्क उन बुराइयों को अधिक देखने लगा।

मानसिक अवस्था चयन में महत्त्वपूर्ण भाग लेती है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "प्रत्यक्षकर्ता की मानसिक अवस्था कुछ समय चयनात्मक प्रत्यक्षीकरण के निश्चय करने में पूर्णरूप से महत्त्वपूर्ण है।"[1]

चित्तवृत्ति (Mood)—चित्तवृत्ति या 'मूड' चयन में अत्यधिक महत्त्व रखती है। चित्तवृत्ति के ऊपर प्रत्यक्षीकरण आधारित होता है। ल्यूबा (Leuba) तथा लूकास (Lucas) ने इस सम्बन्ध में एक परीक्षण किया। छह चित्र दिखाये। उनके 'मूड' को 'hypnotism' के द्वारा बदला गया। प्रसन्न चित्त (happy mood), आलोचनात्मक चित्त (critical mood) और चिन्ताग्रस्त चित्त (anxious mood) में चित्र दिखाये गये। हर एक में उन्होंने उन्हीं चित्रों के विभिन्न वर्णन दिये।[2]

---

1 "The mental set of the perceiver can sometimes be of decisive importance in determining selective perception." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 9...

2 C. Leuba and C. Lucas, The effects of attitudes on descriptions of pictures, *Experimental Psychology* (1945), 35, pp. 517-2...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जो उसकी चित्तवृत्ति होती है, उसके अनुसार ही वह देखता है। पैट्रिक ने उचित ही लिखा है, हम वस्तुओं को जैसी वे हैं वैसी नहीं देखते, अपितु जैसे हम हैं वैसे ही देखते हैं।"[1] स्पष्ट है कि किसी भी वस्तु अथवा परिस्थिति का प्रत्यक्ष ज्ञान ज्यों का त्यों नहीं होता बल्कि वह व्यक्ति की मानस वृत्ति से अनुरंजित हुआ करता है। अपने देश में कहावत प्रसिद्ध है, "जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन्ह तैसी।" किम्बाल यंग ने भी इसी तथ्य का समर्थन करते हुए लिखा है, "वास्तव में, प्रत्यक्षीकरण का कोई अर्थ नहीं होता जब तक हम प्रत्यक्षीकरण करने वाले की ओर ध्यान नहीं देते।"[2] चयन करने में इन समस्त कारकों का महत्त्वपूर्ण भाग रहता है।

(3) **उप-ढाँचे का प्रत्यक्षीकरण अधिकतर सम्पूर्ण ढाँचे, जिसका वह भाग है, की विशेषताओं से होता है।** (The Perceptual Properties of a sub-structure are Determined in Large Measure by the Properties of the Structure of Which it is a Part)—जब हम किसी वस्तु को देखते हैं तो उस सम्पूर्ण ढाँचे का हमें ज्ञान होता है। उसके भागों का प्रत्यक्षीकरण हमें सम्पूर्ण ढाँचे के सन्दर्भ में होता है। इस सम्बन्ध में 'प्रत्यक्षीकरण पूर्ण इकाई का होता है' के विश्लेषण को भी ध्यान में रखिए, इसका विवरण हम पीछे दे चुके हैं।

क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस सम्बन्ध में निम्न सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है, 'जब एक व्यक्ति एक समूह का सदस्य समझ लिया जाता है तथा व्यक्ति के वे लक्षण उसकी समूह सदस्यता, जो समूह के लक्षणों से मेल खाने वाले होते हैं, को भी प्रभावित करती है, तो यह प्रभाव या तो प्रत्यक्ष रूप से आत्मसात् या विरोध की दिशा में होता है।"[3]

मान लीजिए राम काँग्रेसी है। कांग्रेसियों के कुछ लक्षण होते हैं—खद्दर के कपड़े, गाँधी टोपी, जवाहरकट बण्डी, पैर में चप्पल, बातों में होशियार, बात-बात में बापू का नाम इत्यादि। अब आप राम के विषय में इन्हीं विशेषताओं के आधार पर विचार बनायेंगे। इसी प्रकार से हम किसी भी भाग के विषय में सोचते हैं।

शेरिफ, कैंट्रिल तथा कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों ने इसी तथ्य को समझाने के लिए सन्दर्भ आकार (frame of reference) शब्द का प्रयोग किया है। शेरिफ ने तो इसे अत्यधिक महत्त्व दिया है और सामाजिक मनोविज्ञान में इसे केन्द्रीय सिद्धान्त (central concept) माना है। अब हम इस पर विचार करेंगे।

---

1 "We see things, not as they are, but as we are." G. T. W. Patrick.

2 "In fact, perception means nothing unless we take the perceiver into account." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 99.

3 Krech and Crutchfield, *Theory aud Problems of Social Psychology*, p. 96.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सन्दर्भ आकार (Frame of Reference)—सन्दर्भ आकार शब्द का... इन्हीं कार्य सम्बन्धी कारकों के लिए किया गया है। इसका अर्थ निम्न है :

शेरिफ तथा केंट्रिल के अनुसार : "सन्दर्भ आकार का पद कार्य... कारकों (वर्तमान एवं भूत) को समझाने के लिए साधारणत: प्रयोग होता है... मनोवैज्ञानिक पहलू के किसी विशेष सम्पत्ति को निश्चित करते समय कार्य करते... (जैसे—प्रत्यक्षीकरण, निर्णय, प्रमाबात्मकता)।"[1]

शेरिफ तथा शेरिफ के अनुसार : "हम आन्तरिक एवं वाह्य कारकों... सम्पूर्णता की ओर संकेत करेंगे जो स्वतन्त्र रूप से किसी दिये हुए समय में... आकार के अनुभव एवं व्यवहार के प्रश्न में कार्य करते हैं।"[2]

शेरिफ तथा शेरिफ के अनुसार : "इस प्रकार सन्दर्भ आकार प्र... कार्यात्मक व्यवस्था सम्बन्धों को किसी दिये हुए समय में कार्य करने की ओर... करता है।"[3]

बक्सटन के अनुसार : "सन्दर्भ आकार की व्याख्या एक उत्तेजना की ... में की जा सकती है, जो हमारे व्यवहार को किसी विशेष परिस्थिति में ... करती है। यह आन्तरिक या बाह्य उत्तेजना को अन्य आवश्यक उत्तेजनाओं... छोड़कर सम्मिलित करती है, परन्तु एक महत्त्वपूर्ण कल्पना हमारी व्याख्या में... निहित है, वह इस प्रकार है कि किसी व्यक्ति में किसी दी हुई उत्तेजना का... अन्य उत्तेजनाओं के प्रभाव से स्वतन्त्र नहीं है।"[4]

अब सन्दर्भ आकार का अर्थ स्पष्ट हो गया। इसका अभिप्राय यह है कि... व्यक्ति हर उत्तेजना को निश्चित संदर्भ में प्रत्यक्षीकरण करता है। यह सन्दर्भ... बाह्य एवं आन्तरिक कारकों पर आधारित है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का ए... होता है और वह उन्हीं के अनुसार कार्य करता है एवं वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण... है। हम बाह्य कारकों एवं आन्तरिक कारकों पर प्रकाश डाल ही चुके हैं। ...

---

1 "The term 'frame of reference' is simply used to denote... functionally related factors (present and past) which operate... the moment to determine the particular properties of a psycholo... gical phenomenon (such as perception, judgement, affectivity...)" Sherif and Cantril, *The Psychology of Ego-involvements* (... Wiley Inc. New York.

2 "We shall refer to the totality of external and internal f... operating in an interdependent way at a given time as the... *of reference* of the experience and behaviour in question."... and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 41.

3 "*Frame of reference* refers, then, to the system of func... relations consisting of influences operating at a given ..." *Ibid*, p. 41.

4 C. E. Buxton, 'The Frame of Reference', R. H, Seashore... *Fields of Psychology* (1942), Henry Holt Inc., New York, ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यंग ने भी इस सम्बन्ध में लिखा है, "जैसे-जैसे व्यक्ति की उम्र बढ़ती जाती है उसकी मनोवृत्ति एवं लक्षण एक वृहत्तर मूल्य व्यवस्थाओं या संदर्भ आकार में संगठित होते जाते हैं, जो उसके भविष्य में सामाजिक और सांस्कृतिक संसार में अनुकूलन का कार्य करते हैं।"[1]

संदर्भ आकार के कार्य एवं महत्त्व पर प्रकाश डालने से पूर्व हम एक और महत्त्वपूर्ण सम्बन्धित शब्द को समझाने का प्रयत्न करेंगे। शेरिफ ने इसे प्रभावी-स्थायी संदर्भ (anchorage) कहा है।

प्रभावी-स्थायी संदर्भ (Anchorage)—सन्दर्भ आकार के समस्त तत्त्व हो एक समय में प्रभाव नहीं डालते हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण तत्त्व ही प्रभाव डालते हैं। इन्हीं महत्त्वपूर्ण तत्त्वों को प्रभावी-स्थायी सन्दर्भ कहते हैं। जिस प्रकार एक जहाज का लंगर (anchorage) जहाज को स्थायी कर देता है और उसे अथाह समुद्र में बहने नहीं देता, उसी प्रकार प्रभावी-स्थायी सन्दर्भ मनुष्य को जीवन के अथाह एवं विस्तृत समुद्र में बह जाने से बचाता है। व्यक्ति इनके ही सहारे अपने जीवन के जहाज को चलाता है।

शेरिफ तथा शेरिफ ने इसे समझाते हुए लिखा है, "किसी दिये हुए समय में समस्त प्रभावों का व्यवहारात्मक उत्पत्ति के निश्चित करने में समान प्रभाव नहीं होता, महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ विचार जो प्रभावी-स्थायी सन्दर्भ कहे जाते हैं, वे मनोवैज्ञानिक उत्पत्ति को अन्तिम रूप देने में अन्यों के बजाय अधिक भारयुक्त होते हैं।"[2]

कुप्पुस्वामी ने लिखा है, "प्रभावी-स्थायी सन्दर्भ एक महत्त्वपूर्ण संदर्भ विचार है जो सम्पूर्ण प्रत्यक्षीकरण को सारगर्भिता प्रदान करता है। प्रभावी-स्थायी सन्दर्भ वह प्रमाणक है जो, जिसका हम प्रत्यक्ष करते हैं, को प्रभावित करता है।"[3]

प्रभावी-स्थायी संदर्भ हमारे जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग लेता है। हम जब कभी बिल्कुल नयी जगह फँस जाते हैं तो बड़ी परेशानी होती है। उसका यही कारण होता है कि हम कोई संदर्भ नहीं ढूँढ़ पाते। जब हम अपने जान-पहचान के लोगों से बिलकुल दूर होते हैं, तो बड़ी असुरक्षा अनुभव करते हैं और घबड़ा जाते हैं।

सन्दर्भ आकार और प्रत्यक्षीकरण (Frame of Reference and Perception)—सन्दर्भ आकार हमारे इसी तथ्य की पुष्टि करता है कि मनुष्य प्रत्येक विभाग को सम्पूर्ण ढांचे की विशेषताओं के सन्दर्भ में देखता है।

---

1. K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 107.
2. Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 44.
3. "An anchorage is a major reference point which gives significance to the whole perception. The anchorage is the standard which influences what we perceive." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology* (1961), Asia Publishing House, Bombay, p. 75.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति जो कुछ भी प्रत्यक्षीकरण करता है वह इस सन्दर्भ आकार ... है। कहावत है कि 'सावन के अंधे को हरा ही हरा सूझता है'। कहने का ... है कि जो व्यक्ति जिस सन्दर्भ में विचार करता है, होने वाली घटनाएं ... सन्दर्भ में प्रतीत होती हैं। इस विषय में अनेक परीक्षण किये गये हैं।

गवाही के विषय में मनस्टरबर्ग ने लिखा है, "गवाही की रिपोर्ट ... गत एवं विषयीगत कारकों का सम्मिलन होती हैं। उद्वेग, निर्णय, विचार ... अनुभव के विषय को प्रभावित कर सकते हैं, परन्तु जहाँ वाह्य उत्तेजना को ... रुचिपूर्ण रूप से समर्पित की जाती है वहाँ विषयीगत समझ और ध्यान को ... कार्य करना चाहिए।"[1]

इससे स्पष्ट है कि व्यक्ति के प्रत्यक्षीकरण में अनेक कारकों का ... है। सन्दर्भ आकार व्यवहार को निश्चित करता है। संदर्भ आकार मनुष्य ... मूल्य बन जाते हैं। किसी भी मनुष्य के व्यवहार या अनुभव को समझने ... उसके सन्दर्भ आकार को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

(4) जो वस्तुएँ या घटनाएँ स्थान, समय या रूप के कारण ... निकट होती हैं, वे एक समान ढाँचे के भाग के रूप में प्रत्यक्ष होती हैं (O... Events That are Close to Each Other in Space or T... Resemble Each Other Tend to be Apprehended as P... Common Structure)—इस सम्बन्ध में ढाँचे सम्बन्धी कारक का ... देखिए।

हैदर ने इसका विश्लेषण करते हुए एक स्थान पर लिखा है, "... समानता के कारण अपराध का किसी व्यक्ति के ऊपर आरोप लगाया जा... वह वैसा ही दिखायी देता है जैसे कि उसने कोई अपराध किया है।"

इससे हमें उन कारणों का ज्ञान होता है, जिनके कारण कुछ प्रत्यक्ष... प्रत्यक्षीकरणों के साथ संगठित हो जाते हैं और उनके साथ ही उनका ... होता है। जो वस्तुएँ पास-पास होती हैं और साथ ही समान भी होती हैं, ... प्रत्यक्ष होती हैं। इसके आधार पर कहा जा सकता है कि प्रत्यक्षीकरण ... निकटता और समानता के कारक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। संस्कृति भी प्रत्य... प्रभावित करती है। आधुनिक संसार में धन महत्त्वपूर्ण है और इसलिए ... उस ओर जाता है।

वस्तुओं का समान होना प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करता है। ... की हत्या और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का उत्कर्ष पर होना—इससे यह ... गया गाँधीजी की हत्या संघ वालों ने की। यद्यपि गोडसे संघ का सदस्य ... न संघ ने ही इस प्रकार का षड्यन्त्र किया, फिर भी समय की निकटता ...

---

1 H. Munsterberg, *Psychology—General and Applied* (19... leton-Century Inc., New York, p. 396.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऐसा ही प्रत्यक्ष कर लिया गया। मान लीजिए आपकी विचारधारा किसी व्यक्ति के विषय में खराब है और वह आपको प्रातः सबसे पहले दिखायी पड़ता है। उसी दिन आपका कोई नुकसान हो जाता है, तो आप तुरन्त कहेंगे 'उस बेईमान का आज सुबह मुँह देखा था'।

विपर्यय
(Illusion)

विपर्यय को अयथार्थ प्रत्यक्षीकरण भी कहते हैं। संवेदना की गलत व्याख्या करने वाली मानसिक प्रक्रिया को विपर्यय कहते हैं।

रात्रि में एक पेड़ के ठूँड को हम भूत समझ लेते हैं या अपना मित्र आता हुआ दिखायी देता है। रस्सी को साँप समझ लेते हैं। हम अपने कमरे में बैठे हुए अपनी प्रेमिका की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं; तो जो भी पदचाप सुनायी पड़ती है, हम सोचते हैं कि वह आ गयी। परन्तु वह कोई और ही होता है। यह भ्रम है। रेगिस्तान में पानी दिखायी पड़ता है, जबकि वह केवल प्रकाश और वायु का प्रभाव ही होता है।

विपर्यय दो प्रकार होता है: व्यक्तिगत और व्यापक (universal)। व्यक्तिगत विपर्यय को क्षणिक विपर्यय (transitory illusion) भी कहते हैं। यह थोड़ी देर के लिए होता है और फिर समाप्त हो जाता है। व्यापक विपर्यय सबको होता है। रेल में यात्रा करते समय बाहर के पेड़ इत्यादि चलते हुये मालूम होते हैं। रेखागणित के अनेक ऐसे विपर्यय हैं।

विभ्रम
(Hallucination)

विभ्रम भी विपर्यय की तरह अयथार्थ प्रत्यक्षीकरण है। विपर्यय सदैव किसी बाह्य उत्तेजना के प्रस्तुत होने पर होता है, परन्तु विभ्रम बिना किसी बाह्य उत्तेजना के भी हो जाता है। उदाहरण के लिए, किसी सूनसान जंगल में ऐसा लगता है कि कोई आवाज दे रहा है या कोई पीछे-पीछे आ रहा है। कभी-कभी अकेले में शकलें दिखायी पड़ती हैं।

विभ्रम सदैव व्यक्तिगत होता है। असामान्य व्यक्तियों को ही प्रायः विभ्रम होता है। मानसिक रोगियों को भी विभ्रम होता है। अचेतन इच्छाएँ प्रकट होती रहती हैं।

प्रत्यक्षीकरण और सामाजिक अन्तःक्रिया
(Perception and Social Interaction)

सामाजिक अन्तःक्रिया एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति के मस्तिष्क में प्रवेश है। सर्वप्रथम हमें प्रत्यक्षीकरण होता है। यदि हम किसी को देखें ही नहीं और सुने ही नहीं, तो एक-दूसरे के मस्तिष्क में कैसे प्रविष्ट होंगे। अतः सामाजिक अन्तःक्रिया के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिए प्रत्यक्षीकरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कुप्पुस्वामी ने भी लिखा है, "प्रत्येक सामाजिक अन्तःक्रिया दूसरे व्यक्तियों या समूहों के प्रत्यक्षीकरण से प्रारम्भ होती है। सामाजिक अन्तःक्रिया में प्रत्यक्षीकरण की समस्या मौलिक है।"[1]

प्रत्यक्षीकरण और व्यक्तित्व का विकास
(Perception and Personality Development)

प्रत्यक्षीकरण ही वह प्रक्रिया है जो ज्ञानेन्द्रियों की सहायता से हमें संसार की वस्तुएँ दिखाता है। व्यक्तित्व का विकास एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा हमारी आदतें, मनोभाव, धारणाएँ, अभिवृत्तियों आदि का निर्माण होता है और व्यक्तित्व की अभिन्न अंग बन जाती हैं। प्रारम्भ में, प्रत्यक्षीकरण के द्वारा ही व्यक्तित्व का विकास होता है। ज्ञानेन्द्रियों से बच्चा संवेदना प्राप्त करता है और ज्यों-ज्यों उसकी अर्थ लगाने की क्षमता बढ़ती जाती है, उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। जिस बच्चे में जितनी अधिक प्रत्यक्षीकरण की क्षमता होगी, उसके व्यक्तित्व का उतना ही अधिक विकास होगा। बुद्धिमान बच्चे कौन होते हैं? वही बच्चे बुद्धिमान माने जाते हैं जो अधिक प्रत्यक्षीकरण कर सकते हैं। सुस्त और शिथिल व्यक्तित्व वे होते हैं जो अधिक प्रत्यक्षीकरण नहीं कर पाते। एक प्रकार से व्यक्तित्व विकास की भूमि ही प्रत्यक्षीकरण है। व्यक्तित्व विकास के लिए प्रत्यक्षीकरण प्राथमिक है। प्रत्यक्षीकरण व्यक्तित्व विकास की वह प्रक्रिया है जिसके बिना व्यक्तित्व का विकास हो ही नहीं सकता। हमारी समस्त प्रकार की शिक्षा एवं सीखना प्रत्यक्षीकरण की शक्ति एवं क्षमता को बढ़ाना है। अतः प्रत्यक्षीकरण व्यक्तित्व के विकास के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

सामाजिक प्रत्यक्षीकरण
(Social Perception)

प्रत्यक्षीकरण के नियमों का हमने अवलोकन किया। सामाजिक प्रत्यक्षीकरण में भी वही नियम लागू होते हैं। सामाजिक प्रत्यक्षीकरण सामाजिक सन्दर्भ में प्रत्यक्षीकरण होता है। व्यक्ति ही हर सन्दर्भ में प्रत्यक्षीकरण करता है। सामाजिक प्रत्यक्षीकरण का आधार प्रत्यक्षीकरण ही है।

सामाजिक प्रत्यक्षीकरण में संस्कृति का बहुत अधिक महत्त्व होता है। सामाजिक प्रत्क्षीकरण का प्रमुख आधार संस्कृति ही है। संस्कृति का चश्मा सदैव लगा रहता है और व्यक्ति सामाजिक प्रत्यक्षीकरण संस्कृति के ही सन्दर्भ में करता है। व्यक्तित्व का विकास एवं निर्माण भी संस्कृति एवं उपसंस्कृतियों पर आधारित है। व्यक्तित्व और संस्कृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जब भी हम कुछ प्रत्यक्षीकरण करते हैं, उसे संस्कृति के ही संन्दर्भ में करते हैं। एक हिन्दुस्तानी के लिए वह

---

1 B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 6

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बर्फ ही है, ऊँट, ऊँट ही है, लेकिन एक एस्कीमो के लिए बर्फ केवल बर्फ नहीं है, अपितु बर्फ के लिए अनेक शब्द हैं जो बर्फ की विभिन्नताओं की ओर संकेत करते हैं। इसी प्रकार अरब लोगों के लिए ऊँट केवल ऊँट ही नहीं है बल्कि ऊँटों के लिए अनेक शब्द हैं, जो ऊँटों के विभिन्न वर्गों का उल्लेख करते हैं। गंगा नदी अन्य लोगों के लिए एक नदी मात्र है, पर हिन्दुओं के लिए गंगा नदी गंगा माता है और पूज्य है। सीगल[1] ने 17 संस्कृतियों के लोगों पर प्रत्यक्षीकरण सम्बन्धी प्रयोग किया और उसने पाया कि संस्कृतियों के कारण व्यक्तियों के प्रत्यक्षीकरण में अनेक विभेद पाये गये।

सामाजिक प्रत्यक्षीकरण में स्थिति एवं भूमिका का भी प्रभाव पड़ता है। जो व्यक्ति जिस स्थिति के होते हैं, उसके अनुसार प्रत्यक्षीकरण करते हैं। सामाजिक प्रत्यक्षीकरण में प्रत्यक्षीकरण की ही भाँति रुचियों, इच्छाओं, चित्तवृत्तियों, धारणाओं, अभिवृत्तियों, मूल्यों आदि का भी प्रभाव पड़ता है। इनके प्रभाव का विश्लेषण हम प्रत्यक्षीकरण के सम्बन्ध में कर चुके हैं।

प्रश्न

1. प्रत्यक्षीकरण और सीखने की क्रिया पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए और उनके प्रभाव को व्यक्तित्व विकास पर प्रदर्शित कीजिए।

(Write a short essay on perception and learning and show their influence on personality development. Agra, M. A. Alternative Course in Sociology, 1962.)

2. प्रत्यक्षीकरण की व्याख्या कीजिए और इसके संगठन के कुछ नियमों की विवेचना कीजिए।

(Define perception and discuss some of its laws of organisation.)

3. ढांचे सम्बन्धी और क्रिया सम्बन्धी कारकों का प्रत्यक्षीकरण में क्या महत्त्व है ?

(What is importance of structural and functional factors in perception ?)

4. संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए : (1) सन्दर्भ-आकार, (2) प्रभावी-स्थायी सन्दर्भ, (3) प्रत्यक्षीकरणीय चयनात्मकता, (4) मनोवैज्ञानिक चयनात्मकता, (5) विपर्यय, (6) विभ्रम।

(Write short notes on : (i) frame of reference, (ii) anchorages, (iii) perceptual selectivity, (iv) psychological selectivity, (v) illusion, (vi) hallucination.)

---

[1] M. D. Segall and others, *The Influence of Culture on Visual Perception.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

17

सामाजिक अन्तःक्रिया
(Social Interaction)

सामाजिक अन्तःक्रिया का विश्लेषण हम पहले भी कर चुके हैं। यहाँ विस्तार में उस पर विचार करेंगे। समाज के लिए सामाजिक अन्तःक्रिया अ[illegible] महत्त्वपूर्ण है। समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। कोई भी सामाजिक स[illegible] सामाजिक अन्तःक्रिया के अभाव में हो ही नहीं सकता। सामाजिक मनोविज्ञान सामाजिक अन्तःक्रिया की प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। इसलिए सामा[illegible] अन्तःक्रिया सामाजिक मनोविज्ञान के लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अब हम [illegible] अर्थ को समझाने का प्रयत्न करेंगे।

सामाजिक अन्तःक्रिया का अर्थ
(Meaning of Social Interaction)

किम्बाल यंग के अनुसार : "विस्तृत रूप से परिभाषित, अन्तःक्रिया [illegible] को संकेत करती है कि एक व्यक्ति का प्रत्युत्तर—संकेत, शब्द या सकल शा[illegible] क्रिया—दूसरे को उत्तेजना देता है और वह अपनी बारी पर प्रथम को प्रत्युत्त[illegible] है।"[1] सामाजिक अन्तःक्रिया वह क्रिया है जिसमें एक व्यक्ति की क्रिया दूसरे [illegible] को प्रभावित करती है और दूसरा व्यक्ति उसका प्रत्युत्तर अपनी क्रिया द्वारा दे[illegible] यह क्रिया किसी भी प्रकार की हो सकती है—संकेत, शब्द या सम्पूर्ण शरीर[illegible] पहले व्यक्ति की क्रिया दूसरे व्यक्ति को उत्तेजित करती है और दूसरा व्यक्ति [illegible] प्रत्युत्तर में क्रिया करता है। यह क्रियाएँ मानसिक स्तर पर होती हैं।

डासन और गेटिस के अनुसार : "सामाजिक अन्तःक्रिया वह प्रक्रिया है [illegible] द्वारा मनुष्य एक-दूसरे के मस्तिष्क में अन्तर्विष्ट होते हैं।"[2] इनके अनुसार सा[illegible] अन्तःक्रिया एक प्रक्रिया है, यह वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य एक-दू[illegible]

---

1 "Broadly defined, interaction refers to the fact that the respo[illegible] gesture, word or gross bodily movement—of one individ[illegible] the stimulus to another, who, in turn, responds to the first." Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 1.

2 "Social interaction is a process whereby men interpenetr[illegible] minds of each other." Dawson and Gettys, *An Introducti[illegible] Sociology* (1948), p. 296.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मस्तिष्क में अन्तर्विष्ट होते हैं। मस्तिष्क में अन्तर्विष्ट का अभिप्राय है, मानसिक स्तर पर क्रियाओं का होना। इसका अर्थ यह है कि एक व्यक्ति कुछ क्रिया करता है, उसका प्रत्यक्षीकरण दूसरा व्यक्ति करता है, फिर दूसरा व्यक्ति उस क्रिया का प्रत्युत्तर देता है। यह मानसिक स्तर पर अन्तःक्रिया की प्रक्रिया हुई।

गिस्ट के अनुसार : "सामाजिक अन्तःक्रिया (वह) परस्पर प्रभाव होता है जो मनुष्य परस्पर उत्तेजना एवं प्रत्युत्तर द्वारा एक-दूसरे पर डालते हैं।"[1]

सामाजिक अन्तःक्रिया एक मानसिक प्रक्रिया है। इसके द्वारा मनुष्यों के बीच मानसिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं। परस्पर प्रभावित करने वाली प्रक्रिया को ही सामाजिक अन्तःक्रिया कहते हैं।

सामाजिक अन्तःक्रिया के प्रकार
(Types of Social Interaction)

प्रमुख रूप से सामाजिक अन्तःक्रिया के निम्न तीन प्रकार हैं :

(1) व्यक्ति से व्यक्ति (person to person),

(2) व्यक्ति से समूह (person to group),

(3) समूह से समूह (group to group)।

(1) व्यक्ति से व्यक्ति (Person to Person)—व्यक्ति से व्यक्ति के सम्बन्ध अन्तरवैयक्तिक (interpersonal) सम्बन्ध कहलाते हैं। इसमें सम्बन्ध में आने वाले व्यक्तियों की संख्या कम रहती है। ये सम्बन्ध हम रोज ही देखते हैं। ये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

(2) व्यक्ति से समूह (Person to Group)—व्यक्ति से समूह के सम्बन्ध भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। एक व्यक्ति अपने परिवार, जाति, वर्ग, पड़ोस इत्यादि से सम्बन्ध रखता है। ये सारे सम्बन्ध इसी के अन्तर्गत आते हैं।

(3) समूह से समूह (Group to Group)—तीसरे प्रकार की सामाजिक अन्तःक्रिया समूह से समूह की होती है। एक जाति का दूसरी जाति के साथ, एक राजनैतिक समिति का दूसरे के साथ, एक राष्ट्र का दूसरे राष्ट्र के साथ अन्तःक्रिया इसके उदाहरण हैं। इन पर हम अगले अध्यायों में प्रकाश डालेंगे।

सामाजिक उत्तेजना
(Social Stimulation)

सामाजिक उत्तेजना सामाजिक अन्तःक्रिया के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सामाजिक उत्तेजना के ही कारण एक मनुष्य का दूसरे मनुष्य से सम्बन्ध सम्भव हो

---

1 "Social interaction is the reciprocal influences human beings exert on each other through interstimulation and response." Noel P. Gist, in the book—Seba Eldridge and others, *Fundamentals of Sociology* (1950), p. 363.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पाता है। सामाजिक उत्तेजना समूह में उस समय होती है जब मनुष्य एक-दूसरे प्रत्यक्ष सम्बन्ध में होते हैं। अप्रत्यक्ष सम्बन्धों में भी सामाजिक उत्तेजना होती है।

सामाजिक उत्तेजना के प्रकार

सामाजिक उत्तेजना दो प्रकार की होती है : प्राथमिक और द्वैतीयिक।

प्राथमिक सामाजिक उत्तेजना (Primary Social Stimulation)— है जिसमें व्यक्ति एक-दूसरे को प्रत्यक्ष रूप से उत्तेजित करते हैं। वे हैं—(1) सं (gestures); (2) उद्वेगिक मुखाभिव्यक्ति (emotional facial expressio (3) शारीरिक विन्यास एवं गति (postures and movements); (4) वि (interjection); (5) स्पष्ट बोली (articulate speech); (6) मुख ल निरूपण (physiognomy or facial lexpression in repose); (7) हँ (laughter)। अब हम प्राथमिक सामाजिक उत्तेजनाओं पर विस्तार में प्र डालेंगे।

(1) **संकेत** (Gestures)—संकेत शरीर के किसी भाग की गति को क हैं। शरीर की इस गति से मनुष्य की मानसिक अवस्था का पता लगता है। कई ब हम बिना बोले ही अपने भाव संकेतों के द्वारा प्रदर्शित करते हैं। गूँगे लोग सब कुछ संकेतों के ही सहारे से स्पष्ट करते हैं। एक प्रकार से यही उनकी भ होती है।

संकेत सामाजिक उत्तेजना प्रदान करते हैं। कई बार व्यक्ति को समझने संकेत बड़ी-बड़ी सहायता करते हैं। एक व्यक्ति अपनी भाषा में कुछ कहता है प साथ ही साथ अपने एक मित्र को आँख मार देता है। यहाँ पर संकेत अधिक है। जो कुछ भी उसने कहा, वह बनावट थी, वास्तव में वह झूठ बोल रहा था बना रहा है। इसी प्रकार यदि वार्ता करते समय हम लोगों के संकेतों को ध्यान देखें तो उनके मनोभावों को अधिक स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं। ये संकेत कई अचेतन में ही हो जाते हैं; जबकि भाषा पर व्यक्ति नियंत्रण रखता है।

संकेत कई प्रकार के होते हैं। आलपोर्ट ने निम्न प्रकार के संकेत बताये हैं

(अ) उद्वेगिक (emotional),
(ब) निर्देशकीय (demonstrative),
(स) सुचित्रित (graphic),
(द) लाक्षणिक (symbolic),
(य) आदतवश (habitual),
(र) अचेतन (autistic)।

(अ) **उद्वेगिक संकेत**—वे होते हैं, जो उद्वेगों के फलस्वरूप उत्पन्न होते उदाहरण के लिए, परेशानी में माथे को पकड़ना, गुस्से में होठों को चबाना या पैर पटकना, खुशी में हाथ हिलाना इत्यादि।

(ब) **निर्देशकीय संकेत**—वह होता है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति या वस्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रिस्थिति की ओर निर्देश किया जाता है; जैसे—अँगुली का इशारा, आँख का इशारा इत्यादि।

(स) सुचित्रित संकेत—वह होता है जिसमें किसी व्यक्ति या वस्तु की नकल उतारी जाती है। उदाहरण के लिए; जैसे—किसी मोटे आदमी के विषय में बताने के लिए हाथ फैलाकर बताना कि वह कितना मोटा है, किसी की भद्दी चाल को चलकर बताना इत्यादि।

(द) लाक्षणिक संकेत—अमूर्त विचारों को संकेतों के द्वारा व्यक्त करना लाक्षणिक संकेत कहलाता है। नृत्य में अनेक संकेतों द्वारा हम अमूर्त विचारों को स्पष्ट करते हैं।

(य) आदतवश संकेत—वे संकेत होते हैं जो व्यक्ति आदत पड़ जाने के कारण करता है। उदाहरण के लिए, कुछ लोग भाषण देते समय हाथ पीछे बाँध लेते हैं या एक हाथ ठोड़ी पर रख लेते हैं। कुछ लोग कंधों को झटकाते रहते हैं। कुछ लोग सर को झटका देते रहते हैं। इन संकेतों को नये लोग कोई अर्थ नहीं निकाल पाते, पर परिचित लोगों के लिए कई बार ये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते हैं।

(र) अचेतन संकेत—वे होते हैं जो व्यक्ति अपनी अचेतन अवस्था में आन्तरिक संघर्षों के कारण करता है। उदाहरण के लिए, कोई व्यक्ति जो किसी आन्तरिक संघर्ष में फंसा हुआ है, वह अपने नाखून चबाता है या कोई अन्य संकेत करता है। वे संकेत व्यक्ति की बेचैनी को व्यक्त करते हैं।

(2) उद्वेगिक मुखाभिव्यक्ति (Emotional Facial Expressions)—मुखाभिव्यक्ति अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। लोगों का चेहरा देखने से ही उनके भावों एवं चित्तवृत्ति का पता लग जाता है। फिर लोग वैसा ही व्यवहार करते हैं। व्यक्ति के चेहरे से ही स्पष्ट हो जाता है कि वह प्रसन्न, दुखी या रुष्ट है।

(3) शारीरिक विन्यास एवं गति (Postures and Movements)—शारीरिक विन्यास का अर्थ है शरीर के अंगों की स्थिति। शारीरिक विन्यास कई प्रकार के बोध कराता है। कुश्ती में हम इसे अनुभव करते हैं।

(4) विस्मय (Interjection)—व्यक्ति के चेहरे पर फैली विस्मय की रेखा भी उसके आन्तरिक परिवर्तन का आभास हो जाता है।

(5) स्पष्ट बोली (Articulate Speech)—स्पष्ट बोली भी एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक उत्तेजना है। इसे भाषा कहते हैं। भाषा लिखित या बोली जाने वाली होती है। इस पर हम अगले अध्याय में विस्तृत प्रकाश डालेंगे।

(6) मुख लक्षण निरूपण (Physiognomy or Facial Expression in Repose)—मुख लक्षण निरूपण भी सामाजिक उत्तेजना का एक प्रकार है जब व्यक्ति उद्वेग में नहीं होता, उस समय के मुख पर लक्षण उस व्यक्ति के विषय में अनेक तथ्य प्रकाशित करते हैं।

(7) हँसी (Laughter)—हँसी भी एक सामाजिक उत्तेजना है। हम दूसरों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर हँसते हैं। ऐसा हम तब करते हैं जबकि कोई व्यक्ति बेवकूफी करता है, नासमझी करता है या गलती करता है। यह दूसरे व्यक्ति की आलोचना करने का एक ढंग है। हँसी सामाजिक नियन्त्रण का एक-साधन है।

हम दूसरों के साथ हँसते हैं। यह महत्त्वपूर्ण सामाजिक उत्तेजना है। हँसने के कारण मनुष्य बन्धुत्व की भावना को प्रदर्शित करता है। जब दो लोग साथ हँसते हैं तो उसका तात्पर्य होता है कि उनका दृष्टिकोण समान है।

हँसना कई अर्थों में हो सकता है। विजयी परास्त व्यक्ति पर हँसता, हीन भावना रखने वाला अपने से उच्च के सामने हँसता है। ये सभी सामाजिक उत्तेजना प्रदान करते हैं।

द्वैतीयिक सामाजिक उत्तेजना (Secondary Social Stimulation) इसके अन्तर्गत उस प्रकार की सामाजिक उत्तेजना आती है, जो अप्रत्यक्ष रूप से होती है।

सामाजिक अन्त:क्रिया के स्वरूप—सामाजिक प्रक्रियायें (Forms of Social Interaction—Social Processes)

सामाजिक अन्त:क्रिया के स्वरूपों को सामाजिक प्रक्रियायें (social processes) कहते हैं। बीसंज तथा बीसंज ने लिखा है, "सामाजिक अन्त:क्रिया के विभिन्न स्वरूपों को सामाजिक प्रक्रियायें कहते हैं।"[1]

सामाजिक प्रक्रिया का अर्थ

सामाजिक प्रक्रिया को समझने के लिए पहले हमें 'प्रक्रिया' (process) शब्द का अर्थ समझना होगा। एक प्रक्रिया उन सम्बन्धित घटनाओं के क्रम को कहते हैं जो एक विशिष्ट परिणाम की ओर ले जाती है। एक प्रक्रिया के प्रमुख तत्व निम्न हैं :

(1) घटनाओं का सम्बन्धित होना।

(2) सम्बन्धित घटनाओं के क्रम में पुनरावृत्ति होना।

(3) घटनाओं के क्रम का किसी निश्चित परिणाम की ओर ले जाना।

श्वांस लेना एक प्रक्रिया है। इसी प्रकार समाज में भी अनेक प्रक्रियायें होती हैं।

मौलिक सामाजिक प्रक्रिया

समाज में अनेक सामाजिक प्रक्रियायें हैं। मौलिक सामाजिक प्रक्रियाओं के अन्तर्गत प्रतिस्पर्धा (competition), संघर्ष (conflict), सहयोग (co-operation), व्यवस्थान (accommodation), आत्मसात (assimilation) आती हैं। जो सामाजिक प्रक्रियायें एकीकरण करती हैं, उन्हें एकीकरण करने वाली (integrative) सामाजिक प्रक्रियायें कहते हैं; जैसे—सहयोग, व्यवस्थान, आत्मसात। जो पृ...

---

1 "The various forms interaction are called the social processes." Biesanz and Biesanz. *Modern Society* (1954), p 88.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाली (disintegrative) होती हैं उन्हें पृथक करने वाली सामाजिक प्रक्रियायें कहते हैं; जैसे—प्रतिस्पर्धा, संघर्ष इत्यादि ।

प्रतिस्पर्धा
(Competition)

प्रतिस्पर्धा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पायी जाती है। आर्थिक प्रतिस्पर्धा तो आजकल अत्यधिक पायी जाती है। आधुनिक समाज का प्रमुख लक्षण प्रतिस्पर्धा है। अमरीका तथा अन्य विकसित अन्य पूंजीवादी देशों में प्रतिस्पर्धा पर ही समाज आधारित है। आधुनिक समाज में इसे प्रगति का चिन्ह मानते हैं।

प्रतिस्पर्धा की परिभाषाएँ

बीसंज तथा बीसंज की परिभाषा :

"प्रतिस्पर्धा दो या अधिक व्यक्तियों के समान उद्देश्य, जो इतना सीमित है कि सब उसके भागीदार नहीं बन सकते, को पाने के प्रयत्न को कहते हैं।"[1] प्रतिस्पर्धा एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें दो या अधिक व्यक्ति किसी ऐसे समान उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, जो उसे पाने वालों की संख्या से कम है। उसे सब नहीं प्राप्त कर सकते, कुछ ही प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि वह सीमित है। उसे प्राप्त करने के प्रयत्नों को प्रतिस्पर्धा कहते हैं।

सदरलैण्ड, वुडवर्ड तथा मैक्सवेल की परिभाषा :

"प्रतिस्पर्धा व्यक्तियों या समूहों के बीच उन सन्तुष्टियों, जिन्हें उनके सीमित होने के कारण सब प्राप्त नहीं कर सकते, की प्राप्ति के लिए एक अवैयक्तिक अचेतन एवं निरन्तर परिश्रम को कहते हैं।"[2]

फेयर चायल्ड की परिभाषा :

"प्रतिस्पर्धा सीमित वस्तुओं के उपयोग या अधिकार के लिए किये जाने वाले परिश्रम को कहते हैं।"[3]

बोगार्डस की परिभाषा :

"प्रतिस्पर्धा किसी ऐसी वस्तु को प्राप्त करने के विवाद को कहते हैं जो इतनी मात्रा में नहीं पायी जाती जिससे कि माँग की पूर्ति हो सके।"[4]

"इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि प्रतिस्पर्धा किसी वस्तु की प्राप्ति के लिए

---

1 "Competition is the striving of two or more persons for the same goal, which is limited so that all cannot share it." Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p. 90.

2 Sutherland, Woodward and Maxwell, *Introductory Sociology* (1952), p. 207.

3 "Competition is the struggle for the use possession of limited goods." H. P. Fairchild (ed), *Dictionary of Sociology* (1944), p. 289.

4 E. S. Bogardus *Sociology*. p. 527.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किये जाने वाले परिश्रम को कहते हैं। वह वस्तु सीमित होती है और उसकी पूर्ति से अधिक होती है। इस सामाजिक प्रक्रिया में स्वार्थों का संघर्ष निहित होता फिर भी स्पष्ट संघर्ष नहीं पाया जाता। प्रतिस्पर्धा भी एक प्रकार का संघर्ष है, पर इन दोनों में मौलिक भेद पाये जाते हैं। जिनका विवरण हम आगे देंगे।

प्रतिस्पर्धा के प्रकार (Forms of Competition)

प्रतिस्पर्धा दो प्रकार की होती है—वैयक्तिक प्रतिस्पर्धा और अवैयक्तिक प्रतिस्पर्धा।

(अ) वैयक्तिक प्रतिस्पर्धा (Personal Competition)—वैयक्तिक प्रतिस्पर्धा उस प्रतिस्पर्धा को कहते हैं जो व्यक्तियों के बीच पायी जाती है। इस प्रतिस्पर्धा के अन्तर्गत व्यक्ति एक-दूसरे के प्रति चेतन रहते हैं। इसे प्रतिद्वन्द्विता (rivalry) भी कहते हैं।

(ब) अवैयक्तिक प्रतिस्पर्धा (Impersonal Competition)—अवैयक्तिक प्रतिस्पर्धा उस प्रतिस्पर्धा को कहते है जो समूहों के बीच पायी जाती है। यद्यपि व्यक्ति ही सामाजिक समूहों के सदस्य होते हैं फिर भी ऐसी प्रतिस्पर्धा में सम्बन्ध अवैयक्तिक होते हैं। प्रतिस्पर्धी एक-दूसरे के प्रति सामान्यतया अचेतन होते हैं।

प्रतिस्पर्धा के स्वरूप (Types of Competition)

प्रतिस्पर्धा के अनेक स्वरूप पाये जाते हैं। इसके प्रमुख स्वरूप आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं प्रजातीय प्रतिस्पर्धाएँ हैं। आर्थिक, प्रतिस्पर्धा का जन्म आर्थिक वस्तुओं की माँग की पूर्ति के हेतु होता है। सांस्कृतिक प्रतिस्पर्धा उस समय पायी जाती है जब दो या अधिक सांस्कृतियाँ परस्पर सम्बन्ध में आती हैं। सामाजिक प्रतिस्पर्धा व्यक्ति या समूह अपनी सामाजिक स्थिति को प्राप्त करने के लिए करते हैं। इसी प्रकार राजनैतिक प्रतिस्पर्धा राजनैतिक स्थिति को प्राप्त करने के लिए की जाती है। प्रजातीय प्रतिस्पर्धा का जन्म वहाँ होता है जहाँ दो या अधिक प्रजातियाँ एक-दूसरे से उच्च बने रहने की अभिलाषा करती हैं।

प्रतिस्पर्धा और कार्यक्षमता
(Competition and Efficiency)

प्रतिस्पर्धा केवल पृथक करने वाली सामाजिक प्रक्रिया नहीं है। इसमें अनेक गुण पाये जाते हैं। प्रतिस्पर्धा का सबसे बड़ा गुण यह है कि वह कार्यक्षमता को प्रोत्साहन देती है। प्रतिस्पर्धा के कारण ही व्यक्ति अत्यधिक परिश्रम करने को प्रोत्साहित होते हैं। बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "हमें पूर्ण विश्वास है कि सहयोग कार्यों को पूर्ण कराता है तो प्रतिस्पर्धा यह आश्वासन देती है कि वे (कार्य) अच्छी प्रकार से किये जायेंगे।"[1] अतः प्रतिस्पर्धा अत्यावश्यक है। पूँजीवादी समाज

---

1 "We are convinced that while cooperation gets things done, competition assures that they will be well done." Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p. 91.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतिस्पर्धा पायी ही जाती है, परन्तु समाजवादी सहयोगी समाज भी इसे समाप्त करने में असफल रहे हैं। रूस में साम्यवादी समाज पाया जाता है। इसलिए वहाँ व्यक्तिगत सम्पत्ति का कोई महत्त्व नहीं समझा जाता। इसके परिणामस्वरूप प्रतिस्पर्धा का स्वरूप भी परिवर्तित हो गया है। उन्होंने प्रतिस्पर्धा का नाम समाजवादी प्रतिस्पर्धा रखा है। व्यक्तियों में प्रतिस्पर्धा न होकर दो मिलों या कारखानों में प्रतिस्पर्धा उत्पन्न की जाती है। इस पद्धति द्वारा रूस ने अपना उत्पादन बढ़ा लिया। इससे स्पष्ट है कि प्रतिस्पर्धा कार्य करने की स्फूर्ति, प्रेरणा एवं गति प्रदान करती है जिसके फलस्वरूप कार्यक्षमता बढ़ती है।

प्रतिस्पर्धा और आधुनिक समाज
(Competition and Modern Society)

आधुनिक समाज में प्रतिस्पर्धा का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। प्रतिस्पर्धा इसलिए और भी सर्वप्रथम हो गयी है कि वह आधुनिक जटिल समाज में परिश्रम को प्रोत्साहन देकर व्यक्ति को प्रगति की ओर उन्मुख करती है। किंग्सले डेविस ने लिखा है, "वास्तव में इनको प्रगति कही जाने वाली वस्तु से स्पष्ट सम्बन्ध होने के कारण कुछ क्षेत्रों में यह आधुनिक सभ्यता के आवश्यक लक्षण के रूप में मानी जाने लगी है।"[1]

प्रतिस्पर्धा प्राचीन समाजों में पृथक करने वाली सामाजिक प्रक्रिया कही जाती है; परन्तु आधुनिक समाज ने इसके दृष्टिकोण को परिवर्तित कर दिया और नकारात्मक मूल्यों के स्थान पर सकारात्मक मूल्यों को स्थापित कर दिया है। आधुनिक संस्कृति ने इसे एक सुन्दर, अच्छी एवं प्रिय वस्तु बना दिया है। आजकल प्रतिस्पर्धा का प्रयोग अत्यधिक बढ़ता जा रहा है। परिवार भी इससे रहित नहीं हैं। माता और पिता में बच्चे के प्यार के लिए प्रतिस्पर्धा होती है और वे बच्चे से पूछते हैं कि तुम्हें कौन अधिक प्यार करता है। उत्तर जिसके पक्ष में होता है वह आनन्द-विभोर हो उठता है और दूसरा अन्य अवसर की प्रतीक्षा करता है और बच्चे को अधिक प्यार करना प्रारम्भ देता है।

प्रतिस्पर्धा समाज में व्यक्तियों को कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करती है और सामाजिक स्थितियों को निश्चित करती है। आधुनिक समाज में सामाजिक स्थिति जन्म से निश्चित नहीं होती, वरन् प्राप्त की जाती है। अतः प्रतिस्पर्धा का महत्त्व सामाजिक स्थिति को निश्चित करने में और भी अधिक बढ़ गया है।

अर्जित स्थिति और प्रतिस्पर्धा
(Achieved Status and Competition)

प्रतिस्पर्धा और अर्जित स्थिति में घनिष्ठ सम्बन्ध है। ग्रीन ने तो यहाँ तक लिखा है, "अर्जित स्थि पर इतनी अधिक प्रतिस्पर्धा लक्षित होती है कि दोनों शब्द

---

1. Kingsley Davis, *Human Society*, pp. 163-64.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राय: व्यावहारिक रूप में पर्यायवाची हैं।"[1] स्थिति और प्रतिस्पर्धा के सम्बन्ध का वर्णन करते हुए बर्नार्ड ने भी लिखा है, "यद्यपि हम आर्थिक, सामाजिक और नैतिक प्रतिस्पर्धा की चर्चा कर सकते हैं (तथापि) प्रत्येक स्वरूप में स्थिति के लिए प्रतिस्पर्धा सदैव उपस्थित रहती है।"[2]

पशुओं में भी प्रतिस्पर्धा पायी जाती है। पशु अपने अस्तित्व के लिए परिश्रम करते हैं; परन्तु मनुष्य अपनी सामाजिक स्थिति के लिए करते हैं। विशेषकर उन समाजों के लिए जिनमें जटिल सामाजिक संगठन और उच्चकोटि की प्रौद्योगिकी पायी जाती है, यह कथन और भी अधिक सत्य है। मनुष्य केवल शारीरिक अस्तित्व के लिए प्रतिस्पर्धा नहीं करता। एलरिज ने लिखा है, "व्यक्तियों और समूहों में प्रतिस्पर्धा अस्तित्व बनाये रखने की अपेक्षा अधिकतर अपनी स्थितियों की उन्नति के उद्देश्य से होती है।"[3]

इसमें सन्देह नहीं कि प्रतिस्पर्धा आधुनिक युग में एक अच्छी प्रक्रिया मानी जाती है, फिर भी असीमित प्रतिस्पर्धा अच्छी नहीं।

प्रतिद्वन्द्विता
(Rivalry)

प्रतिस्पर्धा व्यक्तियों और समूहों को संघर्ष की ओर ले जाती है। मान लीजिए दो खिलाड़ी खेल रहे हैं। एक खिलाड़ी दूसरे से बाजी ले जाना चाहता है। इस कारण वह उस विशेष व्यक्ति से द्वेष करने लगता है। इसी को प्रतिद्वन्द्विता कहते हैं। इसके उपरान्त वह व्यक्ति सीमाओं का उल्लंघन करने लगता है और किसी प्रकार जीतना चाहता है। यही संघर्ष है। बोगार्डस ने उचित ही लिखा है, "प्रतिस्पर्धा तर्क के अनुसार, संघर्ष में विकसिक हो जाती है।"[4]

प्रतिस्पर्धा में कुछ न कुछ तो संघर्ष की भावनाएँ पायी ही जाती हैं। डेविस ने भी लिखा है, "इसलिए यह (प्रतिस्पर्धा) कलह का एक परिवर्तित रूप है।"[5] प्रतिस्पर्धा पूर्ण संघर्ष न होने के कारण एकदम पृथक करने वाली प्रक्रिया नहीं कही जा सकती। प्रतिस्पर्धा एकीकरण भी करती है; किन्तु अनियन्त्रित प्रतिस्पर्धा विघटन को जन्म देती है। इसलिए हम कह सकते हैं कि प्रतिस्पर्धा

---

1 "So much of competition is aimed at achieved status, b... that the two terms are practically synonymous." A. W. ... *Sociology* (1956).

2 Jessie Bernard, *Ameracin Community Behavionr*, Dryden ... New York, (1949), p. 85.

3 Eldridge and others, *Fundamentals of Sociology*, p. 383.

4 "Competition logically develops into conflict," E. S. B... *Sociology*, p. 528.

5 "It is thus a modified form of struggle." K. Davis, *Society*, p. 162.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न्यून मात्रा में पृथकीकरण करती है। जोन्स ने भी लिखा है, "तब प्रतिस्पर्धा पृथक करने वाली नम्र प्रक्रियाओं में से एक है।"[1]

प्रतिस्पर्धा का मनोविज्ञान
(Psychology of Competition)

प्रतिस्पर्धा व्यक्ति को कार्य करने की ओर प्रोत्साहित करती है, इसके साथ-साथ व्यक्ति को उसकी कार्यक्षमता का आभास दिलाती है, जो उसमें प्रतिस्पर्धा के प्रयोजन से पूर्व नहीं था। अकोलकर ने उचित ही लिखा है, प्रतिस्पर्धा एक उन्नतिशील शक्ति है जो पूर्ण करती है तथा आवश्यक नहीं कि वह नष्ट करे।"[2]

प्रतिस्पर्धा के कुछ प्रयोगात्मक अध्ययन, बच्चों और विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों पर किये गये हैं। जिनके द्वारा यह ज्ञात होता है कि प्रतिस्पर्धा व्यक्ति की क्रिया-गति को तीव्र करती है और इसके साथ-साथ उसकी कार्यक्षमता को भी बढ़ाती है। साधारणतया देखा गया है कि प्रत्येक प्रतिस्पर्धी ज्यादा और अच्छा कार्य करता है। कुछ तो प्रतिस्पर्धा के प्रोत्साहन के आवेश में आकर और कुछ अपने प्रतिद्वन्द्वी को जीतने के लिए, प्रतिस्पर्धी अधिक और सकुशल कार्य करता है।

जैसा कहा गया है कि साधारणतया प्रतिस्पर्धा व्यक्ति की कार्यक्षमता को बढ़ाती है, किन्तु कभी-कभी कार्यक्षमता न्यूनतर भी हो सकती है। इसका कारण कुछ तो यह हो सकता है कि प्रतिस्पर्धा प्रतिस्पर्धी में एक प्रकार का उत्साह-सा पैदा करती है या कुछ यह भी हो सकता है कि प्रतिस्पर्धी का ध्यान प्रतिद्वन्द्वी की ओर चला जाता है जिसके द्वारा व्यक्ति की कार्यक्षमता घट जाती है।

संघर्ष
(Conflict)

संघर्ष का अर्थ (Meaning of Conflict)—संघर्ष मानव प्रकृति में उसी प्रकार पाया जाता है जिस प्रकार सहयोग। प्रतिस्पर्धा का विवेचन करते समय हमने संघर्ष का अर्थ बताने की चेष्टा की थी। जब प्रतिस्पर्धा उद्देश्यों से हटकर प्रतिस्पर्धियों पर केंद्रित हो जाती है तो संघर्ष का रूप धारण कर लेती है। संघर्ष की परिभाषा करते हुए ग्रीन ने लिखा है, 'संघर्ष दूसरे या दूसरों की इच्छा के विरोध, प्रतिकार या बलपूर्वक रोकने के विचारपूर्वक प्रयत्न को कहते हैं।[3] संघर्ष में अहिंसा की भावना स्पष्ट होती है। गिलिन और गिलिन ने हिंसा पर अधिक जोर दिया है।

---

1 "Competition is, thus, one of the milder disintegrative processes." Jones, *Basic Sociological Principles*, Ginn and Company, Boston (1949), p. 307.

2 "Competition is a progressive force which fulfils and does not necessarily destroy." V. V. Akolkar, *Social Psychology*, Fourth Edition. (1960), p. 85.

3 "Conflict is the deliberate attempt to oppose, resist or coerce the will of another or others." A. W. Green, *Sociology* (1956), p. 50.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन्होंने लिखा है, "संघर्ष वह सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति या समूह उद्देश्यों की प्राप्ति अपने विरोधी को हिंसा या हिंसा के भय द्वारा प्रत्यक्ष देकर करते हैं।"[1] ग्रीन का कहना है कि संघर्ष बिना हिंसा के भी हो सकता

संघर्ष के प्रकार

संघर्ष दो प्रकार के होते हैं—वैयक्तिक और सामूहिक।

(अ) वैयक्तिक संघर्ष (Personal Conflict)—वैयक्तिक संघर्ष को कहते हैं जो एक समूह के व्यक्तियों में पाया जाता है। समूह इस प्रकार को बढ़ने नहीं देता; क्योंकि वह अधिक से अधिक नियन्त्रण रखने का प्रयास है। इस प्रकार के संघर्ष के उत्पन्न होने के कई कारण हो सकते हैं। व्यक्ति स्वार्थ व्यक्तिगत होते हैं और कुछ सामूहिक। व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति किसी भी मूल्य पर करना चाहता है। द्वेष और ईर्ष्या इस प्रकार के संघर्ष देती है। अधिकांश संघर्ष के कारण, धन, शक्ति, विश्राम, मान एवं लिंग कई बार कुछ व्यक्ति मिलकर किसी कार्य को करते हैं; परन्तु उस कार्य प्राप्त फल के वितरण पर संघर्ष हो जाता है।

व्यक्तिगत संघर्ष के कुछ सुन्दर पक्ष भी होते हैं। कई बार मित्रों, विवाहित जोड़ों एवं सहयोगियों में वाक्य संघर्ष (verbal conflict) एक प्रति गलतफहमियों को दूर कर देता है और फिर से उनके सम्बन्ध मधुर हैं। पर इसमें एक शर्त है कि वे मार-पीट पर न उतर आएँ।

(ब) सामूहिक संघर्ष (Corporate Conflict)—सामूहिक संघर्ष बीच या समाजों के बीच होता है। इसके अन्तर्गत एक समाज के विभिन्न अपने-अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए संघर्ष करते हैं। इसी प्रकार एक समाज समाज से संघर्ष करता है।

एक समाज के अन्दर अनेक समूहों में संघर्ष होता है। उदाहरणार्थ, के बीच संघर्ष। इसी प्रकार समुदायों के बीच भी होते रहते हैं। राष्ट्रीय के बीच होने वाले संघर्ष से हम भली प्रकार परिचित हैं। इसे युद्ध कहते हैं निक समाज में युद्ध का रूप बड़ा विकराल हो गया है।

सामूहिक संघर्ष का लाभदायक पक्ष भी है, यद्यपि इससे हानि अधिक है। बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "फिर भी अधिक संघर्ष विनाशकारी और जितनी समस्याओं को सुलझाता है उससे कहीं अधिक समस्याओं को है।"[2] इसमें कोई सन्देह नहीं कि संघर्ष का रूप विनाशकारी होता है, समूह के अन्दर चेतना और संगठन स्थापित करता है। ग्रीन ने उचित ही

---

1 Gillin and Gillin, *Cultural Sociology*, p. 625.

2 "Much conflict, however, is destructive and breeds more p than it solves." Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है, "युद्ध सामूहिक चेतना और सामूहिक समानता को बढ़ाया है।"[1] ग्रीन के इस कथन में बड़ी सत्यता पायी जाती है। पाकिस्तान सरकार रचनात्मक कार्यों के द्वारा पाकिस्तानियों में एकता स्थापित करने में असफल रही है। इसीलिए आन्तरिक कलह और फूट को एकता में परिवर्तित करने के लिए 'कश्मीर समस्या' को लेकर भारत के विरुद्ध जिहाद का नारा बुलन्द करती है। इस विषय में किंग्सले डेविस ने लिखा है, "इसलिए आन्तरिक एकता और बाह्य संघर्ष एक ही ढाल के प्रतिकूल पक्ष हैं।"[2]

अप्रत्यक्ष तथा प्रत्यक्ष संघर्ष
(Latent or Govert and Overt Conflict)

संघर्ष की प्रक्रिया के दो रूप हैं। वास्तविक संघर्ष जो प्रत्यक्ष रूप में उद्दीप्त होता है, उनकी उद्दीप्ति के पूर्व ही संघर्ष प्रारम्भ हो चुका है। प्रत्यक्ष संघर्ष (overt conflict) बाह्य रूप में एकट होता है। पहले संघर्ष मस्तिष्क में प्रारम्भ होता है और स्पष्ट रूप में प्रकट नहीं होता। इसे अप्रत्यक्ष संघर्ष (latent or covert conflict) कहते हैं। अप्रत्यक्ष संघर्ष को तनाव (tension) भी कहते हैं। अप्रत्यक्ष संघर्ष अवसर पाने पर प्रत्यक्ष संघर्ष के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

संघर्ष का समाजशास्त्रीय महत्त्व
(Sociological Significance of Conflict)

संघर्ष एक सामाजिक प्रक्रिया के रूप में व्यक्तित्व एवं सामाजिक संगठन दोनों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संघर्ष द्वारा व्यक्तियों में चेतना की उत्पत्ति होती है और अधिक परिश्रम करने की ओर अग्रसर होते हैं। संघर्ष कठिनाई के रूप में सामने आता है और सहयोग करने के लिए वाध्य करता है। र्‍यूटर और हार्ट ने लिखा है, "यह (संघर्ष) समस्त चेतन जीवन के आधार एवं उत्पत्ति की जड़ है, आत्म चेतना और सामूहिक चेतना दोनों संघर्ष के ही परिणाम हैं।"[3]

संघर्ष मनुष्य के जीवन को संगठित करने का कार्य करता है। प्रत्येक समस्या एक प्रकार का संघर्ष होती है। इन संघर्षों से लड़ना व्यक्ति में निर्णय करने की शक्ति का प्रसार करता है। इसी प्रक्रिया के द्वारा उसके विचार एवं कार्य संगठित होते हैं और उसका जीवन एक निश्चित दिशा की ओर बढ़ने लगता है। बिना संघर्ष के चरित्र का निर्माण नहीं हो सकता। वह व्यक्ति सदैव बच्चा बना रहता है जिसके जीवन में संघर्ष नहीं आता और जो पूर्ण रक्षा में अपना जीवन व्यतीत करता है। इसलिए आधुनिक देशों में इस बात की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है कि विद्यार्थियों के लिए कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं, अपितु उन्हें समस्याओं का समाधान भी करना चाहिए जिससे उनके चरित्र का निर्माण हो सके।

---

1. "War heightens group awareness and group identity." A. W. Green, *Sociology*, p. 54.
2. "Internal harmony and external conflict are, therefore, opposite sides of the same shield." K. Davis, *Human Society*, p. 160.
3. Reuter and Hart, *Introduction to Sociology* (1933), p. 311.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust-Funding IKS-MoE-Grant-2

संघर्ष के स्वरूप

संघर्ष के अनेक स्वरूप होते हैं। संघर्ष के प्रमुख स्वरूप उद्देश्यों के आधा[र] युद्ध, चिरस्थायी कलह (feud), व्यापारिक प्रतिद्वन्द्विता और मुकदमेबाजी [हैं।] हैं। समूह के आधार पर संघर्ष के स्वरूप—राष्ट्रों के बीच संघर्ष, राजनैतिक, जातीय, वर्ग, पारिवारिक, सामुदायिक संघर्ष आदि प्रमुख हैं।

सहयोग
(Co-operation)

सहयोगी किसी सामान उद्देश्य की पूर्ति के लिए किये गये प्रयत्न को क[हते] ग्रीन ने इनकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "सहयोग दो या अधिक व्यक्ति[यों] किसी कार्य को करने या किसी उद्देश्य, जो समान रूप से इच्छित होता [है,] पहुँचने के निरन्तर एवं सार्वजनिक प्रयत्न को कहते हैं।"[1] फेयरचाइल्ड ने लि[खा] "सहयोग वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति और समूह अपने प्रयत्नों को कमो[बेश] संगठित रूप से सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए संयुक्त कर देते हैं।"[2] किसी न किसी रूप से संगठित अवश्य होता है। इसमें प्रेम व सद्भावना पा[यी जाती] है। संघर्ष में व्यक्ति एक-दूसरे का विरोध करते हैं, किन्तु सहयोग में व्यक्ति दूसरे के कार्य में हाथ बँटाते हैं और साथ-साथ काम करते हैं।

सहयोग के प्रकार

ग्रीन ने सहयोग को निम्न तीन प्रमुख भागों में विभाजित किया है:

(1) **प्राथमिक सहयोग** (Primary Co-operation)—प्राथमिक [सहयोग] में व्यक्ति और समूह में कोई अन्तर नहीं पाया जाता। व्यक्ति अपने उद्देश्यों को समूह के उद्देश्य एवं स्वार्थ समझता है। उद्देश्य और साधन समान [हैं।] माता अपने बच्चों की सन्तुष्टि के लिए कार्य करती है। उसमें उसका [स्वार्थ] निहित है कि बच्चों की सन्तुष्टि हो जाये, उसी से उसकी सन्तुष्टि हो[ती है।] सहयोग करने को ही अत्यन्त महत्त्व दिया जाता है, इसके अन्तर्गत व्यक्तिग[त स्वार्थ] को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता। प्रायः इस प्रकार का सहयोग प्राथमिक [समूहों में] पाया जाता है। इसलिए इनको प्राथमिक सहयोग कहा जाता है।

(2) **द्वैतीयिक सहयोग** (Secondary Co-operation)—द्वैतीयि[क सह]योग में व्यक्ति समूह के साथ ही अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए सहयोग क[रता है,] उदाहरणार्थ, श्रम विभाजन की प्रक्रियाएँ। प्रत्येक व्यक्ति अपना कार्य करता [है।]

---

1 "Co-operation is the continuous and common endeavour [of two] or more person to perform a task or to reach a goal that [is com]monly cherished." A. W. Green, *Sociology*, p. 59.

2 "Co-operation is the process by which individuals or grou[ps com]bine their efforts, in a more or less organized way, for the [attain]ment of common objectives." H. P. Fairchild (ed.), *Dicti[onary of] Sociology* (1944), article 'Co-operation', p. 68.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस प्रकार दूसरों को उनके कार्य करने में सहयोग देता है जिससे इस सहयोग केवल और वह व्यक्तिगत आनन्द लूट सके। आधुनिक समाज में इस प्रकार का सहयोग पाया जाता है।

(3) **तृतीयक सहयोग** (Tertiary Co-operation)—तृतीयक सहयोग को व्यवस्थान (accommodation) कहते हैं। इस पर हम आगे प्रकाश डालेंगे।

ऑगबर्न[1] ने सहयोग को तीन प्रमुख भागों में बाँटा है। यह वर्गीकरण अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रयोग किया जाता है। जब लोग एक-दूसरे के साथ सहयोग करते हैं और एकसा ही कार्य करते हैं; जैसे—पत्थरों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाना दलदल में फँसी मोटर को बाहर निकालना आदि, तो इस प्रकार का सहयोग सामान्य सहयोग होगा। जब इसी प्रकार का सहयोग केवल आनन्द प्राप्ति के लिए किया जाता है तो इसे मित्रवत् (companionable) सहयोग कहते हैं। उदाहरणार्थ; इराकास में वन्य जाति में स्त्रियाँ खेतों की अकेले रक्षा कर सकती हैं; किन्तु पुरुष केवल इसलिए सहयोग करते हैं कि दोनों के लिए कार्य आनन्दप्रद हो जाता है।[2] सामान्य सहयोग का दूसरा प्रकार सहायक श्रम होता है। उदाहरण के लिए, दलदल में से मोटर निकालना। सामान्य सहयोग का तीसरा प्रकार विभिन्न श्रमों का एकीकरण होता है। इसके अन्तर्गत सबका उद्देश्य एक होता है, परन्तु उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार का श्रम भिन्न-भिन्न व्यक्ति करते हैं। उदाहरणार्थ; बढ़ई, राज, मजदूर, लोहार आदि एक भवन के निर्माण में सहयोग करते हैं।

मैकाइवर ने भी सहयोग को दो भागों में वर्गीकृत किया है। प्रत्यक्ष (direct) और अप्रत्यक्ष (indirect) सहयोग। प्रत्यक्ष सहयोग में दो या अधिक व्यक्ति एक साथ मिलजुल कर कार्य करते हैं। उदाहरण के लिए, किसान एक-दूसरे के कार्य में सहयोग करते हैं। अप्रत्यक्ष सहयोग में दो या दो से अधिक व्यक्ति समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए काम करते हैं, परन्तु कार्य भिन्न होते हैं। उदाहरणार्थ; एक विश्वविद्यालय में प्राध्यापक, विद्यार्थी, प्रशासक, टाइपिस्ट, चपरासी इत्यादि काम करते हैं।

पारस्परिक सहयोग (Mutual Aid)—पारस्परिक सहयोग वह सहयोग है जिसमें व्यक्ति एक-दूसरे के लाभ के लिए कार्य करते हैं। क्राप्टकिन[3] ने इसे बड़ा महत्त्व दिया है। वास्तव में पारस्परिक सहयोग, सहयोग से भिन्न नहीं है।

बोगार्डस ने लिखा है, "पारस्परिक सहयोग, सहयोग का एक विशिष्ट नाम है।"[4]

---

1 Ogburn and Nimkoff, *Handbook of Sociology*, p. 233.
2 Mark A. May and Leonard W. Doob, *Competition and Co-operation*, p. 99.
3 P. Kroptkin, *Mutual Aid; a Factor in Evolution*. Doubleday Page and Company, New York (1902).
4 "Mutual aid is a special name for cooperation.' E. S. Bogardus *Sociology*, p. 351.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यवस्थापन
(Accommodation)

संघर्ष के सहयोग की ओर बढ़ने के प्रथम चरण को व्यवस्थान कहते हैं। व्यवस्थान का साधारण अर्थ वर्तमान अवस्थाओं से अनुकूलन होता है। व्यक्ति या समूह चाहे वर्तमान अवस्थाओं से प्रेम करे या घृणा परन्तु अस्तित्व बनाये रखने के लिए बाह्य रूप से इन अवस्थाओं के अनुसार बनाना पड़ता है; क्योंकि व्यक्ति निरन्तर संघर्ष की स्थिति में नहीं रह सकता। अतः संघर्ष को टालने के लिए समझौता करता है। उस समझौते को ही व्यवस्थान कहते हैं।

व्यवस्थापन की परिभाषाएँ

व्यवस्थान एक अवस्था (condition) और एक प्रक्रिया (pro... दोनों ही है।

र्‌यूटर और हार्ट द्वारा व्यवस्थान की प्रक्रिया की परिभाषा :

"एक प्रक्रिया के रूप में, व्यवस्थान प्रयत्नों का वह अनुक्रम है जिसके मनुष्य परिवर्तित अवस्थाओं द्वारा आवश्यक बनायी गयी आदतों एवं दृष्टि... निर्माण करके जीवन की परिवर्तित अवस्थाओं से एकता स्थापित कर लेते हैं।"[1]

र्‌यूटर और हार्ट द्वारा व्यवस्थान की अवस्था की परिभाषा :

"एक अवस्था के रूप में व्यवस्थान सम्बन्धों की एक व्यवस्था, जो ... व्यक्ति की स्थिति या सम्पूर्ण सामाजिक संगठन में समूह की स्थिति को प... करती है, का मानना एवं स्वीकार करना होता है।"[2]

जीवन के प्रत्येक क्षण में व्यवस्थान की प्रक्रिया कार्य करती रहती है। ... रहने की कला व्यवस्थान की निरन्तर क्रिया कही जा सकती है। व्यवस... अचेतन प्रक्रिया है और हमेशा होती रहती है। उदाहरणार्थ, एक नवविवाहि... अपने पति के परिवार में जाती है। वहाँ पर उसे नवीन परिस्थितियों का ... करना पड़ता है। धीरे-धीरे उसकी आदतें और दृष्टिकोण नवीन परिस्थि... अनुकूल बन जाते हैं। इसके फलस्वरूप उसका पति के परिवार से व्यवस... जाता है।

व्यवस्थान एक अवस्था भी है जैसा कि र्‌यूटर और हार्ट की उक्त प... में ज्ञात होता है। सापेक्षिक दृष्टिकोण से व्यवस्थान की अवस्था में मान... सामाजिक शान्ति की अवस्था पायी जाती है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी ... उत्पन्न होता है। उसे समूह के अनुसार आदतें, विश्वास एवं व्यवहार विकसि... पड़ते हैं। उन अवस्थाओं में वह प्रसन्न रहे या अप्रसन्न, परन्तु जीवित रहने ... उन्हें स्वीकार करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, हिन्दू समाज की जाति ...

---

1 Reuter and Hart, *Introduction to Sociology*, p. 322.
2 *Ibid*, p. 320.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की ही ले लीजिए। मेहतर भी अपनी स्थिति को स्वीकार करता है, चाहे वह स्थिति उसके लिए कितनी ही दुःखप्रद क्यों न हो। मनुष्य की प्राकृतिक इच्छाएँ व्यवस्था के विरोध में उठती हैं, परन्तु व्यवस्थापन के द्वारा सामाजिक इच्छाओं के अनुसार मनुष्य को चलना पड़ता है। बीसंज और बीसंज ने लिखा है, "एक अर्थ में व्यवस्थान समस्त औपचारिक सामाजिक संगठन का आधार है।"[1] पार्क और बर्गेस ने भी इसी विचार को व्यक्त करते हुए लिखा है, "सम्पत्ति के अधिकार प्रत्येक, प्रकार के निहित स्वार्थ, पारिवारिक संगठन, दासत्व, जातियाँ, वर्ग—वास्तव में सम्पूर्ण सामाजिक संगठन व्यवस्थान को प्रदर्शित करता है जिसका अभिप्राय यह है कि व्यक्ति की प्राकृतिक इच्छाओं पर सीमाओं का निर्धारण किया जाता है।"[2] व्यवस्थान प्रत्येक व्यक्ति एवं समूह के लिए एक मान्य एवं स्वीकृत स्थिति को प्रस्तुत करता है, जिसके फलस्वरूप संघर्ष उत्पन्न नहीं होता।

व्यवस्थान से यह नहीं समझ लेना चाहिए कि पूर्ण अनुरूपता या शान्ति की अवस्था होती है। व्यवस्थान केवल संघर्ष को टालने वाली जितनी शान्ति एवं अनुरूपता की आवश्यकता होती है उतनी ही पायी जाती है।

आत्मसात
(Assimilation)

आत्मसात की परिभाषाएँ

आत्मसात की प्रक्रिया जटिल समाजों में अधिक पायी जाती है।

ऑगबर्न और निमकॉफ की परिभाषा :

"आत्मसात वह प्रक्रिया है जिससे किसी समय असमान व्यक्ति या समूह समान हो जाते हैं, अर्थात वे अपने स्वार्थों एवं दृष्टिकोण में समान हो जाते हैं।"[3]

पार्क और बर्गेस की परिभाषा :

"आत्मसात अन्तरप्रदेश और एकता की वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति और समूह दूसरे व्यक्तियों या समूहों की धारणाओं, भावनाओं और अभिवृत्तियों को अर्जित कर लेते हैं और उनके अनुभव और इतिहास के भागीदार बनकर उनके साथ एक सामान्य सांस्कृतिक जीवन में समाविष्ट हो जाते हैं।"[4]

---

1 "In one sense accommodation is the basis of all formal social organization." Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p. 93.

2 R. E. Park and E. W. Burgess, *Introduction to the Science of Sociology*, p. 510.

3 "Assimilation is the process whereby individuals or groups once dissimilar become similar, that is become identified in their interest and outlook." Ogburn and Nimkoff, *Handbook of Sociology*, p. 261.

4 R. E. Park and E. W. Burgess, *Introduction to the Science of Sociology*, p. 735.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बीसंज और बीसंज की परिभाषा :

"आत्मसात वह सामाजिक प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति और समूह सम भावनाओं से मूल्यों और उद्देश्यों को स्वीकार कर लेते हैं।"[1]

बोगार्डस की परिभाषा :

"आत्मसात वह प्रक्रिया है जिससे अनेक व्यक्तियों के दृष्टिकोण एकीकृत जाते हैं ओर इसके फलस्वरूप वे एक संयुक्त समूह में विकसित हो जाते हैं।"[2]

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि आत्मसात की प्रक्रिया विभिन्न दृष्टि कोणों एवं विचारों को रखने वाले व्यक्तियों और समूहों को समान दृष्टिकोण विचार रखने के लिए प्रेरित करती है। आत्मसात की प्रक्रिया एकीकरण करने प्रक्रिया है।

आत्मसात एक सांस्कृतिक प्रक्रिया भी है। विभिन्न संस्कृतियों के एक संस्कृ में संयुक्त हो जाने की प्रक्रिया को आत्मसात कहते हैं। पति और पत्नी प्रारम्भ व्यबस्थान करते है, परन्तु शनैः-शनैः उनके विचार एवं दृष्टिकोण समान हो जाते और आत्मसात कर लेते हैं। व्यक्ति एक समाज से दूसरे समाज में बसने के लि चला जाता है। वह उस समाज में सामंजस्य स्थापित कर लेता है। फिर जैसे-जैसे समय गुजरता जाता है, वह धीरे-धीरे आन्तरिक दृष्टि से भी उस समाज के दृष्टि एवं मूल्यों का आदर करने लगता है। इस अवस्था को व्यवस्थान कहते हैं। स की गति के साथ-साथ वह उसी समाज में घुलमिल जाता है और उसके दृष्टि एवं मूल्य उस समाज के ही समान हो जाते हैं। इस एकीकरण की प्रक्रिया आत्मसात कहते हैं। आत्मसात भी व्यवस्थान के समान प्रक्रिया और अवस्था दोनों

आत्मसात और व्यवस्थापन
(Assimilation and Accommodation)

आत्मसात वह प्रक्रिया होती है जिसके अन्तर्गत एक व्यक्ति या समूह कि आय संस्कृति के मूल्यों, विश्वासों, भावनाओं और आदतों को ग्रहण करता है। ज व्यवस्थान वह प्रक्रिया है जहां व्यक्ति अपनी ही संस्कृति या पर्यावरण में व्यक्तियों या समूहों से मानसिक एवं सामाजिक एकता स्थापित करता है, किसी सामाजिक परिस्थिति के अनुसार अपने योग्य बनाता है। आत्मसात प्रक्रिया तभी कार्य करती है जबकि विभिन्न संस्कृतियां सम्बन्ध में आती हैं। आत्म सात और व्यवस्थान की प्रक्रियाओं में एकीकरण की अवस्था भी विभिन्न अंशों पायी जाती है।

---

1 "Assimilation is the social process whereby individuals a groups come to share the same sentiments, values and goal Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p. 93,

2 "Assimilation is a process whereby attitudes of many pers are united and thus develop into a unified group." E. S. Bogard *Sociology*, p. 533.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्मसात के सहायक कारक

आत्मसात की प्रक्रिया के कुछ प्रमुख सहायक कारक निम्नांकित हैं :

(1) **सहिष्णुता** (Toleration)—सहिष्णुता के फलस्वरूप विभिन्न संस्कृतियों के व्यक्ति सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं और इन सामाजिक सम्बन्धों में संघर्ष उत्पन्न नहीं होने पाता। सहिष्णुता आत्मसात की प्रक्रिया में बड़ा सहयोग देती है।

(2) **समान आर्थिक अवसर** (Same Economic Opportunity)—यदि आर्थिक अवसर असमान होते हैं तो सांस्कृतिक दीवार खड़ी हो जाती है और आत्मसात की प्रक्रिया की गति कम हो जाती है। अतः यह समान आर्थिक अवसर भी समाजिक सम्बन्धों को प्रोत्साहित करते हैं।

(3) **सांस्कृतिक समानताएँ** (Cultural Similarities)—जब दो संस्कृतियों के लक्षणों में कुछ समानता होती है और व्यक्ति एक-दूसरे से घृणा नहीं करते तो फलस्वरूप आत्मसात शीघ्र हो जाता है।

(4) **मिश्रण** (Amalgamation)—मिश्रण भी आत्मसात की प्रक्रिया को बड़ी सहायता देता है; जैसे—वैवाहिक सम्बन्ध दो व्यक्तियों को एक-दूसरे के निकट लाता है और सामाजिक सम्बन्ध की पृष्ठभूमि निर्मित करता है।

(5) **अधिक सामाजिक सम्बन्ध** (More Social Contacts)—दोनों संस्कृतियों के सदस्यों में जितने अधिक सामाजिक सम्बन्ध होंगे उतनी ही आत्मसात की गति बढ़ जायेगी।

आत्मसात के विरोधी कारक

आत्मसात के कुछ प्रमुख विरोधी कारक निम्नांकित दिये गये हैं :

(1) **पृथकता** (Isolation)—पृथकता आत्मसात की प्रक्रिया की गति में बाधक होती है। इसके कारण अधिक सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना नहीं हो पाती।

(2) **वर्ण एवं शारीरिक लक्षणों की भिन्नता** (Difference of Colour and Physical Traits)—रंग और शारीरिक भिन्नता के कारण व्यक्ति एक-दूसरे को अपने से भिन्न समझते हैं। इस कारण भी आत्मसात होने में बाधाएँ उठ खड़ी होती हैं।

(3) **उच्चता की भावना** (Attitude of Superiority)—जब बहुमत दल में उच्चता की भावना विकसित हो जाती है तब अल्पमत को ठेस लगती है और वे उन्हें घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं। इस कारण भी उनमें सामाजिक सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाते।

(4) **संपीड़न** (Persecution)—जब बहुमत संस्कृति वाले अल्पमत वालों को पीड़ा एवं ठेस पहुँचाते हैं तो अल्पमत वाले बहुमत वालों से तो घृणा करते ही हैं, उनकी संस्कृति से भी घृणा करने लगते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक अन्तःक्रिया के यन्त्र
(Mechanisms of Social Interaction)

सामाजिक अन्तःक्रिया के यन्त्रों को अकोलकर ने सामाजिक प्रत्युत्तर (social responses) कहा है ।[1] अब हम उन पर विचार करेंगे ।

सुझाव, सहानुभूति, अनुकरण

इन पर हम पहले विचार कर चुके हैं ।[2]

इम्पेथी (Empathy)

'इम्पेथी' भी सहानुभूति का प्रकार है । सहानुभूति दूसरे के साथ होती है, अपना अस्तित्व मनुष्य स्वयं ही रखता है । इम्पेथी में व्यक्ति स्वयं दूसरे व्यक्ति का स्थान ले लेता है और स्वयं वही भाव अपने में ले आता है । एक प्रकार से एकता स्थापित हो जाती है । कई बार हमें ऐसा लगता है जब ताँगेवाला घोड़े पर चाबुक मारता है तो हम उसका दर्द अनुभव करते हैं । कुप्पुस्वामी ने लिखा है, व्यक्ति में अपने को स्वयं दूसरे की स्थिति में रखने की योग्यता और समझ है, वह अनुभव करता है । यह दूसरों के साथ अपना तादात्म्य करने की योग्यता है ।[3]

अकोलकर[4] ने अचेतन एवं प्राकृतिक अनुकरण को इम्पेथी कहा है, जैसे गाना सुनने के साथ-साथ हम भी सर हिलाने लगते हैं, या गुनगुनाने लगते हैं।

इम्पेथी में व्यक्ति कल्पना कर लेता है कि वह स्वयं दूसरे व्यक्ति की स्थिति में है और फिर उसके अनुसार ही अनुभव करता है । लुआस मर्फी (Lois Murphy) ने इस प्रकार के हजारों मामलों की जाँच एवं विश्लेषण किया है ।[5]

इम्पेथी ऐसे व्यक्तियों के साथ अधिक होती है जो समानता रखते हैं। इस सम्बन्ध में क्रच तथा क्रचफील्ड ने उचित ही लिखा है, "अनुभवकर्ता एवं अनुभूत व्यक्ति या वस्तु में अत्यधिक समानता तब होती है, जबकि इम्पेथी की अधिकता होगी तथा समझ एवं तादात्म्य सम्भव होंगे ।[6]

तादात्म्य (Identification)

तादात्म्य का अर्थ है दूसरे व्यक्ति या वस्तु से एकरूपता अनुभव करना। अकोलकर ने लिखा है, "तादात्म्य दूसरी वस्तु के साथ उद्वेगिक बन्धन है।"[7]

---

1 V. V. Akolkar, *Social Psychology*, Ch. VI.

2 देखिए तोमर, सामाजिक मनोविज्ञान, अध्याय 9, 12 ।

3 B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 9...

4 V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 96.

5 Murphy and Newcomb, *Experimental Social Psychology*.

6 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 9.

7 "Identification is an emotional tie with another object." V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 103.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुपुस्वामी ने लिखा है, "तादात्मीकरण में व्यक्ति इस प्रकार प्रतिक्रिया करता है जैसे; वह स्वयं ही दूसरे का भाग हो।"[1]

तादात्म्य में व्यक्ति अपने में और जिसके साथ तादात्म्य करता है, कोई भी अन्तर नहीं समझता है। उसके गुण अपने गुण और उसके दोष अपने दोष समझता है। अकोलकर ने लिखा है, "अपना तादात्म्य दूसरे व्यक्ति के साथ करना अपने स्वयं के गुणों, कार्यों, प्राप्तियों का हस्तान्तरण है और किसी एक के गुणों को स्वयं में ही महसूस करना है। इस प्रकार एक अहम् की सीमाओं का विस्तार होता है।"[2]

बच्चे अपने पालतू जानवरों के साथ तादात्म्य करते हैं। कई बार माता-पिता अपने बच्चों के साथ तादात्म्य करते हैं। यदि किसी का लड़का आई.ए.एस हो जाता है तो वह पिता अपने को ही आई.ए.एस. समझने लगता है। बच्चे अपने माता-पिता पर गर्व करते हैं और कहते हैं कि उन्होंने यह किया, वह किया। वे समझते हैं जैसे वह सब स्वयं उन्होंने ही किया हो।

सामाजिक जीवन में इसका अत्यधिक महत्त्व है। इसके कारण 'हम की भावना' विकसित होती है और समाज में एकता बढ़ती है। समाज में यदि तादात्म्य बढ़ जाय और लोग समाज में ऐसा करने लगें तो समाज बड़ा शक्तिशाली हो जाय।

विषयकीकरण (Objectification)

विषयकीकरण एक प्रकार से तादात्म्य ही है। इसमें व्यक्ति अपनी प्रकृति को दूसरे में ही देखकर प्रसन्न होता है। अपने को दूसरे में देखने की प्रक्रिया को विषयकीकरण कहते हैं। अकोलकर ने लिखा है, "इसका तात्पर्य है एक की प्रवृत्तियों का अन्य व्यक्तियों के द्वारा प्रदर्शन एवं गवाही को व्यक्त करने से सन्तुष्टि प्राप्त करना।"[3]

थाउलस ने भी लिखा है, "यह एक परिवर्तन है, जब एक व्यक्ति अपनी प्रवृत्तियों की सन्तुष्टि क्रियाओं क देखने से करता है, जो साधारणतः इसमें हिस्सा लेने से उसका पथ-प्रदर्शन करती है।"[4]

एक व्यक्ति लँगड़ा है पर उसकी प्रकृति नृत्य को पसन्द करती है। वह नाचना चाहकर भी नहीं नाच सकता। वह दूसरों को नाचता देखकर ही सन्तुष्ट होता है और प्रसन्न होता है। एक सुशिक्षित व्यक्ति लड़ाई नहीं कर सकता, वह कुश्ती ही देखकर प्रसन्न होता है।

विषयकीकरण कई दृष्टियों से समाज के हित में है। इस प्रकार यह आपत्तिजनक कार्यों को दूसरी दिशा देता है। साथ ही साथ यह लोगों को ऐसी इच्छाओं की

---

1 "In identification the individual reacts to other persons as if they were a part of himself." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 97.
2 V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 103.
3 *Ibid*, p. 104.
4 R. S. Thouless, *General and Social Psychology*, p. 149.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी पूर्ति करता है जिनके विषय में लोग निराश हो जाते हैं और स्वयं पूरा नहीं कर सकते।

प्रक्षेप (Projection)

प्रक्षेप की परिभाषा करते हुए अकोलकर ने लिखा है, "इसका अर्थ है किसी वस्तु या व्यक्ति को पर्दे के रूप में लेना, इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानसिक अवस्था को किसी के ऊपर डालना है।"[1]

प्रक्षेप में व्यक्ति अपने गुण या दोष दूसरों पर मढ़ देता है। उसे अपनी कमजोरियाँ न दिखकर दूसरों की दिखायी पड़ती हैं। कुप्पुस्वामी ने लिखा है, "सामाजिक प्रक्षेप में हम अपनी इच्छाएँ एवं लालसाएँ दूसरे व्यक्तियों में प्रक्षेपित कर देते हैं।"[2] अकोलकर ने भी लिखा है, "प्रक्षेप में एक अचेतना से एक व्यक्ति अपने स्वयं के गुणों, लालसाओं, अभिवृत्तियों, एवं दोषों या कमियों को दूसरे से सम्बन्धित करता है।"[3]

प्रायः प्रक्षेप का प्रयोग इन अर्थों में अधिक होता है कि हम अपनी कमजोरियों को दूसरों में देखते हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "प्रक्षेप में व्यक्ति की स्थिति का प्रत्यक्षीकरण इतना परिवर्तित हो जाता है कि वह अपनी असफलताओं और निराशाओं को दूसरे क्षेत्र के भागों से दोषारोपित करता है, और वह दोष का निराकरण करता है।"[4]

प्रक्षेप अपनी भावनाओं को दूसरों में देखने की प्रक्रिया है। जो स्वयं बुरा होता है उसे समस्त संसार बुरा दिखायी पड़ता है। जो स्वयं दुखी होता है, वह सबको दुखी देखता है। कम्युनिस्ट हमेशा सोचते हैं कि अब क्रान्ति होने वाली है। वे कहीं भी कुछ हुआ, और उन्हें क्रान्ति का चिन्ह ही दिखायी पड़ता है।

प्रक्षेप प्रायः हताश होने के बाद होता है। यह कुण्ठा (frustration) को एक नयी दिशा देकर समाप्त करता है। जो लोग आन्तरिक संघर्ष में फँसे रहते हैं उनमें यह प्रायः होता है। प्रक्षेप एक प्रकार से अन्तर्दृष्टि की कमी के कारण होता है। हमें अपने दोषों को समझना चाहिए और उन्हें समाप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए।

---

1 "This means to use an object or a person as a screen, so to say, and to throw out or cast on it one's own mental states." Akolkar, *Social Psychology*, p. 105.

2 "In social porjection we project our own wishes and desires on other people." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 99.

3 "In projection one unconsciously attributes one's own qualities, wishes, attitudes, defects or deficiencies to others." V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 105.

4 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 58.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विस्थापन (Displacement)

विस्थापन का अर्थ अन्य वस्तु या व्यक्ति पर भाव प्रदर्शित करना है। मान लीजिए आप अपने मालिक पर क्रुद्ध हैं लेकिन उस पर आप क्रोध कर नहीं सकते, इसलिए वह गुस्सा आप चपरासी या अन्य व्यक्ति पर निकालते हैं। कहावत प्रसिद्ध है 'कुम्हार से पार बसाई नहीं, गधे के कान जा ऐंठे।' अकोलकर ने इस पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "एक उद्वेग जो किसी वस्तु या व्यक्ति से उत्पन्न होता है, यह उसको या उसमें निर्देशित होना चाहिए, परन्तु यह दूसरे वस्तु या व्यक्ति पर निर्देशित किया जाता है, क्योंकि यह प्राकृतिक वस्तुओं पर व्यक्त नहीं किया जा सकता, यही विस्थापित उद्वेग का वर्णन है।"[1]

आत्मपीड़ा तथा आत्महत्या भी विस्थापन के ही उदाहरण हैं। जब हम दूसरों का कुछ नहीं कर पाते, तो स्वयं अपने पर वह उद्वेग निकालते हैं। कई बार विस्थापन एक कुचक्र को जन्म देता है। एक अफसर अपने विभाग के बड़े बाबू पर नाराज होता है। बड़ा बाबू अफसर से तो कुछ कह नहीं सकता, वह अपने बाबू से नाराज होता है। बाबू अपने चपरासी पर नाराज होता है। चपरासी अपनी पत्नी पर होता है। चपरासी की पत्नी बच्चों पर गुस्सा उतारती है और बच्चे बेचारे असहाय शायद अपने गुड़िया-गुड्डों पर उतारते हों या बेजान अन्य वस्तुओं पर। विस्थापन भी कुण्ठा को समाप्त करने का एक साधन है।

पाकिस्तान के लोग अपना गुस्सा वहाँ के शासन से नहीं निकाल पाते, इसलिए वे काश्मीर का मामला लेकर भारत पर ही उतारते रहते हैं। प्रायः देखा गया है कि जब हिन्दुस्तान में कोई साम्प्रदायिक दंगा हो जाता है तो पाकिस्तान वाले अपना गुस्सा वहाँ के हिन्दुओं से निकालते हैं।

तीव्रीकरण (Facilitation)

तीव्रीकरण का शब्द मनोविज्ञान में आलपोर्ट की देन है। जब हम अन्य लोगों की उपस्थिति में काम करते हैं तो काम अधिक होता है, कार्य में कुछ तीव्रता आ जाती है, इसे सामाजिक तीव्रीकरण कहते हैं। अन्य लोगों के साथ हम अधिक खाना खा जाते हैं, अधिक कार्य होता है। जब अकेले होते हैं तो इतना कार्य नहीं होता। दूसरों की उपस्थिति से कुछ प्रोत्साहन-सा मिलता है।

अन्तर्निरोध (Inhibition)

जब दूसरों की उपस्थिति के कारण काम कम होता है, तो इस प्रक्रिया को अन्तर्निरोध कहते हैं।

प्रश्न

1. निम्न पर टिप्पणी लिखिए :

(अ) तीव्रीकरण और अन्तर्निरोध, (ब) विस्थापन, (स) प्रक्षेप, (द) पृथकीकरण, (य) तादात्म्य, (र) हँसी, (ल) समूह समाज, (ब) संकेत।

---

1. V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 106.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Write short notes on : (a) facilitation and inhibition, displacement, (c) projection, (d) objectification, (e) identification, (f) laughter*, (g) mass society*, (h) gestures.*)

2. निम्न पर टिप्पणी लिखिए :

(अ) प्रतिस्पर्धा, (ब) संघर्ष, (स) व्यवस्थापन, (द) आत्मसात।

(Write short notes on: (a) competition, (b) conflict, (c) accommodation, (d) assimilation).

(3) इम्पेथी क्या है ? दो उदाहरण दीजिए ?

(What is empathy ? Give two examples. Rajasthan, 1959.)

(4) सामाजिक अन्तःक्रिया का तीव्रीकरण करने वाले कारकों की ... कीजिए। विभिन्न प्रकार की अन्तःक्रियात्मक स्थितियाँ कौन-कौन सी हैं ?

(Enumerate the factors facilitating social interaction ... are the different types of interactional situation ? Rajasthan, 1960.)

(5) इस विचार की विवेचना कीजिए कि प्रतिस्पर्धा चाहे शिक्षा में ... व्यापार में, वह व्यक्ति के वास्तविक सामाजिक क्षेत्र के विकास ... पहुँचाती है ?

(Discuss the view that competition, whether in educ... commerce, hinders the growth of genuinely social side of man ... M. A. Sociology, 1956.)

Have come in examinations.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

18

भाषा
(Language)

यदि हम कल्पना करें कि भाषा के बिना मानव समाज कैसा होता तो हमें ...न्त पता लगेगा कि सम्भवतया मानव समाज का यह स्वरूप तो होता ही नहीं, साथ ...ी साथ अन्त:क्रिया के अभाव में मानव पशुओं के समान जीवन व्यतीत करता पाया ...ाता है। सभ्यता तथा संस्कृति तो होती ही नहीं। भाषा सामाजिक अन्त:क्रिया ...ा आधार है। अतः भाषा समाज का आधार है।

भाषा का महत्त्व
(Importance of Language)

भाषा का अत्यधिक महत्त्व है। भाषा के अभाव में मनुष्य पशु ही बना ...हता। भाषा के ही कारण मनुष्य सभ्यता का आधार बना पाया है। जूलियन ...क्सले ने लिखा है, "शाब्दिक विचार के विकास ने व्यक्ति के विचारों के समस्त ...ागे के संगठनों और प्राप्तियों के द्वार खोल दिये।"

मनुष्य का उद्‌विकास इस उच्च स्तर पर भाषा के ही कारण हुआ है। ...टुअर्ट चेज ने लिखा है, "यह प्रमाण स्पष्ट करता है कि वह भाषा है जो व्यक्ति को ...कृति में अपना एक विचित्र स्थान देती है।"[1]

आगे फिर चेज ने कहा है, "शब्द जो हमें मानव बनाते हैं, उनके मूल्य का ...त्यधिक महत्त्व है।"[2]

मानव संस्कृति भी भाषा पर आधारित है। 'भाषा के बिना संस्कृति नाम की ...ोई चीज ही सम्भव नहीं हो सकती थी। किम्बाल यंग ने लिखा है, "भाषा निश्चित ...प से मानवीय संस्कृति की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वस्तु है और बिना भाषा के संस्कृति ...ा अस्तित्व एवं कार्य नहीं हो सकता है।"[3]

Stuart Chase, *Power af Words*, p. 8.
"Words are what makes us human, their value is transcendent." *Ibid*, p. 288.
"Language is surely a *sine qua non* of human culture, and without language culture could not exist or operate." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 106.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानव अन्त:क्रिया और सामाजिक जीवन भाषा की देन हैं। शेरि शेरिफ ने लिखा है, "मानवीय अन्त:करण और सामाजिक जीवन जैसा कि हम हैं। यह संकेतों या शब्दों के प्रयोग पर निर्भर रहता है जो व्यक्ति के हित समझे जा सकते हैं।"[1]

भाषा मनुष्य के लिए आधारभूत है। भाषा के ही बल पर मनुष्य ने विजय प्राप्त कर सका है और संसार का स्वामी बन बैठा है। शेरिफ तथा लिखा है, "शब्दों के द्वारा व्यक्ति एक-दूसरे के साथ लघु रूप में सम्बन्धि सहस्रों पृथक कार्यों के लिए कुछ पद्यांशों को समाप्त कर देते हैं। भाषा के व्यक्ति योजनाएँ बनाते हैं, जो भविष्य में आगे दूरस्थ जगहों में ले जायी भाषा के प्रयोग से संचयी प्राप्ति, ज्ञान, रीतियों, और गत अन्धविश्वासों एक-दूसरे के समीप लाता है।"[2]

भाषा मनुष्य का सबसे महत्त्वपूर्ण यन्त्र है। इस यन्त्र के सहारे अपना विकास करता है। कुप्पुस्वामी ने लिखा है, "यह विश्वास के सा सकता है कि शब्द एक सर्वश्रेष्ठ यन्त्र का निर्माण करता है, जो व्यक्ति को अन्त:क्रिया के लिए विभाजित करता है तथा साथ ही व्यक्ति और समाज मी करता है।"[3]

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मनुष्य के लिए भाषा अत्यधिक है। भाषा के सहारे ही उसने एक-दूसरे को समझा और विचार की यदि विचार ही न होता तो मनुष्य अपनी संस्कृति एवं सभ्यता का निर्माण सका होता। मनुष्य आज भी पशु स्तर पर ही होता। यदि भाषा का हुआ होता। भाषा मनुष्य की समस्त सफलताओं का आधार है। इ जीवन की जननी भी कह सकते हैं।

शब्दों की शक्ति
(Power of Words)

भाषा शब्दों का पुंज है। भाषा की ही भाँति शब्द भी महत्त्वपूर्ण शब्द कई बार व्यक्तियों एवं समाजों के जीवन में क्रान्ति उत्पन्न कर देता एवं संसार में '(liberty, equality and fraternity)' इन तीन शब्दों ने दी। 'No taxation without representation' ने अमरीका का स्व दिया। 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' ने भारत से अंग्रेजों को भगा दिया। 'V for ने मित्र राष्ट्रों को द्वितीय महायुद्ध में विजयी बना दिया।

'thank you', 'please, 'sorry' इत्यादि शब्द हमारे दैनिक जी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। इनका प्रयोग समस्त जीवन की धारा को बदल दे

1 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p.
2 *Ibid*, p. 449.
3 B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कफलिन ने एक शब्द की शक्ति का उदाहरण दिया है।[1] उसने विवरण देकर ...ाया है कि केवल एक शब्द के गलत अर्थ लगाये जाने के कारण हिरोशिमा और ...ासाकी पर अणुबम गिराया गया। जुलाई 1945 में जापान का सम्राट युद्ध ...प्त करने को तैयार था। मन्त्रिमण्डल भी तैयार था और मित्र राष्ट्रों के पोसदम ...otsdam) चुनौती पर विचार कर रहा था। यह शब्द था—मोक्यूसात्सु ...okusatsu'; इसके अर्थ दो हैं—(1) to ignore, (2) to refrain from ...mment। एक प्रेस विज्ञप्ति तैयार की गयी और उसकी नीति थी 'Mokusatsu' ...रे अर्थ में)। पर अनुवाद के दोष के कारण छप गया 'The cabinet *ignores* ...e demand to surrender', यदि दूसरा अर्थ छपता तो युद्ध समाप्त हो जाता। ... ने उचित ही लिखा है, "एक जापानी शब्द मोक्यूसात्सु ने हमारा सम्पूर्ण जीवन ...र्वतित कर दिया होता।[2]

एक शब्द के पीछे लाखों लोगे मारे गये। चेज ने लिखा है, "एक शब्द की गलत ...ख्या से, दस हजार जापानियों एवं अमरीकियों के बच्चे बचाये जा सकते थे।"

...ा की परिभाषाएँ

चार्ल्स विनिक के अनुसार : "भाषा एक मध्यस्थ वांचिक प्रतीक की व्यवस्था है, ...भावनाओं, विचारों को संचारित रूप में व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त होती है और ...सामाजिक समूह के सदस्यों को या एक भाषी समुदाय को अन्तःकृत और सहयोग ...लिए प्रेरित करती है।"

जेकब्स तथा स्टर्न के अनुसार : "भाषा एक भाषी समुदाय के मौखिक व्यक्ती-...ण का एक जटिल माध्यम है।"[3]

लॉवी के अनुसार : "एक दी हुई भाषा में, इस प्रकार, एक ध्वनि की व्यवस्था ...ह केवल मात्र चिल्लाने से भिन्न है, इसके स्वतः उच्चारण में दर्द होता है, और ... भाषा सम्बन्धी उच्चारण ऐच्छिक है और साधारणतः जो अपने साथी के विचारों ...उद्वेगों के व्यक्त करने में सहायक होती है।"[4]

कुप्पुस्वामी के अनुसार : परम्परागत प्रतीकों के एक संचार के माध्यम के रूप ...षा को परिभाषित किया जा सकता है।"[5]

...ee the account by W. J. Coughlin in Harper's Magazine, March, ...953.

..."A japanese word, *mokusatsu*, may have changed all our lives." ...tuart Chase, *Power of Words*, p. 4.

...acobs and Stern, *General Anthropology*, p. 313.

...obert H. Lowie, *An Introduction to Cultural Anthropology* (1956), ... 342.

..."Language may be defined as a system of communication through ...onventional symbols." B. Kuppuswamy, *An Introduction to ...ocial Psychology*, p. 130.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाषा के कार्य

भाषा प्रतीकात्मक (symbolic) व्यवस्था का एक भाग है। भा... पर ही आधारित है। इस रूप में इनके तीन महत्त्वपूर्ण कार्य हैं:

(1) संचार की प्रक्रिया को प्रवाहित करना भाषा का प्रथम मह... है। एक व्यक्ति भाषा के माध्यम से अपने विचार दूसरे व्यक्ति या ... पहुँचाता है। उदाहरण के लिए, एक प्रोफेसर अपने विद्यार्थियों को कुछ ... प्रयत्न करता है। भाषा के ही द्वारा हम एक-दूसरे पर नियन्त्रण रखते हैं। माता-पिता बच्चों को किसी कार्य को करने से मना करते हैं।

भाषा के द्वारा ही हम विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। सामा... क्रिया की दृष्टि से भाषा का कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

(2) भावनाओं एवं उद्वेगों की अभिव्यक्ति इसका दूसरा कार्य है।

(3) विचार को व्यक्त करना एवं उसका निर्माण करना भाषा ... महत्त्वपूर्ण कार्य है। शब्द विचार की प्रक्रिया के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

चिह्न और प्रतीक
(Sign ane Symbol)

चिह्न की परिभाषा करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "चिह्न ए... संकेत है जा किसी प्रत्युत्तर को साधारणतः वाचिक या संकेत में व्यक्त ...

उदाहरण के लिए, एक कुत्ते को भोजन के पहले हमेशा घण्टी ... तो कुछ दिन के बाद घण्टी एक चिह्न बन जाती है।

प्रतीक स्वयं उत्तेजना होता है, यद्यपि यह किसी वस्तु का प्रति... है। चिह्न स्वयं उत्तेजना न होकर केवल एक लक्षण होता है। प्रतीक ... करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है,, "..........प्रतीक एक उत्तेजना ... मौखिक, चित्रित या भौतिक—जो किसी के स्थान पर होती है—... प्रतिनिधित्व, कुछ उद्देश्य, स्थिति या सम्बन्ध, तर्क द्वारा किन्हीं दो के ... समुदाय में होता है, प्रतीक वास्तव में किसी अन्य चीज का संक्षिप्त ...

मनुष्य का शारीरिक ढाँचा और भाषा
(Physical Structure of man and Language)

भाषा मनुष्य में ही क्यों पायी जाती है? मनुष्य की दैहिक ... ऐसी वस्तु है, जो अन्य पशुओं में नहीं है जिसके कारण यह अन्तर ... यह वस्तु है—सापेक्षित दृष्टि से अधिक विकसिक मस्तिष्क का बाहरी ... cortex)।

---

1 "The sign is the learned cue that sets off a response, ... form of a vocal or other gesture." K. Young, *A ... Social Psychology*, p 92.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जब कोई वस्तु प्रत्यक्ष होती है तो उसका प्रतीक सरलता से बनाया जा सकता। एक वनमानुष को उसके घेरे से बाहर निकालिए तो वह आवाज करता है। उसकी आवाज सुनकर अन्य वनमानुष भी आवाज करेंगे एवं उद्विग्न होंगे, पर उसके दूर चले जाने पर फिर सामान्य हो जायेंगे। इसका अर्थ यह हुआ कि उत्तेजना के समाप्त होने पर वे उसे भूल जाते हैं। इसे प्रत्यक्षीकरणीय प्रतीकता (perceptually symbolic) कहते हैं। दूसरा होता है प्रत्यक्षीय प्रतीकता (conceptually symbolic)। इसमें उत्तेजना के अभाव में भी प्रतीक वही भाव देता है। प्रत्यक्षीय प्रतीकता के ही कारण मनुष्य भाषा को पा सका। शेरिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "विचारात्मक प्रतीक स्तर का सम्पादन एक प्रमाणित भाषा व्यवस्था को सम्भव बनाती है। यह सम्पादन जो समस्त पशुओं में केवल मनुष्य में ही विचित्र रूप में पाया जाता है।"[1]

भाषा स्पष्टतः मानवीय है। मानवों में ही यह विकसित हुई है।

भाषा के तत्त्व
(Elements of Language)

भाषा के दो प्रमुख विवरणात्मक तत्त्व हैं—(1) ध्वनि कुल (phoneme) और (2) 'मारफीन' (morphene)।

ध्वनि कुल (Phoneme)—का सम्बन्ध ध्वनि से होता है कि ध्वनि किस प्रकार की होगी।

'मारफीन' (Morphene)—में शब्द के तत्त्व होते हैं। उदाहरण के लिए, 'going' शब्द में दो मारफीन (morphene) हैं—'go' तथा 'ing'; भाषा शास्त्री इनका अध्ययन करते हैं। इसे भाषा की बनावट (morhpology of language) भी कहते हैं।

पद विन्यास (Syntax)—शब्द के मिलकर अर्थ देने को पद विन्यास (Syntax) कहते हैं।

व्यक्ति में भाषा का विकास
(Rise of Language in the Individual)

व्यक्ति में भाषा का विकास शनैः-शनैः होता है। प्रायः विद्वानों ने इसको चार चरणों में बाँटा है—(1) भाषा के पूर्व (prelinguistic), (2) कू कू (babbling), (3) साधारण अनुकरण (simple imitation), (4) वास्तविक भाषा का विकास (the rise of true language)।

प्रारम्भ में बच्चा यों ही चिल्लाता है। उसका कोई अर्थ नहीं होता। वह मानव ध्वनि को भी नहीं पहचान पाता।

---

1. Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 467.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरी अवस्था तीन महीने के बाद शुरू होती है और नौ महीने तक है। इसमें बच्चा कुछ आवाजें करने लगता है।

तीसरी अवस्था में बच्चा अनुकरण करना सीख लेता है। वह दूसरों को सुनकर कुछ आवाज करता है।

चौथी अवस्था वास्तविक बोली की है। $1\frac{1}{2}$ वर्ष के बाद यह अवस्था होती है। वह 'माँ', 'दादा' इत्यादि शब्द कहने लगता है। धीरे-धीरे शब्दों की बढ़ती जाती है और कुछ वर्षों में वह भाषा बोलने लगता है। केशीरर ने "मनुष्य एक प्रतीकात्मक विश्व में रहता है।"[1]

भाषा, व्यक्ति और संस्कृति
(Language, Individual and Culture)

व्यक्ति अपनी शिशु अवस्था से ही भाषा सीखने लगता है। सर्व वह ध्वनिकुल (phoneme) सीखता है। धीरे-धीरे 'मारफीन' (morpheme) लगता है। जैसे-जैसे बड़ा होता जाता है वैसे ही वैसे अधिक शब्द सीख कुछ वर्ष में वह भाषा पर अधिकार प्राप्त कर लेता है। बोलचाल को भाषा जाती है। वह प्रत्यय (concepts) भी समझने लगता है।

भाषा व्यक्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। व्यक्ति के व्यक्तित्व का भाषा पर ही आधारित है। आगे चलकर हम देखेंगे कि भाषा व्यक्तित्व के में कितना महत्त्वपूर्ण भाग लेती है।

भाषा संस्कृति का एक अंग है, परन्तु इसके अभाव में संस्कृति के विकसित ही नहीं होते। प्रत्येक समुदाय की संस्कृति वहाँ की भाषा पर डालती है। जहाँ पर जिस प्रकार के शब्दों की अधिक आवश्यकता पड़ती जाते हैं।

भाषा संस्कृति के निर्माण में बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। संस्कृ भाषा की उत्पत्ति हो चुकी थी। परस्पर विनिमय के द्वारा ही किसी उत्थान सम्भव है। भाषा संस्कृति का केवल एक भाग है। प्रत्येक संस्कृ अपनी पृथक भाषा रखती है। प्रत्येक संस्कृति में कुछ ऐसे शब्द होते हैं अपने प्रयोग में लाता है। वास्तव में भाषा के सम्पूर्ण कार्यों का अवलो सम्भव नहीं, तथापि यह स्पष्ट है कि भाषा मानव व्यवहार में सन्निहित है ही कोई संस्कृति का ऐसा भाग हो जहाँ पर भाषा अपना कार्य न करती हो तिक व्यवस्था और परम्पराओं का भाषा पर अमिट प्रभाव पड़ता है। भाषा से ही सांस्कृतिक इतिहास पर प्रकाश पड़ता है कि संस्कृति के कि भाषा का क्या रूप रहा। अतः ये दोनों एक-दूसरे को प्रकाशित करते हैं।

---

1 "Man lives in a symbolic universe." Ernest Cassirer, *An Essay on Man*, p. 25.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरे के सहायक हैं। बेजलिन के अनुसार भाषा तथा संस्कृति में घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों को एक-दूसरे से पृथक करना और रखना असम्भव है।

भाषा कोई पैतृक सम्पत्ति नहीं है, किन्तु फिर भी कुछ लोगों का यह विचार है कि भाषा पिता से पुत्र को पैतृक सम्पत्ति की भाँति प्राप्त हो जाती है, किन्तु यह एक संभ्रम है। संस्कृति की भाँति भाषा भी सीखी जाती है। बच्चा अपने सामाजिक वातावरण में रहकर भाषा सीखता है। भाषा के सीखने के पश्चात ही वह समाज के वातावरण से परिचित हो जाता है। अतः भाषा समाजीकरण की प्रक्रिया की एक महत्त्वपूर्ण शक्ति है, सम्भवतः उन सब प्रक्रियाओं से जो महत्त्वपूर्ण हैं और समाज में विद्यमान हैं। यह केवल इसी तथ्य को स्पष्ट नहीं करता कि भाषा के अभाव में महत्त्वपूर्ण सामाजिक व्यवहार असम्भव है; किन्तु एक सामान्य भाषा उन लोगों का, जो वही भाषा बोलते हैं, एक सामाजिक संगठन का प्रतीक है। भाषा का व्यक्तियों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी विचारणीय है, जो अन्ततोगत्वा समान संस्कृति का निर्माण करती है। राष्ट्र में भी राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न करने के लिए भाषा की एकता आवश्यक है। कई स्थानों पर भाषा की एकता विभिन्न संस्कृतियों अथवा राजनैतिक संगठनों को एक सूत्र में बाँधने का भी कार्य करती है। किसी संस्कृति की भाषा में भी समान बोलियों (speeches) वाले अपने में एकसूत्रता का अनुभव करते हैं।

भाषा का अन्य कार्य संस्कृति को एक वंश से दूसरे वंश को हस्तान्तरित करना है। यह कोई पैतृक सम्पत्ति नहीं है। इसके माध्यम से पिता अपने विचारों एवं भावनाओं को अपने पुत्र तक पहुँचाता है, पुत्र उसे आगे बढ़ाता है। इस प्रकार संस्कृति का एक वंश से दूसरे वंश को हस्तान्तरण होता है। भाषा के अभाव के कारण न तो संस्कृति का विकास ही हो सकता है और न यह एक वंश से दूसरे वंश को हस्तान्तरित ही की जा सकती है। संस्कृति का प्राण भाषा है। अतः उसका भी प्रभाव संस्कृति पर पड़ता है और उसके कारण संस्कृति में विकास होता है। महान व्यक्ति अपने विचारों को समाज के सम्मुख व्यक्त करते हैं। गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास आदि ने भाषा द्वारा ही हिन्दू संस्कृति का एक अनूठा एवं सुन्दर चित्र उपस्थित किया है, हिन्दू आदर्शों को हमारे सामने खोलकर रखा है। संस्कृति की भाषा के दोनों ही अभ्यन्तर और बाह्यरूपों से सम्बन्ध है। भाषा का अभ्यन्तर रूप उसके व्याकरण से सम्बन्धित है। इसके अन्तर्गत वे सभी तत्त्व आते हैं जो बाहर से प्रभावित नहीं होते। प्रायः मानसिक स्तर में परिवर्तन होने से विचारों में परिवर्तन होता है, विचारों में परिवर्तन होने से अभिव्यंजना के ढंग में भी परिवर्तन होता है। इस प्रकार विचार भाषा के अभयन्तर रूप से सम्बन्धित हैं एवं उसे निर्धारित भी करते हैं। इसका परिणाम अर्थ परिवर्तन होता है। किसी भाषा के अभ्यन्तर रूप का स्तर उस समय की संस्कृति के स्तर पर प्रकाश डालता है। संस्कृति भाषा के बाह्य रूप से भी सम्बन्धित है। मानव संस्कृति के अन्तर्गत केवल एक ही पक्ष नहीं आता, वरन् अनेक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पक्ष आते हैं। ये पक्ष राजनैतिक, आर्थिक एवं धार्मिक इत्यादि होते हैं। में जिस पक्ष के अधिक शब्द पाये जाते हैं उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उस पक्ष में काफी विकास हो चुका है। उदाहरण के लिए, यदि किसी संस्कृति की में धार्मिक शब्द अधिक होते हैं तो इसका अर्थ यह है कि उस संस्कृति विशेष उन्नति पर है।

सेपिर का कथन है कि विश्व की संस्कृति का समस्त ज्ञान भाषा में नि किन्तु किसी संस्कृति का विश्व सम्बन्धी ज्ञान उस संस्कृति की भाषा के निर्मित होता है। शब्द और अर्थ भाषा के दो मुख्य तत्व होते हैं। समा घटनाओं एवं प्रक्रियाओं को किन शब्दों का रूप देता है तथा उन शब्दों से किस घटना से अभिप्राय है। दूसरे शब्दों में इस प्रकार कहा जा सकता है कि जिक घटना का अप्रत्यक्ष रूप शब्दों से सम्बन्धित है। जिस संस्कृति ने जितनी घटनाओं को समझा होगा उतनी ही उस संस्कृति में शब्दों की संख्या एवं उतना ही उस संस्कृति के सदस्यों का ज्ञान होगा। यह सम्भव है कि संस्कृति की भाषा का संसार के विषय में ज्ञान अपूर्ण हो और किसी दूसरी का पूर्ण हो। दोनों संस्कृतियों की धारणाओं में भी अन्तर हो सकता है। है कि भाषा ही सांस्कृतिक घटनाओं तथा ज्ञान को मानव के लिए सम बनाती है। भाषा सामाजिक वास्तविकता का निर्देशन करती है। भाषा एक मात्र ही नहीं है, वरन् यह हमारी सामाजिक समस्याओं एवं प्रक्रियाओं का भी करती है। यह अतिशयोक्ति न होगी कि व्यक्ति अर्थात् मनुष्य इस एकाकी नहीं है और न वह सामाजिक प्रक्रियाओं में ही अकेला रहता है। वह भाषा पर आश्रित रहता है जो समाज के लिए विचारों की अभिव्यक्ति है। यह एक भ्रम है अथवा असम्भव है कि व्यक्ति समाज में भाषा का उपयोग बिना अपने आपको व्यवस्थित कर सके। यह विचार कि भाषा कुछ विशिष्ट के हल का साधन है, कल्पनात्मक एवं असत्य है। सत्य तो यह है कि वास्तविक का ढाँचा किसी सीमा तक किसी समूह की बोलने की प्रवृत्तियों एवं आ आधारित होता है। कोई भी दो भाषाएँ इतनी समान एवं साम्य कदापि सकतीं कि हम उन्हें किसी समूह की सामाजिक वास्तविकता का प्रतिनिधि विभिन्न समाजों की विभिन्न भाषाएँ होती हैं व विभिन्न संस्कृति होती है। ही भाषा द्वारा किसी संस्कृति के निर्माण करने में किये जाते हैं।

प्रश्न

1. भाषा स्पष्टतः मानवीय है। समझाइए।
(Language is distinctly human. Explain.)
2. भाषा के महत्त्व का वर्णन कीजिए। समाजीकरण में उसका क्या
(Describe the importance of language. What is its socialization ?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

19

सामाजिक अभिवृत्तियाँ एवं अभिवृत्तियों का माप
(Social Attitudes and Attitude Measurement)

प्रत्यक मनुष्य का एक मानसिक दृष्टिकोण होता है। प्रत्येक वस्तु को वह अपने ही अनुरार देखता है। प्रत्येक वस्तु, व्यक्ति एवं परिस्थिति के प्रति व्यक्ति का पहले से ही एक विचार होता है और उसी के अनुसार वह अपना प्रत्यक्षीकरण करता है। यह प्रक्रिया प्रत्येक व्यक्ति के साथ होती है। वस्तुओं के प्रति इस पूर्वधारणा को अभिवृत्ति कहते हैं।

अभिवृत्ति का अर्थ
(Meaning of Attitude)

अभिवृत्ति का सामान्य अर्थ है किसी व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति की ओर एक पूर्वधारणा या मानसिक झुकाव। आल्पोर्ट ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "अभिवृत्ति एक मानसिक एवं स्नायविक नियुक्ति की तत्परता है, जो व्यक्ति के प्रत्युत्तर का निर्दिष्ट क्रियात्मक प्रयत्न उन सब वस्तुओं एवं स्थितियों के प्रति करती है जिनसे वह सम्बन्धित है।"[1] आल्पोर्ट ने अभिवृत्ति को एक मानसिक एवं स्नायविक दशा माना है, जो हमारे मस्तिष्क में तत्परता की स्थिति में रहती है और इनके अनुसार ही व्यक्ति वस्तुओं या स्थितियों के प्रति अपना व्यवहार निर्धारित करता है। अभिवृत्तियाँ व्यक्तित्व विकास के दौरान विकसित होती हैं और फिर स्थायी हो जाती हैं। बाद में अभिवृत्तियाँ व्यक्ति के प्रति उत्तरों को निर्देशित करती हैं और व्यक्ति उन्हीं निर्देशों के अनुसार व्यवहार करता है।

हम जो वस्तुएँ प्रत्यक्ष करते हैं उनको केवल वैसा ही नहीं देखते, अपितु पूर्व धारणाओं का चश्मा लगाकर देखते हैं। आवश्यकताओं एवं प्रत्यक्षीकरणों की इकाइयों से बड़ी व्यवस्थित मनोवैज्ञानिक इकाइयाँ हैं जिनके आधार पर हम व्यवहार करते हैं। ये मनोवैज्ञानिक इकाइयाँ ही अभिवृत्ति हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने अभिवृत्ति की इस इकाई के रूप में परिभाषा करते हुए लिखा है, "अभिवृत्ति की व्याख्या इस

---

1. "An attitude is a mental and neural set of readiness, exerting a directive dynamic influence upon the individual's response to all objects and situations with which it is related." Allport, *A Handbook of Social Psychology* (1935), p. 792.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार की जा सकती है—जो एक चिरस्थायी संप्रेरणाओं का संगठन, ... प्रत्यक्षीकरणीय और व्यक्ति के संसार के बारे में इसके कुछ तथ्य ज्ञानात्मक ... के हैं।"[1] क्रच तथा क्रचफील्ड के अनुसार अभिवृत्ति व्यक्ति के संसार के कुछ ... सम्बन्ध में अभिप्रेरणात्मक, उद्वेगिक प्रत्यक्षीकरणीय और ज्ञानात्मक प्रक्रियाओं ... स्थायी संगठन है। इसका यह अभिप्राय है कि अभिवृत्ति व्यक्ति की प्रेरणाओं, ... प्रत्यक्षीकरण एवं ज्ञानात्मक प्रक्रियाओं का संगठन है। व्यक्ति उन वस्तुओं ... किस प्रकार प्रेरित होता है, किस प्रकार के उद्वेग या भाव व्यक्त करता है, ... प्रकार देखता है, किस प्रकार अनुभव करता है, किस प्रकार समझता है, यह ... पर आधारित हैं।

किम्बाल यंग ने अभिवृत्ति को एक आन्तरिक मानसिक संगठन का ... है। उन्होंने लिखा है, "अभिवृत्ति आवश्यक रूप से एक पूर्व ज्ञान रूपी प्रवृ... स्वरूप है, तथा क्रिया का प्रारम्भ है जो आवश्यक नहीं कि पूर्ण हो। यह ... की तत्परता एवं उत्तेजनात्मक स्थिति के प्रकार को बताता है जो या तो ... या सामान्य है।"[2]

कैम्पबेल ने इसकी परिभाषा इन शब्दों में की है, "सामाजिक अभिवृ... प्रमाण से) सामाजिक वस्तुओं के प्रत्युत्तर में होती है।"[3]

शेरिफ तथा शेरिफ ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "अभिवृ... तक एक लक्षण या समरूप के व्यवहार के प्रकार को किसी उचित उत्तेजना... या घटनाओं के प्रति निश्चित करती है।"[4]

केंट्रिल की परिभाषा पर्याप्त रूप से मान्य है। उन्होंने लिखा है, "... एक अधिक या कम मानसिक संगठन की स्थायी रूप से तत्परता की स्थिति ... एक व्यक्ति को किसी वस्तु के लक्षित मार्ग या किसी स्थिति, जिससे यह ... है, से प्रतिक्रिया करने के अनुकूल बनाती है।"

अभिवृत्ति एक मानसिक झुकाव (tendency) है। मानसिक झुकाव ... वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति की ओर होता है। इस झुकाव में स्नायविक ... (neural state of readiness) पायी जाती है। इसी के फलस्वरूप इसमें ...

---

1 "An attitude can be defined as an enduring organization of ...vational, emotional, perceptual and cognitive processes ... respect to some aspect of the individual's world." D. Kre... R. S. Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psy...* (1948), p. 152.

2 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 77.

3 "A social attitude is (or is evidenced by) consistency in re... to social objects." Donald T. Campbell, *The indirect asse... of social attitudes' in Psychological Bullatin* (1950), 47, p. ...

4 M. Sherif and C. W. Sherif, *An Outline of Social Psy...* p. 494,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तत्परता (mental readiness) पायी जाती है। इनके कारण इसमें कार्य करने की प्रकृति भी पायी जाती है। व्यक्ति का व्यवहार इन तत्त्वों पर आधारित है। इसलिए मानव व्यवहार का विश्लेषण अभिवृत्ति की इकाई के आधार पर करते हैं। सामाजिक मनोविज्ञान में अभिवृत्ति एक केन्द्रीय तथ्य बन गया है। अभिवृत्ति एक अर्जित (aquired) स्नायविक एवं मानसिक तत्परता है जो हमारी प्रेरणाओं, संवेगों तथा प्रत्यक्षीकरणों को विशेष रूप देती है।

इसे हम अनेक उदाहरणों के द्वारा समझ सकते हैं। 'क' 'ख' को देखते ही गदगद हो जाता है एवं 'ग' को देखकर क्रुद्ध हो जाता है। ऐसा क्यों होता है? इसका स्पष्ट कारण यह है कि 'क' को एक पूर्व मानसिक झुकाव है और उसके ही अनुसार वह प्रत्यक्षीकरण करता है। कोई व्यक्ति हनुमानजी की मूर्ति देखकर सिर झुकाता है और उसे आदर देता है। कोई उधर कोई विशेष ध्यान नहीं देता। इसका कारण भी अपनी भिन्न-भिन्न अभिवृत्ति (attitude) है। एक मुसलमान को देखकर कुछ हिन्दू उन्हें हीन या नापाक समझकर उनसे दूर हटने का प्रयत्न करते हैं, यह उनकी अपनी अभिवृत्ति है। कुछ लोग स्त्रियों को देखकर जरा सीधे होकर चलने लगते हैं, यह उनकी अभिवृत्ति है। इस प्रकार वस्तुओं के प्रति हमारा एक मानसिक झुकाव होता है और उसी के अनुसार हम व्यवहार करते हैं। शेरिफ तथा शेरिफ ने उचित ही लिखा है, "अभिवृत्ति लक्षित स्थिति में एक जटिल उत्पत्ति को किसी व्यक्ति द्वारा धारण की गयी सांकेतिक स्थिति है।"[1]

अभिवृत्ति का अर्थ और भी अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए हमें अभिवृत्ति तथा विकास (belief), स्थायीभाव (sentiment), लक्षण (trait), संप्रेरणा (motivation), निर्णय (judgment) में अन्तर समझना आवश्यक है।

अभिवृत्ति और विश्वास
(Attitude and Belief)

विश्वास की परिभाषा करते हुए क्रच और क्रचफील्ड ने लिखा है, "विश्वास व्यक्ति के कुछ पहलुओं के बारे में, प्रत्यक्षीकरण और निश्चित ज्ञान का चिरस्थायी संगठन है।"[2]

विश्वास स्वयं में एक संगठन है। वह संगठनों का संगठन है। हम अनेक वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण करते हैं। फिर बार-बार प्रत्यक्षीकरण करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि हमारे मन में उस वस्तु के प्रति प्रत्यक्षीकरण का संगठन निर्मित हो जाता है। यह ढाँचे सहित (structured) एवं स्पष्ट होता है। यह

---

1 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 551.

2 "A belief is an enduring organisation of perception and cognitions about some aspect of individual's world." D. Krech and R. S. Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology* (1948), p. 157.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funded by MoE-Grant-2

उसका विश्वास है। विश्वास में अनेक सम्बन्धित प्रत्यक्षीकरण संगठित होते किसी व्यक्ति का विश्वास है कि पृथ्वी गोल है। इस विश्वास में अनेक प्रत्यक्षीकरण संगठित हैं और उनके परिणामस्वरूप यह विश्वास बना है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने इसको स्पष्ट करते हुए लिखा है, "विश्वास किसी वस्तु के नमूने का अर्थ है व्यक्ति के ज्ञानात्मक विषयों की पूर्णता है।"[1]

विश्वास एक ऐसी आस्था है जो सत्य न होते हुए भी व्यक्ति स्वीकार है। उसके लिए तर्क की आवश्यकता नहीं होती। हम कई बार लोगों को कह सुनते हैं "भगवान हो या न हो, हम तो विश्वास करते हैं।"

विश्वास एक विस्तृत अर्थों में प्रयोग किया जाने वाला शब्द है। अन्तर्गत ज्ञान, मत, आस्था इत्यादि सब आ जाते हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने वि को एक सामान्य शब्द (generic term) कहा है।

अभिवृत्ति और विश्वास में अनेक समानताएँ एवं भेद हैं, जिनमें निम्न हैं :

(1) विश्वास अभिवृत्तियों के ज्ञानात्मक (cognitive) पक्ष कहे जा हैं। प्रत्येक अभिवृत्ति में एक विश्वास होता है, पर प्रत्येक विश्वास अभिवृत्ति से न्धित नहीं होता है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "सब अभिवृत्तियाँ कि के प्रति अभिवृत्ति के सम्बन्धित विश्वास हैं, परन्तु साधारणतः हम कह नहीं समस्त विश्वास अभिवृत्ति के ढाँचे के भाग हैं।"

(2) विश्वास का क्षेत्र अभिवृत्तियों के क्षेत्र से बड़ा है।

(3) अभिवृत्तियाँ सत्य से अधिक सम्बन्धित होती हैं, क्योंकि वे पर आधारित होती हैं, जबकि विश्वास कल्पना पर अधिक निर्भर करते हैं।

(4) अभिवृत्तियाँ अधिक निश्चित एवं स्पष्ट होती हैं, जबकि विश्वास स्पष्ट नहीं होते हैं।

(5) अभिवृत्तियों और विश्वास दोनों के उद्देश्य होते हैं, परन्तु उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए गतिशील नहीं होते, जबकि अभिवृत्तियाँ प्राप्ति के लिए गतिशील होती हैं।

(6) अभिवृत्तियाँ विश्वासों से तुलनात्मक दृष्टि में कम स्थायी होते हैं। अभिवृत्तियों में विश्वासों की तुलना में अधिक शीघ्रता से परिवर्तन हो विश्वास में परिवर्तन आना बड़ा कठिन होता है।

(7) विश्वास अधिकतर अन्धविश्वासों को जन्म देते हैं, जबकि अ सापेक्ष दृष्टि से विषयक होती हैं।

(8) विश्वास तटस्थ होते हैं, इसलिए उनमें प्रेरक शक्ति नहीं होती अभिवृत्ति में एक प्रेरक शक्ति होती है जो उसे एक विशिष्ट प्रकार का

---

1 "A belief is a pattern of meanings of a thing; it is the to the individual's cognition about the thing." *Ibid*, pp. 150-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करने के लिए प्रेरित करती है। अभिवृत्ति गहन भावनाओं से इतनी अधिक परिपूर्ण रहती है कि उत्तेजक वस्तु के प्रत्यक्षीकरण पर वह केवल व्यवहार के लिए ही प्रेरित नहीं करती अपितु उद्वेगों को भी प्रभावित करती है। विश्वास तो ज्ञानात्मक पक्ष है, इसलिए इसमें प्रेरक शक्ति नहीं होती। विश्वास एक तटस्थ प्रक्रिया है इसके कारण प्रत्यक्ष रूप से वह व्यवहार को प्रेरित नहीं करती। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "यह इस कारण कि अभिवृत्तियों को पक्ष या विपक्ष में नामांकित किया जाता है, जबकि विश्वास तटस्थ रूप में माना जाता है, यह जब हम ब्रिटिश अभिवृत्ति के पक्ष या रूसी अभिवृत्ति के विपक्ष का वर्णन करते हैं; परन्तु हम किसी पक्ष या विपक्ष के बारे में विश्व की क्षेत्रीय प्रकृति के सम्बन्ध में व्यक्ति के विश्वासों का वर्णन नहीं करते।"[1]

अभिवृत्ति और स्थायीभाव
(Attitude and Sentiment)

स्थायीभाव शब्द पहले प्रायः कुछ देशों में अभिवृत्ति के स्थान पर प्रयोग होता था। अभिवृत्ति शब्द का प्रयोग अमरीका से प्रारम्भ हुआ। थामस तथा जैनिकी ने अभिवृत्ति शब्द का प्रयोग इन्हीं अर्थों में किया। शैंड (Shand) तथा मैकडूगल ने स्थायीभाव को ही प्रधानता दी है।

स्थायीभाव अभिवृत्ति का भावात्मक पक्ष कहा जा सकता है। स्थायीभाव की सीमा कम है और अभिवृत्ति की अधिक। थाउलस ने लिखा है, "इस प्रकार हम 'अभिवृत्ति' को विस्तृत वर्ग पद में प्रस्तुत कर सकते हैं, जिसमें निम्न श्रेणी का 'स्थायीभाव' सम्मिलित है।"[2]

अभिवृत्ति और लक्षण
(Attitude and Trait)

लक्षण एक स्थायी एवं मौलिक विशेषता है। लक्षण को हम एक सामान्य अभिवृत्ति के समान कह सकते हैं; परन्तु इसे अभिवृत्ति के समकक्ष रखना उचित नहीं है। लक्षण किसी विशेष वस्तु से सम्बन्धित नहीं होता, जबकि अभिवृत्ति वस्तु से सम्बन्धित होती है। इन दोनों के बीच भेद करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "कुछ इसे अभिवृत्ति के साथ भ्रमित करते हैं, यह पद व्यक्तित्व संगठन के उच्च सामान्यीकृत तथ्यों के लिए प्रयोग होता है, जो सापेक्षतः किसी भी विशेष वस्तु से पृथक है। इस अर्थ में, फिर भी लक्षण सामान्य अभिवृत्ति के सदृश्य, परन्तु लक्षण में अभिवृत्ति का निर्देशन नहीं होता, बाद की प्रवृत्तियाँ किसी के पक्ष या विपक्ष, पक्षपात या पक्षपातहीन, पसन्द या नापसन्द की प्रतिक्रियाएँ हैं। लक्षणों में इस प्रकार के गुण नहीं पाये जाते।"[3]

1 *Ibid*, p. 153.
2 R. H. Thouless, *General and Social Psychology*, p. 103.
3 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 79.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभिवृत्ति और संप्रेरणा
(Attitude and Motive)

अभिवृत्ति और संप्रेरणा में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अभिवृत्ति अधिक स्था... संप्रेरणाएँ उत्पन्न होती हैं और क्रिया समाप्त होने पर खत्म हो जाती हैं। ... और संप्रेरणा दोनों ही आन्तरिक संगठन से सम्बन्धित हैं। दोनों ही कार्य ... प्रेरित करते हैं। अभिवृत्ति और संप्रेरणा दोनों में ही कोई न कोई लक्ष्य अवश्य ... हैं और उस लक्ष्य को प्राप्त करना पड़ता है। संवेगात्मक एवं प्रत्यक्षात्मक मा... में ही पाया जाता है।

किसी व्यक्ति में अपने गुरु के प्रति श्रद्धा की अभिवृत्ति पायी जाती है ... कारण एक संप्रेरणा को जन्म मिलता है और व्यक्ति अपने गुरु के चरण ... एक अभिवृत्ति में कई संप्रेरणाएँ पायी जाती हैं।

हम भोजन के पदार्थों के प्रति एक अभिवृत्ति रखते हैं। पूर्वी उत्तर ... लोग अरहर की दाल खाना चाहते हैं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के लोग उड़द ... खाना चाहते हैं। भूख लगने पर भूख की संप्रेरणा होती है और हम कुछ खाना ... हैं। यह 'कुछ' अभिवृत्ति पर आधारित है। इस प्रकार संप्रेरणा कार्य के लिए ... करती है; परन्तु अभिवृत्ति कार्य का चयन (selection) करती है। कोई ... बनना चाहता है, तो कोई फौजी अफसर।

अभिवृत्ति चेष्टात्मक होने के साथ-साथ ज्ञानात्मक एवं भावात्मक भी ... है। संप्रेरणा चेष्टात्मक अधिक होती है। संप्रेरणा कार्य समाप्त होने प... जाती है या हम कह सकते हैं कि उसकी प्रकृति अस्थायी है। अभिवृत्ति ... रहती है, इसलिए उसकी प्रकृति स्थायी होती है।

अभिवृत्ति और निर्णय
(Attitude and Judgement)

निर्णय व्यक्ति की अभिवृत्ति को व्यक्त करता है। इसी के सहारे ... को मापने एवं समझने का प्रयत्न किया जाता है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने ... लिखा है, "हम व्यक्ति के विश्वासों एवं अभिवृत्तियों से अत्यधिक प्रोत्साहन ... सकते हैं, उसको क्षणिक निर्णय के लिए माँग की गयी विभिन्न स्थितियों में ... हैं। जब ऐसी स्थितियों की रचना की जा सकती है, वे व्यक्ति के विश्वास... अभिवृत्तियों के अध्ययन को लघु विधियाँ कहलाती है।"[1]

अभिवृत्ति तथा अन्य आन्तरिक कारक
(Attitudes and other Internal Factors)

हमने अभी तक यह प्रयत्न किया कि अभिवृत्ति एवं अन्य उससे भि...

---

1 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psy...* p. 157.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आन्तरिक प्रवृत्तियों के बीच भेद स्पष्ट हो जाय। अब हम अभिवृत्तियों की विशेषताओं का वर्णन करके अभिवृत्ति के अर्थ को और भी अधिक स्पष्ट करने का प्रयत्न करेंगे। सभी आन्तरिक कारक अभिवृत्ति नहीं होते। शेरिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "इस प्रकार की अभिवृत्तियाँ आन्तरिक तथ्य हैं, परन्तु समस्त आन्तरिक तथ्य अभिवृत्तियाँ नहीं हैं।"[1]

अभिवृत्तियों की विशेषताएं
(Characteristics of Attitudes)

अभिवृत्ति के निम्न लक्षण महत्त्वपूर्ण हैं :

(1) **अभिवृत्तियाँ जन्मजात नहीं होतीं (Attitudes are not Innate)**—अभिवृत्तियाँ जन्मजात नहीं होतीं। अभिवृत्तियाँ किसी वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति के सम्बन्ध में सीखी जाती हैं। भोजन की इच्छा या भूख जैविक आवश्यकता या प्रेरणा है। परन्तु भोजन से अरहर की दाल होनी चाहिए या उड़द की, यह अर्जित या सीखी हुई है, यह अभिवृत्ति है। कुछ लोगों की भोजन के विषय में ऐसी अभिवृत्ति विकसित हो जाती है कि उसी के अनुसार यदि भोजन न हो तो उनको स्वाद ही नहीं आता। यह पसन्द समाज से सीखी जाती है।

(2) **अभिवृत्तियाँ अधिक या न्यून मात्रा में स्थायी होती हैं (Attitudes are More of Less Lasting)**—व्यक्ति की अभिवृत्तियाँ समाज में सीखी जाती हैं और परिवर्तित भी हो सकती हैं; परन्तु जब तक वे रहती हैं तब तक स्थायी रहती हैं। प्राणी की शारीरिक अवस्था का भी वे कोई ध्यान नहीं रखतीं।

(3) **अभिवृत्तियाँ सदैव कर्ता-वस्तु सम्बन्ध रखती हैं (Attitudes Always Imply a Subject-object Relationship)**—अभिवृत्तियाँ सदैव किसी सन्दर्भ में होती हैं। उनके लिए कोई न कोई वस्तु, परिस्थिति या व्यक्ति होना चाहिए, जिसके विषय में वे होंगी।

(4) **किसी अभिवृत्ति के सन्दर्भकों की संख्या कम या अधिक हो सकती है (The Referant of an Attitude may Encompass a Small or Large Number of Items)**—किसी अभिवृत्ति की सन्दर्भ वस्तुएँ कम या अधिक हो सकती हैं। मान लीजिए एक व्यक्ति जापानियों को क्रूर मानता है, तो वह प्रत्येक जापानी को क्रूर मानेगा। इस प्रकार एक अभिवृत्ति की सन्दर्भ वस्तुओं की संख्या बहुत अधिक हो गयी। इस प्रकार सामान्यीकरण की प्रक्रिया इसमें काफी होती है।

(5) **अभिवृत्तियाँ प्रेरणा-भावात्मक विशेषताएँ रखती हैं (Attitudes have Motivational-affective Properties)**—एक अभिवृत्ति प्रेरणात्मक-भावात्मक

1 "As such, an attitude is an internal factor. But all internal factors are not attitudes." Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 494.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशेषताएं रखती हैं। उदाहरण के लिए, ईश्वर की ओर अभिवृत्ति। इसमें ... विशेषताएं पायी जाती हैं।

(6) **अभिवृत्तियाँ व्यवहार को दिशा प्रदान करती हैं (Attitudes ... Direction to Behaviour)**—अभिवृत्तियाँ व्यक्तियों के व्यवहार को दिशा ... करती हैं। व्यक्ति अभिवृत्तियों के अनुसार ही व्यवहार करते हैं। यदि हमें ... व्यक्ति की अभिवृत्तियों का ज्ञान है, तो हम उसके व्यवहार की भविष्यवाणी ... सकते हैं कि इस वस्तु या परिस्थिति के प्रति वह क्या व्यवहार करेगा क्योंकि ... अभिवृत्ति के निर्देशन में ही व्यवहार करता है।

अभिवृत्तियाँ और सामाजिक अभिवृत्तियाँ
(Attitudes and Social Attitudes)

अभिवृत्तियाँ (सामाजिक या असामाजिक) सभी अर्जित की जाती हैं ... जन्मजात नहीं होतीं

अभिवृत्ति और सामाजिक अभिवृत्ति में अन्तर स्पष्ट करते हुए शेरिफ ... शेरिफ ने लिखा है, "वह लक्षण जो अन्य अभिवृत्तियों से सामाजिक अभिवृत्ति ... विभेद करता है, सामाजिक अभिवृत्ति है, जो सामाजिक उत्तेजनात्मक स्थिति के ... में निर्मित की जाती है और जो एक समूह के सदस्यों द्वारा या एक दिये हुए ... द्वारा बाँटी जाती है। सामाजिक उत्तेजनात्मक स्थितियाँ अन्य व्यक्ति, समूह ... सांस्कृतिक उत्पत्ति (भौतिक या अभौतिक) हैं।"[1]

अपने राष्ट्रीय ध्वज का मान करना एक सामाजिक अभिवृत्ति है। ... सामाजिक अभिवृत्तियों में एक महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं।

अभिवृत्तियों के प्रकार (Types of Attitudes)

आल्पोर्ट ने अभिवृत्तियों को दो भागों में बाँटा है: एक स्वीकारात्मक (positive) और दूसरा नकारात्मक (nagative)। मुसलमान अच्छे होते हैं ... स्वीकारात्मक अभिवृत्ति है। यहूदी खराब होते हैं—यह नकारात्मक अभिवृत्ति ...

ब्रिट (Britt) ने भी इन्हें दो प्रकार का बताया है: विशिष्ट (sp... और सामान्य (general)। हम अपने गुरु का आदर करते हैं—यह विशिष्ट ... वृत्ति है। ब्राह्मण अच्छे होते हैं—यह सामान्य अभिवृत्ति है।

अभिवृत्तियों का व्यावहारिक महत्त्व

अभिवृत्तियों का कई दृष्टियों से अत्यधिक महत्त्व है। इसके व्यावहारिक ... पर प्रकाश डालते हुए क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "विश्वास एवं अभिवृत्तियाँ ... व्यक्ति में अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य करती हैं। वे व्यक्तित्व को निरन्तरता देती ... उसके प्रतिदिन के प्रत्यक्षीकरण और कार्यों को अर्थ देती हैं, वे उसके विभिन्न ... के प्रति चेष्टात्मक कार्यों में सहायता करती हैं।"[2]

---

1 Sherif and Sheif, *An Outline of Social Psychology*, p. 496.
2 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psych...* p. 156.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभिवृत्तियाँ व्यक्ति के व्यक्तित्व को एक निरन्तरता प्रदान करती हैं। इससे उनके व्यक्तित्व के विकास में बड़ी सहायता प्राप्त होती है। कोई भी व्यक्ति बिना अभिवृत्तियों के जीवित नहीं रह सकता। ये अभिवृत्तियाँ उसे जीवन में मार्गदर्शन कराती हैं और व्यक्ति उसी के अनुसार कार्य करता है। जब-जब नवीन अवसर उत्पन्न होते हैं, ये अभिवृत्तियाँ ही व्यक्ति को एक सूत्र प्रदान करती हैं और निरन्तरता स्थापित करती हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "एक मनोवैज्ञानिक स्थिति से दूसरी में निरन्तरता, प्राथमिक रूप से चिरस्थायी प्रतिमानों द्वारा उसके विश्वास एवं अभिवृत्तियों (जिनमें प्रमुख रूप से महत्त्वपूर्ण विश्वास और अभिवृत्तियाँ जो वह स्वयं में रखता है) में दी हुई होती हैं। इस प्रकार के चिरस्थायी ढाँचे की अनुपस्थिति में व्यक्ति प्रत्येक स्थिति में एक 'नया' व्यक्ति होगा और उसका व्यवहार केवल 'सहयोगी उत्तेजनाओं के तात्कालिक प्रतिमानों और क्षणिक आवश्यकताओं के लिए संगठित होगा।"[1]

व्यक्ति प्रत्येक वस्तु या प्रक्रिया को समझने का प्रयत्न करता है। अर्थ लगाना व्यक्ति के लिए स्वाभाविक क्रिया है। प्रत्येक ज्ञानात्मक प्रतिक्रिया अर्थ समझने की क्रिया है। बार्टलेट ने लिखा है, "यह कहने योग्य होगा कि प्रत्येक मानवीय ज्ञानात्मक प्रतिक्रिया—अनुभव करना, कल्पना करना, सोचना और तर्क—तथ्य के प्रयत्न के बाद अर्थ हैं।"[2]

अभिवृत्तियाँ व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति में भी सहायता करती हैं। अभिवृत्तियाँ उसकी स्थायी ज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ हैं। ये उसे एक स्थायी संगठन प्रदान करती हैं और उसकी समस्याओं के हल करने में सहायता करती हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "व्यक्ति के विश्वास एवं अभिवृत्तियाँ उसके विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हो सकते हैं।"[3]

अभिवृत्तियों का विकास
(Development of Attitudes)

अभिवृत्तियाँ अर्जित होती हैं या हम कह सकते हैं कि सीखी जाती हैं। इनका विकास शनैः-शनैः होता है। यह विकास कुछ निश्चायकों पर आधारित होता है। उनमें प्रमुख निश्चायक निम्न हैं :

(1) सांस्कृतिक निश्चायक (cultural determinants),
(2) मनोवैज्ञानिक निश्चायक (psychological determinants),
(3) व्यावहारिक निश्चायक (functional determinants),
(4) वस्तु-स्थिति (facts)।

---

1 *Ibid*, p. 153.
2 F. C. Bartlett, *Remembering*.
3 "The individual's beliefs and Attitudes may help him to achieve various goals," Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*. p. 154.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) **सांस्कृतिक निश्चायक** (Cultural Determinants)—अभि[illegible] तथा अन्य मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ शून्य में नहीं होतीं। विशेष रूप से अभिवृ[illegible] अर्जित होती हैं, इसलिए इनकी निश्चायक समाज की संस्कृति होती है। सं[illegible] प्रभाव हमारी अभिवृत्तियों पर पड़ता है। हम देखते हैं कि बंगाल के लोग [illegible] और चावल को भोजन में देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। इसका कारण उनकी इन[illegible] के प्रति अभिवृत्ति है। यह अभिवृत्ति बंगालियों में उनकी संस्कृति के कारण [illegible] मुसलमान प्राय: भोजन में गोश्त देखकर प्रसन्न हो जाते हैं। पर यदि सुअर [illegible] उनके भोजन में रख दिया जाय तो वे क्रुद्ध हो जायेंगे और उसको नहीं खायेंगे [illegible] धर्म ने सूअर के गोश्त को न खाने के लिए आदेश दिया है। धर्म संस्कृति [illegible] है। इस प्रकार संस्कृति प्राय: अभिवृत्तियों की निश्चायक होती है।

इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए अनेक परीक्षण हुए हैं। कार्लसन[1] [illegible] परीक्षण विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों पर किया। उसने यह पाया कि धर्म [illegible] पर विद्यार्थियों की अभिवृत्तियाँ होती हैं। हेरिस (Harris), रेमर्स (Re[illegible] तथा एलीसन[2] (Ellison) ने भी एक अध्ययन किया। उसमें उन्होंने पाया [illegible] विद्यार्थी किसी धर्म को नहीं मानते थे वे अधिक प्रगतिवादी थे और जो किसी [illegible] मानने वाले थे वे रूढ़िवादी। न्यूकोम्ब तथा स्वेला[3] ने भी यह पाया कि बच्चों [illegible] माता-पिता की अभिवृत्तियों में पर्याप्त सम्बन्ध पाया जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सांस्कृतिक कारक अभिवृत्तियों के निश्चायक [illegible] साथा ही साथ यह भी ध्यान रखने की बात है कि संस्कृति ही पूर्ण रूप [illegible] निश्चय नहीं करती; कुछ मनोवैज्ञानिक कारक भी इसमें महत्त्वपूर्ण भाग [illegible] दोनों मिलकर ही अभिवृत्तियों का विकास करते हैं।

(2) **मनोवैज्ञानिक निश्चायक** (Psychological Determin[illegible] संस्कृति अभिवृत्ति के विकास में निश्चायक अवश्य है, फिर भी एक संस्कृ[illegible] भिन्न व्यक्तियों में भिन्न अभिवृत्तियाँ पायी जाती हैं। यहाँ तक कि अत्यन्त [illegible] समान संस्कृतियों में भी अभिवृत्तियाँ केवल संस्कृति के ही अनुसार नहीं होतीं [illegible] वल ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "व्यक्ति पूर्ण रूप से सामान्य प्रतिमानों में [illegible] जा सकते; जब तक कि वे शक्तियाँ कार्य न करें जो ऐसी उत्पत्ति करती हैं [illegible] समरूपताओं को वास्तव में……विचार एवं आचार के वास्तविक विभेदों को [illegible] करने की आज्ञा नहीं देनी चाहिए, क्योंकि संस्कृति की प्रकृति स्वयं ऐसे [illegible]

---

1 H. B. Carlson, 'Attitude of undergraduate students' in J[illegible] *Social Psychology* (1934), 5, pp. 202-12.

2 A. J. Harris, H. H. Remmers and C. E. Ellison. 'The r[illegible] between liberal and conservative attitudes in college stude[illegible] other factors' in Journal *Social Psychology* (1932), pp. 3, [illegible]

3 T. M. Newcomb and G. Svehla, 'Intra-family relations[illegible] attitude *Sociometry* 1, pp. 180-205.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिए आज्ञा देती है। यह कोई साँचा नहीं है जो व्यक्तियों की आने वाली पीढ़ियों के विश्वासों एवं आदतों में अविच्छेदन को चिह्नित करे।"[1]

संस्कृति वैसे भी असदृश (heterogeneous) होती है। एक ही संस्कृति में भी असमान तत्त्व पाये जाते हैं। कहीं महल, तो कहीं झोंपड़ी देखने को मिलती है।

प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक मनोवैज्ञानिक संसार होता है। प्रत्यक्षीकरण के अध्याय में हम बता ही चुके हैं कि प्रत्यक्षीकरण चयनात्मक होता है। प्रत्येक व्यक्ति इस चयन-प्रक्रिया के द्वारा अपना एक नया संसार बना लेता है। यह उसका मनोवैज्ञानिक संसार है। इसके कारण संस्कृति का प्रभाव व्यक्ति पर पूरा नहीं पड़ता। क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस सम्बन्ध में लिखा है, यह "यह विश्वासों एवं अभिवृत्तियों के निर्माण की चयनात्मक प्रकृति सांस्कृतिक प्रतिमानों को प्रभावशाली बनाने में सीमित तथ्यों के रूप में कार्य करती है।"[2]

मनुष्य की आवश्यकताएँ एवं अन्य मनोवैज्ञानिक तथा व्यक्ति की अभिवृत्तियों के विकास के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

(3) **व्यावहारिक निश्चायक** (Functional Determinants)—व्यावहारिक निश्चायकों से हमारा तात्पर्य आवश्यकताओं, उद्वेगों इत्यादि से है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने भी इनका अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है, "व्यावहारिक निश्चायकों से तात्पर्य व्यक्ति की आवश्यकताओं, जरूरतों, उद्वेगों आदि तथ्यों से है।"[3]

ये तत्त्व तो हमारी अभिवृत्तियों के विकास में कार्य करते ही हैं, इनके साथ-साथ व्यक्तित्व के लक्षण (Personality traits) भी अभिवृत्तियों के निर्माण में भाग लेते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि ये लक्षण (introversion-extroversion; ascendancy-submissiveness) बहुत प्रभाव डालते हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि ये तत्त्व प्रभाव डालते हैं, फिर भी इनकी प्रक्रिया अप्रत्यक्ष है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "जैसा कि हमने देखा सांस्कृतिक शाखाएँ व्यक्तियों को विशिष्ट विश्वास और अभिवृत्तियाँ नहीं देतीं, इस प्रकार व्यक्तित्व प्रतिमान, अभिवृत्तियों एवं विश्वासों की विशिष्ट प्रकृति को निश्चित नहीं करते, यहां फिर सम्बन्ध अप्रत्यक्ष एवं जटिल हैं।"[4]

कुछ लोगों ने सामान्य व्यक्तित्व प्रतिमान (general personality pattern) और अभिवृत्तियों में सम्बन्ध प्रदर्शित किया है। इस सम्बन्ध में मरे और मॉर्गन (Murray and Morgan) ने कालेज के 11 व्यक्तियों का गहन अध्ययन किया।

---

1. A.I. Hallowell, *Handbook of Psychological Leads for Ethnological Field Workers* (1937), Division of Anthropology and Psychology, National Research Council, Washington.
2. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 178.
3. *Ibid*, p. 183.
4. *Ibid*, p. 183.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रेबिन (Rabin) तथा फ्रेंच (French) ने भी अध्ययन किये। फ्रेंच ने अपने अध्ययन के विषय में लिखा है, "............उच्च लोग दृढ़ अहम् ढाँचे वाले जा सकते हैं; व्यक्ति शक्ति एवं कमजोरी को अपने स्वयं के हिस्से की चेतना से जानते एवं स्वीकार करते हैं; तथा कम····दूसरी तरफ निर्बल अहम् के द्वारा होते हैं और शक्तिशाली उच्च अहम् से गठित होते हैं; ये वे व्यक्ति हैं जो स्वयं के हिस्से में केवल यह स्वीकार करते हैं कि क्या अच्छा है और जो बुरे का दमन या दबाते हैं।"[1]

इस प्रकार अभिवृत्तियों के विकास में व्यक्तित्व के प्रतिमान का भी प्रभाव पड़ता है।

(4) वस्तु-स्थिति (Facts)—वस्तु-स्थिति और अभिवृत्तियों में भी सम्बन्ध है। वस्तु-स्थिति भी अभिवृत्तियों के विकास में प्रभावशील होते हैं।

वस्तु-स्थिति का ज्ञान हमें कैसे होता है ? प्रायः हम जो कुछ प्रत्यक्षीकरण करते हैं उस पर सत्यता का दावा करते हैं, परन्तु हमारा प्रत्यक्षीकरण भी तो पूर्णतः सही ही नहीं होता। इसी प्रकार बहुत-सी बातों के लिए हमें विशेषज्ञों (experts) पर आधारित होना पड़ता है। जो कुछ वे बताते हैं हम उनको मान लेते हैं। उनके बताने एवं जानने में दोष हो सकते हैं। इस प्रकार वस्तु-स्थिति से कई बार हम दूर रहते हैं। इसका फल यह होता है कि हमारी अभिवृत्तियाँ भी इन्हीं अपूर्ण स्थितियों पर आधारित होती हैं। वस्तु-स्थिति व्यक्ति के अनुसार ही होती है। तथ्य का बड़ा महत्त्व है। आगे के अध्यायों में हम इस पर प्रकाश डालेंगे।

मनुष्य का समाजीकरण उसकी अभिवृत्तियों के द्वारा प्रदर्शित
(Man's of Socialization Revealed Through His Attitudes)

मनुष्य अपनी अभिवृत्तियों का निर्माण अपने समाज एवं संस्कृति में करता है। इसके कारण समाजीकरण की प्रक्रिया का स्पष्ट प्रभाव अभिवृत्तियों में दिखता है। शेरिफ तथा शेरिफ ने इस सम्बन्ध में कहा है, ठोस चिह्न जो एक व्यक्ति को समूह एवं संस्कृति के चिह्नित लक्षणों को देता है, यह मनोवैज्ञानिक इकाई है। अभिवृत्ति वह ठोस स्थिति में व्यक्त करता है। इस प्रकार ये उसके समाजीकरण की सर्वोत्तम मनोवैज्ञानिक उपज, उसके फ्रांसीसी व्यक्ति, एक एस्किमो, एक हो... अमरीकन बनने के हैं। संक्षेप में व्यक्ति का समाजीकरण उसके प्रमुख रूप से अभिवृत्तियों के निर्माण का, उसके मूल्यों एवं सामाजिक प्रतिमानों का, जो उसके समूह या समूह से है, व्यक्त करता है।"[2]

कुछ मनोवैज्ञानिक तो अभिवृत्तियों को समरूपी व्यवहार (conformity behaviour) कहते हैं। अधिकृतर लोगों की अभिवृत्तियाँ एक समूह या ...

---

[1] V. V. French, *The Structure of Sentiments* (1947), in J. *Personality*, 15, pp. 247-82; 16, pp. 71-108.
[2] Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 491.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कसी होती हैं। इसे उन्होंने 'J' वृत्तखण्ड (curve) के द्वारा प्रदर्शित किया है। धिकतर लोग एकसे होते हैं। इसलिए 'J' के नीचे का भाग graph paper में नेगा।

अभिवृत्तियों में परिवर्तन
(Change in Attitudes)

अभिवृत्तियाँ पर्याप्त स्थायी होती हैं और व्यक्ति उनको शीघ्र परिवर्तित नहीं र पाता, फिर भी अभिवृत्तियों में परिवर्तन किये जा सकते हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड लिखा है, "सांस्कृतिक कारकों का स्पष्ट प्रभाव अभिवृत्तियों एवं विश्वासों में होते ए भी अभिवृत्तियों एवं विश्वासों की व्यावहारिक प्रकृति की गहन दृढ़ता होते हुए , और अभिवृत्तियाँ एवं विश्वासों की स्वयं को सुरक्षित रखने की प्रकृति होते हुए , विश्वासों एवं अभिवृत्तियों में परिवर्तन किया जा सकता है।"[1]

अभिवृत्तियों के परिवर्तन का क्या अर्थ है? अभिवृत्ति एक प्रकार का मानसिक व है। जब यह झुकाव दूसरी ओर हो जाय तो इसे अभिवृत्ति में परिवर्तन कहेंगे। रिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "अभिवृत्ति एक स्थिर अस्तित्व या अपने सांकेतिक और पक्षपात को स्पष्ट करती है तथा अभिवृत्ति में परिवर्तन एक दिशा में परिर्तन और या इस स्थिरता की मात्रा या पक्षपात में स्पष्ट करता है।"[2]

अभिवृत्ति सदैव पक्ष या विपक्ष में होती है। यह तटस्थ कभी नहीं होती। : यदि एक वस्तु की ओर पक्ष की अभिवृत्ति है और बाद को उसी वस्तु के विषय विपक्ष की हो जाय तो इसे हम अभिवृत्ति में परिवर्तन कहेंगे। शेरिफ तथा शेरिफ लिखा है, "अभिवृत्ति परिवर्तन का अर्थ प्रायः किसी स्थिर अस्तित्व के स्थान पर सी प्रवाह में एक नयी स्थिरता है।"[3]

अभिवृत्ति में परिवर्तन लाने की अनेक विधियाँ हैं। इनमें से कुछ प्रमुख धियों पर हम यहाँ विचार करेंगे।

एकतरफा प्रभाव (One-way Influence)—इसमें व्यक्ति को एकतरफा बातें यी जाती हैं और यह देखा जाता है कि उस पर क्या प्रभाव पड़ा। यह प्रभाव प्रकार से उत्पन्न किया जा सकता है। विशेष रूप से सम्बन्ध (contract) और र (communication) इसके प्रमुख साधन हैं।

संदर्भ समूह में बदल (Shift in Reference Group)—प्रत्येक व्यक्ति संदर्भ समूह से प्रभावित होता है। अतः यदि किसी व्यक्ति की अभिवृत्तियों में वर्तन लाना हो तो उसका संदर्भ समूह बदल दीजिए। इस प्रकार का एक अध्ययन

---

1. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 194.
2. Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 359.
3. "Attitude change, therefore, usually means taking a new stand in place of an existing stand on an issue." *Ibid*, p. 539.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न्यूकोम्ब[1] ने किया। उन्होंने यह अध्ययन बेनिंगटन कालेज की लड़कियों पर कि इस कालेज में प्रगतिवादी विचारधारा पायी जाती थी। स्वतन्त्रतापूर्ण थी लड़कियाँ कालेज में ही रहती थीं क्योंकि वह शहर से दूर था। एक प्रकार कालेज एक समुदाय था। न्यूकोम्ब ने पहले तो प्रवेश के समय लड़कियों की वृत्तियों का अध्ययन किया। फिर उन्होंने इनकी अभिवृत्तियों का अध्ययन उपरान्त किया। इस तरह उनका अध्ययन चलता रहा। उन्होंने इस अध्य सारांश यह बताया कि जिन लड़कियों ने कालेज के समूह को अपना सन्द लिया उनका अभिवृत्तियों में बहुत परिवर्तन आया और उनकी अभिवृत्ति के समान हो गयीं। जिन लड़कियों ने अपने संदर्भ समूह नहीं बदले, वे अभि वर्तन न ला सकीं।

समूह निर्णय के द्वारा (By Group Decision)—अभिवृत्तियों में समूह निर्णय के द्वारा भी किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में अनेक अध्य गये हैं। लेबिन[2] ने इस पर विशेष अध्ययन किया है।

इन परीक्षणों के पीछे जो तर्क है, उसका सारांश देते हुए कार्टराइ जेंडर ने लिखा है, "इन अध्ययनों के पीछे तर्क यह है कि समूह प्रतिमान ए समूह की सम्पत्ति है। यदि कोई इन प्रतिमानों में परिवर्तन करता है और व्यक्तियों का यह व्यवहार उसी समय उचित हो सकता है जबकि समू हिस्सा लेकर परिवर्तन करने का निर्णय करे।"[3]

इसमें वार्ता के द्वारा परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया जाता है।

सम्बन्ध के द्वारा (By Contact)—अभिवृत्तियों में परिवर्तन सम्बन्ध भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, कुछ हिन्दू मुसलमानों के प्रति अभिवृत्ति रखते हैं। यदि उन्हें आपस में रहने-सहने का अवसर दिया जा अभिवृत्ति में परिवर्तन आ सकता है। शेरिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "अं के सदस्यों में सम्बन्ध स्थापित करना सामाजिक समस्याओं को सुलझाने दूसरे की अभिवृत्तियों में परिवर्तन करने की कुंजी है।"[4]

संचार के द्वारा (Through Communication)—संसार के द्वारा भी अभिवृत्तियों में परिवर्तन किया जा सकता है। रेडियो, समाचारप

---

1 T. M. Newcomb, *Personality and Social Change* (1943), Press, New York.

2 K. Lewin, *Studies in Group Decision* in D. Cartwri A. Zander (eds), '*Group Dynamics, Research and Theory* K. Lewin, '*Group Decision and Social Change*, in G. S T. M. Newcomb and E. L. Hartley (eds), *Readings in Psychology*.

3 D. Cartwright and A. Zander (eds) *Group Dynamics, Rese Theory* (1953), p. 149.

4 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 54

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुस्तकों इत्यादि का इसमें प्रयोग किया जाता है। शेरिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "आधुनिक अत्यधिक जटिल समाजों में बहुत से समूहों और व्यक्तियों ने संचार के अनेक स्वरूपों के द्वारा अपनी अभिवृत्तियों को ढालने का प्रयत्न किया है। समाचारपत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तकें, रेडियो और टेलीविजन व्यक्तियों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने के प्रयत्नों से भरी हुई हैं।"[1] समूह संचार (mass communication) का महत्त्व इस दृष्टि से अत्यधिक बढ़ गया है। समूह संचार एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक उत्तेजना के रूप में कार्य करते हैं। समूह संचार के माध्यम थोड़े से ही समय में लाखों लोगों के पास पहुँचते हैं और उन्हें प्रभावित करते हैं, जिससे लोगों की अभिवृत्तियों में भी परिवर्तन आता है।

अभिवृत्तियों की माप[2]
(Measurement of Attitudes)

अभिवृत्तियाँ व्यक्तियों की मानसिक अवस्थाएँ हैं, इसलिए अमूर्त हैं। अमूर्त-तथ्यों को न तो देखा जा सकता है और न ही सुना जा सकता है। केवल अनुभव किया जा सकता है, इसलिए उनका माप करना बड़ा कठिन कार्य है, फिर भी समाज में वैज्ञानिकों ने इनके माप के लिए अनेक पद्धतियाँ बनायी हैं। अभिवृत्तियों के मापने के लिए अनेक पैमाने विकसित किये गये हैं।

अभिवृत्तियों की माप में कठिनाइयाँ
(Difficulties in Measurement of Attitudes)

अभिवृत्ति को परिभाषित करते समय यह स्पष्ट कर दिया गया है कि यह मनुष्य का वास्तविक व्यवहार या क्रिया नहीं है, बल्कि उसका पूर्वाभास अथवा उस व्यवहार की ओर निर्देशित करने वाली प्रवृत्ति है। ऐसी स्थिति में जबकि वास्तविक व्यवहार में उसका अवलोकन सम्भव नहीं है। मनोवृत्तियों को सही रूप से मापना अत्यधिक कठिन कार्य है। अभिवृत्तियों को निश्चित एवं परिशुद्धता से मापना अत्यन्त कठिन है कि अमुक-अमुक परिस्थितियों में व्यक्ति किस प्रकार का व्यवहार करने वाला है, अर्थात यह किस प्रकार का कार्य करने की सोच रहा है। उसके इस दृष्टिकोण एवं होने वाले कार्य का पूर्वाभास यद्यपि सामान्य ज्ञान के आधार पर किया जा सकता है लेकिन इसमें परिशुद्धता का अंश निश्चित करना अत्यन्त कठिन कार्य है। जब तक अभिवृत्तियों का माप परिशुद्ध रूप से नहीं होता है तब तक माप की कोई उपयोगिता नहीं है। साधारणतया अभिवृत्तियों को मापने में हमारे समक्ष निम्नलिखित कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं :

(1) **जटिलता**--अभिवृत्तियों को मापने में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बाधा

---

1 Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*, p. 555.

2 'अभिवृत्तियों के माप' की विधियों एवं पैमानों के विस्तृत अध्ययन के लिए देखिए, तोमर : **समाजिक अनुसन्धान**, अध्याय 31, प्रकाशक श्रीराम मेहरा एण्ड कं० आगरा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभिवृत्यात्मक व्यवहार की जटिलता है। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि किसी अमुक परिस्थिति के उपस्थित होने पर व्यक्ति की अभिवृत्ति एक ही प्रकार की होगी, क्योंकि अनेकानेक प्रभावों के कारण व्यक्ति की किसी परिस्थिति या सामाजिक विषय के प्रति अभिवृत्ति विभिन्न प्रकार के रूप धारण कर लेती है। उस स्थिति में यह निश्चित करना अत्यन्त ही कठिन होता है कि किसी परिस्थिति के प्रति व्यक्ति की विभिन्न अभिवृत्तियों से उस समूह में से कौन-सी अभिवृत्ति उसके वास्तविक व्यवहार का पूर्वाभास है? ऐसा होने पर यह भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि मनुष्य किस प्रकार का व्यवहार करने वाला है? यदि किसी परिस्थिति के प्रति एक ही प्रकार की अभिवृत्ति पायी जाय तो उसके वास्तविक व्यवहार के बारे में थोड़ा बहुत अनुमान लगाया जा सकता है। इसी समस्या के कारण अभिवृत्तियों का माप अत्यधिक कठिन हो गया है।

(2) **अगम्यता**—अभिवृत्तियों के माप में दूसरी महत्त्वपूर्ण कठिनाई उनकी अगम्यता है। अभिवृत्ति स्वयं व्यक्ति का वास्तविक व्यवहार न होकर उसका पूर्वाभास कराने वाली प्रवृत्ति या सूचक है। इस दृष्टि से स्वयं अभिवृत्ति अवलोकन का विषय नहीं है। उसका इन्द्रियों द्वारा अध्ययन नहीं किया जा सकता, यही उनके माप में सबसे बड़ी बाधा है कि परिस्थितियों एवं व्यक्ति के विचारों, आदर्शों आदि को देखकर उसके वास्तविक व्यवहार का अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसे अनुमान किये जाने वाले विषय का सही माप करना अत्यधिक कठिन कार्य नहीं तो और क्या है?

(3) **अस्थिरता**—अभिवृत्तियों के माप में तीसरी कठिनाई उनकी अस्थिर प्रकृति होना है। अभिवृत्ति सदा ही परिवर्तित होती रहती है। एक समय में किसी परिस्थिति के प्रति मनुष्य की अभिवृत्ति दूसरे समय में वैसी नहीं रहती है। समय के साथ-साथ किसी विषय के प्रति व्यक्ति की अभिवृत्ति बदलती जाती है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण का प्रभाव भी महत्त्वपूर्ण है। व्यक्ति के मस्तिष्क पर विभिन्न परिस्थितियों; यथा—धन, शिक्षा, सम्पर्क आदि कारकों का प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण व्यक्ति की अभिवृत्ति में परिवर्तन आ जाता है। ऐसी स्थिति में किसी विषय के प्रति व्यक्ति की निश्चित अभिवृत्ति को नहीं मापा जा सकता।

(4) **उपयुक्त मापक-यन्त्र का अभाव**—अभिवृत्तियों को मापने में चौथी कठिनाई यह है कि अभी तक इनको मापने के लिए ऐसा कोई उपयुक्त पैमाना नहीं है जैसा कि प्राकृतिक वस्तुओं एवं घटनाओं को मापने के लिए होता है। उदाहरण के लिए, जिस प्रकार तापमान को मापने के लिए थर्मामीटर है उसी प्रकार सामाजिक घटनाओं अथवा अभिवृत्तियों का निश्चित नाप बताने के लिए कोई पैमाना अभी तक आविष्कृत नहीं हुआ है। किसी विषय के प्रति हमारी सहमति या विरोध है तो, वह किस अंश तक है, इसका माप करना कठिन है।

(5) **सांख्यिक रूप अभिवृत्ति का माप नहीं हो सकती**—व्यक्तियों की अभिवृत्तियों की समानता दो प्रकार से मापा जा सकता है—(1) व्यक्ति के व्यवहार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) मौखिक राय से। जब मौखिक राय और व्यक्ति का व्यवहार समान होता उस स्थिति में मौखिक राय व्यक्ति की अभिवृत्तियों का सही परिचय देती है। न व्यावहारिक जगत में सर्वत्र ऐसा पाया जाना अत्यन्त दुर्लभ है। साधारणतया त की राय के आधार पर उसके व्यवहार की कल्पना की जाती है, लेकिन यह वार्य नहीं कि व्यक्ति जैसी राय प्रकट करता है, उसका व्यवहार उसके अनुरूप हो। कई ऐसे लोग भी देखे गये हैं जिनके विचार और व्यवहार में बहुत भिन्नता अतः केवल मौखिक राय के द्वारा ही व्यक्ति की वास्तविक अभिवृत्ति का पता ना सम्भव नहीं है। कभी-कभी व्यक्ति प्राचीन रूढ़ियों के विरुद्ध अभिवृत्ति रखते भी सामाजिक दबाव एवं विभिन्नता के कारण स्पष्टतः मौखिक राय में अपने ध को व्यक्त नहीं कर पाता। इस प्रकार सच्ची राय सामने नहीं आ पाती। ऐसी ति में मौखिक राय वास्तविक अभिवृत्तियों की प्रतिनिधि हो ही, यह अनिवार्य है।

उपर्युक्त कारणों से अभी तक अभिवृत्तियों के सही माप में कठिनाई अनुभव रही है, लेकिन समाजविज्ञानों के विकास के साथ इनको मापने की पद्धतियों का स हो रहा है।

अभिवृत्ति—माप की प्रणालियाँ
(Methods of Measurement of Attitudes)

किसी भी विषय के प्रति व्यक्ति या समूह की अभिवृत्ति का माप दो प्रकार से जा सकता है—(1) विचार-सर्वेक्षण (opinion survey), एवं (2) पैमाना (scaling method)। अभिवृत्तियों की माप के उपयुक्त पैमाने की स्थिति में प्रथम प्रणाली का आश्रय लिया जाता है जिसमें व्यक्तियों की अभिवृत्ति पने के लिए भाषा अथवा मौखिक विचारों का प्रयोग करते हैं। इससे यह मान जाता है कि व्यक्ति के शब्द मौखिक विचार या भाषा ही उसकी अभिवृत्तियों कट करने वाले हैं। इसलिए हम किसी विषय में उसके द्वारा व्यक्त विचारों के र पर ही उसकी अभिवृत्ति के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार णाली का उपयोग व्यक्ति के अतिरिक्त किसी के प्रति समूह की अभिवृत्ति जानने ए भी किया जाता है। इस प्रणाली में अनुसन्धानकर्ता को व्यक्ति की अभिवृत्ति प के लिए व्यक्ति के मौखिक या लिखित विचारों पर ही आश्रित रहना पड़ता ह उनकी पैमानों द्वारा सही एवं निश्चित माप नहीं कर सकता। अभिवृत्ति का गाने की इस प्रणाली के अन्तर्गत व्यक्ति के जीवन से सम्बन्धित ... ी, आत्मकथा, डायरी, पत्र, वैयक्तिक अध्ययन आदि), साक्षात्... ादि की पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है एवं व्यक्ति ... जाता है।

दूसरी प्रणाली के अन्तर्गत अभिवृत्तियों ... नों का उपयोग किया जाता है कि ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अध्ययन किया जाता है। जहाँ प्रथम प्रणाली में किसी घटना के विषय में समूह की अभिवृत्ति का अध्ययन अनुकूल अथवा प्रतिकूल, सहमति अथवा पक्ष अथवा विपक्ष आदि के रूप में ही किया जाना है वहाँ दूसरी प्रणाली में णाओं एवं अभिवृत्तियों को निश्चित अंशों में मापने एवं जानने का प्रयत्न है। यदि किसी विषय में व्यक्ति या समूह की सहमति है तो वह किस अंश तक है, इस बात का पूरा निश्चित माप किया जाता है। अभिवृत्तियों का माप करने वाले इन पैमानों को 'अभिवृत्ति-पैमाने' (attitude scales) है। प्रस्तुत अध्याय में इन्हीं का विवेचन किया गया है।

अभिवृत्ति मापक पैमाने
(Attitude Scales)

सामाजिक विषयों के सम्बन्ध में व्यक्ति अथवा समूह की अभिवृत्ति निश्चित अंशों अथवा सीमा तक सही एवं परिशुद्ध रूप से मापने के लिए पैमानों का विकास किया गया है। किसी विषय के सम्बन्ध में यह पता आसान है कि व्यक्ति उसके पक्ष में है अथवा विपक्ष में, अनुकूल है अथवा लेकिन इस पक्ष या विपक्ष अथवा अनुकूल या प्रतिकूल अभिवृत्ति कि पायी जाती है। उदाहरण के लिए, साम्यवादी विचारधारा के प्रति अध्ययन करना है। उसमें व्यक्ति की अभिवृत्ति कट्टर साम्यवादी, साधारण अथवा असाम्यवादी आदि की भी हो सकती है। लेकिन साम्यवाद के प्रति में पायी जाने वाली इन अभिवृत्तियों का पूर्ण, निश्चित एवं सही माप 'साधारण' आदि प्रकारों के शब्दों के द्वारा नहीं किया जा सकता। पैमाना-पद्धति का आश्रय लेना पड़ेगा। जिसके द्वारा अनुकूल या प्रति विपक्ष आदि अभिवृत्तियों का निश्चित अंशों में सही माप सम्भव हो सके लिए विभिन्न अभिवृत्ति के पैमानों का समाजशास्त्रियों एवं मनोवै प्रयोग किया गया है।

किसी विशिष्ट विषय से सम्बन्धित अभिवृत्ति के पैमाने से हमारा अनेकानेक कथनों एवं प्रस्थापनाओं (propositions) की ऐसी सूची है विषय (समस्या, संस्था या समूह) के विभिन्न महत्त्वपूर्ण चुने हुए पहलुओं होती है। इस सूची में समस्या से सम्बन्धित पहलुओं के समस्त पद एवं विभिन्न अंशों सहित दिये गये होते हैं। पैमाने पर अंकित इन पदों के ...या विपक्ष, सहमति या असहमति, आदि के रूप में व्यक्ति मौखिक रूप से ...व्यक्त करता है। इस प्रकार की अभिव्यक्त की जाने वाली प्र... विवादग्रस्त विषय पर व्यक्ति की स्थिति को मापा जा सकता

आन...
वह किस अं...
(5) ...
वृत्तियों की समानता ...

Scientific Social Surveys and Resear...

26.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभिवृत्ति-मापक पैमानों के प्रकार
(Types of Attitude Measurement Scales)

1. थरस्टन का पैमाना (Thurston's Scale) अथवा थरस्टन की सम-विस्तार पद्धति (Thurstone's Technique of Equal-appearing Intervals)।
2. मास्टर स्केल (Master Scale)।
3. गटमैन स्केल (Guttman Scale)।
4. आन्तरिक असम्बद्धता पैमाने (Interval Inconsistency Scales)।
5. लिकर्ट की तीव्रतामापक पद्धति (Likert's Technique of Summated Ratings)।
6. सामाजिक दूरी मापक पैमाने (Social Distance Measurement Scales)।
7. तीव्रता या मूल्यमापक पैमाने (Intensity or Rating Scales)।
8. पद-सूचक पैमाने (Ranking Scales)।

थरस्टन की सम-विस्तार पद्धति (Thurstone's Technique of Equal-appearing Intervals)[1]

थरस्टन की सम-विस्तार पद्धति अभिवृत्तियों को मापने की सर्वाधिक रूप प्रयुक्त की जाने वाली महत्त्वपूर्ण पद्धति है। जिसे **'थरस्टन का पैमाना'** (Thurstone's Scale) भी कहा जाता है। उसने अभिवृत्तियों को मापने के लिए ऐसी प्रणाली का उपयोग किया जो किसी विषय पर समूह की अभिवृत्तियों को आवृत्ति वितरण (frequency distribution) के रूप में प्रदर्शित करती है। उस प्रणाली में आधार रेखा का प्रयोग किया गया है जिस पर अभिवृत्तियों के सम्पूर्ण विस्तार स्तरों को अंकित किया गया है। अभिवृत्तियों के इन समस्त स्तरों को निश्चित के अनुसार व्यवस्थित करने के लिए एक सिरे पर सर्वाधिक अनुकूल अभिवृत्ति एवं दूसरे सिरे पर न्यूनतम अनुकूल अभिवृत्ति को लिया गया है। तटस्थ अभिवृत्ति इन दोनों स्तरों के बीच अवस्थित किया गया है। इस प्रकार इस पैमाने पर किसी विषय के प्रति अभिवृत्ति के स्तरों के सम्पूर्ण विस्तार—सर्वाधिक अनुकूल से लेकर न्यूनतम अनुकूल तक को अंकित कर दिया गया है।

पैमाने का निर्माण थरस्टन ने चर्च (church) के प्रति लोगों की अभिवृत्ति को मापने का प्रयत्न किया था। उसके निर्माण में उसने निम्न कार्य प्रणाली अपनायी।

(i) सर्वप्रथम चर्च के प्रति लोगों की अनुकूल या प्रतिकूल अभिवृत्ति से सम्बन्ध रखने वाले अनेकानेक विचार-कणों, उदाहरणों अथवा कथनों आदि का नवीन-साहित्य एवं लोगों के विचारों की जानकारी के आधार पर संकलन किया गया। इस क्रिया में इस बात का प्रयत्न किया गया कि इन वाक्यों या कथनों

1. L. L. Thurstone and E. J. Chave, *The Measurement of Attitudes* (1928).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में चर्च के प्रति अत्यधिक अनुकूल अभिवृत्ति से लगाकर अत्यधिक प्रतिकूल तक के समस्त विस्तार एवं उनसे सम्बन्धित समस्त स्तरों का समावेश चाहिए। इस बात का कोई महत्त्व नहीं है कि इस सीमा में आने वाले कथन संख्या में होने चाहिए। थरस्टन ने 130 कथनों को चुना। उनमें यह गया एवं रखना चाहिए कि प्रत्येक कथन संक्षिप्त, स्पष्ट, अपवर्जी (exclu... विषय से पूर्ण सम्बन्धित होना चाहिए ताकि अभिव्यक्त की गयी अभिवृत्ति उनसे सरलता से चुना जा सके या छोड़ा जा सके। इसके अतिरिक्त पैमाने दोहरे कथन नहीं आने चाहिए जिनसे एक ही साथ पक्ष और विपक्ष दोनों मनोवृत्ति का आभास हो। कथनों को वैज्ञानिक बनाने की दिशा में उपयुक्त नियों का विवेचन अनुसूची एवं प्रश्नावली बनाने के नियमों के रूप में किया है। इन कथनों को व्यवस्थित करने की दृष्टि से उनको प्राथमिकता के क्रम में रखना चाहिए ताकि इनमें से चुनने वाला पैमाने के एक ही सिरे से कि दोनों सिरों से।

(ii) दूसरे स्तर में सभी कथनों का सावधानी से सम्पादन कर देने पर समस्त कथनों को पृथक-पृथक संकेत नम्बर प्रदान कर दिये गये ताकि कोई नम्बर देखने से ही सम्बन्धित कथन का आभास हो सके। 130 कथनों के लिए ही संकेत नम्बर दे दिये गये। तत्पश्चात उनको इस प्रकार टाइप या मुद्रित जाता है कि प्रत्येक कथन अथवा नम्बर एक पृथक चित्र या सूची के रूप में दिया जा सके। थरस्टन ने इस प्रकार 130 कथनों के लिए 130 चिट कागज कर लिए। प्रत्येक चिट एक प्रश्न या कथन से सम्बन्धित था। इस प्रकार के प्रति सम्पूर्ण अभिवृत्तियों का एक सेट 130 चिट का बना और इस प्रकार एक सेट अनेक निर्णायकों को दे दिया गया। अत्यधिक अनुकूल अभिवृत्ति से प्रतिकूल अभिवृत्ति तक के विस्तार को 11 वर्गों से विभाजित कर दिया। इन सभी वर्गों को क्रमशः A से K तक के 11 अक्षरों का नाम दे दिया स्तर की अभिवृत्ति के परिचायक हैं। सभी चिटों पर A से K तक के ... दिये गये। इसके पश्चात सभी निर्णायकों को कहा गया कि वे प्रत्येक कथन जायें और यह निश्चित करें कि वह इन 11 वर्गों में से किस वर्ग में आता विषय में निर्णायकों पर चर्च के मूल्य-निर्धारण में वैषयिकता एवं निष्पक्षता लिए विशेष बल दिया गया।

निर्णायकों को 130 चिटों के सेट के साथ उन्हें अभिवृत्तियों की ... के अनुसार 11 वर्गों में क्रम से व्यवस्थित करने के लिए आवश्यक सूचनाएँ प्रत्येक निर्णायक ने 130 चिटों को पढ़कर A से लगाकर K तक की अभि... 11 श्रेणियों में उनके स्तर के अनुसार विभाजित एवं व्यवस्थित किया। ... अन्तर्गत उन सभी कथनों को रखने के लिए कहा गया जिनके विषय में वे ... अनुकूल विचार रखते थे; एंव K वर्ग में उन कथनों को रखने हेतु कहा ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अत्यधिक प्रतिकूल विचार थे; एवं F में उनको रखने के लिए कहा गया जिनमें उनके विचार तटस्थ थे। A, K, F के अतिरिक्त शेष वर्गों में शेष कथनों को उनकी अभिवृत्ति के स्तर के अनुसार रखने के लिए कहा गया। इस प्रकार समस्त 130 कथन 11 वर्ग समूहों में व्यवस्थित कर दिये गये। इस छँटनी (sorting) में प्रत्येक निर्णायक के पास के समस्त कथन 11 वर्गों में वर्गित कर दिये गये। कुल 300 निर्णायकों द्वारा इस प्रकार 11 वर्गों में अपने-अपने 130 कथनों की छँटनी के पश्चात वे लौटा दिये गये।

(iii) जब समस्त निर्णायक कथनों की छँटनी कर चुके तो समस्त छँटनी किये वर्ग समूहों के आधार सारणी तैयार की गयी जिससे यह निर्धारित किया जा सका कि प्रत्येक कथन के सम्बन्ध में अभिवृत्ति के किस-किस स्तर पर कितनी आवृत्तियाँ आयीं। इनमें प्रत्येक कथन के लिए पृथक-पृथक आवृत्ति वितरण सारणी का निर्माण किया गया जिसमें यह बताया कि अभिवृत्ति के 11 स्तरों में से प्रत्येक स्तर पर उस कथन की आवृत्ति कितनी रही। इसी प्रकार सभी 130 कथन से सम्बन्धित आवृत्ति वितरण द्वारा लोगों की अभिवृत्ति के स्तरों का निर्धारण किया गया था।

(iv) सभी कथनों के पैमाना-मूल्य[1] ज्ञात कर लेने के पश्चात 15 या 20 से कथन चुन लिए गये जो तुलनात्मक रूप से स्पष्ट सम्बन्धित थे। पैमाना का अन्तिम स्वरूप इन्हीं 10-15 कथनों से तैयार होता है। इन सबको उनके पैमाने-मूल्य के अनुसार इस क्रम से व्यवस्थित कर दिया कि अत्यधिक अनुकूल अभिवृत्ति वाला कथन सबसे प्रथम एवं क्रमशः घटती हुई अभिवृत्ति वाले कथन उनके पैमाना-मूल्यों के अनुसार एक-दूसरे के पश्चात आते गये। इस प्रकार सबसे कम अनुकूल अथवा अत्यधिक प्रतिकूल प्रवृत्ति वाला कथन सबसे अन्त में व्यव्वस्थित किया गया। कथनों के चुनाव में यह ध्यान रखा गया कि ये चुने गये कथन अत्यधिक अनुकूल से लेकर अत्यधिक प्रतिकूल तक की अभिवृत्ति के विभिन्न स्तरों का प्रतिनिधित्व करते हैं। अब यह 15-20 कथनों का व्यवस्थित पैमाना किसी भी जनसंख्या की अभिवृत्ति को मापने के लिए तैयार है। अभिवृत्ति के अनुकूल से प्रतिकूल तक विभिन्न स्तरों को प्रदर्शित करने वाले इस पैमाने को सम्बन्धित कथनों सहित व्यक्तियों को दिया जाय एवं उन्हें कहा जाय कि वे उस कथन पर सही मार्क दें, जिनको वे सही या उपयुक्त समझते हैं। जिस कथन पर किसी व्यक्ति ने निशान लगाया है उसका पैमाना-मूल्य उस व्यक्ति की अनुकूल और प्रतिकूल अभिवृत्ति का निश्चित माप बता है अर्थात् वह यह स्पष्ट कर देगा कि यदि अनुकूल अभिवृत्ति है तो वह किस स्तर की है या प्रतिकूल है तो उसका क्या अंश है।

मास्टर स्केल (Master Scale)

रेमर्स तथा साइलांस (Remmers and Silance) ने थरस्टन स्केल का

[1] पैमाना-मूल्य निकालने के लिए सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है। देखिये तोमर कृत **सामाजिक अनुसन्धान।**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुकरण कर मास्टर स्केल का निर्माण किया। इस स्केल को बनाने की विधि स्टन स्केल के बनाने की ही विधि है। मुख्य अन्तर यह है इसमें जो कथन लि उन्हें इस प्रकार सामान्यीकरण किया गया कि उससे बहुत-सी विषय सम्बन्धी वृत्तियों की माप की जा सके। चूँकि एक ही स्केल से बहुत-सी अभिवृत्तियों की की जा सकती है, इसलिए इसे मास्टर स्केल का नाम दिया गया। यह स्के सरल भी होता है और कम पढ़े लोग भी इसे सरलता से प्रयोग कर लेते हैं।

डनलप तथा क्रोल (Dunlop and Kroie) ने मास्टर स्केल की आ करते हुए लिखा है कि मास्टर स्केल उतनी कुशलता से माप नहीं कर पाते कुशलता से विशिष्ट वस्तु के प्रति अभिवृत्ति मापने के लिए तैयार किया गया है

(3) गटमैन स्केल (Guttman Scale)

गटमैन ने एक 'स्केलोग्राम' (Scalogram) बनाया। उन्होंने स्थायि सीमा पर अधिक बल दिया। स्थायित्व से यह तात्पर्य है कि जिन व्यक्तियों की वृत्ति की माप की जा रही है, उनकी एक बहुसंख्या जो प्रत्युत्तर देती है—वे स्थायी प्रकार होता है। इस स्केल पर ऐसे स्थायी कथन ही रखे जाते हैं।

(4) आन्तरिक असम्बद्धता (Internal Inconsistency)

थरस्टन ने अपने कथनों को स्पष्ट बनाने के लिए उनकी परस्पर पर अत्यधिक जोर दिया है। लेकिन कथन सम्बन्धित है अथवा नहीं, इसका लगाया लाय, इसका पता लगाने के लिए थरस्टन ने प्रत्येक पद एवं उसके की दूसरे पद एवं उसके प्रत्युत्तर से तुलना की है। आन्तरिक असम्बद्धता बात पर आधारित है कि एक ही व्यक्ति एक समय में एक साथ ऐसे दो पदों चुन सकता जिसमें एक का पैमाना-मूल्य कम हो और दूसरे का अधिक। इस विभिन्न पदों की परस्पर तुलना करने से ही लग सकता है। साधारणतया उत्तर के विभिन्न पदों के बारे में उत्तर परस्पर सम्बन्धित होते हैं, अर्थात यदि किसी विशिष्ट विषय के अनुकूल अभिवृत्ति अपनायी है तो शेष सम्बन्धित प्रश्नों उत्तर भी अनुकूल ही होंगे। लेकिन यदि ऐसा नहीं पाया जाता है तो प्रश्न में या असम्बद्धता है। चर्च के प्रति मनोवृत्ति के उदाहरण में यदि एक व्यक्ति प्रति एक कथन में अत्यधिक अनुकूल दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है जिसका पैमाना भी बहुत अधिक है, लेकिन साथ ही साथ वह ऐसे कथन पर भी सही मार्क है जिसको चर्च के प्रति अनुकूल दृष्टिकोण का पैमाना-मूल्य अति न्यून है स्थिति में समझ लेना चाहिए कि वह पद भी असम्बद्ध है। एक ही व्यक्ति किसी विषय के बहुत अधिक पक्ष में व बहुत अधिक विपक्ष में नहीं हो सकता लिए जहाँ कहीं भी उत्तरों में असम्बद्धता आती है वहीं समझ लेना चाहिए पद असम्बद्ध है और उसे पैमाने में नहीं रखना चाहिए। पैमाने में वे ही चाहिए जो सम्बन्धित हैं। सभी कथनों अथवा पदों का पैमाना-मूल्य ज्ञात एवं उनके आधार पर पैमाना तैयार हो जाने के पश्चात इस असम्बद्धता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लगाया जाता है। इस प्रणाली का थरस्टन में वैषयिक माप (objective criterion of irrelevence) का नाम दिया है। अपनी पूर्व प्रणाली में सुधार की ओर संकेत करते हुए बताया है कि पैमाने की रचना या स्केल सम्बन्धी मूल्य निर्धारण वोटों द्वारा होना चाहिए। ऐसी स्थिति में जजों द्वारा पर्चियों को छाँटने की आवश्यकता न होगी और उत्तरदाताओं के उत्तरों के आधार पर ही स्केल की माप का पता लगा सकते हैं। संक्षेप में, उत्तरदाता के उत्तर के ऊपर पैमाना निर्भर होगा।

(5) **लिकर्ट की तीव्रता योग मापक पद्धति** (Likert Technique of Summated Ratings)[1]

अभिवृत्तियों के माप की एक प्रणाली तीव्रता योग मापक पद्धति है जिसे 'लिकर्ट पद्धति' (Likert technique) अथवा 'आन्तरिक असम्बद्धता की प्रणाली' (method of internal consistency) भी कहा जाता है। पैमाना-मूल्यों के निर्धारण के अतिरिक्त यह प्रणाली थरस्टन की पूर्व अलोकित 'सम-विस्तार पद्धति' के समान है। इस पद्धति में पैमाना-मूल्यों के निर्धारण हेतु कथनों को व्यवस्थित एवं छंटनी करने के लिए बड़ी संख्या में निर्णायकों की आवश्यकता को समाप्त कर दिया है। इस प्रकार कम जटिल प्रक्रिया एवं कम श्रम वाली यह प्रणाली थरस्टन प्रणाली की तुलना में समान विश्वसनीय परिणाम भी देने वाली है। साथ-साथ इस प्रणाली में निर्णायकों के सम्भावित प्रातितिक (subjective) प्रभाव से छुटकारा दिला दिया गया है। पैमाने में प्रत्येक पद के महत्त्व को पूर्ण रुप से दर्शाया गया है।

लिकर्ट के इस पैमाने के निर्माण में निम्न अवस्थाएँ आती हैं :

(1) थरस्टन की भाँति इनमें भी किसी विशिष्ट विषय पर अभिवृत्ति मापने के लिए सर्वप्रथम उस विषय के सम्बन्ध में पक्ष-विपक्ष को बताने वाले समस्त विचारों को संकलित कर लेना चाहिए और उनको कथन अथवा प्रस्थापनाओं (porpositions) के रूप में लिख देना चाहिए। इन कथनों में समस्या पर पक्ष-विपक्ष से सम्बन्धित विचारों का समस्त विस्तार आ जाना चाहिए। कथनों के चुनाव में तथ्यों की अपेक्षा उनके महत्त्व एवं मूल्य पर बल दिया जाता है। लिकर्ट ने अमरीका में उत्पन्न जापानियों के प्रति अभिवृत्ति के माप में 99 कथनों का चुनाव किया। ये कथन समस्या पर पक्ष या विपक्ष के समस्त स्तर के विचारों को स्पष्ट रुप से प्रकट कर देते हैं। दूसरे शब्दों में, पक्ष-विपक्ष की राय की सभी तीव्रताएँ इनमें आ जाती हैं।

(2) प्रत्येक कथन के लिए अभिवृत्ति को पाँच श्रेणियों में विभाजित कर दिया—(1) पूर्ण सहमति, (2) सहमति, (3) अनिश्चित, (4) असहमति, (5) पूर्ण असहमति। किसी भी कथन या प्रस्थापना के विषय में उत्तरदाता अपने दृष्टिकोणों के अनुसार इन पाँच वर्गों में से एक पर निशान लगा देता है। ये पाँचों श्रेणियाँ कथनों के प्रति अभिवृत्ति नापने के पैमाना-बिन्दु (point scale) हैं। इन

[1] Renis Likert, '*A Technique for the Measurement of Attitudes*'; Archives of Psychology, No. 140 (June 1932), pp. 50–55.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पांचों पैमाना-बिन्दुओं को क्रम से व्यवस्थित करना अनिवार्य है। उनमें नहीं होने से उत्तर प्रभावित होते हैं। इसके अतिरिक्त इस निरन्तरता से श्रेणियों को महत्त्व के अनुसार भार भी दे दिया जाता है, 1, 2, 3, 4, 5, 4, 3, 2, 1। भार देने की यह व्यवस्था विषय के प्रति क्रमशः घटती सहमति अथवा असहमति को स्पष्ट करने में सहायक होती है। दूसरे शब्दों में, या असहमति के विभिन्न स्तरों का निरन्तर एवं व्यवस्थित क्रम इस प्रकार देने से प्राप्त किया जा सकता है। यदि अभिवृत्ति की दिशा पूर्ण असहमति है तो उक्त भार व्यवस्था ने क्रमशः 1 अथवा 5 पूर्ण सहमति का प्रतीक भार में परिवर्तन क्रमशः कम होती हुई सहमति को स्पष्ट करता है। समझने हम दूसरे प्रकार की भार-प्रणाली का उपयोग करेंगे। जिसमें अधिक सहमति अधिक भार-अंक एवं कम पर कम भार-अंक देंगे।

(3) इस प्रकार पैमाना-बिन्दुओं सहित कथनों को लिकर्ट ने 500 व्यक्तियों को दिये एवं उनसे कहा कि वे प्रत्येक कथन की उनके दृष्टिकोण के श्रेणी निश्चित करें कि वह उक्त पाँच श्रेणियों में से किस वर्ग में आता है वर्ग से सम्बन्धित अंकों में भार भी देदें।

(4) उक्त क्रिया सम्पन्न हो जाने के पश्चात प्रत्येक व्यक्ति के सभी में सम्बन्धित भार-अंकों का कुल योग मालूम कर लिया गया। इस कुल मालूम करने के लिए उन समस्त पदों के भार-अंकों को जोड़ दिया गया, सम्बन्धित व्यक्ति ने विभिन्न कथनों के प्रत्युत्तर में निशान या चैक मार्क इसी प्रकार सभी 500 उत्तरदाताओं के कुल भार-अंक मालूम कर लिये।

(5) प्रत्येक व्यक्ति के कुल भार-अंक (total score) मालूम होने पश्चात उन अंकों को उनकी मात्रा अथवा विस्तार के अनुसार क्रम में व्यवस्थित दिया गया जिसमें अधिकतम अंक को सबसे ऊपर रखा गया। अब इन कुल की संख्या को चार बराबर भागों में विभाजित कर उसमें से उसके प्रथम एवं चतुर्थक (अर्थात प्रथम और अंतिम 25 प्रतिशत) पदों को किसी कथन का मूल्य मालूम करने के लिए चुन लिया गया। ये दोनों चतुर्थक क्रमशः किसी एक समूह के लोगों के अधिकतम एवं न्यूनतम सहमति के स्तर के प्रतीक हैं। अधिकतम सहमति का अधिकतम भार दिया गया है। इसलिए अधिकतम सहमति का उच्चतर स्तर प्रकट होता है।

(6) कुल भार-अंकों वाले पदों का प्रथम और अन्तिम चतुर्थक हो किसी कथन के सम्बन्ध में इनसे सम्बन्धित व्यक्तियों के औसत भार-अंकों (scores) की गणना की जाती है। इसके लिए अभिवृत्ति की सभी श्रेणियों उनके पैमाना-बिन्दुओं को माप मानकर चतुर्थक समूहों की इकाइयों आवृत्तियों के रूप में व्यवस्थित करते हैं, जो यह प्रकट करते हैं कि किसी सम्बन्ध में इन चतुर्थक समूहों की इकाइयों में से कितने-कितने पूर्ण सहमत हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सहमत, तटस्थ, असहमत एवं पूर्ण असहमत आदि हैं। अभिवृत्ति की इन श्रेणियों को माप के रूप में लिखकर चतुर्थक समूहों की इकाइयों को आवृत्ति के रूप में लिख दिया जाता है और दोनों समूहों का समान्तर मध्यक (arithmetic mean) ज्ञात कर लिया जाता है। इन दोनों चतुर्थक समूहों के मध्यक मूल्यों का अन्तर ही सम्बन्धित कथन का पैमाना-मूल्य कहलाता है। इस प्रकार जब कभी कथनों का पैमाना-मूल्य निकाल लिया जाता है, जिसे अन्तर-मूल्य (discriminative value) कहते हैं, तो उन्हें क्रमशः व्यवस्थित कर लिया जाता है और जिन पदों या कथनों का अन्तर या पैमाना-मूल्य सापेक्षिक रूप से सबसे अधिक होता है, ऐसे कथनों को अभिवृत्ति के पैमाने का अन्तिम स्वरूप तैयार कर लेने के लिए चुन लेना चाहिए। अभिवृत्ति पैमाने के लिए पदों या कथनों को चुनने के लिए यह अन्तर-मूल्य मालूम कर लेना आवश्यक है।

(7) अन्तर-मूल्य प्राप्त करने के उपरान्त स्केल पर व्यवस्थित कर दिया जाता है। अब स्केल तैयार है।

(6) सामाजिक दूरी मापक पैमाने (Social Distance Scales)

सामाजिक सम्बन्धों में घनिष्ठता व निकटता, घृणा एवं दूरी दोनों पायी जाती हैं। समाज व्यक्तियों एवं समूहों के साथ व्यक्ति के सम्बन्धों में समान स्तर की घनिष्ठता अथवा घृणा, निकटता अथवा दूरी नहीं पायी जाती है। किन्हीं व्यक्तियों अथवा समूह के साथ मनुष्यों के ऐसे सम्बन्ध हो सकते हैं जिससे उनकी घनिष्ठता, निकटता एवं पड़ोसीपन लक्षित होता है, एवं कुछ के साथ घृणा, द्वेष, वैमनस्य का व्यवहार है। कुछ व्यक्तियों या समूहों के साथ विवाह, खानपान, आदि बन्धनों को स्वीकार किया जाता है तो दूसरों के साथ बोलचाल तक का भी व्यवहार नहीं होता। इस प्रकार की निकटता एवं दूरी संसार के व्यक्तियों, समूहों, प्रजातियों, राष्ट्रों, वर्गों आदि में पायी जाती है। लेकिन प्रश्न उठता है कि इस घनिष्ठता या दूरी का निश्चित माप कैसे किया जाय कि अमुक व्यक्तियों या समूहों में अमुक स्तर की घनिष्ठता या दूरी पायी जाती है। इसके उत्तर में सही कहा जा सकता है कि निकटता एवं दूरी की कोई निश्चित सीमा नहीं होती। इसके बीच में कई अवस्थाएँ आती हैं। कोई हमसे बहुत कम दूर है, दूसरा उससे अधिक दूर और तीसरा उससे भी अधिक। इस प्रकार निकटता अथवा दूरी की विभिन्न सीमाएँ समाज में पायी जाती हैं जिनका निश्चित माप एक समस्या है। इस निकटता एवं दूरी को सामाजिक दूरी मापक पैमानों द्वारा निश्चित अंशों में गुणनात्मक रूप से मापने का प्रयत्न किया गया है। इससे यह स्पष्ट हो सकेगा कि एक व्यक्ति या समूह का दृष्टिकोण दूसरा व्यक्ति या समूह उससे कितना निकट है अथवा दूर। इस दूरी को निश्चित माप करने के लिए बोगार्डस (Bogardus, E. S.) ने एक पैमाने का आविष्कार किया है।

बोगार्डस ने सामाजिक दूरी को मापने के लिए विभिन्न प्रकार के सम्बन्धों का निर्धारण किया है जो सामाजिक दूरी के विभिन्न स्तरों की ओर संकेत करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funded by IKS-MoE-Grant-2

थरस्टन के सम-दर्शनीय वर्गान्तर पैमाने के समान इसमें भी सम्बन्धों को निश्चित अथवा दूरी के विभिन्न स्तरों के निर्धारण के लिए अनेक निर्णायकों की सहायता है। कुछ पैमाने के निर्माण में बोगार्डस ने स्वयं अपने अनुभवों एवं निर्णयों का उपयोग किया है। बोगार्डस का यह पैमाना उच्चतम प्रातितिक (mighty subjective) अभिवृत्तियों को मापने के लिए है।

बोगार्डस के इस प्रकार के पैमाने में सर्वप्रथम किसी विषय में अभिवृत्ति के लिए सामाजिक दूरी की समाज श्रेणियों को स्पष्ट करने वाले सम्बन्धों का संख्या में चुनाव करना होता है।

बोगार्डस ने बड़ी संख्या में इस प्रकार के सम्बन्धों को चुना और इनको निर्णायकों को देकर कहा गया कि वे इन सम्बन्धों को विभिन्न स्तरों में इस प्रकार विभाजित कर दें जो क्रमशः बढ़ती हुई दूरी अथवा घटती हुई निकटता को संकेत करते हों। इस प्रकार व्यवस्थित सम्बन्धों के विभिन्न स्तरों में से, जो क्रमशः बढ़ती हुई दूरी को प्रदर्शित करते थे, प्रत्येक दूसरे के हिसाब से सात सम्बन्धों को चुना। इन सम्बन्धों के विभिन्न स्तरों को 1 से 7 तक स्वेच्छित अंक प्रदान कर दिये गये जो क्रमशः इसी अनुपात से बढ़ती हुई दूरी का प्रतिनिधित्व करते हैं। पैमाने के बायें तरफ के कॉलम में प्रजातियों, व्यवसायों, राष्ट्रीय समूहों, धर्मों आदि के नाम लिख दिये जाते हैं ताकि उनमें लोगों की अभिवृत्ति एवं उसके सम्बन्धित स्तर का पता लगाया जा सके। प्रजातियों के सम्बन्ध में लोगों की अभिवृत्ति जानने के लिए बोगार्डस द्वारा प्रयोग किये पैमाने का उदाहरण नीचे दिया गया है :

प्रजातीय दूरी मापक पैमाना

श्रेणी का स्तर	इंगलिस	स्वीडिस	पोल्स	कोरि...
1. विवाह करेंगे।				
2. क्लब में घनिष्ठ मित्र के रूप में रखेंगे।				
3. एक ही गली के पड़ोसियो की भाँति उनके साथ रहेगे।				
4. ऑफिस में उनके साथ काम करेंगे।				
5. अपने देश में नागरिक होने देंगे।				
6. अपने देश में केवल दर्शक की भाँति आने देंगे।				
7. अपने देश से निकाल बाहर करेंगे।				

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उक्त प्रकार का एक अनुसूचीनुमा पैमाना 1725 अमरीकन लोगों में उनकी अभिवृत्ति ज्ञात करने के लिए वितरित किया गया। साथ ही उनको निम्न निर्देश दे दिये गये :

(1) प्रत्येक अवस्था में दायें तरफ के पद को देखते ही तुरन्त जो भावात्मक प्रतिक्रिया हो वही दी जानी चाहिए।

(2) प्रत्येक प्रजाति को एक समूह मानकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की जाय। समूह के अपने परिचित उत्कृष्ट निकृष्ट सदस्यों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया न दी जाय। बल्कि सम्पूर्ण समूह के विषय में जो तुम्हारा दृष्टिकोण है, उसके बारे में सोचा जाय।

(3) अपने दृष्टिकोण एवं भावनाओं के अनुसार प्रत्येक प्रजाति के कॉलम में जितनी श्रेणियों को चाहो उनके आगे क्रॉस मार्क कर दिया जाय। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति किसी प्रजाति के साथ उक्त सात प्रकार के सम्बन्धों में से प्रथक 4 या 5 प्रकार के सम्बन्ध रखना चाहता है तो उसे चाहिए कि वह प्रथम चार या पांच के आगे क्रॉस मार्क कर दे, शेष दो को छोड़ दे।

प्रत्युत्तर प्राप्त हो जाने पर प्रत्येक प्रजाति वर्ग के सम्बन्ध में सम्बन्धों की प्रत्येक श्रेणी का कुल योग मालूम कर लिया गया और उसको प्रतिशत में लिख लिया गया। कुल 1725 उत्तरदाताओं को 100 मानकर उसके अनुपात में सभी उत्तरों का प्रतिशत निकाल लिया गया।

(7) तीव्रता मापक पैमाने (Intensity or Rating Scales)

उपर्युक्त उल्लेखित प्रणालियों द्वारा यद्यपि विषय के प्रति पक्ष-विपक्ष, सहमत-असहमत आदि की अभिवृत्ति का पता लगाया जा सकता है, लेकिन उनमें किसी एक प्रकार की रुचि या अभिवृत्ति की तीव्रता या गहनता को मापने की कोई व्यवस्था नहीं है। उदाहरण के लिए, इस किसी विषय में सहमत है, लेकिन इस 'सहमत होने' का क्या माप है ? हम किस मात्रा तक सहमत हैं ? क्या हमारी सहमति की मात्रा कम-ज्यादा है ? अथवा हम पूर्ण रूप से सहमत हैं या कुछ सीमा तक ही सहमत हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि हमारे लिए किसी अभिवृत्ति की तीव्रता और उसके विभिन्न स्तरों का माप करना अत्यन्त कठिन है। तीव्रता-मापक पैमाने रुचियों, अभिवृत्तियों की विभिन्न श्रेणियों का माप करने के लिए कार्य में लाये जाते हैं। जब दृष्टिकोण या अभिवृत्ति पूर्ण निश्चित एवं निर्दिष्ट प्रकार की नहीं होती तब यह प्रणाली अत्यधिक उपयोगी है। इसमें द्वन्द्वात्मक विभाजन के आधार पर रुचि या अभिवृत्ति का माप नहीं किया जाता जिसमें पक्ष भी हो और विरोधी भी, अनुकूलता भी हो और प्रतिकूलता भी। इनमें केवल एक पक्ष की तीव्रता का माप करना होता है। दो प्रतिकूल स्थिस्तियों का माप इसमें नहीं होता, बल्कि एक ही स्थिति की तीव्रता मापी जाती है। इन तीव्रता-मापक पैमानों को मूल्य-मापक पैमाने (rating scale) भी कहा जाता है, जो किसी अभिवृत्ति के स्तर को निर्धारित करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ये मूल्य-मापक पैमाने तीन, चार या पाँच पैमाना-बिन्दु (point scal हो सकते हैं; इससे अधिक पैमाना-बिन्दु लेकर भी पैमाना तैयार किया जा स है; लेकिन तीन और पाँच पैमाना-बिन्दु लेना अधिक श्रेष्ठ माना जाता है। इस का पैमाना तैयार करने के लिए किसी पक्ष की अभिवृत्ति से सम्बन्धित विभिन्न के शब्दों का; जैसे—सहमत पक्ष, अनुकूल, उपयुक्त आदि का उपयोग करना प है और प्रत्येक अभिवृत्ति की गहनता के अनुसार उनसे सम्बन्धित शब्दों का करना पड़ता है। इस प्रकार के पैमानों के लिए पहले विषय को लेकर सम्बन्धित विभिन्न कथनों का निर्माण कर लिया जाता है और उनको तीन पाँच पैमाना बिन्दुओं के स्वरूप में व्यवस्थित कर लिया जाता है ताकि उत्तरदाता कथन के सम्बन्ध में अपने दृष्टिकोणों की गहनता को अभिव्यक्त कर सके। उदा के लिए, निम्न प्रकार से कथनों को व्यवस्थित किया जाता है :

कथन—"बेकारी समाज के लिए अभिशाप है।"

पूर्ण सहमत	सहमत	अनिश्चित	असहमत	पूर्ण अस
+ 2	+ 1	0	— 1	— 2

कथन—"कालिदास विश्व का सर्वश्रेष्ठ कवि है।"

पूर्ण सहमत	सहमत	अनिश्चित	असहमत	पूर्ण अस
+ 2	+ 1	0	— 1	— 2

उपर्युंत उदाहरणों में प्रत्येक कथन के सम्बन्ध में अभिवृत्ति के स्तरों स्पष्ट दिया जाने पर भी उनको अंक दे दिये गये हैं। साधारणतया तटस्थ, अनि औसत आदि के केन्द्रीय पैमाना-बिन्दुओं को शून्य अंक दिया जाता है और तरफ प्रत्येक बिन्दु को एक-एक अंक दे दिया जाता है। लेकिन अनुकूल अभिवृत्ति धन (+) का एवं प्रतिकूल अभिवृत्ति के लिए ऋण (—) का निशान प्रयुक्त जाता है। ऐसी व्यवस्था केवल उसी स्थिति में सम्भव है जब अभिवृत्ति के समी इस प्रकार व्यवस्थित हों कि एक-दूसरे के बीच की दूरी समान हो। उक्त उदा में ऐसा ही किया गया है। ऐसा पैमाना 'सम-वर्गान्तर' पैमाना कहलाता है। लें कभी-कभी यह दूरी समान न होकर असमान होती है। उस स्थिति में गहनता-म पैमाना असमान वर्गान्तर वाला होगा जिससे दो स्तरों या पैमाना-बिन्दुओं की असमान होगी और वह पैमाना (continuum) के रूप में होगा। इसका उदा नीचे दिया जा रहा है :

विशेष आवास सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए :

(1) केवल समस्त निर्धनों को।

(2) केवल शहरी निर्धनों को।

(3) केवल निर्धनों एवं मध्यस्थ श्रेणी के लोगों को।

(4) पूर्ण धन-सम्पन्न के अतिरिक्त सभी लोगों को।

(5) सबको।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामान्यतया तीन बिन्दु या पाँच बिन्दु पैमानों के अन्तर्गत किसी भी प्रकार अभिवृत्ति से सम्बन्धित विभिन्न स्तर की शब्दावली निम्न प्रकार से चुनी जाती है :

तीन बिन्दु पैमानों के उदाहरण

1	2	3
पूर्ण सहमत	सहमत	पूर्ण असहमत
हाँ	तटस्थ	नहीं
औसत से ऊपर	औसत	औसत से नीचे
अनुकूल	तटस्थ	प्रतिकूल
पक्ष	तटस्थ	विपक्ष

पाँच बिन्दु पैमानों के उदाहरण

1	2	3	4	5
पूर्ण सहमत	सहमत	अनिश्चित	असहमत	पूर्ण सहमत
अत्यधिक उच्च	औसत से कुछ उच्च	औसत	औसत से कुछ नीचे	अत्यधिक निम्न
अत्यधिक पसंद	पसंद	तटस्थ	नापसंद	बिलकुल नापसंद
पूर्ण अनुकूल	अनुकूल	तटस्थ	प्रतिकूल	पूर्ण प्रतिकूल

इसके अतिरिक्त किसी भी कथन के सम्बन्ध में अभिवृत्ति की प्रत्येक श्रेणियों (सम-वर्गान्तर) 1, 2, 3, 4, 5, अथवा 5, 4, 3, 2, 1, आदि के रूप में भार दिया जा सकता है। 5, 4, 3, 2, 1, प्रकार से भार देने पर यह स्पष्ट प्रकट हो जाता है कि प्रत्येक कथन के सम्बन्ध में अत्यधिक अनुकूल उत्तर सर्वाधिक मूल्य एवं अत्यधिक प्रतिकूल उत्तर न्यूनतम मूल्य वाला होता है। इस प्रकार इसमें घटता हुआ मूल्य (5 से 4, 3, 2, 1) इस बात का प्रतीक है कि अनुकूल अभिवृत्ति क्रमश: घट रही है और प्रतिकूलता की ओर बढ़ रही है। लुईस गुटमैन (Louis Guttman) ने अभिवृत्ति की गहनता को मापने के लिए इसी प्रकार की पद्धति का प्रयोग किया था। सभी कथनों को तीन या पाँच पैमाना-बिन्दुओं में व्यवस्थित कर दिया गया जो किसी कथन के सम्बन्ध में अभिवृत्ति के विभिन्न स्तरों के प्रतीक थे। कथनों को 5, 4, 3, 2, 1 के अनुसार भार दे दिया गया। इस प्रकार अभिवृत्ति की गहनता को मापने का गुटमैन ने प्रयत्न किया था। किसी विषय के प्रति अभिवृत्ति की विभिन्न श्रेणियों; यथा—पूर्ण सहमत, सहमत, अनिश्चित असहमत एवं पूर्ण असहमत को क्रमश. 5, 4, 3, 2, एवं 1 के अंकों का भार दे दिया गया।

इस प्रकार मूल्य-मापक पैमानों का उपयोग किसी अभिवृत्ति की गहनता एवं स्तर को मापने के लिए किया जाता है। इस प्रकार के पैमानों में भी किसी पद के मापन एवं उनकी श्रेणी निश्चित करने के लिए निर्णायकों का सहयोग लिया जा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सकता है। सम्पूर्ण पैमाने में एक पद का क्या स्थान अथवा क्या मूल्य है, का निर्णय मूल्य-मापक पैमानों द्वारा किया जाता है। किसी प्रसिद्ध नेता आदि की लोकप्रियता जानने के लिए यह प्रणाली अधिक उपयुक्त है।

(8) पदसूचक पैमाने (Ranking Scales)

पदसूचक पदांकन सम्बन्धी पैमानों का अभिप्राय ऐसे पैमानों से है जो पद का कुछ अन्य पदों की तुलना में स्थान निश्चित करते हों। यह प्रणाली से तीव्रता मापक पैमानों के समान ही है, लेकिन अन्तर केवल इतना ही है कि तीव्रता मापक प्रणाली में किसी पद का स्थान सम्पूर्ण पैमाने में निश्चित करते है वहाँ पदसूचक पैमानों में पद का स्थान-मूल्य कुछ थोड़ी-सी चुनी हुई इकाइयों की तुलना करके निश्चित किया जाता है। इस प्रकार के पैमाने का सुन्दर होरोविट्ज (Horowitz) द्वारा प्रजातीय पक्षपात को मापने के लिए अपनाई गई पद्धति है। इसमें भी पैमाने के लिए इकाइयों के चुनाव में जजों को प्रयुक्त किया जाता है।

होरोविट्ज ने अपनी इस पद्धति में 12 तस्वीरों को चुना जिनमें ... तथा 4 श्वेत बच्चों की थीं। इन 12 तस्वीरों का एक-एक सेट उसने ... बच्चों को दिया तथा उनको कहा गया कि वे सर्वप्रथम अपने सेट में से ... फोटो निकालें, दूसरे नम्बर पर इससे कम अच्छा और तीसरे पर और ... प्रकार क्रमशः कम अच्छे लगने वाले बच्चों की तस्वीरें निकालते जायँ और ... मिकता के अनुसार प्रत्येक को व्यवस्थित कर दें। इसके अतिरिक्त उनको ... गया कि जिसको सर्वाधिक प्राथमिकता दी है, उसे 1 अंक दिया जाय, जिसे ... प्राथमिकता दी है उसे 2 और जिसे तीसरी प्राथमिकता दी है उसे 3 अंक ... इसी प्रकार 12 ही चित्रों को प्राथमिकता के क्रम से अंक प्रदान किये ... ऐसा करने के पश्चात प्रत्येक बच्चे द्वारा श्वेत एवं नीग्रो को दिये गये अंक ... लिया जाय। ये अंक ही क्रमशः उस बच्चे का श्वेत एवं नीग्रो के प्रति ... माप है। जिसमें जितने कम अंक होंगे, उनको प्राथमिकता उतनी ही अधिक ... कम नम्बर पाने वाला सर्वाधिक प्रिय होगा और जितने अधिक अंक होंगे ... मिकता उतनी ही कम दी होगी। श्वेत के प्रति दृष्टिकोण का जहाँ तक प्रश्न ... प्राप्त होने वाले अंक कम से कम 10 होंगे अर्थात कोई बच्चा यदि प्रथम चार ... ताएँ चारों नीग्रो बच्चों को दे देता है तो प्राथमिकता के अंकों का योग 10 (1+2+3+4) होगा। यदि उनको प्रथम के स्थान पर अन्तिम चार प्राथमिकताएँ ... तो अधिकतम अंक 42 $(9+10+11+12)$ होंगे। इस प्रकार ... प्राथमिकता के अंकों का विस्तार 10 से 42 तक होगा। ऐसी स्थिति में ... के श्वेतों के प्रति दृष्टिकोण का सम्भावित माप $\frac{10+42}{2}=26$ अंक ... एवं अधिकतम अंकों का औसत होगा। यदि अध्ययन द्वारा वास्तव ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क आते हैं तो उसका अभिप्राय यही है कि उसका श्वेतों के प्रति दृष्टिकोण अनुकूल और यदि 26 से ऊपर अंक आते हैं तो श्वेतों के प्रति प्रतिकूल दृष्टिकोण के तीक हैं।

होरोविज ने उसके पश्चात उन्हीं 12 चित्रों को बच्चों को देकर पुनः कहा क विभिन्न परिस्थितियों में प्राथमिकता के अनुसार उनको पुनः व्यवस्थित करो। सने बच्चों के सामने पृथक-पृथक 12 अवस्थाएँ रखीं जिनमें पृथक-पृथक रूप से 12 चित्रों को प्राथमिकता से व्यवस्थित करने के लिए कहा गया। उनमें से कुछ इस कार हैं—(1) कार के पास बैठना, (2) तुम्हारी पार्टी में आना, (3) तुम्हारे थ लंच पर घर जाना, (4) तुम्हारे बिलकुल पड़ोस में रहना।

प्रत्येक अवस्था को पृथक-पृथक लिया गया एवं उनके अंकों की गणना की गी। प्रत्येक अवस्था में चार चित्र श्वेत बालकों के थे, इससे अधिक नहीं। यदि मस्त 12 ही अवस्थाओं में देखा जाय तो श्वेत बालकों की अधिकतम संख्या 4 × 12=48 होगी। इन 48 को 100 मानकर श्वेत बालकों का वास्तविक प्रतिशत त कर लिया गया। चूंकि प्रत्येक अवस्था में 12 में से 4 श्वेत बालकों का योग है सलिए समस्त अवस्थाओं में श्वेत बालकों का सम्भावित रूप से यही अनुपात अर्थात् $33\frac{1}{3}\%$ रहना चाहिए।

अभिवृत्ति मापक-पैमानों की सीमाएँ
(Limitations of Attitude Scales)

(1) अभिवृत्तियों की गणनात्मक माप करने वाले विभिन्न प्रमुख-प्रमुख मानों का ऊपर उल्लेख किया जा चुका है। समाजविज्ञानों के शैशव-काल में अभी पैमाने अपने विकास की प्रारम्भिक अवस्था में ही हैं। यही कारण है कि हम इन मानों द्वारा अभिवृत्तियों का इतनी आसानी एवं सरलता से माप नहीं कर सकते तनी सरलता से भौतिक घटनाओं का माप उनके सम्बन्धित मापक यन्त्रों से कर कते हैं।

(2) कभी-कभी तो हमें पैमाना-मूल्य मालूम करने में भी अत्यधिक जटिल क्रियाएँ सम्पन्न करनी पड़ती हैं जो एक साधारण व्यक्ति के सामर्थ्य के बाहर हैं।

(3) इस प्रकार निर्मित किये गये पैमानों के लिए आवश्यक नहीं कि वे र्वकालीन एवं सार्वभौमिक हों। देश एवं काल की सीमाएँ उनके महत्त्व को मित कर देती हैं। कोई पैमाना विभिन्न समाजों में लागू नहीं हो सकता। इसका रण सामाजिक परिवर्तनों की तीव्रगति का होना है; जिसके कारण मनुष्य की भिवृत्तियाँ एवं दृष्टिकोण भी तेजी से बदल रहे हैं। साथ-साथ विभिन्न व्यक्तियों एवं मूहों के सामाजिक मूल्य भिन्न-भिन्न होने के कारण उन सबके लिए एक ही पैमाना यार नहीं किया जा सकता है।

(4) उक्त सीमाओं के अतिरिक्त भी इन पैमानों की विश्वसनीयता एवं माणिकता को मापने की कोई ठोस व्यवस्था नहीं है। यह सदा सन्देह बना रहता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि ये सामाजिक घटना का प्रामाणिक एवं विश्वसनीय माप कर सकने में, हैं अथवा नहीं।

उक्त सीमाएँ विज्ञान की अविकसित एवं शैशव अवस्था में सामने आ... विज्ञान के विकास के साथ इन सीमाओं को हटाया जा सकेगा एवं नवीन ... पैमानों का निर्माण किया जा सकेगा।

प्रश्न

1. अभिवृत्ति का क्या अर्थ होता है ? इसके विकास में कौन-से ...यक हैं ?

(What do you mean by attitude ? What are the determ... in its development ?)

2. अभिवृत्तियों में परिवर्तन किस प्रकार किया जा सकता है ?

(How can change is attitudes be brought ?)

3. संप्रेरणा और अभिवृत्तियों में भेद कीजिए। अभिवृत्तियाँ किस प्रका... जाती हैं ?

(Distinguish between motives and attitudes. How a... tudes measured ? Agra, M. A. Sociology, 1963.)

4. सामाजिक अभिवृत्तियों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write a short note on Social Attitudes. Agra, M. A. ...logy, 1964.)

5. अभिवृत्तियों और अभिमतों में भेद कीजिए। अभिवृत्तियाँ और ... किस प्रकार मापे जाते हैं ?

(Distinguish between attitudes and opinions. How a... tudes and opinions measured ? Agra, M. A. Sociology, 1965.)

6. अभिवृत्ति और अभिमत पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(Write short note on attitude and opinion. Agra, ... Sociology, 1969.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

20

मानव सीखना
(Human Learning)

मनुष्य समाज में कुछ न कुछ सीखता ही रहता है। सीखने की यह प्रक्रिया जीवनपर्यन्त चलती रहती है। वृद्धावस्था में भी मनुष्य सीखता है। सीखना मनुष्य के लिए अनिवार्य है। इसके बिना उसका कार्य ही नहीं चल सकता। सीखना समाजीकरण की प्रक्रिया का आधार है। इस अध्याय में हम सीखने के अर्थ, प्रकृति, तत्त्व आदि पर प्रकाश डालेंगे। सर्वप्रथम हम इसके अर्थ को समझाने का प्रयत्न करेंगे।

सीखने का अर्थ
(Meaning of Learning)

अनुभूति के परिणामस्वरूप व्यवहार का परिवर्तन अथवा परिमार्जन ही सीखना कहलाता है। पर्यावरण में परिवर्तन के साथ-साथ व्यक्ति के व्यवहार में भी परिवर्तन होते हैं। यह स्पष्ट रहना चाहिए कि प्रत्येक परिवर्तन को हम सीखने की संज्ञा नहीं दे सकते। मान लीजिए कोई छत पर से गिरकर मूर्छित हो जाता है, तो इसे हम सीखना नहीं कहेंगे। सीखने में प्रमुख बात यह है कि वह अर्जित योग्यता प्रदान करता है। इसमें सापेक्षिक रूप से स्थायित्व भी होना आवश्यक है। कहने का तात्पर्य यह है कि यह व्यवहार में स्थायी परिवर्तन लाता है। इसमें प्रगतिशीलता होती है।

सीखने की परिभाषा करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "सीखने की इस प्रकार व्याख्या की जा सकती है कि प्रत्युत्तर व्यवस्था में जो चेतनता या अचेतनता में हुआ या नयी उत्तेजना और पुरानी या नये प्रत्युत्तर से सम्बन्धित एक परिवर्तन हुआ हो।"[1]

सीखने की वैसे तो बहुत-सी परिभाषाएँ की गयी हैं, परन्तु मिकागो की परिभाषा काफी मान्य है। उसने लिखा है, "सीखना जैसा कि हम इसको मापते हैं, उस के कार्य के रूप में सापेक्षत: व्यवहारों में एक स्थायी परिवर्तन है। बहुत से

---

[1] "Learning may be fined as a change in response system brought about by deliberate or unconscious linkage or association of new stimuli and old or new responses." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 70.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषयों में, इस परिवर्तन की एक दिशा होती है जो व्यक्ति की तात्कालीन ... की स्थिति को सन्तुष्ट करता है।"[1]

वैसे तो समस्त सीखना ही सामाजिक है, पर समाज के निश्चित तथ्य ... सामाजिक संरचना कहलाता है। किम्बाल यंग ने सामाजिक सीखने की ... करते हुए लिखा है, "सामाजिक सीखना कुशलता, तथ्यों और मूल्यों की ... ओर संकेत करता है जो हमारे अभ्यास से अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क के परि... आता है।"[2]

सीखने के सम्बन्ध में निम्न तथ्य महत्त्वपूर्ण हैं :

(1) सीखना एक सहज क्रिया (reflex action) नहीं है।

(2) सीखने का सम्बन्ध किसी प्रयोजन से होता है। सीखना ... शारीरिक स्तर पर अभियोजनात्मक क्रिया है।

(3) इसके फलस्वरूप व्यक्ति में क्षणिक तथा स्थायी परिवर्तन हो...

(4) व्यक्ति सामाजिक और असामाजिक व्यवहार दोनों ही सी...

(5) सीखना ठीक या गलत हो सकता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं एवं विवेचन से 'सीखने' का अर्थ कुछ स्पष्ट ... जब हम इसे और स्पष्ट रूप से समझेंगे। इसके अन्तर्गत अनेक क्रियाएं ... हम पृथक-पृथक विभाग करके समझने का प्रयत्न करेंगे।

(1) सीखना व्यवहार में परिवर्तन लाना होता है—सीखने का मु... है व्यवहार में परिवर्तन लाना। गिलफोर्ड ने लिखा है, "हम शब्द को ... अति विस्तृत रूप में यह कहकर कर सकते हैं कि सीखना व्यवहार ... स्वरूप, व्यवहार में कोई परिवर्तन है।"[3] गिलफोर्ड के अनुसार 'व्यवहार ... (change in behaviour) ही सीखना है। प्रश्न यह है कि व्यवहार ... किस प्रकार उत्पन्न होता है। गिलफोर्ड ने कहा है कि यह 'व्यवहार के परि... (resulting from behaviour) के कारण होता है। इससे उनका संकेत ... अन्तःक्रिया (interaction) की ओर है। व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के ... क्रियाएँ करता है और अन्तःक्रिया की प्रक्रिया में दूसरों से प्रभावित ह... दूसरों को प्रभावित करता है। अन्तःक्रिया की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप ... व्यक्तियों के व्यवहार से प्रभावित होता है और अपने व्यवहार में परिवर्तन...

---

1 "Learning as we measure it, is relatively permanent ... behaviours as a function of practice."

2 "Social learning refers to the acquisition of skills, ... values which come about as a result of practice in ou... with other persons." K. Young, *A Handbook of Socio... logy*, p. 34.

3 "We may define the term very broadly in saying that le... any change in behaviour, resulting form behaviour." J. ... ford, *General Psychology*, p. 343.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही 'व्यवहार में परिवत्तर्न' सीखना कहलाता है। हर व्यक्ति अन्तःक्रिया में ही सीखता है, क्योंकि शून्य में कोई भी व्यक्ति कुछ नहीं सीखता। हर व्यक्ति को समाज में ही रहकर सीखना पड़ता है। एकान्त में कोई कुछ नहीं सीख सकता, क्योंकि एकान्त में कोई अन्तःक्रिया सम्भव नहीं है। अन्तःक्रिया के लिए दो या दो से अधिक व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के साथ व्यवहार के परिणामस्वरूप अपने व्यवहार में परिवर्तन लाता है या हो जाता है। यही 'व्यवहार में परिवर्तन' सीखना कहलाता है। गिलफोर्ड ने अपनी परिभाषा के द्वारा यही तथ्य स्पष्ट किया है।

किम्बाल यंग का कहना है कि व्यक्ति की प्रत्युत्तर तन्त्र (response system) में जो परिवर्तन नवीन उत्तेजनाओं अथवा नयी या पुरानी प्रतिक्रियाओं से चेतन या अचेतन में होते हैं, उन्हें सीखना कहते हैं। उनके अनुसार सीखना उत्तेजना-प्रत्युत्तर तन्त्र (stimulus response systems) में होने वाले परिवर्तनों को कहते हैं।[1] इन परिवर्तनों के कारण व्यक्ति जैसा व्यवहार पहले करता था, वैसा नहीं करता है, अपितु भिन्न प्रकार से करता है।[2] बहुत से काम हम एक प्रकार से करते हैं। जानबूझ कर या अनजाने हमारे इस काम करने के प्रकार में अन्तर आ जावे, तो यह अन्तर ही सीखना है। हम हाथ से खाना खाते हैं। चम्मच-काँटे से खाना प्रारम्भ कर देवें, तो यह सीखना है। हमें टाइप करना नहीं आता, हम इसे जानना प्रारम्भ कर देवें, तो यह सीखना कहलायेगा। पर्यावरण के साथ हम जाने-अनजाने अनेक परिवर्तनीय-अनुकूलन करते हैं, यह भी सीखना है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "सीखना व्यक्ति की अनुकूलन तन्त्र में होने वाले उन परिवर्तनों को कहते हैं, जो पर्यावरण में उत्पन्न उत्तेजनाओं पर निर्भर होते हैं।" पर्यावरण से अनुकूलन करने में हम में अनेक परिवर्तन होते हैं। जब एक ग्रामीण नगर में आता है, तो नगर के व्यवहार—प्रतिमान, रीतिरिवाजों के अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन करता है। यह परिवर्तन सीखना कहलाता है।

पर हर परिवर्तन सीखना नहीं कहलाता। किम्बाल यंग ने लिखा है कि बहुत से परिवर्तन व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं में सीखने के अतिरिक्त कारणों से भी हो सकते हैं। जैविक परिपक्वता (maturation) के कारण व्यवहार में परिवर्तन होता है। आयु-वृद्धि के कारण अनेक परिवर्तन होते हैं। इन परिवर्तनों को हम सीखना नहीं कहेंगे। थकावट, नशीली वस्तुओं के सेवन आदि से जो परिवर्तन व्यवहार में उत्पन्न होते है, उन्हें भी सीखना नहीं कहते।

---

1. "Learning has to do with certain changes in the stimulus-response systems of individual." Kimbal Young, *Personality and Problems of Adjustment*, P. 7.
2. "It consists in doing things differently than we did them before." *Ibid*, p. 7.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) **सीखना व्यवहार का संगठन है**—सीखना एक प्रकार से … संगठन है, जो नयी आदतों में प्रकट होता है। गैरेट ने लिखा है, "सीखना … की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रक्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं को नयी … संगठित करते हैं।" इस परिभाषा से स्पष्ट है कि सीखना व्यवहार का … जो प्रक्रियाओं, अनुक्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं को संगठित रूप प्रदान कर… नयी आदतों में प्रकट करता है। इस सीखने की प्रक्रिया के द्वारा हम … व्यवहार के तत्त्वों को एकत्रित करते हैं और उन्हें श्रेणीबद्ध करते हैं। … एवं व्यवस्थित रूप ही नयी आदतों में प्रकट होता है। गिलफोर्ड के … सीखना व्यवहार का संगठन है। जब कोई व्यक्ति पढ़ना सीखता है तो … ज्ञान करता है, फिर अक्षरों को मिलाना सीखता है। फिर उसे पढ़ना आ… व्यवहार का संगठन है। इसे ही सीखना कहते हैं।

(3) **'सीखना' नयी क्रियाओं एवं प्रक्रियाओं का पुष्टीकरण है**—… का कहना है कि सीखना नयी क्रियाओं एवं प्रक्रियाओं का पुष्टीकरण (… ment) है। वुडवर्थ ने इसी मत का समर्थन करते हुए लिखा है, "सीखने … कोई नया कार्य करना, बशर्ते कि नये कार्य का पुष्टीकरण हो और वह बाद … में पुनः प्रकट हो।"[1] नयी क्रियाओं के पुष्टीकरण सीखने की क्रिया … महत्त्व रखता है और वह सीखने का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। सीखने में जो … सफल होती हैं, उन्हीं का पुष्टीकरण होता है, जो असफल होती हैं, … समाप्त हो जाती हैं। सफल क्रियाओं को व्यक्ति पुनः दोहराता है और … उनका पुष्टीकरण होता है। इसीलिए यह कहा जाता है कि सीखना नयी … प्रक्रियाओं का पुष्टीकरण है।

(4) **सीखना व्यवहार में स्थायी परिवर्तन लाना है**—अभ्यास के द्वा… व्यवहार में स्थायी परिवर्तन लाता है, इसे सीखना कहते है। बर्नहार्ट ने … "एक परिस्थिति-विशेष में किसी एक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए … समस्याओं को सुलझाने के लिए अभ्यास द्वारा एक व्यक्ति के कार्य में बहुत … कम स्थायी परिवर्तन होने को सीखना कहते हैं।"[2] व्यक्ति किन्हीं उद्देश्यों … के लिए अथवा किन्हीं समस्याओं को सुलझाने के लिए कुछ प्रयत्न करता है, … जिन क्रियाओं के द्वारा वह सफल होता है, उन्हें पुनः दोहराता है और उनक… के द्वारा पुष्टीकरण करता है। इस अभ्यास के द्वारा वह अपने व्यवहार में …

1 "Learning consists in doing something new provided … activity is reinforced and reappears in later activities…" Woodworth, *Psychology*, p. 522.

2 Learning is defined as "the more or less permanent mod… of an individual's activity in a given situation, due to … attempt to achieve some goal or slove some problem…" … Hardt, *Practical Psychology*, p. 259.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिवर्तन लाता है, यही सीखना कहलाता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "सामाजिक सीखना कुशलताओं, तथ्यों एवं मूल्यों को अर्जित करने को कहते हैं, जो कि हमारे अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में रहकर अभ्यास के द्वारा प्राप्त किया जाता है।"[1]

सीखना और परिपक्वता
(Learning and Maturation)

शारीरिक परिपक्वता के परिणामस्वरूप व्यक्ति में व्यवहार-परिवर्तन होते हैं। आयु के साथ-साथ ये परिवर्तन होते हैं। ये प्रकृति की देन हैं और स्वतः होते रहते हैं। इन परिवर्तनों को हम सीखना नहीं कह सकते। जब ये परिवर्तित व्यवहार स्वतः न होकर व्यक्ति के प्रयत्नों के फलस्वरूप हों तब हम उसे सीखना कहेंगे, अन्यथा नहीं।

सीखने और परिपक्वता में यह अन्तर अवश्य है, फिर भी वे एक ही क्रिया के दो पक्ष कहे जा सकते हैं। मनुष्य के विकास पर इन दोनों का प्रभाव पड़ता है। दोनों का एक-दूसरे से घनिष्ठ सम्बन्ध है। वास्तव में व्यक्ति जब तक अभीष्ट परिपक्वता तक नहीं पहुँच जाता, वह किसी सीखने की क्रिया को न कर सकता है और न लाभ ही उठा सकता है।

सीखने की परिभाषा में हम स्पष्ट ही कर चुके हैं कि सीखना व्यवहार के परिवर्तन से सम्बन्धित है। इसलिए हमें व्यवहार की इकाई, जिसमें सीखना परिवर्तन लाता है, को समझ लेना चाहिए।

व्यवहार की इकाइयाँ
(Units of Behaviour)

सक्रिय व्यवहार की इकाई प्रत्युत्तर है। प्रत्युत्तर (rosponse) की परिभाषा करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "प्रत्युत्तर किसी निर्दिष्ट दिशा में कार्य परिवर्तन है, मांसपेशियों की गति के प्रभाव से या ग्रन्थियों के रस रूपी पदार्थ से परिवर्तित होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रत्युत्तर एक गति भी है जो किसी विशिष्ट उद्देश्य या लक्ष्य की प्राप्ति के प्रयत्न के लिए किया जाता है।"[2]

प्रत्युत्तर चालकों (drives) को सन्तुष्ट करते हैं। प्रत्युत्तर उसी समय प्रभावशाली होते हैं जब उत्तेजकों से प्रभावित होते हैं। उत्तेजना प्रत्युत्तर को आगे लाती है। सीखने का सिद्धान्त यह बताता है कि किस प्रकार उत्तेजना परिवर्तन लाती है और प्रत्युत्तर को उत्पन्न करती है। इन तथ्यों के आधार पर एक और समुचित परिभाषा किम्बाल यंग ने की है, "प्रत्युत्तर एक माँसपेशी की गति या ग्रन्थि का रस है जो स्वयं के स्नायविक स्रोतों से क्रियाशील होता है, जिसके लिए कहा जा सकता

---

1 "Social learning refers to the acquisition of skills, facts and values which come about as a result of practice in our contact with other persons." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 34.

2 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 34.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि किसी निर्दिष्ट लक्ष्य या उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उत्तेजना के रूप में सम्बन्धित हो जाता है।"[1]

प्रत्युत्तरों के प्रकार

प्रत्युत्तरों को दो प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम, प्रत्युत्तर (instrumental responses) और द्वितीय संकेत उत्पन्न करने वाला (cue-producing responses)।

यान्त्रिक प्रत्युत्तर की परिभाषा देते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "... प्रत्युत्तर वह है जिसका प्रमुख कार्य सावयव के बाह्य पर्यावरण के सम्बन्ध में ... लिक रूपान्तर उत्पन्न करना है।"[2]

यान्त्रिक प्रत्युत्तर के उदाहरण हैं—कपड़े पहनना, कार चलाना, ... पीटना इत्यादि।

संकेत उत्पन्न करने वाला प्रत्युत्तर एक प्रकार की ऐसी उत्तेजना है ... प्रत्युत्तर की ओर संकेत करता है और उसे उत्पन्न करता है। किम्बाल यंग ने ... परिभाषा करते हुए लिखा है, "संकेत-उत्पन्न प्रत्युत्तरों का कार्य अन्य प्रत्युत्तरों ... उत्तेजना के रूप में कार्य करना होता है।"[3]

आदत परिवार
(Habit Families)

इस स्थल तक अभी मुख्य रूप से एकाकी प्रत्युत्तर (single respo... ही विवेचन किया गया है। जब कोई उत्तेजक प्रत्युत्तर उत्पन्न करता है ... सम्बन्ध केवल माँसपेशियों के सेट से होता है। इससे सदैव लक्ष्य की प्राप्ति ... इससे ऐसा प्रतीत होता है कि व्यवहार सदैव कठोर ही होता है। हम भलीभाँति ... हैं कि व्यवहार अस्थिर एवं परिवर्तनशील होता है, अतः यह प्रश्न उठता है ... प्रत्युत्तर निश्चित या 'स्टीरियोटाइप्ड' होते हैं तो व्यवहार परिवर्तनशील क्यों है ... इसका हल ढूंढ़ने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने आदत परिवार की धारणा विकसित ...

आदत परिवार को प्रत्युत्तरों की व्यवस्था भी कहते हैं। इसकी ... करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "आदत परिवार साधारणतः प्रत्युत्तरों ... वर्ग है और यह वर्ग, व्यक्ति प्रत्युत्तरों के समान, कुछ विशिष्ट लक्ष्यों या उद्दे... ओर संकेत द्वारा परिभाषित किया जाता है।"

प्रत्युत्तर और आदत परिवार के भेद को स्पष्ट करते हुए किम्बाल ... लिखा है, "इन दोनों में भेद यह है कि आदत परिवार दो या अधिक और प्रायः ... अधिक, प्रत्युत्तरों से संगठित रहता है।"

---

1 K. Young. *A Handbook of Social Psychology*, p. 34.

2 *Ibid*, p. 35.

3 "The function of cue-producing response is to act as a st... for another response." *Ibid*, p. 35.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक क्रिया एक प्रकार से आदत परिवार का पर्यायवाची शब्द है। एक ही उद्देश्य की पूर्ति के लिए व्यक्ति विभिन्न प्रकार के प्रत्युत्तर का प्रयोग कर सकता है। आदत परिवार एक इकाई के रूप में कार्य करते हैं। यदि एक प्रत्युत्तर में परिवर्तन लाना है तो इकाई के अन्य प्रत्युत्तरों में भी परिवर्तन लाना पड़ेगा। जो नियम एक प्रत्युत्तर के लिए लागू होते हैं, वही समस्त आदत परिवार के लिए लागू होंगे। यह आदत परिवार और भी अन्य समान आदत परिवारों से मिलकर एक बड़ा वर्ग या बड़ी इकाई निर्माण कर सकते हैं। आदत परिवार के मौलिक लक्षणों के आधार पर ही हम व्यवहार के विषय में भविष्यवाणी कर सकते हैं।

व्यक्ति जो कुछ सीखता है कि वह अन्य व्यक्तियों से इन सिद्धान्तों के आधार पर सीखता है। सामाजिक मनोविज्ञान एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों ने इस सम्बन्ध में सिद्धान्तों का निर्माण किया है। अब हम उन पर ही विचार करेंगे।

मानव सीखने के कारक
(Factors of Human Learning)

मानव सीखने के प्रमुख कारक निम्न हैं :

(1) मनोवैज्ञानिक कारक,

(2) शारीरिक कारक,

(3) भौतिक कारक,

(4) सामाजिक कारक।

(1) मानव सीखने के मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Factors of the Human Learning)

मानव सीखने के मनोवैज्ञानिक कारक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। ये हल[1] के सिद्धान्त पर आधारित है। हल के सिद्धान्त के अनुसार मानव सीखने के मनोवैज्ञानिक कारक निम्न हैं :

(i) चालक (Drive),

(ii) प्रत्युत्तर (Response),

(iii) संकेत (Cue),

(iv) पुष्टीकरण (Reinforcement)।

कभी-कभी इन शब्दों के स्थान पर दूसरे पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग भी किया जाता है। डालर्ड तथा मिलर ने लिखा है, "इनको समान अपभ्रंश शब्दों से बार-बार प्रदर्शित किया जाता है—चालक प्रेरणा के समान, संकेत उत्तेजना के समान, प्रत्युत्तर कार्य या विचार के समान और पुष्टीकरण पुरस्कार के समान।"[2]

सीखने के इन कारकों पर प्रकाश डालने के पूर्व हम इसे एक साधारण परीक्षण के द्वारा समझाने का प्रयत्न करेंगे।

1. C. L. Hull, *Principle of Behaviours.*
2. J. Dollard and N. F. Miller, *Personality and Psychotherapy*, p. 26.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक साधारण परीक्षण (A Simple Experiment)—एक छो... का बालक है। वह भूखा है। उसे कुछ खाने को चाहिए। आप एक अलमारी... 5 खाने हैं और जो पुस्तकों से भरी हुई हैं, उसमें बीच के खाने में एक पुस्तक... मिठाई का पैकेट रख देते हैं। बच्चा बाहर है। जब वह अन्दर आता है... कहते हैं 'तुम्हें मिठाई चाहिए'। वह कहता है 'हाँ'। आप उससे कहते हैं कि... किसी किताब के नीचे रखी है। वह मिठाई ढूंढ़ना प्रारम्भ करता है।... वाली अलमारी देखता है और किताबें उठाता है। फिर रुक जाता है।... प्रारम्भ करता है। बीच के खाने के 10वीं पुस्तक के नीचे उसे पैकेट मिलता... और वह मिठाई खा लेता है। इस ढूंढ़ने में उसे 310 सैकेंड लगे।

उसे फिर बाहर भेज दिया जाता है और मिठाई फिर वहीं छिपा... है। इस बार जब वह ढूंढ़ना प्रारम्भ करता है तो बीच के खाने की ही पुस्तक... है। फिर 10वीं किताब के नीचे मिठाई मिल जाती है। इस बार उसे ... सैकेंड ही लगे।

तीसरी बार वह सीधे उसी पुस्तक को उठाता है और मिठाई मिल... इस बार केवल 10 सैकेंड ही लगे।

इसके बाद वालों में उसे कुछ देर लगती है। कुछ अभ्यास के बाद... उसी पुस्तक को उठाता है और मिठाई उसे मिल जाती है।

इस सीखने की प्रक्रिया में कई कारक निहित थे। पहला कारक... (drive)। सबसे पहले उसे यही पूछा गया कि क्या उसे मिठाई चाहिए... कहा 'हाँ'। यदि उसे प्रेरणा ही न होती तो वह कार्य के लिए प्रेरित ही न...

प्रेरणा या चालक उसे कार्य के लिए प्रेरित करते हैं। अतः प्र... महत्त्वपूर्ण कारक है।

प्रत्युत्तर संकेतों पर आधारित होते हैं। लड़के को यह संकेत मि... मिठाई पुस्तक के पीछे है।

लड़के ने मिठाई ऊपर के खानों में नहीं पायी, इसलिए बाद को... नहीं। पुरस्कार (reward) उस प्रत्युत्तर को पुनः करने के लिए प्रोत्साहित... इसे ही तकनीकी (technical) भाषा में पुष्टीकरण (reinforcement)...

डालर्ड तथा मिलर ने इन कारकों के सम्बन्धों को संक्षेप में इस प्र... किया है : "चालक प्रत्युत्तरों को प्रेरित करते हैं, जो प्रायः संकेतों द्वारा... नाओं के चालकों के समान अधिक शक्तिशाली नहीं होते, वरन् विशि... चालकों से पृथक निश्चित होते हैं। यदि प्रथम प्रत्युत्तर घटना को क्रम... चालक द्वारा पुरस्कृत नहीं होता, तो वह प्रत्युत्तर समाप्त हो जायेगा और... उत्पन्न हो जायेगा। क्रमबद्ध अपुरस्कृत प्रत्युत्तरों की समाप्ति क्रमहीन... उत्पन्न करता है। यदि कोई प्रत्युत्तर पुरस्कृत होता है, तो प्रत्युत्तर एवं संके... के लिए सम्बन्ध स्थापित हो जाता है जिससे अगली बार वही चालक एवं...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपस्थित रहें, तो सम्भव है यह प्रत्युत्तर फिर उत्पन्न होगा। संकेत-प्रत्युत्तर सम्बन्ध की यह दृढ़ता ही सीखने का सार है।"[1]

अब हम इन कारकों पर विस्तार में विचार करेंगे।

(1) चालक (Drives)—चालकों के विषय में लिखते हुए डालर्ड तथा मिलर ने लिखा है, "शक्तिशाली उत्तेजनाएँ जो कार्य को प्रेरित करती हैं, चालक हैं। कोई भी उत्तेजना चालक बन सकती है, यदि वह अधिक शक्तिशाली है। जितनी अधिक शक्तिशाली उत्तेजना होगी उतने ही अधिक चालक कार्य इसमें होंगे।"[2]

किम्बाल यंग ने चालक की परिभाषा करते हुए लिखा है "............चालक एक शक्तिशाली उत्तेजना है तथा सावयव के कुछ असन्तुलन के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है जो प्रतिक्रिया प्रत्युत्तर को प्रेरित करती है। कोई भी उत्तेजना चालक हो सकती है यदि यह काफी शक्तिशाली है, तथा अत्यधिक शक्तिशाली उत्तेजना में अत्यधिक 'चालक कार्य' हैं।"[3]

चालक पर हम एक अलग अध्याय में प्रकाश डाल चुके हैं।

वे चालक जिनकी उत्तेजना अत्यधिक होती है, उन्हें प्राथमिक या जन्मजात (innate) चालक कहते हैं। उदाहरण के लिए, भूख, प्यास, काम इत्यादि। ये चालक मनुष्य के जीवित रहने के लिए आवश्यक हैं। आज के युग में इन चालकों का वास्तविक स्वरूप अनुभव नहीं हो पाता, क्योंकि इनकी तीव्रता सामाजिक संगठन के कारण दबी रहती है। जब कभी सामाजिक व्यवस्था विघटित हो जाती है; जैसे—युद्ध, अकाल, क्रान्ति इत्यादि के समय तो इन प्राथमिक चालकों की तीव्रता का ज्ञान होता है।

समाज भी कुछ चालकों को जन्म देता है। इन्हें द्वैतीयक या सीखे हुए (learned) या अर्जित (acquired) चालक कहते हैं। धनी बनने की कामना, एम. ए. की डिग्री प्राप्त करना इत्यादि इस श्रेणी में आते हैं।

चालक और सीखने में घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिन लोगों में चालक नहीं उत्पन्न होते, वे कुछ नहीं सीखते। जो विद्यार्थी पढ़ने के लिए तैयार नहीं या यों कहना चाहिए जिन्हें चालक पढ़ने के लिए प्रेरित नहीं करते, वे कभी भी नहीं पढ़ सकते। जब पेट भरा होता है तो व्यक्ति काम नहीं करता। भूख के लिए व्यक्ति पता नहीं क्या-क्या करता है। डालर्ड तथा मिलर ने उचित लिखा है, "पूर्ण रूप से स्वयं सन्तुष्ट व्यक्ति कमजोर सीखने वाले होते हैं।"[5]

लोग कालेज क्यों आते हैं? सबकी प्रेरणा पृथक-पृथक है। कुछ लोग पढ़ने

Dollard and Miller, *Personality and Psychotherapy*, pp. 29-30.
"Strong stimuli which impel action are drives. Any stimulus can become a drive if it is made strong enough. The stronger the stimulus, the more drive function it possesses." *Ibid*, p. 30.
K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 38.
"Completely self-satisfied people are poor learners." Dollard and Miller, *Personality and Psychotherapy*, p. 32

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आते हैं; क्योंकि पढ़कर वे अच्छी नौकरी प्राप्त कर सकेंगे या सामाजिक ऊपर उठ सकेंगे। कुछ लोग अच्छी लड़की शादी के लिए ढूंढ़ने आते हैं। कुछ मनोरंजन का स्थान समझ कर आते हैं। मेरी कक्षा में एक लड़की थी। कहा कि वह परिश्रम करे तो प्रथम श्रेणी प्राप्त कर सकती है। उस लड़की दिया कि मैं क्यों परिश्रम करूँ मुझे प्रथम श्रेणी नहीं चाहिए, मैं तो केवल पढ़ रही हूँ कि इस डिग्री के प्राप्त होते ही मेरी शादी हो जायेगी। इस प्रकार के बिना सीखने की प्रक्रिया प्रारम्भ ही नहीं होती। कोई न कोई प्रेरणा होनी चाहिए। इस प्रेरणा के न होने से शिक्षण क्रिया भी ठीक से नहीं चल आजकल अपने देश में भी यही समस्या है। लोकसभा के एक सदस्य ने आजकल विद्यार्थियों के चालक हैं 'Rock-roll, rum and rest room' उनके चालक ये हैं तो वे शिक्षा ग्रहण करने में रुचि ले ही नहीं सकते।

(2) **संकेत** (Cue)—संकेत व्यक्ति के सीखने की क्रिया का दूसरा कारक है। संकेत यह निर्णय करता है कि प्रत्युत्तर कब, कहाँ और कौन डालर्ड और मिलर ने लिखा है, "चालक व्यक्ति को प्रत्युत्तर के लिए करते हैं, कब वह प्रत्युत्तर देगा, कहाँ वह प्रत्युत्तर को देगा यह संकेत करते हैं।[1]

किम्बाल यंग ने भी लिखा है, "संकेत ही यह निश्चित करते हैं कि कब, कहाँ और किस प्रत्युत्तर को देगा।"[2]

संकेत भी उत्तेजना पर आधारित हैं। संकेत कभी-कभी कमजोर पर भी बनते हैं। ऐसा सिद्धान्त है कि अनेक संकेत उत्तेजकों के आधार हो जाते हैं। कई बार संकेत विभिन्न व्यवहार के लिए प्रेरित करते हैं। एक जो तेज गति से कार चला रहा है, 'गति सीमित' (speed limit) को देख को उतनी ही तेज चलाता रह सकता है, परन्तु पीछे पुलिसमैन को देख सीमित गति से ही चलाने लगता है।

संकेत कभी-कभी चालकों का भी काम करते हैं। मनुष्य में ऐसा है। एक सुन्दर स्त्री को देखकर पुरुष में यौन भावना जागृत हो सकती विज्ञापन पढ़कर उस प्रकार के पानी को पीने की इच्छा हो सकती है। प्यास नहीं रहती, फिर भी देखा सुन्दर विज्ञापन और खड़े हो गये Cola' या 'Pepsi Cola' या 'Top Green'। मनुष्य ही एसा है जो चालक

---

[1] "The drive impels a person to respond. Cues determine will respond, where he will respond, and which res will make." Dollard and Miller, *Personality and Psych* p. 32.

[2] "The cue determines when, where and which response dual will make." K. Young, A *Handbook of Social Psy* p. 39.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर भी क्रिया करता है। मार्शल ने उचित ही लिखा है, "मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो बिना प्यास के पानी पीता है और हर ऋतु में प्यार करता है।"[1]

संकेतों में अन्तर और प्रतिमान भी बन जाते हैं। जब कार पुलिसमैन को देखकर धीमी की जाय तो यह प्रत्युत्तर प्रतिमान बन जाता है।

जब व्यक्ति से हम कहते हैं कि ध्यान से सुनो या ध्यान करो, तब हमारा यही प्रयत्न होता है कि संकेत चालक बन जावें। जब व्यक्ति ऐसा करने लगता है तो हम उसे 'ध्यान देना' सीखना कहते हैं।

(3) प्रत्युत्तर (Response)—चालक व्यक्ति को प्रत्युत्तर देने के लिए प्रेरित करते हैं। यदि व्यक्ति का पहला प्रत्युत्तर सही हो जाय तो व्यक्ति शीघ्र सीखता है। मानव सीखने में प्रत्युत्तर के कार्य को कभी-कभी समझना बड़ा कठिन हो जाता है; क्योंकि लोग पहले से ही सीखे हुए होते हैं, इसलिए इन्हें आन्तरिक रूप से करते हैं। प्रत्युत्तर कई बार एक गति न होकर, केवल दिशा ही होता है।

प्रत्युत्तरों का स्तरीकरण (Hierarchy of Responses)—प्रत्युत्तरों में भी एक स्तरीकरण होता है। यदि कोई प्रत्युत्तरों को घटित होने की सम्भावना के अनुसार व्यवस्थित कर ले, तो इसे प्रत्युत्तरों का प्रारम्भिक स्तरण (initial hierarchy of responses) कहते हैं। कुछ प्रत्युत्तरों के घटित होने की अधिक सम्भावना होती है और कुछ की कम। जिनकी अधिक घटित होने की सम्भावना होती है उन्हें प्रबल प्रत्युत्तर (dominant response) कहते हैं और जिनकी कम सम्भावना होती है उन्हें निर्बल प्रत्युत्तर कहते हैं।

सीखना कई बार प्रत्युत्तरों के स्तरण में परिवर्तन ला देता है। पुरस्कृत प्रत्युत्तर, चाहे वह निर्बल हो या प्रबल, पहले प्रकट होता है और इस प्रकार निर्बल प्रत्युत्तर भी प्रबल बन जाता है। इनके इस नये स्तरण को हम परिणात्मक स्तरण (resultant hierarchy) कहेंगे।

नवीनता किस प्रकार (How Novelty)—प्रत्युत्तर अपने क्रम से होते हैं। सीखने के कारण उनमें परिवर्तन हो जाता है। यही नवीनता उत्पन्न करते हैं। डालर्ड एवं मिलर ने लिखा है, "इस प्रकार प्रत्युत्तरों का एक नया प्रतिमान उत्पन्न होता है, प्रत्युत्तर पुराने हैं; परन्तु जोड़ नया है। एक बार जब यह नया जोड़ अधिक उत्पन्न होता है तो विचलन के कारण आगे के सीखने के लिए विछोह का बिन्दु हो सकता है।[2]

इस प्रकार प्रत्युत्तर नवीन व्यवहार में वही रहते हैं, परन्तु स्तरण में परिवर्तन हो जाता है। यही नवीन व्यवहार को जन्म देता है। सीखना इन्हीं प्रत्युत्तरों के क्रम में परिवर्तन उत्पन्न करता है।

---

[1] "Man is the only animal that drinks without being thirsty and makes love at all seasons." Martial.

[2] Dollard and Miller, *Personality and Psychotherapy*, p. 37.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रथम ठीक, प्रत्युत्तर प्राप्त करना (Eliciting the First Co[rrect] Response)—ऐसे कई तरीके हैं जिनके द्वारा प्रथम ठीक प्रत्युत्तर प्राप्त कि[ये जा] सकते हैं। इनमें से सबसे अकुशल है 'प्रयत्न और भूल' (trial and error) तरीका। जब व्यक्ति संकेत समझने लगता है तब भाषा का प्रयोग किया जा[ता] है। भाषा के द्वारा संकेत दे सकते हैं। अनुकरण भी एक अच्छा तरीका है। [यह] भी हमें समस्याओं को सुलझाने में सहायता करती है। सूझ (insight) और [प्रत्या]वर्तन (conditioning) भी महत्त्वपूर्ण तरीके हैं। इसी अध्याय में हम इन पर [आगे] चलकर प्रकाश डालेंगे। डालर्ड और मिलर ने इनके सम्बन्ध में लिखा है, [''] प्रत्यावर्तन प्रविधि, अनुसरण एवं मौखिक निर्देश प्रत्युत्तरों के उत्पन्न करने के [लिए] मार्ग हैं, तथा ये पुरस्कृत भी हो सकते हैं।[1]

प्रत्युत्तर को पुरस्कृत होना चाहिए, यदि ऐसा नहीं होता तो वह पुन: [नहीं] होगा। इसके फलस्वरूप वह सीखा भी नहीं जायेगा। इससे स्पष्ट है कि पुर[स्कार] सीखने की क्रिया में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारक है।

(4) पुष्टीकरण (Reinforcement)—पुनरावृत्ति से ही कोई प्र[त्युत्तर] सुदृढ़ नहीं होता। जब प्रत्युत्तर पुरस्कृत हो जाता है और इसके फलस्वरू[प उसकी] पुनरावृत्ति होती है, तो इसे पुष्टीकरण कहते हैं। जब कोई उत्तेजना दर्द पैदा [करती] है तो इस दर्द को कम करना ही पुरस्कार है। सूर्य अधिक तप रहा है तो आं[खों पर] चश्मा लगाकर या छाता खोलकर इस पीड़ा को कम किया जा सकता है।

चालक और पुष्टीकरण (Drive and Reinforcement)—जब [चालक] तीव्र होता है तो इस तीव्रता की कमी ही पुष्टीकरण है। इन दोनों के बीच [निम्न] सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण हैं :

(1) चालक की तीव्रता में कमी ही पुष्टीकरण है।

(2) पुष्टीकरण चालक के अभाव में नहीं हो सकता।

(3) पुष्टीकरण के उपरान्त चालक की तीव्रता में कमी आ जाती [है] और जब चालक समाप्त हो जायेगा तो फिर पुष्टीकरण असम्भव है।

अभी तक हमने प्राथमिक पुष्टीकरण पर प्रकाश डाला। सामाजिक पु[रस्कार] भी महत्त्वपूर्ण होते हैं। उदाहरण के लिए, नोट और सिक्के भी पुष्टीकरण हैं। [किसी] को कहिए कि यह काम करो, दस रुपये का नोट देंगे तो वह तुरन्त काम [करने] लगेगा। बच्चे इनका महत्त्व नहीं जानते। चेक भी पुरस्कार है, पर बेपढ़े मजदूर को यदि आप कहें कि चेक देंगे, काम करो तो वह काम नहीं करेगा; [क्योंकि] चेक का महत्त्व वह नहीं समझता। इन्हें हम सीखे हुए पुरस्कार कहते हैं। आप [...] करते हैं और प्रथम श्रेणी आपके लिए महत्त्वपूर्ण है; क्योंकि आप उसे समझते [हैं।] लोगों को खिताब (titles) दिया जाना भी पुरस्कार है। प्रशंसा भी एक पुरस्कार [है।]

---

1 Dollard and Miller, *Personality and Psychotherapy*, p. 39.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुष्टीकरण का महत्त्व (Importance of Reinforcement)

पुष्टीकरण के अभाव में सीखना नहीं हो सकता। जिन लोगों को उनके कार्यों पुरस्कार नहीं मिलता, वे सीख भी नहीं पाते। लोग कुछ पुराने कार्यों को ही क्यों ते हैं ? स्पष्ट है कि इससे उन्हें फल मिलता है। सीखने के लिए नवीन अवसर श्यक हैं। जो लोग सुख में होते हैं वे कम सीख पाते हैं। इसीलिए प्रायः कहा ता है कि मुसीबत मनुष्य को बहुत कुछ सिखाती है।

मानव सीखने के शारीरिक कारक (Physiological Factors of Human Learning)

मानव सीखने में मनोवैज्ञानिक कारक तो महत्त्वपूर्ण हैं ही, पर शारीरिक रक भी मानव सीखने में कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। वास्तव में मानव सीखने के रकों में मनो-शारीरिक (Psycho-physiological) कारकों को महत्त्व देना हिए। मानव सीखने के महत्त्वपूर्ण शारीरिक कारक निम्न हैं :

(i) **अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ (Endocrine Glands)**—अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से प्रकार का स्राव निकलता है, यह बाहर निकलने का प्रयत्न करता है, पर प्रायः त में मिल जाता है। रक्त में मिलकर यह पूरे शरीर में फैल जाता है। जब तक स्राव की मात्रा सन्तुलन में रहती है, तब तक कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। इसकी मात्रा शरीर में असन्तुलित हो जाती है तो व्यक्ति की प्रेरणाओं, चालकों, क्रियाओं, बुद्धि और स्वभाव में विकार उत्पन्न होने लगता है जिससे सीखने की या पर प्रभाव पड़ता है और अवरोध उत्पन्न होना प्रारम्भ हो जाते हैं। जिन क्तियों में कण्ठ-ग्रन्थि (thyroid gland) का कार्य ठीक से नहीं होता उनमें तन, मनन, स्मरण, कल्पना, धैर्य आदि की मानसिक क्रियाओं का विकास नहीं पाता है और वे सीखने की प्रक्रिया में मन्द होते हैं। यह अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के व का एक उदाहरण है। इसी प्रकार अन्य ग्रन्थियाँ भी सीखने की प्रक्रिया पर व डालती हैं।

(ii) **केन्द्रीय स्नायु-मण्डल (Central Nervous System)**—केन्द्रीय स्नायु-ल के दो प्रमुख भाग होते हैं—सुषुम्ना (spinal cord) और मस्तिष्क (brain)। व्यक्तियों के सावयव में सुषुम्ना और मस्तिष्क का समुचित विकास नहीं हो , उनके लिए सरल से सरल व्यवहार को सीखने में बड़ी कठिनाई आती है। व्यक्तियों के लिए मानसिक क्रियाएँ कर पाना अत्यन्त कठिन होता है। वे र ही नहीं कर पाते, तो सीखने का तो प्रशन ही नहीं उठता। उनकी स्मरण-त बड़ी कमजोर होती है।

(iii) **आयु (Age)**—आयु का सीखने से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। जैसे-जैसे आयु विकास होता है वैसे-वैसे ही सीखने की क्षमता का विकास होता है। आयु का प्रभाव दैहिक विकास पर पड़ता है और सीखना दैहिक विकास पर आधारित अल्पायु में अधिक सीखना सम्भव नहीं होता, क्योंकि उस समय दैहिक विकास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं हो पाता। अधिकांश सीखने के लिए आयु का होना आवश्यक है। ... (maturity) पर ही अधिकतर सीखा जाता है।

(iv) लिंग-भेद (Sex Differences)—लिंग-भेद का भी सीखने ... पर थोड़ा बहुत प्रभाव पड़ता है। वैसे लिंग-भेद का सीखने की प्रक्रिया ... सम्बन्ध नहीं है। रुचियों और स्वभाव का अन्तर अवश्य पड़ता है।

(v) रोग (Diseases)—हर प्रकार के रोग सीखने की प्रक्रिया ... डालते हैं। रोग, मानसिक हों या शारीरिक, सीखने की प्रक्रिया में बाधक ... मानसिक रोग अधिक बाधक होते हैं। रोगों के कारण शक्ति क्षीण हो ... जिसके कारण व्यक्ति अधिक कार्य नहीं कर पाता है और उसका सीखने ... मन्द पड़ जाता है।

(vi) थकान (Fatigue)—थकान शरीर की वह अवस्था है ... में शिथिलता उत्पन्न हो जाती है और इन्द्रियाँ ठीक प्रकार से कार्य नहीं ... अवस्था में व्यक्ति प्रतिक्रियाओं को ठीक रूप से ग्रहण नहीं कर पाता है ... सीखने की प्रक्रिया मन्द पड़ जाती है। सीखने की क्षमता थकान में कम हो ... इसके कारण थकान सीखने में बाधक है।

(vii) नशीली वस्तुओं का कुप्रभाव (Bad Effects of Dr... Intoxicants)—नशीली वस्तुओं का सेवन शरीर पर अनेक कुप्रभाव उत्पन्न ... और शरीर को शिथिल एवं निष्क्रिय बना देता है। इसके परिणामस्वरूप ... सीखने की क्षमता कम हो जाती है। इसलिए नशीली वस्तुओं का सेवन ... प्रक्रिया में बाधक होता है।

(3) मानव सीखने के भौतिक कारक (Physical Factors of Learning)

मानव सीखने पर भौतिक कारकों का भी प्रभाव पड़ता है, क्योंकि ... भौतिक पर्यावरण में बढ़ता और सीखता है। सीखने की प्रक्रिया पर वायु ... अथवा अशुद्धता, प्रकाश, तापक्रम, जलवायु आदि भौतिक कारकों का प्र... है। हंटिंगटन (Huntington) ने भौतिक कारकों और मानव कुशलता ... सम्बन्ध बताये हैं। सीखने पर भी इन भौतिक कारकों का प्रभाव पड़ता है।

(4) मानव सीखने के सामाजिक कारक (Social Factors of Learning)

मानव सीखने के अनेक सामाजिक कारक हैं जिनका अत्यधिक प्र... है, इनमें से प्रमुख निम्न है :

(i) अनुकरण (Imitation)—अनुकरण का सामान्य अभिप्राय है ... नकल करना। 'अनुकरण' के सम्बन्ध में विस्तार से हम पहले एक अध्याय ... ही चुके हैं। यहाँ पर हमें यह देखना है कि अनुकरण मानव सीखने में क्या ... करता है। अनुकरण सीखने का एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक कारक है। ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिखा है, "सामाजिक दशाओं में जो सीखने की प्रक्रिया का तीव्रीकरण या त्वरण करता है, उसमें अनुकरण का विशेष महत्त्व है।"

अनुकरण में प्रतिष्ठा अनुकरण (prestige imitation) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हम समाज में अपने माता-पिता, गुरुजन, नेताओं, सुधारकों एवं अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों का अनुकरण करते हैं। यह अनुकरण सीखने में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

नकल करना (conscious imitation or copying) भी सीखने की क्रिया में अत्यधिक महत्त्व रखता है। बहुत-सा सीखना नकल के कारण होता है।

ड्रेवर (Drever) तथा मैकडूगल (McDougall) ने बालकों के सीखने की क्रिया में अनुकरण के कारक को अत्यधिक महत्त्व दिया है। अनुकरण समझे या बिना समझे, चेतन या अचेतन किसी भी रूप में किया जा सकता है। अनुकरण के द्वारा सीखने में समय की बहुत अधिक बचत होती है। अनुकरण में कोई नया मार्ग नहीं बनाना पड़ता, अपितु एक बना बनाया स्वरूप (ready-made form) प्राप्त हो जाता है और व्यक्ति उसे ग्रहण कर लेता है।

अनुकरण केवल बच्चों द्वारा ही नहीं किया जाता। अनुकरण सीखने की एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है, जिसे कोई भी अपना सकता है।

(ii) **सुझाव (Suggestion)**—'सुझाव' के अर्थ के विषय में हम पहले एक अध्याय में लिख चुके हैं। सुझाव भी सीखने की प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। सुझाव का प्रभाव व्यक्ति पर बहुत अधिक पड़ता है। सीखने की प्रक्रिया का एक बहुत बड़ा भाग सुझाव पर आधारित है। प्रतिष्ठा सुझाव (prestige suggestion), ऐसा सुझाव जो एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के द्वारा दिया जाता है, का प्रभाव व्यक्ति पर सबसे अधिक पड़ता है।

सुझाव अनेक प्रकार से हम सिखाते हैं और मार्गदर्शन करते हैं। रीतिरिवाज, प्रथाएं, नियम आदि व्यक्ति को सदैव सुझाव देते रहते हैं कि उसे किस प्रकार कार्य करना चाहिए। सामाजिक व्यवस्था स्वयं सुझाव देती रहती है। समाज के अन्य सदस्य भी हमें सुझाव देकर सिखाते रहते हैं। इससे स्पष्ट है कि सुझाव सीखने की क्रिया में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।

(iii) **सहानुभूति (Sympathy)**—सहानुभूति भी सीखने की प्रक्रिया में अधिक महत्त्वपूर्ण कारक है। सहानुभूति के कारण व्यक्ति का साहस बढ़ता है और वह अधिक शीघ्रता से सीखने का प्रयत्न करता है। सहानुभूति के कारण सीखने वाले में एक अनुकूल अनुभूति जागती है जिसके कारण वह शीघ्र ग्रहण करने का प्रयत्न करता है। सहानुभूति व्यक्ति को वश में करने की सबसे बड़ी तरकीब है। इसी तरकीब से सीखने की तीव्रता को भी बढ़ाया जा सकता है और बाधक तत्त्वों को हटाया जा सकता है।

(iv) **प्रतिस्पर्धा (Competition)**—प्रतिस्पर्धा भी सीखने की प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। प्रतिस्पर्धा के कारण व्यक्ति शीघ्र और अधिक कुशलता से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सीखता है, क्योंकि वह अन्य व्यक्तियों से अधिक सीखना चाहता है। ... कारण ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं कि व्यक्ति शीघ्र सीखता है।

(v) **सहयोग** (Co-operation)—सहयोग भी सीखने की ... एक महत्त्वपूर्ण कारक है। कोई भी व्यक्ति उस समय तक सीख ही नहीं ... तक कि उसे किसी न किसी का सहयोग सीखने में न प्राप्त हो। पग-पग ... की प्रक्रिया में सहयोग की आवश्यकता होती है। बच्चे को माँ या कोई ... पकड़कर चलना, उठना, बैठना सिखाते हैं। स्कूल में गुरुजन सहयोग से ... जीवन के हर क्षेत्र में कोई न कोई सहयोग के द्वारा हमें सिखाता है।

(vi) **प्रशंसा और निन्दा** (Praise and Blame)—प्रशंसा और ... मानव सीखने के महत्त्वपूर्ण कारक हैं। प्रशंसा सीखने का एक सहायक कारक ... यह सीखने को प्रोत्साहन देता है। इस प्रोत्साहन के कारण व्यक्ति उस क्रिया ... दोहराता है और इस कारण उस क्रिया का पुष्टीकरण होता है। हर एक ... होती है कि जो कुछ वह करे उसका उसे पुरस्कार (reward) मिले। ... प्रकार की समाज-स्वीकृति या पुरस्कार है। इसके कारण व्यक्ति को कार्य ... बल प्राप्त होता है और वह अधिक हिम्मत से उसे करता है।

इसके विपरीत निन्दा मानव सीखने में बाधक होती है, क्योंकि ... व्यक्ति हिम्मत हार जाता है और पुनः उस क्रिया को करने में हिचकि... इससे उस क्रिया का लोप हो जाता है।

(vii) **सामाजिक प्रोत्साहन** (Social Encouragement)—... सामाजिक प्रोत्साहन भी एक महत्त्वपूर्ण कारक है। सामाजिक प्रोत्साहन ... व्यक्ति उस व्यवहार को पुनः दोहराता है और इस प्रकार उस व्यवहार ... होती है और वह व्यक्ति का स्वभाव बन जाता है।

सीखने की प्रक्रिया के महत्त्वपूर्ण अंग

(Significant Aspects of the Learning Process)

सीखने की प्रक्रिया में कुछ और भी महत्त्वपूर्ण अंग हैं। अब हम ... प्रकाश डालेंगे।

लोपीकरण (Extinction)—जब किसी प्रत्युत्तर को पुरस्कार नहीं ... तब उसकी प्रकृति लोप हो जाने की होती है। लोपीकरण को समझाते हुए ... तथा मिलर ने लिखा है, "जब एक सीखा हुआ प्रत्युत्तर बिना पुष्टीकरण के ... जाता है, तो प्रकृति की शक्ति प्रत्युत्तर के कार्य में क्रमशः घटती जाती है। ... प्रयोगात्मक लोपीकरण या अधिक सरल भाषा में लोपीकरण कहलाती है।"

जिस कार्य से हमें पुरस्कार मिलता है उसे हम बार-बार करते हैं। ... के लिए, एक मछली पकड़ने वाले को एक स्थान पर बहुत अधिक मछलियाँ ... वह फिर उसी स्थान पर आयेगा। जिस स्थान पर नहीं मिलीं वहाँ नहीं ...

भूलने और लोपीकरण में भेद है। इन दोनों के भेद को समझाते ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथा मिलर ने लिखा है, "भूलना उस मध्यान्तर में उत्पन्न होता है जब कोई प्रत्युत्तर क्रियाहीन हो जाता है, लोपीकरण उस समय उत्पन्न होता है जब किसी प्रत्युत्तर को बिना पुष्टीकरण के सक्रिय किया जाता है।"

लोपीकरण की दर (Rate of Extinction)—लोपीकरण शनैः-शनैः होता है। प्रबल आदतों का लोपीकरण तो बहुत अधिक समय लेता है। सीखे हुए प्रत्युत्तर भी इसी सिद्धान्त के अनुसार लोप हो जाते हैं।

स्वतः-पुनः प्रकटीकरण (Spontaneous Recovery)—लोपीकरण के कारण कुछ प्रत्युत्तर लोप हो जाते हैं, परन्तु नष्ट नहीं होते। कभी भी ये प्रकट हो सकते हैं। इसे पुनः प्रकटीकरण (recovery) कहते हैं। डालर्ड तथा मिलर ने लिखा है, "यह प्रकृति किसी नष्ट आदत के मध्यान्तर के बाद पुनः उत्पन्न होने के समय, जिससे कोई अपुरस्कृत क्रिया नहीं होती, को हो स्वतः-पुनः प्रकटीकरण कहते हैं।"

लोपीकरण व्यक्ति को नये प्रत्युत्तर देने के लिए बाध्य करता है। यदि ये नये प्रत्युत्तर पुरस्कृत होते हैं तो वे लोपीकृत प्रत्युत्तरों को नष्ट कर देते हैं। यदि ऐसा नहीं होता तो लोपीकृत प्रत्युत्तर पुनः प्रकट होते हैं या नये प्रत्युत्तरों के साथ मिलकर नये प्रत्युत्तरों का निर्माण करते हैं।

सामान्यीकरण (Generalization)—सीखने का प्रभाव एक परिस्थिति से दूसरी पर हस्तान्तरित हो सकता है। वैसे तो कोई भी दो परिस्थितियाँ समान नहीं होतीं, फिर भी कई में अनेक समानताएँ पायी जाती हैं। मान लीजिए एक बच्चे को एक भूरे कुत्ते ने काट लिया। इसके बाद वह बच्चा उस कुत्ते से ही नहीं वरन् भूरे कुत्तों से डरना प्रारम्भ करता है। कभी तो वह कुत्तों से ही डरने लगता है। इसे सामान्यीकरण कहते हैं। यह प्रक्रिया किसी भी सीमा तक विस्तृत हो सकती है। वह जानवरों से ही डरना प्रारम्भ कर सकता है।

विभेदीकरण (Discrimination)—विभेदीकरण दो प्रत्युत्तरों में भेद करना सिखाता है। सामान्यीकरण के कारण उत्पन्न भावना समान होती है यदि भविष्य में प्रत्युत्तर पुरस्कृत न हुए तो व्यक्ति उनमें भेद करने लगता है। सामान्यीकरण और विभेदीकरण अत्यधिक सम्बन्धित हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "विभेदीकरण एवं सामान्यीकरण साथ-साथ चलते हैं।"[1]

पूर्वापेक्षित प्रत्युत्तर (Anticipatory Responses)—कभी-कभी प्रत्युत्तर पहले ही हो जाता है। इसे पूर्वापेक्षित प्रत्युत्तर कहते हैं। हम आग की ओर हाथ ले जाते हैं, परन्तु पहले ही खींच लेते हैं। हम हरी मिर्च को देखते हैं, उठाते हैं और चखते हैं। चखते ही मुँह जल जाता है और थूकने लगते हैं। अन्य अवसरों पर हरी मिर्च को देखकर ही यह प्रतिक्रिया होने लगती है। इसे पूर्वापेक्षित प्रत्युत्तर करते हैं।

पूर्वापेक्षित प्रत्युत्तर अनैच्छिक होता है। हम चाहें या न चाहें यह अपने आप हो

[1] "Discrimination and generalization go hand in hand." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 45.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाता है। बन्दूक का घोड़ा दबाने के पहले ही आँखें झपक जाती हैं और पूरा शरीर हिल जाता है। इच्छा न होते हुए भी ऐसा होता है।

पूर्वापेक्षित प्रत्युत्तर व्यवहार को छोटे रास्ते बताता है। लम्बे तरीके से न करके, छोटे तरीके से काम कर सकते हैं।

सामाजिक जीवन में पूर्वापेक्षित प्रत्युत्तरों का बड़ा महत्त्व है।

सक्रिय तथा निष्क्रिय सीखना (Active and Passive Learning)—सीखना सक्रिय (active) एवं निष्क्रिय (passive) दोनों ही प्रकार का होता है। व्यक्ति अनेक वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण करता है, परन्तु प्रत्येक में ही रुचि नहीं लेता। फिर भी उनकी संवेदना तो होती ही है। उदाहरण के लिए, चमड़े के कारखाने के पास से निकलिए तो बदबू आती है और आदमी परेशान हो जाता है। वही आदमी उस कारखाने में काम करने लगता है या आसपास ही रहने लगता है तो उसे बदबू नहीं लगती। हम कई वस्तुओं के प्रति चेतन न रहते हुये भी सीख लेते हैं। सीखना जो बिना प्रयत्न के अचेतन, चेतन या अर्धचेतन अवस्था में होता है उसे निष्क्रिय सीखना (passive learning) कहते हैं।

बच्चे अचेतन रूप से अपने गुरुजनों, माता-पिता तथा अन्य प्रिय व्यक्तियों से अनेक हाव-भाव एवं अन्य वस्तुएँ सीख लेते हैं। शहर के रहने वाले बालक को बताने की आवश्यकता नहीं है कि सड़क पर कैसे और किधर चलना चाहिए। टाई बाँधना या रेडियो बजाना भी सिखाने की आवश्यकता नहीं है। वह अपने अचेतन में सीख लेता है। इसे निष्क्रिय सीखना कहते हैं।

जब व्यक्ति प्रयत्न करता है और फिर कुछ सीखता है उसे सक्रिय सीखना कहते हैं। प्रायः अधिकांश सीखना सक्रिय ही होता है। हम लोग अपनी उम्र का काफी भाग सक्रिय सीखने में लगाते हैं। शिक्षा चाहे जिस प्रकार की भी हो, सक्रिय सीखने का उदाहरण है। सक्रिय सीखने में हमें चेतन अवस्था में रहना पड़ता है, ध्यान देना पड़ता है। यह विशेष मानसिक प्रक्रिया है, जो सीखते समय होती है।

सीखने की क्रिया के सम्बन्ध में प्रमुख सिद्धान्त (Important Theories in Relation to the Process of Learning)

सीखने की क्रिया के सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों के विभिन्न सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है; परन्तु यहाँ हम निम्न तीन प्रमुख सिद्धान्तों का उल्लेख करेंगे:

(1) सम्बद्ध-प्रत्यावर्तन का सिद्धान्त (Theory of conditioning),

(2) प्रयत्न और भूल का सिद्धान्त (Theory of trial and error),

(3) सूझ का सिद्धान्त (Theory of insight)।

(1) सम्बन्ध-प्रत्यावर्तन का सिद्धान्त (Theory of Conditioning)

यह सिद्धान्त सबसे पुराना है, जिसके अनुसार शरीर में ही सीखने का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूत माध्यम है; यद्यपि इस सिद्धान्त का प्रभाव मन पर भी हो सकता है। जो प्रतिक्रिया व्यावहारिक दृष्टिकोण से सफल हो उसके स्नायनिक सम्बन्ध शरीर में स्थायी रूप से स्थापित हो जाते हैं। इस प्रकार सीखने की क्रिया का मौलिक स्तर (कट्टर व्यवहारवादियों के दृष्टिकोण से मान्य स्तर) शरीर ही है।

यह सिद्धान्त अभ्यास पर विशेश बल देता है, क्योंकि जो प्रतिक्रिया बार-बार होती है जिससे ग्रहकों और कर्मेन्द्रियों में सम्बन्धों का निर्माण एवं उनकी पुष्टि भी हो जाती है। जैसा कि हमने ऊपर उल्लेख किया, यह सिद्धान्त सबसे पुराना है। इसकी झलक हमें साहचर्य के नियमों में मिलती है। साहचर्य के नियमों का सर्वप्रथम प्रतिपादन महान दार्शनिक अरस्तू ने किया था। उसने इन साहचर्य के नियमों से यह बताने की चेष्टा की थी कि किस प्रकार एक विचार दूसरे से सम्बद्ध रहता है। यद्यपि जान लॉक ने भी 1690 में अपने एक लेख में यह दर्शाने की चेष्टा की कि व्यक्ति की रुचियों और अभिरुचियों तथा उसकी विशेषताओं की व्याख्या साहचर्य सिद्धान्त से किस प्रकार की जा सकती है। उन्होंने एक स्थान पर लिखा है कि उनका एक मित्र एक व्यक्ति को जानता था जिसके पागलपन का इलाज एक आपरेशन द्वारा किया गया था। जो सज्जन इस तरह अच्छे हुए थे; वे हमेशा कृतज्ञता महसूस करते थे, परन्तु आपरेशन करने वाले को देख नहीं सकते थे।

इस सिद्धान्त के प्राचीन होने पर भी इसको वैज्ञानिक रूप एवं अत्यधिक मान्यता पावलव ने दी। पावलव ने इस सिद्धान्त के आधार पर उन इन्द्रिय-उत्तेजनाओं तथा पिण्ड-प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया, जिनकी माप एवं नियन्त्रित दशाओं में तुलना भी की जा सकती है।

पावलव ने इस सम्बन्ध में एक कुत्ते पर प्रयोग किया। उसने यह देखा कि कुत्ता जब भोजन की प्रतीक्षा करता है तो उसके मुँह से लार गिरने लगती है। यह क्रिया हम लोगों के साथ भी होती है। जब हम भोजन को देखते हैं तो उसकी सुगन्धि से मुँह में पानी भर आता है; परन्तु वह क्रिया—छोटे बच्चे या जानवर के मुँह में लार निकलना—तब तक नहीं होती जब तक कि मुँह में भोजन न पहुँचे, बाद में धीरे-धीरे भोजन के दिखायी देने पर या उसकी सुगन्धि में लार आने लगती है। यहाँ पर लार आने की प्रतिक्रिया का स्वाभाविक उत्तेजक भोजन है, परन्तु भोजन से सम्बन्ध (यानी उसकी सुगन्धि या उसको देखना) उत्तेजकों से भी लार निकलने लगती है। इसी को हम सम्बद्ध प्रत्युत्तर प्रतिक्रिया (conditioned response) कहते हैं।

मान लीजिए प्रतिक्रिया A_1 के लिए स्वाभाविक उत्तेजक A है, और B_1 के लिए स्वाभाविक उत्तेजक B है। यदि A_1 प्रतिक्रिया उत्तेजक B से उत्पन्न हो सकती है तो उसे हम सम्बद्ध-प्रत्युत्तर प्रतिक्षेप (conditioned reflex) कहेंगे। मान लो A एक कुत्ता है, जिससे A_1 डर की प्रतिक्रिया होती है, और B कुत्ते के भौंकने की आवाज है, जिसके फलस्वरूप B_1 के भागने की क्रिया होती है, मान लिया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाय कि B कुत्ते के भौंकने से डरने की प्रतिक्रिया होने लगे (जैसा प्राय: होता है) तो हम कह सकते हैं कि सम्बद्ध प्रत्युत्तर प्रतिक्षेप (conditioned reflex) बन गया।

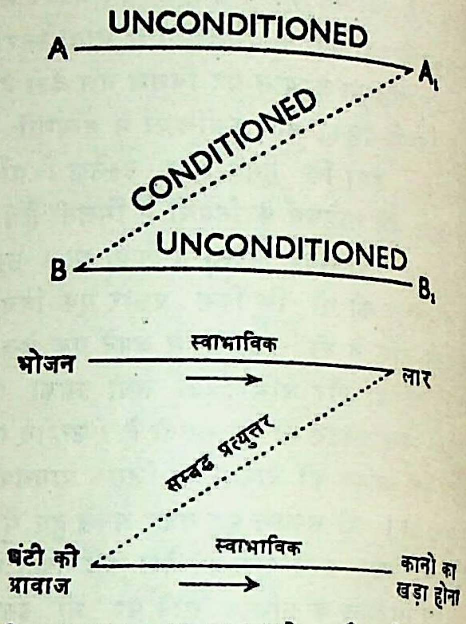

पावलव ने इस सम्बन्ध में एक कुत्ते पर प्रयोग किया। उसने कुत्ते को भूखा रखा फिर उसे एक ऐसे कमरे में बन्द कर दिया जिसमें बाहर से कोई आवाज न पहुँचे। भूखे कुत्ते के सामने भोजन रखने से पहले एक घण्टी की आवाज की, इस क्रिया को उसने बार-बार दुहराया। पहले तो पावलव ने यह देखा कि भोजन + घण्टी की आवाज से कुत्ते के मुंह से लार टपकती थी; परन्तु बाद में धीरे-धीरे केवल घण्टी की ही आवाज सुनकर उसके मुंह से लार टपकने लगती थी।

इस उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि कुत्ते की लार टपकने की प्रतिक्रिया के लिए भोजन एक स्वाभाविक उत्तेजना है तथा घण्टी की आवाज तटस्थ या अस्वाभाविक उत्तेजना है। परन्तु जब भोजन देने से पहले घण्टी बजायी जाती है तथा इस क्रिया को बार-बार दोहराया जाता है, तो घण्टी की आवाज भोजन के साथ एक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप लार टपकने की क्रिया घण्टी के बजने के प्रति होने लगती है।

इस प्रकार पावलव और साथियों ने इसी पद्धति के अनुसार अनेक और प्रयोग भी किये तथा प्रयोग से यह सिद्ध किया कि कुत्ते के मुँह से लार टपकना दृष्टि, घ्राण तथा स्पर्श सम्बन्धी अन्य उत्तेजनाओं के द्वारा भी सम्भव है। पावलव ने इस सिद्धान्त के आधार पर असामान्य व्यवहार एवं आदत-निर्माण के विकास की व्याख्या की है। उनके अनुसार समस्त प्रकार के सीखने के मूल में प्रतिक्षेपों या सहज-क्रियाओं का सम्बद्ध प्रत्युत्तर ही पाया जाता है। उन्होंने आगे लिखा भी है कि "अलग-अलग तरह की आदतें, जो किसी प्रकार के प्रशिक्षण, शिक्षा अथवा अनुशासन पर आधारित है, सम्बद्ध प्रत्यावर्तन एक लम्बी श्रृंखला मात्र हैं।"

सम्बद्ध-प्रत्यावर्तन के सम्बन्ध में निम्न बातें उल्लेखनीय हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) सम्बद्ध-प्रत्यावर्तन की स्थापना करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रयोग करते समय बाधक उत्तेजनाएँ उपस्थित न हों तथा विषयी के समक्ष केवल एक उत्तेजना की ही उपस्थिति हो। इसीलिए पावलव ने इस प्रकार का प्रबन्ध किया कि घण्टी की आवाज के अतिरिक्त कोई और आवाज प्रयोग के अन्दर न आने पावे।

(2) सम्बद्ध-प्रत्यावर्तन किसी एक ही प्रकार की विशेष उत्तेजना तक ही सीमित नहीं होती, बल्कि उसी के समान अन्य सभी उत्तेजनाओं में फैल जाती है। कुत्ते के मुंह से लार टपकने की क्रिया उसी प्रकार की अन्य आवाजों से भी सम्बद्ध की जा सकती है।

इस सामान्यीकरण (stimulus generalisation) पर वाटसन द्वारा किये गये प्रयोग से प्रकाश पड़ता है। इन्होंने प्रयोग द्वारा यह दिखाया कि अल्बर्ट नामक बच्चे में पहले एक सफेद चूहा दिखाकर भय की प्रतिक्रिया उत्पन्न की गयी। वह इस प्रकार था कि चूहे के साथ-साथ एक जोर की आवाज उसके सिर के पीछे से की जाती थी। अल्बर्ट को भय वास्तव में उस आवाज के कारण था; परन्तु उस भय प्रतिक्रिया का सम्बन्ध उस चूहे के साथ जुड़ गया। बाद में यही बालक चूहे की अनुपस्थिति में भी जोर की आवाज से डरने लगा। इस प्रकार इस बालक में चूहे के लिए सम्बद्ध-प्रत्यावर्तन की प्रतिक्रिया बन गयी। उस बालक का डरना केवल सफेद चूहे तक ही सीमित न रहा, बल्कि वह अन्य सफेद चूहों, सफेद रोयेंदार कीट तथा उजले खरगोश और सफेद रुई के समूह से भी डरने लगा। उत्तेजना का सामान्यीकरण इसी को कहते हैं।

(3) सम्बद्ध-प्रत्यावर्तन की प्रतिक्रिया को समाप्त करने की सबसे सरल विधि यह है कि अस्वाभाविक उत्तेजना को बार-बार उपस्थित किया जाय। परन्तु स्वाभाविक उत्तेजना को एक बार भी उपस्थित न किया जाय। जैसे (कुत्ते के प्रयोग में) घण्टी बार-बार बजायी जाय परन्तु खाना न दिया जाय, तो लार टपकना धीरे-धीरे समाप्त हो जायेगा।

सम्बद्ध प्रत्यावर्तन का सीखने की प्रक्रिया में स्थान (The Place of Conditioning in Learning Process)—यह सत्य है कि बहुत कुछ हमारी क्रिया सम्बद्ध-प्रत्यावर्तन की तरह ही होती है। जैसे बालक प्रारम्भ में अंकगणित और अंग्रेजी से घबराता है या घृणा करता है, बाद में उसकी यह प्रक्रिया अपने अंकगणित और अंग्रेजी के शिक्षक के प्रति उत्पन्न होने लगती है या उन कमरों में जहाँ ये विषय पढ़ाये जाते हैं। यह भी सम्भव हो सकता है कि माता-पिता के प्रति भी बालक का इस तरह का संवेगात्मक-सम्बद्धीकरण (emotional conditioning) उत्पन्न हो जाये। बच्चे का माँ को अत्यधिक प्यार करने का यह भी कारण हो सकता है कि पहले माँ के स्तनपान से आनन्द की प्राप्ति होती हो, बाद में उससे जो चीजें सम्बद्ध रही हों उन सबसे प्रसन्नता की प्रतिक्रिया भी हो सकती है। इस प्रकार केवल माँ का चित्र उस प्रतिक्रिया को जागृत कर देता है।

अब हम यह देखेंगे कि शिक्षक के लिए यह सिद्धान्त क्या सुझाव प्रस्तुत करता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) प्राणी की यह प्रकृति है कि वह कुछ करके सीखता है, तथा जि
को वह बार-बार करता है उसको वह जल्दी सीखता है। इसलिए परिश्रम ए
का महत्त्व है। इससे प्रतिक्रिया धीरे-धीरे दृढ़ हो जाती है तथा सामान्यी
द्वारा यह आदतें अन्य क्षेत्रों में उपादेय सिद्ध होती हैं।

(2) पुनरावृत्ति का इस क्रिया में विशेष महत्त्व है।

(3) बाधक उत्तेजकों के कारण सीखने की क्रिया में बाधा उपस्थि
है। यह तो प्रयोगशाला में ही सम्भव है कि कुत्ते की प्रक्रिया दृढ़ होने
बाहार की आवाजें नहीं आनी चाहिए, तथा अन्य बाधक उत्तेजकों को भी
सके; परन्तु कक्षा में यह सम्भव नहीं है, वहाँ तो विभिन्न उत्तेजकों का होना
है। शिक्षक एक सुन्दर पाठ पढ़ा रहा हो, परन्तु यह सम्भव है कि बाल
पिता की डाँट-फटकार से तिलमिला रहा हो या अपनी माँ की बीमारी
कर रहा हो। प्रायः शिक्षण इस बात को भूल जाते हैं। सम्बद्धीकरण
होने के लिए यह आवश्यक है कि अन्य प्रतियोगी उत्तेजनाएँ परिस्थिति से
की जायँ।

आलोचना (Criticism)—यह सीखने का सिद्धान्त अत्यन्त यान्त्रि
इसमें व्यक्ति की अन्य अवस्थाओं या अभिरुचि, मनोवृत्ति इत्यादि का
नहीं रखा गया है। जैसे पावलव सोचता था कि सीखना 'सम्बद्ध प्रत्यावर्तन
की एक शृङ्खला मात्र नहीं, बल्कि यह एक ऐसी क्रिया है, जिसमें प्राणी के
मन दोनों ही कार्य करते हैं। इस प्रकार यह सिद्धान्त अपर्याप्त है।

यद्यपि इस सिद्धान्त की कुछ सीमाएं हैं फिर भी इसकी अपेक्षा नहीं
सकती। यह पद्धति नयी प्रक्रियाओं के बनने, समाप्त होने, तथा पुनः जागृ
चेष्टाओं का अध्ययन करती है। उदाहरणार्थ, आदतों के बनने और उन्हें
इस प्रक्रिया का विशेष महत्त्व है। सम्बद्ध प्रत्यावर्तन के आधार पर संकेतों
और कई सामुदायिक प्रक्रिया की व्याख्या की जा सकती है। गधा (
किसी जानवर विशेष की ओर क्यों संकेत करता है, क्योंकि गधा शब्द का उस
से सम्बद्धीकरण है।

(2) प्रयत्न और भूल का सिद्धान्त
(Theory of Trial and Error)

मानसिक क्रिया का प्रयत्न और भूल से सीखने में बहुत कम हाथ है
प्राणी किसी समस्या का हल निकालने के लिए अनेक क्रमहीन क्रियाएं
व्यक्ति की विभिन्न प्रक्रियाएँ इसलिए होती हैं कि उसका लक्ष्य स्पष्ट ज्ञात
है। जिन क्रियाओं से प्राणी को सफलता मिलती है उनको प्राणी अपना
इस प्रकार के सीखने की क्रिया का क्षेत्र केवल शरीर तक ही सीमित नहीं है
यह सफलता के साथ-साथ सन्तोष पर भी बल देता है। इस प्रकार जो
सीखते हैं, वह सफल प्रयत्नों के आधार पर सीखते हैं। जिन प्रयत्नों से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राप्त होती है उनको छोड़ देते हैं तथा जिन प्रयत्नों से सफलता प्राप्त होती है उनकी विधियों को हम अपने व्यक्तित्व का एक स्थायी अंग बना लेते हैं।

थार्नडाइक ने सर्वप्रथम प्रयत्न और भूल के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उन्होंने बिल्ली, कुत्ते, मुर्गियों, मछलियों तथा बन्दर की सीखने की योग्यता के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग किये। यद्यपि उनसे पहले लायड, मार्गन तथा लब्बाक ने भी पशुओं के सीखने के सम्बन्ध में प्रयोग से यह सिद्ध किया कि पशु केवल 'प्रयत्न और भूल' की पद्धति से ही सीखते हैं। इनसे पहले यह धारणा प्रचलित थी कि पशुओं में सोचने एवं विचारने की शक्ति होती है। लायड ने इस धारणा का खण्डन किया तथा यह बताया कि मनुष्य के सीखने में भी अभ्यास का प्रमुख हाथ है। थार्नडाइक ने इन दोनों प्रचलित धारणाओं का खण्डन किया। सर्वप्रथम तो यह कि जानवर अनेक बातें अनुकरण से सीखते हैं। दूसरा यह कि विचारों का प्रयोग भी करते हैं। थार्नडाइक के अनुसार पशुओं का सीखना केवल 'प्रयत्न और भूल' पर ही आधारित होता है। इनकी प्रयोग विधि यह थी कि वे पशुओं को एक भूलभुलैया या उलझन बाक्स (puzzle-box) में रखते थे और फिर यह निरीक्षण करते थे कि पशु बाहर निकलने के लिए किस प्रकार की प्रतिक्रियाएँ करते हैं। यह भूलभूलैयाँ अनेक प्रकार की थीं। कोई सरल थी तथा कोई-कोई अत्यन्त जटिल होती थी। इसी प्रकार के उलझन बॉक्स थे। हम उनके द्वारा किये गये एक प्रयोग का जो उन्होंने बिल्ली पर किया उसका नीचे विस्तृत वर्णन देंगे।

उन्होंने एक भूखी बिल्ली को एक उलझन बॉक्स में डाल दिया। उसका दरवाजा इस प्रकार का बना हुआ था कि वह एक बटन (latch) दबाने पर खुलता था। बॉक्स के बाहर एल मछली का टुकड़ा रख दिया। बिल्ली की समस्या यह थी कि किस प्रकार उस बॉक्स से बाहर निकले जिससे वह मछली के टुकड़े को प्राप्त कर सके। बिल्ली ने तुरन्त उछल-कूद मचाना शुरू किया तथा पंजा बाहर फैलाया। बॉक्स के सींकचों की जगह से बाहर निकलने की कोशिश की। वह उलझन बॉक्स के भिन्न भागों को दबाती रही और उससे बाहर निकलने की कोशिश करती रही। इन्हीं प्रयत्नों के दौरान अचानक ही उसका पंजा बटन (latch) के ऊपर पड़ गया उससे बॉक्स का दरवाजा खुल गया। बिल्ली बाहर आ गयी और उसने मछली का टुकड़ा खाया, लेकिन फिर उसे बॉक्स में बन्द कर दिया गया। बाद में अनेक प्रयासों में उसका वही क्रम रहा, लेकिन अब उसके प्रयास का क्षेत्र बटन के आसपास केन्द्रित हो गया तथा धीरे-धीरे व्यर्थ के प्रयत्नों की संख्या भी कम होने लगी और अन्त में यह हुआ कि बिल्ली को बन्द करते ही वह बटन के पास जाती एवं उसे दबाकर तुरन्त बाहर आ जाती है।

प्रारम्भ में उसके व्यवहार की उन्नति बड़ी ही अक्रमिक (irregular) रही, बाहर निकलने का समय कभी अधिक और कभी कम रहा, परन्तु जब वह उस प्रतिक्रिया को सीख गयी तो बाहर निकलने का समय करीब-करीब एकसा हो गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार का प्रयोग थार्नडाइक ने कुत्तों पर भी किया। बाहर निकलने के लिए उन्होंने भी वैसे ही 'प्रयत्न और भूल' की विधि अपनायी। लेकिन उन्होंने अधिक व्यर्थ के प्रयत्न नहीं किये। उनकी विधि बिल्लियों से कुछ अच्छी थी। बन्दरों की सीखने की क्रिया और भी अच्छी थी।

उपर्युक्त प्रयोगों से थार्नडाइक को ज्ञात हुआ कि पशु व्यर्थ की प्रतिक्रियाओं को धीरे-धीरे छोड़ते जाते हैं तथा सही प्रतिक्रियाओं को अपनाते जाते हैं। प्रश्न है कि आखिर ऐसा क्यों होता है? थार्नडाइक ने इसकी व्याख्या के लिए 'सन्तोष का निमम' (law of effect) का प्रतिपादन किया तथा इस सम्बन्ध में लिखा ''जब किसी प्रतिक्रिया से सफलता प्राप्त होती है या सन्तोष मिलता है, तो परिस्थिति और प्रतिक्रिया के बीच का सम्बन्ध दृढ़ हो जाता है और जिन प्रतिक्रियाओं से असफलता होती है या जो असन्तोषजनक होती हैं वे शिथिल हो जाती हैं और उनके दुबारा होने की सम्भावना कम होती जाती है।''

'सन्तोष का नियम' वास्तव में 'अभ्यास के नियम' से पहले आता है। क्रिया की पुनरावृत्ति से ही कोई क्रिया सीखी जाती है, तो गलत क्रिया काफी बार होती है और सही प्रतिक्रिया पहले केवल एक ही बार; लेकिन चूंकि सही प्रतिक्रिया से सन्तोष अथवा सफलता मिलती है, इसलिए वह दृढ़ हो जाती है। परन्तु गलत प्रतिक्रिया असन्तोषजनक होने के कारण त्याग दी जाती है; फिर भी एक बार सही प्रतिक्रिया मिल जाने पर किसी कार्य विशेष में निपुणता प्राप्त नहीं होती, पुनरावृत्ति (repetition) का आवश्यकता होती है। पुनरावृत्ति से ही कुशलता प्राप्त होती है। इसी पर 'अभ्यास का नियम' (law of exercise) आधारित है।

'अभ्यास के नियम' को आदत-निर्माण का नियम भी कहते हैं। इसको भागों में विभक्त किया है: (1) उपयोग का नियम और (2) अनुपयोग का नियम। जब किसी एक परिस्थिति के प्रति बार-बार एक ही प्रतिक्रिया की पुनरावृत्ति होती है तो उस परिस्थिति और प्रतिक्रिया के बीच एक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इस सम्बन्ध में अभ्यास की आवश्यकता है जिससे वह दृढ़ होते जाते हैं। इसके विपरीत अनुपयोग का नियम है। जब किसी परिस्थिति के प्रति कोई विशेष प्रतिक्रिया प्रकट नहीं की जाती, तो उस उत्तेजन-प्रतिक्रिया का सम्बन्ध क्षीण हो जाता है।

अनुपयोग की दशा में सीखी हुई वस्तु से सम्बन्धित कुशलता में कमी जाती है। बालक बिना अभ्यास के पहाड़े भूल जाता है। टंकण गति भी बिना अभ्यास से कम हो जाती है तथा अभ्यास द्वारा ये क्रियाएँ पुनः ठीक हो जाती हैं। परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि बिना प्रेरणा की जागृति के अभ्यास व्यर्थ है; क्योंकि प्राणी की प्रेरणा ही किसी कार्य में न होगी तो चाहे जितनी बार वह उसको दुहराये वह याद नहीं रहेगी; जैसे—हम लोग बार-बार अपनी घड़ियाँ देखते हैं, परन्तु हमें याद नहीं रहता कि हमारी घड़ी पर अंक रोमन में हैं या अरबी में। ऐसे ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उदाहरण हैं; जैसे—कक्षा में ही बच्चे शब्दों को गलत लिखते हैं, शिक्षक उन्हें बार-बार लिखने को कहते हैं, लेकिन फिर भी वे उन शब्दों को गलत ही लिखते हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि बिना समझे किसी चीज का अभ्यास उपयोगी नहीं होता।

इन उपर्युक्त दो नियमों के साथ-साथ तीसरा नियम भी है जिसे 'तत्परता नियम' (law of readiness) कहते हैं। इसका अर्थ है कि किसी चीज को सीखने के लिए प्राणी में उसके लिए शारीरिक परिपक्वता तथा मानसिक परिपक्वता होना अत्यन्त आवश्यक है। पढ़ना सीखने के लिए आँख-कान ठीक होने के साथ-साथ $6\frac{1}{2}$ वर्ष की मानसिक आयु एवं संवेगात्मक सतुलन भी आवश्यक है।

'संतोष का नियम' और 'अभ्यास का नियम' शिक्षक के लिए महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि जब बालक को शिक्षा में सफलता एवं संतोष की प्राप्ति होती है तो उससे बालक की शिक्षा सुचारु रूप से चलती है। जो बालक जिस विषय में बार-बार असफल होता है तो उस विषय के प्रति बालक में घृणा का भाव बन जाता है। शिक्षक को उपयुक्त शिक्षण द्वारा बालक के हृदय में संतोष की भावना उत्पन्न करनी चाहिए। सीखने की क्रिया में अभ्यास का अत्यन्त महत्त्व है। यद्यपि ये नियम पशुओं पर किये गये प्रयोगों के आधार पर निकाले गये हैं; परन्तु ये मनुष्य के सीखने पर भी लागू किये जा सकते हैं।

(3) सूझ का सिद्धान्त
(Theory of Insight)

सीखने की क्रिया में सूझ के सिद्धान्त का सर्वप्रथम प्रतिपादन जर्मनी के प्रसिद्ध गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिक कोहलर (Kohler) ने किया था। सूझ के सिद्धान्त से हमारा तात्पर्य है सम्पूर्ण परिस्थिति को एक नये दृष्टिकोण से देखना और उसमें विशेष सम्बन्ध देखना जो पहले नहीं देखा गया था, अर्थात हम सूझ का होना तब समझते हैं जब कोई मनुष्य या पशु किसी परिस्थिति में निहित सब सम्बन्धों को समझकर लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है। सूझ एक ऐसी प्रक्रिया है जो समस्त परिस्थिति के निरीक्षण के फलस्वरूप यकायक उत्पन्न होती है, अर्थात लक्ष्य की प्राप्ति तक अविराम गति से चलती रहती है। सूझ द्वारा सीखने में मानसिक क्रिया का अत्यन्त महत्त्व है।

यह सम्भव है कि सूझ, प्रयत्न और भूल के सीखने में भी रहती है और निरन्तर प्रयत्न करने पर उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है और अन्त में व्यक्ति इतनी सूझ प्राप्त कर लेता है कि असफल प्रयत्नों को छोड़कर प्रत्यक्ष रूप में सफल प्रयत्न करता है। यद्यपि कठिन कार्यों को करने में अत्यन्त प्रयत्न करने पड़ते हैं तब कहीं जाकर सूझ आती है और प्रतिक्रिया सफलता से प्रतिपादित होती है। सरल कार्यों को करने में प्रयत्नों की संख्या कम होती है तथा सूझ जल्दी ही विकसित हो जाती है। समस्या सम्बन्धी समस्त तत्त्वों को समझ लेने से और मिलती-जुलती पुरानी समस्याओं को हल करने के सम्बन्ध के अनुभव से भी सूझ की जागृति जल्द विकसित होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हिल्गार्ड ने सूझ के विकसित होने के लिए निम्नलिखित तत्त्वों को बताया है :

(1) सूझ व्यक्ति या प्राणी की क्षमता पर निर्भर करती है।

(2) गत अनुभव सूझ में सहायक होते हैं।

(3) परिस्थिति के तत्त्वों की व्यवस्था भी सूझ पर प्रभाव डालती है।

(4) हिचकिचाहट एवं खोजबीन का होना सूझ के लिए आवश्यक है। ... का सिद्धान्त 'प्रयत्न और भूल' से कुछ भिन्न है। यह परिस्थिति के साथ ... करता है। जैसे गति की समस्याओं को सुलझाने में बालक खोजबीन करता ... ही त्रुटियाँ भी करता है, लेकिन उससे शिक्षक को परेशान नहीं होना चाहिए ... बालक इसी प्रकार खोजबीन करके सही हल पर पहुँचेगा।

(5) सही प्रतिक्रिया की पुनरावृत्ति की जा सकती है, अर्थात सूझ ... हो गयी।

(6) इस सूझ या अन्तर्दृष्टि का प्रयोग नयी परिस्थितियों में (... से मिलती-जुलती हैं) हो सकता है। इसके द्वारा प्राप्त क्षमता का दूसरी ... के सुलझाने में उपयोग हो सकता है।

थार्नडाइक ने पशुओं पर किये गये प्रयोगों द्वारा यह निष्कर्ष नि... पशुओं के सीखने में सूझ का स्थान नहीं है, परन्तु कोहलर (Kohler) ... प्रयोगों द्वारा यह निष्कर्ष निकाला कि पशुओं में भी सूझ होती है। उन्होंने ... पर प्रयोग करके यह देखा कि वे अधिक कालेपन के सम्बन्ध में प्रतिक्रिया करते ... कि किसी विशिष्ट उत्तेजक से। मुर्गी को एक काले कागज पर दाना दिया ... परन्तु जब कभी वह हल्के रंग के कागज पर चोंच मारती थी, तो उसको ... जाता था। बाद में उस काले कागज के साथ एक तीसरा कागज और ... जो उससे और अधिक काला था। अब वे दोनों कागज मुर्गी के सामने ... यह देखा गया कि मुर्गी ने यहाँ भी ज्यादा काले कागज (नये कागज) से ... न कि पुराने हल्के कागज से जिस पर उसे खाने की शिक्षा दी गयी थी ... ने यह सम्बन्ध (अधिक काला होना) पहचाना एवं तब प्रतिक्रिया की। ... एक बच्चे के साथ भी ऐसा ही प्रयोग पहले दो सन्दूकों को लेकर किया ... बच्चे ने ज्यादा चमकीला सन्दूक पहचान लिया।

वनमानुषों पर किये गये प्रयोग कोहलर (Kohler) के सबसे ... उसने एक भूखे वनमानुष को पिंजड़े में बन्द कर दिया तथा बाहर एक ... दूरी पर रखा कि वह हाथ या पैर बढ़ा कर केले को खींच न सके। ... केले को देख सकता था, तथा पिंजड़े के एक कोने में एक डण्डा रख दिया ... अब वनमानुष के सामने यह समस्या थी कि वह उस केले को कैसे प्राप्त ... बार उसने अपने हाथ-पैर फैलाये, परन्तु वह असफल ही रहा। असफल ... वह कुछ देर तक शान्त बैठा रहा। फिर उसने एकाएक डण्डा उठाकर केले ... लिया और उसको तुरन्त खा गया।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण प्रयोग वह था, जिसमें एक डण्डे को दूसरे से ...तर केला खींचा जा सकता था; केवल एक ही डण्डे से केला नहीं खींचा जा ...ता था। यह प्रयोग सुल्तान नामक एक तेज बुद्धि वाले वनमानुष पर किया गया। उसने एक डण्डे से खींचने का प्रयत्न किया, फिर दूसरे से। उसने फिर एक ...को आगे की ओर बढ़ाया और दूसरे डण्डे से पहले डण्डे को आगे बढ़ाया। ...डण्डे एक रेखा में होकर केले तक पहुँच गये और उसे छुआ भी। इससे वन...ष को सन्तोष प्राप्त हुआ, परन्तु केला प्राप्त नहीं हुआ। कोलहर ने उसको ...रा भी किया अर्थात उसकी आखों के सामने एक उँगली को बड़े डण्डे के छेद में ...। लेकिन उसने इस संकेत से कोई लाभ नहीं उठाया। एक घण्टे तक अनायास ...प्रयत्न करने पर उसने प्रयत्न करना छोड़ दिया तथा दोनों डण्डों के साथ खेलने ...। खेलते-खेलते यकायक उसने एक डण्डे को दाहिने हाथ में लिया और दूसरे को ...हाथ में तथा दोनों के सिरों को पास-पास ले गया, तो यकायक ही दोनों डण्डे ...में जुड़ गये। उस नये जुड़े हुए बड़े डण्डे से वह पिंजड़े के बाहर रखे हुए केले ...अपनी ओर खींचने का प्रयत्न करने लगा। ये डण्डे कुछ ढीले जुड़ हुए थे, इसलिए ...-अलग होकर जमीन पर गिर गये। सुल्तान ने इन्हें फिर जोड़ दिया तथा ...र रखे केले को खींचकर खा गया। दूसरे दिन उसने बहुत कम प्रयत्न किया तथा ...ी ही केला खींचने व खाने में सफल हो गया।

इस प्रयोग से यह स्पष्ट है कि सुल्तान नामक वनमानुष ने जब तक यह ...देखा कि दोनों डण्डे मिलकर केले तक पहुँच सकते हैं, तब तक यह क्रिया सफल ...हुई। 'दोनों डण्डों का मिलकर फल तक पहुँचना'—यह सम्बन्ध देखते ही ...या हल हो गयी। यद्यपि परिस्थिति के विभिन्न तत्त्व पहले भी उपस्थित थे, ...तु उनका एकीकरण न हुआ था। इस एकीकरण के कारण सूझ विकसित हो ...तथा समस्या का हल निकल आया। कोहलर ने इस एकीकरण के और भी ...क उदाहरण दिये हैं। उदाहरणार्थ, एक प्रयोग में एक सन्दूक पर चढ़कर छत से ...कते हुए केले तक पहुँचना था। तात्पर्य यह है कि व्यवस्थित दृष्टि क्षेत्र में सब ...होनी चाहिए। सूझ तब तक उत्पन्न नहीं हो सकती जब तक भाग अलग-अलग ...ाई देते हैं। जब समस्त तत्त्वों का एकीकरण हो जाता है तथा उनके सम्बन्ध भी ...में लाने लगते हैं अर्थात 'सन्दूक पर चढ़ो फल पाने के लिए' यह पूरी स्थित एक ...ित रूप में प्रस्तुत हो जाती है, तब यह कह सकते हैं कि व्यक्ति या पशु ने सूझ ...कोई क्रिया सीख ली है।

प्रश्न

1. 'सीखने' की परिभाषा कीजिए। मानव सीखने में कारकों को स्पष्ट ...िए।

(Define Learning. Indicate the factors in human learning. ...a, M. A. Sociology, 1955, 1964, 1965, 1969.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

2. मानव सीखने के विभिन्न कारकों का आलोचनात्मक विश्लेषण और मानव व्यक्तित्व के विकास में उनकी सापेक्षित महत्ता प्रदर्शित कीजिए।

(Analyze critically various factors of human learning and their relative importance in the development of human perso... Agra, M, A. Sociology, 1960.)

3. स्थानापन्न किस प्रकार सीखने का मौलिक सिद्धान्त है? कुछ ... दीजिए।

(In what way is substitution a basic principle of lea... Give some examples. Rajasthan, M, A. Sociology, 1958.)

4. सक्रिय तथा निष्क्रिय सीखने में क्या भेद है? प्रत्येक के ... दीजिए।

(What is the difference between active and passive lea... Give examples of each. Rajasthan, M. A. Sociology, 1958.)

5. संक्षेप में टिप्पणी लिखिए—मानव सीखने के कारक।

(Write short note on factors of human learning. Agra, ... Sociology, 1957, 1968.)

6. अनुकरण और सुझाव में भेद कीजिए। यह दर्शाइए कि किस ... मानव सीखने में अनुकरण और सुझाव महत्त्वपूर्ण कारक हैं?

(Distinguish between imitation and suggestion. Show ... imitation and suggestion are important factors in human lea... Agra, M. A. Sociology, 1963.)

7. मूलप्रवृत्ति और सहानुभूति की परिभाषा दीजिए। सामाजिक ... उनके महत्त्व की विवेचना कीजिए।

(Explain the terms instinct and sympathy. Discuss thi... ficance in social learning, Agra, M. A. Sociology, 1966.)

8. सीखना अनुकूलन प्रक्रिया पर तीन प्रमुख प्रभाव डालता है: ... चालकों पर; द्वितीय, उद्देश्यों पर और तृतीय उन साधनों पर जिनके द्वारा ... उद्देश्य पर पहुँचते हैं; अपनी आलोचना दीजिए।

(Learning has three principal effects on the adaptive pr... first, on the drives; second, on the goals and third, on the m... getting from drive to goal. Give your comments. Agra, M. A. ... logy, 1967.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

21

सामाजीकरण

(Socialization)

समाज में बच्चा पैदा होता है और शनैः-शनैः अपनी आयु के अनुसार समाज के आचार-व्यवहार सीखता जाता है और वह भी समाज के अन्य सदस्यों के समान बन जाता है। जिस प्रक्रिया के द्वारा वह समाज के अनुसार बनता है, उसे ही सामाजीकरण कहते हैं। सामाजीकरण प्रत्येक समाज में होता है, चाहे वह अमरीका का अत्यधिक सभ्य समाज हो या कोई असभ्य वन्य जाति; जैसे—भील, संथाल आदि। मनुष्य न केवल इस प्रक्रिया के द्वारा सामाजिक मनुष्य बनता है अपितु वह मानव भी बनता है। मनुष्य जब पैदा होता है तो एक पशु के समान होता है और यदि उसे समाज में न रखा जाय तो वह पशु ही बना रह जायेगा।

इस अध्याय में हम सर्वप्रथम यही विचार करेंगे कि यदि मनुष्य को पैदा होने के बाद समाज में न रखा जाता तो उसका क्या होता ? इसके बाद हम सामाजीकरण की परिभाषा करेंगे और फिर उसकी प्रक्रिया पर विचार करेंगे। अन्त में हम सामाजीकरण के कारकों एवं अभिकर्ताओं पर प्रकाश डालेंगे।

मनुष्य, समाज से पृथक
(Man, Separated from Society)

मनुष्य को यदि समाज से पृथक रखा जाय तो क्या होगा ? वास्तव में यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अरस्तू ने कहा, "मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।" मैकडूगल तथा अन्य मूलप्रवृत्तिवादी भी सामूहिकता की मूलप्रवृत्ति का उल्लेख करते हैं। इनके अनुसार सामाजिकता जन्म से ही होती है। व्यक्ति अकेले नहीं रह सकता। प्रायः यह देखा गया है कि एकान्तवास का दण्ड अत्यन्त कठिन एवं भयंकर होता है। जिन लोगों को यह दण्ड दिया जाता है वह या तो मर जाते हैं, या बीमार हो जाते हैं या पागल हो जाते हैं।

यह तो उन लोगों के विषय में हुआ जो समाज में रह चुके हैं। अब हम ऐसे उदाहरणों पर विचार करेंगे जिसमें व्यक्ति को पैदा होने के बाद समाज में रहने का अवसर प्राप्त न हुआ। संसार के अनेक भागों में ऐसे बच्चे मिले हैं जिन्हें भेड़िये या दूसरे जानवर उठा ले गये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(अ) **कमला एवं अमला**—बंगाल में सन् 1920 में पादरी जे. सिंह[1] को बच्चे मिले जिन्हें भेड़ियों के पास से प्राप्त किया गया था। कमला 8 साल की थी और अमला $1\frac{1}{2}$ वर्ष की। ये बच्चे भेड़ियों की तरह ही रहते, चलते, खाते, इत्यादि। वे खड़े होकर न चल पाते। वे दिन में अगतिशील होकर पड़े रहते, रात के समय घूमते थे। वे कच्चा मांस खाते और दूध भेड़ियों की तरह... श्रीमती सिंह ने इनका लालन-पालन प्रारम्भ किया। वे कुछ दिनों में मिसेज... को पसन्द करने लगे।

अमला 11 महीने रहने के बाद मर गयी। कमला को इसका बड़ा... हुआ। कमला ने धीरे-धीरे कुछ सीखना शुरू किया। $5\frac{1}{2}$ साल तक सीखने के... भी वह दोनों पैरों पर खड़े होकर ठीक से नहीं चल पाती थी। यदि दौड़ना प... तो अपने हाथ भी प्रयोग करती। उसने केवल 45 शब्द ही सीखे। सन् 1929... 17 साल की आयु में वह मर गयी।

(ब) **अवेरान का जंगली लड़का**—फ्रांस के अवेरान (Aveyron) जंगल... एक लड़का मिला। वह बिलकुल जंगली था। वह दूसरों को काटता एवं डराता... भोजन जानवरों की तरह खाता था। उसको बोलना नहीं आता था, केवल... आवाजें करता था। वह कुर्सी पर नहीं बैठ सकता था। पीनेल (Pinal), जो... फ्रांस का एक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक था, ने इसे एक जड़बुद्धि कहकर छोड़ दिया;... वह ग्यारह साल का होकर भी एक साल के बालक सरीखी मानसिक क्षमताएं र... था। ईतार्द (Itard) ने कहा कि यदि यह जड़बुद्धि होता तो जंगल में जीवित... रह सकता था। उसने इसे पाला। उसे नहलाया जाता और कपड़े पहनाये ज... धीरे-धीरे वह गर्मी-सर्दी में भेद करने लगा। वह धीरे-धीरे अन्य बातें भी स... लगा। वह पहले प्रसन्नता और क्रोध के ही उद्वेग जानता था। बाद को औ... भाव जानने लगा। बोलना वह न सीख सका। यदि वह दूध चाहता तो दूध का... आगे कर देता। वह संकेत की भाषा का प्रयोग करने लगा।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रारम्भ के दिनों में यदि बच्चा समाज में र... तो उसका मानव बनना कठिन हो जाता है। ईतार्द ने लिखा है, "विक्टर ने... जंगली से यह सीखा कि किस प्रकार मानव समाज में रहना चाहिए, एवं अप... इच्छाओं को किस प्रकार एक लिखित भाषा में व्यक्त करें; परन्तु उसने... समवयस्क बालकों से कभी योग्यता की समानता नहीं की। बचपन में मानव स... की कमी ने बालक में इतनी रुकावट पैदा कर दी कि इतने बड़े प्रयत्नों के... भी इतना कम फल प्राप्त हुआ।"[2]

विक्टर 40 वर्ष की आयु में मर गया।

---

1 Singh and Zingg, *Wolf Children and Feral Man* (1942), H... Bros., N. York.

2 Itard, *The Wild Boy of Aveyron* (1932), p. 63.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(अ) अन्ना—अन्ना एक अवैध बालिका थी। उसकी माँ ने उसे एक कमरे में बन्द कर रखा था। 1938 में, जब वह पांच वर्ष की थी, एक कुर्सी से बँधी पायी गयी। उसका शरीर केवल हड्डियों का ढाँचा था। वह बोल नहीं सकती थी। वह चल भी नहीं सकती थी।[1]

जब उसे बाद में अस्पताल में रखा गया तो उसकी हालत सुधरने लगी। बाद को उसे पिछड़े हुए बच्चों के स्कूल में रखा गया। धीरे-धीरे उसने सीखना शुरू किया। सन् 1942 में वह इशारों को समझ लेती थी, रंगों को पहचान लेती थी, चित्रों में भेद कर लेती थी। कुछ शब्दों को बोलने भी लगी। 1942 में उसकी मृत्यु हो गयी।

(ब) ईजाबेल—नवम्बर 1938 में मिली। इस समय वह $6\frac{1}{2}$ वर्ष की थी। यह भी एक अवैध लड़की थी। इसकी माँ गूँगी और बहरी थी। इसके फलस्वरूप ईजाबेल बोलना न सीख पायी। वह आदमियों को देखकर पशुओं के समान डरती थी। वह इस आयु पर भी एक शिशु के समान ही थी। वह किसी भी प्रकार के सामाजिक सम्बन्धों से परिचित नहीं थी।

जब इसे कुछ बोलना सिखाया जाने लगा तो शुरू में बड़ी कठिनाई आयी। आखिर एक सप्ताह के उपरान्त उसने कुछ आवाज की। फिर धीरे-धीरे बोलने लगी। सात महीने बाद 1500-2000 शब्द वह जानती थी और जटिल प्रश्न करती थी। बाद में तो वह एक पब्लिक स्कूल में पढ़ने लगी और स्कूल के कार्यक्रमों में ग लेने लगी। 1952 में उसने छठी श्रेणी पास कर ली।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि मनुष्य एक पशु के रूप में पैदा होता है और समाज ही उसे मानव बनाता है।

समाज हमें मानव बनाता है
(Society Makes us Human)

जब हम पैदा होते हैं तो एक पशु होते हैं और हमारे अन्दर कुछ क्षमताएँ होती हैं जिनको विकसित किया जा सकता है। गिटलर ने लिखा है, "मानव जैविक अस्तित्व के रूप में पैदा होता है जो सामाजिक-सांस्कृतिक प्रकृति को विकास करने योग्य होता है। निम्न श्रेणी के पशुओं के विपरीत वह उत्पन्न होता है; आवश्यक विस्तृत—आधारित मस्तिष्क, जटिल स्नायु-सस्थान, भाषा के विकास के लिए सावयव अंगों तथा उच्च श्रेणी की संज्ञा सहसम्बन्ध—जो सम्भाव्य रूप से उसे सामाजीकृत या सभ्य होने योग्य बनाते हैं। फिर भी व्यक्ति के जैविक लक्षण उसके सामाजिक या सांस्कृतिक रहस्यों को कोई सुरक्षा नहीं देते। वे आवश्यक स्थितियाँ हैं, परन्तु वे पूर्ण नहीं हैं।"[2]

---

1. J. B. Gittler, *Social Dynamics* (1952), pp. 21-28.
2. *Ibid*, p. 21.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसलिए एक मानव बनने के लिए हमें समाज में रहना पड़ता है और सीखना पड़ता है। गिटलर ने लिखा है, "सामाजिक जीव बनने के लिए मनुष्य को आदतों, विश्वासों, ज्ञान, अभिवृत्ति और स्थायीभावों; जैसे—उच्च जैविक ... को प्राप्त करना चाहिए, जो उसमें अन्य व्यक्तियों की संगति से विकसित होते हैं, जिनमें ये गुण पाये जाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि समाज ही हमें मानव बनाता है। ... अन्तः क्रिया द्वारा सीखते हैं। गिटलर ने लिखा है, "व्यक्ति का अधिकतर ... जिसको हम सामाजिक कहते हैं, सीखने से, अन्य सामाजीकृत व्यक्तियों के ... तथा सामाजिक सम्पर्क से आता है।"[1]

यह सीखने की प्रक्रिया ही सामाजीकरण कहलाती है। हम समाज ... होते हैं। अनेक प्रक्रियाओं द्वारा समाज हमें सिखाने का प्रयत्न करता है। ... कि हमें पता भी नहीं चलता और हम आयु के साथ-साथ सब सीखते जाते हैं। ... हम सामाजीकरण के अर्थ को समझाने का प्रयत्न करेंगे।

सामाजीकरण का अर्थ
(Meaning of Socialization)

सामाजीकरण सीखने की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम समाज के ... सीखते हैं। जॉनसन ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "सामाजीकरण ... सीखना है जो सीखने वाले को सामाजिक कार्य करने योग्य बनाता है।"[2]

किम्बाल यंग ने भी इसी प्रकार की परिभाषा दी है, "सामाजीकरण ... अर्थ होगा व्यक्ति को सामाजिक सांस्कृतिक संसार में परिचय कराने की प्रक्रिया ... तथा उसको समाज में सहभागिक सदस्य बनाने से और उसके विभिन्न समूहों ... उस समाज के प्रतिमानों एवं मूल्यों को स्वीकार करने को उद्यत करने के लिए ...

सामाजीकरण की अनेक परिभाषाएँ की गयीं हैं। कहीं-कहीं तो इसके ... अंगों पर ही परिभाषाएँ आधारित हैं। रॉस ने लिखा है, "सामाजीकरण सहचरों ... में हम की भावना के विकास के साथ ही उनकी योग्यता में विकास एवं ... कार्य करने की इच्छा से होगा।[4]

बोगार्डस ने भी लिखा है, "सामाजीकरण एक प्रक्रिया के रूप में जहाँ ... मानव कल्याण के लिए साथ-साथ निर्भरतापूर्वक व्यवहार करना सीखते हैं ...

---

1 J. B. Gittler, *Social Dynamics*, p. 21.

2 "Socialization is learning that enables the learner to p... social roles." Harry M. Johnson, *Sociology : A System... duction* (1961), p. 110.

3 "Socialization......will mean the process of inducting the i... dual into the social and cultural world; K. Young, *A H... of Social Psychology*, p. 89.

4 E. A. Ross,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार करने में, उनको सामाजिक स्वनियन्त्रण का, सामाजिक दायित्वों और सन्तुलित व्यक्तित्व का ज्ञान होता है।"[1]

सामाजीकरण समाज के अनुसार बनाने की प्रक्रिया को कहते हैं। किम्बाल यंग ने समझाते हुए लिखा है, "इसका अर्थ है कि व्यक्ति जनरीतियों, रूढ़ियों, नियमों और अपनी संस्कृति के अन्य लक्षणों, साथ ही कुशलताओं और अन्य आदतों, जो उसको समाज का एक क्रियाशील सदस्य बनाते हैं, को सीखता है। वह अपने स्वयं, परिवार, पड़ोस, वर्ग समुदाय के नियमों एवं मूल्यों के साथ तादात्म्यीकरण सीखता है। संक्षेप में, सामाजीकरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया अन्तः क्रियाओं या सामाजिक कार्यों के क्षेत्र के अन्तर्गत आती है।"[2]

मनुष्य बचपन से लेकर मृत्युपर्यन्त तक कुछ न कुछ सीखता ही रहता है। सामाजीकरण के लिए बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मनुष्य अपने समाज की जनरीतियाँ, रूढ़ियाँ, प्रथाएँ, सामाजिक मूल्य, फैशन, विश्वास, अभिवृत्तियाँ, पूर्व निर्णय, अनुशासन, संवेग, स्थायीभाव, नैतिक विचार, जीवन लक्ष्य इत्यादि सीखता है। यही सामाजीकरण है, व्यक्ति और समाज के बीच एकीकरण हो जाता है। व्यक्ति अपने समाज से समूह तादात्म्य कर लेता है। समूह तादात्म्य ही सामाजीकरण कहलाता है। हम कह सकते हैं कि व्यक्ति समाज तादात्म्यीकरण ही सामाजीकरण है।

सामाजीकरण को हमने सीखने की प्रक्रिया बताया है। यहाँ पर हमें सामाजीकरण और सीखने में अन्तर भी समझ लेना चाहिए, जिससे दोनों को हम स्पष्ट रूप से समझ सकें।

सामाजीकरण और सीखना
(Socialization and Learning)

सामाजीकरण एक प्रकार का सीखना है। सीखना विस्तृत अर्थों में प्रयोग होता है। सामाजीकरण सीखने का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। जॉनसन ने लिखा है, "इस प्रकार, सम्पूर्ण सीखना सामाजीकरण नहीं है; यह माना जाता है कि कुछ सीखना संप्रेरणाओं के लिए और सामाजिक व्यवस्थाओं में भाग लेने के लिए आवश्यक योग्यता है।"[3]

सामाजीकरण एक निश्चित दिशा में सीखना होता है। यह दिशा समाज निर्धारित करता है। जॉनसन ने लिखा है, "सामाजीकरण वह सीखना है जो सामाजिक कार्यों के करने की किसी की योग्यता में योग देता है तथा यह सीखना किसी विशेष दिशा और गुण में होता है; कुछ विशेष सामाजिक व्यवस्था के दृष्टिकोण से, यह प्रशंसायोग्य एवं इच्छित सीखना है।"[4]

1. E. S. Bogards, *Fundamentals of Social Psychology*, p. 57.
2. K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 89.
3. H. M. Johnson, *Sociology*, p. 110.
4. *Ibid*, pp. 117-18.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस प्रकार हम देखते हैं कि सीखना तटस्थ शब्द है। समाज में सीखना अ भी हो सकता है, बुरा भी हो सकता है। पर सामाजीकरण केवल वही सीखना है जो समाज के नियमों के अनुसार मान्य होता है। सामाजीकरण व्यक्ति को स में रहने योग्य बनाता है। सामाजीकरण व्यक्ति को समाज के मूल्य एवं आ सिखाता है। अतः सामाजीकरण समाज के मूल्यों एवं आदर्शों के अ सीखना है।

सामाजीकरण और परिपक्वता
(Socialization and Maturation)

सामाजीकरण और परिपक्वता में भी अन्तर समझ लेना चाहिए। परि शारीरिक एवं जैविक क्षमताओं की आयु के अनुसार वृद्धि को कहते हैं जो स्वा गति से होती रहती है। सामाजीकरण अन्तःक्रिया का परिणाम है। न्यूकोम्ब ने भेद स्पष्ट करते हुये लिखा है, "उदाहरणस्वरूप, वनस्पतिशास्त्री हमको बताते हैं सूक्ष्मदर्शी परीक्षा से कुमुदनी का फूल सूक्ष्म चित्र में खिला हुआ मालूम पड़ता है उस समय उचित संस्कृति में, साधारणतः विस्तृत; बड़ा एवं रंगीन होता है जबकि बसन्त ऋतु के फूल की शक्ल में आता है, परन्तु सामाजिक व्यवहार इस प्रकार नहीं है; उसमें कोई सूक्ष्म सामाजिक प्रत्युत्तर नहीं जो स्वयं ही खिलने के लिए स्थित एवं रुका रहता हो। जैविक आज्ञाओं और जैविक योग्यताओं में प्रारम्भ के लिए कुछ भी नहीं है। क्रोध में, प्रत्युत्तर में और सीखने में, सावयव स्व अपने में परिवर्तन कर लेता है। यह कहना आवश्यक है कि 'परिवर्तन स्वयं नहीं बल्कि केवल 'प्रत्युत्तरों' के द्वारा ही परिवर्तन होता है। यह भी सत्य है कि वातावरण 'द्वारा ही परिवर्तित' किया जाता है, क्योंकि शिशु जिसको वह परिवर्तन चाहता है बिना उत्तेजना के प्रत्युत्तर नहीं दे सकता।"[1]

सामाजीकरण की प्रक्रिया (Process of Socialization)

सामाजीकरण की एक निश्चित एवं निरन्तर प्रक्रिया है जो जन्म से ही प्रारम्भ हो जाती है। इसका विवरण 'आत्म के विकास' (development of the ego) अध्याय में किया जायेगा।

सामाजीकरण के माध्यम
(Agencies of Socialization)

सामाजीकरण के कुछ महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं, जिनके द्वारा समाज इसे है। किम्बाल यंग ने इनके विषय में लिखा है, "समाज के अन्तर्गत सामाजी विभिन्न माध्यमों में, परिवार सबसे महत्त्वपूर्ण है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि के अन्तर्गत माता एवं पिता ही साधारणतया अत्यधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हैं

1 T. M. Newcomb, *Social Psychology*, p. 51.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजीकरण के अन्य माध्यमों में पड़ोस, सम्बन्धी, प्रारम्भिक समूहों के सदस्य, साथ ही साथ द्वैतीयिक समूहों की सदस्यता में आते हैं।"[1]

सामाजीकरण के माध्यमों को हम निम्न प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं :

(1) परिवार (family),
(2) आयु-समूह (peer group),
(3) पड़ोस (neighbourhood),
(4) नातेदारी समूह (kinship groups),
(5) पाठशाला (educational group),
(6) अन्य प्राथमिक समूह (other primary groups),
(7) द्वैतोयिक समूह (secondary groups)।
 (अ) वर्ग (class),
 (ब) जाति (caste)
 (स) राष्ट्रीयता (nationality),
 (द) राष्ट्र (nation),
 (य) राजनैतिक पार्टी (political party).
 (र) धार्मिक समूह (religious group).
 (ल) भाषा समूह (language group).
 (व) व्यावसायिक समूह (occupational group),
 (श) अन्य (others)।

(1) परिवार (Family)—सामाजीकरण में सबसे महत्त्वपूर्ण है। परिवार भी केन्द्रीय परिवार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। परिवार का संगठन इस प्रकार होता कि वह इस कार्य को कर सके। जॉनसन ने लिखा भी है, "परिवार विशेष रूप में स प्रकार संगठित रहता है जो सामाजीकरण को सम्भव बनाता है।"[2]

सामाजीकरण प्रारम्भ के वर्षों में अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। हमने जंगली च्चों या अन्य समाज से पृथक बच्चों के उदाहरण देखे। उनसे स्पष्ट रूप से यह ज्ञात ता है कि प्रारम्भ के वर्षों में यदि सामाजिक अन्तःक्रिया के द्वारा सीखने का अवसर मिले तो बाद को सीखना कठिन हो जाता है। एक प्रकार सेरउस समय का सीखना माजीकरण की नींव है। किम्बाल यंग ने भी लिखा है, "इस सम्बन्ध में साधारणतः ह विश्वास किया जाता है कि प्रारम्भिक सामाजाकरण की मौलिक एवं अधिक

[1] "Of the various agents of socialization within society, the family is the most important, and within the family there is no doubt that the mother and father are ordinarily the most significant individuals........" K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 89.

[2] "The family in particular is organized in such a way as to make socialization possible." H. M. Johnson, *Sociology*, p. 112.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वरूपात्मक है। अपेक्षाकृत किसी अन्य प्रकार के सीखने के जो बाद में सीखा है।"[1]

प्रारम्भ में यह नींव धरने का कार्य परिवार ही करता है। प्राय: 3 वर्ष... बालक परिवार के बाहर से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रखता।

केन्द्रीय परिवार में भी निम्न महत्त्वपूर्ण स्थितियाँ होती हैं :

(1) पति-पत्नी (2) पिता-पुत्र (3) पिता-पुत्री (4) माता-पुत्र ... माता-पुत्री (6) भाई-भाई (7) भाई-बहन (8) बहन-बहन। इसी को हम संक्षेप में ... कह सकते हैं—(1) पति-पत्नी (2) पिता-बच्चे (3) माता-बच्चे (4) बच्चे-बच्चे।

सामाजीकरण की दृष्टि से महत्त्व के अनुसार हम इनको इस श्रेणी में ... सकते हैं : (1) माता-बच्चे (2) पिता-बच्चे (3) बच्चे-बच्चे (4) पति-पत्नी। सामाजीकरण में माता का सबसे बड़ा हाथ होता है। माता का प्रभाव बच्चे पर ... पड़ता है। प्रारम्भ में $1\frac{1}{2}$ वर्ष तक तो प्राय: माता और बच्चे का ही सम्बन्ध ... है। बच्चा अपने और माता के बीच कोई अन्तर नहीं समझता। माता किस ... दूध पिलाती है, कब-कब पिलाती है, इस सबका बच्चे पर प्रभाव पड़ता है। माता ... द्वारा लाड़-प्यार भी इस प्रक्रिया के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आत्म के विकास ... माता ही सबसे महत्त्वपूर्ण है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "परिवार स्थिति के अन्तर्गत ... मौलिक अन्तःक्रियात्मक साँचा बच्चे और माँ का है।"[2]

माता बच्चे की भूख को दूध पिलाकर मिटाती है। इसी समय वह ... पुचकारती है, स्नेह करती है, चूमती है। इन क्रियाओं के कारण बच्चे में ... विकास होता है। बच्चे में कुछ आशाएँ विकसित होती हैं। इन आशाओं ... उसका आगे चलकर सामाजीकरण होता है। माता यदि उसको प्यार न दे तो ... भी बच्चे पर प्रभाव पड़ता है। आगे चलकर सामान्य रूप से इस समस्या पर ... विचार करेंगे।

पिता तथा बच्चों का भी सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण है। प्राय: पिता परिवार ... नेता होता है। वह बच्चों को अनुशासन एवं अन्य आवश्यक कार्यों की शिक्षा ... है। लड़कों को विशेष रूप से पिता शिक्षा देता है। प्राय: लड़के पिता के कार्यों ... ही अनुकरण करते हैं।

बच्चों-बच्चों का सम्बन्ध भी महत्त्वपूर्ण है। प्राय: बच्चों का प्रभाव एक ... पर पड़ता है। यदि एक बच्चा खराब निकल जाय तो इसका प्रभाव अन्य ... पर भी पड़ता है। बच्चे आपस में भी सीखते रहते हैं।

---

[1] "In this connection it is generally believed that the early so... zation is basic and more fundamental than anything that is le... later." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 89.

[2] "Within the family situation, the basic interactional matrix is between the child and the mother." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 120.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पति-पत्नी के सम्बन्ध भी बच्चों के सामाजीकरण के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। प्रायः इन्हीं सम्बन्धों से बच्चे अपने भविष्य के सम्बन्धों की कल्पना करते हैं। यदि पति-पत्नी प्रेम से सन्तुलित जीवन बिताते हैं, तो बच्चों पर भी वैसा ही प्रभाव पड़ता है। पति-पत्नी अपने यौन सम्बन्ध बच्चों के सामने ही करते हैं या पृथक इसका भी प्रभाव बच्चों पर पड़ता है। यौन सम्बन्धी बच्चों की प्रवृत्तियां यहीं से प्रारम्भ होती हैं। कुछ माता-पिता संयम नहीं रख पाते और उसका प्रभाव बच्चों पर अच्छा नहीं पड़ता। यदि पति-पत्नी के सम्बन्ध सन्तुलित नहीं होते तो बच्चों का सामाजीकरण भी अच्छा नहीं होता। यदि किसी स्त्री का विवाह किसी ऐसे पुरुष से हो जाता है जिससे वह घृणा करती है तो यह घृणा बच्चों तक में भी फैलती है।

माता-पिता यदि बच्चों को तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं तो बच्चों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके कारण उनके अन्दर समाज के प्रति बदला लेने की भावना जागृत हो जाती है और सामाजीकरण की प्रक्रिया में बाधा पड़ जाती है। डांट-डपट, झिड़की आदि का प्रभाव भी प्रायः अच्छा नहीं पड़ता। बच्चों में हीनता की भावना विकसित हो जाती है।

अधिक प्यार तथा लाड़-दुलार का भी प्रभाव बच्चों पर अच्छा नहीं पड़ता। वे परिवार पर जीवन में आवश्यकता से अधिक आश्रित हो जाते हैं। बच्चे आत्म-केन्द्रित तथा स्वार्थी हो जाते हैं।

यदि माता-पिता बच्चों के साथ व्यवहार करने में भेदभाव करते हैं, तो इसका प्रभाव भी सभी बच्चों पर बुरा पड़ता है। जिस बच्चे का पक्ष लिया जाता है वह ज्यादा प्यार में बिगड़ जाता है और जिसके विरुद्ध ऐसा किया जाता है वह तिरस्कार की भावना विकसित करता है। कुछ बच्चे निराश और संकोची हो जाते हैं।

माता-पिता के नैतिक विचारों का भी बच्चों पर प्रभाव पड़ता है। जिन परिवारों में नैतिक विचारों पर बल दिया जाता है, उन परिवारों के बच्चे उच्च नैतिक विचार रखते हैं।

परिवार की सामाजिक स्थिति का भी बच्चों के विकास पर प्रभाव पड़ता है। बच्चे सदैव यह सुनते रहते हैं कि 'ऐसा करना हमारे परिवार के लिए शोभनीय नहीं है', 'हमें अपने परिवार के सम्मान का ध्यान रखना चाहिए।' इसके कारण बच्चे अपना एक दृष्टिकोण बना लेते हैं और उसी के अनुसार कार्य करते हैं।

परिवार की आर्थिक अवस्था का भी बच्चे के व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है। जो परिवार सम्पन्न होते हैं, उनके बच्चों में सुरक्षा की भावना रहती है। जो परिवार आर्थिक दृष्टि से हीन होते हैं, उन परिवारों के बच्चों पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है। उनमें असुरक्षा एवं हीनता की भावना विकसित हो जाती है। इसके कारण उनका उद्वेगात्मक ढांचा ऐसा बन जाता है कि वे प्रायः असामाजिक हो जाते हैं। समाज के प्रति उनमें एक विद्रोह की भावना बन जाती है। वे सदैव चिन्तित रहते हैं। इसका प्रभाव उसके मानसिक जीवन पर बहुत अधिक पड़ता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिवार के सदस्यों के धार्मिक, राजनैतिक इत्यादि विचार भी बच्चों को प्रभावित करते है। इस प्रकार हम देखतें हैं कि परिवार व्यक्ति के विकास में प्रत्येक अंग पर प्रभाव डालता है। इसलिए यह ठीक ही कहा गया है कि व्यक्ति जो कुछ भी है, परिवार के कारण है। एक व्यक्ति अपने परिवार की संस्कृति को जीवन भर प्रदर्शित करता है। सामाजीकरण में परिवार से अधिक महत्त्वपूर्ण माध्यम दूसरा कोई नहीं है।

किम्बाल यंग ने सामाजिक सीखने के दो प्रकार बताये हैं : प्रथम सांस्कृतिक अनुकूलन (cultural conditioning) और दूसरा वैयक्तिक सामाजिक सीखना (personal social learning)। प्रथम प्रकार का सामाजिक सीखना परिवार में होता है। किम्बाल यंग ने इसके सम्बन्ध में लिखा है, "यह इस तरीके से करना है जिसमें परिवार के सदस्य और विशेष रूप से माँ एवं बाप एक दिये हुए समाज के मौलिक सांस्कृतिक नियमों का बच्चे को परिचय दिलाते हैं।"[1]

इस प्रकार परिवार सामाजीकरण का प्रथम एवं अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माध्यम है।

(2) **समान आयु-समूह** (Same Age Group or Peer Group)—बच्चा परिवार से बाहर अपनी आयु के अन्य बच्चों के साथ खेलता है और इसके द्वारा अनेक वस्तुएँ सीखता है। यह प्राथमिक समूह बच्चों के सामाजीकरण के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जिन बच्चों को यह समूह नहीं मिलता उनका स्वतन्त्र विकास रुक जाता है और वे अपने में ही अधिक लीन रहते हैं।

(3) **पड़ोस** (Neighbourhood)—पड़ोस भी सामाजीकरण की प्रक्रिया में भाग लेता है। बच्चे पास-पड़ोस के लोगों को देखकर बहुत कुछ सीखते हैं। पड़ोस एक प्रकार से विस्तृत परिवार का रूप ले लेता है। इसीलिए पड़ोस का अच्छा होना आवश्यक है।

(4) **नातेदारी समूह** (Kinship Groups)—नातेदारी समूह भी सामाजीकरण के लिए महत्त्व रखते हैं। बच्चा अपने रिश्तेदारों से बहुत कुछ सीखता है।

(5) **पाठशाला** (Educational Groups)—पाठशाला सामाजीकरण में परिवार के समान ही महत्त्व रखता है। स्कूल विशेष रूप से आधुनिक युग में सामाजीकरण का एक विशेष माध्यम है। गुरु या शिक्षक का इस दृष्टि से विशेष कार्य होता है।

(6) **अन्य प्राथमिक समूह** (Other Primary Groups)—अन्य प्राथमिक समूह, जिनका एक व्यक्ति सदस्य होता है, भी सामाजीकरण में भाग लेते हैं। इनमें से प्रमुख हैं—मित्र-मण्डली, क्लब, मनोरंजन केन्द्र इत्यादि।

(7) **द्वैतीयिक समूह** (Secondary Groups)—द्वैतीयिक समूह, जिनका एक व्यक्ति सदस्य होता है भी सामाजीकरण में प्रभावशाली होते हैं। वर्ग, जाति, राष्ट्रीयता, राष्ट्र, राजनैतिक पार्टी, धार्मिक समूह, भाषा समूह, व्यावसायिक समूह

---

1 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 119.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महत्त्वपूर्ण हैं। व्यावसायिक समूह के अनुसार व्यक्ति अपने को बनाने का करता है। व्यक्ति अपने व्यवसाय में एक दूसरा ही रूप रखता है। डॉक्टर, वकील, व्यापारी, नौकर इत्यादि सब कुछ नियमों का पालन करते हैं। व्यावसायिक आदर्श होते हैं। जिनसे वे प्रेरित एवं चालित होते हैं। उनका ही अपने व्यवसाय के अनुसार बन जाता है। धार्मिक समूह का भी व्यक्ति सामाजीकरण में अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। जो व्यक्ति का धर्म होता है, उसी के उसकी अभिवृत्तियाँ, विचार एवं जीवन के आदर्श बन जाते हैं। राजनैतिक अपना प्रभाव डालता है। मनुष्य जिस राजनैतिक समूह का सदस्य होता है अनुसार विचार रखता है। हमारा व्यवहार बहुत कुछ इस पर आधारित है। राष्ट्र का प्रभाव भी सामाजीकरण की प्रक्रिया में पड़ता है। इस प्रकार हम हैं कि व्यक्ति का सामाजीकरण अनेक माध्यमों द्वारा होता है।

मनुष्य के सामाजीकरण में संस्कृति का महत्त्व अत्यधिक होता है। व्यक्ति सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा उस समाज की संस्कृति को ही तो सीखता है। व्यक्ति व्यक्तित्व जो कुछ भी होता है, वह उस समाज की संस्कृति के अनुसार होता है। पर हम पृथक अध्यायों में विचार करेंगे।

सामाजीकरण के कारक
(Factors of Socialization)

सामाजीकरण में कुछ महत्त्वपूर्ण कारक हैं जो कार्य करते हैं। किम्बाल यंग कहता है, "तब भी सामाजीकरण के अनेक साधन हैं जिनमें स्वीकृति, अस्वीकृति, एवं स्वतन्त्रता है।"[1]

अब हम सामाजीकरण के कुछ प्रमुख कारकों पर प्रकाश डालेंगे :

(1) **सुझाव (Suggestion)**—सुझाव सामाजीकरण का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। बच्चे सुझाव बहुत शीघ्र मान लेते हैं। यही कारण है कि माता-पिता उनके सामने अपने विचार दृढ़ता से व्यक्त करते हैं। बच्चों का ज्ञान एवं अनुभव कम होता है, इसीलिए वे सुझाव शीघ्र मान लेते हैं। एक प्रकार से सुझाव मानकर वे दूसरों के अनुभव से लाभ उठाते हैं।

(2) **अनुकरण (Imitation)**—अनुकरण तो बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। बच्चा अपने को कुछ स्थितियों में रखता है और फिर उन स्थितियों के अनुसार कार्य करता है। मान लीजिए एक लड़का है, उसे यह बताया जाता है कि तुझे पिताजी की तरह बनना है। वह फिर पिताजी की हर बात का अनुकरण करता है और इस प्रकार सीखने का प्रयत्न करता है। अनुकरण का कार्य तो और भी अधिक विस्तृत है। छोटे-छोटे बच्चे अनुकरण से ही सीखता है। नकल करना सामाजिक जीवन का महत्त्वपूर्ण कारक है। संकेत, भाषा तथा कार्य करने के अन्य ढंग अनुकरण से ही सीखे जाते हैं।

(3) **सहानुभूति (Sympathy)**—सहानुभूति बच्चों को उद्वेगों, भावनाओं

---

1. K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 89.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एवं प्रेरणाओं को सीखने में सहायता करती है। बच्चों का उद्वेगिक जीवन इसी पर आधारित है।

(4) **पुरस्कार और दण्ड** (Reward and Punishment)—पुरस्कार और दण्ड भी सामाजीकरण के महत्त्वपूर्ण कारक हैं। बच्चे जब अच्छा कार्य करते हैं तो उन्हें पुरस्कार दिया जाता है और जब बुरा कार्य करते हैं तो उन्हें दण्ड दिया जाता है। इस प्रकार बच्चों को सामाजिक प्रतिमानों के अनुसार कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाता है। सीखने वाले अध्याय में हम देख ही चुके हैं कि पुष्टीकरण तभी होता है जब पुरस्कार प्राप्त होता हो। अन्य कई परीक्षणों द्वारा भी इसकी पुष्टि हो चुकी है। यह आवश्यक नहीं कि पुरस्कार कोई मूर्त वस्तु ही हो। पुरस्कार केवल मुस्कान एवं मीठे शब्द भी हो सकते हैं। जॉनसन ने लिखा है, "पुरस्कार और दण्ड आवश्यक नहीं कि योगार्थिक रूप में आये, एक मुस्कराहट अधिक प्रभावशाली हो सकती है अपेक्षाकृत एक चूसने की मिठाई के टुकड़े के।"[1]

आजकल तो यह स्पष्ट ही हो गया है कि पुरस्कार का कार्य अधिक है। उनका प्रयोग करना चाहिए। दण्ड के विषय में काफी विवाद है। कुछ लोगों का मत है कि 'Spare the rod and spoil the child'। यह मत उचित नहीं है। इसके विपरीत कुछ लोगों का मत है कि दण्ड का प्रयोग करना ही नहीं चाहिए। वैज्ञानिक परीक्षणों ने यह सिद्ध कर दिया है कि दण्ड देना व्यक्तित्व के विकास में बड़ा हानिकारक कारक है। इससे बच्चे के आत्मविश्वास को धक्का लगता है और साथ ही साथ सामाजीकरण के माध्यम के प्रति प्रतिकार एवं द्वेष की भावनाएँ विकसित कर देता है जिससे सामाजीकरण की प्रक्रिया को क्षति पहुँचती है। जॉनसन ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "दण्ड में कम से कम दो भय हैं ·····प्रथम भय यह है कि दण्ड सामाजी-करणीय माध्यम में घृणा उत्पन्न कर देगा या विषय को अपनी कम अस्वीकृति के प्रति संज्ञाशील बना देगा या विषय को बदले में अनाज्ञाकारी प्रेरणा सामाजीकरणीय माध्यम को निराशा के लिए देगा। सामाजीकरणीय माध्यम की निराशात्मक प्रेरणा दृढ़ हो सकती है दण्ड की प्रेरणा को दूर करने से। दण्ड में दूसरा भय यह है कि विषय 'अधिक सीखा हुआ' हो जायेगा तथा व्यवहार क्षेत्र में जिसमें वह दण्डित किया जा चुका है, वह व्याकुलता विकसित करेगा और सामान्य इच्छित व्यवहार प्रतिमानों में नियन्त्रण लगा देगा।"[2]

दण्ड छोटी आयु के बच्चों को तो देना ही नहीं चाहिए। उनको दण्ड देने से मानसिक घाव हो जाते हैं जिनके धब्बे उनके स्मृति-पटल से कभी समाप्त नहीं होते और उस समय तक बच्चा कुछ समझता भी नहीं। अकोलकर ने स्पष्ट लिखा है, "...

---

1 "Reward and punishment need not come in tangible form: a smile may be more effective than a piece of candy." H. M. Johnson: *Sociology*, p. 118.

2 *Ibid*, p. 119.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रारम्भ के पाँच वर्षों में दण्ड पूर्ण रूप से आशातीत धक्के, तथा स्वप्रेम को धक्के के रूप में आता है। यह 'नरसिस्ट घाव' एक स्थायी चिह्न छोड़ देता है। माता-पिता को बच्चे के व्यक्तित्व पर स्थायी हानि जैसे थप्पड़ या घूँसे मारने से हमेशा अपने को दूर रखना चाहिए।"[1]

बच्चों का पुरस्कार के कारक द्वारा सामाजीकरण करना चाहिए।[2] यदि दण्ड देना बहुत ही आवश्यक हो, तो 7 साल की आयु के बाद देना चाहिए। पुरस्कार का न देना ही पर्याप्त दण्ड है।

सहमति तथा असहमति (Approval and Disapproval)—सहमति तथा असहमति भी सामाजीकरण के कारक हैं। जब बच्चा ठीक व्यवहार करे तो उससे सहमति प्रदर्शित करना चाहिए और जब अनुचित व्यवहार करे तो असहमति प्रदर्शित करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति अपने समूह की सहमति एवं असहमति का ध्यान रखता है। अपने देश में एक कहानी प्रसिद्ध है कि एक आदमी को जब डाका डालने और हत्या करने के अपराध में फाँसी की सजा दी गयी, उस व्यक्ति ने यह इच्छा प्रकट की कि वह अपनी माँ से मिलना चाहता है। जब उसकी माँ उससे मिलने आयी तो उसने अपनी माँ की नाक काट ली। जब उससे पूछा गया कि उसने ऐसा क्यों किया, तो उसने उत्तर किया कि बचपन में मैंने एक चोरी की और वह चीज माँ को लाकर दे दी, यदि माँ ने उस समय असहमति प्रकट की होती, तो मेरी यह हालत न होती, जो आज हुई। इसलिए बच्चों के गलत कामों के प्रति तुरन्त असहमति प्रकट करनी चाहिए। जब वे कोई अच्छा कार्य करें तो सहमति प्रकट करना भी आवश्यक है।

मजाक उड़ाना (Ridicule)—मजाक उड़ाना भी सामाजीकरण में महत्त्वपूर्ण है। इसे एक प्रकार का दण्ड भी कह सकते हैं। मजाक उड़ाने से बच्चा शर्मिन्दा होता है और अपने व्यवहार को ठीक करता है। मजाक अधिक भी नहीं उड़ाना चाहिए, वर्ना बच्चा बेशर्म हो जाता है या उसके अन्दर 'अपराध की भावना' बन जाती है और वह अनुभव करता है कि पता नहीं उससे कितना बड़ा अपराध हो गया है। विशेष रूप से बच्चों के मित्रों के सामने मजाक नहीं उड़ाना चाहिए। ऐसा करने से उनमें हीनता की भावनाओं का विकास होता है।

सामाजीकरण के सिद्धान्त
(Theories of Socialization)

सामाजीकरण की प्रक्रिया का व्यक्ति के जीवन में अत्यधिक महत्त्व है। सामाजीकरण करने वाली अनेक संस्थाएँ हैं जिनमें परिवार मौलिक एवं सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। सामाजीकरण के इन पक्षों से सभी विद्वान सहमत हैं फिर भी कुछ विद्वानों

1. V. V. Akolkar, *Social Psychology*, p. 134.
2. I. L. Child, 'Socialization' in Lindzey (ed.); *Handbook of Social Psychology*, Vol. II, Chap. 18, (1954).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने इसके विषय में अपने विशिष्ट विचार प्रकट किये हैं। अब हम कुछ विद्वानों के प्रतिपादित सिद्धान्तों का विवेचन करेंगे।

(1) दुर्खीम का सिद्धान्त (The Theory of Durkheim)

दुर्खीम का सामाजीकरण की प्रक्रिया का सिद्धान्त उनके 'सामूहिक प्रतिनिधित्व' (collective representation) के सिद्धान्त पर आधारित है और उन्होंने सामूहिक प्रतिनिधित्व की अवधारणा के आधार पर समझाने का प्रयत्न किया है।

सामूहिक प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त इस प्रकार है कि हर समाज में कुछ विशेष धारणाएँ, मूल्य, भावनाएँ आदि ऐसी होती हैं जो समाज के अधिकतर व्यक्तियों द्वारा सामान्य रूप से स्वीकार की जाती हैं और एक व्यक्ति से परे होती हैं। ये विशेष धारणाएँ, मूल्य, भावनाएँ आदि समाज के अधिकांश व्यक्तियों द्वारा मान्य होती हैं, इसलिए वे समूह का प्रतिनिधित्व करती हैं और व्यक्ति को माननी पड़ती हैं। इनका उद्गम सामूहिक चेतना (collective consciousness) में होता है। ये व्यक्ति विशेष की चेतना से परे होती हैं। ये सम्पूर्ण समाज का प्रतिनिधित्व करती हैं। ये सम्पूर्ण समाज की द्योतक होती हैं।

चूंकि इनके पीछे अधिकांश व्यक्तियों की सहमति होती है, इसलिए इनके पीछे सामाजिक बल होता है और इसके कारण हर व्यक्ति को इन्हें स्वीकार ही करना पड़ता है। सामाजिक बल समाज में एक बहुत बड़ा दबाव होता है। ये अत्यधिक प्रभावशाली होते हैं। ये व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते रहते हैं।

दुर्खीम का मत है कि सामूहिक प्रतिनिधित्व के दबाव के कारण ही व्यक्ति इन धारणाओं, विचारों, मूल्यों भावनाओं आदि को स्वीकार करता है। बच्चे सामाजीकरण की प्रक्रिया में इसी दबाव के कारण इन्हें सीखते एवं स्वीकार करते और शनैः-शनैः इन्हें स्वीकार कर लेते हैं जो बाद में उनके व्यक्तित्व के गुण बन जाते हैं।

(2) कूले का सिद्धान्त (The Theory of Cooley)

कूले का सामाजीकरण का सिद्धान्त सामाजिक अन्तःक्रिया (social interaction) पर आधारित है। कूले के सिद्धान्त के अनुसार सामाजीकरण अन्य व्यक्तियों के साथ अन्तःक्रिया का परिणाम है। जब व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है तो उनके क्रियाकलापों एवं व्यवहार में प्रभावित होता है और उनमें से अपने लिए व्यवहार चुन लेता है। कूले के सिद्धान्त के अनुसार जब तक व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में नहीं आता, तब तक उसका सामाजीकरण हो ही नहीं सकता। यह ठीक भी है क्योंकि समाज से पृथक मानव का सामाजीकरण नहीं हो सकता, जिसके उदाहरण हम इस अध्याय के प्रारम्भ में दे ही चुके हैं।

इतना ही नहीं कि व्यक्तियों की अन्तःक्रिया से सामाजीकरण होता है, वरन् दूसरे व्यक्तियों की उस व्यक्ति के विषय में धारणाओं का भी प्रभाव उस व्यक्ति पर पड़ता है। जैसा अन्य व्यक्ति उसके बारे में धारणाएँ व्यक्त करते हैं, वैसा ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्ति बनता चला जाता है। मान लीजिए एक व्यक्ति को सब अन्य व्यक्ति मूर्ख कहते रहें, तो वह व्यक्ति अपने को मूर्ख ही समझ लेगा और उसी प्रकार के गुण विकसित कर लेगा। व्यक्ति अपना चित्र दूसरे व्यक्तियों की धारणाओं में देखता है। एक प्रकार से अन्य व्यक्ति उसके लिए दर्पण हैं। इसीलिए कूले ने अन्य व्यक्तियों के विचारों एवं धारणाओं को 'स्वयं का दर्पण' (looking-glass self) कहा है। इसी के आधार पर उसका सामाजीकरण होता है। अतः कूले के अनुसार सामाजीकरण के लिए सामाजिक अन्तःक्रिया तथा अन्य व्यक्तियों की एक व्यक्ति के प्रति धारणाओं और विचारों का अत्यधिक महत्त्व है।

(3) मीड का सिद्धान्त (The Theory of Mead)

मीड के सिद्धान्त के अनुसार सामाजीकरण के लिए 'अपने सम्बन्ध में चेतना' (self-consciousness) अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। मीड ने 'मैं' (I) और 'मुझे' में अन्तर किया है। मीड का कहना है कि बच्चा जब अपने में और दूसरों (others) में भेद करना सीख लेता है तभी सामाजीकरण प्रारम्भ होता है। मीड का सिद्धान्त 'मैं और 'मुझे' के नाम से जाना जाता है। मीड का कहना है कि आत्म का विकास तभी होता है जब बच्चा 'मैं' और 'मुझे' में अन्तर करने लगता है और "मैं' और 'दूसरों' में अन्तर करने लगता है। मीड के अनुसार 'आत्म' (self) 'मैं' और 'मुझे' दोनों से मिलकर बनता है। 'मुझे' का निर्माण दूसरों से ग्रहण किये गये कार्यों एवं अभिवृत्तियों से होता है। यह दूसरे हैं माता-पिता, भाई-बहन, साथी, गुरु तथा अन्य समाज के व्यक्ति जो उसके सम्बन्ध में आते हैं। जब बच्चा व्यवहार करता है तो उसमें कुछ अनोखापन भी होता है। यह अनोखापन 'मैं' के कारण होता है जो कि वह आत्म से प्राप्त करता है। प्रारम्भ में 'मैं' आवश्यकताओं एवं से बना होता है। बाद को सामाजिक अन्तःक्रिया की प्रक्रिया में 'मुझे' से भी प्रभावित होता है। 'मैं' के विषय में व्यक्ति स्वयं भी नहीं जानता। यह पता नहीं रहता कि 'मैं' का क्या व्यवहार होगा।

प्रारम्भ में बच्चा यह कोई भेद नहीं कर पाता। अपने खिलौनों तथा अन्य वस्तुओं को भी बच्चा अपना अंग समझता है। जब वह इन वस्तुओं, दूसरे व्यक्तियों आदि में भेद करने लगता है, तो उसकी आत्म-चेतना (self-consciousness) विकसित हो जाती है। इसके उपरान्त वह सीखना प्रारम्भ करता है और समाज की धारणाएँ, विचार, मूल्य, अभिवृत्तियों आदि को ग्रहण करने लगता है अर्थात् सामाजीकरण प्रारम्भ हो जाता है।

उपर्युक्त तीनों सिद्धान्तों के विवेचन में यह स्पष्ट है कि सामाजीकरण समाज में ही रहकर हो सकता है और यह सामाजिक अन्तःक्रिया का परिणाम है। सामाजिक धारणाएँ, भावनाएँ, विचार, मूल्य, अभिवृत्तियाँ आदि व्यक्ति सामाजीकरण की प्रक्रिया में सीखता है और उनका आन्तरीकरण कर लेता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजीकरण की व्यक्तित्व के विकास में भूमिका
(Role of Socialization in the Development of Personality)

सामाजीकरण की व्यक्तित्त्व के विकास में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका है। एक प्रकार से सामाजीकरण और व्यक्तित्व का विकास पर्यायवाची शब्द। सामाजीकरण एक प्रक्रिया है और व्यक्तित्व का विकास उस प्रक्रिया का परिणाम। सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति सामाजिक अवधारणाएँ, विचार, मूल्य आदि ग्रहण करता है और अपने व्यक्तित्व का अंग बनाता है। व्यक्तित्व का विकास क्या है ? व्यक्तित्व के विकास का तात्पर्य भी इन्हीं बातों का ग्रहण करना है। इससे स्पष्ट है कि व्यक्तित्व का विकास सामाजीकरण प्रक्रिया पर आधारित होता है।

व्यक्तित्व का विकास 'आत्म' के विकास पर आधारित होता है, जैसा कि हम मीड के सिद्धान्त में देख ही चुके हैं। आत्म की उत्पत्ति सामाजिक अन्तःक्रिया में होती है। हम भलीभाँति जानते हैं कि जिनको सामाजिक अन्तःक्रिया का अवसर नहीं मिलता उनमें आत्म का विकास नहीं होता। जंगली बच्चों एवं भेड़ियों द्वारा पालित बच्चों का वर्णन हम कर ही चुके हैं। आत्म की उत्पत्ति सामाजिक क्रिया में होती है। आत्म का विकास एक प्रकार से कार्य-ग्रहण (Role-taking) से सम्बन्धित है। आत्म-प्रेरणाओं एवं अभिवृत्तियों को अन्तर्विष्ट करता है। इसी से व्यक्तित्व का स्वरूप बनता है। आत्म की उत्पत्ति सामाजिक अन्तःक्रिया में होकर सामाजिक अनुभव में विकास, कार्य-ग्रहण की सहायता से प्रेरणाओं एवं अभिवृत्तियों को अन्तर्विष्ट करता होता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "आत्म की उत्पत्ति सामाजिक क्रिया के होने से ही होती है।" ये सब क्रियाएँ सामाजीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत ही आती हैं। इस प्रकार, व्यक्तित्व का विकास समाजीकरण पर आधारित है।

प्रश्न

1. सामाजीकरण के कार्य की व्यक्तित्व के विकास में विवेचना कीजिए। इसकी शक्ति और साथ ही इसकी सीमाओं का विश्लेषण कीजिए।

(Discuss the role of socialization in the development of personality. Analyse its strength as well as its limitations. Agra, M. A. Alternative Course in Sociology, 1961 ; Agra, M. A. Sociology, 1966.)

2. सामाजीकरण के माध्यमों का वर्णन कीजिए।

(Describe the agencies of socialization. Agra, M. A. Sociology, 1961, 1967, 1969.)

3. सामाजीकरण का क्या तात्पर्य है ? इसके कुछ प्रमुख कारकों का विवेचन कीजिए जो सामाजीकरण में योग देते हैं।

(What is meant by socialization ? Discuss some of the important factors which bring about socialization. Agra, M. A. Sociology, 1957.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

4. "सामाजीकरण उस समस्या की ओर संकेत करता है जो मानव जीवन में पुरानी एवं व्यापक है—यह समस्या कि बच्चों का पालन किस प्रकार हो जिससे वे उस समाज के पूर्ण वयस्क सदस्य बन जायँ—जिससे वे सम्बन्धित हैं।" आलोचना कीजिए।

("Socialization refers to a problem which is old and pervasive in human life—the problem of how to rear children so that they will become adequate adult members of the society to which they belong." Comment. Agra, M. A. Sociology, 1959.)

5. बालक के सामाजीकरण में परिवार की महत्ता को प्रदर्शित कीजिए।

(Show the importance of the family in the socialization of the child. M. A. Rajasthan, 1959.)

6. टिप्पणी लिखिए—सामाजीकरण।

(Write short note on Socialization. Agra, M. A. Sociology, 1960; Agra, M. A. Sociology, Alternative Course, 1962.)

7. बच्चा मानव या सामाजिक पैदा नहीं होता है। वह प्रारम्भ में पशु-जाति का एक प्राणी होता है। अपने साथियों के साथ अन्त:क्रिया से ही वह मानव प्रकृति और उन कार्यों एवं विचारों के समूह या पुंज को जिन्हें हम व्यक्तित्व का नाम देते हैं प्राप्त करता है। विवेचना कीजिए।

(The child is not born human or social. He is at the outset on organism belonging to an animal species. It is only through his interplay with his fellows that he gets his human nature and that combination of acts and thoughts which we label the personality' Discuss. Agra, M. A. sociology, 1967.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

22
स्थिति और कार्य
(Status and Role)

स्थिति का अर्थ
(Meaning of Status)

सामाजिक ढाँचे के सम्बन्ध में आजकल दो शब्दों—स्थिति तथा कार्य का प्रयोग अत्यधिक हो रहा है। प्रत्येक सामाजिक विज्ञान इनका उपयोग करता है। सामाजिक मनोविज्ञान में भी ये शब्द लाभदायक सिद्ध हुए हैं। साधारण बोलचाल की भाषा में भी इनका स्वच्छन्दतापूर्वक प्रयोग होता है। 'हम यह कार्य अपनी स्थिति देखकर करेंगे; 'अपनी स्थिति के अनुसार चलो'; 'आपकी स्थिति के लोगों को ऐसा कार्य शोभा नहीं देता' इत्यादि। स्थिति शब्द वास्तव में कानूनी शब्द है, वैसे इसका प्रयोग कई अर्थों में होता है। सामाजिक विज्ञानों में भी इस शब्द के अर्थ पर एकमत नहीं है। फिर सामान्य लक्षण और आधार एक ही है, केवल तकनीकी अर्थों में भेद है। इस अध्याय में हम इसके विभिन्न पक्षों पर, विशेष रूप से कानूनी, समाजशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणों से विचार करेंगे।

स्थिति कानून में
(Status in Law)

स्थिति शब्द एक कानूनी (legal) शब्द है।[1] लेपियर ने इसकी परिभाषा देते हुए लिखा है, 'स्थिति' एक कानूनी पद है जो व्यक्ति के सम्बन्धों को राज्य या अन्य व्यक्तियों या अनेक व्यक्तियों से कानून की दृष्टि से स्थिति को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त होता है।"[1]

कानूनी स्थिति का मनुष्य को पूरा पता नहीं रहता। हम सब मोटे तौर पर जानते हैं कि हमारी कानूनी स्थिति है पर वह क्या-क्या है, इसके लिए हमें वकील से पूछना पड़ेगा और वह भी शायद पूरी तरह न बता पाये।

---

1 See *Encyclopaedia of Social Sciences*.

2 "Status' is a legal term used to denote the position in the eyes of the law of a person relative to the state or another person or number of persons." Richard V. Lapiere, *A Theory of Social Cantrol* (1954), McGraw Hill, New York, p. 69.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधुनिक समाज में कानून का बोलबाला है और हम कहते भी हैं कि आज-कल कानून का राज्य है। फिर भी हमारी कानूनी स्थिति हमारी सामाजिक स्थिति का एक भाग ही है। लेपियर ने लिखा है, "फिर भी आधुनिक समाज में व्यक्ति की कानूनी स्थिति केवल उसकी सामाजिक स्थिति का संक्षिप्त पहलू निर्मित करता है।"[1]

सामाजिक स्थिति
(Social Status)

सामाजिक स्थिति को समझने के लिए हम एक उदाहरण पर विचार करेंगे। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति प्रधानाचार्य की स्थिति में कार्य कर रहा है। इस स्थिति में उसे कुछ निश्चित कार्य करने पड़ते हैं और एक निश्चित प्रकार का व्यवहार रखना पड़ता है। वह अन्य अध्यापकों की भाँति किसी विषय को पढ़ाता तो है ही, साथ ही वह यह भी देखता है कि दूसरे अध्यापक अपने कार्य को सुचारु रूप से करते हैं या नहीं। वह महाविद्यालय का समस्त प्रबन्ध करता है, आज्ञाएँ देता है, उनका पालन करवाता है और सारे कर्मचारियों पर नियन्त्रण रखता है। उनका नाम रामनरेश है। श्री रामनरेश की यह व्यावसायिक स्थिति हुई। रामनरेश एक परिवार के मुखिया भी हैं। अपनी पत्नी के पति हैं। बच्चों के पिता हैं। परिवार का संचालन भी वह मुखिया के रूप में करते हैं। यह उनको पारिवारिक स्थिति हुई। इसी प्रकार वह एक सामाजिक कार्यकर्ता भी हैं। समिति के वे मन्त्री हैं। वे रूपनगर में रहते हैं। वे मोहल्ला समिति के भी सदस्य हैं। वे अपने नगर के सर्वश्रेष्ठ क्लब के सदस्य भी हैं।

इस प्रकार रामनरेशजी की सामाजिक स्थिति कैसे जानेंगे? क्या सबका जोड़ लगायेंगे? पर इनका जोड़ तो लग नहीं सकता। फिर क्या करेंगे?

समाजशास्त्र में (In Sociology)—समाजशास्त्र में प्रायः हमारा अभिप्राय सामाजिक वर्ग स्थिति से होता है। ऑगबर्न तथा निमकाफ ने स्थिति की परिभाषा देते हुए लिखा है, "एक व्यक्ति की स्थिति, उसका समूह में स्थान एवं दूसरों के सम्बन्ध में उसका क्रम है।"[2]

प्रायः वर्ग स्थिति अन्य स्थितियों से महत्त्वपूर्ण होती है।

सामाजिक मनोविज्ञान में (In Social Psychology)—सामाजिक मनोविज्ञान में व्यक्ति पर विशेष बल दिया जाता है। सामाजिक अन्तःक्रिया के समूह में व्यक्ति की क्या स्थिति है, यह महत्त्वपूर्ण दृष्टिकोण रहता है।

---

[1] "Even so, the legal status of the individual in a modern society constitutes only a minor aspect of his social status", *Ibid*, p. 69.

[2] "A person's status is his group standing or ranking in relation to others." Ogburn and Nimkoff, *A Handbook of Sociology*, p. 208.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेपियर ने सामाजिक स्थिति की परिभाषा करते हुए लिखा है, "सामाजिक स्थिति साधारणतः व्यक्ति की समाज में स्थिति से समझी जाती है।"[1]

लेपियर ने इसे एक गतिशील अन्तःक्रिया का परिणाम माना है। सम्बन्ध में लिखते हैं, "यह अन्तःक्रिया की गतिशील प्रक्रिया की उपज है, एक जो विस्तृत जटिल व्यवहार से मिलती-जुलती है जो एक दिये हुए संक्षिप्त की को, जो समस्त संक्षिप्तों से सम्बन्धित है, जो किसी दिये हुए क्षण पर बनाता है, निश्चित करती है।"[2]

किम्बाल यंग ने स्थिति की परिभाषा करते हुए लिखा है, "प्रत्येक और प्रत्येक समूह में प्रत्येक सदस्य के कुछ कार्य या क्रियाएँ हैं जिनसे वह और जो शक्ति या प्रतिष्ठा की कुछ मात्रा अपने साथ ले चलती है। इस शक्ति से हम उसकी स्थिति को संकेत करते हैं।"[3]

लिण्टन ने इसकी एक सुन्दर एवं सार्वभौमिक परिभाषा देने का प्रयत्न है। उसने लिखा है, "विशेष व्यवस्था में स्थान जिसे कोई व्यक्ति किसी समय में प्राप्त करता है उस व्यवस्था के अनुसार उसकी स्थिति की ओर करता है।"[4]

इस प्रकार स्थिति एक व्यक्ति का किसी समूह या व्यवस्था में स्थान है।

स्थिति या पद
(Status of Position)

कुछ लोग स्थिति के स्थान पर पद शब्द का प्रयोग करते हैं। दोनों में अन्तर नहीं है। उदाहरण के लिए, माइकल ने लिखा है कि पद शब्द अधिक उपयुक्त है।[5]

डेविस ने भी पद शब्द का ही प्रयोग किया है।

कुछ विद्वान स्थिति (status) शब्द को ही अधिक उपयुक्त समझते हैं। उदाहरण के लिए लिण्टन ने इसका पक्ष लेते हुए अनेक कारण बताये हैं।

किसी भी शब्द का प्रयोग किया जाय, अर्थ एक ही है।

---

1 "Social status is commonly thought of as the position which individual has in society." R. T. Lapiere, *A Theory of Social Control*, p. 71

2 *Ibid*, p. 72.

3 K. Young, *A Hanabook of Social Psychology*, p. 83.

4 "The place in a particular system which a certain individual occupies at a particular time will be referred to as his status with respect to that system." Ralph Linton, 'Concepts of Role and Status'; in T. M. Newcomb and Eugene L. Hartely, *Readings In Social Psvchology* (1947), p. 368.

5 G. Duncan Mitcnell, *Sociology* (1959), p. 32.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थिति, समाज और व्यक्ति
(Status, Society and Individual)

प्रायः ऐसा मत है कि समाज स्थिति प्रदान करता है और व्यक्ति उसे स्वीकार कर लेता है। लेपियर ने लिखा है, "अपने जीवन के अधिकार के समान, व्यक्ति जो स्थिति समाज में प्राप्त करता है उसकी सामाजिक स्वीकृति होती है।"[1]

इसमें सन्देह नहीं है कि स्थिति प्रदान करने में समाज का बहुत बड़ा भाग है। फिर भी यह क्रिया एक तरफा नहीं होती। व्यक्ति भी इसमें अत्यन्त सक्रिय भाग लेता है। वास्तव में इसमें समाज और व्यक्ति में महत्त्वपूर्ण अन्तःक्रिया घटित होती है। स्थितियाँ व्यक्तियों पर ही आधारित हैं और वे उसमें सक्रिय योग देते रहते हैं। वुडवर्ड ने इस सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से लिखा है, "व्यक्तित्व अन्तिम सामाजिक दृष्टि-कोण से, समूह द्वारा उस पर लादे गये कार्यों का, व्यक्ति का प्रत्युत्तर है। वैयक्तिक विभेदों के विद्यार्थी के लिए यह अधिक उपयुक्त जान पड़ता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्यों की ओर केंद्रित होता है जो उसके गुणों के अनुकूल हो, जो उसके पास है उसने अधिक समूह क्रिया मध्यस्थता द्वारा उसमें वह अपने कार्यों को पाता है या बनाता है। यह निश्चित है कि एक बार के कार्यों को वह अपनी आवश्यकताओं एवं अवसरों के अनुसार उस कार्य को विकसित करता है।"[2]

स्थिति प्रत्येक समाज एवं समूह में
(Status in all Societies and Groups)

स्थिति प्रत्येक समाज एवं समूह में पायी जाती है। परिवार को ही ले लीजिए, पिता की स्थिति, माता की स्थिति, पुत्र की स्थिति। तब सदस्यों की पारि-वारिक व्यवस्था में एक निश्चित स्थिति होती है। छोटे-छोटे अनौपचारिक समूहों में भी स्थितियाँ होती हैं। मित्र-मण्डली, क्लब आदि में भी स्थितियाँ होती हैं। फेरिस ने इस सम्बन्ध में उचित ही लिखा है, "यहाँ तक कि अधिक अनौपचारिक समूहों में, फिर भी किसी भी सामाजिक अन्तःक्रिया के क्षेत्र में स्थिति का विचार इतना व्यापक होता है कि यह प्रत्येक सदस्य के लिए वास्तविक आवश्यकता है कि उसे अपनी स्थिति की स्पष्ट समझ होनी चाहिए यदि उसकी क्रियाएँ प्रवीण हों, असन्तुलित न हों।"[3]

स्थिति और आत्म-परिभाषा
(Status and Self-definition)

स्थिति के ही अनुसार व्यक्ति अपनी 'आत्म' की परिभाषा करता है। व्यक्तित्व

---

[1] "Like his right to live, the status that an individual enjoys in his society is socially granted." R. T. Lapiere, *A Theory of Social Control*, p. 72.
[2] R. S. Woodworth and Marquis, *Psychology* (1948), p. 180.
[3] Faris, *Social Psychology* (1952), p. 259.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के विकास में स्थिति का बहुत बड़ा हाथ होता है। जैसी उसकी स्थिति होगी, ही कल्पना वह अपनी करेगा। इससे स्पष्ट है कि स्थिति व्यक्ति की अभिवृत्ति उद्वेगों, स्थायीभावों एवं व्यवहार के अन्य प्रतिमानों को दिशा देती है। लेपियर इस सम्बन्ध में उचित ही लिखा है, "सामाजिक स्थिति जिसको एक दिया हुआ प्रयुक्त करता है—या, अधिक स्पष्टता से कहना, अनेक स्थिति स्तर जो उसको गये हैं—विस्तृत माप में निश्चित करती है जिस परिभाषा को वह अपने लिए है। यह तथ्य बहुत देर में पहचाना गया और बहुत से पदों में उदाहरणार्थ, शीशा देखना' 'पावर्तन' 'अहम् संयोग' इत्यादि—घटना-परिणाम वर्णित करने के प्रयोग किया गया।"[1]

मान लीजिए एक बच्चे को घर में बहुत प्यार किया जाता है और सबसे प्यारा बच्चा माना जाता है, तो यह उसकी घर में स्थिति हुई। अब विकास इसके अनुसार होगा; क्योंकि वह भी अपने बारे में ऐसा ही सोचे 'आत्म' का विकास इसी अंन्त:क्रिया की प्रक्रिया पर आधारित है। लेपियर लिखा है, "ऐसा विश्वास किया जाता है कि अन्य चीजें यथावत् रहने पर बच्चे स्थिति उन्हीं के समान होती है जो उसके सामाजीकरण के लिए मुख्य रूप से दायी होते हैं तथा जो व्यक्तित्व के गुणों को निश्चित करते हैं जिसको बच्चा करेगा।"

इस प्रकार स्थिति व्यक्ति के स्वयं के प्रति मनोवैज्ञानिक धारणा प्रदान करती है। दूसरों की ओर अभिवृत्ति (attitude) भी स्थिति पर ही आधारित होती है। इस पर विशेष प्रकाश 'आत्म के विकास' वाले अध्याय में डालेंगे।

स्थिति के प्रकार
(Types of Statuses)

स्थिति के प्रकार दो आधारों पर किये गये हैं। पहले के अनुसार इसके दो प्रकार हैं—(1) अभिरोपित (ascribed) और (2) उपार्जित (achieved)। एक और प्रकार है जिसे कल्पित स्थिति (assumed status) कहते हैं।

दूसरे आधार पर भी इसके दो प्रकार हैं—(1) सामान्य (generic) और (2) विशिष्ट (specific)।

अभिरोपित और उपार्जित स्थिति

अभिरोपित स्थिति (Ascribed Status)—अभिरोपित स्थिति वह स्थिति होती है जो समाज या समूह द्वारा व्यक्ति को प्रदान कर दी जाती है। यह जन्म से ही कर दी जाती है। इसके लिए व्यक्ति को कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता। ये प्राय: जन्म पर आधारित होती हैं। आयु, लिंग, इत्यादि के कारण स्थिति अभिरोपित होती है।

---

[1] R. T. Lapiere, *A Theory of Social Control*, p. 73.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभिरोपित स्थिति पर सामाजीकरण की दिशा आधारित होती है। लेपियर ने लिखा है, "वह स्थिति जो एक व्यक्ति के जन्म पर या उसके कुछ ही क्षण बाद अभिरोपित होती है, विस्तृत रूप में निश्चित करती है कि उसका सामाजीकरण कौन सी दिशा लेगा—अपनी संस्कृति के अनुसार—पुल्लिग-स्त्रीलिंग, निम्न या उच्च वर्ग के व्यक्ति के रूप में उसका पोषण किया जा सकेगा। वह कम या अधिक प्रभावशाली रूप में अपनी उस स्थिति से सामाजीकृत होगा जो उस पर अभिरोपित है।"[1]

उपार्जित स्थिति (Achieved Status)—उपार्जित स्थिति वह है जो व्यक्ति अपने परिश्रम एवं योग्यता से प्राप्त करता है। लेपियर ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "उपार्जित स्थिति वह स्थिति है, जो साधारणतः लेकिन अनिवार्यतः नहीं, किसी व्यक्तिगत सफलता के लिए, इस अनुमान पर पुरस्कार-स्वरूप स्वीकृत होती है कि जो सेवाएँ आपने भूत में की हैं वे सब भविष्य में भी जारी रहेंगी।"[2]

उपार्जित स्थिति को बनाये रखने के लिए भी व्यक्ति को प्रयत्न करते रहना पड़ता है। यदि व्यक्ति उपार्जित स्थिति के अनुसार कार्य नहीं करता तो उसकी स्थिति समाप्त भी हो सकती है। लेपियर ने लिखा है, "इससे अधिक उपार्जित स्थिति आवश्यकताओं की पूर्ति के अभाव में, सदैव वापस ले लेने का विषय है।"[3]

आधुनिक युग में उपार्जित स्थिति का पर्याप्त महत्त्व है। आजकल अवसर भी बढ़ गये हैं। कोई भी व्यक्ति परिश्रम एवं योग्यता के द्वारा कोई भी स्थिति प्राप्त कर सकता है। पत्नी बनना उपार्जित स्थिति है। डॉक्टर, प्रोफेसर, व्यापारी, मन्त्री इत्यादि सभी उपार्जित स्थितियाँ हैं। आज कोई भी व्यक्ति हिन्दुस्तान का राष्ट्रपति हो सकता है। यह उपार्जित स्थिति है।

कल्पित स्थिति (Assumed Status)—कल्पित स्थिति वह है जो कल्पना पर आधारित हो। कोई इसे स्वीकार कर सकता है और अस्वीकार।

सामान्य तथा विशिष्ट स्थिति

यह भेद इस पर आधारित है कि स्थिति प्रदान करने में कितने लोग आते हैं। लेपियर ने लिखा है, "यह विशेषता कि कितने इससे सम्बन्धित हैं, स्थिति को स्वीकृत कराने में और व्यक्ति के उनके साथ सम्बन्धों की प्रकृति पर निर्भर है।"[4]

सामान्य स्थिति (Generic Status)—सामान्य स्थिति की परिभाषा करते हुए लेपियर ने लिखा है, "कोई भी स्थिति, अभिरोपित हो या उपार्जित, सबके द्वारा

1. R. T. Lapiere, *A Theory of Social Control*, p. 75.
2. *Ibid*, pp. 76-77.
3. *Ibid*, p. 77.
4. *Ibid*, p. 78.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वीकृत होती है, या कम से कम सामाजिक जनसंख्या में सामान्य है।"[1]

उदाहरण के लिए, एक स्त्री को स्त्री की स्थिति, पुरुष को पुरुष की स्थिति, बच्चे को बच्चे की स्थिति। हिन्दू की एक सामान्य स्थिति है। डॉक्टर, प्रोफ़ेसर, वकील भी इसी के उदाहरण हैं।

विशिष्ट स्थिति (Specific Status)—विशिष्ट स्थिति की परिभाषा देते हुए लेपियर ने लिखा है, "विशिष्ट स्थिति वह स्थिति है जो तुलनात्मक रूप से कम संख्या में व्यक्तियों द्वारा स्वीकृत करायी जाती है जो व्यक्ति को व्यक्तिगत रूप से जानते हैं, इससे भी अधिक कि उसको क़िसी निश्चित श्रेणी के वर्ग के सदस्यों के रूप में पहचानना और जिसका आदर उसके लिए मैत्रीपूर्ण या दूरस्थ का हो।"[2]

नातेदारी की स्थितियाँ प्राय: विशिष्ट होती हैं। उदाहरण के लिए पुत्र की स्थिति, अपने माता और पिता के सम्बन्ध में। वह और किसी का लड़का नहीं हो सकता। मित्र एक विशिष्ट स्थिति है।

स्थिति और कार्य
(Status and Role)

प्रत्येक स्थिति के साथ कुछ कार्य सम्बद्ध हैं जिन्हें व्यक्ति को करना होता है। स्थिति और कार्य विभिन्न वस्तुएँ हैं, परन्तु वे एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। लिंटन ने लिखा है, "प्रत्येक स्थिति एक विशेष कार्य के साथ जुड़ी हुई है।"[3] लेपियर ने भी लिखा है, "व्यक्ति जिसको किसी प्रकार की स्थिति स्वीकृति होती है, या तो अभिरोपित या उपार्जित और या तो सामान्य या विशिष्ट—उससे विशिष्ट मार्ग में कार्य करने के लिए आशा की जाती है। जैसा कि वह दूसरों से आशा करता है कि वे किसी विशिष्ट प्रकार से उसके साथ क्रिया करें। वह इस अर्थ में कि कार्य की आशा की जाय। विशिष्ट रूप से कार्य जो प्रचलित है किसी स्थिति स्तर के साथ जो उसको स्वीकृत है।"[4]

इस तरह हम देखते हैं कि स्थिति और कार्य का चोली-दामन का साथ है और उन्हें पृथक नहीं किया जा सकता। स्थिति एक व्यवस्था है और कार्य उससे सम्बन्धित व्यवहार। अब हम कार्य का विचार करेंगे।

कार्य
(Role)

ड्रामा में या चित्रपट पर हम देखते हैं कि राजकपूर एक तांगेवाले का 'role' कर रहा है। नर्गिस एक अमीर बाप की बेटी का 'role' कर रही है। ड्रामे में ...

---

1 R. T. Lapiere, *A Theory of Social Control*, p. 78.
2 *Ibid*, p. 79.
3 "Every status is linked with a particular role..........." R. Linton, *The Cultural Background of Personality*, p. 77.
4 R. T. Lapiere, *A Theory of Social Control*, p. 80.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शाहजहाँ का 'role' कर रहा है। 'ताँगेवाला' एक स्थिति है, इसी प्रकार 'अमीर बाप की बेटी' एक स्थिति है। इन स्थितियों से सम्बन्धित कुछ क्रियाएँ या निश्चित व्यवहार होते हैं जो व्यक्ति को करने पड़ते हैं। उस व्यवहार को ही 'role' कहते हैं। यदि व्यक्ति इन्हें ठीक से निभाता है तो हम कहते हैं कि उसने बड़ा अच्छा 'role' किया।

थोड़ी देर के लिए मान लीजिए पृथ्वीराज शाहजहाँ की जगह औरंगजेब का रोल करने लगे और मुमताजमहल किसी और का, तो क्या होगा। ड्रामा गड़बड़ हो जायेगा और पर्दा गिराना पड़ेगा। ऐसा ही जीवन के ड्रामे में भी होता है। यदि सामाजिक जीवन में भी लोग अपनी-अपनी सामाजिक स्थितियों के अनुसार कार्य न करें तो गड़बड़ी मच जायेगी और चारों ओर अराजकता दिखायी पड़ेगी।

कार्य की परिभाषाएँ

लिण्टन की परिभाषा :

"दूसरा पद 'कार्य' किसी विशेष स्थिति से सम्बन्धित सांस्कृतिक प्रतिमानों को पूर्ण योग हैं, से नियुक्ति के लिए प्रयुक्त होता है। इस प्रकार अभिवृत्तियों, मूल्यों और व्यवहार, समाज द्वारा अभिरोपित किसी अन्य व्यक्तियों से प्राप्त कर सकता है, इसमें सम्मिलित होते हैं।"[1]

किम्बाल यंग की परिभाषा :

"व्यक्ति जो करता या करवाता है उसे हम उसके कार्य कहते हैं।"[2]

सार्जेण्ट की परिभाषा :

"व्यक्ति का कार्य सामाजिक व्यवहार का एक प्रतिमान या प्रकार है जो उस समूह की आवश्यकताओं और आशाओं में, परिस्थिति के अनुसार उसे योग्य बनाता है।"[3]

इस प्रकार स्पष्ट है कि कार्य (role) व्यवहार के वे प्रतिमान हैं जो एक स्थिति के साथ समाज द्वारा सम्बद्ध किये जाते हैं।

---

[1] "The second term, *role*, will be used to designate the sum total of the culture patterns associated with a particular status. It thus includes the attitudes, values, and behaviour ascribed by society to any and all persons occupying this status." R. Linton, *The Cultural Background of Personality*, p. 77.

[2] "What the individual does or performs we call his role." K Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 88.

[3] "A person's role is a pattern or type of social behaviour which seems situationally appropriate to him in terms of the demands and expectations of those in the group." Sargent, '*Conceptions of Role and Ego in Contemporary Psychology*', in *Social Psychology at Crossroads* (1951), Harper Bros., New York, p. 360.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार्य-पारस्परिक
(Roles-Reciprocal)

कार्य परस्पर सम्बन्धित होते हैं। एक व्यक्ति का व्यवहार दूसरे व्यक्ति के व्यवहार से सम्बन्धित होता है। कुप्पुस्वामी ने लिखा है, "समाज में अधिकतर कार्य पारस्परिक हैं।"[1]

उदाहरण के लिए पिता-बच्चे, माता-बच्चे, पति-पत्नी, मेजवान-मेहमान, मालिक-नौकर, नेता-अनुयायी, दूकानदार-ग्राहक इत्यादि। इसी प्रकार जीवन के प्रत्येक कार्य में हम दूसरों से परस्पर सम्बन्धित रहते हैं।

कार्य-समूह
(Role-Set)

एक व्यक्ति को केवल एक ही कार्य नहीं करना पड़ता बल्कि उसे कई कार्य करने पड़ते हैं। यहाँ पर अनेक कार्यों का प्रश्न खड़ा हो जाता है। एक अध्यापक को कई लोगों के साथ कार्य करना पड़ता है और सबकी आशाएँ विभिन्न होती हैं। विद्यार्थी, विद्यार्थियों के माता-पिता, हैडमास्टर, प्रबन्ध-समिति के सदस्य, और अन्य अध्यापक बन्धु इत्यादि। इसलिए अपने कार्य के प्रति उस अध्यापक को अनेक विचार रखने पड़ते हैं। यही उसका कार्य-समूह है। इसका बड़ा लाभ है। मर्टन ने लिखा है, "यह सामाजिक यांत्रिकी की तादात्म्यीकरण की सामान्य समस्याएँ उठाती है, जो कार्य समूहों की आशाओं को संयुक्त करती है जिससे स्थिति प्राप्त करने वाला कम संघर्षों से लड़ेगा तथा प्राप्त करेगा यदि ये यान्त्रिक कार्य न रहे हों।"[2]

सक्रिय एवं अन्तर्हित कार्य (Active and Latent Roles)—एक व्यक्ति की कई स्थितियाँ होती हैं और उनसे सम्बन्धित कार्य भी होते हैं। एक व्यक्ति प्रिन्सीपल होता है, वही पिता, पति, क्लब का सदस्य, राजनैतिक पार्टी का सदस्य इत्यादि। एक समय पर एक व्यक्ति एक ही स्थिति में कार्य करता है। अन्य स्थितियाँ उस समय अन्तर्हित होती हैं।

सक्रिय स्थितियों से सम्बन्धित कार्य सक्रिय कार्य कहलाते हैं और अन्य स्थितियों से सम्बन्धित कार्य अन्तर्हित कार्य।

कार्यों के कुछ पक्ष
(Some Aspect of Roles)

अब हम कार्य के कुछ पक्षों पर विचार करेंगे।

कार्य-अपेक्षा (Role Expectation)—कार्य अपेक्षा उस प्रक्रिया को ...

---

1 ost of the roles in society are reciprocal." B. Kuppuswamy, *Introduction to Social Psychology*, p. 114.

2 K. Merton, *Social Theory and Social Structure*. p. 111.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है जिसके द्वारा अन्य लोग कुछ कार्य की आशा करते हैं। उनके अनुसार 'क्या कार्य होगा', वह कार्य अपेक्षा कहलाता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, 'अन्य लोग हमसे जो आशा करते हैं उससे यह उठता है या क्रिया के द्वारा हमसे और आदर्शों के द्वारा स्पष्ट होगा जो कार्यों के रूप में एवं स्थिति सहित प्रस्तुत किये जाते हैं।"[1]

कार्य-ग्रहण (Role-Taking)—कार्य-ग्रहण को कभी-कभी 'role enactment' या 'role assumption' भी कहते हैं। कार्य-ग्रहण का अर्थ है जिस प्रकार व्यक्ति उस कार्य को करता है। कार्य अपेक्षा एक आदर्श है और कार्य-ग्रहण वास्तविकता। किम्बाल यंग ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "यही विशेष सम्पादन है जो वास्तव में ले जायी जाती है।"[2]

विशिष्ट कार्य-ग्रहण (Specific Role-Taking)—एक विशिष्ट कार्य को करना विशिष्ट कार्य-ग्रहण कहलाता है। इसे हम बच्चों के खेल के उदाहरण से समझा सकते हैं। बच्चे अपने खेल में विभिन्न विशिष्ट कार्य-ग्रहण करते हैं। कभी बच्चा एक दुकानदार बनता है और उसी आवाज में कहता है 'कहिए बाबूजी क्या चाहिए, देखिये ये बढ़िया दशहरी आम हैं'। फिर ग्राहक बनता है और कहता है 'क्या माव है, कुछ अच्छे नहीं दिखायी पड़ते'। कभी टिकट कलक्टर बनता है और टिकट माँगता है फिर यात्री बन जाता है और टिकट देता है। इस प्रकार वह कार्य-ग्रहण करता है और वैसे ही कार्य करता है। कभी-कभी जब और बच्चे भी होते हैं तो बाकायदा उनका ड्रामा होता है। कोई डैडी बनता है, कोई मम्मी, कोई फल वाला, कोई नौकर तो कोई पप्पू इत्यादि।

कभी-कभी बच्चा अपने आपसे ही बातें करता है और स्वयं ही कार्य-ग्रहण करता है। इस प्रकार वह सीखता है। व्यक्तित्व के विकास में इसका विशेष महत्त्व है।

सामान्य कार्य (General Roles)—बच्चे जब बड़े हो जाते हैं तो विशिष्ट कार्य-ग्रहण का सामान्यीकरण करते हैं। सामान्य कार्य उनके अनुभव पर ही आधारित होता है। बच्चा अनेक प्रकार के सामान्यीकरण करता रहता है। किम्बाल यंग ने लिखा है :

"सामान्य कार्य को मीड ने 'generalized other' भी कहा है।"[3] सहयोगिक क्रिया-कलापों में भी इसका विकास होता है। मान लीजिए कोई फुटबाल खेलना चाहता है। वह उस समय तक नहीं खेल सकता जब तक उसे अन्य टीम के सदस्यों के विशिष्ट कार्यों का ज्ञान नहीं है। इस सम्बन्ध में उसे कल्पना करनी पड़ेगी कि 'centre forward' का क्या कार्य है और उससे क्या सम्बन्ध है। उसे खेल के नियम सीखने पड़ेंगे।

---

1 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*. p. 88.
2 "This is the particular performance as it is actually carried out." *Ibid*, p. 88.
3 George H. Mead, *Mind, Self and Society*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार हमको अपने सामाजिक जीवन में सामान्य कार्यों को ... पड़ता है।

प्रतिष्ठा
(Prestige)

प्रतिष्ठा स्थिति से सम्बन्धित है। प्रतिष्ठा स्थिति से उत्पन्न होती है ... एक प्रकार से स्थिति से सम्बन्धित सामाजिक पुरस्कार है। लिण्टन ने लिखा है ... स्थिति की आवश्यकता एक प्रस्तार (extention) तथा स्थिति आवश्यकता की ... वैज्ञानिक प्रगाढ़ता कही जा सकती है।" किम्बाल यंग ने लिखा है, "यह ... प्राप्ति, श्रेणी अथवा अन्य परिस्थितियों के कारण उत्पन्न होने वाले आदर एवं ... को इंगित करता है।"

प्रतिष्ठा एक सापेक्षिक शब्द है। इसकी धारणा संस्कृति पर आधारित ... अमरीका में जो व्यक्ति धनी होता है, उसे प्रतिष्ठा मिलती है। भारत में जो ... जाति का होता है उसे प्रतिष्ठा मिलती है। कुछ वन्य जातियों में प्रतिष्ठा उन ... को मिलती है जो अपना सब कुछ दान कर देते हैं। प्राचीन भारत में ज्ञान ... का आधार था। अतः जो व्यक्ति ज्ञानी और तपस्वी होता था उसके सामने ... भी नतमस्तक होता था।

इसका आधार कुछ भी हो, परन्तु लोग प्रत्येक समाज में इसे प्राप्त करने ... प्रयत्न करते हैं। सामाजिक मूल्य प्रतिष्ठा के तत्त्वों का निर्माण करते हैं। ... प्रतिष्ठा के लिए कुछ भी करने को तैयार रहता है।

व्यक्ति के मनोविज्ञान, अभिवृत्तियों और व्यक्तित्व के विकास एवं निर्धारण में स्थिति और कार्य का महत्व

(Importance of Status and Role in the Development and Determination of Individual's Psychology, Attitudes and Personality)

स्थिति एवं कार्य व्यक्ति के मनोविज्ञान एवं अभिवृत्तियों के विकास ... निर्धारण में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इसी प्रकार स्थिति और ... व्यक्तित्व के विकास में भी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। अब हम इस दृष्टि से ... और कार्य के महत्त्व का विवेचन करेंगे।

स्थिति और कार्य निश्चित होते हैं। जिस प्रकार की स्थिति होती है ... अनुसार ही कार्य निश्चित होते हैं। इस प्रकार स्थिति और कार्य एक विशिष्ट ... जिक परिस्थितियों का प्रारूप रचते हैं और इस प्रारूप के निश्चित विचार, ... धारणाएँ, अभिवृत्तियाँ, मूल्य आदि होते हैं। जो भी व्यक्ति उस विशिष्ट ... कार्यों को निभाता है, उसे उस परिस्थिति-प्रारूप के अनुसार व्यवहार करना ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। जब व्यक्ति एक व्यवहार को बार-बार दोहराता है तो उसे उस व्यवहार की आदत पड़ जाती है। इस प्रकार उस परिस्थिति-प्रारूप के अनुसार व्यवहार करना उस व्यक्ति की आदत एवं स्वभाव बन जाता है। जिस व्यवहार को व्यक्ति ने पहले स्थिति निभाने के लिए अपनाया था वह उसका स्वभाव बन गया। इस प्रकार स्पष्ट है कि व्यक्ति का मनोविज्ञान, अभिवृत्तियाँ, व्यक्तित्व आदि स्थिति एवं कार्य के अनुरूप ढलते चले जाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि व्यक्ति के मनोविज्ञान, अभिवृत्तियों एवं व्यक्तित्व का निर्धारण स्थिति और कार्य करते हैं। इस तथ्य की पुष्टी अनेक उदाहरणों के द्वारा की जा सकती है। एक इंजीनियर है, उसकी एक स्थिति एवं उससे सम्बन्धित कार्य हैं। इंजीनियर की एक स्थिति है। कोई भी व्यक्ति जो इंजीनियर होगा, उसे उसी स्थिति और कार्यों का पालन करना पड़ेगा और उसके वैसे ही विचार, धारणाएँ, अभिवृत्तियाँ, मूल्य आदि हो जायेंगे। कहने का तात्पर्य यह है कि उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व वैसा ही बन जायेगा। एक इंजीनियर मकान बनवाता है, सड़कें बनवाता है, पुल बनवाता है। उसका काम अधिकतर बेजान वस्तुओं से पड़ता है। ईंट, रोड़ा, कंकरीट, सीमेंट आदि ही उसकी दुनिया है। इसका परिणाम यह है कि उसके मनोविज्ञान में विनम्रता, प्रेम, स्वप्न आदि का कोई स्थान नहीं रहता। आप देखेंगे कि इंजीनियर वर्ग अपनी पत्नियों से भी कोमल व्यवहार अधिक नहीं कर पाते। यह उनकी स्थिति एवं कार्य के पर्यावरण का प्रभाव है। इसी प्रकार सैनिक अधिकारी, वे चाहे जहाँ के क्यों न हों, उनका मनोविज्ञान एकसा होगा। उनके जीवन में स्थायित्व नहीं है, कब मर जायें। इसलिए उनका जीवन-दर्शन विकसित हो जाता है कि आज का दिन जियो, कल का पता नहीं। यह जीवन-दर्शन उनके मनोविज्ञान, अभिवृत्तियों एवं व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

सैनिक अधिकारी अधिकतर मद्यसेवन करते मिलेंगे और नैतिक आचार-विचार का अभाव मिलेगा। वे फिजूलखर्च होंगे। शानशौकत से हर दिन गुजारेंगे, चाहे कर्ज ही लेना पड़ें। इसी प्रकार वे कर्तव्य-परायण होंगे क्योंकि उस स्थिति और कार्य का जीवन-दर्शन है 'करो या भरो'। वे वीर होंगे। ये सैनिक अधिकारी की स्थिति एवं कार्य से सम्बन्धित धारणाएँ, भावनाएँ, अभिवृत्तियाँ, मूल्य आदि हर उस व्यक्ति को प्रभावित करेंगी जो सैनिक अधिकारी की स्थिति एवं कार्य को अपनायेगा।

व्यक्ति की स्थिति एवं कार्य उसको हर दिशा से प्रभावित करते हैं और उसका व्यक्तित्व ही उस प्रकार का बन जाता है। कहावत है कि 'कुर्सी सब कुछ सिखा देती है।' इसका तात्पर्य ही यही है कि व्यक्ति स्थिति (कुर्सी) के अनुसार कार्यों को करता है या यों कहें कि करना पड़ता है, तो कार्य करते-करते उसके पर्यावरण का प्रभाव पड़ता ही है और व्यक्ति का मनोविज्ञान, अभिवृत्तियाँ एवं व्यक्तित्व स्थिति एवं कार्य के अनुसार ही बन जाते हैं।

हर समाज में एकसी स्थिति के अनेक व्यक्ति होते हैं। इन एकसी स्थिति एवं कार्य वाले व्यक्तियों का एक समूह बन जाता है। ये समूह विशिष्ट समूह होते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन समूहों का कार्य के अनुसार एक विशिष्ट उपसंस्कृति का निर्माण हो जा जिनका मनोविज्ञान, अभिवृत्तियाँ, धारणाएँ, व्यवहार प्रतिमान उस स्थिति एवं के अनुरूप होते हैं। इस समूह की उपसंस्कृति का प्रभाव व्यक्तियों के मनोविज्ञान, वृत्तियों एवं व्यक्तित्व पर पड़ता है। यही उपसंस्कृति उस स्थिति-समूह के सद मनोविज्ञान, अभिवृत्तियों, मूल्यों एवं व्यक्तित्व का निर्धारण करते हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि स्थिति एवं कार्य व्यक्ति के मनोवि अभिवृत्तियों, धारणाओं, मूल्यों एवं व्यक्तित्व के निर्धारण बहुत अधिक महत्वपूर्ण वास्तव में, स्थिति और कार्य अनुरूप ही व्यक्ति का स्वभाव बन जाता है। व्यक्ति अपनी स्थिति और कार्य के अनुरूप अपने को नहीं ढाल पाते हैं, उन्हें अ सिद्ध होना पड़ता है और वह स्थिति उनसे छिन भी जाती है। सामाजिक जीवन नाटक के समान है। उसमें हर पात्र को अपनी भूमिका अपनी स्थिति के अनुसार निभानी पड़ती है। नाटक एक-दो बार करना पड़ता है पर व्यावहारिक जीवन जीवन का नाटक स्थिति और कार्य के अनुसार प्रतिदिन निभाना पड़ता है। जो हम प्रतिदिन करेंगे, उसका प्रभाव हम पर बिना पड़े नहीं रह सकता। अतः स्प कि स्थिति और कार्य का प्रभाव हमारे जीवन-प्रतिमान, मनोविज्ञान, अभिवृत्तियों व्यक्तित्व विकास पर अवश्य पड़ता है और काफी गहरा रंग चढ़ता है।

प्रश्न

1. व्यक्ति की स्थिति एवं कार्य समाज में कहाँ तक उसके दूसरों के मनोविज्ञान और अभिवृत्तियों के विकास को प्रभावित करते हैं।

(How far do the status and role of an individual in soc influence the development of his psychology and attitudes tow others ? Illustrate your answer. Agra, M. A. Sociology, 1962.)

2. स्थिति एवं कार्य में स्पष्ट भेद कीजिए। सामाजिक मनोविज्ञान एवं सामाजिक विज्ञानों में इस विचार के अभिप्राय की विवेचना कीजिए।

(Distinguish clearly between role and status. Discuss significance of the concept in social psychology and other sc sciences. Agra, M. A. Alternative Course in Sociology, 1961.)

3. सामान्यीकृत सामाजिक कार्य क्या है। यह कैसे विकसित होता है?

(What is a generalized social role ? How is it develop Rajasthan, M. A. Sociology, 1959.)

4. सामाजिक कार्य क्या हैं ? व्यक्तित्व के विकास में कार्य किस प्र महत्त्वपूर्ण हैं ?

(What are social roles ? In What way are the roles impo in the development of personality ? Rajasthan, M.A.Sociology, 19

5. स्थिति और कार्य की परिभाषा कीजिए। विभिन्न प्रकार की स्थि की विवेचना कीजिए।

(Define status and role. Discuss the various types of statu

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

23
व्यक्तित्व
(Personality)

'व्यक्तित्व' (Personality) का प्रत्यय (concept) सामाजिक मनोविज्ञान, मनोविज्ञान, सामाजिक विज्ञानों, सामाजिक सम्बन्धों के विज्ञानों आदि के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सामाजिक मनोविज्ञान के लिए तो व्यक्तित्व का अर्थ, प्रकृति, रचना एवं आधार का अध्ययन और भी विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है क्योंकि व्यक्तित्व की उत्पत्ति एवं विकास सामाजिक अन्तःक्रिया (social interaction) में होती है और सामाजिक अन्तःक्रिया का अध्ययन एवं विश्लेषण सामाजिक मनोविज्ञान के अध्ययन का प्रमुख विषय है। व्यक्तित्व का उदय व्यक्ति की प्राणीशास्त्रीय क्षमताओं (जो उसे वंशानुक्रमण से प्राप्त होती हैं) और उसके सामाजिक सांस्कृतिक पर्यावरण के मध्य होने वाली अन्तःक्रियात्मक प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप होता है। 'व्यक्तित्व' पर इतना महत्त्वपूर्ण है, पर इस शब्द के अर्थ के विषय में अनेक मान्यताएँ हैं, जो अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ उत्पन्न करती हैं और इसके उचित अध्ययन में बाधा डालती हैं। अब हम इस शब्द के सामान्य अर्थों पर विचार करेंगे।

'व्यक्तित्व' शब्द की व्युत्पत्ति

'व्यक्तित्व' शब्द अंग्रेजी के शब्द 'Personality' का हिन्दी रूपान्तर है। 'पर्सोनलिटी' शब्द लैटिन भाषा के 'पर्सनेयर' personare' शब्द से लिया गया है। इसका सम्बन्ध 'परसोना' (persona) शब्द से है। 'परसोना' शब्द का अर्थ है 'नकली चेहरा' (mask) है।

'परसोना' के इस शाब्दिक अर्थ के अनुसार व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति का बाह्य रूप है। बाह्य रूप का अर्थ है जैसा कि व्यक्ति अपने को दूसरे व्यक्तियों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि व्यक्ति 'ऊपर' से जैसा दिखता है, वही उसका व्यक्तित्व है। सिसीरो (Cicero) ने भी इसका यही अर्थ लिखा है— जैसा कि कोई दूसरों को दिखता है—न कि जैसा वह वास्तविक रूप में है (as one appears to others—but not as one really is)।[1]

सामान्य अर्थों में भी इसका प्रयोग इसी अर्थ में होता है। लोग प्रायः व्यक्तित्व

1. F. Max Mullcer, *Biographies of Words*, pp. 32 ff.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का अर्थ बाह्य रूप से ही लगाते हैं। प्रायः दैनिक बोलचाल की भाषा में इसका व्यक्ति के बाह्य स्वरूप, शरीर की बनावट एवं स्वरूप से ही लगाते हैं। कहते हैं व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक है' 'उसका व्यक्तित्व बड़ा बदसूरत है' आदि। इससे प्राय स्पष्ट है कि व्यक्तित्व के अर्थ शारीरिक रूप-रंग हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से का इस प्रकार का अर्थ अवैज्ञानिक है। इस अर्थ से व्यक्ति के बाह्य शारीरिक का ही बोध होता है। व्यक्तित्व का वास्तविक अर्थ अत्यधिक विस्तृत है और रिक बनावट एवं रूप-रंग व्यक्तित्व का एक अंशमात्र है। व्यक्ति के बाह्य-स्व व्यक्तित्व नहीं हैं।

कुछ लोग व्यक्तित्व और ख्याति (reputation) को एक ही अर्थों में करते हैं। यह उचित नहीं है क्योंकि किसी व्यक्ति को बाह्य लक्षणों एवं व्यव कारण ख्याति प्राप्त हो सकती है जबकि वास्तव में वह वैसा न हो।

इस आधार पर व्यक्तित्व के अर्थ को समझने के लिए पहले हम यह का प्रयत्न करेंगे कि व्यक्तित्व क्या नहीं है।

व्यक्तित्व क्या 'नहीं' है ? (What is 'not' Personality ?)

व्यक्तित्व क्या 'नहीं' है ? इसको समझना व्यक्तित्व के अर्थ को स लिए अत्यधिक आवश्यक है। न्यूकाम्ब (Newcomb) ने इस विषय में वि विचार व्यक्त किये हैं।[1] इस सम्बन्ध में निम्न तथ्य महत्त्वपूर्ण हैं :

(1) **व्यक्तित्व शरीर की बनावट से ही सम्बन्धित नहीं है**—व्यक्तित्व शरीर की बनावट का प्रदर्शन नहीं करता है। व्यक्तित्व का अर्थ बाह्य स्व नहीं है।

(2) **व्यक्तित्व की मात्राएँ नहीं होती हैं**—व्यक्तित्व कोई ऐसी वस्तु जिसकी विभिन्न मात्राएँ होती हों अपितु वह एक अभिन्न एवं अविभाजनशील है। दर्शन का व्यक्तित्व 'बहुत आकर्षक' है। कृष्णा का व्यक्तित्व 'साधारण राधिका का व्यक्तित्व 'कुछ नहीं है' आदि कथन व्यर्थ एवं अवैज्ञानिक हैं व्यक्तित्व की विभिन्न मात्राएँ नहीं होती हैं। हर व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व है जो अन्य व्यक्तित्वों से भिन्न होता है। हर व्यक्तित्व अपने में पूर्ण होता है

(3) **व्यक्तित्व अच्छा या बुरा नहीं होता**—व्यक्तित्व एक (neutral) शब्द है जो कि कुछ गुणों का बोध करता है। व्यक्तित्व का नहीं किया जा सकता। कोई व्यक्तित्व अच्छा या बुरा नहीं होता। कोई वांछनीय या अवांछनीय नहीं होता। व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के गुणों से है, न कि जैसा दूसरे उसका मूल्यांकन करें।

(4) **व्यक्तित्व शब्द किसी रहस्यात्मक वस्तु का बोध नहीं कराता**— शब्द किसी भी रहस्यात्मक वस्तु का बोध नहीं कराता। व्यक्तित्व के अ

1 T. M. Newcomb, *Social Psychology*, p. 339.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किसी रहस्य का उद्घाटन नहीं होता। व्यक्तित्व का अध्ययन व्यक्ति के गुणों एवं लक्षणों का अध्ययन मात्र होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि व्यक्ति का व्यक्तित्व गुणों एवं लक्षणों का पुंजी है। हर व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व होता है। कोई भी व्यक्तित्व अच्छा या बुरा, वांछनीय या अवांछनीय, आकर्षक या अनाकर्षक नहीं होता। व्यक्तित्व एक तटस्थ शब्द है जिसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।

मे (May) ने लिखा है कि व्यक्तित्व वाला वह व्यक्ति होता है जो यदि समूह से अनुपस्थित हो, तो समूह इसे महसूस करे और कुछ खोया-खोया अनुभव करे। यह मत उचित नहीं है। हर व्यक्ति का व्यक्तित्व होता है, चाहे उसे लोग पसन्द करें या न करें। क्लाइनबर्ग (Klineberg) ने भी मे (May) की आलोचना की है। उनका कहना है कि जिन व्यक्तियों को अन्य व्यक्ति देखना भी पसन्द नहीं करते, उनका भी अपना व्यक्तित्व होता है। किसी व्यक्ति में दूसरों को प्रभावित करने की क्षमता हो या न हो, पर उसका व्यक्तित्व तो होता ही है। व्यक्तित्व भिन्न प्रकार का हो सकता है, पर होता सबका है।

व्यक्तित्व क्या 'नहीं' है का विवेचन करने से यह तथ्य स्पष्ट हो गया कि इस शब्द का प्रयोग कितने गलत अर्थों में होता रहा है। अब हम विचार करेंगे कि व्यक्तित्व क्या है?

'व्यक्तित्व क्या है'? (What is Personality)

'व्यक्तित्व क्या है' का वर्णन न्यूकाम्ब (Newcomb) ने कुछ विशिष्ट तथ्यों के आधार पर किया है, जो निम्न हैं:

(1) **प्रत्येक व्यक्तित्व अपने में अनोखा होता है (Every Personality is Unique)**—प्रत्येक व्यक्तित्व अपने में अनोखा होता है। हर व्यक्तित्व में गुणों एवं लक्षणों का ऐसा सम्मिश्रण होता है कि उसमें अनोखापन आ जाता है। जिस प्रकार रंगों को अलग-अलग मात्रा में मिलाया जाये, तो हर मिश्रण का रंग पृथक होगा, इसी प्रकार व्यक्तित्व अनोखे होते हैं, जो एक-दूसरे से मिलते नहीं हैं। प्रत्येक व्यक्तित्व में सामान्यपन होते हुए भी वे एक दूसरे से भिन्न होते हैं। कोई भी दो व्यक्तित्व कभी एकसे नहीं होते। दो जुड़वा बच्चों का भी व्यक्तित्व एकसा नहीं होता। इसीलिए कहा जाता है कि प्रत्येक व्यक्तित्व अनोखा होता है।

(2) **व्यक्तित्व विशिष्टतया व्यक्ति के स्थायी गुणों की ओर संकेत करता है (Personality Refers Particularly to Persistent Qualities of the Individual)**—हर व्यक्ति के व्यवहार में कुछ स्थायी गुण होते हैं, जो व्यक्ति के व्यवहार में बार-बार परिलक्षित होते हैं। व्यक्तित्व व्यक्ति के इन स्थायी गुणों की ओर संकेत करता है, तात्कालिक गुणों की ओर नहीं। जैसे-जैसे व्यक्ति की आयु बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे ये गुण और भी अधिक स्थायी हो जाते हैं और व्यक्तित्व का अंग बनते जाते हैं। इन स्थायी गुणों के आधार पर ही हम व्यक्तियों के विषय में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भविष्यवाणी कर सकते हैं। न्यूकाम्ब ने लिखा है, "अधिकांशतः हममें से अधि... के विषय में भविष्यवाणी की जा सकती है और यह भविष्यवाणी बढ़ती हुई आयु के साथ और भी अधिक की जा सकती है।"[1]

(3) **व्यक्तित्व पर्यावरण से प्राणी के गतिशील अनुकूलन का प्रतिनिधित्व करता है (Personality Represents a Dynamic Orientation of Organism to Environment)**—व्यक्ति का जन्म के समय कोई व्यक्तित्व नहीं होता है। व्यक्तित्व जन्मजात नहीं होता। व्यक्ति के पास जन्म के समय ... क्षमताएँ होती हैं, जो बीज रूप में होती हैं, उनका विकास किया जा सकता है। व्यक्ति समाज में अन्तःक्रिया की प्रक्रिया द्वारा अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में ... सीखता है और अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। इसीलिए कहते हैं कि व्यक्तित्व अर्जित किया जाता है, न कि जन्मजात होता है। व्यक्ति अपने पर्यावरण से अनुकूलन करता है और उस अनुकूलन करने की प्रक्रिया में गुण एवं लक्षण ... करता है जो उसके व्यक्तित्व के अंग बनते जाते हैं। इस प्रकार प्राणी ... अनुकूलन पर्यावरण के साथ करता है। अतः स्पष्ट है कि व्यक्तित्व पर्यावरण ... प्राणी का गतिशील अनुकूलन है।

(4) **व्यक्तित्व सामाजिक अन्तःक्रिया द्वारा अत्यधिक प्रभावित होता है (Personality is Greatly Influenced by Social Interaction)**—व्यक्तित्व का उदय एवं विकास ही सामाजिक अन्तःक्रिया में होता है, इसका ... विश्लेषण हम 'आत्म के विकास' में करेंगे। यहाँ पर इतना समझना ही पर्याप्त है कि व्यक्तित्व सामाजिक अन्तःक्रिया से अत्यधिक प्रभावित होता है। ... अन्तःक्रिया न हो, तो व्यक्तित्व का उदय ही नहीं हो सकता। वैसे भी यदि ... के गुणों एवं लक्षणों की एक सूची तैयार की जाये और यह देखा जाये कि वे ... द्वारा प्रभावित हुए हैं तो हमें ज्ञात होगा कि वे सामाजिक अन्तःक्रिया द्वारा ... प्रभावित हुए हैं।

(५) **व्यक्तित्व स्थायी, गतिशील और सामाजिक प्रवृत्तियों के एक ... संगठन का प्रतिनिधित्व करता है (Personality Represents a Unified Organisation of Persistent, Dynamic and Social Predispositions)**—व्यक्तित्व के विषय में सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि व्यक्तित्व ... होता है। न्यूकाम्ब ने लिखा है, "अन्ततः और व्यक्तित्व को समझने के लिए ... महत्त्वपूर्ण यह है कि व्यक्तित्व संगठित होता है।[2] व्यक्तित्व की व्याख्या एक ...

---

1 'By and large, however, most of us are rather predictable ... 'we tend to become more so with increasing age." New... *Social Psychology*, p. 340.

2 "Finally, and most important of all for understanding it, person... ality is something organised." Newcomb, *Social Psych...* p. 341.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समस्त गुणों के जोड़ देने मात्र से नहीं की जा सकती, क्योंकि गुणों के आपसी संगठन के प्रकार एवं प्रकृति से उसका प्रभाव एक इकाई के रूप में प्रदर्शित होता है। व्यक्तित्व एक अनोखे संगठन का प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्तित्व स्थायी प्रवृत्तियों को ही परिलक्षित करता है जैसा कि हम लिख ही चुके हैं। ये गतिशील प्रकृति का है क्योंकि नवीन पर्यावरण एवं परिस्थितियों से सदैव अनुकूलन करता रहता है। इससे स्पष्ट है कि व्यक्तित्व स्थायी, गतिशील और सामाजिक प्रवृत्तियों के एक अनोखे संगठन का प्रतिनिधित्व करता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर न्यूकाम्ब ने व्यक्तित्व की परिभाषा करते हुए लिखा है, "हम व्यक्तित्व से व्यवहार करने को पूर्व दिशाओं, जिसमें निर्देशित और अभिव्यक्त व्यवहार दोनों सम्मिलित हैं, का व्यक्ति का संगठन समझते हैं।"[1]

व्यक्तित्व की परिभाषाएँ
(Definitions of Personality)

व्यक्तित्व की बहुत-सी परिभाषाएँ की गयी हैं। इन परिभाषाओं में व्यक्तित्व के अर्थ को भिन्न-भिन्न रूप में दर्शाया गया है। आल्पोर्ट (Allport) ने उनमें से पचास विभिन्न प्रकार की परिभाषाओं की एक सूची बनायी है। कुछ परिभाषाएँ मनोरंजक हैं।

आल्पोर्ट ने पर्याप्त अध्ययन, सर्वेक्षण एवं अनुशीलन के उपरान्त व्यक्ति की परिभाषा इस प्रकार की है, "व्यक्तित्व व्यक्ति में उन मनोभौतिक व्यवस्थाओं का एक गतिशील संगठन है जो निश्चित करता है कि उसका पर्यावरण के साथ विशिष्ट समायोजन है।"[2]

आल्पोर्ट ने व्यक्तित्व को मनोवैज्ञानिक एवं भौतिक व्यवस्थाओं का एक ऐसा गतिशील संगठन माना है जो व्यक्ति के अपने पर्यावरण के साथ अनोखे सामंजस्य को निश्चित करता है। आल्पोर्ट ने प्रथम तो व्यक्तित्व को एक ऐसा संगठन माना है जो गतिशील है अर्थात् नवीन पर्यावरण, परिस्थितियों, दशाओं आदि से अनुकूलन करता है और समय के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इसका अभिप्राय यह है कि व्यक्तित्व रुका हुआ नहीं होता, अपितु परिवर्तित होता है। व्यक्तित्व सजीव होता है। व्यक्तित्व में दो प्रमुख व्यवस्थाएँ होती हैं—मनोवैज्ञानिक और भौतिक। आल्पोर्ट के अनुसार व्यक्तित्व व्यक्ति का उसके पर्यावरण के साथ सामंजस्य को निश्चित करता

---

1. "We shall mean by personality the individual's organisation of predispositions to behaviour, including to both directive and expressive behaviour." Newcomb.
2. "Personality is the dynamic organisation within the individual of those psychophysical systems that determine his unique adjustment to his environment." G. W. Allport, *Personality—A Psychological Interpretation*, p. 48.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। यह सामंजस्य अनोखा होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि व्यक्तित्व मनो... व्यवस्थाओं का गतिशील संगठन है जो व्यक्ति का पर्यावरण के साथ अनोखा ... करता है।

प्रिंस (Prince) ने व्यक्ति की परिभाषा करते हुए लिखा है, "... व्यक्ति के समस्त जैविक आन्तरिक व्यवस्थाओं, प्रेरणाओं, प्रवृत्तियों, ... और मूलप्रवृत्तियों एवं अर्जित प्रेरणाओं एवं प्रवृत्तियों जो अनुभव द्वारा ... जाती हैं, का पूर्ण जोड़ है।"[1] मार्टन प्रिंस ने अपनी परिभाषा में व्यक्तित्व ... आधारों का पूर्ण जोड़ माना है—(i) प्राणीशास्त्रीय (जैविक) और अर्जि... गुण प्राणीशास्त्रीय होते हैं अर्थात् जन्मजात होते हैं और वंशानुक्रम से प्राप्त ... कुछ समाज में अनुभव के द्वारा प्राप्त किये जाते हैं। ये प्राणीशास्त्रीय और ... गुण शनैः-शनैः संगठित होकर व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं।

किम्बाल यंग ने लिखा है, "हम व्यक्तित्व को एक व्यक्ति के अधिक... आदतों, गुणों, अभिवृत्तियों और विचारों के प्रतिमानित संग्रह के रूप में परि... कर सकते हैं, जो एक प्रकार से बाह्य रूप से कार्य एवं स्थितियों में संगठि... तथा आन्तरिक रूप से संप्रेरणाओं, उद्देश्यों और आत्म के तथ्यों से सम्बन्धि... हैं। इस प्रकार व्यक्तित्व के दो तथ्य कार्य एवं स्थिति हैं जिनका तात्पर्य दूस... प्रभावित करने के लिए आचरण करने और जीवन संगठन या आत्म, ... संप्रेरणाओं, उद्देश्यों से सम्बन्धित स्वयं तथा अन्य के व्यवहार पर दृष्टिपात ... है। संक्षेप में, यह प्रकट क्रियाओं एवं अर्थों से सम्बन्धित है।"[2]

किम्बाल यंग ने व्यक्तित्व को दो प्रकार के तत्त्वों का संगठन मान... बाह्य और आन्तरिक। इस दृष्टि से व्यक्तित्व के दो पक्ष हैं—(i) कार्य और ... जिससे व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से व्यवहार करता है और (ii) जीवन-सं... आत्म जिसके द्वारा वह स्वयं को देखता है, और दूसरों को देखता है।

---

1 "Personality is the sum total of all the biological innate d... tions, impulses, rendencies, affetites and instincts of the indi... and the acquired dispositions and tendencies acquired by ... rience." Morton Prince, *The Unconscious*, p. 532.

2 "We may define personality as a more or less patterned b... habits, traits, attitudes and ideas of an individual as the... organized externally into roles and statuses, and as they ... internally to motivation, goals, and various aspects of sel... Personality, then, has two aspects : role and status with ... to conduct affecting others, and life organization or selfhood ... regard to internal motivation, goals, and the ways of vi... one's own behaviour as well as the behaviour of others. E... it concerns *overt action and meaning*." K. Young, *A Ha... of Social Psychology*, p. 58.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किम्बाल यंग ने अन्यत्र एक परिभाषा इस प्रकार की है, "व्यक्तित्व को विचारों, अभिवृत्तियों, लक्षणों, मूल्यों और प्रत्युत्तरों (आदतों) की, बहुत कुछ संगठित, पूर्णता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसका निर्माण एक व्यक्ति के भूमिकाओं तथा स्थितियों के रूप में, दूसरों के साथ तथा स्वयं अपने साथ व्यवहार करने के लिए किया जाता है।"[1]

डीवर (Dever) ने व्यक्तित्व की परिभाषा करते हुए लिखा है, "........ व्यक्तित्व व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक गुणों का वह समन्वित और गतिशील संगठन है, जो दूसरे व्यक्तियों के प्रति सामाजिक जीवन के आदान-प्रदान में अभिव्यक्त होता है।"[2] डीवर के अनुसार व्यक्ति एक समन्वित एवं गतिशील संगठन है जिसमें शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक गुण सम्मिलित होते हैं। व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति व्यक्ति के अन्य व्यक्तियों के साथ व्यवहार में होती है।

मन ने व्यक्तित्व की परिभाषा इस प्रकार की है, "व्यक्तित्व की परिभाषा एक व्यक्ति की संरचना, व्यवहार के प्रतिमान, रुचियों, अभिवृत्तियों, क्षमताओं, योग्यताओं और अभिरुचियों के अत्यधिक विशिष्ट संगठन के रूप में की जा सकती है।"[3]

व्यक्तित्व के आधार
(Foundations of Personality)
अथवा
व्यक्तित्व के मुख्य निश्चायक
(Main Determinants of Personality)

व्यक्तित्व के निम्न प्रमुख आधार हैं : (1) दैहिक ढाँचा (physiological structure), (2) मनोवैज्ञानिक ढाँचा (psychic structure) और (3) सामाजिक ढाँचा (social structure)।

---

1. "Personality may be defined as the more or less organized body of ideas, attitudes, traits, values and responses (habits) which an individual has built into roles and statuses for dealing with others and with himself." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 5.

2. "........being the integrated and dynamic organisation of the physical, mental and social qualities of the individual as that manifests itself to other people, in the give and take of social life." Dever, *Dictionary of Psychology*.

3. "Personality may be defined as the most characteristic integration of an individual's structure, modes of behaviour, interests attitudes, capacities, abilities and aptitudes." N.L. Munn, *Psychology*. p. 569.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

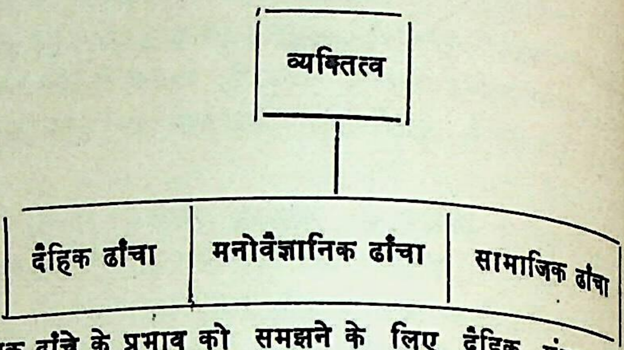

दैहिक ढाँचे के प्रभाव को समझने के लिए दैहिक संरचना को … चाहिए। किस प्रकार स्नायु-मण्डल हमारे मनोवैज्ञानिक ढाँचे को प्रभावित … यह महत्त्वपूर्ण है। वाहकाणु कहाँ तक हमारे गुणों के निर्माण एवं विकास में … होते हैं। हम कहाँ तक सोच सकते हैं।

मनोवैज्ञानिक ढाँचा भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विभिन्न मनो… प्रक्रियाएँ किस प्रकार होती हैं। इस दृष्टि से "मूलप्रवृत्तियाँ, प्रेरणा, चालक, … करण, सीखने के सिद्धान्त, सामाजीकरण, स्थिति और कार्य, इत्यादि महत्त्वपूर्ण … इस अध्याय एवं अगले अध्यायों में हम इन पर ही व्यक्तित्व के सन्दर्भ में … प्रकाश डालेंगे।

सामाजिल ढाँचा भी व्यक्तित्व का महत्त्वपूर्ण आधार है।[1] विशेष … संस्कृति का प्रभाव पड़ता है। हमने इस दृष्टि से तीन अध्याय दिये हैं: संस्कृ… अर्थ, व्यक्तित्व और संस्कृति, व्यक्तित्व और उप-संस्कृतियाँ।

इस शेष अध्याय में हम कुछ पक्षों पर विचार करेंगे।

दैहिक ढाँचा
(Physiological Structure)

प्रकृति मनुष्य को शरीर प्रदान करती है। जब बच्चा जन्म लेता है … पास शरीर होता है, वह पशु के समान होता है, उसका कोई व्यक्तित्व नहीं … यह बाद को विकसित होता है। आल्पोर्ट ने भी लिखा है, "पूर्णरूप से … सामाजिक एवं नैतिक जीव, विकसित वयस्क व्यक्तित्व, विकास की प्रक्रिया … प्रतीक्षा करता है।"[2]

वंशानुसंक्रमण अनेक क्षमताएँ प्रदान करता है और कुछ सीमाएँ भी … करता है। व्यक्ति इन्हीं क्षमताओं पर अपना व्यक्तित्व विकसित करता है …

---

[1] तोमर: समाजशास्त्र की रूपरेखा।

[2] "The fully fashioned social and moral being, the developed personality, waits upon the process of growth." G. W. A… *Personality—A Psychological Interpretation* (1949), Henry … Co., New York, p. 101.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...नी सीमाओं में ही रहता है। वंशानुसंक्रमण का क्या प्रभाव होता है और कहाँ ...होता है, इसके विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। इस विषय में बड़ा वाद-...वाद'[1] है कि वंशानुसंक्रमण महत्त्वपूर्ण है या पर्यावरण। समस्या गम्भीर है। ...ल्पोर्ट ने लिखा है, "वही अग्नि मक्खन को पिघलाती है और अण्डे को सख्त ...ती है।"[2]

व्यक्तित्व के निर्माण में वंशानुसंक्रमण एवं पर्यावरण दोनों का ही महत्त्व है। ...ल्पोर्ट (*Personality*, p. 106) ने इनका निम्न समीकरण प्रस्तुत किया है :

Personality = f (Heredity) × (Environment)

यदि कारक वंशानुसंक्रमण और पर्यावरण में से कोई भी शून्य हो (0 × 0 = ... 2 × 0 = 0; 0 × 2 = 0) तो व्यक्तित्व भी शून्य होगा।

दैहिक ढाँचा व्यक्तित्व में तीन दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण योग देता है। आल्पोर्ट ...लिखा है, "व्यक्तित्व के तीन कच्चे पदार्थों का सिद्धान्त, शारीरिक बनावट, ...की घोषणा और स्वभाव, ढाँचे सम्बन्धी पैतृक गुण द्वारा उत्पत्ति से निश्चित ...ते है, तथा थोड़ा-सा परिवर्तन जन्म के उत्तरगामी स्थितियों के अस्तित्वों में हो ...ता है। वे वंशानुसंक्रमण के प्रभावशाली माध्यम हैं जो उत्पत्ति की प्रक्रिया ...प्रवेश होते हैं प्रत्येक स्तर पर गुणों एवं अभिवृत्तियों के विकास को प्रभावित ...रते हैं।"[3]

व्यक्तित्व का प्राणीशास्त्रीय सिद्धान्त
(The Biological Theory of Personality)

कुछ विद्वानों ने दैहिक ढाँचे को ही व्यक्तित्व के विकास में प्रमुख माना है। ...नके अनुसार व्यक्तित्व का विकास दैहिक ढाँचे पर ही आधारित है। आल्पोर्ट ने ...म्न सिद्धान्त बताया है :

"The personality of an individual is the mode of adjustment ...r survival that results from the interaction of his organic cravings ...egmental drives) with an environment both friendly and hostile to ...ese cravings, through the intermediation of a plastic and modi-...able central nervous system."[4]

---

1. तोमर : समाजशास्त्र की रूपरेखा।
2. "The same fire that melts the butter, hardens the egg." *Ibid*, p. 102.
3. "The three principal raw materials of personality, *physique*, the endowment of *intelligence* and *temperament*, are genetically determined through structural inheritance and are only slightly altered by conditions existing subsequent to birth. They are the effective agencies of heredity entering the process of growth at every stage to influence the development of traits and attitudes." G. W. Allport *Personality*, p. 107.
4. G. W. Allport, *Psychology*, p. 114.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

केन्द्रीय स्नायुमण्डल (central nervous system) मनुष्य के व्यक्तित्व में विशेष भाग लेता है। यह बाह्य पर्यावरण से सामंजस्य स्थापित करने की क्रिया में कुछ मानसिक गुण विकसित करता है; जैसे—आदतें, अभिवृत्तियाँ, गुण, लक्षण, विचार इत्यादि, जो व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण आधार हैं। आल्पोर्ट ने इसे समझाते हुए लिखा है, "केन्द्रीय स्नायु-संस्थान आवश्यक सन्तुलन को प्रभावित करने की प्रक्रिया में जैविक तृष्णा और पर्यावरण के विकास की नितान्त आवश्यकता कुछ चारित्रिक आदतें, अभिवृत्तियाँ, व्यक्तिगत गुण, दिव्यकरण के स्वरूप और विचार और यह कि सन्तुलन के लक्षण सामूहिक रूप से समस्त व्यक्तित्व से ली गयी हैं।"[1]

इस प्रकार केन्द्रीय स्नायुमण्डल का विशेष महत्त्व है। आल्पोर्ट ने लिखा है, "इस प्रकार केन्द्रीय स्नायु-संस्थान व्यक्तित्व का स्थान है।"[2]

दैहिक ढाँचे का प्रभाव और भी कई प्रकार से मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक ढाँचे पर पड़ता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि इन दोनों का घनिष्ट सम्बन्ध है। एक-दूसरे के बिना इनके प्रभाव को समझना कठिन है।

इसमें सन्देह नहीं कि दैहिक ढाँचे का प्रभाव व्यक्तित्व पर पड़ता है, किन्तु वही सब कुछ नहीं है। शेलडन तथा स्टीवेंस ने इस दृष्टि से एक बहुत महत्त्वपूर्ण परीक्षण किया और वह भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे। उन्होंने लिखा है, "यदि कोई चीज अध्ययन के पूर्ण रूप से निश्चित रूप में प्रदर्शित की गयी है, वह इस प्रकार है कि तो जैविक रचना प्रकार (शारीरिक रचना प्रकार) अकेले ही, न केवल एकल रूप से व्यक्तित्व के 'अर्थ' को पूर्ण करने के लिए होगा। एक ही प्रकार के शारीरिक ढाँचे के व्यक्ति बहुतायत से अनेक एकल व्यक्तियों के प्रकार में विकसित होते हैं। इससे अधिक यह सह-सम्बन्ध जैविक रचना प्रकार और स्वभाव (दो सौ व्यक्तियों का) विस्तृत रूप में लिया गया है, (सामान्य उच्च) बहुत अधिक (रूप से गौण) विचलन कार्य करते हैं जिसमें स्वभाव का विशिष्ट प्रदर्शन एक निश्चित सीमाओं में शरीर रचना (केवल) से व्यक्त किया जा सकता है।"

दैहिक ढाँचे एवं मनोवैज्ञानिक ढाँचे में घनिष्ठ सम्बन्ध है। गर्थ तथा मिल्स[3] ने इस सम्बन्ध में अग्र चार्ट प्रस्तुत किया है :

---

1 "The central nervous system in the process of effecting the necessary adjustments between the organic cravings and the exigencies of the environment develops certain characteristic habits, attitudes, personal traits, forms of sublimation and thought, and it is these characteristic modes of adjustment that taken collectively comprise personality." G. W. Allport, *Personality*, p. 114.

2 "In a sense, therefore, the central nervous system is the seat of personality." *Ibid*, p. 114.

3 Hans Gerth and C. Wright Mills, *Character and Social Structure*, p. 43.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Character Structure

Organism		Person	
PSYCHIC STRUCTURE			
Structural Limitations	impulse........	....purpose	roles
	impression...	....perception	meanings
	feeling........	...emotion	gestures

गर्थ तथा मिल्स ने मनोवैज्ञानिक ढाँचे का आधार दैहिक ढाँचे को बताया है। उन्होंने लिखा है, "मनोवैज्ञानिक ढाँचे के मौतिक आधारों में, अन्तरसंग्रही प्रभाव है और सामाजिक ऐतिहासिक दशाओं के किसी के अन्तर्गत, उनमें भी सामाजिक प्रभाव है। व्यक्ति जिस प्रकार महसूस करते हैं, अनुभव करते हैं, इच्छा करते हैं, पशु जैविकों में भी सन्निहित है तथा प्रत्यक्ष रूप में परिवर्तित भौतिक दशाओं से प्रभावित होती हैं।"[1]

व्यक्तित्व का प्राणीशास्त्रीय आधार
(Biological Bases of Personality)

व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों में जैविकीय या प्राणिशास्त्रीय कारकों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कुछ वंश परम्परावादी लेखकों का तो यहाँ तक कहना है कि व्यक्तित्व के विकास में सर्वश्रेष्ठ देन प्राणिशास्त्रीय कारकों का ही है। इस मत के अनुसार डॉक्टर का बेटा डॉक्टर और चोर का बेटा चोर ही होगा। यद्यपि आज इस मत को मानना उचित नहीं है फिर भी इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्राणिशास्त्रीय कारकों का व्यक्तित्व के निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह बात निम्नलिखित विवेचन से स्पष्ट हो जायेगा :

(1) **स्वास्थ्य (Health)**—स्वास्थ्य भी व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। जिस व्यक्ति का स्वास्थ्य अच्छा होता है तथा रंग-रूप आकर्षक होता है उसके व्यक्तित्व को अच्छा कहा जाता है। इसके विपरीत नाटे, कुरूप अथवा रोगी व्यक्तियों की लोग अवहेलना करते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उस व्यक्ति में हीन-

---

[1] Hans Gerth and C. Wright Mills, *Character and Social Structure*, p. 44.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भावना उत्पन्न हो जाती है और वह व्यक्ति दूसरों के सामने जाने और बोलने में हिचक महसूस करता है । इस हीनभावना के अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के परिणाम हो सकते हैं—यदि हीनभावना अपनी चरमसीमा पर पहुँच जाती है तो व्यक्ति आत्म-हत्या भी कर सकता है । इस हीनभावना की प्रतिक्रिया ध्वंसात्मक भी हो सकती है और व्यक्तित्व का विकास चोर, डाकू, शराबी आदि के रूप में हो । इस हीनभावना को दूर करने के लिए व्यक्ति विद्वान, बहादुर या नेता भी बन सकता है । इसका तात्पर्य हुआ कि व्यक्ति की शारीरिक बनावट और स्वास्थ्य के प्रति समाज की प्रतिक्रिया उसके व्यक्तित्व के निर्माण में अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

(2) **बुद्धि (Intelligence)**—व्यक्तित्व की संरचना में बुद्धि का महत्त्वपूर्ण स्थान है । बुद्धि जन्मजात होती है । जिस व्यक्ति की बुद्धि तेज होती है वह किसी भी परिस्थिति से अपना अनुकूलन कर लेता है तथा समस्याओं का तत्काल निराकरण कर लेता है । ये सब बातें उसके व्यक्तित्व के विकास में सहायक होती हैं । बौद्धिक क्षमता के अनुरूप ही समाज में उसकी स्थिति होती है । वह महान व्यक्ति, नेता, विद्वान बनता है और वैसा ही उसके व्यक्तित्व का निर्माण होता है । बुद्धिहीन व्यक्ति समाज में कभी भी उच्च पद को प्राप्त नहीं कर पाते । इस प्रकार बौद्धिक क्षमता अच्छे और बुरे व्यक्तित्व का मापदण्ड है ।

(3) **स्नायु-मण्डल (Nervous System)**—स्नायु-मण्डल की क्रियाओं का प्रभाव व्यक्तित्व के विकास में पर्याप्त मात्रा में पड़ता है । स्नायु-मण्डल के अन्तर्गत मस्तिष्क भी आता है और मस्तिष्क पर ही किसी भी व्यक्ति की मानसिक योग्यता, क्रियात्मक कौशल और विशिष्ट बौद्धिक क्षमता निर्भर होती है । ये सारे व्यक्तित्व के अन्तर्गत ही आते हैं । कैम्फ (Kemph) के अनुसार हमारी इच्छाओं की उत्पत्ति स्वतः संचालित स्नायु-संस्थान से होती है । जब उस इच्छा और वातावरण के बीच संघर्ष होता है तो अनुकूलन की प्रक्रिया में स्नायु-मण्डल सहायक होता है । परन्तु जब स्नायु-मण्डल द्वारा निर्धारित योग्यता उस उद्देश्य की पूर्ति में आवश्यक नहीं सिद्ध होती तो व्यक्ति में निराशा की भावना पनपती है और वह व्यक्तित्व के विकास को प्रभावित करती है ।

(4) **अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ (Endocrine Glands)**—अधिकांश मनोवैज्ञानिक नलिकाविहीन (ductless) अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को व्यक्तित्व निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है । इन भिन्न-भिन्न ग्रन्थियों से भिन्न-भिन्न प्रकार के स्राव निकलते हैं जो खून में मिलकर अनेक शारीरिक क्रियाओं को प्रभावित करते हैं । इन ग्रन्थियों से निकलने वाले रासायनिक पदार्थ को हारमोन्स (harmones) कहते हैं । जब हारमोन्स सन्तुलित मात्रा में निकलकर रक्त में मिलता है तो व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास होता है । अधिक या कम हारमोन्स निकलने का व्यक्तित्व पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता । यदि हारमोन्स अधिक निकलता है तो व्यक्ति अधिक जोशीला, क्रोधी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अशान्त हो जाता है और कम स्राव होने पर व्यक्ति आलसी, सुस्त, कामचोर और दुर्बल हो जाता है। इस ग्रन्थियों से निकलने वाले हारमोन्स का अलग-अलग प्रभाव व्यक्तित्व पर पड़ता है। इनका प्रभाव शारीरिक विकास और पाचन क्रिया पर भी पड़ता है। कभी-कभी ये हमारे व्यवहार को भी प्रभावित करती हैं। ये ग्रन्थियाँ निम्नलिखित हैं :

(1) कण्ठ ग्रन्थि (Thyroid Glands), (2) सर्वकिव ग्रन्थि (Pancreas Glands), (3) अभिवृक्क ग्रन्थि (Adrenal Glands), (3) पीयूष ग्रन्थि (Pituitary Glands), (5) जनन ग्रन्थियाँ (Gonad Glands)।

(5) **शारीरिक रसायन** (Body Chemicals)—शारीरिक रसायन का व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों में महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन काल से ही मानव स्वभाव का कारण उसके शरीर के रासायनिक तत्त्वों को माना जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार आशावादी व्यक्ति में रक्त की अधिकता, चिड़चिड़े व्यक्ति में पित्त (bile) की अधिकता, शान्त व्यक्ति में कफ (Phlegm) की अधिकता और उदास रहने वाले व्यक्ति में तिल्ली (splean) की अधिकता, नर्वी (nervous) व्यक्ति में स्नायु द्रव (nervous fluid) की अधिकता बताया गया है। यद्यपि इस शरीर शास्त्रीय सिद्धान्त को मनोविज्ञान स्वीकार नहीं करता फिर भी, इस सत्य को कोई भी मनोवैज्ञानिक अस्वीकार नहीं कर सकता कि शरीर के रासायनिक तत्त्वों का व्यक्तित्व के विकास पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। ये रासायनिक तत्त्व दो प्रकार के होते हैं—(1) जो बाहर से शरीर में पहुँचते हैं। (2) जो शरीर में ही बनते हैं। ये दोनों ही प्रकार के रासायनिक तत्त्व रक्त में मिलने के 15 सैकिण्ड के अन्दर ही पूरे शरीर में फैल जाते हैं। शराबी व्यक्ति इसका उदाहरण है। इसी प्रकार तम्बाकू, चरस, गाँजा और भाँग आदि सेवन करने वाले व्यक्तियों के व्यक्तित्व पर इन सब मादक द्रव्यों के प्रयोग का प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार रक्त में शर्करा (sugar) की मात्रा कम या अधिक होने, भोजन की कमी या अधिकता, विभिन्न विटामिनों की कमी आदि से व्यक्ति में परिवर्तन दिखायी देते हैं और इन सभी परिवर्तनों का प्रभाव व्यक्तित्व के विकास पर पड़ता है।

उपर्युक्त विवेचन से व्यक्तित्व का प्राणिशास्त्रीय आधार का महत्त्व स्पष्ट हो जाता है। यद्यपि व्यक्तित्व के विकास में अन्य अनेक कारक भी महत्त्वपूर्ण रूप से क्रियाशील रहते हैं फिर भी इन प्राणिशास्त्रीय कारकों का अपना अलग ही स्थान है।

मनोवैज्ञानिक ढाँचा
(Psychic Structure)

मनोवैज्ञानिक ढाँचे के अन्तर्गत मानसिक तत्त्व, अभिवृत्तियाँ, लक्षण, भाव तथा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्य आन्तरिक संगठन के सम्बन्धित पक्ष"[1] (related aspects of inter organisation) इत्यादि आते हैं।

पिछले अध्यायों में हम उद्वेग तथा स्थायीभाव, अभिप्रेरणा, प्रत्यक्षीकरण अभिवृत्तियाँ आदि पर प्रकाश डाल चुके हैं। व्यक्तित्व के विकास में मनोवैज्ञानिक ढाँचे के ये महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं और ये व्यक्तित्व को अत्यधिक प्रभावित करते हैं। व्यक्ति का व्यक्तित्व उसके उद्वेगों, स्थायीभावों मूल्यों, अभिवृत्तियों इत्यादि पर ही आधारित है। इनके कारण एक सन्दर्भ समूह विकसित हो जाता है और इसी के सन्दर्भ में व्यक्ति संसार का प्रत्यक्षीकरण करता है। अब हम इन पर संक्षेप में विचार करें।

प्रत्यक्षीकरण और व्यक्तित्व (Perception and Personality)— प्रत्यक्षीकरण[2] पर एक पृथक अध्याय में हम विचार कर चुके हैं। उसमें हमने प्रत्यक्षीकरण सम्बन्धी कुछ सिद्धान्तों का विवरण दिया था और हमने देखा था कि वास्तविक वस्तु नाम की कोई वस्तु नहीं पाते बल्कि अपने प्रत्यक्षीकरण के आधार पर ही उसे स्वीकार करते हैं। प्रत्यक्षीकरण व्यक्तित्व के विकास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। प्रत्यक्षीकरण के द्वारा हम प्रस्तुत उत्तेजना का अर्थ लगाते हैं और यह अर्थ हमारे लिए सत्य होता है। यही कारण है कि समान उत्तेजना विभिन्न व्यक्तियों को भिन्न अर्थ प्रदान करती है। हम जो कुछ देखते हैं वह हमारी आवश्यकताओं एवं प्रेरणाओं द्वारा निश्चित होता है। किम्बाल यंग ने उचित ही लिखा है, "इससे भी अधिक प्रत्यक्षीकरण आवश्यकताओं या संप्रेरणाओं से सम्बन्धित है। हम जो कुछ सुनते या देखते हैं किसी विशेष संप्रेरणा या चालक से उस क्षण अर्द्ध रूप में निश्चित होता है जैसे कि जो कुछ हमने किसी विशेष वस्तु या स्थिति के बारे में सीखा है।"[3]

कल्पना एवं स्मरण शक्ति (Imagery and Memory)—कल्पना एवं स्मरण शक्ति भी सांस्कृतिक तत्त्वों से प्रभावित होती हैं। बार्टलेट ने अनेक उदाहरणों से इसको सिद्ध किया। बार्टलेट ने लिखा है, "विभिन्न अभिवृत्तियों एवं मूल्यों ने सामान्य अनुभवों को विभिन्न अर्थ दिये हैं।"[4]

संबोध-निर्माण (Concept Formation)—संबोध-निर्माण भी महत्त्वपूर्ण है। पहले बच्चा सामान्यीकरण करता है। जैसे कुर्सी को 'कोई वस्तु जिस पर बैठा जाय' बोतल को 'जिसमे दूध पिया जा सके' इत्यादि। इसके उपरान्त ब...

---

1 K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 76 and fun...

2 'प्रत्यक्षीकरण' का अध्याय देखें—विशेष रूप से 'प्रत्यक्षीकरण के सिद्धान्त'।

3 "Moreover, perception is related to motivation or needs." Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 59.

4 Different attitudes and values have given different meanings to common experience." F. C. Bartllet, *Remembering* (1932) Cambridge University Press.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रारम्भ होता है। संबोध निर्माण तब होता है जब कई वस्तुओं में समानता दिखायी पड़ती है। उदाहरण के लिए, मनोवैज्ञानिक स्टर्न की $3\frac{1}{2}$ साल की लड़की ने एक भिन्न प्रकार की चिड़िया को देखकर पूछा कि क्या यह चिड़िया भी अण्डे देती है।"[1]

संख्या का संबोध भी इसी प्रकार होता है। पहले एक या एक से अधिक का संबोध होता है। फिर धीरे-धीरे संख्या आने लगती है।

अभिवृत्तियाँ (Attitudes)—अभिवृत्तियों पर हमने विस्तार में एक पृथक अध्याय में प्रकाश डाला है। कृपया उसे ध्यान से पढ़िए।

अभिवृत्तियाँ व्यक्ति के विस्तृत अंगों से सम्बन्धित हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "अन्त में अभिवृत्तियाँ व्यक्तित्व के विस्तृत अंगों से अवश्य ही सम्बन्धित होंगी।"[2]

स्थायीभाव और उद्वेग (Sentiments and Emotions)—उद्वेग एवं स्थायीभाव का विश्लेषण हम पृथक अध्याय में कर चुके हैं। हमारे बहुत से व्यवहार उद्वेग एवं स्थायी भावों को प्रदर्शित करते हैं।

मूल्य एवं आदर्श (Values and Ideals)—हम कुछ वस्तुओं को अधिक आवश्यक समझते हैं और कुछ को कम। यह मूल्यों पर आधारित है। हम अपने समाजीकरण एवं व्यक्तित्व के विकास में मूल्य विकसित कर लेते हैं। किम्बाल यंग ने मूल्यों की परिभाषा देते हुए लिखा है, "मूल्य हमारे उद्देश्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो हम अपनी इच्छाओं और अभिवृत्तियों की ओर निर्देशित करते हैं।"[3]

उद्देश्य भी मूल्यों से सम्बन्धित हैं। वे चालक जो काफी लम्बे समय से हमें कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं, हमारे आदर्श (ideals) होते हैं। वे हमारी कल्पनाओं में विकसित होते हैं।

सामाजिक ढाँचा
(Social Structure)

सामाजिक ढाँचा भी मनोवैज्ञानिक ढाँचे को प्रभावित करता है, गर्थ तथा मिल्स ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "मनोवैज्ञानिक ढाँचा व्यक्ति के साथ जुड़ा हुआ है; बहुत निर्णयकता से, अचानक जिसमें सामाजिक आशाएं व्यक्ति की प्रवृत्तियों उद्वेगों, प्रत्यक्षीकरणों का निर्देशन एवं नियन्त्रण करने के लिए मनोवैज्ञानिक ढाँचा (कैसे, क्या, जब हम अनुभव, अनुमान और इच्छा करते हैं) पूर्ण चारित्रिक ढाँचे से निश्चित

---

1. William Stern and Clara Stern, *Psychology of Early Childhood Upto the Sixth Year of Age* (1924), Henry Holt, New York.
2. "Finally, attitudes must be related to the larger aspects of personality." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 78.
3. "Values represent objects toward which we direct our desires and attitudes." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 81.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है, परन्तु चारित्रिक ढाँचे का 'कार्य' व्यक्ति सामाजिक अनुभव एवं प्रशि... का परिणाम है।"[1]

सामाजीकरण की प्रक्रिया सामाजिक ढाँचे के द्वारा निश्चित होती है।... पर हम एक पृथक अध्याय में प्रकाश डाल ही चुके हैं। स्थिति और कार्य भी मह... पूर्ण हैं। व्यक्तित्व के विकास में इनका विशेष प्रभाव पड़ता है, गर्थ तथा मि... लिखा है, "मनोवैज्ञानिक ढाँचे का विकास—प्रोत्साहन, प्रत्यक्षीकरण, और सं... का—सामाजिक कार्यों में सम्बन्धित रहता है, जिसको व्यक्ति क्रिया एवं ... करता है।"[2]

सामाजिक ढाँचा व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण आधार है। व्यक्ति वही ... है जो कुछ उसका समाज उसे बनाता है। व्यक्तित्व पर संस्कृति के प्रभाव का हम ... अगले पृथक खण्ड में विचार करेंगे। सामाजिक ढाँचे के महत्त्व को दर्शाते हुए किम्ब... यंग ने लिखा है, संक्षेप में, व्यक्ति को समझने के लिए उसके अपकर्ष ने संघ... तरीके और अन्य स्थितियाँ और उसकी सन्तुष्टि की प्रकृति, एवं आन्तरिक जीवन... साथ ही साथ उसके प्रकट चालन को भी जानना आवश्यक है।"[3]

परिपक्व व्यक्तित्व
(The Mature Personality)

परिपक्व व्यक्तित्व की परिभाषा करना बड़ा कठिन है। सामान्यतः ... व्यक्तित्व परिपक्व है जो अपने समाज से भिन्न या समान होते हुए भी उसमें सा... जस्य कर ले। उसे जीवन में रहने के लिए कुछ होना चाहिए। परिपक्व व्यक्ति... के तत्त्व एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में भिन्न हो सकते हैं; फिर भी समान ... कुछ तत्त्व ऐसे हैं जो आवश्यक कहे जा सकते हैं।

---

1 "The psychic structure is also linked to the person, most cruci... ly by the way in which social expectation play upon the pe... to steer and control his impulses, emotions and percepti... The psychic structure (how, what, when we feel perceive ... will) is determined of the character structure, the person, ... result of experience and training." Gerth and Mills, *Chara... and Social Structure*, p. 44.

2 "The development of the psychic structure—of impulse, pe... tion, and emotion—thus involves the social roles that the pe... acquires and enacts." *Ibid*, p. 79.

3 In short, to understand the person, his manner of meeting c... and other situations, and the nature of his satisfactions, i... necessary always to know his inner life as well as to know a... his overt conduct." K. Young, *A Handbook of Social Psycho...* p. 83.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आल्पोर्ट[1] ने परिपक्व व्यक्तित्व के निम्न तीन लक्षण बताये हैं : (1) आत्म का विस्तार, (2) आत्म विषयीकरण, (3) जीवन आदर्श। किम्बाल यंग[2] ने परिपक्व व्यक्तित्व के लक्षण—उत्तरदायित्व, स्थिरता, निरन्तरता इत्यादि बताये हैं।

किम्बाल यंग के अनुसार, "वास्तव में इसका अर्थ है उत्तरदायित्व, स्थिरता एवं कार्य ग्रहण में निरन्तरता। परिपक्वता पर विचार करने पर यह जानना भी आवश्यक है कि किस प्रकार व्यक्ति स्वयं को समझता है; उसके विषयात्मकता का ज्ञान, एवं लोचता तथा सुव्यवस्था का सन्तुलन क्या है। तभी हमको उसके कार्यों एवं उद्देश्यों के संगठन को उसके कार्यों, प्रेमी जीवन, रचनात्मकता, आदर्श एवं नैतिक मूल्यों और उसके सामान्य जीवन दर्शन पर विचार करना चाहिए।"[3]

इस अध्याय में हम आत्म का विस्तार, स्थायित्व एवं निरन्तरता, उत्तरदायित्व, आत्म विषयीकरण और जीवन दर्शन आदि तत्त्वों पर विचार करेंगे।

उपर्युक्त तत्त्व एक परिपक्व व्यक्तित्व के लिए आवश्यक हैं। इन कसौटियों पर कसकर ही हम जान सकते हैं कि कोई व्यक्तित्व परिपक्व है या नहीं।

(1) आत्म का विस्तार (Extension of Self)—परिपक्व व्यक्तित्व के आत्म का इतना विस्तार हो जाता है कि वह अपनी रुचियों में ही डूब जाता है। वह अनेक कार्यों में उत्साह से भाग लेता है। वह सनकी एवं अपने में ही केन्द्रित नहीं होता। आल्पोर्ट ने लिखा है, "अहंकेन्द्रिता परिपक्व व्यक्तित्व का चिन्ह नहीं है।"[4]

आल्पोर्ट ने समझाते हुए लिखा है, "जब तक बाहरी सामाजिक एवं सांस्कृतिक अनुकूल उद्देश्यों की ओर निर्देशित नहीं होता, जब तक कार्यों एवं उद्देश्यों में अहंकार एक स्वयं को देखना दूर नहीं किया जाता; तब तक प्रत्येक जीवन बौना एवं अपरिपक्व है।[5]

---

[1] G. W. Allport, *Personality—A Psychological Interpretation.*

[2] K. Young, *Personality and Problems of Adjustment.*

[3] "This means, of course, responsibility, consistency and continuity in role-taking. In considering maturity it is important also to know how the individual regards himself, his sense of objectivity and the balance of fixity and flexibility." Then, too, we should consider the organization of roles and goals with respect to his work, love life, creativity, ideals and moral values and his general life philosophy." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, pp. 182-83.

[4] "Egocentricity is not the mark of a mature personality." G. W. Allport, *Personality*, p. 213..

[5] "Unless directed outward toward socialized and culturally compatible ends, unless absorbed in cause and goals that outshine self-seeking and variety, any life seems dwarfed and immature." *Ibid*, p. 213.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्म का विस्तार होता जाता है। वह अपने से ही सम्बन्धित न र... अनेक से सम्बन्धित हो जाता है। किसी से प्रेम हो जाने को ही लीजिए। ... अनेक स्थायीभाव संगठित हो जाते हैं। जिसको हम प्यार करते हैं उसमें और ... में कोई अन्तर नहीं मानते। आल्पोर्ट ने लिखा है, "दूसरे की अभिरुचि एक के ... परमावश्यक है। इस सीमा तक आत्मनिर्भरता, प्रेमी स्वयं में नहीं पाता। दूसरे ... कल्याण अपने से अधिक महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार आत्म का विचार होता है।"[1]

इसी प्रकार व्यक्ति अनेक लोगों से सम्बन्ध स्थापित कर लेता है। ... बच्चे, अन्य रिश्तेदार, मित्र, पड़ोसी इत्यादि। इस तरह आत्म का विस्तार ... जाता है। आल्पोर्ट ने लिखा है, "जिसे एक व्यक्ति प्रेम करता है वह उसका ... बन जाता है, यदि कोई किसी चीज की प्रशंसा, सहानुभूति, प्रशंसा, आदर एवं ... पूर्वक अनुकरण या अचेतन रूप से उसके साथ अभिज्ञान करता है वह व्यक्ति ... अन्तःकृत हो सकता है और हमेशा उसका आवश्यक अंग बनकर रह सकता है।

(2) **स्थायित्व एवं निरन्तरता** (Consistency and Continuity) परिपक्व व्यक्तित्व में स्थायित्व एव निरन्तरता पायी जाती है। बच्चों में यह ... नहीं पाया जाता है। इसीलिए जो लोग जल्दी अपनी बात या व्यवहार में परि... करते हैं उन पर कोई विश्वास नहीं करता और उनसे कहा जाता है कि क्या ... सरीखी बात करते हो। समाज के अनुसार एक स्थायित्व का व्यवहार करना ... है। यह चरित्र का चिह्न है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "इस प्रकार बिना चरित्र ... व्यक्ति वह है जिसके पास माँग का प्रकार समाज की रूढ़ियों द्वारा ... सामान्यीकरण के लिए नहीं है, जिसमें वह रहता है।"[2]

जीवन में एक निरन्तरता लाना भी परिपक्व व्यक्तित्व का एक लक्षण ... निरन्तरता लाने के लिए यह आवश्यक है कि भविष्य के लिए योजना बनायी ... जीवन एक योजना के अनुसार चलना चाहिए। यही कारण है कि भविष्य के ... योजना बनाना परिपक्वता का चिह्न माना जाता है। अल्पोर्ट ने लिखा है, "बुद्धि... एवं तीक्ष्ण बुद्धि योजना भविष्य के लिए बनाना परिपक्वता का चिह्न है।"[3]

---

1 "What is of interest to another becomes vital to oneself. Hit... self-sufficient, the lover finds himself no longer so. The w... of another is more important than his own. In this way the ... is extended." G. W. Allport, *Personality*, p. 217.

2 "So, too, the person without character is one who has no g... lized other of the kind demanded by the mores of the soci... which the lives." K. Young, *Personality and Problems of A... ment*, p. 183.

3 "Intelligent and perspicacious *planning* for the future is al... significant feature of any mature life." G. W. Allport, *Pe... lity*, p. 218.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किम्बाल यंग ने भी लिखा है, "हमारे समाज में कम से कम भविष्य के लिए योजना बनाना परिपक्व व्यक्ति का चिह्न है।"[1]

निरन्तरता के लिए यह भी आवश्यक है कि जीवन के कुछ न कुछ उद्देश्य हों, जिनके लिए मनुष्य जिये। यह आवश्यक नहीं है कि ये उद्देश्य बहुत ऊँचे ही हों; जैसे—महान पुरुषों के होते हैं। बुहलर (Buhler) ने अपने अध्ययन में महान पुरुषों के उद्देश्यों का अध्ययन किया है। सामान्य व्यक्तियों के उद्देश्य भी महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं और वे उनके जीवन को कार्य से भर सकते हैं। लोगों का यही उद्देश्य हो सकता है—अच्छा घर, अच्छा भोजन व वस्त्र, बच्चों की शिक्षा इत्यादि। प्रायः ऐसा देखा गया है कि जिन लोगों के पास किसी भी प्रकार का उद्देश्य नहीं होता (कहने का अभिप्राय यह है कि जो खाओ पीयो, मौज उड़ाओ का भी उद्देश्य नहीं रखते) उनके लिए जीवन दूभर हो जाता है और वे इस दुनिया से छुटकारा पाना चाहते हैं। आल्पोर्ट ने लिखा है, "आत्महत्या का पूरक अध्ययन दिखायेगा कि जीवन उन लोगों के लिए असह्य होता है जो उद्देश्य में कुछ नहीं पाते तथा लक्ष्य नहीं ढूंढ़ सकते।"[2]

(3) **उत्तरदायित्व (Responsibility)**—परिपक्व व्यक्तित्व का व्यक्ति उत्तरदायी होता है। वह हर कार्य को जिम्मेदारी से करता है और जीवन के उत्तरदायित्वों को समझता है।

(4) **आत्म विषयीकरण (Self-objectification)**—परिपक्व व्यक्तित्व का एक प्रमुख लक्षण यह भी है कि वह अपने गुणों एवं दोषों को स्वयं देख लेता है और उन पर विचार करके अपने को सुधारने की क्षमता रखता है।

अपने आप को समझना बड़ा कठिन है। अपने स्वयं के ज्ञान को अन्तर्दृष्टि कहते हैं। आल्पोर्ट ने लिखा है कि स्वयं आत्म के ज्ञान को अन्तर्दृष्टि कहते हैं। वैसे तो हर व्यक्ति यही समझता है कि वह अपने आप को समझता है, पर ऐसा सत्य नहीं है।

किसी के पास अन्तर्दृष्टि है या नहीं, उसके जानने के लिए एक तरीका है। प्रत्येक व्यक्ति के तीन चरित्र होते हैं :[3] (1) वह जो उसके पास है, (2) वह, जो वह सोचता है कि उसके पास है, (3) वह जो दूसरे सोचते हैं कि उसके पास है।

---

1 "In our society, at least, planning for the future is also a mark of the mature person." K. Young. *Personality and Problems of Adjustment*, p. 184.

2 "A supplementary study of would-be suicides showed that life becomes intolerable to those who can find nothing to aim at, no goal to seek." G. W. Allport, *Personality*, p. 219.

3 (1) that which he has, (2) that which he thinks he has, (3) that which others think he has.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदर्श रूप से (2) और (1) के अनुपात से यह जाना जा सकता है (1) का कैसे पता लगे। इसलिए (2) और (3) के अनुपात से यह पता जा सकता है।

अन्तर्दृष्टि कई दृष्टियों से लाभदायक होती है। व्यक्ति अपनी ओर सकता है। किम्बाल यंग ने भी लिखा है, "एक तरीका परिपक्वता के यह है कि व्यक्ति स्वयं को किस प्रकार देखता है न कि दूसरे उसको किस समझते हैं।"[1]

हास्य और अन्तर्दृष्टि में विशेष सम्बन्ध पाया गया है। आलपोर्ट ने "But the most striking correlate of insight is the *sense of h*" (p. 222) किम्बाल यंग ने भी ऐसा लिखा है।

आत्म विषयीकरण या अन्तर्दृष्टि का विकास विशेष प्रकार के नाटक हो सकता है। इनमें व्यक्ति रोल करता है। मुरेनो ने इन पर विशेष प्रकाश है। इनका नाम है मनोवैज्ञानिक नाटक (psychodrama) और सामाजिक (sociodrama)। व्यक्ति रोल खेलने के साथ यह समझ लेता है कि दूसरे बारे में क्या सोचते हैं और वास्तव में वह क्या है।[2]

(5) जीवन-दर्शन (Philosophy of Life)—जीवन दर्शन एक व्यक्तित्व का प्रमुख लक्षण है। यह एक प्रकार से जीवन को एक दिशा प्रदान है। एक कवि ने अपना जीवन दर्शन व्यक्त किया है :

For beauty have I striven,
My blood flowed in my song.

जीवन दर्शन व्यक्ति के जीवन में एक दिशा का निर्धारण करता है। व्यक्ति उसी के अनुसार कार्य करता रहता है। जीवन दर्शन एक एकता निर्माण करता है। जीवन दर्शन के कारण व्यक्ति को जीवन में एक केन्द्र जाता है जो उसका मार्गदर्शक होता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "दर्शन एक में या दूसरे में व्यक्ति को जीवन दिशा देता है और एक आधार है जिसमें विस्तृत आत्म का निर्माण होता है।"[3]

---

1 "One way to judge maturity is to discover how the ind views himself, not merely how others regard him." K. Y. *Personality and Problems of Adjustment*, p. 183.

2 J. L. Moreno, *Who Shall Survive?* J. L. Moreno, '*Hypn and Psychodrama*'; in *Group Psychotherapy* (1950), 3 : 1; *drama*; articles in *Sociometry*.

3 "Philosophy, in one form or another, gives the person a f life and a foundation on which to build a more extend self." Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 189.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्तित्व के प्रकार
(Types of Personality)

व्यक्तित्व के प्रकारों के विषय में प्राचीनकाल से ही विद्वान कुछ न कुछ लिखते आ रहे हैं। सामान्य लोग भी इस तरह की चर्चा करते रहते हैं। प्राय: यह विषय बहुत अधिक दूषित हो गया है और इसमें वैज्ञानिक दृष्टि से विश्वास नहीं किया जा सकता।

इस अध्याय में हम प्रकारों के तीन वर्गों पर प्रकाश डालेंगे : (1) मनोवैज्ञानिक प्रकार, (2) शरीर रचना प्रकार और (3) समाजशास्त्रीय प्रकार।

मनोवैज्ञानिक प्रकार मनोवैज्ञानिक लक्षणों पर, शरीर रचना प्रकार शारीरिक बनावट पर और समाजशास्त्रीय प्रकार समाज में कार्यों पर आधारित हैं।

मनोवैज्ञानिक प्रकार (Psychological Types)

ईसा से पाँच शताब्दी पूर्व ही यूनान के विद्वान हिपोक्रेट्स ने शरीर में पाये जाने वाले चार रसों के आधार पर वर्गीकरण किया। पीला पित्त, काला पित्त, कफ (phlegm) और रक्त (blood) शरीर में पाये जाते हैं। उसके अनुसार चार प्रकार के व्यक्तित्व होते हैं :

(1) **क्रोधी**—(Choleric, from choler, meaning yellow bile) यह व्यक्ति क्रोधी होता है।

(2) **हतोत्साही**—(Melancholic, from melas, meaning black bile) यह हतोत्साहित, उदास एवं निराश रहता है।

(3) **मन्द**—(Phlegmatic, from phlegm (कफ) meaning mucus) यह व्यक्ति मन्द या सुस्त होता है।

(4) **उत्साही**—(Sanguine, from sanguis, meaning blood) यह व्यक्ति आशावादी, प्रसन्नचित्त एवं सक्रिय होता है। इसे विज्ञान ने नहीं माना है।

(2) पैवलॉव का प्रकारों का सिद्धान्त

पैवलॉव ने कुत्तों पर परीक्षण किये और तभी इन प्रकारों का प्रतिपादन किया। ये निम्न हैं :

(1) **क्रोधी**— (Cholerics or excitatory group)

(2) **केन्द्रीय**—(Central or Equilibrated group)

(अ) मन्द (Phlegmatics), (ब) उत्साही (Sanguines)

(3) **हतोत्साही** (Melancholics or Inhibitory type)

पैवलॉव के अनुसार यह मनुष्यों पर भी लागू हो सकता है।

(3) युंग का अन्तर्मुखी (Introversion) एवं बहिर्मुखी (Extroversion) सिद्धान्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युंग ने व्यक्तित्व को दो प्रकारों में बाँटा—(1) अन्तर्मुखी (Introverts) और (2) बहिर्मुखी (Extroverts)। अन्तर्मुखी वे होते हैं जो अपने आत्म पर केन्द्रित होते हैं, अपने आन्तरिक संसार से सम्बन्ध रखते हैं और जो बाह्य संसार से दूर रहना चाहते हैं। बहिर्मुखी वे होते हैं जो बाह्य संसार में विशेष रुचि रखते हैं।

युंग के अनुसार मनुष्यों में एक मौलिक जीवन शक्ति होती है। यह शक्ति कोई दिशा ले सकती है—अन्तर की ओर या बाह्य संसार की ओर।

कुछ लोगों का मत है कि बहिर्मुखी अन्तर्मुखी से अच्छा होता है। यह विवादास्पद है। बहुत कुछ यह संस्कृति पर आधारित होता है। किम्बाल यंग ने लिखा है "While this is all largely hypothetical, we must realize that the belief that extroversion is superior and more desirable than introversion only reflects the cultural values of our own time." *Personality and Problems of Adjustment*, p. 226.

युंग ने आगे कहा है कि यह जीवन शक्ति तार्किक मार्ग अपना सकती है या अतार्किक। उन्होंने इन्हीं को चार उपविभागों में बाँटा है—विचार, भावना, संवेदना और अन्तर्ज्ञान। इस प्रकार युंग ने निम्न आठ प्रकार के व्यक्तित्व बताये हैं :

(1) बहिर्मुखी विचारशील, (2) बहिर्मुखी भावुक, (3) बहिर्मुखी संवेदी, (4) बहिर्मुखी अन्तर्ज्ञानी, (5) अन्तर्मुखी विचारशील, (6) अन्तर्मुखी भावुक, (7) अन्तर्मुखी संवेदी और (8) अन्तर्मुखी अन्तर्ज्ञानी।

(1) **बहिर्मुखी विचारशील** (The Extroverted Thinking Type)—यह संसार से संवेदना ग्रहण करता है और तार्किक ढंग से उस पर विचार करता है। सत्य पर आधारित होता है। युंग के अनुसार ऐसा व्यक्ति दूरदर्शी नहीं होता। वह अपने उद्वेगों एवं भावनाओं को कोई महत्त्व नहीं देता।

(2) **बहिर्मुखी भावुक** (The Extroverted Feeling Type)—ऐसे व्यक्ति बाहर की भावनाओं से प्रभावित होता है। परिस्थिति की आवश्यकता एवं प्रत्याशा के अनुसार अनुभव एवं कार्य करता है। यह समाज के नियमों का पालन करता है। वह अपने चारों ओर के व्यक्तियों की भावनाओं से शीघ्र तादात्म्य कर लेता है। युंग के अनुसार यह प्रकार स्त्रियों में अधिक पाया जाता है।

(3) **बहिर्मुखी संवेदी** (The Extroverted Sensation Type)—इस प्रकार के व्यक्ति व्यावहारिक होते हैं। वे समाज को जैसा देखते हैं, वैसा ही प्रत्यक्ष करते हैं। ऐसे लोग संसार से आनन्द उठाते हैं।

(4) **बहिर्मुखी अन्तर्ज्ञानी** (The Extroverted Intuition Type)—इस प्रकार के व्यक्ति वे होते हैं जो संसार से केवल संकेत ग्रहण करते हैं और फिर अपने अनुसार कार्य करते हैं।

(5) **अन्तर्मुखी विचारशील** (The Introverted Thinking Type)—इस प्रकार के लोग संसार की ओर अधिक नहीं देखते। वे व्यावहारिक भी नहीं होते।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पढ़े, रुपये-पैसे तथा अन्य वस्तुओं की ओर भी लापरवाह होते हैं। काण्ट (Immanuel Kant) इसी प्रकार में आता है। ऐसे लोग विचारों, सिद्धान्तों एवं आदर्शों के संसार में खोये रहते हैं।

(6) अन्तर्मुखी भावुक (The Introverted Feeling Type)—ऐसे व्यक्ति अपने ही उद्वेगों एवं भावनाओं में डूबे रहते हैं। वे दिन में स्वप्न देखते रहते हैं। वे शान्त होते हैं और संसार से बिलकुल दूर।

(7) अन्तर्मुखी संवेदी (The Introverted Sensation Type)—ऐसे व्यक्ति हर वस्तु अपने अनुसार ही देखते हैं। वे आत्म पर ही केन्द्रित रहते हैं।

(8) अन्तर्मुखी अन्तर्ज्ञानी (The Introverted Intuition Type)—वह अपनी आन्तरिक प्रतिमाओं से ही संकेत लेता है। वह अपने आप में ही रहता है और किसी की चिन्ता नहीं करता। धार्मिक अवतार, फकीर, कलाकार, सनकी इसी में आते हैं।

) रार्शा का सिद्धान्त

रार्शा (Rorschoch) ने भी दो प्रकार किये हैं: (अ) Extratensive,) Introversive। युंग के ही प्रकार ये भी हैं।

रोजनोफ का सिद्धान्त

रोजनोफ (Rosanoff) ने निम्न तीन प्रकारों में बाँटा है:

(अ) समाज विरोधी (Anti-social)—ये स्वार्थी होते हैं, अपराध करते हैं विघटित व्यक्तित्व रखते हैं।

(ब) साइक्लोथिनिक (Cyclothynic)—इनमें उद्वेगिक अस्थिरता (emotional instability) पायी जाती है।

(स) यह अधिक भावुक होते हैं।

रचना प्रकार (Constitutional Types)

शरीर रचना प्रकार शरीर की बनावट एवं स्वास्थ्य पर आधारित होते हैं। क्रेचमर (Kretschmer) ने इसे तीन भागों में बाँटा है:

(अ) 'अस्थेनिक' (Asthenic or Leptosomic)—ऐसा व्यक्ति दुबला-, छोटे कन्धे, पतली भुजाएँ, छोटा सीना वाला होता है। चेहरे पर कोण ular) बने होते हैं।

(ब) खिलाड़ी (Athletic)—ऐसा व्यक्ति स्वस्थ होता है। भुजाएँ मजबूत, चौड़े, सीना चौड़ा होता है। चेहरा अच्छा होता है।

(स) 'पिकनिक' (Pyknic)—ऐसे लोगों के पूरे लक्षण वयस्क होने पर होते शरीर गोल मटोल, पेट बढ़ा हुआ, सीना नीचे की ओर चौड़ा होता है।

शास्त्रीय प्रकार (Sociological Types)

समाजशास्त्रीय प्रकार व्यक्ति के समाज में कार्यों पर आधारित होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) थामस तथा जैनिकी (Thomas and Znaniecki) ने निम्न ... प्रकार बताये हैं :

(अ) व्यावहारिक (Philistine or Practical)—वह व्यक्ति जो ... सुरक्षा पर अधिक बल देता है।

(ब) 'बोहेमियन' (Bohemian)—वह व्यक्ति जो नये अनुभव करना चाह... है और वर्तमान परिस्थिति के अनुसार कार्य करता है।

(स) रचनात्मक (Creative)—वह व्यक्ति जो कुछ नवीन रचना करता है।

(2) स्प्रेंगर (Spranger) ने निम्न छह प्रकार बताये हैं :

(अ) सिद्धान्तवादी (The Theoretical)—वह जो सत्य की खोज करता है। वह ज्ञानात्मक दृष्टि से संसार की ओर देखता है।

"Since the interests of the theoretical man are empirical, criti... cal and rational, he is necessarily an intellectualist, frequently... scientist or philosopher."

(ब) आर्थिक (The Economic)—यह व्यक्ति लाभ की दृष्टि से सोचता है। वह शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति से प्रारम्भ होकर अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। व्यापारी इसी में आते हैं। ये पूर्ण रूप से व्यावहारिक होते हैं। ... सदैव लाभ की दृष्टि से देखता है। इसलिए ऐसी शिक्षा चाहता है जो लाभदा... हो। वह धन को अधिक महत्त्व देता है।

(स) सौन्दर्य प्रेमी (The Esthetic)—यह व्यक्ति सौन्दर्य रूप में रुचि रखता है। वह प्रत्येक वस्तु को कला की दृष्टि से देखता है। उनके स्वरूप में एक ... स्थापित करना चाहता है।

(द) सामाजिक (The Social)—इस प्रकार के व्यक्ति के लिए प्रेम ही ... कुछ है। वह चाहे पत्नी के लिए हो या मित्र, प्रेमिका, परिवार, राष्ट्र, अथवा ... के लिए। यह स्वार्थी नहीं होता। दयावान एवं सहानुभूति रखने वाला होता है। प्रेम को वह सबसे बड़ी शक्ति मानता है। सामाजिक हितों के लिए कुछ भी ... सकता है।

(य) राजनैतिक (The Political)—यह सत्ता में रुचि रखता है। ... सत्ता का पुजारी होता है। कहीं भी हो, ये सत्ता चाहते हैं। यह आवश्यक नहीं कि वह राजनीति के ही क्षेत्र में हो। ऐसे लोग सत्ता, यश, नाम चाहते हैं।

(र) धार्मिक (The Religious)—इसके लिए सबसे बड़ी वस्तु एकता ... वे दूसरे संसार के विषय में भी सोचते हैं। ये सादे एवं साधु प्रकृति के होते हैं।

(3) मरे (Murray) ने भी स्प्रेंगर के अनुसार चार प्रकार बताये हैं :

(अ) सिद्धान्तवादी (Theorist)—ये सिद्धान्त में विश्वास करते हैं।

(ब) मानवतावादी (Humanitarian)—इस प्रकार के व्यक्ति मानव... प्रति उचित-अनुचित की भावना से ओत-प्रोत होते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(स) संवेदनावादी (Sensationist)—इसके अन्तर्गत सुन्दरता को चाहने वाले आते हैं; जैसे—कलाकार, प्रेमी इत्यादि।

(द) व्यावहारिक (Practical Man of Action)—इसके अन्तर्गत किसान, मिस्त्री, सिपाही, सैनिक, श्रमिक, व्यापारी इत्यादि आते हैं।

(4) लेशवेल (Lasswell) ने पाँच प्रकार बताये हैं :

(अ) प्रशासक (Administrator)—जो संस्थाओं को निश्चित की हुई नीति के अनुसार चलाते हैं। यह स्थायित्व एवं उद्वेगिक सुरक्षा चाहते हैं।

(ब) मालिक (Boss)—ये अवसरवादी होते हैं और अपना अधिकार रखना चाहते हैं।

(स) नीतिज्ञ (Diplomat)—यह राजनैतिक सत्ता को अपने अधिकार में रखना चाहता है।

(द) आन्दोलनकर्ता (Agitator)—यह सुधार करना चाहता है और क्रान्तिकारी योजनाएँ प्रस्तुत करता है। वर्तमान समाज को बुरा समझता है। यह आत्म प्रेमी होता है।

(य) सिद्धान्तवादी (Theorist)—इस प्रकार के व्यक्ति जीवन के हर क्षेत्र में सिद्धान्त को ही प्रमुख मानते हैं।

प्रश्न

1. व्यक्तित्व के अन्तर्मुखी एवं बहिर्मुखी प्रकारों की विवेचना कीजिए। इसकी सबलता एवं निर्बलता क्या है ? क्या यह आज भी लाभदायक है ?

(Discuss the introvert and extrovert personality typology. What are strengths and weaknesses of this typology ? Is it still useful to-day ? Rajasthan, M. A. Sociology, 1959.)

2. व्यक्तित्व के प्रकारों के दो प्रकार दीजिए और प्रत्येक प्रकार का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

(Give two different typologies of personality types and describe each type briefly. Rajasthan, M. A. Sociology, 1958.)

3. व्यक्तित्व की व्याख्या कीजिए। व्यक्तित्व के विकास में वंशानुसंक्रमण एवं पर्यावरण के कार्यों की विवेचना कीजिए।

(Define personality. Discuss the roles of heredity and environment in the development of personality.)

4. व्यक्तित्व के प्रमुख निश्चायकों का वर्णन कीजिए और वयस्क व्यतित्वक के निर्माण में शिशु प्रशिक्षण के कार्य का विवेचन कीजिए।

(Describe the main determinants of personality and discuss the role of child training in the formation of adult personality.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

5. आप व्यक्तित्व से क्या समझते हैं ? यह सामाजिक सम्बन्धों से किस प्रकार प्रभावित होता है और उन्हें किस प्रकार प्रभावित करता है ?

(What do you understand by personality ? How is it affected by social relations and how it affects social relations ?)

6. 'व्यक्तित्व विस्तृत एवं विविध अर्थ वाली एक अवधारणा है।' इस कथन की विवेचना कीजिए।

('Personality is a concept of wide and varied meaning.' Discuss this statement.)

7. व्यक्तित्व की परिभाषा दीजिए तथा व्यक्तित्व के विकास में शरीर, समाज तथा संस्कृति के तुलनात्मक महत्त्व को समझाइए।

(Define personality and discuss the relative importance of organism, society and culture in the development of personality.)

8. आप व्यक्तित्व और व्यक्तित्व-प्रकार से क्या समझते हैं ? व्यक्तित्व की कुछ आधुनिक परिभाषाओं का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

(What do you understand by personality and personality types. Examine critically some of the current definitions of personality.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

24

आत्म की उत्पत्ति एवं विकास
(Rise and Development of Self)

व्यक्तित्व को पूर्ण रूप से समझने के लिए हमें आत्म की उत्पत्ति एवं विकास को समझना आवश्यक है। आत्म ही व्यक्तित्व का आधार है। बिना आत्म के विकसित हुए व्यक्तित्व हो ही नहीं सकता।

आत्मा क्या है ?
(What is Self)

आत्म के अर्थ को समझने के लिए हमें पहले चार शब्दों को समझना आवश्यक है—चेतनता (consciousness), आत्म-चेतनता (self-consciousness), दूसरे (others) और अन्तर्विष्टीकरण (internalization)।

चेतनता (Consciousness)—'consciousness' का अर्थ है "the waking state of mind; knowledge which the mind has of anything; awareness."[1] इस प्रकार चेतनता का अर्थ है प्रतीति। जब हम संवेदना का अनुभव करते हैं, तो उसे चेतनता कहते हैं। अर्थात् हमारी इन्द्रियाँ जब तक कार्य करती हैं, तब तक हमें चेतनता रहती है। एक बच्चा पैदा होता है, उस समय उसमें चेतनता होती है या नहीं, यह स्पष्ट कह सकना कठिन है। कुछ दिन में चेतनता विकसित हो जाती है। बच्चा संवेदना अनुभव करने लगता है। यदि आप बच्चे के चुटकी काट लें तो वह चिल्लाने लगेगा। इसका अर्थ यह है कि उसमें संवेदना या प्रतीति होती है। यदि एक साँप उसके पास आकर बैठ जाय तो बच्चा रोयेगा या चिल्लायेगा नहीं। उत्तर स्पष्ट है कि उसे चेतनता तो है पर वह उसका अर्थ नहीं जानता है। प्रारम्भ में बच्चा अपने में और दूसरे में कोई अन्तर नहीं कर पाता। वह अपने को दूसरों से भिन्न नहीं समझता। वह अपना शरीर और माता का शरीर एक ही समझता है।

आत्म-चेतनता (Self-consciousness)—काफी समय तक उसमें चेतनता केवल संवेदना तक ही सीमित रहती है। उसे इस बात का भी ज्ञान नहीं होता कि वह पृथक है और उसका शरीर भी पृथक है। कई बार हम बच्चों को कहते

[1] *Chambers's Twentieth Century Dictionary*, p. 224.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुनते हैं 'राम खाना खायेगा' वह स्वयं को इस प्रकार सम्बोधित करता है। तुम, का कोई ज्ञान नहीं होता। 'Person' (पुरुष) का कोई भी ज्ञान नहीं शनैः-शनैः उसको माता-पिता तथा अन्य व्यक्तियों के द्वारा ज्ञान होता है कि पृथक शरीर रखता है और वह कुछ है। प्रायः यह शरीर तक ही होता है।

जब बच्चे को यह प्रतीति हो जाती है कि उसका एक पृथक शरीर है उसमें आत्म-चेतना प्रारम्भ होती है।

चेतना और आत्म-चेतनता (Consciousness and Self-consciousness) आल्पोर्ट ने यह विचार व्यक्त किया है कि बच्चे में आत्म-चेतनता नहीं है। उन्होंने लिखा है, "किसी भी प्रकार से, बच्चा अपने आत्म से अपने को अलग रखता है। वह अपने स्वयं के शरीर को ऐसा देखता है जैसे कि वह विदेशी हो, उसके अंगूठे उसके खिलौने हैं, और वह अपने चेहरे को खरोंचे जब तक कि उसमें खून न बहने लगे। उसका कोई 'शारीरिक आत्म', 'सामाजिक आत्म' और कोई 'भौतिक आत्म' नहीं है। उसमें और 'उसमें नहीं' में कोई सीमा नहीं है, उसके और 'न उसके' यह अप्रतिस्थापित भी है।"[1]

इस प्रकार बच्चा अपने में और दूसरों में कोई अन्तर नहीं मानता। इत्यादि में वह बड़ा होकर भी भूल जाता है कि वह पृथक है। इस पृथक का उसे बड़ा होकर होता है। जिस समय से उसे इस अपने पृथक शरीर का ज्ञान हो जाता है, उसमें आत्म-चेतनता प्रारम्भ हो जाती है।

दूसरे (Others)—इस आत्म-चेतनता के कारण उसमें यह ज्ञान विकसित होता है कि जो कुछ वह नहीं है वह दूसरे हैं। 'अपने' और दूसरे का भेद (discrimination) बड़ा प्रमुख है। 'others' की परिभाषा 'different', 'not the same' की गयी है।'[2] यह 'मैं' हूँ, यह खिलौना है। यह मैं' नहीं हूँ, वह है। यह भेद करना सीखना बड़ी महत्त्वपूर्ण क्रिया है। बच्चे कठिनाई से इस भेद को सीखते हैं।

अन्तर्विष्टीकरण (Internalization)—किसी वस्तु को अपने में अन्तर्विष्ट कर लेने की प्रक्रिया को अन्तर्विष्टीकरण कहते हैं।

पियागेट (Piaget) के अनुसार एक बच्चा छह स्तरों से गुजरता है। स्तर पर उसे कोई ज्ञान नहीं होता। वह माता के स्तन चूसता है और

---

1 "In any case, the young infant seems quite unaware of himself as a *self*. He treats his own body as if it were foreign to him. toes are his toys, and he may claw his own face until it bleeds. He has no 'bodily' self, no 'social' self and no 'material' self. The boundary between him and not him, between his and not his is unestablished." G. W. Allport, *Psychology*, p. 160.

2 *Chambers's Twentieth Century Dictionary*, p. 758.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संवेदना होती है, वह केवल सहज क्रिया की तरह होती है। दूसरे स्तर पर उसे कुछ संवेदना होती है। जब कोई चीज सामने आती है तो उसे कुछ-कुछ लगता है। जब वह चीज हट जाती है, तो वह उसे नहीं दिखती। बच्चे को बाह्य वस्तु की चेतनता नहीं होती। तीसरी अवस्था में (तीसरे से छठे मास तक) वह कुछ चेतनता प्राप्त करता है। यदि कोई वस्तु ऊपर से गिराई जाय, तो वह वस्तु को न ढूंढ़ेगा, बल्कि जहाँ से वह वस्तु गिरी है उधर देखता रहेगा। चौथे स्तर पर (नवें से दसवें मास) वह चीजों को ढूंढ़ना प्रारम्भ कर देता है। इस समय भी वह अधिक नहीं खोज सकता। पाँचवें स्तर पर (12 से 18 माह तक) वह वस्तुओं को ढूंढ़ना सीख जाता है। और परिवर्तनों को समझने लगता है। छठी स्तर पर (15 से 18 महीने तक) वह वस्तुओं को पहचानने लगता है या हम कह सकते हैं कि बाह्य वस्तुओं को अन्तर्विष्ट कर सकता है।

एक अन्तर्विष्ट वस्तु की परिभाषा देते हुए जॉनसन ने लिखा है, "अन्तर्विष्ट वस्तु, 'यदि अ तब ब' समस्या की एक घटना एवं एक व्यवस्था है, इस प्रकार (अन्तर्विष्ट) वस्तु अनुमान का एक समूह दृष्टिगोचर होती है।"[1]

आगे इसे समझाते हुए जॉनसन ने लिखा है, "भौतिक स्तर में यह अनुमान लगाया जाता है, जैसे एक जीवाणुओं का समूह मस्तिष्क में हो, 'चिह्नों' का समूह अनुभव द्वारा छोड़ा जाता है। मनोवैज्ञानिक रूप से, इसके दो तथ्य हैं। प्रथम यह एक बाह्य वस्तु का 'ज्ञानात्मक' चित्र है। वस्तु इस भाव में बाह्य है कि उसके उद्देशीय अस्तित्व में यह सामाजिक रूप से राजी किया हुआ है, यह कल्पना का तुच्छ रूप नहीं है। यह पद 'ज्ञानात्मक चित्र' उचित है। सामान्य चित्र के समान, अन्तर्विष्ट और भी उद्देश्य प्रतीक हैं।...... यहाँ ज्ञानात्मक तथ्य के अतिरिक्त अन्तर्विष्ट उद्देश्य के प्रेरणात्मक तथ्य भी हैं।"

इस प्रकार हम वस्तुओं, व्यक्तियों, कार्यों इत्यादि के ज्ञानात्मक मानचित्र अपने मस्तिष्क में बना लेते हैं। इसे ही अन्तर्विष्टीकरण कहते हैं।

आत्म की परिभाषा (Definition of Self)—'Self' का अर्थ है 'What one is'?[2] आत्म उसे कहते हैं, जो कुछ कोई होता है किम्बाल यंग ने लिखा है, "एक के आत्म की बढ़ती हुई जागरूकता एक माध्यम या क्रियाओं के संचालक का अर्थ है कि समय में व्यक्ति अपने प्रत्युत्तरों को पहचानता है जो उसके चारों ओर हैं। व्यक्तिगत तादात्म्य और निरन्तरता का भाव एक अभिनय समूह है जो एक-दूसरे से वह प्राप्त करता है।"[3]

---

1. "An internalized object as a series or a system of, if A 'then B' propositions, hence the (internalized) object seems to be a set of implications." Johnson, *Sociology*, p. 114.
2. *Chambers's Twentieth Century Dictionary*, p. 1003.
3. K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 153.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किम्बाल यंग ने लिखा है, "हम आत्म को व्यक्ति के रूप में परिभा... जैसे कि उसको अन्तःक्रिया के संदर्भ में जाना या माना जाता है।"[1]

जॉनसन ने लिखा है, "'आत्म' एक संयोजित उद्देश्य के रूप में माना... जो स्वयं के व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार यह स्वयं के नि... स्वयं की योग्यताओं और लक्षणों को सम्मिलित करता है, किसी के व्यक्ति... तथ्यों का मूल्यांकन और गर्व, शर्म, तथा आत्म-आदर की कुछ भावनाएं किन्हीं... स्थितियों में क्रियाशील हो सकती हैं।"[2]

शेरिफ तथा शेरिफ ने लिखा है, "अहम् या आत्म एक विकसित नि... उपव्यवस्था) है व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक निर्माण में सहसम्बन्धी अभिवृत्तियों... जो उसके स्वयं के शरीर के सम्बन्ध में अर्जित है, उद्देश्यों से परिवार, ... समूहों, सामाजिक मूल्यों, और संस्थाओं और जो उसकी वास्तविक स्थि... सम्बन्धों को परिभाषित एवं नियमित करती है।"[3]

शेरिफ तथा शेरिफ ने आगे लिखा है, "व्यक्ति स्वयं मे जो कुछ है... वह सह सम्बन्धित अहम् अभिवृत्तियों से सम्बन्धित हैं।"[4]

'अहं' और 'आत्म' में अन्तर
(Difference Between 'Ego' or 'Self')

अनेक मनोवैज्ञानिकों ने 'अहं' और 'आत्म' में कोई अन्तर नहीं ... उदाहरण के लिये, शेरिफ, केंट्रिल एवं मनोविश्लेषणवादी मनोवैज्ञानिकों ने इन... अन्तर नहीं माना है।

---

1 "We may define the self as the individual as he is viewed... known to himself within the context of interaction." K. Y... *Personality and Problems of Adjustment*, p. 153.

2 "The 'self' might be regarded as the internalized object rep... ing one's own personality. Thus it includes one's own con... of one's abilities and characteristics, an evaluation of these ... of one's personality, and certain feelings of pride, shame... self-respect, anyone of which can be activated under certain... cumstances." Johnson, *Sociology*, p. 116.

3 "Ego or self is a developmental formation (a sub-system) ... psychological make-up of the individual consisting of inter... attitudes which are acquired in relation to his own body, ... jects, family, persons, groups, social values and institutions... which define and regulate his relatedness to them in co... situations." Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psych...* p. 581.

4 "What the person considers *himself* consists of interrela... attitudes." *Ibid*, 580.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इनमें अंशों का अन्तर है। 'आत्म' विस्तृत शब्द है। न्यूकोम्ब ने इस अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "आत्म एक अधिक संयोगी विचार के रूप में व्यक्ति को संकेत करता है जैसा कि उस व्यक्ति ने एक निश्चित सामाजिक संदर्भ आकार के अन्तर्गत अनुभव किया है। एक व्यक्ति का आत्म उसके स्वयं का अन्य व्यक्तियों से सम्बन्ध को अनुभव करता है। अहं, अधिक प्रतिबन्धित आत्म-प्रत्यक्षीकरण का प्रतिनिधित्व करता है, जो आत्म के मूल्य के रूप में संरक्षित एवं विस्तृत है।"[1]

हन्स गर्थ तथा राइट मिल्स के अनुसार "आत्मप्रतिमा जो हममें एक दिए हुए समय में है अन्यों की निश्चित मूल्य की परावर्तन है जो हमारे पूर्व विकसित आत्म द्वारा रूपान्तरित है।"[2]

आत्म की उत्पत्ति एवं विकास
(Rise and Development of 'Self')

आत्म की उत्पत्ति एवं विकास कैसे होता है ? इसका पूर्ण रूप समझने के पूर्व हमें निम्न प्रश्नों के उत्तर भी समझ लेना आवश्यक है :

(1) आत्म की उत्पत्ति सामाजिक अन्त:क्रिया में होती है। हम भली-भाँति जानते हैं कि जिनको सामाजिक अन्त:क्रिया का अवसर नहीं मिलता उनमें आत्म का विकास नहीं होता। जंगली बच्चों एवं भेड़ियों द्वारा पालित बच्चों का वर्णन हम 'समाजीकरण' के अध्याय में कर ही चुके हैं। हम देखेंगे कि सामाजिक अन्त:क्रिया क्या है और उसमें आत्म की उत्पत्ति कैसे होती है ?

(2) आत्म का विकास सामाजिक क्रिया में होता है। इसलिए हम सामाजिक क्रिया को समझेंगे और यह भी देखेंगे कि आत्म का किस प्रकार विकास होता है ?

(3) आत्म एक प्रकार से कार्य-ग्रहण से सम्बन्धित है। अतः इसे भी इसके सन्दर्भ में समझेंगे।

(4) आत्म प्रेरणाओं एवं अभिवृत्तियों को अन्तर्विष्ट करता है। इसी से आत्म का स्वरूप बनता है।

(5) एम्बीवैलेन्स (ambivalence) का आत्म की उत्पत्ति एवं विकास में क्या हाथ है ?

---

1 "'Self' as the more inclusive concept refers to the individual as perceived *by that individual* in a socially determined frame of reference. A person's self represents his own side of his perceived relationship to others. 'Ego' refers to a more restricted kind of self-perception, namely *the self as a value* to be protected and enhanced." T. M. Newcomb, *Social Psychology* (1950), p. 328.

2 "The self-image which we have at any given time is a reflection of the appraisals of others as modified by our previously developed self." Hans Gerth and C. Wright Mills, *Character and Social Structure*, p. 85.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक क्रिया या अन्त:क्रिया
(Social Act or Interaction)

सामाजिक अन्त:क्रिया पर हम एक पृथक अध्याय लिख चुके हैं। यहाँ कहना पर्याप्त होगा कि अन्त:क्रिया में ही आदान-प्रदान सम्भव है। मनुष्य जब दूसरे के सम्बन्ध में आते हैं, तो न केवल क्रिया प्रतिक्रिया ही होती है, अपितु क्रिया भी होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि यदि एक व्यक्ति कुछ करता है, तो वह क्रिया हुई। एक व्यक्ति ही क्रिया करके नहीं रुक जाता, बल्कि व्यक्ति भी प्रतिक्रिया करता है। इतना ही नहीं हम दूसरों को प्रभावित करते उनसे प्रभावित होते हैं। इसे अन्त:क्रिया कहते हैं। समाज में अन्त-क्रिया सदैव होती रहती है।

संक्षेप में, इन्हें हम निम्न प्रकार व्यक्त कर सकते हैं :

आत्म की उत्पत्ति एवं विकास

में	के द्वारा	को अंतर्विष्ट
सामाजिक क्रिया या अन्त:क्रिया Social act or interaction	कार्य-ग्रहण (Role-taking)	प्रेरणाओं एवं अभिवृत्तियाँ (Motives and attitudes)

आत्म की उत्पत्ति सामाजिक अन्त:क्रिया में होकर सामाजिक कार्य में विकास, कार्य-ग्रहण की सहायता से प्रेरणाओं एवं अभिवृत्तियों को अन्तर्विष्ट करके होता है।

आत्म का जन्म अन्त:क्रिया में ही होता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "आत्म की उत्पत्ति सामाजिक क्रिया के क्षेत्र में हो होती है।"[1] आसुबेल ने भी लिखा है, "अहं विकास निरन्तर जैविक सामाजिक अन्त:क्रिया की उत्पत्ति है।"[2]

शेरिफ व शेरिफ ने लिखा है, "अहं या आत्म आन्तरिक नहीं है। सामाजिक पर्यावरण के पृथक सावयव के वयस्कता द्वारा हो विकसित होगा।"[3]

---

1 "It is within the field of the social act that the self arises." Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 154.

2 "Ego development is the outcome of continuous biosocial interaction." D. P. Ausubel, *Ego Development and the Personality Disorders* (1954), p. 44.

3 "The ego or self is not innate. Nor would it develop through maturation of the organism apart from a social environment." Sherif and Sherif, *An Outline of Social Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक क्रिया की प्रकृति
(The Nature of the Social Act)

सामाजिक क्रिया की परिभाषा करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "सामाजिक व्यक्ति का कार्य है जो बिना मध्यस्थीकरण के, योग्यताओं, या रूपान्तरण इसके मार्ग में दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों के कार्य पूर्ण नहीं हैं।"[1]

सामाजिक क्रिया के कई प्रकार होते हैं। इन्हें सामाजिक, प्रक्रिया कहते हैं। पर हम 'सामाजिक अन्त:क्रिया' के अध्याय में प्रकाश डाल चुके हैं। दो महत्त्वपूर्ण प्रकार हैं—विरोध और सहयोग।

सामाजिक क्रिया पशुओं के भी जगत में देखने को मिलती है। पशु भोजन प्राप्ति में इनका प्रयोग करता है। पशुओं में मैथुन के समय सामाजिक क्रिया होती है। बच्चों के पोषण में भी पशु एक-दूसरे की सहायता लेते हैं। इस प्रकार उनमें कई क्रियाएँ भी विकसित हो जाते हैं।

मनुष्य में भी सामाजिक कार्य होता है और वे एक-दूसरे से अनुकूलन करते हैं। इसे तीन भागों में बाँटा जा सकता है। किम्बाल यंग ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "मानव अनुकूलित क्रिया सुविधा के लिए तीन वर्गों में विभाजित है: बाह्य या सम्पूर्ण शारीरिक प्रत्युत्तर, प्रतीकात्मक या संचारात्मक और व्यक्तित्व एव अप्रकट या आन्तरिक। अधिक स्पष्ट शब्दों में, ये कार्य भाषण, संकेत और विचार हैं।"[2]

बाह्य व्यवहार अन्य व्यक्तियों या वस्तुओं के सम्बन्ध में सम्पूर्ण प्राणी की क्रिया से सम्बन्ध रखता है। प्रतीकात्मक क्रिया के उदाहरण हैं भाषा और सांकेतिक क्रिया। इस पर हम भाषा के अध्याय में प्रकाश डाल चुके हैं। ये सब संचार के अन्तर्गत आते हैं। तीसरा प्रकार आन्तरिक है जो व्यक्त नहीं होता; परन्तु प्राणी के अन्दर कार्य करता है। हमारे विचार, अभिवृत्तियाँ, और मूल्य इस वर्ग में आते हैं। सामाजिक कार्य इन्हीं के द्वारा होता है और व्यक्ति एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं।

तादात्म्य एवं आशा के प्रतिमान
(Identification and Patterns of Expectancy)

आत्म की उत्पत्ति का तादात्म्य एवं आशा के प्रतिमानों से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

---

[1] "A *social act* is an act of a Person which is not completed without the intercession, qualification, or modification in its course by the act of another person or persons." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 154.

[2] *Ibid*, p. 154.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किम्बाल यंग ने लिखा है, "आत्म के इन्द्रिय ज्ञान की उत्पत्ति तादात्म्य, अधिक शुद्ध से अन्तर्विष्ट और आशा में निर्भर रहता है।"[1]

तादात्म्य (Identification) क्या है?—तादात्म्य का अर्थ है दूसरे व्यक्ति का व्यवहार, विचार एवं अन्य क्रियाओं को अपना लेना। किम्बाल यंग ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "तादात्म्य की प्रक्रिया अपनी क्रियाओं एवं विचारों में दूसरे की क्रियाओं एवं विचारों में लेना है।"[2]

अन्तर्प्रतिमाकरण (Introjection) भी एक प्रकार का तादात्म्य है। कुछ लोग तादात्म्य और अन्तर्प्रतिमाकरण में कोई भेद नहीं करते हैं और उनको पर्यायवाची शब्द मानते हैं। कुछ लोग इनमें अन्तर करते हैं। तादात्म्य से उनका अभिप्राय दूसरे के बाह्य व्यवहार को अपनाना है। अन्तर्प्रतिमाकरण के द्वारा वे आन्तरिक व्यवहार, अनुभव, विचार इत्यादि को अपनाना मानते हैं। यह शब्द अन्तर्विष्टीकरण के अधिक निकट है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "दूसरे तादात्म्यीकरण को अधिक विशेष रूप से बाह्य अनुकरण गुणों और अन्तर्विष्ट के लिए प्रयोग करते हैं और प्रक्रिया के आन्तरिक तथ्यों या अन्तःकरण की ओर संकेत करते हैं।"[3]

तादात्म्य की प्रक्रिया बचपन से ही प्रारम्भ हो जाती है और सीखने में विशेष महत्त्व रखती है। बच्चा माता के साथ तादात्म्य करता है। वैसे ही बोलता है, वैसे ही चलता है और अनेक कार्य माता के ही अनुसार करता है। इसी प्रकार अन्य लोगों के साथ भी तादात्म्य करता है।

किम्बाल यंग ने लिखा है, "........यह पद अन्तर्विष्ट सावयव की योग्यता की ओर संकेत करता है, स्वयं को एक प्रत्यक्षीकरण के रूप में लेना, तथा बाद में याददास्त कल्पना के रूप में, न केवल इसके अपने कार्यों, गति से उत्पन्न उत्तेजना एवं वाचकता है। परन्तु दूसरों के कार्य इसके अपने कार्य हैं।"[4]

बच्चा अपनी माता की प्रतिक्रियाएँ अपने में अन्तर्विष्ट कर लेता है और फिर उसी प्रकार प्रतिक्रिया करता है। हम अपने आपसे ही वही व्यवहार करने लगते हैं

---

1 "The emergence of the sense of self depends upon identification or, more strictly, introjection and expectancy." K. Young: *Personality and Problems of Adjustment*, p. 155.

2 "The process of identification is one of taking over into his own thought and actions the thought and actions of another." *Ibid*, p. 112.

3 "Others use identification to refer more particularly to the overt imitative features and introjection to refer to the internalization of covert aspects of the process." *Ibid*, p. 112.

4 "...the term *introjection* refers to the capacity of the organism to take up into itself as a perception, and later as a memory image, not only its own acts, proprioceptively and vocally, but *the acts of other towards its own acts*." *Ibid*, p. 155.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...रे हमारी ओर प्रतिक्रिया करते । (We learn to act toward ourselves ...thers respond to us. K. Young) जार्ज मीड ने इसे इन शब्दों में व्यक्त है, "दूसरे के तत्त्व (ब) जो उनके एक के व्यक्तित्व में प्रविष्ट होते हैं। (अ के) में प्रत्युत्तर हैं। (अ) जोकि उसके संकेत दूसरों से प्रकट होते हैं। (ब)।" इसके अनेक उदाहरण हैं। जब कोई व्यक्ति मिलता है और हम अपना हाथ ... ओर बढ़ा देते हैं, तो यह स्पष्ट रूप से हमने मान लिया कि वह व्यक्ति हाथ ...बढ़ायेगा। हम यदि एक प्रकार की अभिवृत्ति रखें तो दूसरों में जो भी प्रति-...याएँ प्राप्त कर सकते हैं।

कुछ लोग बच्चों को बदमाश या गुण्डा या आवारा इत्यादि कहते हैं। बच्चे ...ही कार्य ग्रहण कर लेते हैं; क्योंकि वे सोचते हैं कि बड़े लोग यही आशा करते ...ई मर्फी[1] ने अपने परीक्षण के द्वारा प्रमाणित किया है कि बच्चे प्रायः ऐसा ही ...र करते हैं जो वे समझते हैं कि बड़े लोग आशा करते हैं।

समाज में बच्चों से व्यवहार की दृष्टि से अनेक आशाएँ की जाती हैं। बच्चों ...ना नहीं चाहिए। जिद्द नहीं करनी चाहिए। साफ रहना चाहिए। माता-पिता ...ज्ञा का पालन करना चाहिए। स्कूल में चुपचाप बैठना चाहिए। जैसे-जैसे वह ...होता जाता है उसके सामने एक 'पुरुष' का आदर्श रखा जाता है। लड़कियों ...मने एक 'स्त्री' का आदर्श रखा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इन ...ओं के अनुसार ही बच्चा अपना व्यवहार बनाता है।

इससे लोग अपने व्यवहार पर नियन्त्रण करना सीखते हैं और जिस प्रकार ...व्यवहार की आशा की जाती है वैसा व्यवहार करते हैं। इस प्रकार की आशा ... में नियमितता एवं स्थायित्व का निर्माण करने में सहायता करती है। जब ...क प्रकार की आशा करते हैं और दूसरा जानता है तो वह उसी प्रकार का ...र करता है। इसके द्वारा व्यवहार के विषय में भविष्यवाणी भी की जा सकती ...इसके कारण नैतिक स्थायित्व का समाज में निर्माण होता है। किम्बाल यंग ने है, "इस प्रकार की आशाएँ एवं भविष्यवाणी नैतिक स्थिरता के लिए व्यक्ति ...सामाजिक नियन्त्रण में आवश्यक हैं।"[2]

अन्तःक्रिया में आत्म की उत्पत्ति
(Origin of Self in Interaction)

जब बच्चा पैदा होता है, उस समय वह आत्म के विषय में कुछ नहीं जानता।

---

1. ...ois B. Murphy, *Social Behaviour and Child Personality. An ...xplanatory Study of Some Roots of Sympathy* (1937), Colum...bia University Press, New York, p. 221-22.
2. '...Such expectation and predictability are essential to moral stabi...lity in the individual and to social control.' K. Young. *Perso...nality and Problems of Adjustment*, p. 156.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपने-पराये का कोई अन्तर वह नहीं जानता। उसे यह सीखना पड़ता है। में बच्चे की आवश्यकताएँ या चालक बहुत ही तेज होते हैं और उन्हें हर पूरा किया जाना चाहिए। बच्चे की ये आवश्यकताएँ अपने आप नहीं पूरी हो क्योंकि वह दूसरों पर आश्रित है। उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति दूसरों के होती हैं। माता दूध पिलाती है। माता या कोई अन्य बड़ी बहन या सम्बन्धी लाता-धुलाता है। वे लोग भी बच्चे से कुछ आशाएँ करते हैं। ऐसा करो होगा। प्रारम्भ से ही कुछ व्यवहार बच्चे पर लाद दिये जाते हैं। कुछ लगा दिये जाते हैं। दूध किस-किस समय मिलेगा। दूसरे अन्य काम कब-कब अन्त:क्रिया के सन्दर्भ में ही प्रतिक्रिया होती है। इसी प्रकार के आपसी व्यव आत्म की उत्पत्ति होती है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "इन्हीं शुरुआतों से आ का आभास उभरता है।"[1]

सामाजिक क्रिया में आत्म का विकास (The Rise of Self in S Act)—सामाजिक क्रिया में ही आत्म का विकास होता है। बाल्डविन तथा भी इस मत को प्रदर्शित किया है। बाल्डविन ने अनुकरण का सिद्धान्त प्रयोग उनके अनुसार बच्चा बड़ों का अनुकरण करता है। वह आत्म का आधार व्यक्तियों के साथ सम्बन्धों में विकसित करता है। बाल्डविन ने इसे 'वैयक्तिक का द्वन्द्व' (dialectic of personal growth) का सिद्धान्त कहा है। अन्य व्यक्तियों की क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं एवं अन्त:क्रियाओं में अपना करता है।[2] कूले ने भी आत्म के आभाष का आधार कल्पना को माना है सामाजिक अन्त:क्रिया में विकसित होता है। कूले ने 'आत्म का दर्पण' (look glass self) का प्रयोग किया है।[3] इसका अभिप्राय यही है कि आत्म एक और जैसा दूसरे लोग हमारे बारे में सोचते हैं वैसा ही हम इस दर्पण में देखते हैं। जॉनसन ने कूले के इस प्रयोग को ठीक माना है फिर भी उनका कहना है इससे गलतफहमी हो सकती है।

इस विचार का विस्तृत विश्लेषण जॉर्ज मीड ने किया।[4] आत्म का व्यक्ति की इस क्षमता पर आधारित है कि वह कहाँ तक अपने स्वयं ('object' as used in grammar) या वस्तु हो सकता है। किम्बाल यंग ने लि

---

1 "From such beginnings the sense of selfhood emerges." K. Y *Personality and Problems of Adjustment*, p. 157.

2 J. M. Baldwin, *Mental Development in the Child and Race* (1 The Macmillan Co., New York; J. M. Baldwin, *Social and cal Interpretations in Mental Development* (1906).

3 C. H. Cooley, *Human Nature and the Social Order* (1902), C Scribner's Sons, New York, pp. 151. ff.

4 George H. Mead, *Mind Self and Society*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्म की उत्पत्ति व्यक्ति की योग्यता पर निर्भर है जो उसकी स्वयं की है।"[1]

कर्टिस ने भी लिखा है, "आत्म का विकास व्यक्ति की अर्जित योग्यता पर र रहता है जो स्वयं का उद्देश्य हो।"[2]

बच्चा स्वयं के लिए दूसरी वस्तु बन जाता है। वह स्वयं से कहता है 'रामू, करते हो, इस तरह जल जाओगे'। उसकी माँ ने कभी ऐसा उससे कहा होगा, उसी परिस्थिति में वह स्वयं माँ का कार्य-ग्रहण कर लेता है और अपने आपसे ता है। इससे स्पष्ट है कि पहले बच्चा दूसरों की प्रतिक्रियाओं को देखता है; फिर अपने में अन्तर्विष्ट कर लेता है और स्वयं उसी आधार पर व्यवहार करता है। जिक अन्तःक्रिया का महत्त्व इससे स्पष्ट हो जाता है। पहले कोई भी दूसरों का ीकरण करता है और फिर अपना करता है। भाषा या संचार के अन्य साधन बहुत सहायता करते हैं। वैसे भी हम लिख ही चुके हैं कि सामाजिक अन्तःक्रिया महत्त्वपूर्ण तत्त्व सम्बन्ध और संचार हैं। बच्चा भाषा के ही द्वारा माँ के शब्दों; ने का तरीका, शारीरिक संकेत इत्यादि को अन्तर्विष्ट करता है और फिर माँ कार्य-ग्रहण करता है। बच्चा पहले एक पार्ट करता है फिर दूसरा। वह पहले का पार्ट करता है और फिर स्वयं अपना पार्ट करता है। एक लड़की जब अपनी माँ से खेलती है, तो स्वयं माँ का पार्ट करती है। इसी तरह एक लड़का पिता पार्ट करता है। इस प्रकार कार्यग्रहण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जॉर्ज मीड ने इस ध में लिखा है :

"आत्म आचरण में उत्पन्न होता है, जब व्यक्ति स्वयं के अनुभव में सामाजिक बन जाता है। यह उस समय होता है जबकि व्यक्ति अभिवृत्ति या प्रयोगों एवं ों की कल्पना करता है जो दूसरा व्यक्ति स्वयं में प्रयोग करेगा, प्रत्युत्तर देगा, युत्तर प्रस्तुत करेगा। बच्चा अपने स्वयं के अनुभव में धीरे-धीरे एक सामाजिक बन जाता है तथा वह उसी ढंग से क्रिया करेगा जिस ढंग से वह दूसरों के क्रिया करता है।"[3]

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इस मत की आलोचना की है। आल्पोर्ट भी उनमें हैं। आल्पोर्ट का कहना है कि आत्म की उत्पत्ति संवेदिक प्रतिमाओं से जाती है। उन्होंने लिखा है, "इन्द्रिय प्रभावों का द्रवण विशेष रूप से

---

[1] "The rise of the self depends upon the capacity of the individual to be an object to himself." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 157.

[2] "The development of self depends upon the acquired ability of the individual to be an object to himself." Curtis, *Social Psychology*.

[3] G. H. Mead, 'A behaviouristic account of the significant symbol'; in *Journal of Philosophy* (1922), 19, p. 160.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आत्म की इन्द्रिय उत्पत्ति, स्थिति, प्रकृति और स्तर के प्रति इन्द्रियों
ओर है।"[1]

मर्फी, शेरिफ और केंट्रिल यद्यपि दृष्टि प्रत्यक्षीरण पर पर्याप्त
फिर भी सामाजिक अन्तःक्रिया के महत्त्व को कम नहीं करते।

मीड ने इस बात पर बल दिया है कि पहले बच्चा शब्दों इत्यादि
है, फिर शरीर की उसे कल्पना होती है। मीड ने लिखा है, "व्यक्ति स्वयं
इस प्रकार, प्रत्यक्ष रूप में नहीं, वरन् अप्रत्यक्ष रूप में, उसी सामाजिक समूह
व्यक्ति सदस्यों के विशेष दृष्टिकोण से करता है।"[2]

इस प्रकार आत्मचेतना पहले सामाजिक अन्तःक्रिया में ही होती है।
शरीर के विभिन्न अंग जान सकता है, पर उसे एक वस्तु के समान ही
मीड ने लिखा है, "केवल योग्यता एवं शरीर के विभिन्न भागों का अनुभव
णिका के अनुभव से भिन्न नहीं है।"

शरीर तथा अन्य भौतिक वस्तुओं का अपना महत्त्व है और वे आत्म
में बड़ी सहायता करते हैं; परन्तु पहले सामाजिक क्रिया का स्थान है।
ने लिखा है, "अन्तःक्रिया के दृष्टिकोण से बच्चे को पहले भौतिक आत्म
होता बल्कि वह सामाजिक आत्म को अर्जित करता है। इससे प्रक्रिया
रहती है। भौतिक शरीर का अर्थ सामाजिक क्रिया से उत्पन्न होता है,

इस प्रकार हम देखते हैं कि आत्म की उत्पत्ति सामाजिक अन्तः
सामाजिक क्रिया में होती है। इसमें व्यक्ति कार्य-ग्रहण करता है और
स्पष्ट होता जाता है। अब हम इसी सम्बन्ध में कार्य-ग्रहण पर विचार करें

विशिष्ट कार्य-ग्रहण (Specific Role-taking)—बच्चा
कार्य-ग्रहण करता है और इस प्रकार उनका पार्ट अदा करता है। इस प्रक्रिया
स्वयं के साथ एक अन्य वस्तु या व्यक्ति के समान व्यवहार करता है।
हमें पहले बच्चा और माँ के अन्तर्सम्बन्धों एवं बच्चों के खेलों में मिलते हैं
अपने खेलों में माता, पिता, भाई, बहन तथा अन्य व्यक्ति जो उनके सम्पर्क
हैं उनका पार्ट करते हैं। बच्चों के खेलों में पूरा ड्रामा होता है और
उच्च स्तर का होता है। बच्चे कई बार अकेले में भी खेलते हैं और
कई रोल कर लेते हैं। बच्चे माता, पिता, भाई, बहन, पुलिस, टिकट
ड्राइवर, विमान चालक, डाक्टर, फलवाला, दुकानदार, अध्यापक इत्यादि
करते हैं। बच्चा इन विशिष्ट कार्यों को ग्रहण करता है। बच्चा अपने
प्रकार बातचीत करता है जैसे अन्य लोग उससे बोलते हैं। वह इस काल
में कई घण्टे गुजार देता है।

---

1 G. W. Allport, *Personality*, p. 163.

2 G. H. Mead, 'A behaviouristic account of the significant
in *Journal of Philosophy*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संस्कृति का भी प्रभाव इस कार्य-ग्रहण पर पड़ता है। इन्हीं में से बच्चे का आत्म विकसित होता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "बच्चा जिस कार्य को इस मार्ग में अपनाता है, वे महत्त्वपूर्ण केन्द्र हैं जिनसे उसके आत्म की धारणा निर्मित होती है।"[1]

भाषा का इसमें विशेष स्थान रहता है। भाषा के ही सहारे वह कई रोल अदा करता है और स्वयं भी बातचीत कर पाता है। मान लीजिए वह एक स्टोर का अभिनय करता है। पहले वह दुकानदार बनता है और कहता है 'कहिए साहब, आपको क्या चाहिए। यह देखिए हमारी सूची'। फिर स्वयं ग्राहक का रूप ले लेता है और कहता है (आवाज बदलकर) 'आपके यहाँ चाकलेट हैं—पार्ले के या गार्टन के; अच्छे वाले दिखाइए।' इसी प्रकार बच्चा बातें करता रहता है और एक रोल से दूसरे रोल में पार्ट करता रहता है।

पहले यह कार्य-ग्रहण बाह्य व्यवहार एव बातचीत के स्तर पर होता है, फिर यह अन्तर्विष्ट हो जाता है तो उसे बच्चे के बाह्य एवं प्रतीकात्मक व्यवहार से दृष्टिगोचर होता है। यही सामाजीकरण की प्रक्रिया है। बच्चा उसी प्रकार व्यवहार करता है जिस प्रकार दूसरे उससे आशा करते हैं। इसी प्रक्रिया के द्वारा बच्चा दूसरों की आदतें, अभिवृत्तियाँ, विचार इत्यादि अपने में ग्रहण कर लेता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "संक्षेप में, यह सामाजीकरण की वह प्रक्रिया है, जो दूसरे व्यक्तियों की आदतों, अभिवृत्तियों एवं विचारों को धारण एवं किसी एक के स्वयं संस्थान में उनको पुनः संगठित करती है।[2]

सामान्य कार्य (General Roles)—कुछ समय में अन्तर्विष्ट विशिष्ट कार्य एक व्यवस्था में संगठित हो जाते हैं और सामान्य कार्य का रूप धारण कर लेते हैं। किम्बाल यंग ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है, "वह दूसरों के विशिष्ट कार्यों के विस्तृत क्षेत्र से बाहर है जो उसने किये हैं। वे बच्चे में समय पर सामान्यीकरण या अधिक या कम सम्पूर्ण कार्य उत्पन्न है। यह एकीकृत आत्म का एक पूर्ण भाग बन जाता है जो सहस्त्रों विशिष्ट व्यक्तियों के प्रतिदिन की अन्तःक्रिया के साथ विकसित होते हैं, जिसकी अभिवृत्तियाँ एवं आदतें बालक के साथ मिश्रित हो जाती हैं।"

मीड ने इसे 'generalized others' कहा है। उसने इसे छोटे बच्चों के खेलों एवं बड़े बच्चों के खेलों में अन्तर से समझाने का प्रयत्न किया है। बड़े बच्चों के संगठित खेलों में बच्चों को कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है। अपने रोल के अतिरिक्त अन्य खिलाड़ियों के रोल का भी ध्यान रखना पड़ता है। फुटबाल, हॉकी, वॉलीबाल, क्रिकेट इत्यादि में यह आश्रितता बढ़ती जाती है। बच्चा दूसरों के रोल

---

1. "The roles the child picks up in this way, are the corner-stones from which his concept of his self is built." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, pp. 159-60.
2. *Ibid*, p. 160.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को भी समझाता है। वह दूसरों के रोल को ध्यान में रखकर ही आशा के ... ही अपना व्यवहार करता है। परिवार के सदस्य, समुदाय के नेता, ... बच्चे को यही सिखाते हैं।

कार्य-ग्रहण और नियन्त्रण (Role-taking and Control)—कार्य-... उसी-निर्धारित रूप से कार्य करना पड़ता है, जिस प्रकार एक ड्रामे में व्यक्ति ... वास्तविक उद्वेग प्रदर्शित नहीं करता, अपितु उस पार्ट का रोल करता है। ... उसी प्रकार जीवन के ड्रामे में भी होता है। किम्बाल यंग ने उचित ही ... 'The actor *plays* a scene, he does not *make* one.'

वास्तविक जीवन में भी हमें ऐसे ही ड्रामे करने पड़ते हैं और दूसरों ... के अनुसार कार्य करना पड़ता है। इसी के कारण हम नैतिक नियमों के ... कार्य करते हैं।

'Generalized Others' के अर्थ को समझाना आत्म के समन्वय ... बड़ा आवश्यक है।[1] सामान्यीकृत कार्य आत्म के विकास एवं व्यक्तित्व ... अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "बालक विशिष्ट कार्यों ... वयस्क और एकीकृत वयस्क सामान्यीकृत आत्म से लक्षित किया जाता है।"

क्रिया तथा अभिवृत्तियों के सम्बन्ध में कार्य
(Roles in Relation to Attitudes and Actions)

क्रिया तथा अभिवृत्तियों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इस पर हम यहाँ ... करेंगे।

अभिवृत्तियाँ और कार्य (Attitudes and Actions)—यह मान ... भूल होगी कि एक बच्चे या वयस्क का कार्य-ग्रहण केवल मात्र दूसरों की ... है। यद्यपि व्यक्ति दूसरों की अभिवृत्तियाँ एवं कार्य ले लेता है और उन्हें ... कर लेता है और अपने व्यक्तित्व का अंग बना लेता है, फिर भी उसका ... पन रहता है। यह अनोखापन उसके शारीरिक बनावट, चालकों की शक्ति, ... क्षमता एवं उद्वेगिक तत्त्वों पर आधारित होता है। सामाजिक सांस्कृतिक ... अन्तरों का भी प्रभाव पड़ता है। तात्कालिक परिस्थिति की प्रकृति भी इस ... डालती है। हम इसके कारण भविष्यवाणी नहीं कर सकते कि व्यवहार ... मीड ने इसको 'मैं' और 'मुझे' के सिद्धान्त द्वारा समझाया है।

'मैं' और 'मुझे' का सिद्धान्त
(Theory of 'I' and 'Me')

यह सिद्धान्त मीड का है। मीड के सामने यह प्रश्न खड़ा हुआ कि ... केवल अपने चारों ओर के लोगों का ही प्रतिफल है? मीड ने जेम्स का अनुसरण ...

1 "The child is characterized by specific roles, and the mat... integrated adult by a generalized self." *op. cit.*, p. 163.
2 Gerth and Mills, *Character and Social Structure.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'मैं' शब्द का प्रयोग किया। 'मैं' को 'मुझे' या 'दूसरे' के विरोध में रखा। मीड के अनुसार आत्म 'मैं' और 'मुझे' दोनों से मिलकर बना है।

'मुझे' का निर्माण दूसरों से ग्रहण किये गये कार्यों एवं अभिवृत्तियों से होता है। यह दूसरे हैं माता, पिता, भाई, बहन, साथी, गुरु तथा अन्य समाज के व्यक्ति जो उसके सम्बन्ध में आते हैं। जब बच्चा व्यवहार करता है तो उसमें कुछ अनोखापन भी होता है। यह 'मैं' के कारण होता है जो कि वह आत्म से प्राप्त करता है। आत्म में 'मैं' आवश्यकताओं एवं प्रेरणाओं से बना होता है। बाद को सामाजिक अन्तःक्रिया की प्रक्रिया में सक्रिय में अन्य 'मुझे' से भी प्रभावित होता है।

"मैं" या अभिनायक को हम केवल कल्पना में ही जानते हैं। 'मैं' केवल वर्तमान में ही जाना जाता है। भाषा में में 'मैं' और 'मुझे' में कोई अन्तर नहीं है। 'मुझे' 'मैं' का कर्म होता है। जिस प्रकार बाहर अन्य वस्तुओं के प्रति प्रतिक्रिया होती है, उसी प्रकार आन्तरिक रूप में 'मुझे' के प्रति प्रतिक्रिया होती है। हर व्यवहार अनिश्चित रहता है। क्योंकि 'मुझे' की हमें कल्पना रहती है, पर 'मैं' किसी क्षण क्या करेगा, यह हम नहीं जानते।

अतः 'मैं' के विषय में व्यक्ति स्वयं भी नहीं जानता। यह पता नहीं रहता कि 'मैं' का क्या व्यवहार होगा। किम्बाल यंग ने लिखा है, "इस प्रकार 'मैं' हमारी विचार प्रक्रिया में और बाह्य क्रियाओं में एक महत्त्वपूर्ण, बेजोड़, आशातीत, अभविष्यवाणी वाला है।"[1]

किम्बाल यंग का कहना है कि मीड का मत सत्य है, फिर भी उसमें कुछ कमी है। 'मैं' कोई नयी वस्तु नहीं, अपितु अन्तर्विष्ट 'मुझों' (me s) के जोड़ का मिश्रित प्रभाव होता है एवं परिस्थिति से सम्बन्धित प्रेरणाओं, उद्वेगों एवं नवीन तत्त्वों का प्रभाव होता है। इस प्रभाव से एक नवीन वस्तु उत्पन्न हो जाती है।

हमारे दैनिक जीवन में इसके उदाहरण हैं। कभी कोई व्यक्ति कहता है, "मैं उससे कुछ असलियत कहना चाहता था, पर फिर मैंने उचित नहीं समझा और कुछ और ही कहा।" इसका अभिप्राय स्पष्ट है कि वह कहना कुछ चाहता था और कहा कुछ और ही। एक व्यक्तित्व में दो तथ्य होते हैं: एक समाज एवं अन्य साथियों के आशा के अनुसार और दूसरा निराला, अजीब, व्यक्तिगत या सनकी या समाज की आशा के विपरीत। 'मुझे' पहले तत्त्व को संकेत करता है और 'मैं' दूसरे को। मीड इसी तथ्य पर प्रकाश डालना चाहते थे।

आत्म के विकास के सम्बन्ध में मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्त (Psychoanaytical Theory of the Development of Self)

मनोविश्लेषण सम्प्रदाय के संस्थापक सिगमण्ड फ्रायड हुए हैं। इनके सिद्धान्त

---

1. "Thus the "I" is the unpredictable, the unanticipated, the unique, the novel element in our thought processes and in overt action." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 165.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को समझने के लिए पहले हम निम्न बातें समझेंगे : (1) व्यक्ति और प[र्यावरण], (2) मस्तिष्क के भाग, (3) इड, ईगो और सुपर ईगो, (4) विकासक्र[म], (5) आत्म का विकास।

फ्रायड ने 'आत्म' के स्थान पर 'अहं' शब्द का प्रयोग किया है। [अतः] हम 'अहं' शब्द का ही प्रयोग आगे के विवेचन में करेंगे।

(1) **व्यक्ति और पर्यावरण** (Individual and Environm[ent])— ये मानव व्यवहार को एक संघर्ष के रूप में मानते हैं। व्यक्ति विरोधी पर्या[वरण से] संघर्ष करता रहता है। सामाजिक संसार मनुष्य की सन्तुष्टि पर प्रतिबन्ध [लगाता] रहता है।

मनुष्य को पर्यावरण से सामंजस्य करने में सहायता करने के लिए एक [शक्ति] प्रदान की गयी है। इस शक्ति के दो स्वरूप हैं : (अ) 'जीवन' या 'काम' ('eros', 'love' या 'life') और दूसरी (ब) नष्ट करने वाली ('de[ath]' 'destructive)'। इनके कार्य के विषय में फ्रायड ने स्वयं लिखा है, "प्र[थम का] उद्देश्य महत्त्वपूर्ण महान इकाइयों को स्थापित करना है तथा उन्हें इस प्रकार [सुरक्षित] करना—संक्षेप में, साथ में बांधना तथा दूसरे का उद्देश्य इसके विपरीत सम्ब[न्धों का] नाश एवं इस प्रकार चीजों को नष्ट करना है।"[1]

जीवन शक्ति का नाम उसने 'लिबिडो' (Libido) रखा। 'लिबि[डो' या] 'काम शक्ति' वह मानसिक शक्ति है जो मन की क्रियाओं का संचालन करती [है और] उनको गति देती है। यही शक्ति हमको समाज में विभिन्न प्रकार के कार्य क[रने को] प्रेरित करती है। बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक के सभी प्रकार के व्यवहार, [खेल-] कूद, बौद्धिक, मानसिक, शारीरिक कार्य और सामाजिक संगठन, सभी में व्या[प्त] हुई है। यह उक्त कार्यों में जान डालती है और उनका संचालन करती है।

(2) **मन के भाग** (Divisions of Mind)—कार्य की दृष्टि से फ्रायड [ने मन] को निम्न तीन भागों में बाँटा है : (अ) चेतन मन, (ब) पूर्वचेतन मन, (स) अचेत[न मन]।

(अ) **चेतन मन** (Conscious Mind)—यह सम्पूर्ण मन का ए[क] थोड़ा भाग है। जो कुछ स्पष्ट चेतना में होता है वह इसके अन्तर्गत आता है।

(ब) **पूर्वचेतन मन** (Pre-conscious Mind)—यह मन का व[ह भाग है] जिसमें कुछ तत्त्व रहते हैं जो उस समय भूले हुए से लगते हैं पर थोड़ा [सा] कुछ सम्बन्ध जुड़ने पर याद आ जाते हैं।

(स) **अचेतन मन** (Unconscious Mind)—अचेतन मन सम्पूर्ण [मन का] एक बड़ा भाग है। यह मन का लगभग तीन चौथाई भाग होता है। इसे अचे[तन]

---

1 "The aim of the first is to establish ever greater unit[ies and to] preserve them thus—in short, to bind together; the aim [of the] second, on the contrary, is to undo connections and so to d[estroy] things." S. Freud, *An Outline of Psychology*, p. 20.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...ए नहीं कहते कि इसके विषय में कुछ ज्ञात नहीं, अपितु अनेक बातें इसमें चली ...हैं और हम उनको भूल जाते हैं। मनुष्य के सामान्य जीवन में इसके होने का ...लगता है। मनुष्य को स्वप्नों द्वारा, अनायास क्रिया, असाधारण भूलों इत्यादि ...इसका अनुभव होता है। मानसिक रोग के रोगियों के रोग भी अचेतन मन से ...तित शक्ति के द्वारा होते हैं।

अचेतन मन की शक्ति पर ही हमारे व्यक्तित्व का विकास आश्रित है, क्योंकि ...के इस भाग का अभाव हमारे जीवन पर सदैव पड़ता रहता है। व्यक्ति के अचेतन ...के अन्दर विरोधी भावों का संघर्ष चलता रहता है। अचेतन मन गतिशील है। ...सदैव उन दलित इच्छाओं में संघर्ष होता रहता है जो परस्पर विरोधी होती हैं। ...री कुछ इच्छाएँ ऐसी होती हैं जो सामाजिक नियमों के विरुद्ध होती हैं और ...लिए विवश होकर हमें उनका दमन करना पड़ता है। ये दमन की हुई इच्छाएँ ...न मन में चली जाती हैं। समय-समय पर ये प्रकट होने का प्रयत्न करती हैं। ...रिक संघर्ष चलता रहता है।

इड, ईगो और सुपर ईगो
(Id, Ego and Super Ego)

इड (Id)—'इड' या 'इदम्' मन का अचेतन भाग है। यह 'सुख सिद्धान्त' ...लित होता है। इसका उद्देश्य मनुष्य की इच्छाओं की पूर्ति रहती है। यह ...अनीति, अच्छा, बुरा और विवेक आदि कुछ भी नहीं मानता। यह दमन की ...इच्छाओं और वासनाओं का भण्डार है। यह काम-शक्ति का भण्डार है। मानव ...जातीय गुण और वे विशेषताएँ जो उसने पूर्वजों से प्राप्त की हैं उनका भी इसी ...न्दर समावेश होता है।

ईगो (Ego)—मन का एक भाग अहं है जो चेतन और विचारशील है, जिसका ...न्ध अधिकतर बाह्य जगत और वास्तविक जीवन से है। ईगो, इड और सुपर ईगो ...बीच, बीच-बचाव करता है और एक सन्तुलन उत्पन्न करने का प्रयत्न करता है। एक ओर इड होता है, जो मनमाने एवं असामाजिक ढंग से व्यक्ति की आव-...श्यकताएं पूरी करने का प्रयत्न करता है। दूसरी ओर सुपर ईगो होता है जो नैतिकता ...ता है और इड पर रोक लगाता है। तीसरी ओर बाह्य जगत या पर्यावरण होता ...जो वास्तविकता की माँग करता है। ईगो इन तीनों के बीच सामंजस्य स्थापित ...ता है।

सुपर ईगो (Supper Ego)—सुपर ईगो नैतिक होता है। इसे एक प्रकार से व्यक्ति का अन्तःकरण कह सकते हैं। सुपर ईगो अहं पर शासन करता है और ...पर नियन्त्रण रखता है।

विकासक्रम के स्तर
(Developmental Stages)

फ्रायड तथा मनोविश्लेषणवादियों के अनुसार ये दो मौलिक प्रवृत्तियाँ निश्चित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विकासक्रम से होकर गुजरती हैं। इनको उन्होंने निम्न स्तरों में बाँटा है: (1) शिशु अवस्था : (अ) पूर्व जननिक (i) मौखिक स्तर, (ii) गुदा स्तर; (ब) जननिक, (2) लेटेंसी काल, (3) तरुणावस्था।

(1) **शिशु अवस्था (Infancy Period)**—यह अवस्था जन्म से पाँच वर्ष तक होती है। पहले मौखिक स्तर रहता है। बच्चा मुख से ... लेता है। चूसना, निगलना इत्यादि मौखिक हैं। कुछ समय बाद बच्चे माँ से लगाव विकसित कर लेते हैं। फ्रायड ने इस वस्तु स्थायित्व (object-fixation *cathexis*) कहा है। फ्रायड के अनुसार ये सब काम शक्ति की सन्तुष्टि होता है। इसके बाद गुदा की ओर ध्यान जाने लगता है। टट्टी-पेशाब की क्रियाओं के द्वारा ऐसा होता है। मौखिक और गुदा स्तर बच्चे को ... में रुचि उत्पन्न करा देते हैं।

प्रारम्भिक जननिक (early genital or phallic stage) स्तर ... काम की अभिव्यक्ति करता है। वह जननेन्द्रिय को रगड़ता है, छूता है और ... को दिखाता है। इस प्रकार आनन्द लेता है।

इन स्तरों पर बच्चे में आत्म-प्रेम या नारसीजम विकसित हो जाता ... अपनी इच्छाओं को पूरी करना चाहता है। बच्चा इस समय स्वार्थी होता ... अपनी शारीरिक इच्छाओं को पूर्ण करना चाहता है। यह बालक की ... होती है जिसमें उसके आकर्षण और प्रेम की वस्तु में केवल उसका शरीर ... इससे उसको एक प्रकार का सुख और संतोष मिलता है।

फ्रायड इसको वही सुख मानता है जो काम-वासना की तृप्ति से मिलता है। 'नारसिस' नामक एक युवक की कहानी ग्रीस की पौराणिक ... मिलती है। नारसिस एक अत्यन्त सुन्दर युवक था परन्तु वह अपनी सुन्दरता ... जागरूक न था। एक बार तालाब में पानी पीते समय अचानक उसको अपनी ... दिखायी पड़ गयी और उस दिन से वस अपने शरीर से प्यार करने लगा। ... अनुसार यह कथा व्यक्तिगत नहीं है; बल्कि सांकेतिक रूप से मानव-मात्र ... एक प्रवृत्ति को स्पष्ट करती है।

इसके बाद का विकास-क्रम बाह्य वस्तु-प्रेम, मातृ-पितृ-भाव ... (oedipus complex) की ओर होती है। इसके कारण 'परवर्गीय प्रेम' प्रारम्भ ... है। लड़का माँ को प्यार करता है और लड़की पिता का कुछ समय ... प्रवृत्ति दब जाती है।

(2) **लेटेन्सी काल (Latency Period)**—यह प्रायः 5 वर्ष से ... वर्ष तक रहता है। इस अवस्था में बच्चा बाह्य संसार की ओर आकर्षित है। इस अवस्था में बच्चा घर के बाहर अन्य लोगों से सम्बन्ध स्थापित करता है।

(3) **तरुणावस्था (Pubertal Period)**—इस अवस्था में बच्चा ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिपक्वता पर पहुँच जाता है। काम-शक्ति दो ओर जाती है—या तो हस्तमैथुन (masturbation) की ओर या विषमलिंगी सम्बन्ध।

फ्रायड के अनुसार सम्पूर्ण विकास प्रेम जीवन और अहं के चारों ओर होता है।

आत्म का विकास
(Development of Self)

आत्म के विकास स्तरों का विवरण हम कर चुके हैं। अब हम देखेंगे कि 'अहं' का विकास किस तरह होता है।

व्यक्तित्व के ढाँचे—फ्रायड ने व्यक्तित्व के तीन अन्तःक्रियात्मक उप-ढाँचे बताये हैं—इड, ईगो और सुपर ईगो।

प्रारम्भ में 'इड' मूलप्रवृत्तियों एवं उनकी शक्ति से बनती है। इसका कार्य करने का सिद्धान्त 'सुख का सिद्धान्त' होता है। यदि इसका वश चले तो यह किसी को भी हस्तक्षेप न करने दे। यह अनैतिक एवं असामाजिक होती है।

'अहं' का विकास बाह्य पर्यावरण के प्रभाव के अन्तर्गत 'इड' से ही होता है। इसके कारण व्यक्ति व्यावहारिक हो जाता है और संसार के 'वास्तविक सिद्धान्त' का पालन करता है। 'वास्तविक सिद्धान्त' और इड के 'सुख सिद्धान्त' में संघर्ष होता है। 'अहं' के महत्त्वपूर्ण कार्य प्रत्यक्षीकरण, विचार करना और व्यवहार करना है। इनके द्वारा अहं वर्तमान स्थिति को जाँचता है और भविष्य की प्रत्याशा करता है। अहं बाह्य संसार के साथ कार्य करने में तादात्म्य, तार्किक विचार एवं साधनों का प्रयोग करता है। यह अपने लाभ के लिए पर्यावरण में परिवर्तन भी करता है।

यदि 'इड' और 'ईगो' की तुलना की जाय तो 'इड' मूलप्रवृत्ति है और 'ईगो' विवेक। किम्बाल यंग ने लिखा है, "यदि एक विस्तृत मूलप्रवृत्ति विचार इड को समान करता है, तो उसको विचार तर्क पर 'ईगो' को समान करना पड़ेगा।"[1]

'सुपर ईगो' इड और ईगो के सम्बन्धों से उस समय पैदा होता जब वे समाज के नैतिक नियमों का सामना करते हैं। नैतिक मन का प्रारम्भ उसी समय से हो जाता है जबकि माता-पिता बच्चों की 'इड' की प्रेरणाओं पर नियन्त्रण करते हैं। बच्चों को दण्ड का भय दिखाया जाता है। ओडीपस काम्प्लेक्स (oedipus complex) को भी भय दिखाकर समाप्त किया जाता है। बच्चा समाज के नियमों का पालन करने के लिए बाध्य हो जाता है।

नैतिक मन प्रायः अचेतन स्तर पर कार्य करता है। यह 'अहं' पर अत्याचारी तरीके से हावी रहता है। नैतिक मन को फ्रायडवादी सुखी जीवन के लिए क्षति पहुँचाने वाला एवं अस्वस्थ मानते हैं।

---

1 "If one were to equate id to the broad concept *instinct*, one might equate the ego to the concept reason." K. Young, *Personality and Problems of Adjustment*, p. 260.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नैतिक मन अहं पर नियन्त्रण रखता है। नैतिक मन एक प्रकार के नैतिक नियम, विचार, अभिवृत्तियाँ इत्यादि होती हैं जो व्यक्ति में अन्तर्विष्ट हो जाती हैं।

आत्म के विकास को प्रभावित करने वाले तत्त्व
(Factors Affecting the Development of Self)

आत्म जन्मजात नहीं होता। नवजात शिशु में आत्म नहीं होता है। विकसित होता है। इसके विकास में निम्न तत्त्व महत्त्वपूर्ण हैं :

(1) **परिपक्वता** (Maturation)—परिपक्वता आत्म के विकास के लिए आवश्यक है। यह इसकी दैहिक एवं जैविक अनिवार्यता है। समझने-बूझने, स्मरण करने, अर्थात् प्रत्यक्षीकरण की क्षमता व्यक्ति में परिपक्वता से ही आती है।

(2) **तादात्म्य एवं प्रत्याशा** (Identification and Expectancy)—इन कारकों पर हम इसी अध्याय में प्रकाश डाल चुके हैं।

(3) **सामाजिक अन्तःक्रिया** (Social Interaction)—इस पर भी प्रकाश डाल चुके हैं।

(4) **भाषा** (Language)—भाषा भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसके बिना किसी भी प्रकार की अन्तःक्रिया नहीं हो सकती। इसलिए आत्म के विकास का प्रश्न ही नहीं उठता।

(5) **सामाजीकरण** (Socialization)—सामाजीकरण के ही द्वारा आत्म का विकास होता है। सामाजीकरण का इसमें विशेष महत्त्व है।

(6) **सांस्कृतिक शिक्षण** (Cultural Training)—सांस्कृतिक शिक्षण द्वारा भी आत्मगौरव के भाव का विकास होता है। आदेशों के निर्माण में यह सहायक होता है।

(7) **कार्य-ग्रहण** (Role-taking)—यह प्रक्रिया भी आत्म के विकास में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। इस पर भी हम प्रकाश डाल चुके हैं।

प्रश्न

1. व्यक्तित्व की परिभाषा कीजिए। व्यक्तित्व विकास की प्रक्रिया स्पष्ट कीजिए।

(Define personality. Indicate the process of personality development. Agra, M. A. Sociology, 1958.)

2. उस प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए जिससे व्यक्ति समाज में संप्रेरणा अभिवृत्ति अर्जित करता है।

(Indicate the process by which an individual acquires motives and attitudes in society. Agra, M. A. Sociology, 1958.)

3. यह प्रदर्शित कीजिए कि किस प्रकार कार्य-ग्रहण व्यक्तित्व के निर्माण में योग देता है। उदाहरण दीजिए।

(Show how role-taking contributes to the formation of personality. Give examples. Agra, M. A. Sociology, 1957.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

4. व्यक्तित्व का क्या तात्पर्य है ? इसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण दीजिए।

(What is meant by personality ? Give a psychological analysis of it. Agra, M. A. Sociology, 1956.)

5. जी. एच. मीड के सिद्धान्त 'मैं' और 'मुझे' की व्याख्या कीजिए।

(Explain G. H. Mead's Theory of the 'I' and the 'Me', Rajasthan, M. A. Sociology, 1958, 59.)

6. एम्बीवैलेन्स से क्या तात्पर्य है ? उदाहरण सहित समझाइए। एम्बीवैलेन्स किस प्रकार व्यक्तित्व ढाँचे का आधार हो सकता है ?

(What is meant by ambivalance ? Illustrate now ambivalance may be a foundation of personality structure ? Rajasthan, M. A. Sociology, 1958.)

7. सामाजिक क्रिया में आत्म की विकास की प्रक्रिया का विश्लेषण कीजिए।

(Analyze the Process involved in the rise of self in social act. Agra, M. A. Sociology, 1959.)

8. इड, ईगो और सुपर ईगो में भेद प्रदर्शित कीजिए।

(Differentiate between the Id, the Ego and Super Ego. Agra, M. A. Sociology, 1959.)

9. व्यक्तित्व के मनोविश्लेषणवादी सिद्धान्त का वर्णन कीजिए। इसमें नव-फ्रायडवादियों ने क्या-क्या परिवर्तन किये ?

(Describe the Psychoanalytical Theory of Personality. What changes have been made by neo-Freudians in it ? Agra, M. A, Sociology, 1961.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

25

व्यक्तित्व तथा संस्कृति

(Personality and Culture)

'संस्कृति' शब्द का प्रयोग कई अर्थों में किया गया है। प्राय: साधार में इसका प्रयोग सुसंस्कारों और आचरणों के अर्थों में किया गया है। दैनिक में सामान्यत: हम 'सुसंस्कृत' ऐसे व्यक्तियों को कहते हैं जिनमें व्यवहार होती है, जो समाज-स्वीकृत शिष्टाचार के नियमों का साधारणत: उल्लं करते तथा जो अपने आचरण में भी संस्कृति का तात्पर्य शिष्टाचार एवं सद् से है। कवियों एवं कलाकारों के अनुसार संस्कृति का प्रमुख लक्षण सौन्दर्य है। वह इसके अन्तर्गत संगीत, नृत्य, नाट्य इत्यादि को लेते हैं। संस्कृति का विज्ञानों और विशेष रूप से मानवशास्त्र में, 'विभिन्न ही अर्थ है। यहाँ पर सम्बन्ध संस्कृति के वैज्ञानिक अर्थ से ही है।

संस्कृति का अर्थ

(Meaning of Culture)

अब हम संस्कृति की कुछ परिभाषाओं पर विचार करेंगे :

कीसिंग की परिभाषा :

"संस्कृति समस्त सीखा हुआ, समाज द्वारा हस्तान्तरित व्यवहार प्रथा है।"[1]

टाइलर की परिभाषा :

"वह समस्त संकुल जिसमें ज्ञान, विश्वास, कला, आचार विधि, प्र कोई अन्य क्षमताएँ या आदतें जो व्यक्ति किसी समाज के सहायक होने के नाते करता है, सम्मिलित हैं।"[2]

---

1 'Culture the totality of learned, socially transmitted behavio custom." Keesing, *Cultural Anthropology*, p. 16.

2 "That complex whole which includes knowledge, belief, morals, law, custom and any other capabilities and habits uired by man as a member of society." E. B. Tylor, *Pri Culture.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र की परिभाषा :

"समस्त सीखी हुई एवं सम्प्रेषित यान्त्रिक प्रतिक्रियाएँ, आदतें, ढंग, विचार मूल्य और वह व्यवहार जो ये सब प्रोत्साहित करते हैं।"[1]

नॉस्की की परिभाषा :

"संस्कृति के अन्तर्गत उत्तराधिकार में प्राप्त कलात्मक तथ्य, वस्तुएँ, यान्त्रिक याएँ, विचार, आदतें एवं मूल्य सम्मिलित हैं।"[2]

नवाइजर की परिभाषा :

"संस्कृति के अन्तर्गत हमारी धारणायें, विश्वास एवं विचार, हमारे निर्णय मूल्य, हमारी संस्थाएँ—राजनैतिक एवं वैधानिक धार्मिक तथा आर्थिक, हमारे न एवं शिष्टाचारिक विधान की पुस्तकें और यन्त्र, हमारा विज्ञान, दर्शन और तिक—ये समस्त वस्तुएँ एवं बहुत-सी अन्य वस्तुयें तथा प्राणी दोनों स्वयं अपने में अनेकानेक अन्त:सम्बन्धों के रूप में सम्मिलित हैं।"[3]

दुबे की परिभाषा :

"........हम उसे मानसिक, नैतिक, भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजकीय, त्मक अथवा सारांश में मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष में सीखे हुए व्यवहार प्रकारों समग्रता कह सकते हैं।"[4]

न की परिभाषा :

"संस्कृति व्यवहार के परिणाम एवं सीखे हुए व्यवहार की रूपरेखा है जिसके तत्व एक विशेष समाज के सदस्यों द्वारा पहुँचाए एवं बाँटे जाते हैं।"[5]

इस प्रकार संस्कृति एक बड़ा व्यापक शब्द है। संस्कृति के अन्तर्गत हर वस्तु

"The mass of learned and transmitted motor reactions, habits, techniques, ideas and values and the behaviour they induce." A. L. Kroeber, *Anthropology*.

"Culture as the handiwork of man and as the medium through which he achieves his ends." B. Malinowski, *A Scientific Theory of Culture*, p. 67.

"Culture includes our attitudes, beliefs and ideas our judgments and values; our institution, political and legal; religious and economic; our ethical codes and codes of etiquette; our books and machines; our sciences; philosophies and philosophers—all of these things and many other things and beings both in themselves and in their multiform interrelations." A Goldenweiser. *Early Civilization*, p. 15.

डॉ. श्यामचरण दुबे, मानव और संस्कृति, पृ० 199।

"A Culture is the configuration of learned behaviour and results of behaviour whose component elements are shared and transmitted by the members of a particular society." R. Linton, *The Cultural Background of Personality*, p. 432.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आ जाती है। मनुष्य के द्वारा निर्मित जो कुछ भी है, वह सब संस्कृति के अ
जाता है—मशीनें, कल-पुर्जे, मकान, नहरें, रेल, हवाई जहाज, पुस्तकें,
कविता, साहित्य, दर्शन, सामाजिक नियम, कानून, प्रथाएँ रूढ़ियाँ, संस्थाएँ
संस्कृति को समाजशास्त्रियों ने दो भागों में बाँटा है: भौतिक
(material culture) और अभौतिक संस्कृति (non-material culture)
संस्कृति को सभ्यता भी कहते हैं। मकान, हवाई जहाज, रेल, मशीनें इत्यादि
संस्कृति के अन्तर्गत आते हैं।

लिण्टन ने संस्कृति के तत्त्वों को तीन वर्गों में बाँटा है—भौतिक,
(Kinetic) और मनोवैज्ञानिक। उन्होंने लिखा भी है, "यह संस्कृति के
विवेचन से देखा जा सकता है कि यह घटना कम से कम तीन भिन्न
पहलुओं को सम्मिलित करती है: भौतिक—जो उद्योगों की उत्पत्ति है;
जो प्रकट करता है (यह आवश्यक रूप से गति को अन्तर्ग्रस्त करता
मनोवैज्ञानिक—जिसमें ज्ञान, अभिरुचि एवं मूल्य, जो समाज के सदस्यों
जाते हैं।"[1]

लिण्टन ने इसे मनोवैज्ञानिक आधार दिया है। पहले और दूसरे
व्यवहार में रखा है और तीसरे को आन्तरिक व्यवहार में।

संस्कृति के अर्थ को और भी अधिक स्पष्ट एवं विशिष्ट रूप से
लिए हम इन शब्दों को और भी समझेंगे: (1) वास्तविक संस्कृति, (2)
सांस्कृतिक प्रतिमान, (3) सांस्कृतिक संबोध प्रतिमान।

वास्तविक संस्कृति (Real Culture)—वास्तविक संस्कृति
सदस्यों के वास्तविक व्यवहार से बनती है। लिण्टन ने लिखा है, "वास्तविक
किसी भी समाज के वास्तविक व्यवहार और इसी प्रकार, इसके सदस्यों
वास्तविक संस्कृति के अन्तर्गत बहुत से तत्त्व आते हैं। ये तत्त्व
नहीं मिलते। कोई भी दो व्यक्ति एक ही प्रकार की उत्तेजना
प्रतिक्रिया नहीं करते। एक ही व्यक्ति भी दो समय पर उसी प्रकार
होने पर भी बिलकुल एक-सा व्यवहार नहीं करता। प्रत्येक व्यवहार
भिन्न होता है। फिर किस प्रकार हम कह सकते हैं कि ऐसी उत्तेजना
व्यवहार होगा। प्रायः ऐसा होता है कि सीमा के अन्दर इन व्यवहारों
होता है। यह विस्तृत क्षेत्र समान है। इसे हम व्यवहार का प्रतिमान
लिण्टन ने लिखा है: "Such a range of normal responses to a
situation may be designated as a pattern within the real
(p. 45.)

---

1 R. Linton, *The Cultural Background of Personality*, p.
2 "The real culture of any society consists of the actual
and so on, of its members." *Ibid*, p. 43.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सांस्कृतिक संबोध (Culture Construct)—वास्तविक व्यवहार में इतना अन्तर होता है कि उसके आधार पर कोई सामान्यीकरण नहीं हो सकता। मान लीजिए किसी समाज के सदस्य 8 और 10 बजे के बीच सोते हैं। अब इनका सोने का समय कौन-सा कहा जाय। ऐसी स्थिति में हम इन लोगों के सोने के समय का भूयिष्टिक (mode) निकालेंगे। मान लीजिए यह सवा नौ बजे निकला। तो यह सांस्कृतिक संबोध हुआ। लिण्टन ने लिखा है, "Such a modal derivative may be termed a *culture construct pattern.*" (p. 46).

इस प्रकार अधिकतर लोग जिस प्रकार से कार्य एवं व्यवहार करते हैं वह सांस्कृतिक संबोध होगा। यह वास्तविक संस्कृति नहीं है, परन्तु अध्ययन की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सम्पूर्ण संस्कृति संबोध की परिभाषा करते हुए लिण्टन ने लिखा है, "सम्पूर्ण संस्कृति संबोध संस्कृति संबोध प्रतिमानों को मिलाने से विकसित होती है, जो इस प्रकार विकसित हुई है।"[1]

व्यक्तित्व और संस्कृति
(Personality and Culture)

व्यक्ति का व्यक्तित्व कई कारकों से प्रभावित होता है। कुछ वंशानुसंक्रमण का प्रभाव होता है और कुछ पर्यावरण का। पर्यावरण भी प्रमुख रूप से दो प्रकार का होता है—भौगोलिक पर्यावरण और सामाजिक पर्यावरण। सामाजिक पर्यावरण को संस्कृति भी कहते हैं।[2] सामाजिक पर्यावरण का प्रभाव मनुष्य के व्यक्तित्व पर पड़ता है।

मनुष्य का व्यक्तित्व कुछ अंशों में दूसरे व्यक्तियों से मिलता है और कुछ अंशों में इतना अनोखा होता है कि किसी से भी नहीं मिलता। उसे हम इस तरह व्यक्त कर सकते हैं :

प्रत्येक व्यक्ति कुछ अंशों में : (अ) दूसरे सब मनुष्यों की तरह होता है, (ब) दूसरे कुछ मनुष्यों की तरह होता है, (स) दूसरे किसी मनुष्य की तरह नहीं होता।

प्रत्येक व्यक्ति दूसरे सब मनुष्यों की तरह क्यों होता है ? इसका उत्तर स्पष्ट है कि मनुष्य की दैहिक रचना एवं प्राथमिक आवश्यकताएँ समान होती हैं। चाहे जो भी संस्कृति, भौगोलिक पर्यावरण या समाज क्यों न हो, पर मौलिक चालक एवं प्रेरणाएं समस्त मानव प्राणी की एक हैं। इनकी सन्तुष्टि आवश्यक है। इसके कारण प्रत्येक व्यक्ति कुछ अंशों में दूसरे सब मनुष्यों के समान होता है।

प्रत्येक व्यक्ति, कुछ अंशों में, दूसरे कुछ मनुष्यों के समान क्यों होता है ?

---

[1] 'The total culture construct is developed by combining all the culture construct patterns which have been developed in this way.' *Ibid*, p. 46.

[2] तोमर कृत, समाजशास्त्र की रूपरेखा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक जापानी दूसरे जापानी की तरह, एक चीनी दूसरे चीनी की तरह, एक दूसरे अंग्रेज की तरह होता है। यह सामाजिक पर्यावरण या संस्कृति के कारण है। प्रत्येक समाज के कुछ नियम होते हैं, कुछ व्यवहार के प्रतिमान होते हैं। अध्याय में हम इस पर प्रकाश डाल चुके हैं। इसके कारण एक समुदाय के व्यक्तियों में समान व्यक्तित्व पाया जाता है। व्यक्तियों के इस समान को मौलिक व्यक्तित्व ढांचा भी कहते हैं। राष्ट्रीय चरित्र का संबोध भी सम्बन्ध रखता है। इस पर अभी हम आगे प्रकाश डालेंगे। यहां पर यह स्मरण पर्याप्त है कि संस्कृति का विशेष प्रभाव इसी मौलिक व्यक्तित्व पर ही पड़ता है।

प्रत्येक व्यक्ति, कुछ अंशों में, दूसरे किसी मनुष्य की भी तरह क्यों नहीं है? हम सभी जानते हैं कि कोई दो व्यक्तित्व बिलकुल एक समान नहीं होते। कारण स्पष्ट है। प्रत्येक व्यक्ति अपने अनुसार प्रत्यक्षीकरण करता है। एक उत्तेजना दो व्यक्तियों पर विभिन्न प्रभाव डालती है। इतना ही नहीं, एक उत्तेजना एक ही व्यक्ति पर दो भिन्न समयों पर भिन्न-भिन्न प्रभाव डालेगी। प्रकार प्रत्येक व्यक्ति में एक अनोखापन विकसित हो जाता है और इसी कोई भी दो व्यक्ति समान नहीं होते।

मौलिक व्यक्तित्व ढांचा (Basic Personality Structure)—कार्डिनर ने इस संबोध को विकसित किया है। कार्डिनर एक मनोचिकित्सक है। उसने मानवशास्त्रियों; जैसे—कोरा दुवॉस (Cora Du Bois), जेम्स वेस्ट, लिण्टन की सहायता ली है। लिण्टन ने इसमें विशेष सहयोग दिया है।[1]

लिण्टन ने मौलिक व्यक्तित्व ढांचे की परिभाषा करते हुए लिखा है, "मौलिक व्यक्तित्व प्रकार किसी भी समाज में वह व्यक्तित्व रूपरेखा है जो समाज के सदस्यों के विस्तार द्वारा उस शैशव अनुभव के परिणामस्वरूप जो उनमें सामान्यतः होते हैं, बाँटा जाता है। यह व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के अनुरूप नहीं होता, वरन् व्यवस्था या विभिन्न वाक्य-रचनाशास्त्र में, मूल्य-अभिवृत्ति व्यवस्था, जो व्यक्ति व्यक्तित्व की रूपरेखा के लिए मौलिक है। इस प्रकार वही मौलिक व्यक्तित्व व्यवहार के विभिन्न स्वरूपों में परिवर्तित हो सकता है और उसके विभिन्न पूर्ण व्यक्तित्व रूपरेखा में प्रवेश कर सकता है।"[2]

---

1 Abram Kardiner, *The Individual and His Society*; *The Psychodynamics of Primitive Social Organization* (1939), Columbia University Press, New York; and *The Psychological Frontiers of Society* (1945), Columbia University Press, New York.

2 The *basic personality type* for any society is that personality configuration which is shared by the bulk of the society's members as a result of the early experiences which they have in common. It does not correspond to the total personality of the individual but rathar to the projective systems or, in different phraseology, the value-attitude systems which are basic to the individual

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिण्टन ने इसकी एक परिभाषा इन शब्दों में की है, "मौलिक व्यक्तित्व ढांचा, जैसा यह पद वहाँ प्रयोग किया गया है, व्यक्तित्व लक्षणों के पुंज का प्रतिनिधित्व करता है जो एक दिये हुए संस्कृति के अन्तर्गत, शामिल होंगे एवं सम्पूर्ण क्षेत्र में सहानुभूति के साथ दृष्टिगोचर होंगे।"[1]

मौलिक व्यक्तित्व संस्कृति के प्रभाव से विकसित होता है। कार्डिनर के अनुसार यह प्रभाव समाज की संस्थाओं द्वारा होता है। उसने प्राथमिक संस्थाओं और द्वैतीयिक संस्थाओं में अन्तर माना है। उसके अनुसार परिवार, प्रारम्भिक अनुशासन, लालन-पालन के तरीके इत्यादि प्राथमिक संस्थाएँ हैं। व्यक्ति का प्रारम्भिक व्यक्तित्व इनमें ही विकसित होता है। द्वैतीयिक संस्थाएँ प्राथमिक के प्रक्षेपण से विकसित होती हैं। इनमें परम्परा धर्म, जादू, मूल्य, व्यवस्थाएँ, विश्वास इत्यादि आते हैं। बड़ा होकर बच्चा इन्हें दूसरों से सीखता है। कार्डिनर ने इन दो प्रकार की संस्थाओं और व्यक्तित्व के बीच कार्यकारी सम्बन्ध निम्न चित्र में दिखाया है।

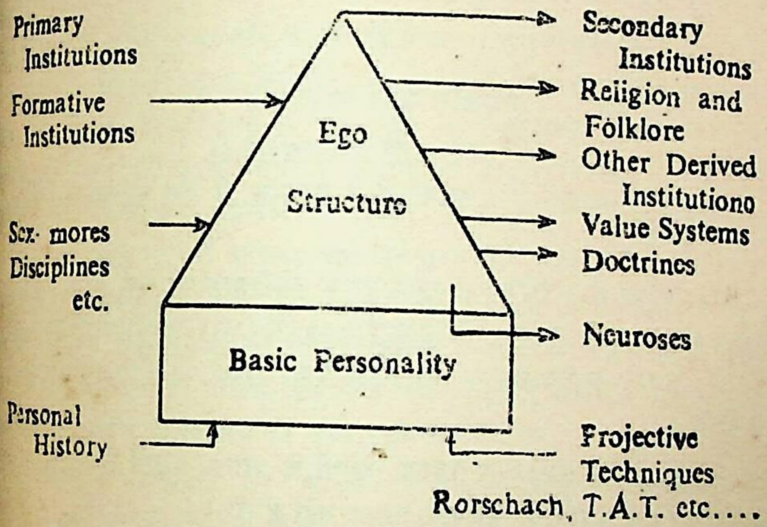

Diagram showing relations of Primary and Secondary Institutions to the Structure of Personality.

---

personality configuration. Thus the same basic personality type may be reflected in many different forms of behaviour and may enter into many different total personality configurations.' R. Linton, in his foreword to Abram Kardiner's, *The Psychological Frontiers of Society*, p. 8.

[1] "Basic personality structure, as the term is used here, represents the constellation of personality characteristics which would appear to be congenial with the total range of institutions comprised within a given culture" R. Linton, in his foreword to Abram Kardiner's, *The Individual and His Society*, p. 6.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मौलिक व्यक्तित्व ढाँचे के कुछ उदाहरण
(Some Examples of Basic Personality Structure)

यहां पर दो वन्य जातियों के मौलिक व्यक्तित्व का चित्र हम दे रहे हैं।

(1) होपी मौलिक व्यक्तित्व (Hopi Basic Personality)—होपी सौम्य होते हैं। वे वन्य जातीय एवं सामूहिक कार्यों का ध्यान रखते हैं। वे ... होते हैं। प्रतिस्पर्धा एवं वैयक्तिक आकांक्षाएँ उनमें नहीं पायी जातीं। वे ... पर अत्यधिक आश्रित रहते हैं। वे अनजान व्यक्तियों से बहुत डरते हैं।

(2) क्वाकियूटल् मौलिक व्यक्तित्व (Kwakiutl Basic Personality)—क्वाकियूटल् में अत्यधिक अहं भाव पाया जाता है। वह अपने प्रतिद्वन्द्वियों से ... करता है। वह अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी होता है और सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए कुछ भी कर सकता है। वह असुरक्षा का अनुभव करता रहता है और दूसरों पर सन्देह करता है।

संस्कृति और व्यक्तित्व
(Culture and Personality)

लिण्टन ने संस्कृति और व्यक्तित्व के सम्बन्ध में कुछ मान्यताएं निश्चित की हैं।[1] वे निम्न हैं :

1. व्यक्ति के प्रारम्भिक अनुभव उसके व्यक्तित्व पर एक अमिट छाप छोड़ते हैं. विशेष रूप से उसके प्रक्षपण व्यवस्था (projective system) के विकास ...

2. समान अनुभव समान व्यक्तित्व पुंज (personality configuration) उत्पन्न करेंगे।

3. किसी भी समाज के सदस्य बच्चों के लालन-पालन में समान ... का प्रयोग करते हैं यद्यपि वे बिलकुल समान नहीं होतीं।

4. बच्चों के लालन-पालन की विधियाँ एक समाज से दूसरे समाज में ... होती हैं।

यदि उपर्युक्त तथ्य सही हैं और इन्हें अनेक उदाहरणों के द्वारा ... किया जा सकता है, तो निम्न सिद्धान्तों का निर्माण उनके आधार पर, अपने ... जाता है

[1] R. Linton, in his Foreword to Abram Kardiner's, *The Psychological Frontiers of Society*, pp. 7-8.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

1. एक समाज के बहुत से सदस्य प्रारम्भिक अनुभव के अनेक तत्त्व समान रूप से अनुभव करेंगे।

2. इसके फलस्वरूप उनके व्यक्तित्व के अनेक तत्त्व समान होंगे।

3. चूंकि व्यक्तियों के प्रारम्भिक अनुभव एक समाज से दूसरे समाज में भिन्न होते हैं, इसलिए व्यक्तित्व के मापदण्ड (norms) भी विभिन्न समाजों में भिन्न होंगे।

संस्कृति का प्रभाव बचपन से ही पड़ने लगता है। रुथ वेनीडिक्ट ने लिखा है, "उसके जन्म के क्षण से जिस रिवाज में वह उत्पन्न होता है उसके अनुभव एवं व्यवहार ढाले जाते हैं। जिस समय से वह बोलता है, वह अपनी संस्कृति का छोटा प्राणी है और जिस समय से वह बढ़ता है एवं अपने कार्यों में हिस्सा लेता है, इसकी आदतें उसकी आदतें, इसके विश्वास उसके विश्वास, इसके असम्भव उसके असम्भव हो जाते हैं।"[1]

लिण्टन के अनुसार संस्कृति का प्रभाव केवल बचपन में ही नहीं पड़ता बल्कि उसके बाद भी जीवन भर पड़ता रहता है। वे लिखते हैं, "जब तक किसी समाज की संस्कृति अपने सदस्यों के व्यक्तित्व के गहरे स्तर को शिशु पोषण की विशेष प्रविधि द्वारा निश्चित करती, जो इनका विषय हैं, इसका प्रभाव यहीं तक समाप्त नहीं होता, बल्कि उनके बाकी व्यक्तित्व के ढालने में उनको विशेष प्रत्युत्तरों के आदर्श देते हुए चलता रहता है। यह बाद की प्रक्रिया जीवनपर्यन्त चलती रहती।"[2]

संस्कृति व्यक्तित्व के लिए खाद्य सामग्री प्रदान करती है। वेनीडिक्ट ने लिखा है, "उसकी संस्कृति, जिससे व्यक्ति अपना जीवन बनाता है, कच्चा पदार्थ प्रस्तुत करती है। यदि वह कम है, तो व्यक्ति को कष्ट होता है, यदि वह अधिक है, तो व्यक्ति को अपनी प्राप्ति के विकास का अवसर मिलता है।"[3]

लिण्टन ने भी व्यक्तित्व और संस्कृति के सम्बन्ध बताते हुए लिखा है, "इस निष्कर्ष पर पहुंचना स्वस्थ है कि स्थिर संस्कृतियों में सापेक्षत: जैसे—'आदिम' समाजों में मौलिक व्यक्तित्व प्रकार एवं सम्पूर्ण सस्कृति में घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है।"[4]

---

1. Ruth Benedict, *Pattern of Culture*, Mentor Book, 17th Printing (1959), p. 18.
2. R. Linton, *The Cultural Background of Personality*, p. 143.
3. "His culture provides the raw material of which the individual makes his life. If it is meagre, the individual suffers; if it is rich, the individual has the chance to rise to his opportunity." Ruth Benedict, *Patterns of Culture*, p. 218.
4. R. Linton, in his Foreword to Abram Kardiner's, *The Psychological Frontiers of Society*. p. 8.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामुदायिक जीवन का प्रभाव व्यक्ति के विचारों पर पड़ता ही है ... दायिक जीवन संस्कृति के द्वारा निश्चित होता है। फ्रैंक ने लिखा है, "... बाध्य प्रभाव है जो व्यक्ति के ऊपर व्याप्त है एवं उसके व्यक्तित्व के विचारों ... और विश्वासों को ढालती है, जिनको साम्प्रदायिक जीवन द्वारा उसे स्वीकार... पड़ता है।"[1]

हम प्रत्यक्षीकरण के अध्याय में लिख चुके हैं कि व्यक्ति वास्तविक... नहीं देख पाता, अपितु वह कुछ अपनी अभिवृत्तियों, मूल्यों एवं अन्य मनो... नियमों के अनुसार प्रत्यक्षीकरण करता है। संस्कृति का सन्दर्भ भी प्रत्य... लिए अत्यन्त आवश्यक है। वेनीडिक्ट ने लिखा है, "कोई भी व्यक्ति कभी ... आँखों से संसार को नहीं देखता। वह इसको किसी निश्चित रीतियों एवं ... और सोचने के तरीकों के समूहों द्वारा सम्पादित देखता है। यहाँ तक कि ... दार्शनिक परीक्षा में वह कभी भी रूढ़िवादिता के पीछे नहीं जा सकता; ... सत्य एवं झूठे विचार उसकी विशेष परम्परागत रीतियों से अभी भी संकेत ...

संस्कृति व्यक्ति का अनेक मामलों में मार्गदर्शन करती है और ... व्यक्तित्व पर प्रभाव डालती है। लिण्टन ने लिखा है, "संस्कृति सम्पूर्ण रूप ... भी समाज के सदस्यों को जीवन के समस्त मामलों में अति आवश्य पथ-प्रदर्शन करती है।"[3]

संस्कृति व्यक्तित्व के विकास की दिशा निर्धारित करती है। किम्बाल ... लिखा है, "संस्कृति फिर भी सार एवं निर्देशों को प्रस्तुत करती है जिनको ... क्रियात्मक गर्भाशय में क्रियान्वित करेंगे।"[4]

कार्डिनर ने भी लिखा है, "व्यक्ति का अध्ययन विना संस्थाओं के, ... रहता है, नहीं किया जा सकता और संस्थाओं को भी केवल व्यक्ति की ... समझा जा सकता।"[5]

---

[1] "Culture is a coercive influence dominating the individ... moulding his personality by virtue of the ideas, concep... beliefs which had brought to bear on him through co... life." Frank.

[2] Ruth Benedict, *Patterns of Culture*, p. 18.

[3] "The culture as a whole provides the members of any ... with an indispensable guide in all the affairs of life." R. L... *The Cultural Background of Personality*, p. 20.

[4] Culture provides, however, the content and direction wh... will take as they operate in the interactional matrix." K. Y... *A Handbook of Social Psychology*, p. 137.

[5] The individual cannot be studied without the institu... which he lives, and institutions cannot be understood ... the creations of man Abram Kardiner, *The Individual ... Society*, p. 2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आल्पोर्ट ने भी इस सम्बन्ध में लिखा है, "व्यक्तित्व विस्तृत रूप में रीतियों, हिताओं, सामाजिक प्रथाओं का रूपान्तरण एवं अन्तर्चिष्टीकरण का विषय है, यह ...नना निर्देशात्मक है कि सांस्कृतिक उत्तेजना क्या है, जिसे व्यक्ति अपने विकास के ...य प्रकट करता है। इस प्रकार सामाजिक आकार का ज्ञान उसके व्यक्तित्व की ...ी प्रशंसा के लिए अत्यन्त आवश्यक है।"[1]

व्यक्तित्व के सांस्कृतिक कारक
(Cultural Factors in Personality)

व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले अनेक सांस्कृतिक कारक होते हैं जिनका ...वेचन करना आवश्यक है। संस्कृति अपने निम्नलिखित स्वरूपों द्वारा व्यक्ति के ...क्तित्व पर प्रभाव डालती है :

(1) **सांस्कृतिक परम्पराएँ**—परम्परागत विश्वास और धारणाएँ।
(2) **प्रथाएँ**—विशिष्ट सांस्कृतिक विधि द्वारा कार्य करने की प्रथाएँ।
(3) **रूढ़ियाँ**—सामाजिक व्यवहार तथा आचरण के आदर्श नियम।
(4) **आचार और धर्म**—नैतिक मापदण्ड, धार्मिक आचरण, धार्मिक आदर्श ...र विश्वास।
(5) **बालक की शिक्षा** दीक्षा तथा पालन-पोषण की प्रचलित पद्धतियाँ।
(6) **संस्थाएँ**—जीवन-लक्ष्य व आवश्यकताओं की पूर्ति के विशेष साधन।

उपर्युक्त कारकों का विवेचन निम्न है :

(1) **परम्पराएँ** (Traditions)—परम्परा उन विचारों, आदतों और ...थाओं को कहते हैं जो एक समुदाय का होता है और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को ...स्तान्तरित होता रहता है। यह हमारे व्यवहारों के स्वीकृत तरीकों का द्योतक है। ...रम्पराएँ समाज द्वारा मान्य होती हैं। इससे यह मालूम हो जाता है कि समाज ...विशिष्ट परिस्थितियों में हमसे किस प्रकार के व्यवहार की आशा करता है। इस ...कार व्यवहार के कुछ निश्चित प्रतिमान निश्चित हो जाते हैं, यही व्यवहारों के ...तिमान सामाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से हमें प्राप्त होते हैं और हमारे ...क्तित्व को एक स्वरूप प्रदान करते हैं। परम्पराओं के पीछे अनेक पीढ़ियों के अनु... ...व और सामाजिक अभिमति प्राप्त होती है। इसलिए इसमें वह शक्ति होती है कि ...ह व्यक्ति के व्यवहारों को नियन्त्रित कर सके और कुछ सामाजिक आदतों को दृढ़ ...ना सके। परम्पराएँ अनुभवसिद्ध व्यवहारों का संग्रह होती हैं इसलिए व्यक्ति उन्हें ...पनाने में हिचक नहीं करता। वह जानता है कि इन परम्पराओं को अपनाने से ...मारी क्षति नहीं होगी।

(2) **प्रथाएँ** (Customs)—व्यक्तित्व के विकास में प्रथाओं का महत्त्वपूर्ण

[1] G. W. Allport, *Personality*, pp. 371-72.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थान है। यह भी समाज द्वारा मान्यता प्राप्त जनरीतियाँ हैं जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होती रहती हैं। प्रथा के कारण सीखने की प्रक्रिया सरल हो जाती है और सीखने की प्रक्रिया ही व्यक्तित्व के विकास की नींव है। व्यक्ति कभी भी कष्टप्रद क्रियाओं को नहीं करना चाहता है, वह उन्हीं क्रियाओं को चुनता है जिनसे सामाजिक समस्याओं का समाधान हो सके। इन क्रियाओं से जब उसे सफलता प्राप्त होती है तो उस तरह की परिस्थिति में वह अपनी तरह की क्रियाएँ करता है। हमेशा सफलता प्राप्त होने पर वही तरीके अपना लिये जाते हैं और पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होते रहते हैं, जो धीरे-धीरे प्रथा का रूप धारण कर लेते हैं। प्रथाओं में पीढ़ियाँ सफल अनुभव तथा व्यवहार विधि का समावेश होता है, इससे सीखने की प्रक्रिया सरल हो जाती है। इन प्रथाओं के कारण वर्तमान पीढ़ी 'प्रयत्न और भूल' (trial and error) विधि से एक ही चीज को सीखने से बच जाता है।

(3) **रूढ़ियाँ** (Mores)—ग्रीन (Green) ने रूढ़ियों के सम्बन्ध में कहा है—"कार्य करने की सामान्य रीतियाँ रूढ़ियाँ होती हैं, जो जनरीतियों की अपेक्षा अधिक निश्चयपूर्वक सही और उचित समझी जाती हैं और जिनका उल्लंघन होने पर कठोर दण्ड प्राप्त होता है।" इन रूढ़ियों को मानना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य होता है और इसके पीछे जनकल्याण की भावना छिपी रहती है। रूढ़ियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है: सकारात्मक रूढ़ि—सत्य बोलना, ईमानदारी आदि। नकारात्मक रूढ़ि—झूठ न बोलना, चोरी न करना आदि। रूढ़ियाँ, समाज के विचारों, दृष्टिकोणों तथा आदर्शों का प्रतिनिधित्व करती हैं।

(4) **धर्म** (Religion)—समाज का प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी आध्यात्मिक शक्ति को मानता है। वह अपराध से उतना नहीं डरता जितना पाप और पुण्य से डरता है। यह पाप और पुण्य धर्म की देन हैं। धर्म व्यक्ति में गुणों, अच्छे आचरणों तथा उच्च आदर्शों को विकसित करता है। धर्म का सम्बन्ध ईश्वर से माना जाता है, इसीलिए धर्म के प्रति लोगों में श्रद्धाभाव ही नहीं भय भी होता है। इस प्रकार धर्म व्यक्ति में क्रियाओं को नियंत्रित करता है और उन्हें दिशा प्रदान करता है।

(5) **बच्चों के पालन-पोषण तथा प्रशिक्षण के तरीके** (Modes of bringing and Training of Children)—बच्चों के पालन-पोषण तथा प्रशिक्षण की विधि भी संस्कृति द्वारा प्रभावित होती है और इन पालन-पोषण के तरीकों तथा प्रशिक्षण का व्यक्तित्व में निर्माण के महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। मार्गरेट मीड ने अपने अध्ययन द्वारा पालन-पोषण की पद्धति के कारण व्यक्तित्व पर प्रभाव को स्पष्ट करने के लिए आरापेश जनजाति के बच्चों का उदाहरण दिया है। उनका कथन है कि आरापेश जनजाति में बच्चे को बचपन से ही बड़ी कोमलता से पाला जाता है, वे हमेशा उनकी भावनाओं तथा आवश्यकताओं के प्रति जागरूक रहते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी के परिणामस्वरूप इस जाति के लोगों में प्रेम, दया, सहानुभूति, सहयोग आदि गुण पाये जाते हैं। इसके विपरीत मुण्डगूमर जनजाति में बच्चे को बड़ी लापरवाही से पाला जाता है, उनकी आवश्यकताओं और भावनाओं पर ध्यान नहीं दिया जाता, जिसके परिणामस्वरूप इनमें प्रेम, दया, सहानुभूति, सहयोग, नम्रता आदि गुण पनप नहीं पाते और वे आक्रामक, निर्दयी और क्रोधी होते हैं। हिन्दू परिवारों में लड़कियों की अपेक्षा लड़कों के व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास होता है, इसका कारण यह है कि लड़कों का पालन अधिक सावधानी से किया जाता है और लड़कियों के पालन-पोषण में लापरवाही की जाती है। इसका कारण यह है कि लड़कों से ही परिवार के अन्य धार्मिक क्रियाएँ सम्भव हो सकती हैं; जैसे—पितरों को तर्पण और पिण्डदान तथा वंश की निरन्तरता बनी रहती है। इसीलिए लोग पुत्र की कामना करते हैं और पुत्र पैदा होने पर खुशियाँ मनाते हैं, इसके विपरीत लड़की पैदा होने पर लोग उतने प्रसन्न नहीं होते और उन्हें बचपन से ही व्रत, सेवा, सदाचार और पतिव्रत धर्म की शिक्षा आदि दी जाती है जिसका स्पष्ट रूप भारतीय नारी में देखा जाता है। अतः स्पष्ट है कि बच्चों के पालन-पोषण तथा प्रशिक्षण के तरीकों का व्यक्तित्व के विकास पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

(6) **संस्थाएँ** (Institutions)—संस्था एक साधन मात्र है जिसके माध्यम से जीवन-लक्ष्य तथा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इन संस्थाओं का व्यक्तित्व के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। प्रत्येक संस्कृति में विवाह संस्थाएँ, आर्थिक संस्थाएँ और राजनैतिक संस्थाएँ होती हैं, इनका भी प्रभाव व्यक्तित्व पर पड़ता है। जहाँ एक विवाह (monogamy) पाया जाता है, वहाँ के लोगों का व्यक्तित्व उन लोगों से भिन्न होता है जहाँ बहुविवाह प्रथा प्रचलित है।

(7) **भाषा** (Language)—भाषा अभौतिक संस्कृति के अन्तर्गत आती है। भाषा के ही कारण मानव, पशुओं से भिन्न है। भाषा के द्वारा ही मानव अपने मन के भावों को स्पष्ट करता है तथा सामाजिक आदान-प्रदान या अन्तःक्रियाओं में भाग लेता है, कला और साहित्य का सृजन करता है और आविष्कारों का प्रसार करता है। व्यक्तित्व के निर्माण में सामाजिक अंतःक्रियाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये अन्तःक्रियाएँ भाषा के माध्यम से ही सम्भव होती हैं। भाषा के ही कारण बालक, जो प्राणिशास्त्रीय प्राणी होता है, सामाजिक प्राणी बन जाता है।

(8) **विज्ञान** (Science)—आधुनिक युग में विज्ञान का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि मानव जीवन का प्रत्येक पहलू इससे प्रभावित हो रहा है। प्रत्येक क्षेत्र में नित्य नये आविष्कार हो रहे हैं जिनका प्रभाव व्यक्तित्व पर स्पष्ट रूप से पड़ते हैं। विज्ञान हमें विभिन्न विषयों में यथार्थ ज्ञान प्रदान कर रहा है जिससे हमारे अनेक अन्धविश्वास तथा कुसंस्कार समाप्त होते जा रहे हैं। इसके फलस्वरूप नये विचार, नये आदर्श, नयी आदतें और नये जीवन-लक्ष्यों का विकास हो रहा है ऑगबर्न ने लिखा है कि केवल रेडियो के आविष्कार से मनुष्य के जीवन तथा व्यक्तित्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर 150 प्रकार के प्रभाव पड़े हैं। इसी प्रकार सभी मनोवैज्ञानिक आविष्कार जैसे—भाप से चलने वाले इंजन, टेलीफोन, हवाई जहाज आदि के आविष्कार मानव जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। विज्ञान के कारण ही आज मानव अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों से जुड़ा हुआ है। आज प्रत्येक देश के सांस्कृतिक मूल्यों आदान-प्रदान का श्रेय विज्ञान को ही है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि संस्कृति का व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पड़ता है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि कोई भी संस्कृति अपने सदस्यों को ही साँचे में ढालती है। उनमें व्यक्तिगत भिन्नता तो होती ही है, इसका कारण उनकी आन्तरिक क्षमता, योग्यता, अनुभव, धारणा, विचार आदि हैं। कोई भी संस्कृति अपने सदस्यों पर समान प्रभाव कभी नहीं डाल सकती। यह भी सोचना अवैज्ञानिक है कि संस्कृति ही व्यक्तित्व के विकास का एकमात्र कारक है, व्यक्तित्व के विकास के और भी कारक हैं जिनकी अवहेलना नहीं की जा सकती। श्रीमती रुथ बेनेडिक्ट (Ruth Benedict) ने कहा है, "दूसरी संस्कृतियों का ज्ञान रखने वाला कोई भी मानवशास्त्री यह नहीं मानता कि व्यक्ति अपनी सभ्यता का गुलाम है और उसके समस्त आदर्शों का पालन यन्त्रवत् करता है। अभी तक कोई भी संस्कृति ऐसी नहीं देखी गयी जो अपने सदस्यों के स्वभाव की समस्त भिन्नताओं को दूर कर सकती हो। संस्कृति और व्यक्तित्व का पारस्परिक सम्बन्ध सदैव ही लेनदेन का रहा है और आगे भी सदा लेनदेन का रहेगा।"[1]

संस्कृति और व्यक्तित्व के कुछ उदाहरण
(Some Examples of Culture and Personality)

संस्कृति का व्यक्तित्व पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। हम लिख चुके हैं मौलिक व्यक्तित्व तो संस्कृति का ही प्रतिफल है। यहाँ पर अब हम तीन उदाहरण प्रस्तुत करेंगे—(1) होपी, (2) क्वाकियूटल, (3) तनाला और बेतसिलियो। अगले अध्याय में हम संस्कृति का और अधिक विस्तृत प्रभाव दिखायेंगे।

होपी संस्कृति और होपी व्यक्तित्व

होपी लोग और संस्कृति (Hopi People and Culture)—होपी जाति उत्तरी-पश्चिमी न्यू मेक्सिको और उत्तरी-पूर्वी अरीजोना में रहते हैं। इस ...

---

1 "No anthropologist with a background of experiences of other cultures has ever believed that individuals were automatically mechanically carrying out the decrees of their civilizations. No culture yet observed has been able to eradicate the differences in the temperaments of the persons who compose it. It is always give and take." Ruth Benedict.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नस्पति कम होती है और वर्षा भी कम होती है। इनकी जनसंख्या प्राय: 3,500 । भोजन का प्रमुख साधन कृषि है और corn महत्त्वपूर्ण अनाज है। अन्न का इन्हें ष्ट रहता है।

इनका समाज बड़ा व्यवस्थित है। मातृवशीय एवं मातृस्थानीय परिवार पाये ाते हैं। वन्य जातियाँ अनेक गोत्रों में बँटी हुई हैं। अधिकतर गोत्रों के नाम किसी ड़ या पशु पर हैं। गोत्र फ्रेट्रियों (Phratries) में भी बँटे हुए हैं। फ्रेट्री कई गोत्रों ो मिलाकर बनती है। प्रत्येक गोत्र के पास भूमि है जो बालिग स्त्रियों में बँटी हुई । फ्रेट्री बहिर्विवाह होता है, अर्थात् विवाह फ्रेट्री के बाहर करना पड़ता है।

घर वन्य जाति की एक आर्थिक इकाई है। प्राय: आरतें होपी घर की केन्द्र । परिवार में माता, पिता उनके अविवाहित पुत्र व पुत्रियाँ, विवाहित पुत्रियाँ, नाती त्यादि और माता के अविवाहित भाई भी रहते हैं। सम्पत्ति माता से पुत्री को स्तान्तरित होती है। भूमि पर पति कार्य करता है, पर उपज पर पत्नी का अधिकार वं नियन्त्रण रहता है। धार्मिक संस्कारों को छोड़कर सभी क्षेत्रों में स्त्रियों का स्थान नुच्च होता है।

आर्थिक व्यवस्था सहकारिता पर आधारित है और व्यक्तिगत प्रतिद्वन्द्विता नहीं यी जाती। सामाजिक वर्गों की कोई व्यवस्था नहीं पायी जाती। यदि कोई व्यक्ति धिक धन या शक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, तो लोग उसे सन्देह की दृष्टि े देखते हैं। इस प्रकार का प्रयत्न जादू-टोने पर आधारित समझा जाता है और सलिए इसे लोगं अच्छा नहीं समझते। होपी लोग एक-दूसरे के समान होकर रहना ाहते हैं, उनके अन्दर वर्ग-स्तर की भावना नहीं पायी जाती।

राजनैतिक नियन्त्रण की मौलिक इकाई ग्राम है। प्राय: पुरुष एक समिति का निर्माण करते हैं, जो नियन्त्रण रखती है। अधिकतर ग्राम का एक मुखिया होता है, ो प्राय: भालू गोत्र से होता है।

होपी वन्य जाति के व्यक्ति धार्मिक संस्कारों में भी रुचि लेते हैं। इसमें भी वे क-दूसरे का सहयोग करते हैं। शामनवाद में यह अधिक विश्वास नहीं करते। ये ोग वर्षा के लिए विशेष रूप से पूजा करते हैं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि होपी समाज सहयोगी और नरम स्वभाव ा है। वे अत्यधिक शान्तिप्रिय भी हैं। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि ये लोग बिलकुल लड़ते ही नहीं। इन्होंने अपनी रक्षा के लिए अपेश व नवाजों वन्य जातियों े युद्ध किये हैं।

होपी का जीवन-क्रम (The Life Cycle in Hopi)—बच्चों का इनमें अत्यधिक महत्त्व है। बच्चे के जन्म पर नानी और बच्चे की माँ अनेक संस्कार करती हैं। २० दिन तक माँ बिलकुल अलग रहती है। बीस दिन समाप्त होने पर एक उत्सव होता है और माता-पिता बच्चे को नाम देते हैं। नानी पूरे ग्राम को दावत देती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

माँ बच्चे का लालन-पालन करती है। यदि माँ कहीं गयी है तो उसकी भी बहन या अन्य सम्बन्धी बच्चे को दूध पिला देगी। अँगूठा चूसना अधिक नहीं है। यदि कोई बच्चा ऐसा करता है, तो माँ अँगूठे पर मिर्च लगा देती है।

तीसरे वर्ष में बच्चों को कुछ न कुछ दूसरी वस्तुओं को देने लगते हैं। मूत्र इत्यादि त्यागने के सम्बन्ध में अधिक कड़े नियम नहीं हैं। बच्चा दूसरों को कर अनुकरण से सीखता है।

2 वर्ष से 6 वर्ष की आयु में बच्चा कभी-कभी नाराज होता है। है, चीजों को फाड़ता है या लात मारता है, पर इन पर अधिक ध्यान नहीं जाता। बच्चे की बड़ी बहनें अधिकतर बच्चे का ध्यान रखती हैं। बच्चे के पर अनुशासन रखते हैं। शारीरिक दण्ड बहुत कम दिया जाता है। 'सोओको' (Soyoko) के नाम से डराते हैं।

बालिग होने पर उसे कतसीना नृत्य में ले जाते हैं। फिर वह बड़े तरह काम करने लगता है। मृत्यु से ये लोग बहुत डरते हैं।

होपी व्यक्तित्व (Hopi Personality)—होपी व्यक्तित्व आधार पर विकसित होता है। 'स्व' का विकास इसी पर आधारित है। प्रतिक्रियाओं एवं मूल्यों पर कोई भी बल नहीं दिया जाता। अधिकांशतः शान्तिप्रिय होते हैं और अन्तर वैयक्तिक-द्वन्द्व नहीं पाया जाता। प्रायः शक्तिशाली लोग निर्बलों की रक्षा एवं सहायता करते हैं। होपी लोगों में की यह विशेषता पायी जाती है। घमण्ड एवं अन्य स्वार्थी इच्छाएँ समाज नहीं दी जातीं। इन्हें बुरी वस्तुएँ समझा जाता है। आत्म-महत्त्व का सफलता की कुञ्जी है। वैयक्तिक उद्देश्य एवं महत्त्वाकांक्षाएँ निषेध हैं। व्यक्ति एवं सामूहिक उद्देश्यों से तादात्म्य करता है। सबसे कठोर दण्ड समूह वंचित कर दिया जाता है। आत्महत्या का नाम तक इस वन्य जाति में नहीं जाता। ये शान्तिप्रिय होते हैं और समूह के लिए सब कुछ करते हैं। इनके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सम्पत्ति का अधिक मूल्य नहीं है और भी वह परिवार और समूह के लिए है।

व्यक्ति की सबसे बड़ी सुरक्षा दूसरों पर आश्रित होना है। ये रिश्तेदारों पर बहुत भरोसा करते हैं। धार्मिक जीवन में देवताओं पर विश्वास है। सबसे बड़ा नियन्त्रण दूसरों के सामने शर्मिन्दा होने की है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इनके व्यक्तित्व पर इनकी संस्कृति का अधिक प्रभाव पड़ता है। चूंकि संस्कृति में सहयोग पाया जाता है, इसलिए ये सहयोगी होते हैं। संस्कृति समूह सम्पत्ति एवं सुरक्षा पर बल देती है, इसलिए का व्यक्तित्व ही ऐसा विकसित होता है कि वह स्वार्थी एवं अपने लिए चाहने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं होता। होपी व्यक्तित्व शान्तिप्रिय एवं हँसमुख होता है। इनके अन्दर एक-दूसरे के प्रति द्वेष नहीं पाया जाता।

क्वाकियूटल् समाज एवं संस्कृति

क्वाकियूटल् होपी लोगों से बिलकुल विरोधी एवं भिन्न हैं। इनके अन्दर सामाजिक वर्गीकरण बहुत अधिक पाया जाता है और स्थिति के लिए बेहद संघर्ष होता है। इनके सामाजिक ढाँचे का आधार ही वर्गीकरण है। सब वन्य जातियाँ, परिवार इत्यादि एक स्तरण में होते हैं। ऊँचे परिवारों के प्रथम जन्मे बच्चे श्रेणी में गिने जाते हैं और शेष सामान्य। पहले तीसरी श्रेणी गुलामों की भी थी, पर अब वह समाप्त हो गयी है। प्रत्येक नुमायाम (Numaym) का मुखिया एक सरदार होता है, जिसे सीमित राजनैतिक व धार्मिक अधिकार प्राप्त होते है

खाने-पीने की वस्तुएँ खूब पायी जाती हैं। मछलियों तथा अन्य समुद्र के जानवरों का शिकार करते हैं। शिकार अधिकतर व्यक्तिगत आधार पर होता है। कभी-कभी कुछ भाई मिलकर भी शिकार करते हैं। आधा हिस्सा शिकार का सरदार को देना पड़ता है। वह इसे जिन्हें आवश्यकता होती है उनमें बाट देता है। शिकार के क्षेत्रों पर कभी-कभी परिवारों या नुमायाम का स्वामित्व का अधिकार पाया जाता है। लकड़ी का काम बहुत किया जाता है। लकड़ी की तरह-तरह की चीजें बनायी जाती हैं।

सामाजिक ढाँचा स्थिति व पद के सिद्धान्त पर आधारित है। समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति प्रतिष्ठा के लिए दौड़ लगाता है। कुछ लोग सामाजिक पदों को अत्यधिक महत्त्व देते हैं और उसके लिए सब कुछ त्याग कर सकते हैं। इन लोगों में खिताब, नाम इत्यादि पर विशेष महत्त्व दिया जाता है। कोई भी उच्चता, प्रतिष्ठा या सरदारी की माँग तभी स्वीकार होती है जब व्यक्ति अपने प्रतिद्वन्द्वियों में सम्पत्ति का वितरण करे। एक व्यक्ति जब अपने प्रतिद्वन्द्वी से अधिक सम्पत्ति बाँटता है तभी वह उच्च कहला सकता है। क्वाकियूटल् वन्य जातियों में यह तीव्र प्रतिस्पर्धा इनके सामाजिक सम्बन्धों का हृदय है। सब कुछ इसी पर आधारित है जो सम्पत्ति एक प्रतिद्वन्द्वी को दी जाती हैं, उसे 100 प्रतिशत ब्याज लगाकर लौटाना पड़ता है और जो लौटा न सके, उसकी सामाजिक स्थिति गिर जाती है। जिस अवसर पर ये वस्तुएं दी जाती है, उसे पोस्लेच (Potlatch) कहते हैं। इस समय दावत भी दी जाती है। प्रतिद्वन्द्वी या तो इससे अच्छी और शानदार दावत देता है या अपनी स्थिति खो देता है।

भाइयों में भी तीव्र ईर्ष्या पायी जाती है। बड़े भाई के प्रति यह अधिक होती है, क्योंकि सब कुछ उसी को मिलता है। दावतों में वस्तुएँ एवं तश्तरियाँ गिनने का भार सबसे छोटे भाई को दिया जाता है। प्रायः सबसे छोटे लड़के को चतुर समझा जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विवाह भी प्रतिष्ठा के लिए एक प्रतिद्वन्द्विता है। ऊँचे कुलों की लड़कि... के लिए यह होता है।

अपनी-अपनी सम्पत्ति के विषय में ये खूब डींगे मारते हैं। प्रतिष्ठा प्रा... के लिए एक-दूसरे की हत्या भी कर देते हैं। ये प्रतिष्टा के लिए कुछ भी क... सकते हैं।

धार्मिक क्षेत्र में भी प्रतिष्ठा एवं पदों के लिए संघर्ष होता है। इनका ध... प्रतिष्ठा-प्रतिद्वन्द्विता को प्रोत्साहन देता है।

क्वाकियूटल् में जीवन क्रम (The Life Cycle in Kwakiutl)—बच्चा माँ के नियन्त्रण में रहता है। प्रारम्भ से ही उसे संघर्ष के लिए तैयार किया जा... है। माँ उसे जाड़ों में ठण्डे पानी में डुबो देती है, जिससे उसकी सहनशक्ति बढ़ सके। जब बच्चा एक वर्ष का होता है, तो उसका पिता उसे एक नाम देता है। यह उसका पहला सम्मानित खिताब है। कुछ वर्षों के बाद बच्चे को पिता दूसरा नाम देता है। 21 साल की आयु से वह स्वयं उपहार बाँटने लगता है। जब वह बड़ा होता है तो अपनी ओर से पोस्लेच करता है।

सम्पूर्ण जीवन का प्रतिमान प्रतिष्ठा प्राप्ति पर आधारित है। धन एक साध्य नहीं है, वरन् एक साधन है। इसके द्वारा ये लोग अपने प्रतिद्वन्द्वी को कुचल डालना चाहते हैं। प्रतिद्वन्द्वी को कुचलकर यह अपनी प्रतिष्ठा बनाते हैं। यह लोग शर्म के कारण आत्महत्या भी कर लेते हैं।

क्वाकियूटल् व्यक्तित्व (Kwakiutl Personality)—इनका व्यक्तित्व त... भी इनकी संस्कृति के ही अनुसार होता है। इनका व्यक्तित्व लड़ाकू एवं ईर्ष्यालु होता है। यह व्यक्तिगत सुरक्षा अनुभव नहीं करते। एक-दूसरे से अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। यह कुछ भी कर सकते हैं।

तनाला और बेतसिलियो (The Tanala and Betsileo)

तनाला और बेतसिलियो[1] वन्य जातियाँ मेडागास्कर में पायी जाती हैं। पहले इन दोनों की आर्थिक व्यवस्था समान थी, पर बाद को परिवर्तन हुआ, इसके कारण इनके सामाजिक ढाँचे में भी परिवर्तन हुए और अन्ततः इसका प्रभाव व्यक्तित्व पर भी पड़ा। किम्बाल यंग ने इसे इस प्रकार व्यक्त किया है :

"......changes in the basic economy of a society with the attendant modifications in the social organisation can bring about alterations in the basic personality structure." (p. 154)

बहुत समय तक ये लोग सूखा चावल पद्धति से कृषि करते रहे। गीली पद्धति से यह कृषि करना जानते थे, पर सूखी पद्धति से करना ही उचित समझते थे। य...

---

[1] For details read, Abram Kardiner, *The Individual and His Society*, and for short description, K. young, *A Handbook of Social Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूखी पद्धति में चावल बखेर देते थे और परिश्रम कम करना पड़ता था। सम्पत्ति और भूमि पर समूह का स्वामित्व था। परिवार का अधिक महत्त्व था। परिवार का मुखिया ही सब कुछ करता था। मुखिया की मृत्यु पर उसका सबसे बड़ा लड़का कार्यभार सँभालता। बहुपत्नी विवाह प्रचलित था और 40% परिवारों में पाया जाता था। बच्चों की काफी माँग थी। बच्चों को कड़े नियन्त्रण में रखा जाता था। धार्मिक व्यवस्था बड़ी विस्तृत थी। एक सार्वशक्तिमान देवता को वे मानते थे जो सब कुछ देता था।

धीरे-धीरे भूमि कम होती गयी और सूखे पद्धति से चावल नहीं पैदा किया जा सकता था। गीली पद्धति से चावल पैदा करना प्रारम्भ हुआ। अब एक स्थान पर ये रह सकते थे। पहले जगह-जगह घूमना पड़ता था। अब इन्हें काफी काम करना पड़ता और पानी का बहुत प्रबन्ध करना पड़ता। सिंचाई की व्यवस्था अनिवार्य थी।

एक स्थान पर रहने के कारण समूह स्वामित्व का स्थान व्यक्तिगत स्वामित्व ने ले लिया। परिवार भी छोटे होने लगे। एक स्थान पर रहने वालों में अन्तर्विवाह होने लगा। अब उनमें संगठन बढ़ गया। उन्हें अपनी भूमि की रक्षा भी करनी पड़ती थी। गुलामों का महत्त्व बढ़ गया; क्योंकि उन्हें काम करने वालों की जरूरत पड़ने लगी। प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था के स्थान पर एक राजा या सरदार होने लगा। सामाजिक वर्ग का भी निर्माण होने लगा।

इसी प्रकार पिता की शक्ति बढ़ गयी। उसका सम्पूर्ण शासन घर पर होता। वह बच्चों पर अनुशासन रखता था। बड़ों को आदर देना महत्त्वपूर्ण था।

इसी प्रकार धर्म के क्षेत्र में भी परिवर्तन हुए। कहने का तात्पर्य यह है कि दोनों की आर्थिक एवं सामाजिक अवस्थाओं में परिवर्तन हो गया। बेतसिलियो की संस्कृति में अनेक परिवर्तन आ गये और वे तनाला से भिन्न हो गये।

व्यक्तित्व में परिवर्तन (Change in Personality)—बेतसिलियो के व्यक्तित्व में भी परिवर्तन हुए। मौलिक व्यक्तित्व ढाँचा के विषय में हम लिख ही चुके हैं। पहले बेतसिलियो अधिक सुरक्षा का अनुभव करता था, अब ऐसा नहीं है। स्तरण के कारण प्रभाव पड़ा है।

सम्पत्ति का महत्त्व बढ़ गया है। लोग हर प्रकार से इसे प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं। पिता की शक्ति भी बढ़ गयी है। बच्चों में वह सुरक्षा नहीं रही, जो पहले थी। वर्ग व्यवस्था जाति व्यवस्था में विकसित हो गयी है।

व्यक्तित्व संस्कृति के प्रातीतिक पक्ष के रूप में
(Personality as a Subjective Aspect of Culture)

ब्राउन महोदय ने लिखा है, "व्यक्तित्व और संस्कृति का प्रातीतिक पक्ष (subjective aspect) है। एक अर्थ में, प्रत्येक संस्कृति का अपना अलग-अलग व्यक्तित्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है, यद्यपि यह एक ऐसा व्यक्तित्व होता है, जो समय के साथ-साथ परिवर्तित होता रहता है।[1] फारिस ने भी ब्राउन के कथन का समर्थन किया। उपर्युक्त कथन से तात्पर्य है कि हर संस्कृति की अपनी अलग विशेषता होती है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक समाज की भौगोलिक तथा सामाजिक परिस्थितियाँ अलग-अलग होती हैं। संस्कृति समाजिक आविष्कारों का परिणाम होती है और आवश्यकताएँ आविष्कार की जननी होती हैं। ये आवश्यकताएँ प्रत्येक समाज में अलग-अलग होती हैं। इस कारण संस्कृति का रूप भी प्रत्येक समाज में अलग-अलग होती है। इस सांस्कृतिक भिन्नता का परिणाम यह होता है कि प्रत्येक समाज के सदस्य के व्यवहारों की विशेषताएँ दूसरे समाज के सदस्यों के व्यवहारों से अलग होती हैं। सांस्कृतिक प्रतिमानों में भी समय-समय पर परिवर्तन होते रहते हैं और उसी के अनुसार सदस्यों के व्यक्तित्व के मानक गुणों में परिवर्तन होता है। प्राचीनकाल में हमारी संस्कृति की जो विशेषताएँ थीं आज उनका नामोनिशान मिट गया है। कृषि स्तर पर भारत की संस्कृति की जो विशेषताएँ थी आज औद्योगिक स्तर पर उनमें अनेक परिवर्तन हो गये हैं। प्राचीन भारतीय समाज में व्यक्तित्व का आदर्श आध्यात्मवाद, त्याग, तपस्या आदि था। इस समय के व्यक्तित्व में व्यक्तिवाद, भौतिकवाद, आत्मसुख आदि विशेषताएँ पायी जाती हैं। इसका कारण यह है कि एक निश्चित समय के लिए संस्कृति समाज के सदस्यों के सम्बन्धों को नियमित करती है और उन्हें एक विशेष प्रकार का ज्ञान व अनुभव प्रदान करती है। संस्कृति का प्रभाव प्रथाओं, परम्पराओं, जनरीतियों और धर्म पर पड़ता है और उसी के अनुरूप व्यवहार, आदतें, आदर्श, मूल्य, मनोवृत्ति आदि विकसित होते हैं। संस्कृति की विशेषताएँ लोगों के व्यक्तित्व में स्पष्ट दिखायी देती हैं। इसीलिए व्यक्तित्व को संस्कृति का प्रातीतिक पक्ष कहा गया है।

श्री पिडिंगटन (Piddington) के अनुसार संस्कृति में दो प्रकार के तत्त्व विद्यमान होते हैं—(1) भौतिक वस्तुएँ (material objects); जैसे—यंत्र, औजार, बर्तन, कपड़े, मकान, मन्दिर, मूर्तियाँ आदि। (2) अभौतिक तत्त्व इसके अन्तर्गत विश्वास, मूल्य, प्रथा, परम्परा, धर्म, आदर्श विचार आदि आते हैं। व्यक्तित्व में अभौतिक तत्त्वों का स्पष्ट दर्शन होता है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भौतिक तत्त्वों का प्रभाव नहीं, व्यक्तित्व पर भौतिक तत्त्वों का भी प्रभाव पड़ता है। चूँकि व्यक्तित्व पर अमूर्त अथवा प्रातीतिक तत्त्वों का समावेश होता है। इसलिए व्यक्तित्व को संस्कृति का प्रातीतिक पक्ष कहा गया है।

वास्तव में व्यक्तित्व के विकास में महत्त्व रखने वाले सभी कारक—विशेषकर सामाजीकरण की प्रक्रिया के विभिन्न साधन संस्कृति द्वारा प्रभावित होते हैं, इसीलिए

---

[1] Personality is the subjective aspect of culture and in a sense, every culture has its own characteristics personality. Though, of course, it is a personality that changes with the times." C. A. Brown, *The Social Psychology of Industry*, p. 62.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्तित्व में संस्कृति की ही झाँकी देखने को मिलती है। निम्न विवेचना से उपरोक्त तथ्यों का स्पष्टीकरण हो जायगा।

बच्चा जिस परिवार में पैदा होता है। उस परिवार में बच्चे के व्यक्तित्व के विकास के लिए सभी प्रकार की पूँजी उपलब्ध होती है, उसका स्वरूप समाज की संस्कृति के अनुसार ही निश्चित होता है। बच्चा अपने परिवार से ही विचारों, भावनाओं और आदतों को अर्जित करता है। वह उसके मस्तिष्क में स्थायी हो जाती है। उदाहरणार्थ, यदि बच्चा वैष्णव परिवार में पैदा होता है तो वैष्णव धर्म का पूर्ण रूप से पालन करता है। वह राधा-कृष्ण की मूर्ति की पूजा करता हुआ अपने परिवार के अन्य सदस्यों को देखता है, कथाएँ सुनता हैं, कंठी पहनता है। इस तरह से उसका व्यवहार पूर्ण रूप से उसके परिवार के अनुरूप होता है।

पहले कहा जा चुका है कि भिन्न-भिन्न समाज में संस्कृति का भिन्न-भिन्न रूप पाया जाता है। भारत की खासी, गारो आदि जातियाँ मातृवंशीय होती हैं। मातृवंशीय परिवार में स्त्रियों की स्थिति पुरुषों से ऊँची होती है, इसलिए उन्हें अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए अधिक अवसर मिलते हैं। स्त्रियाँ ही प्रत्येक धार्मिक कार्य पारिवारिक कार्य एवं सामूहिक उत्सवों में आगे होती हैं। खासी लोग देवताओं की नहीं बल्कि देवियों की पूजा करते हैं। इसी तरह खरिया, भील आदि पितृवंशीय होते हैं। इनमें पुरुषों का प्रभुत्व होता है। प्रत्येक समाजिक कार्य में पुरुष अग्रणी होते हैं। यहाँ पुरुषों को स्त्रियों की अपेक्षा व्यक्तित्व के विकास की अधिक सुविधाएँ प्राप्त होती हैं।

संस्कृति द्वारा परिवार की रूपरेखा भी निश्चित होती है। कुछ संस्कृतियों में संयुक्त परिवारों का बाहुल्य होता है और कुछ में एकाकी परिवार की अधिकता होती है। संयुक्त परिवार में पलने वाले बच्चों में एकाकी परिवार के बच्चों से भिन्नता होती है। संयुक्त परिवार के बच्चों में सहयोग, प्रेम, त्याग, सहनशीलता आज्ञाकारिता आदि गुण अधिक पाये जाते हैं।

व्यक्तित्व के विकास में स्थिति और कार्य का भी प्रभाव पड़ता है। परन्तु स्थिति और कार्य का निर्धारण भी संस्कृति के आधार पर ही होता है। प्रो० मीड (Mead) ने समोआ संस्कृति का उल्लेख करते हुए लिखा है कि समोआ (Samoa) परिवार में बच्चों को बहुत कम उम्र में ही महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व निभाने पड़ते हैं, इसका परिणाम यह होता है कि बच्चों में कम उम्र में ही बढ़ों जैसी आदतें आ जाती हैं जो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अच्छी नहीं कही जा सकती हैं। श्री किड (Kidd) ने अफ्रीका की संस्कृतियों का उल्लेख करते हुए लिखा है, "इन बच्चों में नम्रता, विनय और समाज सेवा की भावना अधिक देखने को मिलती है ये सभी गुण वे अभिभावकों के आदर्श व्यवहार से सीखते हैं।"

विवाह का व्यक्तित्व निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान है, परन्तु इस विवाह की प्रकृति का निर्धारण भी संस्कृति द्वारा ही होता है। विवाह की यह प्रकृति विशेष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार की मनोवृत्तियों, विचारों और आदतों को विकसित करती है। खरिया, ओराँव, खासी, कादर आदि जनजातियों में ममेरे-फुफेरे भाई-बहनों का आपसी विवाह अच्छा माना जाता है। मध्य भारत में इस प्रकार की प्रथा की इतनी प्रबलता है कि यदि कोई पक्ष इस प्रकार की शादी करने को तैयार नहीं होता तो उसे हर्जाना देना पड़ता है। जिन संस्कृतियों में बहुपति विवाह (Polyandary) प्रचलित होता है वहाँ पुरुषों में यौन सम्बन्धी सहनशीलता पायी जाती है और पत्नी पर एकाधिकार की प्रकृति नहीं पायी जाती है। श्री मीक (Meak) ने उत्तर नाइजीरिया (North Nigeria) में रहने वाले ग्वारी लोगों में पाये जाने वाले बहुपति विवाह के सम्बन्ध में भी लिखा है कि वहाँ स्त्री अपनी इच्छा अनुसार कभी एक पति के पास और कभी दूसरे पति के पास रहती है और किसी भी पति को यह अधिकार नहीं रहता कि वह पत्नी पर विशेषाधिकार की माँग करे। भारत की टोडा जनजाति में भी बहुपति विवाह प्रथा प्रचलित है। वहाँ बच्चे का पिता कहलाने के लिए धनुष द्वारा एक संस्कार करना पड़ता है, जो यह संस्कार कर लेता है वही बच्चे का पिता माना जाता है। इसके विपरीत हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है। यह पवित्र बन्धन है इसलिए विवाह विच्छेद हिन्दुओं में बहुत ही कम देखने को मिलता है। हिन्दू स्त्रियों में एक विवाह, सती धर्म, पति सेवा, धर्म परायणता आदि गुण विकसित होते हैं।

उपर्युक्त उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि व्यक्तित्व संस्कृति का प्रातीतिक पक्ष है।

प्रश्न

1. पूर्णरूप से लिखिए कि संस्कृति किस प्रकार व्यक्ति के विचार एवं व्यवहार को प्रभावित करती है ?

(Explain fully how culture influences the thought and behaviour of the individual. Rajasthan, M. A. Sociology, 1958.)

2. क्या आप इस मत से सहमत हैं कि व्यक्तित्व संस्कृति का सब्जेक्टिव पक्ष है ? तर्क सहित पुष्टि कीजिए।

(Do you agree with the view that personality is a subjective aspect of culture ? Support your answer with arguments. M. A. Sociology, 1959.)

3. व्यक्तित्व के विकास में संस्कृति के कार्य की विवेचना कीजिए।

(Discuss the role of culture in the development of personality. Agra, M. A. Sociology, 1955.)

4. "संस्कृति समाज में व्यक्तियों के जीवन संगठन के लिए सामग्री एवं प्रदान करती है। परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि व्यक्तित्व का अर्थ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संस्कृति द्वारा ही निश्चित होती है।" इस कथन का परीक्षण कीजिए और संस्कृति एवं व्यक्तित्व के पारस्परिक प्रभाव को स्पष्ट कीजिए।

("Culture provides the content and direction for the life organization of individuals in society. But this is not to say that every item in the personality is determined by culture." K. Young. Examine this statement, and bring out the reciprocal influence and personality. Agar, M. A. Sociology, 1952.)

5. "एक समाज के मौलिक आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन साथ ही साथ उसके कारण सामाजिक संगठन में परिवर्तन, मौलिक व्यक्तित्व ढाँचे में परिवर्तन लाते हैं।" क्या किम्बाल यंग के इस कथन से आप सहमत हैं ? कारण दीजिए।

("Changes in the basic economy of a society with the attendant modifications in the social organization can bring about alterations in the basic personality structure." Do you agree with this view of Kimball Young ? Give Reasons. Agra, M. A, Sociology, 1962.)

6. व्यक्तित्व पर सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों के प्रभाव की पूर्ण व्याख्या कीजिए।

(Explain fully the impact of social and cultural factors on personality.)

7. 'संस्कृति और व्यक्तित्व' पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

(Write a short essay on 'culture and personality'.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

26

व्यक्ति और समाज

(Individual and Society)

व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध का विश्लेषण करना बड़ा कठिन है। प्रा... में बच्चा पैदा होता है और समाज का सदस्य बन जाता है। शनैः-शनैः वह ... शास्त्रीय व्यक्ति से सामाजिक प्राणी या मानव में परिवर्तित हो जाता है। ... शब्द कई गुणों का द्योतक है। जब हाड़-मांस वाला पशु (जिसे हमने प्राणिशास्त्री ... व्यक्ति कहकर सम्बोधित किया है) इन गुणों को प्राप्त कर लेता है, तब वह ... या सामाजिक व्यक्ति बन जाता है। जब बच्चा पैदा होता है तब न तो वह ... सकता है, न कपड़े पहन सकता है, न उचित रीति से भोजन कर सकता है और ... अन्य कार्य ही कर सकता है। समाज उसे प्रत्येक बात सिखाता है। तनिक ... बचपन का ध्यान कीजिए या अपने घर में कोई शिशु हो तो उसके व्यवहार का ... लोकन कीजिए। छोटी-छोटी-सी बातें, जो आज आपका स्वभाव बन गयी हैं, ... आपको किसने सिखायी हैं? अंगुली पकड़कर चलना, चम्मच का पकड़ना, ... करना, यह सब हमें सिखाया गया है। पग-पग पर समाज ने हमारी शिक्षा की व्य... की है। इस व्यवस्था को सामाजीकरण (socialization) कहते हैं। समाज सा... करण की प्रक्रिया द्वारा बच्चों को या अपने नये सदस्यों को अपने अनुरूप बना... है। यह प्रक्रिया इस प्रकार कार्य करती है कि हम भूल जाते हैं कि कोई हमें ... सिखा रहा है, जो स्वयं (self) के अतिरिक्त और कोई नहीं है। इस स्व... विकास ही हमें पशु से मानव बनाता है। इन दोनों पर इसी अध्याय में आगे ... हम विचार करेंगे। यहाँ पर केवल इतना ही लिखना पर्याप्त होगा कि व्यक्ति ... समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध है।

एकांगी दृष्टिकोण

(One-sides Approaches)

समाज में व्यक्ति के सम्बन्ध के विषय में कई सिद्धान्त विद्वानों ने प्रति... किये हैं और कई शताब्दियों तक उन्हें स्वीकार किया जाता रहा है। इन सि... की सबसे बड़ी कमी यह है कि वे एक अंग पर ही प्रकाश डालते हैं। उनमें से ... दो सिद्धान्तों पर हम विचार करेंगे :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) समाज का संविदा सिद्धान्त (The Contract Theory of Society)—अनेक विद्वानों ने यह मत प्रकट किया है कि समाज का निर्माण संविदा के आधार पर हुआ है। व्यक्ति समान और स्वतन्त्र उत्पन्न हुए थे, उनका समाज से कोई सम्बन्ध नहीं था। इन व्यक्तियों ने संविदा करके समाज का निर्माण किया और कुछ अधिकार एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह या समाज को प्रदान किए। इसके कारण समाज और व्यक्ति का सम्बन्ध इस संविदा तक ही सीमित है।

इस विश्वास के कारण लोगों का यह विचार बन गया है कि समाज एक मनुष्य द्वारा निर्मित वस्तु है। इसके कारण वे सदैव समाज और व्यक्ति में अन्तर करते हैं। इसका प्रभाव सामाजिक सम्बन्धों पर अच्छा नहीं पड़ता।

इस सिद्धान्त को कई कारणों से स्वीकार नहीं किया जा सकता। यह सिद्धान्त इस मिथ्या विश्वास पर आधारित है कि मानव समाज के बाहर मानव बने हैं या बन सकते हैं। उनका अभिप्राय यह है कि मनुष्य अपने व्यक्तित्व का विकास समाज में प्रवेश किये विना भी कर सकते हैं और वे समाज का निर्माण केवल अपनी-अपनी रक्षा के लिए करते हैं। आधुनिक परीक्षण इस विश्वास का अनुमोदन नहीं करते। आगे हम देखेंगे कि बिना समाज मनुष्य मानव बन ही नहीं सकता। इन विद्वानों ने दूसरी भूल यह की है कि उन्होंने राज्य और समाज में कोई अन्तर नहीं माना है। हो सकता है कि यह सिद्धान्त राज्य की उत्पत्ति पर कुछ प्रकाश डालता हो, परन्तु समाज के विषय में यह असत्य एवं भ्रमपूर्ण है। समाज और व्यक्ति का अस्तित्व पृथक-पृथक नहीं हो सकता।

(2) समाज का सावयव सिद्धान्त (The Organic Theory of Society)—इस सिद्धान्त के अनुसार समाज एक प्राणिशास्त्रीय व्यवस्था है। इसे उन्होंने एक वृहद् प्राणी माना है, जो ढाँचे और कार्यों में वैयक्तिक प्राणी के समान है और जिसका विकास भी उन्हीं नियमों के अनुसार होता है। जिस प्रकार मनुष्य मरता है, उसी प्रकार समाज भी मरता है। समाज के कोष्ठ (cells) मनुष्य हैं और उसकी धमनियाँ इत्यादि समितियाँ और संस्थाएँ इत्यादि हैं। इस सिद्धान्त के मानने वाले कुछ विद्वानों का मत है कि समाज भी प्राणिशास्त्रीय प्रक्रियाओं; जैसे—जन्म, बचपन, युवावस्था, वृद्धावस्था से होकर गुजरता है।

इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति कुछ नहीं है, वह केवल समाज का एक अंग मात्र है। समाज का मनुष्य पर पूरा-पूरा अधिकार है और समाज कुछ भी कर सकता है। समाज को एक वास्तविक वृहद् प्राणी कहना बहुत बड़ी भूल है। समाज की तुलना प्राणी से की जा सकती है, परन्तु उसे प्राणी समझ बैठना उचित नहीं।

ये दोनों सिद्धान्त एक-दूसरे के विरोधी हैं। संविदा सिद्धान्त (contract theory) के अनुसार समाज और मनुष्य का कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है और सावयव सिद्धान्त (organic theory) के अनुसार व्यक्ति और समाज में कोई अन्तर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं है। व्यक्ति समाज का एक भाग है, जिसका स्वतन्त्र कोई अस्तित्व ही नहीं है। वास्तविकता इस प्रकार की नहीं है। समाज और व्यक्ति का घनिष्ठ सम्बन्ध परन्तु दोनों का पृथक अस्तित्व है और दोनों एक-दूसरे पर आधारित हैं। मैकाइवर और पेज ने लिखा है, "कोई भी वास्तव में न पूर्ण व्यक्तिवादी हो सकता है और न पूर्ण समाजवादी ही, क्योंकि समाज और व्यक्ति एक-दूसरे पर प्रभाव डालते हैं और एक-दूसरे पर आधारित हैं।"[1]

व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध

(Relation between Individual and Society)

उपर्युक्त विवेचन एकांगी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। वास्तव में, व्यक्ति समाज से पृथक अस्तित्व रखता है, परन्तु उसका जो कुछ भी अस्तित्व है वह समाज के ही कारण है। अतः व्यक्ति और समाज एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। इस तथ्य को समझाने के लिए हमें और अधिक जानकारी की आवश्यकता है। हम इसका विवेचन करेंगे।

व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध का विश्लेषण (Analysis of the Relation of Individual and Society)—व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध के विश्लेषण के लिए हमें निम्न तथ्यों पर विचार करना होगा :

(1) व्यक्ति के पास जन्म के समय क्या साधन सामग्री होती है ? क्या साधन सामग्री समाज के अभाव में विकसित हो सकती है ?

(2) असामाजीकृत प्राणी (unsocialised organism) के पास क्या साधन सामग्री होती है ?

(3) क्या असामाजीकृत प्राणी समाज से असम्बन्धित रहकर व्यक्तित्व का विकास कर सकता है ?

(4) अहं (self) का विकास किस प्रकार होता है ? इसमें समाज का क्या भाग रहता है ?

(5) मानव समाज अथवा सामाजिक विरासत पर कितने अंश तक आश्रित है ?

इन तथ्यों के विवेचन से व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध स्पष्ट हो जाएगा।

(1) व्यक्ति की साधन सामग्री (Equipment of Man)—व्यक्ति के पास जन्म के समय कुछ वाहकाणु (genes) और वर्णसूत्र (chromosomes) होते

---

1 "No one can really be an absolute individualist, any more than anyone can be an absolute socialist. For the individual and society interact on one another and depend on one another."—R. M. MacIver, and C. H. Page, *Society*, p. 55.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिन्हें हम आनुवंशिकता (heredity) कहते हैं। इसके ही कारण मनुष्य में कुछ ऐसी शक्तियाँ होती हैं, जिन पर मनुष्य का जीवन आधारित रहता है। शक्तियों का विकास समाज (पर्यावरण) पर आधारित रहता है।[1]

(2) **असामाजीकृत प्राणी की साधन सामग्री** (Equipment of Unsocialised Organism)—असामाजीकृत प्राणी के पास जो साधन सामग्री होती है, उन्हें हम निम्न भागों में बाँट सकते हैं :

(i) **प्रतिक्षेप** (Reflexes)—प्राणी कुछ ऐसी प्रतिक्रियाएँ करता है, जो अपने आप होती हैं। इनमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता। आँख का तारा अधिक प्रकाश में सिकुड़ जाता है और कम प्रकाश में फैल जाता है। मूत्राशय (bladder) के फूल जाने पर मूत्र करना पड़ता है, एक अँगुली आँख की ओर आने पर आँख स्वतः बन्द हो जाती है, इत्यादि। प्रतिक्षेप की सम्पूर्ण सूची बनाना असम्भव है। सम्पूर्ण वात-नाड़ी-मण्डल (nervous system) प्रतिक्षेप की प्रकृति का है। साँस लेना, हृदय धड़कना, भूख लगना इत्यादि सब इसी के अन्तर्गत आते हैं। प्राणी बिना अपने प्रतिक्षेपों के जीवित नहीं रह सकता।

(ii) **मूल प्रवृतियाँ** (Instincts)—मनुष्य के अन्दर कुछ जन्मजात गुण होते हैं और उसका जीवन इन्हीं पर आधारित होता है। ये मूल-प्रवृत्तियाँ प्राणी के व्यवहार को प्रेरक शक्तियाँ होती हैं।

(iii) **चालक** (Drives)—प्राणी की कुछ आवश्यकताएँ ऐसी होती हैं जिनकी पूर्ति अवश्य होनी चाहिए। जब प्राणी की ये आवश्यकताएँ अनुभव होती हैं तो उसके अन्दर तनाव उत्पन्न हो जाता है और वह व्याकुल हो उठता है। यह व्याकुलता तभी समाप्त होती है। जब इसको किसी न किसी प्रकार संतुष्ट किया जाता है। ये चालक अधिकतर प्राणीशास्त्रीय आवश्यकताओं से सम्बन्धित होते हैं। उदाहरण के लिए निद्रा, क्षुधा, शौच, यौन सम्बन्ध इत्यादि।

प्रकृति प्राणी के अन्दर इस प्रकार का तनाव उत्पन्न करती है और जब तक इस तनाव को ढीला नहीं किया जायेगा, मनुष्य की व्याकुलता समाप्त न होगी। यह व्याकुलता कार्य करने के लिए बाध्य करती है। मान लीजिए किसी को भूख लगी है। भूख की तृप्ति करने के लिए भोजन करना आवश्यक है, परन्तु भोजन के रूप में क्या वस्तु खायी जायेगी और किस समय, किस स्थान पर एवं किस रीति से खायी जायेगी, इसका निश्चित करना सामाजिक पर्यावरण या समाज का कार्य है। चालक कार्य करने के लिए प्रेरित करता है, परन्तु क्या कार्य होगा, यह समाज पर निर्भर है। यह बात महत्त्वपूर्ण है, इसी पर व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध आधारित है। इस पर हम आगे प्रकाश डालेंगे।

---

1 देखिए राम बिहारी सिंह तोमर कृत, **समाजशास्त्र की रूपरेखा**, 'आनुवंशिकता और पर्यावरण' का अध्याय, श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(iv) **उद्वेग** (Emotions)—प्राणी में केवल चालक शक्ति ही नहीं बल्कि उसमें कुछ भावनाओं के अनुभव करने की क्षमता भी पायी जाती है। भावनाओं को हम उद्वेग कहते हैं। वाट्सन (Watson) के अनुसार छोटे बच्चों में तीन प्रकार के निश्चित उद्वेग पाये जाते हैं—भय (fear), क्रोध (rage) और स्नेह (affection), परन्तु आधुनिक परीक्षणों से ज्ञात होता है कि बच्चों में ये उद्वेग नहीं होते।

उद्वेग संस्कृति पर आधारित होते हैं। यह व्यक्ति पर समाज का प्रभाव होता है। अण्डमान द्वीप समूह के रहने वाले और न्यूजीलैण्ड के रहने वाले (Maory) आँसू बहाते हैं, जबकि दो मित्र कुछ समय बाद मिलते हैं या विरोधी गुट शान्ति का प्रस्ताव रखते हैं। इसी प्रकार अन्य उद्वेगों पर भी समाज की छाप रहती है।

(v) **आन्तरिक स्वभाव** (Temperament)—आन्तरिक स्वभाव के विषय में अभी तक न्यून ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। साधारणतया आन्तरिक स्वभाव का तात्पर्य चित्तवृत्ति (mood) समझा जाता है। प्राणी के उद्वेगों से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है।

आन्तरिक स्वभाव का वर्गीकरण सामान्यत: निम्न चार भागों में किया गया है : (1) कामुक (choleric of excitable), (2) मन्द (phlegmatic or dull), (3) उत्साह (sanguine or happy) और (4) हतोत्साहित (melancholic or sad)।

(vi) **क्षमता** (Capacity)—क्षमता मनुष्य की वह जन्मजात शक्ति है जो किसी विशिष्ट कार्य को करने के लिए अधिक प्रेरित करती है। जैसे किसी में गाने की क्षमता है तो उसे गायन विद्या सरलता से आ जायेगी। बुद्धि की क्षमता इन क्षमताओं में सबसे प्रमुख है। सर्वसाधारण का ऐसा विश्वास है कि कुछ लोगों में बुद्धि की क्षमता होती है और कुछ में कम। जिनमें अधिक बुद्धि होती है वे सरलता से किसी बात को समझ लेते हैं या कार्यों को शीघ्र सीख लेते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि मनुष्य में कुछ ऐसे अन्तर दिखायी पड़ते हैं, परन्तु यह निश्चय के साथ नहीं कहा जा सकता कि सीखने की क्षमता आन्तरिक क्षमता पर या सीखने की क्रियाओं पर जो समाज की व्यवस्था पर आधारित रहती हैं, ही आधारित है। कुछ विद्वानों का मत है कि यह आन्तरिक क्षमता सुप्रजनन कार्यक्रम (eugenic programme) के द्वारा विकसित की जा सकती है। यह कार्यक्रम समाज का प्रभाव होगा।

मनुष्य की क्षमताएँ मनुष्य द्वारा सामाजिक प्रभाव के कारण विकसित होती हैं। ये क्षमताएँ कितनी मात्रा में विकसित होंगी, यह समाज पर आधारित है।

अभी तक हमने मनुष्य की जन्मजात शक्तियों पर विचार किया है। मनुष्य के पास समाज में प्रवेश होने से पूर्व ये ही साधन रहते हैं। यह देखने के पूर्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समाज द्वारा व्यक्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है, हम समाजहीन मनुष्यों पर प्रकाश डालेंगे। समाजहीन मनुष्यों से हमारा अभिप्राय उन मनुष्यों से है जो मानव समाज से कोई सम्बन्ध नहीं रखते। यद्यपि ऐसे मनुष्य मिलना असम्भव या दुर्लभ है, जो मानव समाज में न रहते हों और न कभी रहे हों, तथापि दो-चार ऐसे उदाहरण मिले हैं जिन्होंने इस समस्या पर बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला है। इन पर विचार करने पर हमें ज्ञात करना होगा कि मनुष्य और समाज में कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है।

(3) **समाज से सम्बन्धित मनुष्य** (Human Beings Unrelated to Society)—समाज से सम्बन्धित मनुष्यों के कुछ उदाहरण मिले हैं, उनमें से कुछ निम्न हैं :

(i) दो बच्चे 1920 में एक भेड़िये की माँद में पाये गये। एक बच्चे की आयु दो वर्ष से कम थी और दूसरे की लगभग आठ वर्ष। पहला बच्चा मिलने के उपरान्त मर गया, परन्तु बड़ा बच्चा 1926 तक जीवित रहा। इसका नाम कमला रखा गया। कमला में कोई भी मानव व्यवहार के चिन्ह नहीं पाये जाते थे। वह चौपायों की तरह चलती थी, भेड़िये के समान गुर्राती थी, कोई भी भाषा नहीं बोल पाती थी और मनुष्यों को देखकर इस प्रकार घबराती थी, जिस तरह जंगली जानवर घबराते हैं। शनैः-शनैः उसे कुछ बोलना सिखाया गया, वस्त्र पहनाने और भोजन करने की भी शिक्षा दी गयी। अपने मरने के समय तक वह कुछ-कुछ मानव व्यवहार सीख सकी। मानव समाज का सम्पर्क न होने के कारण वह इस अवस्था में रही इसके फलस्वरूप उसके व्यक्तित्व का विकास न हो सका।[1]

(ii) अन्ना (Anna) नाम की एक अवैध बालिका (illegitimate child) अमरीका में थी। यह लड़की ऊपर की मंजिल के कमरे में बन्द रखी जाती थी। केवल जीवित रहने के लिए खाने को मिलता था। इसके अतिरिक्त उसकी कोई चिन्ता नहीं करता था। छह वर्ष की आयु के निकट उसे पाया गया और तब कमरे से बाहर निकाला गया। इस समय अन्ना न तो बात कर सकती थी, न चल ही सकती थी। कहने का अभिप्राय यह है कि वह ऐसा कोई भी कार्य नहीं कर सकती थी जिसमें बुद्धि की आवश्यकता पड़ती हो। ऐसा सोचा गया कि वह बहरी और अन्धी है। इससे स्पष्ट है कि एक मानव प्राणी जिसका समाज से कोई सम्बन्ध नहीं रहता, अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकता।

पाये जाने के साढ़े चार वर्ष उपरान्त उसकी मृत्यु हो गयी। इन साढ़े चार वर्षों में उसने काफी प्रगति की। वह कुछ शब्द बोल सकती थी और प्रयत्न करके बातचीत कर सकती थी। अपने हाथ धोती और दाँत साफ करती थी। वह ठीक

---

1 A. Gesel, *Wolf Children and Human Child*, New York (1939); and J. A. L. Sing and R. M. Zingg, *Wolf Children and Feral Man.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार से चलती और थोड़ी-बहुत दौड़ भी लेती थी। इस प्रकार समाज के ... में आने के कारण उसका विकास हो गया था।[1]

(iii) अन्ना के ही समान इजाबेल (Isabell) नाम की एक लड़की पायी ... उसकी माँ गूँगी थी। ये दोनों एक अँधेरे कमरे में रहते थे। इजाबेल का ... से कोई सम्बन्ध नहीं था, वह गूँगी थी। उसके पाये जाने पर उसे सिखाने ... प्रयत्न आरम्भ हुआ। धीरे-धीरे वह बोलने लगी, यद्यपि प्रारम्भ में सिखाने ... को बड़ा कष्ट हुआ और उन्हें कोई आशा नहीं थी कि वह बोल सकेगी। कुछ ... बाद वह साधारण बच्चों के समान प्रतीत होने लगी और उसको स्कूल में प्रवेश ... दिया गया। इससे स्पष्ट है कि व्यक्ति बिना समाज के अपने व्यक्तित्व का वि... नहीं कर सकता और बिना समाज के वह हाड़-माँस का पशु मात्र ही रहता है।

(4) व्यक्ति का सामाजीकरण (Socialization of the Individual) ... जन्म के उपरान्त प्राणीशास्त्रीय व्यक्ति (biological individual) को सामा... प्राणी या मानव (social being or human being) में परिवर्तित करने ... कार्य प्रारम्भ हो जाता है। इसी प्रक्रिया को समाजशास्त्र में सामाजीकरण (socialization) कहते हैं। सामाजीकरण की प्रक्रिया को दो प्रमुख मार्गों में वि...जित किया जाता है। प्रथम समूह का प्रभाव और द्वितीय संस्कृति (culture) ... प्रभाव। समूह (group) के प्रभाव से हमारा अभिप्राय यह है कि मनुष्य आप... एक-दूसरे पर जो प्रभाव डालते हैं। यह प्रभाव, जहाँ कहीं भी मनुष्य पाये जाते ... पाया जाता है। संस्कृति का प्रभाव भिन्न-भिन्न संस्कृतियों में भिन्न-भिन्न होता ... संस्कृति व्यक्तित्व में विशेषता उत्पन्न करती है।

समाज में विभिन्न सामाजिक प्रक्रियाएँ पायी जाती हैं और व्यक्ति ... प्रक्रियाओं का फल है। इनमें से प्रमुख प्रक्रियाएँ निम्नलिखित हैं :

(i) प्रशंसा और आरोप (praise and blame),
(ii) सहयोग और संघर्ष (co-operation and conflict),
(iii) सहिष्णुता (submission),
(iv) प्रभुत्व (ascendancy)।

इन प्रक्रियाओं के कारण मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण होता है। ... से बच्चा जिन सामाजिक प्रक्रियाओं का सामना करता है, उसी प्रकार का ... व्यक्तित्व हो जाता है।

व्यक्तित्व के विकास के अनेक साधन होते हैं। अनेक साधनों के द्वारा ... एक-दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। इसके प्रमुख साधन निम्न हैं :

---

[1] Davis K., *Human Society*, pp. 204-205, and also his arti... in American Journal of Sociology, Vol. 45 (Jan. 1940), pp. 55... 564 and Vol. 50 (March 1947), pp. 402—37.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(i) अनुकरण (imitation),
(ii) सुझाव (suggestion),
(iii) सहानुभूति (sympathy)।

इनके अतिरिक्त अनेक संस्थाएँ एव सामतियाँ भी सामाजीकरण का कार्य करती हैं। इनमें सबसे प्रमुख परिवार है। परिवार में बच्चा जन्म लेता है और उसका सामाजीकरण वहीं से प्रारम्भ होता है। टरमन (Terman)[1] ने लिखा है कि वे बच्चे ही विवाह को सुखपूर्ण बना सकते हैं, जिनके माता-पिता सुखी थे। सुखी विवाह का सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व सुखी परिवारों से सम्बन्धित होना है। हेली और ब्रोनर (Healy and Bronner)[2] का मत है कि बाल-अपराधी अधिकांश उन्हीं परिवारों में मिलते हैं जिनमें सामाजिक सम्बन्धों की पूर्ति में कभी न कभी अवश्य बाधा पड़ी होती है।

शिक्षा सामाजीकरण का प्रत्यक्ष उदाहरण है। बच्च का मूल्य एक बचत खाते (saving account) के समान होती है। शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य व्यक्तित्व का विकास होता है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य समाजोपयोगी बनता है।

(5) आत्मा या अहं का विकास (The Development of the Self or Ego)—सामाजीकरण का प्रमुख उद्देश्य आत्म विकास (development of the self or ego) है। 'अहं' (self) के रूप में ही व्यक्तिगत रूप धारण करता है और मस्तिष्क कार्य करता है।

अहं दैहिक प्राणी से भिन्न होता है। यह एक भौतिक वस्तु (physical entity) नहीं है, बल्कि एक मन:सम्बन्धी अस्तित्व (psychical entity) है। मीड (Mead)[3] ने लिखा है कि अहं की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वह प्रतिबिम्बित होने की शक्ति रखता है। इससे उसका अभिप्राय यह है कि अहं अपने लिए कर्ता (subject) और कर्म (object) दोनों ही हो सकता है। वह अपने पर विचार कर सकता है या आत्मज्ञानी हो सकता है। कभी-कभी वह अपने विषय में दूसरों की दृष्टि से देखता है। वह दूसरों का कार्य अपने हाथ में लेता है। इस प्रकार की कल्पना करना सीख जाता है कि वह स्वयं दूसरों को कैसा प्रतीत होता है।

अहं दूसरों को प्रसन्न करने में अपनी सन्तुष्टि समझता है। छोटे-छोटे बच्चे भी इसका महत्त्व समझने लगते हैं और अपने जीवन में इसका प्रयोग करते हैं। अहं एक सामाजिक ढाँचा है। मीड ने लिखा है कि "अहं जो अपने आप का ही कर्म बन सकता है, आवश्यक रूप से एक सामाजिक ढाँचा है और यह सामाजिक अनुभव पर

[1] Terman, Lewis, *Phychological Factors in Marital Happiness.*
[2] Healy and Bronner, *New Light on Delinquency and its Treatment.*
[3] George H. Mead, *Mind of Self and Society.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खड़ा है।"[1] इस अहं का विकास सामाजिक अनुभव के बाहर नहीं हो सकता। सामाजिक सम्बन्धों की देन है। व्यक्ति स्वयं से वार्तालाप कर सकता है। भी करता है और उत्तर भी देता है। इसके कारण यदि एक बार व्यक्ति का जीकरण (socialization) हो ज़ाय तो वह एकान्त में रहते हुए भी सामाजिक प्राणी अनुभव कर करता है। कुछ लोग ईश्वर की प्राप्ति के लिए वनों या पहाड़ों की चोटियों पर रहते हैं, परन्तु वे भी सामाजिक अनुभव का उठाते रहते हैं, क्योंकि उनका अहं (self) विकसित हो चुका होता है।

अहं में कर्ता (subject) 'मैं' (I) होता, और 'मुझे' (me) कर्मकारक है, 'मैं' वह स्वयं होता है और 'मुझे' वे दूसरों के व्यवहार होते हैं, जिन्हें वह करता है, या कल्पना करता है।

अहं के विकास के कारण ही व्यक्ति अपने अस्तित्व का अनुभव करता जिस व्यक्ति में अहं (self) का विकास नहीं हो पाता, वह मनुष्य बहुत निम्न का होता है, यदि उसे पशु कहा जाय तो अनुचित न होगा। शिक्षा के द्वारा अ विकास किया जाता है।

(6) संस्कृति और व्यक्ति (Culture and Individual)— व्यक्तित्व (personality) को जन्म देता है और संस्कृति उसके स्वरूप को नि करती है। संस्कृति एक कलाकार के समान व्यक्तित्व को अपनी कल्पनाओं के अ चित्रित करती है। समूह सामान्य सामाजिक लक्षणों का निर्माण करता है, संस्कृति इन सामान्य लक्षणों को एक निश्चित रूप देती है। क्षुधा की पूर्ति के कुछ न कुछ खाना एक प्राणिशास्त्रीय आवश्यकता है। संस्कृति इस आवश्यकता पूर्ति करने के लिए निश्चित मार्ग निर्धारित करती हैं। प्रातःकाल ये वस्तुएं होंगी और सायंकाल वे वस्तुएँ। भोजन नंगे शरीर, शुद्ध होकर चौके में करना पड़ेगा या मेज-कुर्सी पर बैठकर। इसी प्रकार प्रत्येक संस्कृति में निश्चित होते हैं और उस संस्कृति में रहने वाले मनुष्यों को उन मार्गों का अनुकरण पड़ता है। अब हम संस्कृति का व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव होता है, पर प्रकाश डालें

संस्कृति दो प्रकार की होती है—भौतिक संस्कृति (material culture) और अभौतिक संस्कृति (non-material culture)। अभौतिक संस्कृति और भौतिक संस्कृति के बीच अनेक विद्वानों ने अन्तर बताया है। दोनों का ही प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है।

भौतिक संस्कृति में मान लीजिए घड़ी का आविष्कार हुआ। जिस में घड़ी को महत्त्व दिया जायेगा, उसमें समय का महत्त्व अपने आप बढ़ जाये

---

1 "The self, as that which can be object to itself, is essential social structure, and it arises in social experience." Mead *cit.*, p. 140.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समय का पालन (punctuality) होने लगेगा। यूरोप (Europe) और अमरीका इत्यादि में समय का अत्यधिक पालन होता है, यह संस्कृति का प्रभाव है। भारत में अभी समय का महत्त्व नहीं बढ़ा है। धीरे-धीरे इसका महत्त्व बढ़ता जा रहा है। कार्यालय, विद्यालय एवं अन्य संस्थान समय से खुलते हैं और बन्द होते हैं। रेडियो, रेलवे इत्यादि सब ही घड़ी की गति के साथ चलते हैं। वन्य जातियों में लोग समय की तनिक भी चिन्ता नहीं करते। वे लोग घड़ी को मुफ्त में भी न खरीदेंगे, क्योंकि उनकी संस्कृति में इसका कोई महत्त्व नहीं है।

इसी प्रकार मनुष्य के अन्य व्यवहार भी भौतिक संस्कृति से प्रभावित होते हैं। कहीं पर धन की पूजा होती है और कहीं पर धन से घृणा की जाती है।

अभौतिक संस्कृति भी व्यक्तित्व पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालती है। भाषा के बिना व्यक्ति कुछ भी न होता। प्रत्येक संस्कृति में एक पृथक भाषा पायी जाती है। मनुष्य और पशु का एक प्रमुख अन्तर यह है कि मनुष्य बोल सकता है। बोलना उन्हीं लोगों से सीखा जा सकता है जो बोलने की शक्ति रखते हों। सामाजिक सम्बन्धों से दूर रहकर कोई भी व्यक्ति बोलना नहीं सीख सकता।

मानव की समाज पर विचित्र प्रकार की आश्रितता
(Man's Peculiar Dependence upon Society)

मानव की समाज पर विचित्र प्रकार की आश्रितता होती है। हर व्यक्ति समाज का प्रतिफल होता है और उसका स्वरूप सामाजिक सम्बन्धों पर आधारित होता है। समाज जिस प्रकार चाहता है उस प्रकार उसका सृजन करता है। मैकाइवर तथा पेज ने उचित ही लिखा है कि "प्रत्येक व्यक्ति सामाजिक सम्बन्ध की उपज (सन्तान) है। सामाजिक सम्बन्ध पूर्व स्थापित रूढ़ियों द्वारा निश्चित होते हैं।"[1]

मानव का सम्बन्ध समाज से और भी अधिक घनिष्ठ है। समाज केवल मानव के लिए पर्यावरण मात्र ही नहीं है। समाज और मानव का सम्बन्ध बीज और भूमि से भी अधिक घनिष्ठ है। समाज मानव की साधन-सामग्री एवं आनुवंशिकता को भी प्रभावित करता है। मानव के व्यक्तित्व के अङ्ग; जैसे—अभिवृत्तियाँ (attitudes), विश्वास (beliefs), मूल्य (values), आदर्श (ideals), नैतिक विचार (morals), इत्यादि समाज की ही देन होते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मानव समाज के बिना अपना विकास नहीं कर सकता। वह जो कुछ भी है, समाज के सन्दर्भ में ही है। मानव की समाज पर यह आश्रितता अरस्तू (Aristotle) के कथन 'मानव एक सामाजिक प्राणी है' (Man is social animal) की पुष्टि करता है। मैकाइवर तथा पेज ने उचित

1. "Every individual is the offspring of a social relationship, itself determined by pre-established mores." MacIver and Page, *Society*, p. 46.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही लिखा है कि "बिना समाज, बिना सामाजिक विरासत की सहायता के व्यक्ति व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सकता है और न ही उसके व्यक्तित्व का अस्ति... सकता है।"[1]

समाज व्यक्तियों पर आश्रित
(Society Dependent on Individuals)

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि व्यक्ति समाज के बिना कुछ नहीं हैं। यह चित्र का एक पक्ष है। अब हमें यह देखना है कि समाज क्या है? ... व्यक्तियों पर किस प्रकार आश्रित है? समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल ... समाज के सामाजिक सम्बन्ध व्यक्तियों की पारस्परिक अन्तःक्रियाओं का ... है। यदि व्यक्ति ही न हों, तो समाज कहाँ से आयेगा। समाज व्यक्तियों ... आधारित है।

जिस प्रकार व्यक्ति समाज का प्रतिफल है, उसी प्रकार समाज व्यक्तियों ... प्रतिफल है। समाज के स्वरूप में परिवर्तन व्यक्तियों की अभिवृत्तियों, विचा... मूल्यों, आदर्शों इत्यादि में परिवर्तन पर आधारित है। समाज कोई ऐसी वस्तु ... है जो स्थायी हो, समाज गतिशील है। व्यक्तियों में परिवर्तन के कारण समाज में ... परिवर्तन होते रहते हैं।

व्यक्ति और समाज एक-दूसरे पर आश्रित
(Individual and Society Dependent on Each Other)

व्यक्ति और समाज एक-दूसरे पर आश्रित हैं, एक-दूसरे के बिना ... अस्तित्व ही नहीं हो सकता। मानव बिना समाज के अपने व्यक्तित्व का विकास ... कर सकता और समाज बिना मानव हो ही नहीं सकता। दोनों एक-दूसरे ... प्रभावित करते रहते हैं। व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के पूरक हैं। मैकाइवर ... पेज ने उचित ही लिखा है कि "मानव प्रकृति केवल समाज में ही पनप सकती ... व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध एकांगी नहीं है। किसी एक की कल्पना के लिए ... का होना अनिवार्य है।"[2]

समाज की सीमाएँ
(Limits of Society)

समाज मानव पर प्रभाव डालता है और उसे अपने अनुरूप बनाने का ...

---

1 "......without society, without the support of the social he... the individual personality does not and cannot come into be... *Ibid*, p. 47.

2 "It is only in society that human nature can thrive. The rel... ship between individual and society is not one-sided, bot... essential for the comprehension of either." MacIver and ... *Society* p. 48.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करता है। व्यक्ति और समाज में घनिष्ठ सम्बन्ध है, परन्तु समाज की कुछ सीमाएँ भी हैं। इन सीमाओं (limits) पर भी विचार कर लेना आवश्यक है। समाज की प्रमुख सीमाएँ निम्न हैं :

(1) सामाजिक एकीकरण कभी पूर्ण नहीं होता (Social Integration is Never Complete)—व्यक्ति और समाज का एकीकरण कभी भी पूर्णरूपेण नहीं होता। व्यक्ति समूह से कुछ भिन्नता रखता है। एक समूह दूसरे समूह से भिन्नता रखता है। संघर्ष, झगड़े, विद्रोह, क्रान्तियाँ इत्यादि होती रहती हैं। प्रत्येक समूह में और समूहों के बीच स्थानों पर संघर्ष निरन्तर चलते रहते हैं। अनेक आधारों पर व्यक्तियों और समूहों में संघर्ष चलता रहता है। इनके कारण व्यक्ति और समाज में पूर्ण एकीकरण नहीं हो पाता है। मैकाइवर तथा पेज ने लिखा है कि "सामाजिक एकीकरण कभी पूर्ण नहीं होता, न ही वह कभी पूर्ण सहृदयतापूर्ण होता है।"[1]

(2) व्यक्ति को समाज से निराशा (Society's Frustration of the Individual)—कोई भी समाज हर व्यक्ति को पूर्णरूप से सन्तुष्ट नहीं कर सकता। ऐसा कौन-सा व्यक्ति होगा जिसने कभी न कभी समाज के नियन्त्रण के विरुद्ध आवाज न उठायी हो ? ऐसा कौन सा व्यक्ति होगा जिसने कभी न कभी समाज का विरोध न किया हो और वह समुदाय की रूढ़ियों द्वारा पराजित न कर दिया गया हो।

समाज व्यक्ति को अनेक कार्यों के करने से रोकता है। समाज के नियन्त्रण के अनेक माध्यम हैं। समाज केवल व्यक्ति की समाज-विरोधी इच्छाओं को ही नहीं दबाता है, अपितु अनेक मूल-प्रवृत्तियों, आवश्यकताओं एव आदर्शों का दमन कर देता है। इसके अनेक कारण होते हैं। कई बार समाज की असमानता के ही कारण ऐसा होता है। एक वर्ग कुछ कार्य कर सकता है, दूसरा वर्ग नहीं कर सकता है। इसे समाज की क्रूरता (tyranny of society) कह सकते हैं। कभी न कभी हर व्यक्ति समाज के इन बन्धनों से मुक्त होकर जीवन व्यतीत करना चाहता है, पर समाज की क्रूरता ऐसा करने नहीं देती है।

आदिम समाजों में तो वही दैनिक दिनचर्या (routine), समान जीवन, एकसा क्रम (standardisation) रहता ही है। आधुनिक जटिल समाज में भी वैयक्तिक विविधता का प्रश्न खड़ा होता जा रहा है। आधुनिक जटिल समाजों में बड़े-बड़े संगठन, वृहत् आर्थिक एवं राजनैतिक समितियाँ विकसित हो गयी हैं, जिनमें कार्य का इतना अधिक विशिष्टीकरण (specialisation) है कि व्यक्ति एक बड़ी मशीन का एक पुर्जा मात्र बनकर रह गया है। इस अवस्था में व्यक्ति के व्यक्तित्व

---

1 "Social integration is never complete, is never totally harmonious." MacIver and Page, *Society*, p. 53.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को निखरने का अवसर नहीं प्राप्त होता है, इससे व्यक्ति को बड़ी नि… होती है। व्यक्ति की रचनात्मक प्रवृत्तियों को मुखरित होने का अवसर नहीं प्र… होता है।

(3) **प्रमापीकरण की प्रक्रिया** (The Process of Standerdisation) … हर समाज में एक प्रमाप के अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होना प… है। आधुनिक समाज में मनोरंजन तक का प्रमापीकरण होता जा रहा है। ये … की एक बहुत बड़ी सीमा है।

प्रश्न

1. व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध का विश्लेषण कीजिए।
   (Discuss the relation of individual and society.)
2. समाज की सीमाओं का वर्णन कीजिए।
   (Discuss the limits of society.)
3. व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध का रूप क्या है ? 'आत्म' के उन्मज्जन… प्रक्रिया की व्याख्या कीजिए।
   (What is the form of relationship between individual a… society ? Analyse the process of the rise of self.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

27

मानव समूह

(The Human Group)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। यह कथन प्राचीनकाल से विद्वानों द्वारा अनुमोदित किया जाता है और आधुनिक युग के वैज्ञानिक भी इसको स्वीकार करते हैं। सामाजिक या झुण्ड में रहने की मूलप्रवृत्ति के कारण मनुष्य समूह में रहता है और सामाजिक प्राणी कहलाता है, यह युक्ति अधिकांश मनोवैज्ञानिकों द्वारा दी जाती है; परन्तु यह बड़ी सरल व्याख्या है। कोई भी व्यवहार जो सामान्य रूप से समस्त संसार में पाया जाता है उसे यह मानव प्रकृति समझ बैठते हैं। यह उसी प्रकार है जैसे कोई प्रश्न करे कि अफीम खाने से लोग सो क्यों जाते हैं? उत्तर दिया जाय कि अफीम में निद्रा लाने की शक्ति है।

समूह में व्यक्ति आदिकाल से रहता चला आ रहा है। ससार के किसी भी भाग में जाइए, समूह के दर्शन अवश्य होंगे। समूह मनुष्यों के जीवन में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। मनुष्य मूलप्रवृत्तियों के कारण नहीं तो किन कारणों से समूह में रहता है? इसका उत्तर सरल-सा है कि मनुष्य पैदा होते ही अन्य पशुओं के समान शीघ्र स्वतन्त्र एवं स्वावलम्बी नहीं हो पाता। उसकी यह अवस्था बचपन में ही नहीं रहती, वरन जैसे-जैसे आयु बढ़ती जाती है वैसे ही वैसे वह समूह के व्यक्तियों एव सामाजिक समूहों के अधीन एवं आश्रित होता जाता है। जन्म लेते ही माता इसकी देखरेख प्रारम्भ कर देती है। एक-दो वर्ष तक वह परिवार नाम के सामाजिक समूह की कृपा पर रहता है। बाल्यावस्था में साथियों का समूह; पाठशाला तथा अन्य समूहों की शरण लेनी पड़ती है। आयु के विकास के साथ-साथ मनुष्य के स्वार्थ बढ़ते जाते हैं और इन स्वार्थों की पूर्ति के लिए अन्य समूहों की शरण लेने को उसे बाध्य होना पड़ता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी इसलिए है कि उसकी इच्छाओं एवं स्वार्थों की पूर्ति केवल सामाजिक समूह द्वारा ही हो सकती है। अतः समूहों का निर्माण सामान्य स्वार्थों के कारण होता है। समूहों के निर्माण के विषय में लिखते हुए एडवर्ड सेपीर ने लिखा है, "किसी समूस का निर्माण इस तथ्य पर आधारित होता है कि कोई न कोई स्वार्थ समूह के सदस्यों को परस्पर बाँधे रखता है।"[1]

---

1 "Any group is constituted by the fact that there is some interest, which holds its members together." Edward Sapir, *'Groups'*, in *Encyclopaedia of Social Sciences*, Vol. 7, p. 179.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामूहिक सम्बन्ध स्थापित होने के अवसर—सामूहिक सम्बन्ध स्थापि... के अनेक अवसर मिलते हैं। उनकी सूची बनाना असम्भव है, फिर भी सोरो... जिमरमैन और गाल्पिन ने इस सम्बन्ध में एक संक्षिप्त सूची निम्न प्रकार दी है[1]

(1) रक्त के सम्बन्ध एव शारीरिक या कथित पूर्वजों से उत्पत्ति, (2) ... (3) धर्म या जादू-टोने में समान विश्वास, (4) भाषा की समानता, (5) ... रिवाजों एवं रूढ़ियों की समानता, (6) एक ही भूमि का प्रयोग या ... (7) पड़ोस, (8) सामान्य उत्तरदायित्व, (9) सामान्य व्यवसाय, (10) ... स्वामी के आधीन होना, (11) एक ही सामाजिक संस्था से सम्बन्धित ... (12) पारस्परिक सहयोग, (13) एक ही शत्रु का होना और (14) साथ ... रहना और कार्य करना।

सामाजिक समूह का अर्थ—सामाजिक समूह की परिभाषा करते ... विलियम्स ने लिखा है, "एक सामाजिक समूह मनुष्यों के उस निश्चित संग्रह को ... हैं जो परस्पर सम्बन्धित कार्य करते हैं और जो अपने द्वारा या दूसरों के द्वारा ... अन्त:क्रिया की इकाई के रूप में मान्य होते।"[2]

सामाजिक समूह की परिभाषा आगबर्न और निमकॉफ ने इन शब्दों ... है, "जब कभी दो या अधिक व्यक्ति एकत्रित हो जाते हैं और एक-दूसरे पर ... डालते हैं तो वे एक सामाजिक समूह का निर्माण करते हैं।"[3] केवल व्यक्ति... झुण्ड को ही समूह नहीं कहा जा सकता। समूह बनने के लिए आवश्यक है कि ... दूसरे पर प्रभाव डालें। इसी प्रभाव डालने वाली प्रक्रिया को मैकाइवर और ... सामाजिक सम्बन्ध कहा है। इसके लिए दो आवश्यक तत्त्व अवश्य होने ... प्रथम, पारस्परिक सम्बन्ध की पारस्परिकता और द्वितीय, एक-दूसरे के प्रति ... रूकता। वे लिखते हैं, "समूह से हमारा तात्पर्य व्यक्तियों के उस संकलन से है ... एक-दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध रखते हैं।"[4]

---

1 P. Sorokin, C. C. Zimmerman, C. J. Grolpin (eds.), *A Syste... Source Book in Rural Sociology*, Vol. I, pp. 307-308.

2 "A social group is given aggregate of people playing interr... roles and recognized by themselves or others as a unit of i... action." Robin M. Williams, Journal '*American Society So... logical Interpretation* (1951), p. 446.

3 "Whenever two or more individuals come together and influ... one another, they may be said to constitute a social grou... W. F. Ogburn and M. F. Nimkoff, *A Handbook of Socio...* p. 172.

4 "......by group we mean any collection of human beings w... are brought into social relationships with one another, R. ... MacIver and C. H. Page, *Society*, p. 213.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पेड़ों के एक झुण्ड को, जिनमें शारीरिक निकटता तो पायी जाती है, परन्तु पारस्परिक सम्बन्ध द्वारा वे एक-दूसरे को प्रभावित नहीं करते, हम समूह नहीं बल्कि झुण्ड कहते हैं। यह अत्यन्त कठिन है कि मनुष्य एकत्रित हों और एक-दूसरे पर प्रभाव न डालें। नवजात शिशुओं का अलग प्रश्न है। वे एक ही स्थान पर रहते हुए भी एक-दूसरे पर कोई प्रभाव नहीं डालते; क्योंकि जन्म के कुछ समय उपरान्त न तो वे सुनने योग्य होते हैं और न देखने योग्य ही। अतः साधारणतया जब भी मनुष्य एकत्रित होते हैं तो समूह का निर्माण हो जाता है। कुछ लोगों ने समान आयु, आय या बुद्धि के व्यक्तियों को समूह कहने की चेष्टा की है, परन्तु उन्हें समूह नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उनके बीच कोई भी सामाजिक सम्बन्ध नहीं रहता।

सामाजिक समूह के आवश्यक तत्व—एक सामाजिक समूह के निम्न आवश्यक तत्व होते हैं: (1) दो या अधिक व्यक्तियों का होना, (2) इन व्यक्तियों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्पर्क का होना, (3) इनके बीच में कोई न कोई स्वार्थ या हित का होना। इस हित के कारण ही वे एक-दूसरे से सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा करेंगे।

सामाजिक समूहों का वर्गीकरण
(Classification of Social Groups)

सामाजिक समूह का वर्गीकरण करना बड़ा कठिन है, फिर भी वर्गीकरण करने को अनेक प्रयत्न किये गये हैं। उनमें से कुछ निम्न हैं:

(1) **समूह के प्रमुख कार्यों के आधार पर**—कुछ विद्वानों ने समूहों का वर्गीकरण उनके प्रमुख कार्य के आधार पर करने की चेष्टा की है। इसके अनुसार उन्होंने समूह को धार्मिक समूह, राजनैतिक समूह, मनोरंजन समूह, शिक्षण समूह, इत्यादि में विभाजित किया है।

(2) **स्थिरता के आधार पर**—स्थिरता के आधार पर सामाजिक समूहों को दो प्रमुख भागों में विभक्त किया गया है। प्रथम भाग में वे समूह आते हैं जो अस्थिर हैं; जैसे—भीड़, श्रोतागण आदि। ये अस्थिर समूह कहलाते हैं। द्वितीय भाग में वे समूह आते हैं, जो स्थिर हैं; जैसे—परिवार, विश्वविद्यालय आदि। इन्हें स्थिर समूह कहते हैं।

(3) **संख्या के आधार पर**—जर्मन समाजशास्त्री जार्ज सिमल और उसके अनुयायी वानविजे और बेकर[1] ने संख्या के आधार पर समूहों का विभाजन किया है।

(4) **कुछ अन्य वर्गीकरण**—एलवुड ने स्वीकृत और अस्वीकृत में, गिडिंग्स ने सार्वजनिक और व्यक्तिगत में, मिलर ने लम्बगान (vertical) और समतल (horizontal) में समूहों को विभक्त किया है। कुछ विद्वानों ने आयु और लिंग के

[1] Von Wiese and Becker, *Systematic Sociology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधार पर भी वर्गीकरण किये हैं। मकाइवर और पेज द्वारा भी वर्गीकरण की एक योजना प्रस्तुत की गयी है। वह अनेक दृष्टियों से मान्य है।

(5) **व्यवहारों के आधार पर**—व्यवहारों के आधार पर समूहों का वर्गीकरण दो भागों में किया गया है—प्रथम, अन्तःसमूह; द्वितीय, वाह्य समूह।

अन्तः समूह तथा बाह्य समूह (In-Group and Out-Group)—अन्तः समूह के शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम समनर ने 1907 ई० में किया था। तब से इसका प्रयोग समस्त समाजशास्त्रियों द्वारा होता आ रहा है। बाद में अन्तः समूह या 'हम समूह' शब्द का विरोधाभासी शब्द बाह्य समूह या 'वे समूह' या दूसरों का समूह इत्यादि शब्दों का प्रयोग आधुनिक समाजशास्त्रीय साहित्य का सामान्य लक्षण हो गया है।

यह वर्गीकरण वास्तविक जीवन में बड़ा महत्त्वपूर्ण है। मनुष्यों के व्यवहार को निश्चित करने में इसने महत्त्वपूर्ण भाग लिया है। अतः समूह के प्रति 'हम की भावना' का विकास हो जाता है और ऐसी मनोवृत्तियाँ विकसित हो जाती हैं कि मनुष्य यह सोचने लगता है कि यह मेरा समूह है। इसके सदस्य मेरे मित्र और हितैषी हैं और इस समूह के उद्देश्य, हित एव स्वार्थ, मेरे हित एवं उद्देश्य हैं। एक अलगाव की मनोवृत्ति का विकास हो जाता है। हम अपने व्यक्तित्व को अन्तः समूह से पृथक नहीं समझते। यह भावना तीव्रता से घटती-बढ़ती रहती है। उन अन्तःसमूहों में अत्याधिक तीव्रता होती है जिनमें आमने-सामने के सम्बन्ध पाये जाते हैं; जैसे—परिवार और मित्र मण्डली इत्यादि।

अन्तः समूह के सदस्य यह विश्वास करते हैं कि उनका व्यक्तिगत कल्याण समूह के अन्य सदस्यों के साथ किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ है। अन्तः समूह के सदस्यों के बीच अत्यधिक सहानुभूति पायी जाती है। यदि सड़क पर कुछ लड़के लड़ रहे हों तो एक व्यक्ति बड़े ही दार्शनिक एवं स्थूल दृष्टिकोण से विचार करेगा। यदि वे लड़के उसके पुत्र या भाई या किसी दूसरे अन्तः समूह के सदस्य से लड़ रहे हों तो...

मानव समूहों के वर्गीकरण का आधार

समूह	समूहों के वर्गीकरण का आधार
1. प्रमुख वर्ग : सीमा की एकता। व्यापक स्वरूप : समुदाय। विशिष्ट स्वरूप, : वन्य जाति, राष्ट्र, प्रदेश, नगर, गाँव, पड़ोस।	1. प्रमुख आधार : (अ) हि... अधिकांश पूर्ति; (ब) निश्चित ...
2. प्रमुख वर्ग : असगठित हितों के प्रति जागरूक इकाइयाँ। व्यापक स्वरूप : (i) सामाजिक वर्ग	2. प्रमुख आधार : (अ) सद... सामान्य व्यवहार; (ब) ... सामाजिक संगठन।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...शिष्ट स्वरूप : जाति, वर्ग, पूँजीवादी	अतिरिक्त आधार : (अ) एक समूह से दूसरे समूह में जाने की योग्यता; (ब) स्थिति, प्रतिष्ठा, आर्थिक स्तर एवं अवसर में भिन्नता।
व्यापक स्वरूप : (ii) प्रजाति समूह। ...शिष्ट स्वरूप : रंग समूह, शरणार्थी ...ह, राष्ट्रीय समूह।	अतिरिक्त आधार : (अ) समूह, उत्पत्ति, जाति, रहने की अवधि, शारीरिक लक्षण।
...पक स्वरूप : (iii) भीड़। ...शिष्ट स्वरूप : समान रुचि वाली भीड़	अतिरिक्त आधार : (अ) अस्थायी हित, (ब) अस्थायी समूह।
3. प्रमुख वर्ग : संगठित हितों के ...ति जागरूक इकाइयाँ। ...पक स्वरूप : ...) प्राथमिक समूह ...शिष्ट स्वरूप : परिवार, क्लब, गुट ...पक स्वरूप : (ii) महासमितियाँ ...शिष्ट स्वरूप : ...ज्य, चर्च, श्रमिक संगठन।	3. प्रमुख आधार : (अ) हितों की निश्चित सीमा, (ब) निश्चित समाजिक सगठन। अतिरिक्त आधार : (अ) सदस्यता की निश्चित सीमा; (ब) सदस्यों के मध्य वैयक्तिक सम्बन्ध। अतिरिक्त आधार : (अ) तुलनात्मक दृष्टि से असीमित सदस्यता; (ब) निश्चित औपचारिक सामाजिक संगठन; (स) अवैयक्तिक सम्बन्ध।

...चार करने की शैली तुरन्त बदल जायेगी और उसके उद्वेग उत्तेजित हो उठेंगे। ...स्तान में अणु बम गिरा। इस सूचना को प्रत्येक भारतीय ने पढ़ा होगा; परन्तु उन ...र कोई विशेष प्रभाव नहीं हुआ। उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिले में बाढ़ आने से वे ...धिक चिन्तित हो गये और कई सहायता कोष खोल दिये।

अन्त: समूह की विचारधारा सदस्यों में अहं की भावना को जागृत कर देती ...। इस भावना के कारण मनुष्य अपने समूह को सर्वोच्च स्थान देता है और इसके ...दस्यों के साथ अधिनात्मक व्यवहार (preferential behaviour) करता है। ...ह अपनी संस्कृति को सर्वोच्च संस्कृति, अपने देश को ईश्वर का देश, अपनी भाषा ...ो अति सरल एवं प्राकृतिक, अपने रीति-रिवाज, रूढ़ियों एवं संस्थाओं को ...स्वाभाविक एवं सर्वोपरि मानता है। इस भावना को अहंवाद (ethnocentrism) ...कहते हैं।

उसका व्यवहार दूसरे समूहों के साथ पक्षपातपूर्ण होता है। उदाहरणस्वरूप, ...म हिन्दू हैं, वे म्लेच्छ हैं। हम कांग्रेसी हैं, वे रूढ़िवादी, अप्रगतिशील एवं अंध-...विश्वासी जनसंघी हैं। हम आध्यात्मवाद के पुजारी हैं और वे तृष्णा एवं लिप्सा में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फँसे हुए भौतिकवादी हैं। इस प्रकार के व्यंगों का प्रयोग बाह्य समूह के साथ करते हैं।

बाह्य समूह के प्रति व्यवहार (Attitude towards Out-Group) समूह के साथ मनुष्य स्वाभाविक घृणा का व्यवहार करता है, इस भावना से मनुष्य दूसरों को अपना शत्रु माना बैठता है। उदाहरण के लिए, जब महाविद्यालय व्यावर की वॉलीबाल की टीम अजमेर पुलिस से मैच खेलती राजकीय विद्यालय के विद्यार्थी पुलिस वालों को अपना शत्रु समझ बैठते हैं पुलिस वाले हारते हैं तो विद्यार्थी प्रसन्न होते हैं, आवाजें लगाते हैं और करतल करते हैं, या यों कहें कि अति प्रसन्न होते हैं, परन्तु जब पुलिस वाले जीतते इन विद्यार्थियों के मुँह पर बारह बज जाते हैं। इन व्यवहारों की विभिन्न विशेष व्याख्या हम अगले अध्यायों में करेंगे।

महत्ता एवं सम्बन्धों के स्वरूप के प्रकार के आधार पर (On the Basis of Importance and Type of Relationship and Size)—सामाजिक समूहों का वर्गीकरण आकार, महत्ता एवं सम्बन्धों के आधार पर दो भागों में किया गया समाजशास्त्र की दृष्टि से वह वर्गीकरण अति महत्त्वपूर्ण है। इसके अनुसार समूह प्राथमिक और द्वैतीयिक समूह (primary and secondary group) कहा गया है। प्राथमिक शब्द का प्रयोग कूले[1] ने सन् 1909 में किया। द्वैतीयिक का प्रयोग कूले ने अपनी पुस्तक में नहीं किया; परन्तु उसका अभिप्राय कूले का इसी से था।

प्राथमिक और द्वैतीयक समूह
(Primary and Secondary Group)

कूले द्वारा की गयी परिभाषा और इन समूहों का उच्चकोटि का वर्णन समस्त समाजशास्त्रियों द्वारा माना जाता है। इस वर्गीकरण को किसी न रूप में प्रत्येक समाजशास्त्री ने माना है। जो वर्गीकरण कूले ने किया उसी के के अति निकट एक वर्गीकरण टॉनिज ने सन् 1887 में यूरोप में किया। जैमिनशाफ्ट (Gemeinschaft) और जेसेलशाफ्ट (Gesellschaft) के द्वारा क्रमशः प्राथमिक और द्वैतीयक समूहों को पुकारा। इसे भली प्रकार से लिए सर्वप्रथम हम प्राथमिक समूह की परिभाषा पर विचार करेंगे।

प्राथमिक समूह की परिभाषा (Definition of Primary Group) कूले ने प्राथमिक समूह की परिभाषा निम्न शब्दों में की है, "प्राथमिक समूहों से तात्पर्य उन समूहों से है जो घनिष्ठ आमने-सामने के सम्बन्ध एवं सहयोग द्वारा

---

[1] Charles H. Cooley, *Social Organisation* (1909).

RajGuru Math, Shiyala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। वे प्राथमिक कई दृष्टिकोणों से हैं, परन्तु मुख्यतया इस कारण से कि वे व्यक्ति की सामाजिक प्रकृति एवं आदर्शों के निर्माण करने में मौलिक हैं। घनिष्ठ सम्बन्धों के परिणामस्वरूप.........व्यक्तियों का, एक सामान्य पूर्णता में एक प्रकार से, मिल जाना होता है, जिसके फलस्वरूप स्वयं व्यक्तित्व कम से कम कई कार्यों के लिए समूह का सामान्य जीवन और उद्देश्य हो जाता है। सम्भवतः इस पूर्णता के वर्णन करने की अति सरल विधि का यह कहना है कि यह 'हम' हैं, इसमें उस प्रकार की सहानुभूति और पारस्परिक अभिज्ञान सन्निहित होता है जिसके लिए 'हम' स्वाभाविक अभिव्यक्ति है।"[1]

प्राथमिक समूह के लिए आवश्यक है कि प्राथमिक सम्बन्ध पाया जाये। प्राथमिक सम्बन्ध का सबसे आवश्यक तत्त्व घनिष्ठता है। इसके उदाहरण; परिवार, क्रीड़ा समूह, पड़ोस और मित्र मण्डलीय हैं। ये समूह इसलिए प्राथमिक कहलाते हैं कि समय और महत्त्व दोनों में ही प्रथम हैं।

समयानुसार वे इस प्रकार प्रथम हैं: बच्चा जन्म लेता है और इन समूहों में रहने के लिए बाध्य किया जाता है। परिवार कुछ वर्षों तक उसका संसार रहता है। आगे बढ़कर वह पड़ोस, क्रीड़ा समूह और मित्र मण्डली के समूहों का सदस्य बनता है। अतः ये समूह समय में प्रथम हैं।

महत्त्व के दृष्टिकोण से भी ये समूह प्रथम हैं। आधुनिक मनोविज्ञान ने जो प्रकाश व्यक्तित्व के विकास पर डाला है उससे स्पष्ट है कि ये समूह—परिवार, क्रीड़ा समूह, पड़ोस, मित्र-मण्डली, संगति या वे समूह जिनमें घनिष्ठ वैयक्तिक सम्बन्ध पाये जाते हैं—व्यक्ति के विकास में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं। यदि हम यह कहें कि व्यक्ति जो कुछ भी है वह इन समूहों के प्रभाव का परिणाम है तो अतिशयोक्ति न होगी। कूले ने भी इस विचार का समर्थन करते हुए लिखा है, "हमारे चारों ओर संसार में ऐसी समिति स्पष्टतया मानव स्वभाव की नर्सरी है..."[2]

---

[1] "By primary groups I mean those characterized by intimate face to face association and co-operation. They are primary in several senses, but chiefly in that they are fundamental in forming the social nature and ideals of the individual. The result of intimate association......is a certain fusion of individualities in a common whole, so that one's very self, for many purposes at least, is the common life and purpose of the group. Perhaps the simplest way of describing the wholeness is by saying that it is a 'we'; it involves the sort of sympathy and mutual identification for which 'we' is the natural expression." C. H. Cooley, *Social Organisation*, p. 23.

[2] "Such association is clearly the nursery of human nature in the world about us......" *Ibid*, p. 24.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राथमिक समूहों की परिस्थितियाँ

प्राथमिक समूह के लिए कुछ शारीरिक और मानसिक परिस्थिति आवश्यक हैं। उनमें से कुछ परिस्थितियों पर हम यहाँ विचार करेंगे।

शारीरिक परिस्थितियाँ (Physical Conditions)—कूले की के अनुसार आमने-सामने का सम्बन्ध होना आवश्यक है। कूले ने इस जोर अवश्य दिया है; परन्तु केवल आमने-सामने के सम्बन्ध से ही प्राथमिक निर्माण नहीं होता। इसके लिए तीन परिस्थितियों का होना अनिवार्य है, वे लघुता और निरन्तरता हैं। इन पर हम पृथक-पृथक विचार करेंगे।

यह आवश्यक नहीं है कि प्राथमिक समूह के निर्माण के लिए समीपता अवश्य हो। इमरसन और कारलाइल की मित्रता शारीरिक आधारित नहीं थी। एक रुचि के बहुत कम लोग थे। इसलिए उनके परिचय, निरन्तरता के कारण मित्रता में परिवर्तित हो गया। रावर्ट ब्राउनिं एलिजाबेथ बेरट का एक-दूसरे के प्रति रोमांचकारी प्रेम एवं रुचि शारीरिक के कारण नहीं विकसित हुई, बल्कि एक-दूसरे की काव्य रचनाओं के कारण प्रकार के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं।

(1) शारीरिक समीपता (Physical Closeness or Proxi घनिष्ठ सम्बन्ध होने के लिए शारीरिक समीपता एक आवश्यक तत्त्व है। के साथ रहना, खाना, पीना, सोना, उठना, बैठना, लड़ना, झगड़ना एवं आदान-प्रदान करना घनिष्ठता को विकसित करता है। लोगों के बीच उत्पन्न होने के लिए मिलना-जुलना आवश्यक है।

शारीरिक समीपता प्राथमिक समूह के निर्माण के लिए अवसर प्रद है। परन्तु इस अवसर का फल निकलेगा या नहीं। यह किसी समाज की आधारित होता है। साथ ही साथ समूह की लघुता और सम्बन्ध की निरन्त स्थिरता पर भी आधारित होता है। एक मेले में हजारों व्यक्तियों में समीपता रहती है, परन्तु किसी प्राथमिक समूह का निर्माण नहीं होता।

(2) समूह की लघुता (Smallness of the Group)—आमने के सम्बन्ध एवं शारीरिक समीपता के साथ-साथ समूह की लघुता भी आ एक समूह में जितने कम सदस्य होंगे उतना ही अच्छा ज्ञानेन्द्रिय सम्बन्ध सकेगा और घनिष्ठता के निर्माण में सहायता मिलेगी; समूह जितना छोटा ही घनिष्ठता शीघ्रता से विकसित हो सकेगी। एक छोटे से समूह में सदस्य को व्यक्तिगत रूप से जान सकते हैं और समूह के निर्णयों में प्रत्यक्ष भाग घनिष्ठता का निर्माण करने में छोटे समूह को समय कम लगता है।

एक वक्ता हजार लोगों के सामने भाषण देता है। इसमें शारीरिक एवं आमने-सामने का सम्बन्ध पाया जाता है। परन्तु समूह के बड़े होने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राथमिक समूह का निर्माण नहीं हो पाता, क्योंकि इतने थोड़े समय में वे एक-दूसरे के साथ घनिष्ठता स्थापित नहीं कर पाते।

(3) **सम्बन्ध की निरन्तरता एवं स्थिरता** (Continuation and Permanency of the Relationship)—घनिष्ठता सम्बन्ध की निरन्तरता एवं स्थिरता पर आधारित होती है। जितने अधिक समय तक वे साथ-साथ रहते हैं उतनी ही घनिष्ठता बढ़ती जाती है। कई वार तो ऐसा होता है कि दो शत्रु भी सम्बन्ध की निरन्तरता एवं स्थिरता के कारण एक-दूसरे को चाहने लगते हैं और एक-दूसरे की अनुपस्थिति खलने लगती है। एक पति-पत्नी चाहे वर्षों तक आपस में लड़ते-झगड़ते ही रहे हों, परन्तु अधिक समय तक साथ रहने के कारण एक-दूसरे के बिना उनका रहना कठिन हो जाता है।

मानसिक परिस्थितियाँ (Mental Conditions)—शारीरिक परिस्थितियाँ प्राथमिक समूह के निर्माण के लिए अवसर प्रदान करती हैं परन्तु इन अवसरों से प्राथमिक समूह को जन्म मिलेगा या नहीं, यह मानसिक परिस्थितियों पर आधारित रहता है। मानसिक अवस्था में एक प्रकार का प्राथमिक सम्बन्ध पाया जाता है। प्राथमिक सम्बन्ध में कई विशेषताएँ होती है जिन पर अब हम विचार करेंगे।

(1) **सम उद्देश्य** (Indentity of Ends)—प्राथमिक सम्बन्ध में हम उद्देश्य पर दो दृष्टिकोणों से विचार करते हैं। इस प्रकार की विचारधारा घनिष्ठता की द्योतक हैं। प्रथम दृष्टिकोण तो यह होता है कि सदस्यों के समान उद्देश्य एवं इच्छाएँ होती है और इस कारण बिना किसी मतभेद के साथ-साथ वे कार्य करते हुए उन उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं। वे संसार को एक ही दृष्टिकोण में देखते हैं, इसलिए उन्हें सब वस्तुएँ एकसी दिखायी देती हैं। उदाहरणस्वरूप, दो मित्र मिलकर किसी सामान्य उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। वे दोनों ही परिश्रम करते हैं और किसी प्रकार का विभेद नहीं करते। दूसरा दृष्टिकोण यह होता है कि वे एक-दूसरे के कल्याण एवं लाभ को ही उद्देश्य मान लेते हैं। इसका सुन्दरतम एवं सर्वश्रेष्ठ उदाहरण माता है। माता अपने बच्चों के हित को अपना हित मान लेती है। स्वयं अनेक कष्ट उठाती है, परन्तु अपने बच्चों को सुखी एवं प्रसन्न देखकर पुलकित हो उठती है।

उद्देश्यों की समानता कभी सम्पूर्ण रूप से नहीं हो पाती, फिर भी प्राथमिक समूहों में अधिकांश रूप से उद्देश्यों की समानता पायी जाती है। सदस्य अपने व्यक्तित्व को प्राथमिक समूह में विलीन कर देते हैं। 'मैं' की भावना के स्थान पर 'हम' की भावना विकसित हो जाती है। इसके कारण ये सम्बन्ध परोपकारी प्रकृति धारण कर लेते हैं।

(2) **सम्बन्ध स्वयं साध्य होता है** (The Relationship is End Itself)—आदर्श प्राथमिक सम्बन्ध किसी विशेष उद्देश्य के साधन के रूप में नहीं होता है। यदि मित्रता किसी विशेष उद्देश्य पूर्ति के हेतु की जाती है तो उसे मित्रता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं कहते, अपितु स्वार्थपरता कहते हैं। वैवाहिक सम्बन्ध केवल आर्थिक लाभ ... कामना पूर्ति के लिए ही नहीं होता, परन्तु उसके सम्पूर्ण जीवन के उद्देश्य ... जाते हैं। ये सम्बन्ध अनिवार्य रूप से कोई स्वीकार नहीं करता, ये स्वयं विक... हो जाते हैं।

(3) प्राथमिक सम्बन्ध वैयक्तिक होते हैं (Primary Relationships are Personal)—प्राथमिक सम्बन्ध वैयक्तिक होते हैं। वैयक्तिक सम्बन्ध ... अभिप्राय है कि सम्बन्ध व्यक्ति के महत्त्व पर आधारित होता है, न कि उसके ... और कार्यों पर। वैयक्तिक सम्बन्ध हस्तान्तरित नहीं किये जा सकते। एक व्यक्ति ... स्थान पर दूसरे को नहीं रखा जा सकता। किंग्सले डेविस ने लिखा है, "एक नये ... वैयक्तिक सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है, एक पुराना वैयक्तिक सम्बन्ध समाप्त ... किया जा सकता है, सम्भवतया वह चालक शक्ति जिसने सम्बन्ध को प्रारम्भ करा... था दूसरे को मार्ग दे सकती है, परन्तु एक ही सम्बन्ध से व्यक्ति के स्थान पर दू... का प्रतिस्थापन नहीं किया जा सकता।"[1]

जब ये सम्बन्ध बदले जा सकते हों और व्यक्ति की कोई चिन्ता न होती ... तो ये अवैयक्तिक सम्बन्ध कहलाते हैं। मिठाई किसी भी दुकान से ली जा सकती है; यह जरूरी नहीं कि कालूराम हलवाई ही हो, उसके स्थान पर कोई भी मिठाई ... तो कोई आपत्ति न होगी। यदि एक मशीन लगा दी जाय और वह मिठाई देने ... कार्य कर सके तो किसी को आपत्ति न होगी। यह सम्बन्ध अवैयक्तिक है। इसके विपरीत, एक प्रेमी की प्रेमिका के स्थान पर दूसरी उससे अधिक सुन्दर एवं गुणी ... को लाकर प्रेमी को कहा जाय कि इसे ही अपनी प्रेमिका मान लो, यह अन... प्रतीत होता है। यह वैयक्तिक सम्बन्ध है, जिसमें उसी व्यक्ति का ही महत्त्व है ... 'वह' ही होना चाहिए, उसका प्रतिस्थापन नहीं किया जा सकता।

(4) प्राथमिक सम्बन्ध सम्पूर्ण होता है (Primary Relationship is Inclusive)—प्राथमिक सम्बन्ध में व्यक्ति सम्पूर्ण रूप से भाग लेता है। घनिष्ठ सम्बन्ध के कारण प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे को भली प्रकार से जान जाते हैं। ... व्यक्तित्व की सम्पूर्णता पायी जाती है। मनुष्य केवल एक कार्य से नहीं; परन्तु ... कार्यों से सम्बन्ध रखता है।

(5) प्राथमिक सम्बन्ध स्वेच्छानुरूप होता है (Primary Relationship is Spontaneous)—प्राथमिक सम्बन्ध सम्पूर्ण रूप से स्वेच्छा पर आधारित है ...

---

[1] A new personal relationship can be established, an old one ... be abandoned, perhaps the driving force that initiated the rela... tionship may give way to another, but no substitution can ... made of one individual for another in the same relationship. Kingsley Davis, *Human Society*, p. 296.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

। इसमें कोई भी व्यक्ति कभी भी अपना सम्बन्ध तोड़ सकता है या जोड़ सकता । इसके लिए वह किन्हीं भी नियमों से बँधा हुआ नहीं होता। यह एक प्रकार का समझौता है जो किसी विशिष्ट कार्य के लिए नहीं अपितु हृदय की पुकार पर या जाता है और जब तक मन मिलता रहे तब तक स्थापित रहता है। इसमें किसी ार की शक्ति का प्रयोग नहीं होता और न किया ही जा सकता है।

(6) **प्राथमिक सम्बन्ध में अत्यधिक नियन्त्रण शक्ति होती है** (Primary elationship has the Greatest Control)—प्राथमिक समूहों में अत्यधिक न्त्रण की शक्ति होती है। प्रेम के बन्धन में व्यक्ति बँधे होते हैं और वे बन्धन ने शक्तिशाली होते हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्त करने के अटूट प्रयत्न विफल हो जाते । एक प्रेमी के लिए उसकी प्रेमिका की आँख का सकेत उसे उन कार्यों से रोक कता है जिन्हें राज्य के बड़े-बड़े कानून नहीं रोक सकते।

प्राथमिक समूह अत्यधिक स्वामी-भक्ति की आशा रखते हैं। इस स्वामी-क्ति में जरा-सी कमी सहन नहीं की जा सकती। परन्तु सारा नियन्त्रण उसी समय क रहता है जब तक व्यक्ति इनका पालन करता है, अर्थात् यह उसकी इच्छा पर वलम्बित है। परन्तु व्यावहारिक जगत में व्यक्ति प्राथमिक समूहों में अपने को तना विलीन कर देता है कि उसे इन नियन्त्रणों से स्वतन्त्र रहने की इच्छा ही नहीं होती।

थमिक समूह का मनोवैज्ञानिक आधार

सामाजिक समूह की उत्पत्ति 'सामाजिक सम्बन्धों' के उत्पन्न होने से होती है। 'सामाजिक सम्बन्ध' का आधार स्वार्थ है। मनुष्य के कार्य के पीछे स्वार्थ की भावना कार्य करती है। स्वार्थ दो प्रकार का होता है। 'एकसा स्वार्थ' और 'समान स्वार्थ'। 'एकसा' और 'समान' में अन्तर है। एकसा में एकता के साथ-साथ भिन्नता भी कुछ मात्रा में पायी जाती है, जबकि 'समान' में केवल एकता ही है, भिन्नता नहीं। जहाँ हर व्यक्ति का अलग-अलग, पर एक-दूसरे से मिलता-जुलता स्वार्थ होता है, उसे 'एकसा स्वार्थ' कहते हैं। जब सब लोगों का स्वार्थ एक ही होता है, कोई अन्तर नहीं होता, तो उसे 'समान स्वार्थ' कहते हैं। इस अन्तर को एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। हर एक व्यापारी लाभ प्राप्त करना चाहता है। कोई एक रुपए पर एक आना लाभ चाहता है, कोई एक रुपए पर दो पैसे और कोई एक रुपए पर दो आने लाभ चाहता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सबका लक्ष्य स्वार्थ लाभ प्राप्त करना है, पर उस स्वार्थ में कुछ अंशों में भिन्नता है। अतः यहाँ 'एकसा स्वार्थ' पाया जाता है। दूसरी ओर कुछ व्यापारी मिलकर साझे में व्यापार करते हैं। उनका स्वार्थ एक होगा तथा सबको समान मात्रा में लाभ की प्राप्ति होगी। अतः यह स्वार्थ समान स्वार्थ' है। जब एकसा स्वार्थ समान स्वार्थ में परिणत हो जाता है. तब प्राथमिक समूह की उत्पत्ति होती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। हर एक स्त्री-पुरुष को रहने के लिए गृह, तन ढकने के लिए वस्त्र और पूर्ति के लिए अन्न की आवश्यकता होती है। पर इसमें भी कुछ अंशों का अवश्य पाया जाता है। कोई व्यक्ति एक प्रकार का भोजन चाहता है, दूसरे प्रकार का। एक व्यक्ति प्राचीन ढंग से बनी हवेली में रहना चाहता है, दूसरे के लिए वातानुकूलित बंगला अधिक रुचिकर है। एक स्त्री पाश्चात्य से सुसज्जित है, जबकि दूसरी भारतीय वेशभूषा में अविष्ठित है। यद्यपि भोजन, वस्त्र आदि स्वार्थ सबके हैं, पर इनमें कुछ अंशों का अन्तर है। अतः से स्वार्थ हैं। दो विशिष्ट स्त्री-पुरुष, भारतीय दर्शन के अनुसार 'धर्म, अर्थ और मोक्ष' की कामना पूर्ति के लिए परिवार नामक प्राथमिक समूह का करते हैं। यहाँ उनका स्वार्थ समान है। अत: स्पष्ट है कि जब एकसा स्वार्थ स्वार्थ में बदल जाता है, तो प्राथमिक समूह की उत्पत्ति होती है। प्रक्रिया की दिशा 'एकसे' स्वार्थ को 'समान स्वार्थ बनाना है। इसी प्र अन्तर्गत जब 'एकसे' स्वार्थ 'समान' होने लगते हैं, तब समूह की उत्पत्ति है। अतः हम कह सकते है कि 'एकसे' मनुष्यों के समान होने के सामाजिक नाम ही प्राथमिक समूह है।

यह 'एकसा' से समान होनें की प्रक्रिया जन्म से ही प्रारम्भ हो जा बच्चा अपने आपको ही सब कुछ समझता है। जो कुछ उसके चारों ओर है, अपने लिए ही समझता है। उसकी यह अवस्था स्वकेन्द्रीय (egocentric) है। धीरे-धीरे वह दूसरों के स्वत्व से भी परिचित होता है। इसके कारण के साथ-साथ 'पर' की भावना भी उत्पन्न हो जाती है। पहले उसे दूसरे के यह ज्ञात नहीं था कि उनमें भी 'स्व' की प्रवृत्ति है। अब वह सर्वत्र 'स्व' दर्शन करता है। यह 'स्व' की भावना अहं का ज्ञान है और 'पर' की भावना का। वह 'पर' अर्थात् 'स:' के दो रूपों को देखता है। पहले वर्ग में उसके माता भाई-बहन एवं अन्य सम्बन्धी आते हैं, तथा दूसरे वर्ग में वे व्यक्ति आते हैं जो उससे कोई सम्बन्ध नहीं रखते अथवा उसके शत्रु, लड़ने-झगड़ने वाले अथवा अ भूतिपूर्ण व्यवहार करने वाले होते हैं। अब वह बच्चा अपने साथ सहानु व्यवहार करने वालों के साथ 'समान' बनने का प्रयत्न करता है और असहानु पूर्ण व्यवहार करने वालों से अपने आपको पृथक समझता है। यही प्रक्रि 'अहं' के स्थान पर 'वयम' और 'स:' के स्थान पर 'ते' की भावना उत्पन्न है। इस प्रकार माता-पिता एवं सगे-सम्बन्धी, जो अपने से थे, अपने हो जा इसी प्रक्रिया के कारण वे 'एकसे' से समान में बदल जाते है, अर्थात 'मैं' के में सोचने वाले बच्चे के हृदय में हम की भावना उत्पन्न हो जाती है। जब केन्द्रीयता 'सामाजीकरण' में परिणत हो जाती है, तो प्राथमिक समूह की होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राथमिक समूह से लाभ

प्राथमिक समूह में व्यक्ति सुरक्षित रहता है। समूह के सारे सदस्य एक-दूसरे से भली प्रकार परिचत होते हैं। जब कभी समूह का कोई सदस्य कठिनाई में होता है तो सब सदस्य उसकी सहायता के लिए तैयार रहते हैं। समूह के सारे सदस्य एक-दूसरे के साथ सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करते हैं। प्रारम्भ में बच्चा प्राथमिक समूह में जन्म लेता है तथा बड़ा होने पर उसी समूह के सदस्यों के साथ उसका जीवन व्यतीत होता है। अतः उसे किसी प्रकार की विषमता का सामना नहीं करना पड़ता। प्राथमिक समूह में व्यक्ति की कार्य-शक्ति में भी वृद्धि होती है। उदाहरणार्थ, यदि कुछ व्यक्ति एक समूह बनाकर अध्ययन करें तो उन्हें अधिक ज्ञान प्राप्त होगा। एक विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थी की समस्या को सुलझा सकता है। यदि कोई बात किसी विद्यार्थी की समझ में नहीं आती, तो दूसरा विद्यार्थी उसे भली प्रकार समझा देता है। इस प्रकार हर एक विद्यार्थी सहानुभूति से एक-दूसरे की सहायता करते रहते हैं। साथ ही एक-दूसरे को प्रेरणा भी मिलती रहती है। सारे विद्यार्थी सात्विक ईर्ष्या के कारण एक-दूसरे से अधिक अध्ययन करने का प्रयत्न करते हैं। मन में हर समय यह धारणा बनी रहती है कि दूसरे व्यक्ति मेरे विषय में क्या सोचेंगे ? इसी धारणा के फलस्वरूप वह सदैव जागृत रहता है तथा सचेतनता से कार्य करता रहता है। इससे सदा कार्य में उत्सुकता एवं जिज्ञासा बनी रहती है। यदि प्राथमिक समूह में किसी व्यक्ति के प्रति किसी को कोई विरोधी हो तो उसे बातचीत के द्वारा हल किया जा सकता है। तनाव को रोकने के लिए सारे सदस्य मिलकर समझौता कराने का सफल प्रयास करते हैं।

प्राथमिक समूह एक परिचितों का समूह होता है तथा इसमें स्नेह का राज्य होता है। व्यक्ति को किसी प्रकार का भय नहीं होता। इसके फलस्वरूप मनुष्यों के व्यक्तित्व का विकास सुन्दर ढंग से होता है। मानव व्यक्तित्व का विकास सुन्दर होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रेम एवं स्नेह के कारण व्यक्तित्व निखर उठता है। सामाजिक नियन्त्रण के अनौपचारिक साधन प्राथमिक समूह में प्रयोग में लाए जाते हैं। इनके कारण व्यक्तित्व को भय एवं शंका का शिकार नहीं बनना पड़ता। मानव व्यवहार को नियन्त्रित करने का यह सर्वोत्तम साधन है। इसके द्वारा मानव को मानव समझा जाता है तथा उसके साथ मानवीय व्यवहार किया जाता है। सामाजिक नियन्त्रण के औपचारिक साधन, जो द्वैतीयिक समूह में पाये जाते हैं, एक मशीन के समान कार्य करते हैं। ये बूचड़खाने की उस मशीन के समान हैं, जो प्रत्येक वस्तु को काटती रहती है, चाहे भेड़ हो या बकरी या मानव। उसके लिए सभी बराबर हैं। प्राथमिक समूह में व्यक्ति को मानवता का आश्रय मिलता है तथा हृदय एवं उद्वेगों का सहारा प्राप्त होता है।

द्वैतीयिक समूह

द्वैतीयिक समूहों की परिभाषा के लिए हम कह सकते हैं कि जो कुछ भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राथमिक समूह नहीं है वह द्वैतीयिक है। इसमें आमने-सामने के सम्बन्ध एवं घनिष्ठ की कोई आवश्यकता नहीं रहती। शारीरिक समीपता भी आवश्यक नहीं है। लघु होने के स्थान पर बड़े होते हैं। सम्बन्धों की निरन्तरता की आवश्यकता नहीं रहती। सम्बन्ध अवैयक्तिक होते हैं। उद्देश्य सम्पूर्ण न होकर किसी विशिष्ट भाग से सम्बन्ध रखते हैं। यह सम्बन्ध विशिष्ट स्वार्थों की पूर्ति के लिए किया जाता है। इसके उदाहरण; राष्ट्र, श्रमिक संघ इत्यादि हैं।

वास्तव में द्वैतीयिक समूहों में प्राथमिक समूहों के कुछ गुण पाये जाते हैं। दोनों की प्रकृति में विशेष अन्तर, सम्बन्धों के प्रकार का है। द्वैतीयिक समूहों में आमने-सामने के सम्बन्ध पाये जा सकते हैं; जैसे—एक वक्ता भाषण देता है। परन्तु यह सम्बन्ध क्षणिक होता है। घनिष्ठता शून्य के बराबर होती है। सम्बन्ध अवैयक्तिक होते हैं। इनमें विशिष्ट व्यक्ति पर महत्त्व नहीं दिया जाता। ऑगबर्न और निमकॉफ ने इसकी परिभाषा निम्न शब्दों में की है, "वे समूह जो घनिष्ठता की कमी का अनुभव प्रस्तुत करते हैं, द्वैतीयिक समूह कहलाते हैं।"

द्वैतीयिक समूह में व्यक्ति का कार्य—द्वैतीयिक समूह में व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को अपनी स्थिति में जो समूह द्वारा निश्चित की जाती है, विलीन कर देता है। किसी बैंक का मैनेजर अपने कर्मचारियों से मैनेजर की स्थिति में मिलता हैं, बातचीत करता है, आज्ञा देता है और कार्य कराता है। उसके सम्बन्ध घनिष्ठता से परे और औपचारिक होते हैं। उसमें व्यक्ति से नहीं परन्तु उसके कार्य से सम्बन्ध होता है।

द्वैतीयिक समूहों में व्यक्ति सक्रिय और निष्क्रिय दोनों ही प्रकार का सदस्य होता है। एक राज्य का नागरिक अपने राज्य का अधिकांश रूप में निष्क्रिय सदस्य होता है।

द्वैतीयिक समूहों में व्यक्ति अप्रत्यक्ष सहयोग देता है। एक व्यक्ति दूसरों के लिए कार्य करता है, न कि उनके साथ। वे एक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विभिन्न कार्य करते हैं। उनकी विभिन्न शक्तियाँ अधिकार और कर्त्तव्य होती हैं।

द्वैतीयिक समूहों में प्रेम का बन्धन न होकर स्वार्थ का बन्धन होता है। जैसे ही उस स्वार्थ की पूर्ति हो जाती है, सदस्य समूह से पृथक होने की इच्छा करता है।

द्वैतीयिक समूहों में समझौते पर अत्यधिक ध्यान दिया जाता है। प्राथमिक समूहों में व्यक्ति किन्हीं शर्तों से बाध्य नहीं होता; परन्तु द्वैतीयिक समूहों में प्रसम्विदा की शर्तों से बँधे हुए रहना पड़ता है। अनौपचारिक व्यवहार के स्थान पर औपचारिक व्यवहार होता है। नियन्त्रण कड़ा होता है। औपचारिक नियमों एवं विधियों को पहले से ही बना दिया जाता है और उन्हीं के अनुसार विभिन्न व्यक्तियों की चिन्ता न करते हुए इन्हें कार्य में लाया जाता है।

द्वैतीयिक समूह में कुछ कमियाँ—द्वैतीयिक समूह में सदस्यों की संख्या बहुत अधिक होने से पारस्परिक सम्बन्ध नहीं हो पाता। अतः हर व्यक्ति का दूसरे व्यक्तियों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के साथ निकटता का सम्बन्ध नहीं रह सकता। सदस्यों की संख्या के आधिक्य के कारण प्रत्येक सदस्य की समस्याओं पर अलग-अलग विचार नहीं किया जा सकता। इसके लिए व्यक्तियों की आपसी बातचीत के स्थान पर पूर्व निर्धारित नियमों एवं उपनियमों के आधार पर हर व्यक्ति की समस्या सुलझायी जाती है। दूसरे शब्दों में, हम यह कहें कि द्वैतीयिक समूह में हर सदस्य को एक ही लाठी से हाँका जाता है, तो अतिशोक्ति न होगी। इसमें दया तथा अपवाद का कोई स्थान नहीं रहता। इसमें सबके साथ समानता का व्यवहार किया जाता है। यह एक गुण है, लेकिन यही गुण इसका सबसे बड़ा अवगुण बन गया है; क्योंकि इसमें किसी व्यक्ति की परिस्थितियों पर विचार नहीं किया जाता। उदाहरणार्थ, कोई व्यक्ति किसी स्थान पर नौकरी कर रहा है। थोड़े दिनों बाद उसका तबादला कर दिया जाता है। तबादले के समय यह नहीं सोचा जाता कि परीक्षा के दिन समीप हैं, अतः उसके बच्चों की, जो पाठशाला में पढ़ रहे हैं, क्या दशा होगी। बिना उसकी परिस्थितियों पर दृष्टिपात किये, निर्णय दे दिया जाता है। यदि किसी व्यक्ति की पहुँच होती है तो वह कुछ सुधार करवा सकता है। पर यह विधि तो प्राथमिक समूह के अन्तर्गत आ जाती है। जब व्यक्तियों की समस्याएँ नियमों की उलझनों में पड़कर हल नहीं हो पातीं, तो क्रान्ति होने लगती है। सदस्यों में विद्रोह जागृत हो उठता है और वे उन संगठनों को तोड़कर नवीन संगठनों का निर्माण करते हैं। इसी कारण प्रजातन्त्र में हर पाँच वर्ष बाद चुनाव होना आवश्यक है।

प्राथमिक और द्वैतीयिक समूह—दो विपरीत आदर्श

प्राथमिक और द्वैतीयिक समूह का वर्णन दो ऐसे समूहों का विवरण है जो एक-दूसरे से बिलकुल भिन्न और विपरीत हैं। वास्तविक संसार में इन आदर्श स्वरूप समूहों का मिलना कठिन होता है और अधिकांश समूह ऐसे होते हैं जो इन दोनों के बीच में होते हैं। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि प्राथमिक समूह कहाँ पर समाप्त होता है और द्वैतीयिक समूह कहाँ से प्रारम्भ होता है।

सामाजिक समूहों में विशिष्ट गुण—समूह में व्यक्ति 'मैं' स्थान पर 'हम' की भावना से प्रेरित होकर कार्य करता है। इस हम की भावना के कारण समूह में कुछ विशेष गुण पाये जाते हैं। उनमें से प्रमुख निम्न हैं :

(1) **समूह का क्षेत्र विस्तृत है**—समूह में व्यक्ति की इच्छा काम नहीं देती। उसे साथ मिलकर कार्य भी करना पड़ता है। कई बार उसे इच्छा के प्रतिकूल कार्य भी करना होता है। उदाहरणार्थ, किसी मोहल्ले में सामाजिक कार्यकर्ता कुछ श्रमदान कर रहे हों तो मोहल्ले के निवासियों को मानवता के नाते इच्छा न होते हुए भी हाथ बँटाना पड़ता है। समूह की सत्ता व्यक्ति से स्वतन्त्र एवं विस्तृत है। जो कार्य व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से नहीं कर सकता, वही कार्य वह समूह में आकर करने लगता है। व्यक्ति को समूह की शक्ति के सामने अपनी इच्छा को भी दबाना होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) समूह व्यक्ति पर प्रतिबन्ध लगाता है—व्यक्ति जैसा चाहे वैसा नहीं कर सकता। समूह उस पर पूर्णरूपेण प्रतिबन्ध रखता है। यदि व्यक्ति समूह के विरुद्ध कार्य करता है तो उसे स्वत. अपने आप को समूह से अलग कर लेना पड़ता है अथवा समूह स्वयं उसको पागल या अपराधी घोषित करके देश-निकाला अथवा कोई दण्ड देकर समूह से अलग कर देता है। इस प्रकार समूह व्यक्ति पर पूर्ण प्रतिबन्ध रखता है।

(3) समूह के साथ एकीभाव—जो व्यक्ति समूह के साथ अपना एकत्व कर लेते हैं उन्हें समूह से अधिक लाभ की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति समूह के लिए तन-मन-धन सर्वस्व अर्पित कर देता है, वह मुखिया बन जाता है। समूह के सदस्य समता अनुभव करते हैं।

(4) विभिन्न समूहों में भेदभाव—एक समूह दूसरे समूह से जलता है। समूहों में 'स्व' एवं 'पर' की भावना पायी जाती है। सदा एक समूह का दूसरे समूह के साथ संघर्ष चलता है। जब एक व्यक्ति किसी एक समूह से दूसरे समूह में चला जाता है तो उस समूह के सदस्य बड़े गर्व का अनुभव करते हैं। वे इसमें अपनी विजय समझते हैं।

(5) आदान-प्रदान—समूह में आदान-प्रदान पाया जाता है। मजदूर फैक्ट्री में कार्य करता है, मालिक बदले में पैसा देता है। पिता बच्चे की रक्षा करता है, बच्चा पिता की आज्ञा का पालन करता है। जहाँ यह भावना उत्पन्न हो जाती है कि एक व्यक्ति अधिक कार्य करता है, तथा बदले में कम रुपया मिलता है, वहीं समूह में विघटन प्रारम्भ हो जाता है। समूह की स्थिरता के लिए आदान-प्रदान की भावना अत्यन्त आवश्यक है।

प्राथमिक तथा द्वैतीयिक समूहों में अन्तर

प्राथमिक तथा द्वैतीयिक समूहों में निम्न अन्तर पाये जाते हैं :

प्राथमिक समूह	द्वैतीयिक समूह
1. प्राथमिक समूह में शारीरिक समीपता तथा आमने-सामने (face to face) के सम्बन्ध पाये जाते हैं।	1. द्वैतीयिक समूहों में शारीरिक समीपता तथा आमने-सामने के सम्बन्ध नहीं पाये जाते।
2. प्राथमिक समूहों की सदस्यता द्वैतीयिक समूहों की अपेक्षा बहुत कम होती है, साधारणतया प्राथमिक समूह छोटे समूह होते हैं।	2. द्वैतीयिक समूह में सदस्यता अधिक होती है, इसलिए वे अत्यन्त विस्तृत होते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

3. प्राथमिक समूह सामान्यतया नीय होता है।	3. द्वैतीयिक समूह बड़े क्षेत्र में फैले होते हैं।
4. प्राथमिक समूह सरल समाज द्योतक है।	4. द्वैतीयिक समूह जटिल समाजों के द्योतक होते हैं।
5. प्राथमिक समूह छोटे समुदायों अधिक पाये जाते हैं।	5. द्वैतीयिक समूह बड़े समुदायों में अधिक पाये जाते हैं।
6. ग्रामीण जीवन में प्राथमिक हों का बाहुल्य होता है।	6. नागरिक जीवन में द्वैतीयिक समूह का बाहुल्य होता है।
7. प्राथमिक समूहों में घनिष्ठता धिक पायी जाती है।	7. द्वैतीयिक समूहों में घनिष्ठता अधिक पायी जाती।
8. प्राथमिक समूहों में प्रत्यक्ष सम्बन्ध जाते हैं।	8. द्वैतीयिक समूहों में अप्रत्यक्ष सम्बन्ध पाये जाते हैं।
9. प्राथमिक समूहों में सम्बन्ध क्तिक होते हैं।	9. द्वैतीयिक समूहों में सम्बन्ध अवैयक्तिक होते हैं।
10. प्राथमिक समूहों में घरेलू म्बन्ध पाये जाते हैं।	10. द्वैतीयिक समूहों में कार्य-सम्बन्धी सम्बन्ध पाये जाते हैं।
11. प्राथमिक समूहों में प्रेम, मैत्री र सहानुभूति पायी जाती है।	11. द्वैतीयिक समूहों में नियमों का बोलबाला होता है।
12. प्राथमिक समूहों में सामाजिक यन्त्रण के अनौपचारिक साधन उपयोग लाये जाते हैं।	12. द्वैतीयिक समूहों में सामाजिक नियन्त्रण के औपचारिक साधन प्रयोग में लाये जाते हैं।
13. प्राथमिक समूहों में स्वाभाविकता यी जाती है।	13. द्वैतीयिक समूहों में अस्वाभाविकता पायी जाती है।
14. प्राथमिक समूहों में व्यक्ति न्तरात्मा से बँधा होता है।	14. द्वैतीयिक समूहों में व्यक्ति लोकाचार से बँधा होता है।
15. प्राथमिक समूहों में सम्बन्ध अधिक स्थायी होते हैं।	15. द्वैतीयिक समूहों में सम्बन्ध कम स्थायी होते हैं।

प्रश्न

1. प्राथमिक समूह की मनोवैज्ञानिक प्रकृति की व्याख्या कीजिए। अपने अवलोकन से उदाहरण भी दीजिए।

(Explain the psychological nature of primary group, illustrating from your observation.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

28

सामाजिक प्रमाप
(Social Norms)

जहाँ भी मनुष्य रहते हैं, सामूहिक व्यवहार को नियन्त्रित करने के नियम या व्यवस्था या व्यवहार का प्रतिमान विकसित कर लेते हैं। सामंजस्य आपस में विकसित न करें, तो उनका कार्य चल ही नहीं सकता। (anarchy) की अवस्था हो जायेगी। इस प्रकार जो व्यवस्था विकसित उसे ही प्रमाप कहते हैं। चूँकि प्रमाप सामाजिक अन्त:क्रिया में विकसित इसलिए इन्हें सामाजिक प्रमाप (social norms) कहते हैं।

'सामाजिक प्रमाप' और 'समूह प्रमाप'
('Social Norms' and 'Group Norms')

सामाजिक प्रमाप एक व्यक्ति के द्वारा अकेले नहीं बनते, वे सामाजिक अन्त:क्रिया में बनते हैं, इसलिए इन्हें 'समूह प्रमाप' भी कहते हैं।

सामाजिक प्रमाप एक संबोध (concept) है। हर संबोध की भाँति एक प्रकार की या वर्ग की वस्तुओं की ओर संकेत करता है। यह संबोध प्रकार भिन्न है कि यह वस्तुओं, व्यक्तियों या दशाओं का मूल्यांकन करता है।

सामाजिक प्रमाप के तत्त्व
(Items of Social Norms)

सामाजिक प्रमाप एक विस्तृत शब्द है। इसके अन्तर्गत वे हर प्रकार के परिवर्तन एवं व्यवस्थाएँ आती हैं, जो समाज में प्रचलित होती हैं और जो सदस्यों के व्यवहार को नियन्त्रित करती हैं। इसके अन्तर्गत नियम, जन-रीतियाँ, रूढ़ियाँ, व्यावहारिक प्रतिमान, टैबू कानून इत्यादि आते हैं।

सामाजिक प्रमाप और वैयक्तिक व्यवहार
(Social Norms and Individual Behaviour)

सामाजिक प्रमाप एक व्यावहारिक प्रतिमान प्रस्तुत करते हैं और की जाती है कि व्यक्ति उसी के अनुरूप व्यवहार भी करेंगे। अधिकांश व्यक्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुरूप व्यवहार करते भी हैं, फिर भी कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो उससे भिन्न व्यवहार करते हैं। अनेक कारणों से इसे सहन भी किया जाता है।

आधुनिक जटिल समाज में व्यवहार की भिन्नता बहुत ही अधिक पायी जाती है। समाज अनेक छोटे-छोटे समूहों में बँटा हुआ है। इन समूहों के विभिन्न सामाजिक प्रमाप होते हैं। लोग उनके अनुसार व्यवहार करते हैं।

व्यवहार में भिन्नता की भी एक सीमा है। उस सीमा के अन्दर ही व्यक्तियों के व्यवहार में भिन्नता पायी जाती है। यदि ऐसा न हो तो समाज संगठित नहीं रह सकता। व्यवस्था के लिए ऐसा अत्यन्त आवश्यक है। अधिकतर व्यक्तियों को प्रमापातीत व्यवहार करने के लिए दण्ड और पुरस्कार देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। वे स्वयं वैसा व्यवहार करते हैं। इसका कारण यही है कि वे स्वयं उस प्रकार का व्यवहार अपने मन से करना चाहते हैं। वे नहीं सोचते कि कोई उनसे ऐसा व्यवहार करवा रहा है, बल्कि उनका अन्त:करण स्वयं ही वैसा व्यवहार करने के लिए कहता है। सामाजीकरण की प्रक्रिया में यह उसमें अन्तर्विष्ठ हो गया है।

बचपन में ऐसा अवश्य लगता है कि सामाजिक प्रमाप बाह्य वस्तु हैं और कोई इन्हें स्वीकार करवाने का प्रयत्न कर रहा है। दूसरे लोग कहते हैं इसलिए हम करते हैं। इसी प्रकार एक नये समूह में एक वयस्क व्यक्ति को भी लगता है कि ये बाह्य हैं और दूसरे चाहते हैं इसलिए हम कर रहे हैं।

शेरिफ का परीक्षण (Sherif's Experiment)—शेरिफ ने प्रयोगशाला में प्रमाप निर्माण पर अध्ययन किया। उनका परीक्षण बड़ा महत्त्वपूर्ण है। शेरिफ ने ही 'social norms' (सामाजिक प्रमाप) शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम किया।

इस परीक्षण से उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि व्यक्ति समूह के प्रमाप के अनुसार अकेले में भी सोचने लगता है और समूह प्रमाप उसका प्रमाप बन जाता है।

परम्परा (Tradition)

परम्परा को सामाजिक विरासत (social heredity) के नाम से भी पुकारा जा सकता है; क्योंकि परम्परा के अनुसार काम करने का ढग वंशानुगत होता है। व्यक्ति का व्यवहार इसी के अनुसार निश्चित होता है। जैसे, व्यक्ति बाल्यावस्था से ही अपने परिवार में अपने माता-पिता तथा अन्य सम्बन्धियों के सम्पर्क में रहता है। परिवार के कुछ न कुछ रीति-रिवाज, विचारधाराएँ एवं रहन-सहन के ढंग होते हैं। चूंकि व्यक्ति बाल्यावस्था में अपने माता-पिता व सम्बन्धियों के सम्पर्क में रहता है। इसलिए उनसे सम्बन्धित सामाजिक वातावरण के अनुसार व्यक्ति के रहन-सहन का तरीका, विचार करने का ढंग, आदतें व विश्वास निश्चित हो जाते हैं। इस प्रकार व्यक्ति अपने पुरखों के अनुरूप ही अपना जीवन व्यतीत करता है। उसके पश्चात उसकी आने वाली पीढ़ी इन सबको अपना लेती है। इस प्रकार जो विचारधाराएँ,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बोलने-चालने के ढंग, रीति-रिवाज एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते रहते हैं, उन्हें हम परम्परा कह सकते हैं। गिन्सबर्ग ने इसकी परिभाषा इस प्रकार की है, "परम्परा से अभिप्राय उन सब विचारों, व्यवहार की आदतों तथा प्रथाओं से है जो किसी समाज की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित की जाती हैं।"[1]

जेम्स ड्रीवर ने लिखा है कि परम्परा, "कानून, प्रथा, कहानी तथा किंवदन्ती का वह संग्रह है जो मौखिक शब्दों द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित किया जाता है।"[2] उदाहरणार्थ, खान-पान के ढंग, कपड़े पहनने व सिंगार करने के ढंग, शादी-ब्याह के तरीके, पूजा-पाठ के ढंग आदि व्यक्ति बहुत कुछ सीमा तक भूतकालीन पीढ़ियों से प्राप्त करता है।

गिन्सबर्ग और जेम्स ड्रीवर की उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि परम्परा के अन्तर्गत, विचार, विश्वास, प्रथा, किंवदन्ती, जनरीतियाँ, रूढ़ियाँ एवं कानून का संग्रह होता है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता रहता है। निम्न चार्ट से परम्परा के स्वरूप को भली प्रकार समझा जा सकता है।

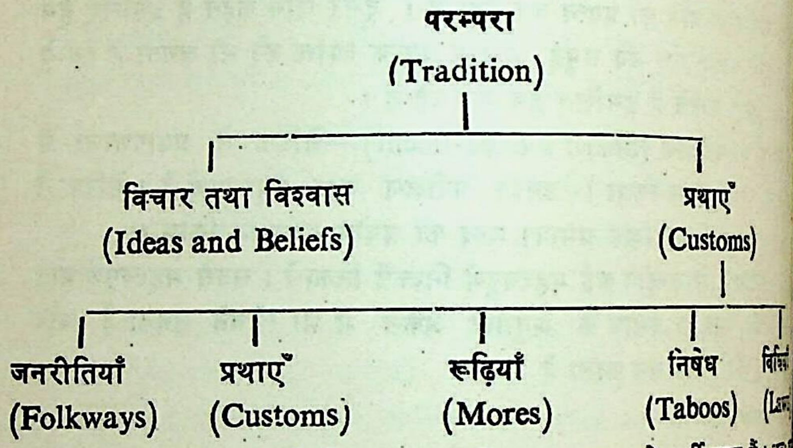

उस चार्ट से स्पष्ट है कि परम्परा के प्रधानतः दो वर्गीकरण हैं। अध्याय में हम दो प्रत्ययों—विचार तथा विश्वास और प्रथा का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

विचार तथा विश्वास—यहाँ अभिप्राय उन विचारों और विश्वासों से है जो क्रमशः एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते रहते हैं। इसके अ...

---

1 "By tradition is meant the sum of all the ideas, habits and customs that belong to a people and are transmitted from generation to generation." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 104.

2 "Body of law, custom, story and myth, transmitted or handed down orally from one generation to another." James Drever, *A Dictoinary of Psychology*, p. 197.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रथा से यहाँ अभिप्राय उन व्यवहारों से है जो किसी समाज में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते रहते हैं। इस सम्बन्ध में रॉस ने लिखा है, "प्रथा से अभिप्राय व्यवहार करने के ढगों के हस्तान्तरण से है (अर्थात वे व्यावहारिक ढंग जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं) और परम्परा से अभिप्राय विचार या विश्वास करने के ढंगों के स्थानान्तरण से है। अर्थात वे ढग जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं।"[1]

इससे पहले कि हम प्रथा का विस्तारपूर्वक अध्ययन करें। हमको यह समझना आवश्यक है कि सामाजिक जीवन में परम्परा का क्या महत्त्व और उपयोगिता है।

सामाजिक जीवन में परम्परा का महत्त्व और उपयोगिता (Importance of Traditions in Social Life)

(1) निश्चित व्यवहार के ढंग (Definite Ways of Doing)—प्रत्येक समाज में परम्परा का बहुत वड़ा महत्त्व होता है। परम्पराओं द्वारा हमारे जीवन के अनेक क्षेत्रों में हमारे व्यवहार निश्चित और एकरूप होते हैं। परम्पराएँ यह निश्चित करती हैं कि हमें किस समय कैसा व्यवहार करना चाहिए। यह हमारे व्यवहारों में एकरूपता लाने के कारण हमें एक दूसरे से बाँध देती हैं। परम्पराएँ हमें यह सिखाती हैं कि किस परिस्थिति में हमें क्या करना चाहिए। यही कारण है कि अनेक विषयों पर अधिक नहीं सोचना पड़ता और सब कार्य स्वयं होते चले जाते हैं। ऐसा मालूम पड़ता है मानो हमें आदत-सी पड़ गयी है कि कोई भी परिस्थिति आने पर कार्य एकदम हो जाता है। प्रथाएँ भी एक प्रकार से समाज की आदतें हैं।

(2) सुरक्षा की भावना (Feeling of Security)—जिस प्रकार हमारी बहुत-सी प्रवृत्तियाँ हमारे अन्दर प्राकृतिक चयन के आधार पर विद्यमान हैं और हमारे व्यवहारों को निश्चित करती हैं उसी प्रकार हमारे पूर्वजों के बहुत प्रयास के पश्चात भिन्न-भिन्न स्थितियों में भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यवहार करने के ढंगों का चयन किया गया। उन्होंने इन व्यावहारिक ढंगों की परीक्षा भी की। परीक्षा के पश्चात उन लोगों ने इन्हें उपयोगी पाया; क्योंकि इन व्यवहार करने के ढंगों से उन्हें सफलता मिली। ये ढंग उनसे हम तक हस्तान्तरित होते चले आये और हमने भी इन्हें सीख लिया। इनके प्रयोग में हमें किसी प्रकार की आशंका नहीं, इनकी हमने भी परीक्षा की। इस प्रकार इनका अनुकरण करने में सुरक्षा की भावना विद्यमान है।

(3) सीखने की क्रिया में परिवर्तन (Change in the Process of Learning)—इसकी एक उपयोगिता यह भी है कि जो कुछ हमारे पूर्वजों ने प्रयास और असफलता के आधार पर परिश्रम और समय लगाकर सीखा था। उसको हम केवल

[1] "By custom is meant the transmission of a way of doing; by tradition is meant the transmission of a way of thinking or believing." E. A. Ross, *Social Psychology*, p. 169.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुकरण करने से ही सीख लेते हैं। अतः स्पष्ट है कि हमको उन्हें सीखने में समय बर्बाद नहीं करना पड़ता और इस प्रकार समय और प्रयास की बचत होती है। इस कारण इन परम्पराओं के सीखने की क्रिया में परिवर्तन हो जाता है। हम केवल अनुकरण द्वारा ही सीख लेते हैं।

(4) **अन्य समस्याओं पर बची हुई शक्ति का केन्द्रीकरण (Centralization of Remaining Power on Other Problems)**—सीखने की क्रिया में परिवर्तन के अनुसार हमारा उतना समय और उतनी शक्ति बचती है जितना समय और शक्ति हमारे पूर्वजों ने विभिन्न प्रकार के प्रतिक्रिया करने के ढंगों के चयन में लगायी थी। अतः उस बचे हुए समय और शक्ति को हम उन समस्याओं के समाधान में लगा सकते हैं जिनकी ओर हमारे पूर्वजों का ध्यान नहीं गया।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक परम्पराएँ केवल हमारे ... के लिए ही महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, वरन आवश्यक और उपयोगी भी हैं।

प्रथा अथवा लोकाचार
(Customs)

प्रथा एक प्रकार से सामाजिक आदतें हैं। प्रथा से अभिप्राय व्यवहार के उन ढंगों से है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित होते हैं। रॉस ने अपनी पुस्तक 'Social Psychology' में लिखा है, "By custom is meant the trans-mission of a way of doing." (p. 196), अर्थात प्रथा से यहाँ अभिप्राय व्यवहार के उन ढंगों से है जो हम अपने पूर्वजों के सम्पर्क द्वारा प्राप्त करते हैं। वुण्ट (Wundt) ने प्रथा का अर्थ उन इच्छित क्रियाओं से लिया है जो किसी राष्ट्र, जाति अथवा समुदाय की आदत का रूप धारण कर चुकी हों। बोगार्डस ने लिखा है, "प्रथाएँ और परम्पराएँ समूह के द्वारा स्वीकृत नियन्त्रण की वे पद्धतियाँ हैं जो सुव्यवस्थित हो जाती हैं, जिन्हें बिना सोचे-विचारे मान्यता दे दी जाती है और जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होती रहती हैं।"[1]

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रथा बहुत कुछ सामूहिक आदत के समान है। प्रथाएँ, वे सामूहिक व्यवहार होते हैं जो समाज में मान्यता प्राप्त कर लेते हैं और जिन्हें लोग बिना सोचे-विचारे स्वीकार कर लेते हैं। इस स्वीकृति के पीछे एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक तथ्य निहित है। लोग यह सोचते हैं कि इन्हें हमारे पूर्वज करते आये हैं और उन्हें इससे लाभ हुआ है। इस उपयोगिता की भावना के अलावा उनका यह भी विचार होता है कि इन्हें स्वीकार न करना अपने पूर्वजों ...

---

1 "Customs and traditions are group accepted techniques of control that have become well established, that are taken for granted, and that are passed along from generation to generation." E. S. Bogardus, *Sociology*, p. 475.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपमान करना एवं उन्हें रुष्ट करना है। यही कारण है कि लोग इन्हें बिना सोचे-विचारे ही स्वीकार कर लेते हैं।

प्रथा की विशेषताएँ—प्रथा की प्रकृति में निम्न विशेषताएँ हैं :

(अ) प्रथाएँ किसी विशेष सामुदायिक परिस्थिति में व्यवहार करने के तरीकों को कहते हैं।

(ब) प्रथाएँ एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती हैं।

(स) किसी समुदाय में उस समुदाय के सदस्यों से इस प्रकार के सामान्य व्यवहार की अपेक्षा की जाती है।

(द) प्रथाएँ केवल अपेक्षित एवं सामान्य व्यवहार ही नहीं होतीं वरन इनमें समाज का एक अव्यक्त निर्णय भी निहित होता है और यह उपयुक्त व्यवहार होती है।

प्रथा की उत्पत्ति (Origin of Customs)—प्रथा की उत्पत्ति इतनी पुरानी है कि इसका प्रारम्भ कैसे और कब हुआ, जानना अत्यन्त कठिन है। इसकी उत्पत्ति के विषय में अनेक काल्पनिक कहानियाँ हैं। यह कहानियाँ इसकी उत्पत्ति के बारे में कोई स्पष्ट विचार प्रकट नहीं करतीं। तथ्य तो यह है कि प्रथा की उत्पत्ति बहुत प्राचीनकाल में छिपी हुई है। फिर प्रथा की उत्पत्ति के बारे में हम बहुत कुछ अनुमान इसकी प्रकृति से लगा सकते हैं। वुण्ट ने प्रथा की उत्पत्ति के विषय में लिखा है कि "जहाँ तक हम जानते हैं प्रथा की उत्पत्ति तथा विकास का क्रम एक ही है और वह है पुरानी प्रथाओं से, जो उसके समान वातावरण तथा पृष्ठभूमि में प्रचलित रहे हों।"

वुण्ट के उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि प्रथा की उत्पत्ति प्राचीनकाल में बहुत दूर पुरातन में छिपी हुई है जिसे हम स्पष्ट रूप से नहीं जान सकते। प्रथा की उत्पत्ति धीरे-धीरे उन्हीं से सम्बन्धित पुरानी आदतों, जनरीतियों से इस प्रकार होती है कि हम इनकी वास्तविक उत्पत्ति के विषय में कोई स्पष्ट विचार नहीं प्रस्तुत कर सकते। इतना अवश्य माना जा सकता है कि मानसिक प्रयास इसकी उत्पत्ति में सहायक होता है। कुछ व्यक्तियों के व्यवहार करने के ढंग कुछ अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों के ढंग को प्रभावित करते हैं या उनके व्यवहार करने के ढंगों से प्रभावित होते हैं। एक-दूसरे के व्यवहार को प्रभावित करने की यह प्रक्रिया धीरे-धीरे चलती रहती है और इस प्रकार किसी विशेष व्यवहार करने के ढंग की उत्पत्ति हो जाती है। ये विशेष व्यवहार अपने समय में उपयोगी और महत्त्वपूर्ण रहे होंगे जिसके कारण इनका अनुकरण किया गया होगा और इस प्रकार ये समाज में फैल गये होंगे। इसके पश्चात ये ढंग परिस्थिति के अनुकूल और समयानुकूल बदलते रहे होंगे।

प्रो० हॉबहाउस इस समस्या पर अपने विचार प्रकट करते हुए लिखते हैं कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वयं हम लोग और हम से पहले लोग जो हम से बहुत ज्यादा भिन्न नहीं है को बनाते हैं, तथा भूतकाल में रिवाज का विकास उसी प्रकार से हुआ है प्रकार से अब होता है, अब यह होता है कि किसी व्यक्तिगत केन्द्र से मत बाहर निकलते हैं, दूसरों के मतों से उनका सम्पर्क होता है, वे उनसे टकरा उनको पुष्ट करते हैं, उनको परिवर्तित करते हैं या उनसे परिवर्तित होते हैं। अन्त में विचारों और प्रभावों की इस टक्कर से एक कम या ज्यादा स्थायी निर्णय का उदय होता है जो दूसरे लोगों के विचारों को ढालने के लिए एक का काम करने लगता है। हमेशा ये व्यक्तिगत केन्द्र ही होते हैं जो एक वातावरण में रहते हैं और विकास करते हैं, उस वातावरण को बदलते हैं को बदलते जाते हैं। समाज में जिन विचारों और कार्य या व्यवहार के नियमों का उदय होता है, वे परस्पर सम्वन्धित व्यक्तिगत मतों के कारण है। उनके विकास में जो सामाजिक प्रक्रिया शामिल रहती है। उसके स्वरूप में किसी रहस्य का होना जरूरी नहीं है।"[1]

प्रो० हाबहाउस के उपयुंक्त कथन से स्पष्ट है कि प्रथा रीति विचारधाराओं आदि की उत्पत्ति का कारण विभिन्न व्यक्तियों का मानसिक ही है। इनकी उत्पत्ति का मुख्य कारण वस्तुतः यही है। एक बात जिस दिया जाना चाहिए, वह यह है कि व्यक्तियों के बीच जो मानसिक आदान क्रियाएँ एवं संघर्ष की क्रियाएँ होती हैं वे इतनी मन्द और अव्यक्त हैं साधारण व्यक्ति इन्हें न समझने के कारण इन्हें नहीं अपनाते। यदि व्यक्ति इन्हें अपनाते हैं और इनके पीछे किसी मान्यता प्राप्त व्यक्ति का मत होता है यह तथ्य भी एक प्रकार से प्रथा की उत्पत्ति में सहयोगी होगा। इसके अतिरिक्त इसकी उत्पत्ति के कारणों में एक और महत्त्वपूर्ण बात दिखायी पड़ती है व्यक्तियों की भावनाओं, विश्वासों तथा अन्धविश्वासों का प्रथा की उत्पत्ति में महत्त्वपूर्ण कार्य। संक्षेप में, प्रथा की उत्पत्ति के विषय में यह कहा जा सकता है भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के बीच मानसिक आदान-प्रदान तथा संघर्ष की परिणामस्वरूप एक सामान्य उत्पत्ति होती है, जिससे धीरे-धीरे किसी व्यक्ति का नाम जुड़ जाता है; जिसके कारण साधारण व्यक्तियों में विश्वास तथा आस्था की उत्पत्ति होती है और समाज में व्यवहार प्रचलित हो जाते हैं। अतः इस प्रकार उक्त कारक प्रथा की उत्पत्ति में हैं। अब हम यहाँ प्रथा के ढाँचे के विषय में प्रकाश डालेंगे।

प्रथा का ढाँचा (Structure of Custom)—प्रथा का ढाँचा

1 Professor Hobhouse, quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 108.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-2024-25-2

जनरीतियों के संयोग का फल है। अब हम इस आदत और जनरीतियों पर प्रकाश डालेंगे।

आदत (Habit)

जब हम किसी कार्य को बार-बार दोहराते हैं तो हमारे शरीर एवं मस्तिष्क दोनों पर प्रभाव पड़ता है। किसी काम को बार-बार करने से वह काम बिना किसी प्रयत्न के अचेतन अवस्था में ही हो जाता है। यह बार-बार दोहराने का परिणाम है। स्वतः किसी कार्य को शरीर के किसी अंग द्वारा करने को हम स्वाभाविक कहते हैं। जो कार्य होता है उसे हम अपना स्वभाव या आदत कहते हैं।

जनरीतियाँ (Folkways)

जब किसी व्यक्ति की आदत बहुत से व्यक्तियों की आदत या समूह की आदत बन जाती है तो उसे जनरीति कहते हैं। जनरीति समूह की आदत को कहते हैं। जन+रीति=जन (समूह)+रीति, अर्थात वह रीति जो समूह की हो। अतः इससे स्पष्ट है कि जो कार्य समूह द्वारा मान्य होते हैं और अधिकांश व्यक्तियों द्वारा किये जाते हैं वे जनरीतियाँ कहलाते हैं।

ग्रीन ने लिखा है, "कार्य करने की वह रीतियाँ, जो एक समाज या समूह में सामान्य होती हैं और जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को परम्परागत चली आती हैं, जनरीतियों के नाम से जानी जाती हैं।"[1] मैकाइवर और पेज ने जनरीतियों की परिभाषा इस प्रकार की है, "जनरीतियाँ समाज में मान्यता प्राप्त या स्वीकृत व्यवहार करने की पद्धतियाँ हैं।"[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जनरीतियाँ समूह की सामूहिक व्यवहार की प्रतिमान हैं। ये एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती हैं। जो व्यवहार भूतकाल में हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति सबसे सरल प्रकार से करते आये हैं उनको हमने अपना लिया है और वही समूह की आदतें बन गयीं हैं। इसे हम और अच्छी तरह समझ सकते हैं यदि हम जनरीतियों की उत्पत्ति का अध्ययन करें।

जनरीतियों की उत्पत्ति और विकास (Origin and Development of Folkways)—व्यक्ति का सर्वप्रथम ध्येय संसार में जीवित रहना रहा है और रहेगा। जीवित रहने के लिए और जीवन को सर्वांग सुन्दर और पूर्ण बनाने के लिए अनेक आवश्यकताएँ होती हैं। नयी-नयी आवश्यकताओं का जन्म होता गया। ज्यों-ज्यों आवश्यकताएँ व्यक्ति का मार्ग रोककर खड़ी होती गयीं त्यों-त्यों व्यक्ति नयी

---

1 "Those ways of acting that are common to a society or a group, and that are handed down from one generation to the next, are known as folkways." A. W. Green, *Sociology*, An Analysis of '*Life in Modern Society*', p. 75.

2 "The folkways are the recognized or accepted ways of behaving in society." MacIver and Page, *Society*, p. 19.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खोज में जुटता गया। कुछ समय में वह तुलनात्मक दृष्टि से सरल मार्ग निश्चित कर गया। मनुष्य अनुभव से सीखता है, यह उसका विशेष गुण है। अनुकरण मनुष्य का स्वभाव हैं। वह अचेतन अवस्था में तो अनुकरण करता हैं; किन्तु चेतन अवस्था में जानबूझ कर अनुकरण करना उसका स्वाभाविक गुण है। मनुष्य अनुभव से सीखता है और दूसरों के सफल प्रयासों का अनुकरण करता है। वह जीवन को सुखी बनाने वाली प्रत्येक वस्तु का अनुकरण करता हैं। हमारी शिक्षा उसका अद्वितीय उदाहरण है। जो मार्ग सरलतम लगते हैं उनका हम अनुकरण कर लेते हैं। यही सरल व्यवहार समूह का सामान्य व्यवहार बन जाता है जिसे हम जनरीति के नाम से पुकारते हैं। यह व्यवहार एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते रहते और सभी समूह के सभी सदस्यों द्वारा व्यवहार में लाये जाते हैं। हमारे प्रत्येक व्यवहार के लिए कोई न कोई जनरीति उपस्थित रहती है। इसमें परिवर्तन भी होते रहते हैं।

समनर (Sumner) ने जनरीतियों की उत्पत्ति एवं विकास के विषय में इस प्रकार लिखा हैं, "वे प्राकृतिक शक्तियों की उपज के समान होती हैं जिनको मनुष्य अचेतनावस्था में प्रारम्भ करते हैं या वे पशुओं की नैसर्गिक अवस्थाओं के समान होती हैं जो अनुभव से विकसित होती हैं; जो किसी स्वार्थ के लिए अधिकतम अनुकूलन के अन्तिम स्वरूप तक पहुँचाती हैं, जो परम्परा से चली आती हैं और जो किसी अपवाद या भिन्नता को स्वीकार नहीं करता, तथापि नयी परिस्थितियों का अनुकूलन करने के लिए जब भी बदलती हैं तब भी उन्हीं सीमित पद्धतियों के अन्तर्गत ही परिवर्तित होती हैं और जो विवेकपूर्ण मनन या उद्देश्य से रहित होती हैं।"[1]

उदाहरणस्वरूप, खाने के ही ढंग को ले लीजिए। इंगलंण्ड में लोग मेज-कुर्सी का प्रयोग करते हैं। भारत में स्वच्छ चौके में आसन तथा चौकी अति सुविधाजनक लगती हैं। अभिवादन के प्रकारों को भी ले लीजिए, भारत में जय रामजी की या नमस्ते की जनरीति है, तो इंगलैण्ड में हाथ मिलाने की, न्यूजीलैण्ड में नाक से नाक रगड़ने की, चीन में अपने सम्पूर्ण शरीर को हिलाने की और फ्रांस में सार्वजनिक स्थान पर भी चुम्बन करने की। अतः जनरीतियाँ विभिन्न संस्कृतियों में विभिन्न होती हैं। इस प्रकार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से उदाहरण दिये जा सकते हैं।

---

1 "They are like products of natural forces which men unconsciously set in operation, or they are like instinctive ways of animals, which are developed out of experience, which reach a final form of maximum adaptation to an interest, which are handed down by tradition and admit of no exception or variation, yet change to meet new conditions still within the same limited methods and without rational reflection or purpose." W. G. Somner, *Folkways*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जनरीतियों की विशेषताएँ

जनरीतियाँ बड़ी शक्तिशाली होती हैं (Folkways are too Powerful)—जनरीतियों की शक्ति अत्यधिक होती है। समूह में प्रत्येक मनुष्य को इनका अनुसरण करना पड़ता है। ये राज्य जैसी शक्ति को भी हिला देती है। गिडिंग्स ने लिखा है कि मानव समाज के पच्चीस गहन एवं सतर्क अध्ययन के उपरान्त वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जब कभी भी विधि (राज्य द्वारा निर्मित) और जनरीति में संघर्ष हुआ तब तब विधि की हार हुई और जनरीति एक बार भी नहीं हारी। जनरीति के सामने बड़ी-बड़ी शक्तियों को नतमस्तक होना पड़ता है।

जनरीतियाँ संस्कृति की आधारभूत शिला हैं (Folkways are the Basic Keys of Culture)—किसी भी संस्कृति को समझने के लिए उस समूह की जनरीतियों को समझना अत्यन्त आवश्यक है। कोई संस्कृति एक विशिष्ट प्रकार की क्यों निर्मित हुई है, इसका उत्तर उस समूह की जनरीतियों से ही प्राप्त हो सकता है। मनुष्यों के व्यवहारों को समझने के लिए भी इनका अध्ययन आवश्यक है।

जनरीतियाँ जब अधिक स्थायित्व प्राप्त कर लेती हैं तब उन्हें प्रथाएँ कहते हैं। अर्थात प्रथाएँ जनरीतियों का विकसित रूप ही हैं। मैंकाइवर और पेज ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "समाज से मान्यता प्राप्त कार्य करने की विधियाँ ही समाज की प्रथाएँ हैं।"[1]

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्रथा का ढाँचा, संक्षेप में निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है :

आदत =विचार+बार-बार क्रिया को दोहराना

जनरीति=आदत समूह की

प्रथा =जनरीति+भूत का सफल अनुभव+समूह की ओर से प्राथमिकता।

प्रथा और चलन (Custom and Usage)

गिन्सबर्ग ने प्रथा और चलन में अन्तर इस प्रकार व्यक्त किया है। चलन से अभिप्राय उन व्यवहारों से है जिनमें समाज की उपयुक्तता सम्बन्धी निर्णय न जुड़ा हो। उन्होंने प्रथा का अर्थ व्यक्त करते हुए उसके दो निम्न लक्षणों को प्रस्तुत किया :

(1) प्रथा किसी व्यवहार या कार्य की एक व्यापक आदत मात्र ही नहीं है, वरन उसमें कार्य या व्यवहार की भलाई या बुराई का निर्णय निहित होता है।

(2) दूसरा लक्षण यह होता है कि यह निर्णय सामान्य और अवैयक्तिक होता है।

गिन्सबर्ग ने प्रथा, चलन और आदत का अन्तर इस प्रकार स्पष्ट किया है,

---

[1] "The socially accredited ways of acting are the customs of society." MacIver and Page, *Society*, p. 18.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"इस प्रकार प्रथा अपने सार्वभौमिक और प्रामाणिक स्वभाव के कारण आदत से होती है और खासतौर से बाद वाले स्वभाव के कारण चलन से। दूसरे शब्दों में स्वीकृत चलन होती है।"[1]

इस प्रकार प्रथा से अभिप्राय किसी समाज के उन निश्चित एवं पूर्व व्यवहारों से है जो परम्परागत हस्तान्तरित होते रहते हैं तथा जो समाज स्वीकृत हैं।

प्रथा की उत्पत्ति के कुछ सहायक

प्रथा में सामान्य और अनुरूप व्यवहार तथा अन्धी आस्था के बहुत से हो सकते हैं। इन कारणों का अध्ययन रॉस ने किया है। यहाँ हम उनके द्वारा कारणों पर प्रकाश डालेंगे।

(1) मृतकों की आत्मा में विश्वास और पूर्वजों की पूजा का प्रथाओं में सामान्य और अनुरूप विश्वास एवं व्यवहार होने का मुख्य कारण है कि लोगों को मृतकों की आत्मा में विश्वास होता है। यदि लोग अपने पूर्व अनुरूप व्यवहारों को न अपनाएँ तो उनके (पूर्वजों के) रुष्ट होने का भय होता अतः जिस समाज में इस प्रकार की प्रवृत्ति अधिक पायी जायेगी वही समाज से अधिक प्रभावित होगा। पूर्वजों की पूजा लोगों को उनके पुराने रीति-रिवाज रहन-सहन के ढंगों से बाँधती है। इस प्रकार समाज में अनेक प्रकार की प्रथा जन्म होता रहता है।

(2) समाज में मान्यता प्राप्त व्यक्तियों का दृष्टिकोण—कुछ व्य और ढंगों को हम अपने पूर्वजों से अनुकरण करते हैं और उनके अनुरूप ही करते हैं। इसके बाद उन व्यवहारों को करते-करते एक प्रकार की आदत जाती है। अतः यदि समाज के मान्य व्यक्ति अथवा उच्च पदों पर यदि वाले और पुराने दृष्टिकोण वाले व्यक्ति रहेंगे तो समाज में आवश्यक रूप से रीति-रिवाजों और प्रथाएँ दृढ़ हो जायेंगी; क्योंकि व्यक्तियों के आचार-विच उनका प्रभाव पड़ेगा। इसके विपरीत यदि समाज में सुधारक दृष्टिकोण के उच्च पदों पर आसीन होंगे तो समाज में सुधार होने के कारण परिवर्तन होंगे इस प्रकार पुराने रीति-रिवाज और प्रथाएँ अधिक स्थिर न रह पायेंगी।

(3) भौतिक दूरी—वे समाज अथवा समूह जो ऐसे स्थानों पर हैं जो लिक स्थिति के कारण अन्य स्थानों से पृथक हो गये हैं। पृथक्करण के परिणाम उस समूह के लोग अन्य स्थानों के व्यक्तियों के सम्पर्क में नहीं आ पाते,

---

1 "Custom can thus be distinguished from habit by its uni and normative character, and from usage chiefly by the characteristic. Custom, in other words, is sanctioned usa Morris Ginsberg. *The Psychology of Society*, p. 107

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कारण उनमें प्रगतिशील विचारों की उत्पत्ति नहीं होती। अतः ऐसे समूह जो अन्य समूहों से भौगोलिक परिस्थितियों के कारण अलग होते हैं, अधिक प्रगति नहीं कर पाते। इसलिए वहाँ पुराने रीत-रिवाजों और प्रथाओं का सुदृढ़ प्रचलन होता है।

(4) **सामाजिक दूरी**—यदि एक समूह दूसरे समूह के सम्पर्क में न आये, अर्थात एक समूह के व्यक्ति किसी दूसरे समूह के व्यक्तियों के सम्पर्क में न आयें, तो इन दोनों समूहों के बीच एक सामाजिक दूरी की खाई बन जायेगी और इस प्रकार उन समूहों में सामाजिक दूरी के कारण पुराने विचारों और रीति-रिवाजों तथा प्रथाओं का अधिक विकास होगा।

(5) **यातायात की सुविधाओं का अभाव**—यातायात की सुविधाएँ भी उसी समूह में उपलब्ध की जा सकती है जहाँ समूह की भौगोलिक स्थिति इनकी उपलब्धि के अनुकूल हो; जसे—पर्वतों, घाटियों आदि पर यातायात सम्बन्धी सुविधाएँ नहीं उपलब्ध की जा सकतीं। अतः इनका अभाव उस समूह व समाज के पुराने विचारों रीति-रिवाजों और प्रथाओं को और दृढ़ बनाता है।

(6) **शिक्षा का पुराना ढंग**—समाज में जिस प्रकार की शिक्षा-व्यवस्था होगी उसी प्रकार का अभाव व्यक्तियों पर पड़ेगा। जिस समाज में प्राचीन शिक्षा-पद्धति पर अधिक जोर दिया जाता है, अर्थात जहाँ धार्मिक ग्रन्थों आदि पर अधिक बल दिया जाता है, वहाँ शिक्षकों के दृष्टिकोण भी पुराने होते हैं। अतः स्वाभाविक है कि ऐसे समाज में पुराने विचार तथा प्रथाएँ दृढ़ होती रहेंगी। इसके विपरीत प्रगतिशील शिक्षा पद्धति, प्रथाओं तथा रीति-रिवाजों का दमन करती है।

(7) **विशाल दृष्टिकोण तथा सहृदयता का अभाव**—विशाल दृष्टिकोण के अभाव के कारण समाज में घिसे-पिटे विचारों तथा प्रथाओं का प्रचलन और दृढ़ होता है। विशाल दृष्टिकोण का अभाव अर्थात संकुचित दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप ही अधिकांश लोग समाज में अशिक्षित रहते हैं। इसी प्रकार सहृदयता के अभाव के कारण जाति-पाँति, भेदभाव, प्रान्तीय भेदभाव, साम्प्रदायिक भेद आदि समाज में विद्यमान रहते हैं और इन्हीं के कारण पुराने रीति-रिवाज एवं प्रथाओं का प्रचलन और दृढ़ बनता जाता है। यदि संकुचित दृष्टिकोण और सहृदयता के अभाव के स्थान पर विशाल दृष्टिकोण और सहृदयता हो तो यह समाज को प्राचीन प्रथाओं एवं रीति-रिवाजों से बचाकर एक प्रगतिशील समाज की उत्पत्ति म सहायक हो सकती है।

प्रथा तथा कानन (Custom and Law)

प्रथाएँ एक प्रकार से सामाजिक नियम कही जा सकती हैं, जिनके अनुसार हम समाज में व्यवहार करते हैं। प्रथा और कानून में बहुत कुछ समानता है। प्राचीन-काल में कानन के स्थान पर प्रथाएँ ही समाज पर नियन्त्रण रखती थीं। आजकल की कानून व्यवस्था भी बहुत कुछ पुरानी प्रथाओं पर आधारित है। वेस्टरमार्क के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विचार मे कानून भी इसलिए मान्यता प्राप्त कर लेते हैं कि वे प्रथाओं के आधार पर आधारित होते हैं। प्रायः देखा गया है कि राजनैतिक नियम अथवा कानून प्रथाओं के सम्मुख शक्तिहीन होते हैं। उदाहरण के लिए हम बाल-विवाह प्रथा को ही ले, राजनैतिक नियम अथवा कानून लागू होने के बहुत समय बाद तक बाल-विवाह प्रथा चलती रही। यह प्रथा तब तक नहीं रोकी जा सकी जब तक समाज सुधारकों ने इस प्रथा को दूर करने के लिए पदार्पण नहीं किया। कानून इन्हें नहीं रोक सका। अतः यह कहा जा सकता है कि राजनैतिक नियम बहुत सीमा तक प्रथाओं पर आधारित हैं।

कानून तथा प्रथा में समानताएँ

(1) प्रथा तथा कानून दोनों आवश्यक—उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रथा के पीछे सामाजिक मान्यता है। इसमें सामाजिक उपयुक्तता पायी जाती है। अनेक कारकों के फलस्वरूप हमको अनुरूप व्यवहार करना पड़ता है। इसी प्रकार कानून को भी मान्यता प्राप्त होती है, क्योंकि यह प्रथाओं के आधार पर आधारित होते हैं। अतः हमको राज्य की शक्ति के कारण कानूनों के अनुसार विवश होकर व्यवहार करने पड़ते हैं।

(2) दोनों का दबाव आन्तरिक प्रेरणाओं पर न होकर बाह्य व्यवहार पर होता है—दोनों ही प्रथाएँ और कानून इस बात पर विशेष बल देते हैं कि लोगों के व्यवहार उन्हीं के अनुरूप हों। उनके व्यवहार ऐसे न हों जो प्रथाओं और कानूनों का उल्लघन करें। इस प्रकार व्यक्ति की आन्तरिक प्रेरणाओं पर इस बात का कोई दबाव नहीं पड़ता।

(3) दोनों के पीछे उनकी उपयुक्तता सम्बन्धी निर्णय रहता है—प्रथाओं को साधारणतः समाज द्वारा मान्यता प्राप्त होती हैं, क्योंकि वे किसी न किसी सीमा तक उपयुक्त होती हैं। प्रथाओं के पीछे समाज का निर्णय निहित होता है जो लोगों के लिए उपयोगी होता है। कानून भी इसीलिए बनाये जाते हैं कि समाज का कल्याण किया जा सके। समाज में सुरक्षा और शान्ति की व्यवस्था के लिए दोनों ही बहुत महत्त्वपूर्ण होते हैं। इसलिए कानूनों का पालन करना समाज को प्रगति के मार्ग की ओर उन्मुख करना है। अतः दोनों का पालन समाज के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

हम समाज में प्रचलित व्यवहार के नियमों की श्रेष्ठता जाँचने के लिए उनको प्रथाओं और नियमों की कसौटी पर रखते हैं। यदि वे व्यवहार के इन नियमों के अनुसार उचित प्रतीत होते हैं तो उनके अनुसार व्यवहार करते हैं, वरना इन नियमों में परिवर्तन करना पड़ता है। इसके पश्चात सामाजिक व्यवहारों में परिवर्तन करने का प्रयास किया जाता है। जब इन नियमों को वैधानिक रूप दे दिया जाता है तो उसको हम कानून की संज्ञा दे देते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि प्रथा और कानून दोनों बहुत कुछ सीमा तक समान ही हैं। दोनों के स्वरूप में केवल आंशिक अन्तर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूढ़ियाँ (Mores)

रूढ़ियों की परिभाषा करते हुए डासन और गैटिस ने लिखा है, "रूढ़ियाँ (वे) जनरीतियाँ हैं जिन्होंने अपने साथ किसी प्रकार (ऐसे) निर्णय (भावना), जिन पर मुख्यत: समूह का कल्याण निर्भर है, जोड़ लिए हैं।[1] इससे स्पष्ट है कि रूढ़ियाँ वे जनरीतियाँ हैं जिनमें कल्याण की भावना निहित होती है।

समनर ने इसे स्पष्ट करते हुए लिखा है, "जब सत्य और औचित्य के तत्त्व कल्याण के सिद्धान्तों में विकसित हो जाते हैं, जनरीतियाँ दूसरे (उच्च) क्षेत्र (रूढ़ियाँ) में उठ जाती हैं।"[2] ग्रीन ने रूढ़यों की परिभाषा करते हुए लिखा है, "कार्य करने की सामान्य रीतियाँ रूढ़ियाँ होती हैं जो जनरीतियों की अपेक्षा अधिक निश्चयपूर्वक सही वह उचित समझी जाती हैं और जो अधिक निश्चत और कठोर दण्ड (समूह द्वारा) दिलवाती हैं यदि (कोई उनका) उल्लंघन करे।"[3]

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि रूढ़ियाँ जनरीतियों से भिन्न नहीं होतीं, वरन् दोनों में आंशिक अन्तर होता है। जब राम बालक होता है तो उसका महत्त्व कुछ कम रहता है और जब वह युवावस्था को प्राप्त करता है तो समाज में उसका महत्त्व बढ़ जाता है और लोग श्रीमान राम कहकर पुकारते हैं। जनरीतियाँ और रूढ़ियाँ एक ही वस्तु या धारणा की क्रमशः बाल तथा युवा स्वरूप हैं। इसे हम निम्न समीकरण के द्वारा और भी भली प्रकार समझ सकेंगे।

रूढ़ि=जनरीति+समूह के कल्याण की भावना+उपयोगिता का दृष्टिकोण +समूह की अधिक अभिमति।

अत: रूढ़ियाँ वे व्यवहार प्रतिमान हैं जिन्हें समूह कल्याणकारी, उचित एव उपयोगी समझता है और जिनके उल्लंघन किये जाने पर समूह अपना अपमान समझकर दण्ड देने के लिए तत्पर रहता है। इन्हें समूह की अभिमति प्राप्त होती है और ये बिना सोचे-विचारे स्वीकार कर ली जाती हैं और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्वाभाविक रीति से हस्तान्तरित होती जाती हैं।

---

[1] "Mores are folkways which have added to them, through some reflexion, the judgement that group welfare is particularly dependent upon them." Carl A. Dawson and Warner E. Gettys, *An Introduction to Socitey*, The Ronald Press Co., New York, p. 50.

[2] "When the elements of truth and sight are developed into doctrines of welfare, the folkways are raised to another plans." W. G. Sumner, ***Folkways***, p. 30.

[3] "Common ways of acting which are more definitely regarded as right and proper than the folkways and which bring greater certainty and severity of punishment of violated are the mores. A. W. Green, *Sociology*, p. 76.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूढ़ियों की विशेषताएँ

(1) रूढ़ियाँ सदैव सत्य होती हैं—रूढ़ियाँ सदैव सत्य समझी जाती हैं। ये व्यवहार हमारे पूर्वजों द्वारा पालन होते आये हैं, इसीलिए इसके पीछे हमारे पूर्वजों के अधिकार निहित हैं। इसको पालन करने के पीछे वह तत्त्व रहता है जिसके पालन से हमारे पूर्वजों ने लाभ उठाया है, अतः हम भी लाभान्वित होंगे।

(2) वे सदैव उचित होती हैं—रूढ़ियाँ कभी भी अनुचित नहीं होतीं, क्योंकि समूह इन्हें उचित कहता है। एक बालिका अपने पति की चिता पर सती होने के लिए शृंगार करके बैठी हुई है। उसकी भावनाओं की कौन चिन्ता करता है। सती होना एक रूढि है और वह अनुचित नहीं हो सकती। अनेक वर्षों तक रूढ़ि के अनुसार व्यवहार करते हुए, लाखों अबलाएँ सती होती रहीं। कोई भी व्यवहार उचित होता है जब तक कि उस स्थान एवं काल की रूढ़ियाँ उसका संरक्षण करती हैं। हम किसी कार्य को उचित कार्य को कहते हैं ? क्योंकि समूह उस कार्य को उचित कहता है। हमारी उचित और अनुचित की भावना ही रूढ़ियों पर आधारित है। अतः जा कुछ भी रूढ़ियों के अनुसार होता है वह उचित होता है।

(3) रूढ़ियाँ रूढ़िवादी होती हैं—रूढ़ियों की प्रकृति रूढ़िवादी होती है। इन्हें शीघ्र परिवर्तित नहीं किया जा सकता। एक रूढ़ि कम से कम 20-25 वर्ष के समाज की गति से साधारणतया पीछे रहती है। हमारे अवलोकन करने का यह दृष्टिकोण होना चाहिए कि कहीं वे 200-300 वर्ष पीछे तो नहीं हैं।

रूढ़ियों के प्रकार

रूढ़ियों के दो प्रकार होते हैं : प्रथम, अस्त्यात्मक (positive) और द्वितीय निषेधात्मक (prohibitive or negative)।

(1) अस्त्यात्मक रूढ़ियाँ या आचार (Morals)—आचार उन रूढ़ियों को कहते हैं जो उचित व्यवहार करने की ओर संकेत करते हैं; जैसे—सत्य बोलना चाहिए, विद्वानों की संगति में बैठना चाहिए, दान करना चाहिए, माता-पिता का आदर करना चाहिए, गुरुजनों की सेवा करनी चाहिए, इत्यादि।

(2) निषेधात्मक रूढ़ियाँ या टैबू (Taboos)—निषेधात्मक रूढ़ियाँ वे रूढ़ियाँ हैं जो व्यवहारों को न करने की ओर संकेत करती हैं; जैसे—बहू को जेठ (पति के बड़े भाई) से बातचीत नहीं करनी चाहिए, झूठ नहीं बोलना चाहिए, चोरी नहीं करनी चाहिए, इत्यादि।

जनरीतियों, प्रथाओं एवं सामाजिक प्रचलनों के साथ समाज में कुछ न कुछ निषेध किसी न किसी रूप में विद्यमान रहते हैं। टैबू का स्वरूप नकारात्मक (negative) होता है जिसमें किसी काम को न करने की ओर संकेत किया जाता है। कैज तथा शैंक ने टैबू की परिभाषा करते हुए लिखा है, "टैबू एक प्रकार का निषेध कर्म है जो किसी समूह विशेष के लगभग सभी व्यक्तियों में पाया जाता है तथा जिसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राप्त होने के कारण दोनों प्रकार के होते हैं—सामाजिक और जैविक, तथा जिसकी मान्यता और शक्ति प्रधानतः व्यक्ति की अन्त:प्रेरणा पर होती है न कि वाह्य नियन्त्रण पर।"[1]

टैबू के प्रकार

निषिद्ध कर्म (Taboo) के अनेक प्रकार हो सकते हैं। यहाँ हम टैबू के दो प्रमुख प्रकारों का वर्णन करेंगे।

(1) **भोज निषेध** (Food Taboo)—कुछ समूहों में किसी विशेष प्रकार का भोजन करना निषिद्ध है। उदाहरणार्थ, कुछ समूहों में मांस खाना या किसी विशेष जीव का मांस खाना निषिद्ध होता है। इसलिए हम इस कर्म निषेध को भोज-निषेध कहते हैं।

(2) **लिंग निषेध** (Sex Taboo)—प्रत्येक समाज में लिंगात्मक सम्बन्धों पर नियन्त्रण होता है। प्रत्येक समाज में निकट सम्बन्धियों के साथ लिंग सम्बन्ध स्थापित करना निषेध होता है। इसलिए इसको लिंग-निषेध (Sex Taboo) कहते हैं।

टैबू का मनोवैज्ञानिक स्वरूप

टैबू की व्यापकता का एक प्रधान कारण यह है कि व्यक्ति के मन में हर समय भय विद्यमान रहता है कि कहीं उससे ऐसा कार्य न हो जाय जो निषेध है। इसके अलावा व्यक्ति के मन में इस प्रकार की उपकल्पना भी हो सकती है कि यदि वह किसी विशेष कर्म को करता है तो उसको पाप लगेगा। अतः ये भावनाएँ एवं वेदनाएँ व्यक्ति के मन में उथल-पुथल मचाती रहती हैं और यही व्यक्ति को 'न करने वाले कर्म' को करने से रोकती हैं। यहाँ प्रश्न किया जा सकता है कि इस प्रकार का निषेध-कर्म कर बैठने का भय और किसी पाप कर्म का भय प्रायः सभी समूहों के व्यक्तियों में किस प्रकार उद्दीप हो जाता है? इस विषय में फ्रायड ने अपने दृष्टिकोण द्वारा टैबू के मनोवैज्ञानिक स्वरूप पर प्रकाश डाला है।

फ्रायड का सिद्धान्त—फ्रायड के अनुसार निषिद्ध कर्म के दो पक्ष होते हैं। जो व्यक्ति और वस्तुएँ निषिद्ध कर्मों से सम्बन्धित होते हैं, एक ओर तो हम उन्हें पवित्र और उचित स्वीकार करते हैं, दूसरी ओर उन्हें हम गन्दी और दूषित ठहराते हैं। अतः लोगों के मनों में टैबू के विषय में एक प्रकार की मनोवृत्ति-सी बन जाती है जिसमें भय और आदरणीय भावनाएँ निहित होती हैं और इनको पृथक करना कठिन होता है। उदाहरणस्वरूप, कुछ जातियों में किसी व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात उसके सम्बन्धी उसको जमीन में दफनाते हैं। दफनाते समय उसके मृत शरीर के साथ उसकी वैयक्तिक वस्तुएँ भी जमीन में दफना देते हैं। ऐसा क्यों करते हैं? इसके दो

---

[1] "Taboo may be defined as a negative sanction, common to a group of people, its uniformity having a social as well as biological basis, and its efficacy depending upon internal compulsion other than external coersion." Katz and Schanck, *Social Psychology*, p. 56.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पक्ष हैं—एक ओर मृतक के सम्वन्धी इस बात से भयभीत रहते हैं कि यदि मृतक भली प्रकार नहीं दफनाया गया तो उसकी आत्मा भटकती रहेगी और सम्बन्धियों को सतायेगी। दूसरी ओर मृतक के सम्वन्धी उसके प्रति श्रद्धा और प्रेम की भावना से प्रेरित होकर ऐसा करते हैं। उनका विचार होता है कि यदि मृतक को उचित ढंग से दफनाया गया तो उसकी जीवात्मा को कष्ट न होगा।

अतः उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि दो विपक्षीय अर्थात विरोधी भावनाएँ इस प्रकार संयुक्त हैं कि उनका पृथक्करण नहीं किया जा सकता।

टैबू तथा सामाजिक नियन्त्रण

निषिद्ध कर्मों द्वारा समाज म व्यक्तियों के आचार-विचारों पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। राजनैतिक कानूनों में भी निषिद्ध कर्मों को आधारभूत माना गया है। उदाहरण के लिए, हमारे देश में, विशेषतया हिन्दू समाज में, गो-हत्या निषिद्ध है। इसी के आधार पर राजनैतिक नियम अथवा कानूनों का निर्माण किया गया है। हौलिंगवर्थ ने अपने एक लेख में लिखा है कि पुराने जमाने में प्रसूतावस्था के अनुभव पर बात करना एक टैबू था; किन्तु इसके विपरीत बाल-सुख, अर्थात सन्तान-सुख के विषय में बातचीत करने में कोई रोक-टोक या टैबू न था। आखिर ऐसा क्यों था? प्रजनन सम्बन्धी कष्ट की चर्चा वर्जित क्यों थी? जबकि मातृत्व के सुख का वर्णन करने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता था। ऐसा इसलिए था कि औद्योगिक क्रिया के लिए व्यक्तियों की आवश्यकता होती है और यह आवश्यकता की पूर्ति केवल काम-वासना द्वारा ही हो पाती है। यही कारण है कि प्रसूतावस्था के अनुभव के विषय में चर्चा वर्जित थी, अर्थात एक टैबू था। इसके विपरीत मातृत्व-सुख की चर्चा को समाज स्वीकृत था। उक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि वास्तव में टैबू समाज के नियन्त्रण में सहायक हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण द्वारा स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक प्रमाप परम्पराओं, प्रथाओं, जनरीतियों एवं निषिद्ध कर्मों आदि का ही विविध स्वरूप है।

प्रश्न

1. (अ) समाजों के लिए प्रचलन और परम्पराएँ क्यों आवश्यक हैं?

(ब) ऐसे प्रचलनों एवं परम्पराओं के लिए समय-समय पर परिवर्तन क्यों आवश्यक हैं?

(a) Why is it necessary for societies to have conventions and traditions?

(b) Why is it essential for such conventions and traditions to be revised from time to time? Agra, M. A. Sociology, 1958

2. सामूहिक प्रमाप व्यक्ति के व्यवहार एवं अभिवृत्तियों को कहाँ तक प्रभावि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(How far do group norms influence individual's behaviour and attitudes ? Agra, M. A. Sociology, 1961.)

3. समूह एवं व्यक्ति के व्यवहार को परम्पराएँ एवं प्रथाएँ कहाँ तक प्रभावित करती हैं ?

How far do traditions and customs influence the group and the individual's behaviour ? Agra M. A. Sociology, 1961.)

4. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(i) परम्परा (tradition)

(ii) सामाजिक जीवन में कानून का महत्त्व ।

5. परम्पराओं और प्रथाओं के सामाजिक महत्त्व को स्पष्ट कीजिए

(Bring out the importance of traditions and customs.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

29

सामाजिक नियन्त्रण

(Social Control)

प्राय: मानव की यह धारणा होती है कि वह स्वतन्त्र है और ... सकता है, यह सत्य नहीं है। अपने को स्वतन्त्र समझने वाला मानव समाज ... से जकड़ा हुआ है, उसके हर व्यवहार पर समाज नियन्त्रण करता है। ... बनाये रखने के लिए इस प्रकार के नियन्त्रण अत्यन्त आवश्यक हैं।

सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ एवं परिभाषाएं

(Meaning and Definitions of Social Control)

समाज में यदि प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छा के अनुसार हर ... लगे और वह दूसरों का तनिक भी ध्यान न करे, तो इसका परिणाम ... आप सभी उत्तर देंगे कि समाज में अव्यवस्था का राज्य होगा। समाज ... सम्बन्धों का जाल है, जिसकी प्रत्येक कड़ी अन्य कड़ियों से एक निश्चित ... है। यह सम्बन्ध समाज के साथ-साथ विकसित होता रहा है। यह ... परिवर्तित होता रहता है, परन्तु एक निश्चित व्यवस्था अवश्य रहती है। ... या संगठन द्वारा ये सम्बन्ध नियन्त्रित होते हैं उसे ही हम सामाजिक ... (social control) कहते हैं।

सामाजिक नियन्त्रण को और भी सरल शब्दों में समझाया जा ... प्रत्येक समाज में कुछ निश्चित व्यवहारों की आशा उसके सदस्यों से की जा... सदस्य वैसा व्यवहार करते भी हैं, परन्तु प्रश्न यह उठता है कि वे वैसा ही ... क्यो करते हैं ? यहाँ पर इस प्रश्न का उत्तर देते हुए इतना ही कहना ... कि कुछ ऐसे तत्त्व होते हैं जिनके कारण किसी समाज के सदस्य समाज द्वारा ... व्यवहार करते हैं। ये ही तत्त्व सामाजिक नियन्त्रण के आधार हैं। इस प्रश्न ... विस्तार में आगे दिया जायेगा।

स्मिथ ने सामाजिक नियन्त्रण की परिभाषा इन शब्दों में की है, ... नियन्त्रण) "उन उद्देश्यों की प्राप्ति है, जो उन उद्देश्यों के साधनों के प्रति ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामूहिक अनुकूल द्वारा होती है।"[1] स्मिथ ने इस परिभाषा द्वारा निम्न बातों पर प्रकाश डाला है। सामाजिक नियन्त्रण का उद्देश्य उन उद्देश्यों की प्राप्ति है जो समाज द्वारा पूर्व निश्चित होते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जिन साधनों का प्रयोग किया जाता है, वे जानबूझ कर समाज द्वारा सामूहिक रूप में प्रयोग किये जाते हैं। इन साधनों के पीछे समाज की शक्ति होती है, इन्हीं साधनों को सामाजिक नियन्त्रण के साधन कहते हैं।

(i) **ऑगबर्न और निमकॉफ की परिभाषा** : "दबाव का वह प्रतिमान जो व्यवस्था एवं स्थापित नियमों को बनाए रखने का प्रयत्न करता है, सामाजिक नियन्त्रण की व्यवस्था कहा जाता है।"[2]

(ii) **ऑगबर्न, निमकॉफ, पार्क और बरगस की परिभाषा** : "सामाजिक नियन्त्रण से हम सामाजिक प्रक्रिया में किसी व्यक्ति—अधिकारी, कृतिकारी या नेता—का मनमाना हस्तक्षेप समझते हैं।"[3]

(iii) **रॉस की परिभाषा** : "सामाजिक नियन्त्रण उन पद्धतियों की व्यवस्था है जिनके द्वारा समाज अपने सदस्यों को मान्य-व्यवहार प्रतिमानों के अनुरूप बनाता है।"[4]

(iv) **ब्रियरले की परिभाषा** : "सामाजिक नियन्त्रण उन प्रक्रियाओं, चाहे आयोजित हों या अआयोजित के लिए सामूहिक शब्द है जिनके द्वारा व्यक्तियों को समूह के रिवाजों एवं जीवन मूल्यों के अनुरूप बनने के लिए शिक्षा दी जाती है, अनुनय किया जाता है या विवश किया जाता है।"[5]

---

1. "Social control as the attainment of ends through collectively conscious adaptation of means to those ends." R. G. Smith, *Fugitive Papers*, p. 37.
2. "The pattern of pressure which a society exerts to maintain order and established rules is known as its system of social control." W. F. Ogburn and M. F. Nimkoff, *A Handbook of Sociology*, p. 182.
3. "What we ordinarily mean by social control is the arbitrary intervention of some individual—official, functionary or leader—in the social process." R. E. Park and E. W. Burgess, *Introduction to the Science of Sociology*, p. 789.
4. "Social control is a system of devices whereby society brings its members into conformity with the accepted standards of behaviour, E. A. Ross. *Social Control*.
5. "Social control is a collective term for those processes, planned or unplanned, by which individuals are taught, persuaded, or compelled to conform to the usages and life values of the group." H. C. Brearly, in J. S. Roucek (ed.), *Social Control*, p. 3.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(v) **बोगार्डस की परिभाषा :** "समूह नियन्त्रण वह पद्धति है जिससे समूह अपने सदस्यों के व्यवहारों को नियन्त्रित करता है।"[1]

(vi) **लैंडिस की परिभाषा :** "सामाजिक नियन्त्रण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सामाजिक व्यवस्था स्थापित की जाती है और बनाये रखी जाती है।"

आत्म-नियन्त्रण और समाजिक नियन्त्रण
(Self-Control and Social Control)

आत्म-नियन्त्रण और सामाजिक नियन्त्रण एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। वे एक ही वस्तु के दो पक्ष हैं। आत्म-नियन्त्रण व्यक्ति के उन स्वतः प्रयत्नों को कहते हैं जो वह अपने व्यवहार को पूर्व निर्धारित मूल्यों आदर्शों या उद्देश्यों के अनुसार बनाने के लिए करता है। यह प्रयत्न व्यक्ति के स्तर पर होता है। ये उद्देश्य एवं आदर्श समूह के द्वारा निश्चित होते हैं। इस प्रकार आत्म-नियन्त्रण का आधार भी समाज ही है।

फिर भी आत्म-नियन्त्रण एवं सामाजिक नियन्त्रण में भेद करना है। आत्म-नियन्त्रण व्यक्ति के स्तर पर होता है और सामाजिक नियन्त्रण ... स्थायित्व के लिए अनिवार्य है। सामाजिक नियन्त्रण के अन्तर्गत आत्म-नियन्त्रण ... जाता है। वास्तव में आत्म-नियन्त्रण सामाजिक नियन्त्रण का आन्तरीकरण (inter-nalization) है। व्यक्ति का स्वभाव ही उसके अनुरूप हो जाता है और वह ... ही आशातीत व्यवहार करता है। सामाजीकरण एवं अन्य सामाजिक ... सामाजिक नियन्त्रण का व्यक्ति के व्यक्तित्व में आन्तरीकरण ही है।

सामाजीकरण और सामाजिक नियन्त्रण
(Socialization and Social Control)

सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाज व्यक्ति को समाज में रहने-सहने का ढंग इत्यादि सिखाता है और समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ व्यवहार करने के लिए प्रशिक्षण देता है। बचपन से ही व्यक्ति सीखना प्रारम्भ कर देता है। व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास ही सामाजीकरण पर आधारित है। सामाजीकरण की प्रक्रिया आन्तरीकरण (internalization) की प्रक्रिया है। जो ... सिखाए जाते हैं, उन्हें व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का भाग बना लेता है। वे ... दृष्टिकोण, अभिवृत्तियाँ, मूल्य एवं आदर्श बन जाते हैं।

---

1 "Group control is the way in which a group regulates the behaviour of its members." E. S. Bogardus, *Sociology*, p. 465.
"Social control is the process by which social order is (1) established, and (2) maintained." P. H. Landis, *Social Control*, p. 4.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक नियन्त्रण का कार्य वहाँ प्रारम्भ होता है जहाँ सामाजीकरण का कार्य समाप्त होता है। समाज के अनुरूप व्यवहार करना यदि आपने सीख लिया है तो ठीक है, वरना सामाजिक नियन्त्रण उस प्रकार का व्यवहार करने के लिए बाध्य करता है। सामाजिक नियन्त्रण एक बाह्य शक्ति के रूप में व्यक्ति के व्यवहार को नियन्त्रित करता है। हम चाहें या न चाहें उस प्रकार का व्यवहार करना पड़ेगा, वरना दण्ड भोगना पड़ेगा। सामाजिक नियन्त्रण बल का भी प्रयोग करता है। हिंसक एवं अहिंसक दोनों ही प्रकार के साधनों का प्रयोग सामाजिक नियन्त्रण करता है। इस प्रकार सामाजीकरण एवं सामाजिक नियन्त्रण एक ही उद्देश्य के प्राप्त करने के लिए दो भिन्न साधन हैं और एक-दूसरे के पूरक हैं।

सामाजिक नियन्त्रण के उद्देश्य
(Purposes of Social Control)

सामाजिक नियन्त्रण के क्या उद्देश्य हैं ? इसकी समाज में क्या आवश्यकता है? सामाजिक नियन्त्रण के क्या कार्य हैं ? ये स्वाभाविक प्रश्न हैं। हम कह ही चुके हैं कि सामाजिक नियन्त्रण समाज के लिए अत्यन्त आवश्यक है। समाज का अस्तित्व सामाजिक नियन्त्रण पर आधारित है। लेंडिस ने लिखा है, "सामाजिक नियन्त्रण (1) व्यक्ति की स्वयं अपने से रक्षा करने, और (2) समाज की आवश्यकता से बचाने के लिए आवश्यक हैं।[1]" किम्बाल यंग ने लिखा है, "सामाजिक नियन्त्रण के उद्देश्य किसी विशिष्ट समूह या समाज की समरूपता, एकता और निरन्तरता को लाना है।"[2]

हर समाज या समूह के लिए आवश्यक है कि वह अपनी सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखे और अधिकतर लोग इस व्यवस्था के अनुरूप व्यवहार करें। इससे समाज की समरूपता, एकता और निरन्तरता बनी रहती हैं। सामाजिक नियन्त्रण के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं

(अ) प्राचीन व्यवस्था को पुनर्स्थापित करना (To Re-establish the Old Order)—सामाजिक नियन्त्रण का प्रथम कार्य प्राचीन व्यवस्था को स्थायी रखना है। बूढ़े लोग जिन दशाओं में रह रहे हैं, उन्हीं को वे अपने बच्चों पर लादना चाहते हैं।

(ब) सामूहिक निर्णय का पालन करवाना (To Get Obeyed Social Decisions)—सामाजिक नियन्त्रण सामूहिक निर्णयों को समाज के सदस्यों से

---

1 "Social control is necessary (1) to protect the individual against himself, and (2) to save society from chaos." P. H. Landis, *Social Control*, p. 4.

2 "The aims of social control are to bring about conformity, solidarity and continuity of a particular group or society." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 898.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पालन करवाता है। जो नवीन निर्णय समाज करता है उनके पालन करवाने हेतु सामाजिक नियन्त्रण भी निश्चित कर दिये जाते हैं।

(स) व्यक्तिगत व्यवहार को नियमित करता है (Regulates Individual Behaviour)—सामाजिक नियन्त्रण व्यक्तिगत व्यवहार को नियमित करता है। व्यक्ति के लिए समाज ने व्यवहार निश्चित कर दिये हैं और यह आशा की जाती है कि व्यक्ति इन्हीं व्यवहारों को करेंगे।

(द) सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखता है (Maintains Social Order)—सामाजिक नियन्त्रण सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखता है। इसके कारण समूह में दृढ़ता उत्पन्न होती है और समूह चिरकाल तक बना रहता है।

(य) समाज में एकरूपता को उत्पन्न करता है (Breeds Conformity in Society)—सामाजिक नियन्त्रण समाज के सदस्यों का एकसा व्यवहार करने के लिए प्रेरित एवं विवश करता है। इसके कारण समाज में एकरूपता उत्पन्न होती है।

(र) व्यक्तियों को व्यवहार चुनने में सहायता पहुँचती है (Helps Individuals to Choose Behaviour)—समाज में एक व्यक्ति के सामने यह समस्या रहती है कि वह एक निश्चित परिस्थिति में कौन-सा व्यवहार करे। सामाजिक नियन्त्रण व्यवहार चुनने में उसकी सहायता करता है। समाज में विभिन्न परिस्थितियों के लिए निश्चित व्यवहार होते हैं। मनुष्यों को उन्हीं व्यवहारों को करना पड़ता है और जो नहीं करना चाहते उन्हें सामाजिक नियन्त्रण वैसा करने के लिए बाध्य करता है। आधुनिक जटिल समाज में सामाजिक नियन्त्रण मनुष्यों की बड़ी सहायता करता है, क्योंकि वह उन्हें जटिल परिस्थितियों में मार्ग-प्रदर्शन करता है।

सामाजिक नियन्त्रण के प्रकार
(Forms of Social Control)

सामाजिक नियन्त्रण के अन्तर्गत अनेक समाजशास्त्रियों के मतानुसार केवल मनुष्यों द्वारा निर्मित उन नियमों को लेना चाहिए जिन्हें वे जागरूक अवस्था में बनाते है। इस धारणा से हम सहमत नहीं हैं। सामाजिक नियन्त्रण अधिकांश रूप में अजागरूक अवस्था में विकसित हुआ है और यह विकसित सामाजिक नियन्त्रण जितना प्रभावशाली है उतना निर्मित सामाजिक नियन्त्रण नहीं। इस आधार पर सामाजिक नियन्त्रण के साधनों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम, औपचारिक (formal) और द्वितीय, अनौपचारिक (informal)।

(i) औपचारिक एवं अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण (Formal and Informal Social Control)

औपचारिक सामाजिक नियन्त्रण के साधनों के अन्तर्गत वे नियन्त्रण आते हैं जिनका मनुष्य जागरूक अवस्था में निर्माण करता है। इसके उदाहरण वैधानिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संहिताएँ (legal codes), समितीय संहिताएँ (associational codes), आर्थिक संहिताएँ (economic codes) इत्यादि ।

औपचारिक सामाजिक नियन्त्रण के साधन अधिक प्रभावपूर्ण नहीं होते। प्राथमिक समूहों में इनका महत्त्व बहुत ही कम होता है, परन्तु द्वैतीयिक समूहों में इनका महत्व बढ़ जाता है। समाज जैसे-जैसे जटिल होता जा रहा है वैसे-वैसे इनका महत्त्व बढ़ता जा रहा है। अवैयक्तिक सम्बन्धों (impersonal relations) को नियन्त्रित करने के लिए ये ही साधन प्रयोग में लाये जाते हैं।

(2) अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण (Informal Social Control)

अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण के साधन वे हैं जो स्वतः समाज की आवश्यकताओं के अनुसार विकसित होते हैं। ये साधन अपने आप नियन्त्रण का कार्य करते रहते हैं। जनरीतियाँ (folkways), रीति-रिवाज (customs), रूढ़ियाँ (mores) और सामाजिक आदर्श (social ideals) इनके उदाहरण हैं। जनमत और उपहास उड़ाना इत्यादि ऐसे साधन हैं जो मनुष्या पर नियन्त्रण रखते हैं। रॉस ने लिखा है, 'सहानुभूति, सामाजिक, न्याय की भावना और क्रोध अनुकूल परिस्थितियों में अपने आप एक वास्तविक प्राकृतिक व्यवस्था या वह व्यवस्था जिसका कोई ढाँचा या योजना नहीं होती, बना लेते हैं।[1] प्राथमिक समूहों और आदिवासियों में इसी प्रकार सामाजिक नियन्त्रण किया जाता है।

आधुनिक युग में भी इनका महत्त्व कम नहीं हुआ। मनुष्य के अधिकाश व्यवहारों पर ये साधन ही नियन्त्रण रखते हैं। ग्रामों में समुदाय एक प्रकार का प्राथमिक समूह होता है, जहाँ पर औपचारिक सामाजिक नियन्त्रण की अपेक्षा अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण अधिक प्रभावशाली होता है। प्रथाओं (customs) का गाँव वालों पर अधिकांश आधिपत्य रहता है।

समूह स्वय एक नियन्त्रण का साधन है। एक समूह अपने सदस्यों पर अधिक नियन्त्रण रख सकता है। इसके सम्बन्ध में अनेक परीक्षण हुए हैं। यदि सड़कों पर नियन्त्रण रखने के लिए यह कार्य उनके समूह पर ही छोड़ दें तो हम देखेंगे कि सदस्य स्वयं नियन्त्रित रहते हैं, ऐसा प्राथमिक समूहों में ही सम्भव है।

अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण के साधन कई मनोवैज्ञानिक आधारों पर आधारित हैं। सबसे प्रमुख बात यह है कि मनुष्य इस नियन्त्रण को किसी बाह्य शक्ति द्वारा थोपा हुआ नहीं समझता है। आगे चलकर हम विचार करेंगे कि शक्ति कहाँ तक सामाजिक नियन्त्रण करने में सहायक होती है। साधारणतया यह मनुष्य का

---

1 "Sympathy, sociability, the sense of justice and resentment are competent under favourable circumstances to work out by themsevles a true, natural order, that is to say, an order without design or art." E. A. Ross, *Social Control*, p. 41.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वभाव है कि वह बाह्य शक्ति का प्रतिकार करता है। जिस कार्य को वह ... करता है वह अन्य कार्यों से अच्छा होता है। अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण ... युक्तियों एवं प्रतिक्रियाओं द्वारा प्रभावपूर्ण बनता है :

(अ) **सामाजिक विचार प्रतिपादन** (Social Indoctrination)—... को प्रारम्भ से ही ऐसी शिक्षा दी जाती है, जिससे सामाजिक नियमों को ... प्राकृतिक मानने लगते हैं। ये विचार उनकी भावना के अंग बन जाते हैं ... सोचने लगता है कि यह मेरे विचार हैं, मैं ऐसा करना चाहता हूँ, समाज मेरे ... चल रहा है।

कोई भी सामाजिक नियम जब तक इस आधार पर आधारित नहीं ... जायेगा, तब तक वह अधिक दिनों तक नहीं चल सकता। कोई भी नयी ... शिक्षा और प्रचार द्वारा सदस्यों के विचारों को अपने अनुसार बनाती है।

(ब) **अभ्यस्तता** (Habituation)—विचार प्रतिपादन से सम्बन्धित ... क्रिया अभ्यस्तता है। अभ्यस्तता वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा किसी समाज के ... अजागरूक अवस्था में किसी कार्य को स्वीकार कर लेते हैं। बचपन से जो ... करते आते हैं वह हमें स्वाभाविक लगता है। जो आदतें पड़ जाती हैं उनका ... बड़ा कठिन होता है। समाज के नियमों से हम अभ्यस्त हो जाते हैं और ... स्वाभाविक एवं प्राकृतिक समझ बैठते हैं। इसके विपरीत जो कुछ भी होता है ... हम अच्छा नहीं समझते।

(स) **नेतृत्व** (Leadership)—नेता भी सामाजिक नियन्त्रण रखने में ... सहायता करता है। नेतृत्व से हमारा अभिप्राय वह योग्यता है जो व्यक्तिगत गुणों के ... आधार पर दूसरों को एक विशिष्ट कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।

(द) **संस्कार** (Ritual)—संस्कार वह औपचारिक विधि है जिसके द्वारा ... कार्य को बार-बार उसी प्रकार किया जाता है। इसको परिवर्तित नहीं किया ... सकता, क्योंकि इनके साथ यह विचार जुड़ा हुआ है कि वे सत्य एवं अपरिवर्तनीय ... इसका मुख्य स्वरूप धार्मिक क्षेत्रों में देखने को मिलता है।

(य) **उत्सव** (Ceremony)—उत्सव किसी अवसर को महत्त्वपूर्ण बनाने के ... लिए समाज द्वारा निश्चित प्रक्रिया है, जो औपचारिक और प्रतिष्ठा प्रकृति की ... है। इन उत्सवों के द्वारा सामाजिक नियमों के प्रति आदर उत्पन्न किया जाता ... उत्सव वह बन्धन है जो समाज के सदस्यों को बाँधे हुए है।

(र) **सामाजिक चिन्ह** (Social Symbols)—सामाजिक चिन्ह एक ... के सदस्यों में समान भावना को उत्तेजित करते हैं। इसके कारण समाज के ... में सामाजिक व्यवस्था के प्रति आदर उत्पन्न होता है और इस भावना से प्रेरित ... न केवल वे सामाजिक नियमों का पालन ही करते हैं, वरन्, इनकी रक्षार्थ वे ... प्राण तक भी न्योछावर करने के लिए तत्पर रहते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सामाजिक नियन्त्रण (Direct and Indirect Social Control)

जब निकट के लोगों का व्यक्ति पर प्रभाव पड़ता है तो इसे प्रत्यक्ष सामाजिक नियन्त्रण कहते हैं। प्रायः प्राथमिक समूहों में प्रत्यक्ष सामाजिक नियन्त्रण ही पाया जाता है। माता-पिता, नातेदार, अध्यापक, साथी इत्यादि का प्रभाव इसके उदाहरण हैं। अप्रत्यक्ष नियन्त्रण वह होता है जो प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण के द्वारा उत्प्रेषित होता है। मानहीम (Mannheim) के अनुसार प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सामाजिक नियन्त्रण का भेद स्पष्ट नहीं है, क्योंकि अप्रत्यक्ष सामाजिक नियन्त्रण भी व्यक्तियों के व्यक्तिगत माध्यम के द्वारा लागू किया जाता है।

सकारात्मक एवं नकारात्मक सामाजिक नियन्त्रण (Positive and Negative Social Control)

किम्बाल यंग ने सामाजिक नियन्त्रण को सकारात्मक एवं नकारात्मक में वर्गीकृत किया है। इनका वर्गीकरण सामाजिक नियन्त्रण की विधि पर आधारित है—पुरस्कार या दण्ड, पुरस्कार पर आधारित सामाजिक नियन्त्रण को सकारात्मक कहते हैं और दण्ड पर आधारित सामाजिक नियन्त्रण को नकारात्मक कहते हैं।

सामाजिक नियन्त्रण की पद्धतियाँ, साधन एवं माध्यम (Methods, Means and Agencies of Social Control)

सामाजिक नियन्त्रण किन पद्धतियों से किया जाता है, कैसे किया जाता है, और किसके द्वारा कौन करता है? ये प्रश्न सामाजिक नियन्त्रण को समझने के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

सामाजिक नियन्त्रण किन पद्धतियों से किया जाता? पुरस्कार और दण्ड पद्धतियों के उदाहरण हैं। जो व्यक्ति समाज के नियमों के अनुरूप कार्य करता है उसे पुरस्कार मिलता है और जो उनके विरुद्ध कार्य करता है, उन्हें दण्ड दिया जाता है।

सामाजिक नियन्त्रण की पद्धति (Methods of Social Control)

पुरस्कार और दण्ड सामाजिक नियन्त्रण का महत्त्वपूर्ण पद्धतियाँ हैं। हर संस्था, साधन और माध्यम इस पद्धति का प्रयोग करता है। पुरस्कार के अनेक तरीके हैं। किसी को शाबाशी देना, पीठ थपथपाना, प्रशंसा करना, सम्मान करना, इनाम देना इत्यादि पुरस्कार के तरीके (devices) हैं। इसी प्रकार हँसी उड़ाना मजाक उड़ाना (ridicule), ताना मारना, बुरा-भला कहना, किसी वस्तु से वंचित रखना, समूह से निष्कासन, जेल की सजा, अपमान करना इत्यादि दण्ड हैं। ये दण्ड छोटे से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छोटे और बड़े से बड़े हो सकते हैं। मृत्यु-दण्ड समूह से निष्कासन इत्यादि भयंकर ... हैं। इन तरीकों का उपयोग सामाजिक नियन्त्रण का हर साधन एवं माध्यम करता है।

सामाजिक नियन्त्रण की अन्य पद्धतियाँ भी हैं; जैसे—सामाजीकरण (soci- zation), विचार प्रतिपादन (indocrination), शिक्षा (education), प्रशि... (instruction), प्रदर्शन (demonstration), अनुकरण (imitation) सुझा... (suggestion), अनुनय (persuasion) इत्यादि।

सामाजिक नियन्त्रण की अनेक पद्धतियाँ हैं। नियन्त्रणों के अभाव में कि... भी प्रकार का सामाजिक नियन्त्रण स्थापित नहीं किया जा सकता है। अब ... सामाजिक नियन्त्रण की प्रमुख पद्धतियों पर प्रकाश डालेंगे।

(1) शारीरिक शक्ति (Physical Force)—शारीरिक शक्ति के ... मनुष्यों का नियन्त्रण आदि काल से होता आया है। शारीरिक शक्ति का प्र... सामाजिक नियन्त्रण की एक प्रमुख पद्धति रही है। आधुनिक युग में भी इस प... का प्रयोग किया जाता है। परिवार की समिति से लेकर राज्य तक की समिति ... बल का प्रयोग करते हैं। यद्यपि शारीरिक शक्ति का प्रयोग मानव व्यवहार ... नियन्त्रित करता है, यद्यपि यह पद्धति अधिक उपयुक्त नहीं है। मानव व्यवहार ... वास्तविक नियन्त्रण इस पद्धति के द्वारा नहीं किया जा सकता। इस पद्धति के प्र... से विपरीत प्रतिक्रिया होती है। मनुष्य भय के कारण प्रत्यक्ष रूप से अपना व्यव... ठीक कर ले, परन्तु उसमें वास्तविक सुधार नहीं होता। मनोवैज्ञानिकों की ... है कि इस पद्धति का कम से कम प्रयोग किया जाना चाहिए, क्योंकि साम... नियन्त्रण की यह एक निर्बल पद्धति है तथा इसका प्रभाव स्वस्थ न होकर वि... होता है।

मानव चिन्ह (Human Symbols)—मानव चिन्ह शारीरिक शक्ति ... अतिरिक्त सामाजिक नियन्त्रण की दूसरी पद्धति है। इन चिन्हों को चार ... बाँटा जा सकता है—सांकेतिक चिन्ह, ध्वनि चिन्ह, लिखित चिन्ह एवं कोई मूर्ति... वस्तु। सामाजिक नियन्त्रण के लिए निम्न प्रविधियाँ भी प्रयोग में लायी जाती हैं:

(अ) शिक्षा एवं निर्देश (Education and Instructions)—शिक्षा ... निर्देश द्वारा समाज के नियमों से सदस्यों को परिचित कराया जाता है। इनको ... के उपरान्त मनुष्य उनके पालन की चेष्टा करता है।

(ब) पारितोषिक (Reward)—पारितोषिक पाने की लालसा से ... सामाजिक नियमों का पालन उत्साह के साथ करता है।

(स) अनुनय (Persuasion)—अनुनय भी एक सुन्दर प्रविधि है। यदि ... व्यक्ति किसी कारण से कोई नियम नहीं पालन करना चाहता तो अनुनय के ... उसे मानने के लिए बाध्य किया जा सकता है। अनुनय वह दबाव है जो तर्क ... आधारित होता है और तर्क के द्वारा समर्थ होता है। वह वैज्ञानिक पद्धति है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(द) दण्ड (Punishment)—जब ये तीनों पद्धतियाँ विफल हो जाती हैं तो दण्ड का सहारा लेना पड़ता है। दण्ड या दुःख, जिसके द्वारा मनुष्यों पर सामाजिक नियन्त्रण रखा जाता है, अगणित प्रकार होते हैं। हँसी उड़ाना (laughter) और व्यंग्य कसना (satire) भी दण्ड के दो साधारण स्वरूप हैं। कुछ वन्य जातियों में ये दोनों सामाजिक नियन्त्रण की महत्त्वपूर्ण प्रविधियाँ हैं। ये प्रविधियाँ सामाजिक व्यवस्था की उसी प्रकार रक्षा करती हैं जिस प्रकार खाइयाँ, बाढ़ और काँटेदार तार मार्ग की रक्षा करते हैं।

सामाजिक नियन्त्रण के साधन
(Means of Social Control)

सामाजिक नियन्त्रण के अनेक साधन हैं। हम उन विधियों को कहेंगे जिनके उपयोग से सामाजिक नियन्त्रण किया जाता है। प्रमुख साधन निम्न हैं :

(1) विचारधाराएँ (ideologies),
(2) प्रत्ययक साधन (conceptual means),
(3) कला और साहित्य (art and literature),
(4) भाषा (language),
(5) मनोरंजन (recreation),
(6) आर्थिक नियन्त्रण (economic controls),
(7) जनमत (public opinion),
(8) नेतृत्व (leadership),
(9) विधि (law),
(10) धार्मिक संहिताएँ (religious codes),
(11) आचार संहिताएँ (moral codes),
(12) सामाजिक संहिताएँ (social codes),
(13) समिति संहिताएँ (associational codes),
(14) शारीरिक बल (physical force)।

सामाजिक नियन्त्रण के माध्यम
(Agencies of Social Control)

हमने अभी सामाजिक नियन्त्रण के साधनों पर प्रकाश डाला। ये सामाजिक नियन्त्रण के हथियार थे। इनका उपयोग कौन करता है? वास्तव में समाज में अनेक समितियाँ हैं जो इनका उपयोग सामाजिक नियन्त्रण में करती हैं। हम जानते है कि समितियाँ स्वयं तो कार्य नहीं करनीं, अपितु उनके स्थान पर व्यक्ति इन साधनों का प्रयोग करते हैं। जो व्यक्ति इन समितियों के नाम पर कार्य करते हैं उन्हें हम अभिकर्ता (agents) कहेंगे। इस प्रकार वास्तविक नियन्त्रक ये अभिकर्ता होते हैं, जिन्हें माध्यम अपना कार्य सौंप देते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अब हम सामाजिक नियन्त्रण के माध्यम एवं अभिकर्ताओं के कुछ उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, वे निम्न हैं :

माध्यम (Agency)	अभिकर्ता (Agents)
परिवार	माता, पिता, बड़े भाई-बहन, ... नातेदार
नातेदार समूह	नातेदार
क्रीड़ा समूह	साथी
समुदाय	पड़ोसी, अधिकारी इत्यादि
राज्य	सरकार, पुलिस, जेल, मजिस्ट्रेट, ... अधिकारी इत्यादि
धार्मिक समितियाँ	पादरी, पुरोहित, धर्म नेता
शिक्षण समितियाँ	अध्यापक इत्यादि
ऐच्छिक समितियाँ	पदाधिकारी
आर्थिक समितियाँ	मालिक अधिकारी इत्यादि
गुप्त समितियाँ	नेता

बल और सामाजिक व्यवस्था
(Coercion and Social Order)

सामाजिक व्यवस्था को स्थापित रखने के लिए अनेक प्रकार के बल प्रयोग में लाये जाते हैं। बल से हमारा अभिप्राय वे सारी पद्धतियाँ हैं, जो मनुष्यों को ... विश्वासों के विरुद्ध कार्य करने के लिए बाध्य करती हैं।

बल कई प्रकार के हो सकते हैं। समाजशास्त्रियों ने इनको बड़ा महत्व ... है। सबसे क्रूर बल शारीरिक बल का प्रयोग है। इसे नग्न बल कहा जाता ... आधुनिक युग में इसका प्रयोग केवल राज्य द्वारा ही हो सकता है।

सामाजिक बल के कार्य एवं सीमाएँ
(The Functions and Limitations of Socialized Forces)

समाज में बल का प्रयोग विभिन्न प्रकार से होता है। आदिम समाजों में इसका महत्त्व अधिक है। जैसे-जैसे समाज प्रगति करता जाता है, वैसे-वैसे बल का प्रयोग कम होता जाता है। राज्य बल का प्रयोग संकट के समय में अधिक करता है ...

सामाजिक व्यवस्था से बल का प्रयोग पूर्णतया समाप्त नहीं किया जा सकता ... प्रत्येक सम्भव प्रयत्न करने पर भी कुछ ऐसे लोग रह जाते हैं जो बल प्रयोग ... के लिए बाध्य करते हैं। बल की सच्ची एवं वास्तविक सेवा सामाजिक व्यवस्था की रक्षा करना है। केवल बल सामाजिक व्यवस्था की रक्षा नहीं कर सकता यह सत्य है, परन्तु अन्य सुरक्षा के साधन भी बिना बल के व्यवस्था को सुरक्षित नहीं रख सकते ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कानून बिना बल के कुछ महत्त्व नहीं रखता। बल की महत्ता को कम नहीं किया जा सकता यद्यपि सबसे बड़ा बल का प्रयोग न करना है। बल के द्वारा दूसरों को भयभीत रखना चाहिए, परन्तु उसका प्रयोग कम से कम करना चाहिए।

सामाजिक नियन्त्रण में भी बल का प्रयोग एक सीमित युक्ति है। सहयोग सामाजिक नियन्त्रण के लिए अत्यन्त आवश्यक है। मैकाइवर और पेज ने उचित ही लिखा है, 'यदि सब लोगों में आज्ञा पालन की इच्छा को दबा दिया जाये तो कोई भी जवाब अधिक समय तक सफल नहीं हो सकता, जैसा कि अनेक क्रान्तियों ने प्रदर्शित किया है।"[1]

परिवार और सामाजिक नियन्त्रण
(Family and Social Control)

परिवार और सामाजिक नियन्त्रण को हम निम्न तीन प्रमुख एवं विस्तृत सन्दर्भों में समझ सकते हैं :

(1) **परिवार पर समाज के नियन्त्रण**—सर्वप्रथम हमें उन नियमों, कानूनों एवं प्रथाओं को देखना है जो समाज ने परिवार तथा विवाह के नियन्त्रण के लिए निर्मित एवं विकसित किये हैं। इनका प्रभाव व्यक्ति के व्यवहार को नियन्त्रित करने में अत्यधिक रहता है।

(2) **व्यक्तियों पर पारिवारिक नियन्त्रण**—परिवार के सदस्यों पर परिवार का नियन्त्रण रहता है। परिवार सामाजीकरण (socialization) के द्वारा अपने सदस्यों के व्यक्तित्व में अपने नियम, दृष्टिकोण, मूल्य, जीवन का ढंग इत्यादि अन्तर्प्रविष्ट करता है। व्यक्ति का व्यवहार उसके परिवार की संस्कृति की अभिव्यक्ति करता है। सामाजीकरण के अतिरिक्त भी परिवार अपने सदस्यों के व्यवहार को नियन्त्रित करता है।

परिवार पर समाज के नियन्त्रण (Societal Controls over Family)

संसार के हर समाज एवं संस्कृति में परिवार, विवाह एवं लिंग सम्बन्धी व्यवहार के लिए समाज ने नियम निर्मित एवं विकसित किये हैं। भारत में धर्म संहिताओं में इनसे सम्बन्धित नियम मिलते हैं। धर्मशास्त्रों, स्मृतियों, गृहसूत्रों इत्यादि में भी परिवार, विवाह, लिंग, उत्तराधिकार से सम्बन्धित नियम मिलते हैं। इन नियमों के अनुसार ही जीवन व्यतीत करना पड़ता है। आधुनिक भारतीय समाज में सरकार ने नियम एवं कानून बनाये हैं। ये कानून हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी

[1] "If the will to obey is undermined in the people as a whole, no enforcement, as many a revolution has shown, can prevail." R. M. MacIver and C. H. Page. *Society*, p. 158.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इत्यादि सबके लिए बने हुए हैं। हिन्दुओं के लिए हिन्दू-विवाह अधिनियम, 1... अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है।[1]

परिवार तथा विवाह से सम्बन्धित नियम केवल कानून (laws) के ... ही नहीं हैं, अपितु प्रथाओं, रूढ़ियों, मान्य व्यवहार के रूप में भी हैं। हर ... समुदाय कुछ अपनी प्रथाएँ विकसित कर लेता है।

ये कानून एवं प्रथाएँ ये निश्चित करती हैं कि आप अपनी लिंग इच्छा ... कैसे सन्तुष्ट करेंगे, किससे करेंगे, कब करेंगे इत्यादि परिवार के सदस्यों के ... व्यवहार के प्रतिमान भी निश्चित करता है। श्रम-विभाजन की रूपरेखा भी ... करता है। इस प्रकार अनेक दिशाओं में यह व्यक्ति के परिवार को नियन्त्रित ... निर्देशित करता है।

सामाजिक नियन्त्रण में राज्य, सरकार और विधि
(State Govt. and Law in Social Control)

समाज में सामाजिक नियन्त्रण को कार्यरूप देने में राज्य, सरकार और ... अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। सामाजिक नियन्त्रण की दृष्टि से राज्य माध्यम है, ... अभिकर्ता और विधि साधन। विधि सामाजिक नियन्त्रण का महत्त्वपूर्ण साधन है।

राज्य और सरकार (State and Government)

राज्य (state) और सरकार (government) शब्दों में साधारण व्यक्ति ... अन्तर नहीं समझते हैं, परन्तु इन दोनों में बड़ा अन्तर है। राज्य एक संस्था के ... है। राज्य से हमारा अभिप्राय उन नियमों एवं पद्धतियों के ढाँचे से है, जिसके ... एक समुदाय की व्यवस्था एवं रक्षा होती है। सरकार एक समिति के ... इससे अभिप्राय उन व्यक्तियों के समूह से है, जो राज्य को चलाते हैं; जैसे— ... संसद के सदस्य, विधान सभा के सदस्य, न्यायाधीश, राज्यपाल, राष्ट्रपति, ... प्रशासन सेवा के सदस्य इत्यादि। उदाहरण के लिए आजकल भारतीय राज्य ... कांग्रेस सरकार है। राज्य का कार्य चलाने के लिए सत्ता कांग्रेस के सदस्यों के ... में है।

सरकार और राज्य समाज की महत्त्वपूर्ण सामाजिक नियन्त्रण के माध्यम ... इसकी शक्ति सबसे अधिक होती है। सरकार और राज्य सबसे अधिक बल का प्रयोग ... कर सकती हैं। वे जेल में बन्द कर सकती हैं, जुर्माना कर सकती हैं, फाँसी या ... दण्ड तक की सजा दे सकती हैं। इन कारणों से सरकार राज्य मानव व्यवहार ... अत्यधिक नियन्त्रण रख सकते हैं।

सरकार सत्ता पर आधारित होती है, सरकार की आर्थिक एवं राजनैतिक ... शक्ति इतनी प्रबल होती है कि समाज की अन्य संस्थाएँ इससे निर्देशित होती ...

1 तोमर कृत, भारतीय जनता एवं संस्थाएँ; तुलनात्मक सामाजिक संस्थाएँ ... प्रकाशक : श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सरकार शिक्षा पर अपना नियन्त्रण कर सकती है, प्रचार के साधनों पर एकाधिपत्य कर सकती है, आर्थिक नियन्त्रणों का प्रयोग कर सकती है। सरकार की शक्ति असीम है। इन कारणों से सरकार एक महत्त्वपूर्ण एवं शक्तिशाली सामाजिक नियन्त्रक है। सरकार और राज्य के नियन्त्रण माध्यम विधि (laws) हैं।

विधि (Laws)

आधुनिक समाज में राज्य विधि के द्वारा ही सामाजिक नियन्त्रण करता है। विधि के द्वारा शारीरिक और वित्तीय दण्ड निर्धारित किये जाते हैं। विधि का अत्यधिक महत्त्व है। लेंडिस ने उचित ही लिखा है, "विधि, इस प्रकार, सबसे प्रमुख अस्त्र बन जाता है, जिसके द्वारा सरकारें निर्धारित करती हैं।"[1]

आधुनिक समाज में विधि का क्षेत्र बढ़ता ही जा रहा है। पहले राज्य की सत्ता को हर क्षेत्र में नहीं बढ़ने दिया जाता था। आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र राज्य के नियमों से बचे हुए थे। भारत में भी राज्य का एक निश्चित कार्य था। राज्य को एक निश्चित सीमा के बाहर हस्तक्षेप करने का अवसर नहीं देते थे। वर्ण-व्यवस्था तथा विभिन्न-वर्णों के कर्तव्य राज्य द्वारा निश्चित नहीं किये जाते थे, अपितु इस सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखना ही राज्य का मुख्य कर्तव्य था तथा इसको स्थिर रखने में ही राज्य-सत्ता का औचित्य था। कौटिल्य जैसे विचारक का भी आदर्श 'व्यवस्थितार्यमर्यादा: कृतवर्णाश्रमस्थितिः', समाज है। परन्तु राज्य न आर्य मर्यादा और वर्णाश्रम का ही स्रष्टा है। आधुनिक काल में यह स्थिति परिवर्तित हो गयी है और राज्य से अधिकार बढ़ गये हैं। राज्य आर्थिक क्षेत्रों में रुचि तो लेता ही है और विधि लागू करता है, साथ ही साथ स्वयं व्यापार भी करता है। राज्य सामाजिक विधान (social legislation) आधुनिक कल्याणकारी राज्यों की विशेषता है। भारत में ही श्रम-सम्बन्धी, विवाह-सम्बन्धी, अस्पृश्यता निवारण इत्यादि सामाजिक विधान पारित हुए हैं। इस प्रकार सामाजिक नियन्त्रण में विधि का प्रभाव बढ़ता ही जा रहा है।

विधि की प्रभावकता

जो भी विधि पारित हो गयी वह प्रभावक होगी, यह आवश्यक नहीं है। विधि को किस प्रकार लागू किया जाता है, यह उसके प्रभावक होने में बहुत बड़ा कारक है। हजारों विधियाँ हर वर्ष बनती हैं, पर कितनी प्रभावक होती हैं, यह इस बात पर आश्रित है कि उन्हें किस दिलचस्पी के साथ लागू किया जाता है। हम सब जानते हैं कि घूस लेना तथा देना, दोनों जुर्म हैं, पर हर दिन विधि के संरक्षकों के नीचे ही घूस ली और दी जाती है और ऐसा लगता है, जैसे कोई परम्परागत कार्य, कर रहे हों। इसी प्रकार अनेक क्षेत्रों में कानून तोड़े जाते हैं और कुछ नहीं होता।

[1] "Law, then, becomes the chief tool by which governments control." P. H. Landis, *Social Control*, p. 249.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हर विधि को प्रभावक होने में न्यायालय, पुलिस, सरकारी कर्मचारी, राजनैतिक इत्यादि प्रमुख भाग लेते हैं। सबसे ज्यादा सरकारी कर्मचारियों पर यह निर्भर है कि कानून का पालन होगा या नहीं। केव[1] ने उचित ही कहा कि विधि एक अक्षर है यदि प्रशासक उसको लागू न करे।

जनमत और सामाजिक नियन्त्रण
(Public Opinion and Social Control)

जनमत भी सामाजिक नियन्त्रण का प्रमुख साधन है। जनता के मत के सबको झुकना पड़ता है। किसी समय जनता जो कुछ चाहती है वही करना है। यदि जनमत विरुद्ध हो जाये तो व्यक्ति का सर्वनाश भी हो सकता है।

द्वैतीयिक समूहों में जनमत का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। प्रायः को सत्यता खोजने की फुर्सत नहीं होती, अतः जो कुछ भी उन्हें ज्ञान हो पाता है पर वे अपना मत निर्धारण कर लेते हैं। इसी कारण से प्रचार का जनमत में महत्त्व है। प्रचार ही जनमत की दिशा को निश्चित करता है।

हर व्यक्ति जनमत को अपने पक्ष में रखना चाहता है, अतः वह ऐसे करता है जिससे जनमत उसके पक्ष में बना रहे। इस प्रकार जनमत व्यक्ति के को नियन्त्रित करता है।

प्रचार और सामाजिक नियन्त्रण
(Propaganda and Social Control)

द्वैतीयक समूहों में प्रचार सामाजिक नियन्त्रण का महत्त्वपूर्ण साधन प्रचार के माध्यम के द्वारा ही दूर-दूर तक सूचनाएँ फैलायी जा सकती हैं। प्रचार माध्यम; जैसे—समाचार-पत्र, रेडियो, टेलीविजन इत्यादि समस्त संसार में को पहुँचा देते हैं। आजकल लोग प्रचार के माध्यमों पर अपना स्वत्व रखना चाहते जिससे कि वे दूसरों पर नियन्त्रण कर सकें और अपने पक्ष में प्रचार करवा सकें। पूंजीपति एवं राजनैतिक दल अपने-अपने समाचार-पत्र निकालते हैं।

कोई भी व्यक्ति नहीं चाहता कि उसकी प्रतिष्ठा भंग हो। इस डर से वे प्रचार से डरते रहते हैं और अप्रत्यक्ष रूप से उनका व्यवहार नियन्त्रित होता है। प्रचार सामाजिक नियन्त्रण का एक सबल साधन है।

शिक्षा और सामाजिक नियन्त्रण
(Education and Social Control)

शिक्षा एक अति विस्तृत शब्द है। यह व्यक्ति के लिए माता के

---

1 "Actually, therefore, the law is a dead letter unless the administrator decides to enforce it. If he does so, it is by means of executive orders and rules and regulations." Floyd A. Cave, J. S. Rouck (ed.), *Social Control*, p. 88.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आरम्भ होता है और मृत्यु तक चलता रहता है। ब्राउन और राउ तक ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "शिक्षा अनुभव वह योग है जो बच्चे एवं वयस्क की अभिवृत्तियों को निर्मित करता है और आचरण का निश्चय करता है।"[1] इस प्रकार शिक्षा के अन्तर्गत सब प्रकार का सीखना आ जाता है। यहाँ पर शिक्षा से हमारा अभिप्राय थोड़ा सीमित होगा। वह सीखना जो व्यक्ति अपने अध्यापकों से स्कूल, कालेज इत्यादि में सीखता है। इसे हम औपचारिक शिक्षा (formal education) भी कह सकते हैं।

शिक्षा व्यक्तित्व के विकास में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेती है। यह चूंकि आरम्भ से प्रभाव डालना आरम्भ करती है इसलिए बड़ा गहरा प्रभाव डालती है। यह सामाजिक आदतों के विकास में भी प्रमुख है। लोगों की अभिवृत्तियाँ, आदतें इत्यादि निर्माण करने में भी इसका योग होता है।[2]

शिक्षण संस्थाओं का सामाजिक नियन्त्रण में योग बढ़ता ही जा रहा है। आधुनिक समाज में परिवार की संस्था विघटित होती जा रही है और इसका परिणाम यह हो रहा है कि स्कूल एवं अन्य शिक्षण संस्थाओं को परिवार के कार्यों का भी भार सम्हालना पड़ रहा है। शिक्षण संस्थाएँ व्यक्तित्व निर्माण एवं सामाजिक नियन्त्रण की प्रमुख माध्यम बन गयी हैं।

शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण है। व्यक्ति का हर दिशा में विकास हो। वह एक 'पूर्ण मानव' के रूप में विकसित हो। वह एक ही पक्ष पर विचार न करे, अपितु सभी पक्षों पर विचार करे। उसकी तार्किक क्षमता का विकास होना चाहिए। कक्षा में न केवल विश्वासों की सूचना दी जाये, अपितु वाद-विवाद के भी अवसर दिये जायें। इसके द्वारा ही स्वतन्त्र व्यक्तित्व का विकास होता है। कुछ एकाधिकारवादी देशों में केवल शिक्षा के माध्यम से विश्वासों की शृङ्खला ही बतायी जाती है और यह सब एक पक्ष को ही प्रस्तुत करते हैं। ऐसा करना शिक्षा नहीं है, यह शिक्षा के साथ अन्याय है।[3]

---

[1] "Education is the sum total of the experience which molds the attitudes and determines the conduct of both the child and the adult." F. J. Brown and J. S. Roucek, *Our Racial and National Minorities*, pp. 12–13.

[2] "Because it being early, and because it works so effectively in implanting attitudes and values, it can work transformation which other forms of social control cannot realize." P. H. Landis. *Social Control*, p. 230.

[3] "Such use of education, democratic people consider a prostitution of education." P. H. Landis, *Social Control*, p. 233.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिक्षा सामाजिक नियन्त्रण के क्षेत्र में एक चहुँदिशीय कार्यक्रम रख... यह आदर्शों पर ही आधारित है।[1]

सामाजिक नियन्त्रण में लेखक एवं कलाकार
(Writer and Artist for Social Control)

लेखक एवं कलाकार सामाजिक नियन्त्रण में प्रमुख भाग लेते हैं। ... योजनाबद्ध नहीं होते, पर उनका प्रभाव समाज पर पड़ता है। रवीन्द्रनाथ ... बंकिमचन्द्र के साहित्य ने देश में जागृति उत्पन्न की। रवीन्द्र का 'जन मन ...' बंकिम का 'वन्दे मातरम्' हमारे ऊपर विचित्र प्रभाव डालता है। मैथिली... की 'भारत भारती' हमें स्वतन्त्रता का सन्देश देती है। शंकर के कार्टून ... नयी दिशा दिखाते हैं। इसी प्रकार अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं ... स्पष्ट हो जायेगा कि हमारे व्यवहार पर लेखकों एवं कलाकारों का अत्यधिक ... पड़ता है।

यह आवश्यक नहीं है कि हर लेखक और कलाकार बुद्धिमानी से ... करेगा और उससे लाभ ही होगा। मुसोलनी एक अच्छा वॉयलन वादक ... हिटलर एवं चर्चिल चित्रकार।

प्राथमिक समूहों में सामाजिक नियन्त्रण
(Social Control in Primary Groups)

प्राथमिक समूहों में सामाजिक नियन्त्रण अधिक होता है। लेण्डिस ने ... है, "जितना ही एक समूह अधिक साम्य होता है, उतना अधिक कठोर एवं ... सामाजिक नियन्त्रण की व्यवस्था होती है।"[2] छोटे-छोटे समुदायों में ... नियन्त्रण अधिक कठोर होता है और व्यक्ति के व्यवहार पर अनेक प्रकार के ... होते हैं। इन समूहों में प्राथमिक आदर्श; जैसे—मान, ईमानदारी, प्रेम, स्नेह, ... सहानुभूति, विनम्रता इत्यादि का विकास हो जाता है।

स्थायीभाव (sentiment) इन समूहों के नियन्त्रणों में पाया जाता है। ... समय व्यक्ति भाव से चलित होता है।[3] सदैव उसको यह ध्यान रहता है कि ... व्यवहार के बारे में दूसरे क्या सोचते हैं? उन्हें कोई कष्ट तो नहीं होता है? ... स्वयं कष्ट उठाकर भी दूसरों की भावनाओं का ध्यान रखते हैं। प्रायः देखा ...

---

1 "Education as an agent of social control presents a united ... logical front." P. F. Valentine, in J. S. Roucek, *Social Co...* p. 143.

2 "The more homogenous a group, the more rigid and effecti... system of social control." Paul H. Landis, *Social Control*, p. ...

3 "Sentiment and emotion are always present in the operati... control devices." *Ibid*, p. 149.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि एक लड़की प्रेम-विवाह करना चाहती है, पर केवल इसलिए नहीं करती, क्योंकि इससे उसके माता-पिता की भावनाओं को ठेस पहुँचेगी।

प्रतिष्ठा (reputation) का प्रश्न प्राथमिक समूहों में बहुत महत्त्वपूर्ण है। जिस व्यक्ति की जो प्रतिष्ठा बन जाती है वह उसे समाप्त नहीं करना चाहता। जैसा लोग उसके बारे में सोचते हैं वह उसी प्रकार का व्यवहार करता है। वह हमेशा यही सोचता है कि उसे कोई भी ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए जिससे उसकी, उसके परिवार, जाति या समुदाय की प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचे। 'लोग क्या सोचेंगे ?' यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण नियन्त्रण की विधि है।

प्राथमिक समूहों में लोग चर्चा (gossip) एवं गप्प का विषय नहीं बनना चाहते हैं। वे कभी नहीं चाहते कि लोग उनके विषय में अफवाह उड़ाएँ। इसके फलस्वरूप वे बहुत सोच-विचार के कार्य करते हैं। वे अपनी हँसी उडने या मजाक उड़ने (ridicule) से बहुत घबराते हैं।

प्राथमिक समूहों में मत (opinion) बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। दूसरे लोग क्या सोचते हैं? इसका बड़ा प्रभाव पड़ता है। कई बार लोग कहते कुछ नहीं हैं, पर उनका चुप रहना और भी भयंकर होता है।[1] उनकी कुटिल मुस्कान, गम्भीर चेहरा, रस का झोंका ही अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त होता है।

हँसी (laughter) भी एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक नियन्त्रक है।[2] कोई भी नहीं चाहता कि उस पर कोई हँसे। हँसी एक प्रसन्नमुख सिपाही है जो व्यवहार को सही रखवाता है।[3] हँसी एक व्यक्ति की बुद्धिमत्ता का माप है पर कभी-कभी हँसी एक भयंकर अस्त्र है।[4] प्राथमिक समूहों में हँसी सामाजिक नियन्त्रण की एक महत्त्वपूर्ण प्रविधि (device) है।

प्राथमिक समूहों की कार्य विधियों से निष्कासन तो बहुत बड़ा दण्ड है, प्रायः इसे मौत की सजा से भी भयंकर समझना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्राथमिक समूहों में अनौपचारिक प्रविधियाँ एवं साधन सामाजिक नियन्त्रण के लिए प्रयोग किये जाते हैं। आमने-सामने के

---

1 "He speakth not; and yet there lies
A conversation in his eyes."

2 "Closely allied to ridicule as a social force is laughter." Paul H. Landis, *Social Control*, p. 155.

3 "Laughter is a jolly policeman, keeping social traffic morning in the approved channels and is none the less efficient because jolly." p. 155.

4 "A man's laughter is the measure of his genius and laughter is sometimes a terrible weapon." *Ibid*, p. 155.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम्बन्ध हैं, अतः लोगों का व्यवहार अपने आप नियन्त्रित रहता है। छोटे ... सामाजिक विघटन कम पाया जाता है।

द्वैतीयिक समूहों में सामाजिक नियन्त्रण
(Social Control in Secondary Groups)

द्वैतीयिक ससूहों में सम्बन्ध आमने-सामने एवं घनिष्ठ नहीं होते। ... अजनबी के समान भीड़ में रहते हैं। लोग ऊपर का दिखावा अधिक रखते हैं। ... समूहों में भी सामाजिक नियन्त्रण की अत्यधिक आवश्यकता रहती है। इन ... प्राथमिक एवं अनौपचारिक सामाजिक नियन्त्रण की प्रविधियाँ एवं साधन ... होते हैं।

द्वैतीयिक समूहों में सामाजिक नियन्त्रण का सबसे प्रमुख साधन विधि ... हैं। राज्य की शक्ति एवं हस्तक्षेप अत्यधिक बढ़ जाता है। पुलिस ... अधिकारी कानून के विरुद्ध व्यवहार करने वालों के विरुद्ध कार्यवाही करते हैं। ... सरकार तथा विधि के विषय में हम लिख ही चुके हैं।

द्वैतीयिक समूहों में **प्रचार तथा जनमत** भी सामाजिक नियन्त्रण के प्रमुख ... हैं। प्रचार के द्वारा जनमत निर्धारित किया जाता है। लोग जनमत को अपने ... नहीं जाने देना चाहते हैं। बड़े-बड़े नेता भी प्रचार से घबराते हैं। समाचार ... सम्पादकों एवं सम्वाददाताओं से लोग डरते रहते हैं। प्रचार और जनमत ... विस्तार में प्रकाश डाल चुके हैं।

प्रश्न

1. सामाजिक नियन्त्रण का अर्थ समझाइए तथा उसके साधनों में ... और शिक्षा व्यवस्था का महत्त्व स्पष्ट कीजिए।

(Discuss the meaning of social control. What is the ... cance of family and educational system as the means of ... control ?)

2. विभिन्न प्रकार के सामाजिक नियन्त्रणों को बताइए।

(Specify the various types of social control.)

3. सामाजिक नियन्त्रण के क्या साधन हैं ? समाज में व्यक्ति के व्यवहार ... नियन्त्रित करने में कानून का क्या भाग है ? इसका मूल्यांकन करें।

(What are the means of social control ? Evaluate the ... law in controlling the behaviour of an individual in society.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

30

संस्कार और प्रतीक

(Rituals And Symbols)

संस्कार एवं प्रतीकों का घनिष्ठ सम्बन्ध है संस्कार एक प्रकार से प्रतीकों का अनिवार्य स्पष्टीकरण प्रस्तुत करते हैं संस्कार मनुष्यों के प्रकट व्यवहारों की वे विधियाँ हैं जिन्हें समाज की ओर से स्पष्ट स्वीकृति प्राप्त है मनुष्य इनकी खोज स्वयं करता रहता है ये मनुष्य के समाज के प्रति अधिक जागरूक होने के द्योतक हैं। यही नहीं, ये सांस्कृतिक गुणों के रूप में भी प्रकट होते हैं . वास्तव में जिस प्रतीक को हम संस्कार मानते हैं, वह प्रथम दशा में रोगी के मनोविज्ञान पर प्रकाश डालता है एवं दूसरी दशा में व्यवहार के सांस्कृतिक प्रतिमान की ओर संकेत करता है . संक्षेप में हम कह सकते हैं कि इनका आधार एवं उत्पत्ति मनुष्य का समाज के प्रति अधिक जागरूक होना है

संस्कार

(Ritual)

संस्कार मानव-निर्मित वे व्यवहार की विधियाँ हैं जिनसे मनुष्य का समाज के प्रति अधिक जागरूक होने का प्रमाण मिलता है संस्कारों को समाज से स्पष्ट स्वीकृति प्राप्त रहती है जो सांस्कृतिक गुणों के रूप में प्रकट होते हैं; परन्तु संस्कारों के अन्तर्गत उन भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति को, जिनके लिए हम नित्य कार्य एवं प्रयत्न करते हैं, सम्मिलित नहीं किया जाता . उदाहरणार्थ, वे परम्परागत विधियाँ जो प्राचीनकाल से चली आ रही हैं; जैसे—मकान बनाने की, या आटा पीसने की विधियाँ इनको समाज-स्वीकृति प्राप्त होने के फलस्वरूप भी ये संस्कार नहीं हैं इनका सम्बन्ध प्रौद्योगिकी से है, न कि संस्कार से : इसका अभिप्राय यह है कि संस्कारों का प्राथमिक आवश्यकताओं से प्रत्यक्ष रूप में किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता संस्कारों का सम्बन्ध इन विषयों से है जो अवसर विशेष पर समाज-स्वीकृत औपचारिक व्यवहार के रूप में होते हैं ; जैसे—उपज बढ़ाने से सम्बन्धित विविध उत्सव; मकान के खम्भों के नीचे गुलामों की हत्या करने का कृत्य आदि-आदि इस प्रकार, किन्हीं विशेष अवसरों पर होने वाले, समाज निर्दिष्ट औपचारिक व्यवहार ही संस्कार कहलाते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साधारणतया धर्म एवं संस्कार को घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित माना जाता कुछ लेखकों के अनुसार धर्म की उत्पत्ति ही संस्कार से हुई है। यह सत्य है संस्कार धर्म का एक पहलू है, परन्तु संस्कारों का सम्बन्ध केवल धर्म से नहीं है। कुछ ही धार्मिक उत्सवों पर होता है जबकि संस्कारों का पालन किया जाता है। सम्भव है कि अवसर पवित्र होते हैं, इसलिए धार्मिक भी होते हैं, परन्तु कुछ निरपेक्ष (secular) अवसरों या उत्सवों में भी संस्कार का पालन किया जाता है। उदाहरणार्थ, सभाओं में वृद्धजनों की मंडली की औपचारिक (formal) परम्परा कार्य-विधि से जो मेहमानदारी प्रदर्शित की जाती है एवं जो मुखिया को सम्मान जाता है, वह वास्तव में धर्म-निरपेक्ष है। इसी प्रकार एडमिरैल्टी द्वीप में पति पत्नी के परिवारों में विभिन्न वस्तुओं का जो जीवनपर्यन्त होने वाला परम्परा आदान-प्रदान है, वह भी पूर्ण धर्म-निरपेक्ष है।

धर्म संस्कारों की उत्पत्ति है। यह मत दुर्खीम तथा अन्य लेखकों का भी स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि किसी भी रूप में वृद्धजनों की मंडली पति-पत्नी के परिवारों के बीच वस्तुओं का आदान-प्रदान किसी भी धर्म का नहीं माना जा सकता। दुर्खीम का सिद्धान्त उस समय अमान्य हो जाता है, जब यह स्वीकार करते हैं कि संस्कारों का प्रवेश व्यवहार के किसी भी क्षेत्र में सम्भव और वह स्वयं कला या सामाजिक संगठन का आधार भी नहीं है।

कला की उत्पत्ति संस्कारों से हुई है। इस मत की प्रतिपालका जेन हैरीसन थी। वे ग्रीक जीवन के प्रारम्भ के संस्कारात्मक व्यवहार एवं महत्त्वपूर्ण विकास से अत्यन्त प्रभावित हुई, इसीलिए उन्होंने इस सिद्धान्त को, कि कला की उत्पत्ति संस्कार से हुई है, प्रस्तुत किया। परन्तु उनका यह सिद्धान्त, कि कला की उत्पत्ति धार्मिक संस्कारों से हुई है, वास्तव में इस सत्य की उपेक्षा करता है कि धार्मिक कला के अतिरिक्त भी अप्रतिनिधित्वात्मक एवं ज्यामितिक तथा धर्म-निरपेक्ष कला का अपना एक विस्तृत क्षेत्र है। वास्तव में जेन हैरीसन ने कला से केवल धार्मिक अर्थ लगाने में भूल की है। इस सम्बन्ध में कुछ प्रमाण ऐसे भी हैं जिनसे पता चलता है कि कला एवं संस्कार में कोई भी प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है।

संस्कारों का प्रत्येक समूह में स्थान है। जो स्थान व्यक्ति के लिए आदत का होता है वही समूह के लिए संस्कारों का होता है। सांस्कृतिक कार्य प्रत्येक समाज में पाये जाते हैं। उदाहरणार्थ, होली पर गले मिलना तथा दीवाली पर मिठाई बाँटना इस देश का प्रमुख संस्कार है। सामाजिक नियन्त्रण के लिए भी संस्कारों का बहुत महत्त्व है। यह मनुष्य में उस भावना को विकसित करते हैं जिससे वह कार्य को कर्तव्यों के अनुसार ही करे।

डॉ. दुबे ने अपनी पुस्तक 'मानव और संस्कृति' में लिखा है, "जन्म, विवाह ... करण इस प्रकार की तीन मुख्य स्थितियाँ हैं जिनके आस-पास मानव ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विश्वासों, रीति-रिवाजों और व्यवहार प्रकारों का एक ऐसा जटिल ताना-वाना बुन लेता है कि उनके वास्तविक स्वरूप को समझे बिना उस संस्कृति का पूर्ण परिचय प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त नामकरण, वय:सन्धि, रजोदर्शन आदि की स्थितियाँ भी महत्त्वपूर्ण होती हैं और अनेक संस्कृतियों की समाज-व्यवस्था में इन्हें पार करने से व्यक्ति की सामाजिक स्थिति एवं उसके अधिकारों और कर्तव्यों में मूलभूत परिवर्तन हो जाते हैं। समाज संगठन का यह पक्ष मानव के उत्तरोत्तर परिवर्तन होने वाले उत्तरदायित्वों एवं कार्यों की दिशा निश्चित करता है।"

किम्बाल यंग (Kimball Young) ने लिखा है, "संस्कार से हमारा मतलब दोहरायी जाने वाली क्रियाओं से है। ये क्रियाएँ कुछ ऐसी वस्तुओं या परिस्थितियों से सम्बन्धित होती हैं जो हमारे जीवित रहने के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। गम्भीर और महत्त्वपूर्ण परिस्थितियों का सामना करने का यह एक सुस्थिर और अभ्यासगत साधन है। इसलिए इसके सम्बन्ध में भविष्यवाणी की जा सकती है।"[1]

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि संस्कार वे निश्चित कार्य-प्रणालियाँ अथवा धार्मिक कृत्य हैं जिन्हें व्यक्ति की जीवनयात्रा की विभिन्न संकटकालीन स्थितियों का सामना करने के विचार से महत्त्वपूर्ण समझा जाता है।

संस्कारों की प्रकृति
(Nature of Rituals)

संस्कारों की प्रकृति के सम्बन्ध में निम्न बातें उल्लेखनीय हैं :

(1) संस्कारों का सम्बन्ध हमारे आन्तरिक जीवन से है। इनसे आन्तरिक संतुष्टि प्राप्त होती है। यह हमारी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का कोई साधन नहीं है।

(2) संस्कारों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध धार्मिक कृत्यों से है। यह बार-बार दुहराई जाने वाली क्रिया है जिसका उपयोग संकटकालीन परिस्थितियों का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

(3) संस्कार से सम्बन्धित कुछ सांस्कृतिक मूल्य होते हैं। इन्हीं मूल्यों के आधार पर संस्कार के औचित्य को समझा जाता है और उस संस्कार विशेष से सम्बन्धित संकटकालीन परिस्थितियों का अर्थ बताया जाता है। तात्पर्य यह है कि संस्कार के अन्तर्गत आने वाले प्रत्येक कार्य की व्याख्या उस संस्कृति विशेष के सन्दर्भ में की जाती है।

---

1 "By ritual we meen the repeated acts related to certain objects or situations considered significant for our servival. Ritual is a highly stable and habitual, hence predictable, means of dealing with situations." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* (1957), p. 198.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(4) संस्कार अतार्किक होता है, इसका कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। इसका कारण यह है कि संस्कार धर्म, प्रथा, परम्परा और आदतों से इस प्रकार घुलामिला होता है कि उनमें वैज्ञानिक तथ्य पनप ही नहीं सकते। संस्कार का आधार मनुष्य की भावनाएँ, विश्वास आदि होते हैं

(5) संस्कारों का सम्बन्ध संवेगों (emotions) से होता है। इन संवेगों के कारण ही व्यक्ति संकट की स्थिति में भय, अनिश्चितता आदि का अनुभव करता है और उससे बचने के लिए संस्कारों का आश्रय लेता है।

(6) संस्कार वैयक्तिक और सामूहिक दोनों ही प्रकार के होते हैं। वैयक्तिक संस्कार ही आदत का रूप ले लेता है जिसकी जड़ व्यक्ति की जड़ों तक होती है। वैयक्तिक संस्कार; जैसे—स्नान और पूजा के बाद ही पानी पीना आदि वैयक्तिक क्रियाएँ हैं जो आदत का रूप ले लेती हैं। सामूहिक संस्कारों के दर्शन हमें समूह स्तरों पर मिलते हैं. सामूहिक पूजा-पाठ में भाग लेना, त्यौहारों पर गंगा स्नान, विश्वविद्यालय दीक्षान्त समारोह में भाग लेना आदि सामूहिक संस्कारों के उदाहरण हैं।

संस्कार के कार्य का महत्त्व

(Functions or Importance of Rituals)

संस्कारों का सामाजिक जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। संस्कारों के माध्यम से ही हमारी संवेगात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, तथा संकटकालीन परिस्थितियों का सफलतापूर्वक सामना करने की क्षमता प्रदान करता है। संस्कार का उल्लास और प्रसन्नता से भरपूर होता है। मृत्यु-संस्कार को छोड़कर सभी संस्कारों में गाना-बजाना, दावत इत्यादि के कारण व्यक्ति का नीरस जीवन सरस हो जाता है और व्यक्ति अपने को जीवन की कठिनाइयों का सामना करने में समर्थ पाता है।

संस्कार प्रामाणिक व्यवहारों का एक ऐसा प्रतिमान है जो बार-बार दोहराया जाता है, जिससे आदतों का निर्माण होता है। उदाहरणार्थ, वयस्क लोगों के साथ बालक भी विभिन्न संस्कारों में भाग लेते हैं। उनकी स्थिति के रूप में उन्हें क्या कार्य करने होते हैं, यह बालक सीख लेता है और उसी प्रकार के कार्य करने लगता है और बार-बार एक ही प्रकार कार्य करने से वह उस कार्य को करने का अभ्यस्त हो जाता है।

संस्कार सामाजिक संगठन मे भी सहयोग देते हैं। एक समाज में रहने वाले व्यक्ति सामूहिक रूप से विभिन्न अवसरों पर एक-दूसरे के संस्कारों में भाग लेते हैं। इससे 'हम की भावना' (we feeling) पैदा होती है

पारिवारिक झगड़े या मनमुटाव को दूर करने में भी संस्कार का कम महत्त्व नहीं है। विवाह, मृत्यु आदि अवसरों पर परिवार के सभी सदस्य, नाते-रिश्तेदार एकत्रित हो जाते हैं और सम्मिलित रूप से भाग लेते हैं आमने-सामने इकट्ठा होने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के कारण अनेक गलतफहमियाँ दूर हो जाती हैं और आपसी सम्बन्ध फिर से दृढ़ हो जाते हैं।

रॉस (Ross) महोदय ने लिखा है कि कुछ संस्कारों के कारण हमारे अन्दर राष्ट्रीयता की भावना भी पनपती है; जैसे—राष्ट्रीय गान, राष्ट्रीय उत्सवों में भाग लेना आदि। परन्तु सामाजिक दृष्टिकोण से इनका और महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके कारण ही सामाजिक जीवन के महत्त्वपूर्ण पक्ष से हमारा परिचय होता है और हम उन लोगों के सम्पर्क में आ जाते हैं जो एक ही प्रकार के संस्कारों का पालन करते हैं।

अर्थशास्त्रियों ने संस्कारों को बेकार की वस्तु कहा है क्योंकि संस्कार के कारण ही परिवार में व्यर्थ का खर्च बढ़ जाता है। उदाहरणार्थ, विग्रह, मृत्यु के अवसर व्यक्ति अनेक फिजूल के खर्चे में पड़ जाता है जिसके परिणामस्वरूप उसे जीवन-भर कर्ज में डूबा रहना पड़ता है अथवा जमीन, मकान आदि वेचकर कर्ज को चुकाना पड़ता है। हर संस्कार यहाँ तक कि मृत्यु जैसे शोकपूर्ण अवसर पर भी दावत देना अशोभनीय लगता है। परन्तु यह तो संस्कार का एक पक्ष मात्र है। इससे प्रेम, मित्रता, समाज और परिवार के क्षेत्र में स्थिति को स्वीकृति प्रदान करता है। यह हमें मृतक की बार-बार याद दिलाता है और उसके प्रति श्रद्धा, प्रेम आदि प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान करता है।

संस्कार समाज, मनुष्य और प्रकृति को सम्बन्धित करता है। इसीलिए रॉस (Ross) ने लिखा है, "संस्कार मानव-जीवन की महान घटनाओं को समारोह के रूप में मानता है, उन्हें सामाजिक स्वीकृति प्रदान करता है और प्रकृति से समाज और मनुष्य को सम्बन्धित करता है।"[1] इसका तात्पर्य यह है कि संस्कार मनुष्य को प्राकृतिक प्राणी होने की अवस्था को प्रकट करता है और दूसरी ओर यह व्यक्ति को सुसंस्कृत बनाता है। उदाहरणार्थ, यज्ञोपवीत-संस्कार न होने तक ब्राह्मण, ब्राह्मण नहीं रहता है। इसी प्रकार विवाह न होने तक व्यक्ति गृहस्थाश्रम में प्रवेश नहीं कर सकता। संस्कारों के माध्यम से ही व्यक्ति में सामाजीकरण की प्रक्रिया सरलता से होती है।

प्रत्येक संस्कार का सम्बन्ध धर्म से नहीं होता है। संस्कार धार्मिक, गैर-धार्मिक या अर्द्ध-धार्मिक भी हो सकता है। हिन्दुओं में विवाह-संस्कार या यज्ञोपवीत संस्कार धार्मिक संस्कार है और शिष्टाचार, विभिन्न सम्बन्धियों से प्रेम करने का ढंग, राष्ट्रीय उत्सवों पर राष्ट्रीय गीत आदि गैर-धार्मिक संस्कार हैं। राजाओं का

---

1 "So ritual celebrate's the major events in human life, accords them social recognition and relates man and society to nature" —Ross.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज्याभिषेक, मन्त्रियों का शपथ ग्रहण आदि अर्द्ध-धार्मिक संस्कार हैं। संस्कार कि भी प्रकार के क्यों न हों, सामाजिक जीवन के कुछ विशिष्ट पक्षों को स्पष्ट हैं। संस्कारों के कारण ही हमें सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के महत्त्वपूर्ण की स्पष्ट जानकारी हो सकती है।

संस्कारों का कलात्मक महत्त्व भी कम नहीं है। सामूहिक पूजा-पाठ में लेते समय, धार्मिक गीत या प्रार्थना करते समय एक कला की झलक दिखायी है। यह कानों और आँखों को बहुत ही प्रिय लगता है, इसीलिए जेन हैरीसन ने है कि कला की उत्पत्ति संस्कार से हुई है। यद्यपि इस बात को वैज्ञानिक स्वीकार नहीं किया जाता, फिर भी इसे अस्वीकार भी नहीं किया जा सकता है कला की उत्पत्ति में संस्कारों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। उदाहरण के लिए, रा गीत और प्रार्थना गीत के अवसर पर एक ऐसा स्वर लहरी की उत्पत्ति होती जिसमें संगीत कला की स्पष्ट झलक दिखायी देती है।

उपर्युक्त विवरण से संस्कार के कार्य और महत्त्वपूर्ण रूप से स्पष्ट हो हैं। संस्कार मानव-जीवन के लिए लाभकारी और हानिप्रद दोनों ही सिद्ध हो हैं, लेकिन ज्यादातर लाभप्रद ही होते हैं। हमारे जीवन की प्रत्येक क्रिया हर स्थिति, समय और स्थान पर उपयोगी नहीं हो सकते। यह हो सकता है कि ज्याद उपयोगी और लाभप्रद हों; परन्तु उनका थोड़ा बहुत खराब परिणाम तो हो ही है। इसी प्रकार संस्कारों के कारण भी मानव-जीवन में कुछ असुविधाएं आती लेकिन ज्यादातर यह लाभप्रद ही होता है और इसी के कारण मानव प्रत्येक परि में अनुकूलन करता है। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि संस्कार मानव-जीवन के लि अत्यन्त उपयोगी और लाभप्रद हैं।

प्रतीक
(Symbols)

प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य (अथवा गोचर) वस्तु के लिए किया जा है जो किसी अदृश्य (अगोचर या अप्रस्तुत) विषय का प्रतिविधान उसके साथ साहचर्य के कारण करती है। अथवा कहा जा सकता है कि किसी अन्य स्तर के का प्रतिनिधित्व करने वाली वस्तु प्रतीक है। अमूर्त, अदृश्य, अश्रव्य, अप्रस्तुत का प्रतीक प्रतिविधान मूर्त, दृश्य, श्रव्य, प्रस्तुत विषय द्वारा करता है; जैसे— या अप्रस्तुत ईश्वर, देवता अथवा व्यक्ति का प्रतिनिधित्व उसकी प्रतिमा या अन्य वस्तु कर सकती है।

प्रतीक किसी न किसी अन्य वस्तु या भाव का प्रतिनिधित्व करता है। (Inge) ने इन पर विशेष प्रकाश डाला है। प्रतीक के अर्थ को उदाहरणों द्वारा जा सकता है। 'झड़ते हुए पत्ते' मानव की नश्वरता के प्रतीक हैं। 'बहती हुई जीवन-स्रोत के प्रवाह को प्रतिकारित (symbolise) करती है। इसी प्रकार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीवन अगणित प्रतीकों का सहारा लेकर अभिव्यक्ति करता है। भाषा स्वयं प्रतीकों पर आधारित है। मानव सभ्यता एवं संस्कृति का जो विकास सम्भव हो सका है, वह प्रतीकों पर ही आधारित है।

प्रतीक की परिभाषा करते हुए पाईपर ने लिखा है, "प्रतीक अनिवार्यतः एक भौतिक वस्तु या प्रक्रिया होती है जो एक ऐसे अर्थ का प्रतिनिधित्व करता है जो सामान्य प्रत्यक्षीकरण के परे होता है। यह मानव के पशु के प्रति उत्तर के पूरक रूप में प्रतिनिधित्व करता है और अर्थों के अनन्त संसार में प्रवेश को इंगति करता है।"[1]

बोसंकवे (Bosanquent) ने प्रतीक की परिभाषा करते हुए लिखा है, "प्रतीक प्रत्यक्ष स्वरूप से परे अदृश्य वास्तविकता की अनुभूति का रूपक स्वरूप है।"[2]

हरमन ने एक अच्छे एवं सच्चे प्रतीक के लिए लिखा है, "उसके लिए यह ही आवश्यक नहीं है कि वह प्राकृतिक हो और न ही केवल सम्बोधन तथा प्रदर्शन से निखरा हुआ हो, अपितु वह एक उचित माध्यम एवं साधन हो जिसके द्वारा विचार का प्रदर्शन और सम्बोधन यथोचित हो सके।"[3] हरमन का अभिप्राय है कि प्रतीक को स्पष्ट अर्थ का प्रतिनिधित्व करना चाहिए, जिसके लिए वह प्रयुक्त होता है। यही उसकी कसौटी है।

प्रतीक वास्तव में अमूर्त अर्थों एवं भावों को अभिव्यक्त करने का एक साधन एवं माध्यम है। प्रतीक भौतिक वस्तुओं तथा प्रक्रियाओं के माध्यम से स्पष्ट एवं प्रत्यक्षीकरण की अनुभूति से परे की स्थिति की ओर संकेत करता है और बोध कराता है। यह मानव को विश्व से समन्वित करता है और आध्यात्मिकता से परिचय कराता है, अतः प्रतीक रहस्यवादी साधन है।

प्रतीकवाद

(Symbolism)

साधारण तौर से कहा जा सकता है कि प्रतीकों के माध्यम से किसी विषय का प्रतिविधान करना प्रतीकवाद है।

---

1 "A symbol is essentially a material object or process which stands for a meaning beyond bare sensation. It represents man's supplement to animal response and signalizes his entrance into the spaceless, transcendental world of meanings."—Piper.

2 "Symbolism is the embodiment of invisible realities in sensuous forms."—Bosanquent.

3 "For a true symbol must not merely be natural, as distinct from an arbitrary illustration or exemplification of the thing signified: it must also be its vehicle and medium—must convey as well as illuminate."—Herman.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतीकीकरण मनुष्य का सहज स्वभाव है। भाषा का प्रारम्भिक रूप लि... मुद्राओं युक्त और अनुकरण प्रधान था। पशुओं तथा ध्वनि उत्पन्न करने वाले ... का सकेत आदिम मनुष्य उनके सदृश आवाज उत्पन्न करके करता था। पेजेट का ... है कि प्रायः सभी शारीरिक मुद्राओं के साथ-साथ स्वर-यन्त्र में गति होती रहे... और इस सहचारी स्वर को अलग करके उसे उस मुद्रा विशेष का प्रतीक बना... स्पष्ट ही अधिक सुविधाजनक और अल्प-श्रमी उपाय था। मनुष्य ने रेखाएँ और ... खींचना भी शीघ्र सीख लिया था। उसकी ध्वन्यात्मक मुद्राओं के प्रतीकों के ... शब्दों के योग से व्याकरणयुक्त वाणी का और उसके चित्रमय प्रतीकों में ... चित्रलिपि से वर्णलिपि का विकास हुआ। इस प्रकार सभी शब्द प्रतीक हैं।

इस शब्द के अन्तर्गत विविध प्रकार के व्यवहारों के विभिन्न ढंगों का ... किया जाता है। प्रारम्भ में इसके मौलिक अर्थ में इस शब्द का प्रयोग किसी ... वस्तु, विचार, घटना या संयुक्त क्रिया की ओर ध्यान आर्कषित करने वाली ... या चिन्हों तक ही सीमित था; परन्तु अब प्रतीक तथा प्रतीकात्मकता को व्यापक ... में प्रयुक्त किया जाता है। अब इसके अन्तर्गत ऐसे महत्त्वहीन विषय सम्मिलित ... हैं; जैसे—तारा या छुरे, जो पाठकों को इस बात की याद दिलाते हैं कि पृष्ठ के ... भाग से भी सूचना प्राप्त की जा सकती है; परन्तु अब इसमें महत्त्वपूर्ण एवं ... वस्तुएँ या विधियाँ सम्मिलित हैं; जैसे—झण्डे एवं सूचक प्रकाश (signal light) ... स्वयं में महत्त्वपूर्ण नहीं समझे जाते, बल्कि जो ऐसे विचारों को प्रकट या प्रदर्शित ... हैं जिनका समाज के लिए अत्यधिक महत्त्व है। इसी प्रकार गणित सम्बन्धी या ... सम्बन्धी चिह्नों को प्रतीकात्मकता के अन्तर्गत सम्मिलित करना चाहिए, क्योंकि ... प्रयोग की जाने वाली ध्वनियों एवं चिह्नों का चाहे स्वयं के लिए कोई अर्थ न हो, ... हो, परन्तु उनका महत्त्व उन लोगों के लिए है जो उनका वैसा ही अर्थ लगाते ... हैं, जिस रूप में वास्तव में उसका प्रयोग हुआ है। 'आधुनिक चित्रकला एक प्रकार ... प्रतीकात्मक है, क्योंकि उसमें कलाकार द्वारा प्रकट किये गये विचार किसी ... अर्थ की ओर संकेत करते हैं। उदाहरणार्थ, जब कोई सिपाही अपने अफसर ... सलामी देता है, तो वास्तव में उस व्यक्ति को उतना आदर नहीं देता जितना कि ... उस व्यक्ति द्वारा प्राप्त उच्च पद के लिए दिया जाता है। इसी प्रकार हमारे ... के सम्बन्धों में भी ऐसे व्यवहार आते हैं जिन्हें हम प्रतीकात्मक कह सकते हैं।

मनोविश्लेषणवादियों के अनुसार प्रतीकात्मकता शब्द का अर्थ भाव... युक्त वह व्यवहार है जो किसी दबी हुई प्रवृत्ति की अचेतन सन्तुष्टि करता है। ... उदाहरणार्थ, इनका कहना है यदि कोई व्यक्ति जब पूर्णरूप से उदासीन किसी ... के समक्ष ऊँची आवाज में विरोध करता है, तो वह अचेतन अवस्था में अपने ... की याद करता है एवं अपने पिता के प्रति शत्रुता की दबी हुई प्रवृत्ति का प्र... करता है, क्योंकि पिता भी उसको इसी प्रकार चिल्लाकर डाँटते थे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतीकात्मकता शब्द का जिन विविध अर्थों में प्रयोग होता है उससे इसकी दो स्थायी विशेषताएँ प्रकट होती हैं। प्रथम, यह कुछ व्यवहारों का एक स्थानापन्न है, जो यह प्रकट करता है कि प्रतीकात्मकता के जो अर्थ होते हैं वे अनुभव द्वारा ही प्रकट रूप में प्राप्त नहीं किये जा सकते। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इसके स्वरूप या आकार मात्र से मालूम पड़ने वाले अर्थ की अपेक्षा इसका अर्थ एवं महत्त्व अधिक व्यापक हुआ करता है। उदाहरणार्थ, किसी समाज में खींची गयी कुछ विशेष प्रकार की रेखाओं का महत्त्व केवल सजावट तक ही सीमित हो सकता है, परन्तु किन्हीं अन्य समाजों में वैसी ही रेखाओं का महत्त्व देवता या हत्या का प्रतीक माना जाता है। इसी प्रकार अनजाने में आँख झपकाने एवं भद्दे ढंग से किसी की ओर देखकर आँख झपकाने में महत्त्वपूर्ण अन्तर है।

प्रतीकों के दो भेद किये जा सकते हैं। प्रथम प्रकार के प्रतीक को हम परिचयात्मक प्रतीकात्मकता (referential symbolism) कह सकते हैं। इसमें मौखिक भाषण, लिखना, टेलीग्राफ कोड, राष्ट्रीय झंडा, स्टेशन पर गार्डों द्वारा प्रयोग की जाने वाली लाल-हरी झण्डियाँ और अन्य प्रकार के प्रतीक जिनसे किसी वस्तु की सूचना या परिचय में सुगमता मिलती है, आती हैं।

दूसरे प्रकार के प्रतीक भी इतने ही सरल हैं। उनको संक्षिप्त प्रतीकात्मकता (condensed symbolism) कहा जाता है। ये प्रत्यक्ष प्रकटीकरण के लिए स्थानापन्न व्यवहार के रूप में संक्षिप्त हैं तथा इनकी सहायता से चेतन या अचेतन ढंग से उद्वेगात्मक तनावों में मुक्ति प्राप्त की जाती हैं। टेलीग्राफिक टिकिंग (ticking) परिचयात्मक प्रतीक का उदाहरण माना जाता है, परन्तु मनोविश्लेषणवादियों द्वारा बताये गये, पागलपन को दूर करने में प्रयुक्त होने वाला, स्नान-संस्कार संक्षिप्त प्रतीक का उदाहरण कहा जाता है, क्योंकि इसमें पागल को यह विश्वास दिलाया जाता है कि स्नान-संस्कार के पूरे हो जाने पर वह अपनी सामान्य अवस्था में आ-जायेगा।

वास्तविक व्यवहार में इन प्रतीकों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसी प्रकार लिखने-पढ़ने के विशेष ढंग एवं उच्चारण तथा जवानी नारे परिचयात्मक प्रतीक माने जाते हैं, परन्तु यह होते हुए भी ये उद्वेगपूर्ण संस्कारों का रूप ले लेते हैं तथा उद्वेगात्मक प्रकटीकरण (expression) के स्थानापन्न रूप में व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिए ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध होते है। यदि लिखना बल परिचयात्मक प्रतीक ही होता, तो उच्चारण सम्बन्धी सुधार करने की कठिनाई का अनुभव न होता।

साधारणत: लोगों की यह धारणा है कि समाज में धर्म एवं राजनीति जैसे क्षेत्रों में, जिनमें उद्वेगों का अत्यधिक महत्त्व है, प्रतीकों का महत्त्व विशेष रूप से प्रकट होता है। झंडे एवं नारे राजनीति के क्षेत्र में उदाहरण हैं, तथा धार्मिक उत्सवों पर पहने जाने वाले वस्त्र एवं बिल्ले धर्म के क्षेत्र में प्रतीकों का महत्त्व प्रकट करते हैं। यदि देखा जाय तो समस्त संस्कृतियाँ प्रतीकों से परिपूर्ण हैं। यहाँ तक कि साधारण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यवहार जितना कार्यात्मक दिखायी देता है उतना है नहीं, वरन उसकी ... अचेतन एवं अस्वीकार प्रवृत्तियाँ भी समाविष्ट होती हैं, जिनके कारण ... को एक प्रतीक के रूप में ही देखा जाता है। एडवर्ड सैपिर ने उचित ही ... "यहाँ तक कि कोई व्यापक वैज्ञानिक सिद्धान्त भी वास्तव में अहम् (ego) ... आवश्यकता का प्रतीक ही है। वैज्ञानिक अपने सिद्धान्त के लिए इसलिए नहीं ... क्योंकि उनका विश्वास है, कि वे सही हैं, बल्कि इसलिए कि वे चाहते हैं ... सच माना जाय।"[1]

इस स्थान पर हमें सामाजिक व्यवहार के कुछ ऐसे उदाहरण देना ... होगा जो देखने में कम प्रतीकात्मक जान पड़ते हैं। शिष्टाचार (etiquette) ... अन्तर्गत हमें प्रतीकात्मकता के दो पहलू दृष्टिगोचर होते हैं। ... एक प्रतीक के रूप में, शिष्टाचार समाज के सदस्यों को नियमों का एक ... करता है, जो सदस्यों के आपसी सम्बन्धों के विषय में समाज की रुचि को ... हैं। शिष्टाचार का दूसरा पहलू समाज में व्यक्ति की स्थिति (status) ... करने का एक महत्त्वपूर्ण प्रतीक है। इस दृष्टिकोण से शिष्टाचार को जानना ... आवश्यक है, क्योंकि इन नियमों के अनुसार कार्य न करने वाला व्यक्ति ... करता है कि वह उस समूह का सदस्य न होकर बाहरी समूह का सदस्य है। ... आधार पर उस समूह विशेष में उस व्यक्ति के पद का ज्ञान हो जाता है। ... यह कहा जाता है कि शिष्टाचार के अत्यन्त गहरे अर्थ, नकारात्मक एवं स्वीकारात्मक ... दोनों ही अन्तर्निहित हैं तथा कोई भी कोमल हृदय व्यक्ति अपना विरोध ... व्यक्ति के समूह के प्रति शिष्टाचार के इन नियमों का उल्लंघन करके ... देता है। एडवर्ड सैपिर ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "शिष्टाचार असाधारण ... व्यापक एवं प्रतीकात्मक खेल है जिसमें अपने वास्तविक सम्बन्धों में व्यक्ति ... है और समाज बोगस निर्णयकर्ता है।"[2]

शिक्षा भी व्यवहार का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रतीकात्मक क्षेत्र है। ... बहुत कुछ तर्कसंगतता (rational) की, उसकी दिशा एवं मूल्यों के सम्बन्ध ... किसी प्रकार की परीक्षा नहीं की जा सकती। इसका कोई व्यक्ति अनुमान नहीं ... सकता कि व्यक्ति विशेष के लिए इंगलिश, फ्रेंच, गणित या भूगोल का ...

---

[1] **Even an elaborate, well documented scientific theory may ... little more than a symbol of the unknown necessities of the ... Scientists fight for their theories not because they believe the... be true but because they wish them to be so." Edward S... *Encyclopaedia of Social Sciences*.**

[2] **"Etiquette, then is an usually elaborate symbolic play in wh... individuals in their actual relationship are the players and so... is the bogus referee." *Ibid*.**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2

प्राप्त करना अच्छा होगा। प्रतीकात्मक संकेत ही इन ज्ञानों की प्राप्ति की वास्तविक परीक्षाएँ हैं। सामाजिक मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में शिक्षा प्रतीकों का एक विशाल पुंज है, जो समाज में व्यक्ति की आवश्यकताओं को व्यक्त करता है तथा अपने साथियों के साथ के सम्बन्ध में उसे महत्त्व प्रदान करता है। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति बी. ए की डिग्री प्राप्त किये हुए है तो इससे यह प्रमाणित हो भी सकता है तथा नहीं भी, कि वह रोमन इतिहास या भूगोल के बारे में जानता है या कभी जानता था। इस डिग्री का महत्त्व यह है कि इसके द्वारा व्यक्ति उसको प्राप्त कर लेता है या कर सकता है जो सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से किसी अन्य पद की अपेक्षा अधिक अच्छा है, जो बिना इस डिग्री की सहायता के असम्भव है।

समय एवं संस्कृति किसी भी वस्तु या व्यवहार के मूल्य को अत्यन्त प्रभावित करते हैं। ये उसमें परिवर्तन भी ला देते हैं। उदाहरणार्थ, किसी संस्था के सभापतित्व का प्रतीकात्मक मूल्य केवल ऐसे समाज में है जो दो बातों में विश्वास करता है कि प्रशासन सम्बन्धी कार्य उच्च व्यक्तियों को दिया जाता है, अर्थात जो नेतृत्व कर सकें तथा यह कि आदर्श समाज सदैव प्रजातन्त्रात्मक होता है जिसमें अधिक योग्य व्यक्ति अपने आप उच्च प्रशासकीय पदों को प्राप्त कर लेते हैं। परन्तु यदि व्यक्ति इसके विपरीत विश्वास करने लग जायँ कि प्रशासकीय कार्य व्यक्ति की योग्यता का द्योतक न होकर केवल प्रतीकात्मक आटोमेटिज्म हैं तथा सभापति दूसरों की सलाह पर कार्य करता है तो उस संस्था के सभापति पद को एक भद्दा प्रतीक समझा जायेगा तथा जो महत्त्व उसको अब तक प्राप्त था वह लुप्त हो जायेगा। इस प्रकार जो वस्तुएँ या व्यवहार पहले किसी महत्त्वपूर्ण बात के प्रतीक थे, अब धीरे-धीरे कार्यों में परिवर्तन आने के कारण प्रतीक के रूप में अपना महत्त्व खोते जा रहे हैं।

सांस्कृतिक प्रतिमानों के रूप में वैयक्तिक प्रतीकों का अध्ययन अत्यन्त महत्त्व का है। वैयक्तिक प्रतीकों का अत्यधिक है क्योंकि वे अचेतन होते हैं तथा प्रभावपूर्ण व्यवहार को उत्पन्न करते हैं। किसी विशेष विषय में किसी व्यक्ति की रुचि उस वस्तु या व्यक्ति के साथ उनका लगाव उद्वेगात्मक, व्यापक, अस्पष्ट प्रतीक माना जा सकता है जो उस व्यक्ति के वैयक्तिक विकार से सम्बन्धित था। इसी प्रकार किसी धर्म को नष्ट करना या भगवान की खोज करने में उस व्यक्ति की रुचि किसी दबी हुई घृणा या प्रेम का प्रतीक हो सकती है।

प्रतीकों की विशेषताएँ
(Characteristics of Symbols)

प्रतीकों की दो विशेषताएँ होती हैं। प्रतीक सदैव किसी न किसी मध्यस्थ प्रकार के व्यापार का प्रतिनिधि होता है। इसका आशय यह है कि सभी प्रतीकों में ऐसे अर्थ निहित होते हैं जिनको केवल प्रत्यक्ष अनुभव के सन्दर्भ से नहीं जाना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जा सकता। दूसरी यह कि प्रतीक शक्ति को घनीभूत कर देता है, ... तुच्छता और उसके द्वारा निर्दिष्ट वास्तविक महत्त्व के परिणाम में कोई ... नहीं होता।

प्रतीकों के प्रकार

प्रतीक दो प्रकार के होते हैं—सन्दर्भीय और संघनित। सन्दर्भीय ... वर्ग में वाणी और लिपि से व्यक्त शब्द, राष्ट्रीय पताकाएँ, तारों के ... प्रयुक्त होने वाली संहिता, रासायनिक तत्त्वों के चिन्ह आदि हैं। संघनित ... उदाहरण धार्मिक कृत्यों में और स्वप्न तथा अन्य मनोवैज्ञानिक विवशताजन्य ... में मिलते हैं। ऐसे प्रतीक प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति या व्यवहार के स्थानापन्नों के ... रूप होते हैं और चेतन या अचेतन संवेगात्मक तनावों के मुक्त प्रसरण में ... देते हैं। व्यावहारिक जीवन में इन दोनों प्रकार के प्रतीकों का मिश्रण ... करता है। सन्दर्भीय प्रतीक सहज ही संवेगात्मक महत्त्व और कर्मकाण्ड से ... जाते हैं।

प्रतीक के भेद
(Types of Symbols)

प्रतीक के दो प्रमुख भेद हैं :

(1) वास्तविक प्रतीक (realistic symbols), (2) अमूर्त प्रतीक ... tract or expressionist symbols)।

वास्तविक प्रतीक वे प्रतीक होते हैं जो मूर्त होते हैं; जैसे—तार संकेत ... graphic codes), ट्रैफिक प्रकाश (traffic light), ध्वज (flags) इत्यादि।

अमूर्त एवं भावात्मक प्रतीक वे होते हैं जो सामाजिक अभिवृत्तियों ... एवं उद्देश्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

समाज और प्रतीक
(Society and Symbols)

समाज और प्रतीक का घनिष्ठ सम्बन्ध है। वास्तव में देखा जाय तो ... रूप से मानव समाज का आधार ही प्रतीकों पर है। मानव और पशु का ... भेद मानव की प्रतीकों को समझने की शक्ति पर आधारित है। मानव इस ... के कारण ही भाषा का विकास कर सका। भाषा के कारण अनुभव एक ... दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित किया जा सकता है। मानव अपने अनुभव को प्रतीकों ... द्वारा अपनी भविष्य की सन्तानों तक पहुँचा सकता है। इसी शक्ति एवं ... कारण ज्ञान एवं विज्ञान का विकास हो सका। प्रतीक के ही परिणामस्वरूप ... अपनी सभ्यता एवं संस्कृति का विकास कर सका। अतः स्पष्ट है कि ... प्रतीक प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनुष्य का समस्त जीवन प्रतीकों से परिपूर्ण है। वस्तुतः मनुष्य मूलतः प्रतीकों के माध्यम से ही सोचता है, अमूर्त चिन्तन अधिक विकसित स्तर का लक्षण है। कुछ प्रतीक सार्वभौमिक होते हैं; जैसे—सिंह वीरता का, श्वेत रंग पवित्रता का, शृगाल कायरता का और लोमड़ी चतुरता का प्रतीक है। कबीलों, जातियों, समाजों और राष्ट्रों के सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन में महत्त्व रखने वाले अपने-अपने प्रतीक हो जाते हैं। आदिम समाज में कोई विशिष्ट पशु, वृक्ष या अन्य वस्तु कबीले का प्रतीक हराम या हलाल बन जाती है। भारत में पीपल, बरगद, आंवला, तुलसी आदि वृक्ष या वनस्पतियाँ, गाय और सूअर ऐसे प्रतीकों के अवशेष हैं। प्रत्येक राष्ट्र की पताका उसके अस्तित्व, गौरव और एकता का प्रतीक होती है। राष्ट्र की ध्वजा से राष्ट्र का बोध होने लगता है। कभी-कभी कोई फूल, पशु या अन्य विषय भी राष्ट्र का प्रतीक बन जाता है; जैसे—कमल भारत का, गुलदाउदी चीन-जापान का, कंगारू आस्ट्रेलिया का प्रतीक हो गया है। राष्ट्रीय ध्वजा का अर्द्धोत्तोलित फहराना राष्ट्रीय शोक का प्रतीक है। सार्वभौमिक उपयोगिता की दृष्टि से अनेक नये प्रतीक भी स्वीकार कर लिए जाते हैं। वैज्ञानिक उड्डयन में प्रयुक्त होने वाले ऐसे अनेक नये प्रतीक हैं। कुछ प्रतीक ऐतिहासिक सन्दर्भ के कारण विशेष अर्थ के सूचक बन जाते हैं; जैसे—भारत में विभीषण, जयचन्द्र और मीर जाफर के नाम देशद्रोह के प्रतीक हैं; सीता और सावित्री आदर्श पतिव्रत की, भीष्म दृढ़-प्रतिज्ञा और ब्रह्मचर्य के प्रतीक हैं; सिन्दूर और चूड़ियाँ सौभाग्य की और राखी भाई-बहनों के चरित्र सम्बन्ध की प्रतीक हैं। इसी प्रकार अन्य देशों में भी विशिष्ट अर्थ देने वाले असंख्य प्रतीक हैं। राजनीति, साहित्य, कला, शिष्टाचार, सामाजिक व्यवहार में अनन्त खोजे जा सकते हैं। नये अर्थों से युक्त नये प्रतीकों का निर्माण होता रहता है।

धार्मिक जीवन में प्रतीक

धार्मिक क्षेत्र में प्रतीकों का महत्त्व बहुत बढ़ जाता है। धार्मिक संस्कार और कर्मकाण्ड, प्रतिमाओं, मन्दिरों आदि का निर्माण एवं रूपाकार का एक विशिष्ट अर्थ और महत्त्व होता है। ईश्वर निराकार है, उसका नाम और उसकी प्रतिमा उसका प्रतीक है। हिरण्यगर्भ, औंकार, स्वयम्भू, विश्वकर्मा, सच्चिदानन्द आदि शब्द उसके शाब्दिक प्रतीक हैं। सूर्य सभी देशों में ईश्वर का प्रमुख व्यक्त प्रतीक माना जाता है और ज्योति या प्रकाश ज्ञान का। आस्तिक त्रिदेवों के भी भिन्न-भिन्न प्रतीक हैं। शंख, चक्र, गदा, पद्म, गरुड़, सालिगराम, श्रीवत्स विष्णु के प्रतीक हैं। नन्दी, त्रिशूल, नवलचन्द्र, उपस्थ शिव के प्रतीक हैं। हंस ब्रह्म का प्रतीक है तथा सरस्वती और नीर-क्षीर विवेकी आत्मा का भी। उपनिषदों में आत्मा का प्रतीक पक्षी माना गया है। देवताओं के वाहन स्वयं देवताओं के प्रतीक माने जाते हैं; जैसे—चूहा गणेश का, मयूर कार्तिकेय का। अत्यन्त शिश्नोदर-परायण होने के कारण बकरा व्यक्ति की अतृप्त काम-पिपासा और क्षुधा का प्रतीक माना गया है। इसी प्रकार भैंस के स्वरूप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाला महिषासुर क्रूरता और पशु भाव का प्रतीक है। वैदिक तथा पौराणिक कथाओं को उनके प्रतीकों के वास्तविक अर्थ जाने बिना सम्यक प्रकार से समझा नहीं जा सकता। गोपियाँ आत्मा की प्रतीक हैं, उनके वस्त्र उनकी अस्मिता के, चीर-हरण की विख्यात (और सामान्य दृष्टि से कुख्यात) लीला का प्रतीकात्मक अर्थ आत्मा के द्वारा अस्मिता का परिपूर्णतम समर्पण और निरास है। कर्मकाण्ड में प्रयुक्त आसन, मुद्रा, कवच, न्यास आदि प्रतीकात्मक अर्थ होता है, वह अर्थ भले ही [illegible] विश्वास पर आधारित और अवैज्ञानिक हो।

भारतीय संस्कृति में प्रतीक
(Symbols in Indian Culture)

भारतीय संस्कृति में प्रतीकों का विशेष महत्त्व है। भारत की संस्कृति [illegible] प्राचीन है और भारत एक आध्यात्मिक देश है। यहाँ पर जीवन और मृत्यु, सत्य-असत्य, आत्म एवं परमात्म, वास्तविक सत्य एवं माया इत्यादि विषयों में बहुत चिन्तन एवं मनन हुआ है। भारत का इतिहास ही धार्मिक चिन्तन का इतिहास है। संस्कृत साहित्य में विशेष रूप के इतिहास (जो अर्थ वर्तमान काल में लिया जाता है) का अभाव है। यहाँ राज्यों का नहीं, विचारों का इतिहास मिलता है, यहाँ ऋषियों ने, मनीषियों ने दर्शन एवं धार्मिक संहिताएँ प्रस्तुत की हैं। धार्मिक ग्रन्थों का बाहुल्य भारत में पाया जाता है। दिव्य ज्ञान का यह देश संसार में सबसे आगे है, [illegible] क्षेत्र में।

सामाजिक मूल्य एवं आदर्श, आत्मा-परमात्मा, सृष्टि इत्यादि के तत्त्वों को केवल प्रतीकों द्वारा ही समझा जा सकता है। अतः भारत में प्रतीकों के प्रयोग द्वारा ही यह ज्ञान समझाया गया है। जो भी व्यक्ति भारत के दर्शन एवं धर्म को समझना चाहता है उसे यहाँ के प्रतीकों का अध्ययन करना अनिवार्य है, अन्यथा वह कुछ समझ ही नहीं सकता।[1]

प्रश्न

1. संस्कार और प्रतीक समाज में क्या कार्य करते हैं? उदाहरण दीजिए।
(What functions do rituals and symbols perform in society? Give examples.)

---

1 भारतीय प्रतीकों के वर्णन के लिए पढ़िए तोमर कृत, 'भारतीय, समाज, संस्कृति तथा संस्थाएँ।'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

31

किंवदन्तियाँ एवं पौराणिक कथाएँ
(Myths and Legends)

मनुष्य के बाह्य व्यवहार का आधार उनके आन्तरिक विचार हैं। मनुष्य का आन्तरिक जगत ही उसके बाह्य कार्यों का स्रोत है, इसलिए बाह्य व्यवहारों को समझने के लिए उसके आन्तरिक विचारों को जानना अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य के आन्तरिक विचार जो उसके मन में गहराई तक समाए हुये हैं, किंवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं के रूप में प्रकट होते हैं। इन्हीं के आधार पर सरलता से मनुष्य के दृष्टिकोणों के विषय में जाना जा सकता है। किंवदन्तियाँ एवं पौराणिक कथाएँ ही कुछ सीमा तक उसके सामूहिक व्यवहार (collective behaviour) का परिचय दे सकती हैं। मनुष्य के दृष्टिकोण, विचार, मानसिक प्रतिमा एवं प्रत्यय उसके पर्यावरण के प्रभाव से निर्मित होते हैं। किंवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं की उत्पत्ति मनुष्य के सामाजिक पर्यावरण एवं उसके मानसिक जगत दोनों से होती है।

व्यक्तित्व पर मानसिक एवं प्रत्यय बनने के लिए सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभाव पड़ते हैं। उदाहरणार्थ, माता-सम्बन्धी भाव-प्रतिमाओं पर भी सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव पड़ते हैं, इसी प्रकार देश-भक्ति के लिए भी सामाजिक एवं मानसिक जगत से विचार प्रेरणा पाते हैं। साथ ही सामाजिक मूल्यों के उत्पन्न होने के लिए भी कुछ संस्थाओं; जैसे—जिनका वह सदस्य होना है, पाठशाला, माध्यमिक समुदायों, आदि का प्रभाव पड़ता है। मनुष्य के आन्तरिक जगत का महत्त्वपूर्ण भाग किंवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं पर आधारित रहता है तथा बाकी भाग अन्य संगठनों से निर्मित होता है।

किंवदन्तियाँ एवं पौराणिक कथाएँ
(Myths and Legends)

महान नेताओं, संस्थाओं, देशभक्तों एवं व्यक्तियों के विश्वासों और आदर्शों को लेकर जो काल्पनिक कथाएँ प्रचलित होती हैं उन्हीं को हम किंवदन्तियाँ कहते हैं। किंवदन्तियाँ प्रत्येक समाज में प्रचलित होती हैं। ये समाज के भूत एवं वर्तमान काल की नाना प्रकार की कथाओं के रूप में प्रचलित होती हैं। किंवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं को हम निराधार नहीं कह सकते, इनका अवश्य कोई न कोई आधार होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। इनकी उत्पत्ति युद्ध, मृत्यु, संकटकालीन स्थिति, जीवन की समस्याएँ, कात कताएँ, सफलता एवं असफलता, गृहस्थ जीवन, विवाह इत्यादि को लेकर होती यह भी सम्भव है कि इसकी रचना मनुष्य के विपत्ति काल में धैर्य न खोने के लिए गयी हो। एक बार प्रचलित होने पर ये हमारे समाज की संस्कृति का महत्त्वपूर्ण अंग बन जाती हैं। यह माना जाता है कि पौराणिक कथाएँ अवश्य सत्य पर आधारित होती हैं, परन्तु एक-दूसरे को सुनते-सुनाते, सहस्रों वर्षों पश्चात वे अपनी वास्तविकता को छोड़कर केवल कल्पना रह जाती हैं। लोकगीतों (folklores) के प्रचलन का आधार भी किंवदन्तियाँ एवं पौराणिक कथाएँ ही हैं। लोकगीतों का हमारे सामाजिक जीवन में अत्यन्त महत्त्व है। समाज की संस्कृति को वर्तमान एवं भविष्य के साथ जोड़ने में किंवदन्तियाँ, पौराणिक कथाएँ एवं लोकगीत कड़ियों का कार्य करती हैं। सामाजिक सांस्कृतिक जीवन को इन्हीं के आधार पर ज्ञात किया जा सकता है तथा भविष्य को आशातीत बनाया जा सकता है।

आज का सर्वसाधारण व्यक्ति इन किंवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं के अभिप्राय का महत्त्व न समझ पाया। उसकी बुद्धि उसे यह सोचने के लिए बाध्य करती है कि इनका आधार कल्पनात्मक है, इनमें विश्वास करने वाले केवल अन्धविश्वासी एवं अशिक्षित हैं। परन्तु कुछ सामाजिक मनोवैज्ञानिकों ने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है कि किंवदन्तियाँ केवल काल्पनिक ही नहीं है, वरन् वास्तविक घटनाएँ भी हैं जो कभी हुई होंगी।

किंवदन्तियाँ एवं विधियाँ
(Myths and Rites)

विधियों का अर्थ उन क्रियाओं से है, जो ऐसा वस्तुओं एवं परिस्थितियों से सम्बन्धित होती हैं, जो हमारे जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। इस प्रकार किंवदन्तियों का प्रयोगात्मक पहलू भी है जो अनेक विधियों से सम्बन्धित होता है। विधियों से तात्पर्य जीवन-निर्वाह सम्बन्धी कृत्यों से नहीं है। विधियों का अर्थ धार्मिक क्रियाओं से होता है जो पारलौकिक जगत से सम्बन्धित कुछ बातों की ओर होती हैं। ये मनुष्य की अपनी अधूरी इच्छा एवं समाज की इच्छा के बीच की कड़ी हैं। धार्मिक क्रियाओं का सम्बन्ध किंवदन्तियों के सदृश्य धर्म से है; परन्तु ये जीवन की प्रतिदिन की समस्याएँ—राजनैतिक आर्थिक एवं सामाजिक—क्रियाओं को लेकर प्रचलित हो जाती हैं। धार्मिक क्रियाओं का सम्बन्ध एक ओर पारलौकिक बातों से है तो दूसरी ओर यह हमारे व्यावहारिक जगत की रीतियों से भी सम्बन्धित है। विधियों का प्रतीकात्मक अर्थ यह होता है कि किन्हीं विशेष अवसरों के आने पर पूर्ण की जाती हैं; जैसे—बालक के जन्म पर कुछ विधियाँ, विवाह पर कुछ तथा मृत्यु के उपरान्त आत्मा की शान्ति के लिए कुछ अन्य विधियाँ निश्चित हैं। यह विषय मानवशास्त्रियों एवं सामाजिक मनोवैज्ञानिकों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विवादग्रस्त है कि विधियों एवं किंवदन्तियों में पहले किस की उत्पत्ति हुई। कुछ लोगों के अनुसार विधियों को सार्थक बनाने के लिए ही किवदान्तियों का जन्म हुआ, इस प्रकार विधियाँ किंवदन्तियों से पहले उत्पन्न हुई हैं। परन्तु कुछ लोग अपना मत इसके विपरीत प्रस्तुत करते हैं, परन्तु यह सत्य है कि किंवदन्तियों के साथ-साथ विधियाँ भी होती हैं। इसके अनेक उदाहरण पाये जाते हैं।

जो कुछ भी हो, विधियों के आरम्भ होने पर संस्कार। का प्रचलन भी साथ-साथ होता है। यह तो स्पष्ट ही हो गया होगा कि विधियों के साथ धार्मिक क्रियाएँ ही नहीं बल्कि राजनैतिक, आर्थिक एवं अन्य बातों का भी प्रचलन होता है। उदाहरणार्थ, आज भी आदिम जातियों में अच्छी फसल एवं पशुओं की अधिक उत्पत्ति के लिए जादू-टोने एवं टोटके किये जाते हैं तथा उनसे सम्बन्धित किंवदन्तियाँ कही जाती हैं। आज जिन विधियों का प्रचलन है उनका प्रारम्भिक अर्थ अतीत के गर्भ में ही रह गया है। उदाहरणार्थ, कुछ धार्मिक क्रियाएँ औपचारिकता के लिए की जाती हैं; जैसे—सेना एवं राष्ट्रों के पारस्परिक व्यवहार को निभाने के लिए आज-कल जो बातें प्रचलन में आ गयी हैं, उनको शिष्टाचार के नाम से पुकारा जाता है। लेकिन इसके वास्तविक अर्थ का लोप हो गया है; जैसे—हाथ मिलाना, महिलाओं के सामने टोप उतारना इत्यादि। इसी प्रकार सेना के अफसर का अपने से बड़े अफसर को सलामी देना एवं सार्वजनिक सभा में लोगों को सम्मानित करने के भी अर्थ होते हैं। इन विधियों से लोगों में उमंग एवं उत्साह आता है तथा सभा में भाग लेने वाले उत्साहित होते हैं। इसका अन्तिम प्रभाव यह होता है कि लोगों में संगठन एवं एकता की भावना बढ़ती है तथा संघर्ष की सम्भावना घटती है। किंवदन्तियों एवं विधियों में उत्साहवर्धक भावना होती है। मंत्रों के उच्चारण एवं राष्ट्रीय गीत के उच्चारण करने की विधि में भी उद्वेगात्मक भावना होती है। इसी प्रकार प्रतिदिन के शिष्टाचारों में; जैसे—एक-दूसरे से मिलते एवं विदा लेते समय, खाना खाते समय शिष्टाचार की जिन विधियों का प्रयोग होता है उनका विशिष्ट अर्थ होता है। व्यवहारों के द्वारा पारस्परिक सम्बन्ध दृढ़ हो जाते हैं, पारस्परिक भय की भावना दूर हो जाती है और भविष्य में एक विशेष प्रकार के व्यवहार करने की नींव पड़ती जाती है।

किंवदन्तियों और पौराणिक कथाओं की उत्पत्ति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

(Psychological Analysis of Legends and Myths)

बचपन में बालक जिन उद्वेगों का अनुभव करता है उनको लेकर मनगढ़न्त कल्पनाएँ बना लेता है। इन कल्पनाओं के लिए समय और अनुकूल परिस्थितियाँ भी सहायक होती हैं। बचपन के इन मनगढ़न्त कल्पनाओं को भाषा द्वारा व्यक्त किया जाता है तथा बाद में ये ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के आधार बन जाते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। बालक में समस्त प्रत्यक्षीकरणों की त्रिया, वैयक्तिक संवेदना एवं संवेदना [illegible] करने के वैयक्तिक अन्तरों पर निर्भर करती हैं। इस प्रकार यह त्रिया पर्यावरण [illegible] प्रभावों एवं उनसे प्राप्त होने वाली उत्तेजना पर प्रतिक्रिया करने के ढंग पर [illegible] करती है तथा कुछ ही काल पश्चात स्मृति से विभ्रम होने पर जब पुनः स्मरण [illegible] जाता है तो बीती बातें वास्तविक घटनाओं से भिन्न ज्ञात होती हैं। घटना को [illegible] समय पश्चात कहने पर या उसमें अधिक जोड़ने या कम कर देने की [illegible] होती है। काल्पनिक घटना को सत्य बनाने में, घटना सुनाने का ढंग एवं [illegible] वालों के अन्दर विश्वास, दोनों कारक सहायक होते हैं। विगत युद्ध में [illegible] अत्याचारों को लेकर फैली हुई किवदन्तियों को इतने रोचक ढंग से सुनाया [illegible] लोग इसको सत्य मानने लगे थे। किम्बाल यंग ने पौराणिक कथाओं के [illegible] निम्नलिखित मनोवैज्ञानिक कारण दिये हैं :

निरीक्षक की उद्वेगात्मक मनोस्थिति जो परिस्थिति के प्रत्यक्षीकरण [illegible] और भी अधिक सत्रिय बन जाती है, उसमें प्रत्यक्षीकरण करने के समय भूल [illegible] सम्भावना बनी रहती है। यदि कोई नवीन घटना है तो उसके प्रत्यक्षीकरण [illegible] त्रिया में कुछ भूल होनी स्वाभाविक है, क्योंकि यह त्रिया घटना के कुछ [illegible] तक सीमित रहती है। घटना की कुछ बातें इतनी अधिक अपचरित होती हैं [illegible] पर ध्यान आसानी से नहीं जाता। इस कारण पुनःस्मरण करने में भी [illegible] है। ऐसी भूलों की सम्भावना उस समय होती जब घटनाओं का वर्णन [illegible] सामने किया जाता है। घटनाओं का निरीक्षण करने वाले व्यक्ति की पूर्व [illegible] के कारण, घटनाएँ जैसी हैं वैसी ही बताने में कठिनाई होती है। ये पूर्व [illegible] निरीक्षक के मन में रहने वाली रूढ़िवादिता (stereotype) और प्रचलित [illegible] कथाओं पर निर्भर करती हैं। जिस समय घटनाएँ घटित होती हैं, उस समय [illegible] उनको समझने में भी गलती कर सकता है। कभी-कभी लोगों में घटनाओं को [illegible] चढ़ाकर कहने की प्रवृत्ति भी पायी जाती है। इसमें काल्पनिक बातें अधिक [illegible] हैं। कभी-कभी जैसे प्रचार के समय लोगों को प्रभावित करने के लिए [illegible] पौराणिक कथाओं को कहा जाता है।

घटनाओं के होने एवं उनका पुनः स्मरण करने के बीच का समय [illegible] महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि कुछ समय बीत जाने पर यह वर्णन वास्तविक घटनाओं [illegible] हो जाता है। घटना और उसका पुनः स्मरण का समय जितना ही अधिक [illegible] जाता है, घटना में उतनी ही काल्पनिकता आती जाती है। सम्भवतः पुनः [illegible] के समय घटना में कुछ बढ़ा दिया जाता है तथा विशेष विवरण का लोप हो [illegible]

किम्वदन्तियाँ एवं पौराणिक कथाएँ समाज के रीति-रिवाजों में भी [illegible] हैं। वे समूह के अन्दर व्यवहार एवं आचरण सम्बन्धी कुछ मूल्य रखने [illegible] विधियों को बार-बार करने में उत्तेजना एवं प्रतिक्रिया का सम्बन्ध स्थापित [illegible]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है और उनको फिर करने में वह परिश्रम नहीं करना पड़ता जो प्रथम प्रयास में किया गया था। आगे चलकर ये विधियाँ यान्त्रिक हो जाती हैं। ये विधियाँ मनुष्य के लोकाचारों का एक भाग बन जाती हैं; लेकिन पौराणिक कथाएँ एवं किम्वदन्तियाँ लोकाचारों का भाग नहीं बनतीं। किम्वदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं को बार-बार कहने से परिवर्तन होने की सम्भावना रहती है; पर विधियों में परिवर्तन लाना सम्भव नहीं है। देखा गया है कि संकट के समय में इनमें परिवर्तन आ जाता है और नयी विधियों को भी गढ़ लिया जाता है।

उपर्युक्त मनोवैज्ञानिक कारणों के अतिरिक्त भी किम्वदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं के बनने एवं उनमें परिवर्तन आने के अन्य कारण भी हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, ऐसी उत्तेजना जो चिन्ता को उत्पन्न करे, या ऐसी परिस्थिति जिसके होने से व्यवहार क्रिया का चलना आरम्भ होता है, परन्तु वह पूर्ण भी नहीं हो पाता। किसी 'चालक' के उत्पन्न होने पर उसकी तृप्ति भी कठिन होती है। इन्हीं परिस्थितियों से नैराश्य, चिन्ता, भय, क्रोध इत्यादि उद्वेगों को जन्म मिलता है। इन परिस्थितियों में ही मनुष्य प्रयत्न-भूल एवं मानसिक सूझबूझ से काम लिया करता है। प्राकृतिक विपत्तियाँ जैसे जन्म-मरण, बीमारी, खाद्य की कमी, बेरोजगारी आदि ऐसी ही परिस्थितियाँ हैं जिनके कारण चिन्ताग्रस्त परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है। यदि इस प्रकार उद्वेगात्मक स्थिति अधिक दिनों तक स्थिर रहती है तो उद्वेगात्मक अनिश्चितता और अधिक बढ़ जाती है। इन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के प्रयास में कल्पनात्मक विचार आने लगते हैं। उद्वेग से उत्पन्न हुए खिंचाव की स्थिति में चिन्तारोग (Anxiety-neurosis) बढ़ता रहता है।

यह चिन्ता एवं चिन्तारोग मनुष्य के वैयक्तिक अनुभवों द्वारा उत्पन्न होता है। मनुष्य अपनी चिन्ता को किवदन्तियों, पौराणिक कथाओं एवं अपनी संस्कृति में प्रचलित विधियों के द्वारा व्यक्त करता है। इस प्रकार वह समाज में प्रचलित हो जाती है। काल्पनिक संकटों के प्रति प्रतिक्रिया करना बालकपन में ही सीखा जाता है। इस प्रतिक्रिया का तरीका यह है कि बालकपन में किसी समूह विशेष के प्रति किस्से कहानियाँ सुनी जाती हैं। इससे उस समूह के प्रति धारणाओं का निर्माण प्रारम्भ होता है। इसका परिणाम यह होता है कि एक ओर सामाजिक नियन्त्रण होता है तो दूसरी ओर वह अपने समाज में अपना समायोजन भी कर लेता है।

जादू-टोने, टोटकों के द्वारा समूह के अन्दर विभिन्न प्राकृतिक प्रकोपों एवं बीमारियों की चिकित्सा की जाती है। बीमार पड़ने पर उस व्यक्ति को यह विश्वास रहता है कि वह जादू, टोने-टोटके से अच्छा हो जायेगा। यही कारण है कि यह विश्वास उसको बीमारी से अच्छा होने में सहायता भी करता है। प्रार्थना एवं धार्मिक विश्वासों को इसी कारण बीमारी के अच्छे होने के साधनों में मान लिया गया है। आज के चिकित्सक भी बीमारी के चरम सीमा पर पहुँचने पर जादू-टोने में विश्वास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करने लगते हैं। किंवदन्तियों को सुनाने वाला एवं सुनने वाला दोनों ही उनकी पर विश्वास करने लगते हैं। बचपन में परियों की कहानी सुनकर बालक सत्यता पर विश्वास करने लगते हैं तथा आगे चलकर किंवदन्तियों एवं पौ कथाओं पर आधारित विधियों की भाँति को भी मानने लगते हैं। किंवदन्ति पौराणिक कथाओं द्वारा मनुष्यों की आक्रामक प्रवृत्तियों को रूपान्तरित किया जाता है। अर्थात इन किंवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं द्वारा, जो वीभत्स व्यक्ति, शत्रु आदि को लेकर प्रचलित होती है, उसमें मनुष्य अपनी आक्रामक प्र को दूसरे समूहों एवं वस्तुओं के माध्यम द्वारा प्रकट करता है। इस प्रकार इनके माध्यम से अपनी आक्रामक प्रवृत्ति को बाह्य रूप देते हैं। इस प्रकार की शुद्धि करने की विधियों, जादू आदि से अपने को उन विधियों से आत्मम अपने विचारों का बाह्यान्तरीकरण करने एवं उन प्रवृत्तियों को रूपान्तरित क महत्त्वपूर्ण, उदाहरण मिलते हैं। प्रत्येक समाज इन्हीं काल्पनिक कहानियों में असुरक्षित स्थिति एवं संघर्ष की हल की विधियों की खोज करता है, या पात

किंवदन्तियों और पौराणिक कथाओं का सामाजिक और सांस्कृतिक महत्त्व

(Social and Cultural Importance of Myths and Legends)

भौतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं के प्रकट होने पर ही किंवद न्तियों तथा पौराणिक कथाओं की उत्पन्नि होती है। इनके द्वारा मनुष्य को समस्याओं के हल करने में सहायता मिलती है। इनकी उत्पत्ति स्रोत, धर्म में नि एवं अन्धविश्वास, आर्थिक एव राजनीतिक समस्याओं को उत्पत्ति ही है। इन्हीं कारण ये प्रचलन में आती हैं। इन्हीं के द्वारा हम भूत, वर्तमान, एवं भविष्य को जान सकते हैं। किंवदन्तियों एवं पौराणिक कथाओं ने ही मनुष्य को विश्व में अ स्थिति को स्पष्ट करने में सहायता दी है।

प्रश्न

(1) किंवदन्ती की परिभाषा कीजिए। किंवदन्ती के सामाजिक कार्यों विवेचना कीजिए।

(Define Myth. Discuss the social function of myth. Rajasthan M. A. Sociology, 1959.)

(2) किंवदन्तियाँ क्या होती हैं? इनके सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यों महत्त्व की व्याख्या कीजिए।

(What are myths? Explain their social, cultural function and significance. Rajasthan, M. A. Sociology, 1958.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

32

फैशन

(Fashion)

फैशन शब्द से हम सभी परिचित हैं। हर क्षण कोई न कोई वात इस सम्बन्ध में हो जाती है। 'यह भी आजकल का फैशन है।' आजकल शब्द बड़ा महत्त्वपूर्ण है। हम सभी जानते हैं कि फैशन एक प्रकार का व्यवहार पर प्रभाव डालने वाला सामाजिक प्रभाव का स्वरूप है। यह व्यवहार का स्वरूप भी है। गरमी के दिन, सूर्य तप रहा है, पसीना चू रहा है, सामने एक विद्यार्थी ऊँची, कसी व चिपकी हुई पैंट पहने खड़ा है, पर प्रसन्न हैं। क्यों? इसलिए कि आजकल के आधुनिकतम फैशन के अनुसार उसकी पैंट सिली हुई है। दर्जी पूछता है, 'साहब, पैंट की मोरी कितनी होगी?' आप कहते हैं, '18 इंच।' दर्जी कहता है, 'साहब फैशन तो नहीं है, आगे आपकी मर्जी।' दर्जी कुछ व्यंग के स्वर में कहता हैं। क्यों? इसलिए कि आप समय से कुछ वर्षों पूर्व की बात कर रहे हैं, आप आजकल के फैशन से परिचित नहीं हैं। कहते हैं पेरिस में आज कुछ फैशन होता है, कल कुछ और हो जाता है: फैशन की दौड़ भी विचित्र है। इसका पीछा करना बड़ा कठिन है। इसने आधुनिक युग में और भी अधिक, महत्त्व प्राप्त कर लिया है। आखिर फैशन है क्या?

फैशन में प्रायः उपयोगिता का भी ध्यान नहीं रहता। उदाहरण के लिए, गरमी में कसी पैंट या कमीज या स्त्रियों के कसे हुए ब्लाउज। बहुत से लोग सिगरेट क्यों पीते हैं? सिगरेट की कोई उपयोगिता नहीं है, पर फैशन है। इसलिए अधिकतर लोग सिगरेट पीना प्रारम्भ कर देते हैं और फिर आदत पड़ जाती हैं।

फैशन और स्टाइल

'Style' अथवा/और 'Vogue' शब्द फैशन से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। स्टाइल प्रस्तुतीकरण निर्माण या क्रियान्वित करने के विशिष्ट ढंग को कहते हैं। हमने सुना ही होगा कि उस लेखक का स्टाइल बड़ा अच्छा है, वह गेंद बड़े स्टाइल से फेंकता है, इत्यादि। मूंछे रखने का फैशन होता है, पर मूंछें कैसी रखी जायेंगी, यह स्टाइल पर आधारित है। तलवार कट, मक्खी छाप, बड़े बाबू की तरह, दयाशील, सेही के कांटे स्टाइल इत्यादि।

'Vogue' एक समय विशेष का प्रचलन होता है। फैशन से यह सम्बन्धित है। यह अस्थायी होता है, पर अत्यधिक प्रचलित।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'फैशन' और 'टेस्ट'

टेस्ट व्यक्तिगत होता है। इसमें कर्मविषयकता (objectivity) नहीं इसमें व्यक्ति के मूल्य कार्य करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का टेस्ट पृथक-पृथक होता

फैशन का अर्थ एवं परिभाषाएँ
(Meaning and Definitions of Fashion)

फैशन एक प्रकार का प्रचलित व्यवहार है। किसी समय विशेष में जि लोग व्यवहार करते हैं अथवा अपनी अभिव्यक्ति करते हैं, उसे हम फैशन क फैशन की परिभाषा करते हुए किम्बाल यंग (Kimball Young) ने "फैशन उन विशिष्ट सांस्कृतिक लक्षणों, जिन्हें प्रथा परिवर्तन करने की प्रदान करती है, की अभिव्यक्ति, प्रस्तुतीकरण या अवधारणा के वर्तमान या प्रचलन, तरीके या विशिष्टताओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता किम्बाल यंग ने फैशन को अभिव्यक्ति, अवधारणा अथवा प्रस्तुतीकरण के वर्त प्रचलित प्रचलन, तरीके या विशिष्टताएँ बताया है। व्यक्ति किस प्रकार स विशेष में अपने को अभिव्यक्त करते हैं, प्रस्तुत करते हैं, सोचते-विचारते हैं या तरीका ही फैशन है। इस प्रकार फैशन वह व्यवहार का ढंग है जो कि विशेष में प्रचलित होता है। ये विशेष ढंग कुछ ही सांस्कृतिक लक्षणों के लि है क्योंकि हर लक्षण को समय-समय पर परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। क किम्बाल यंग ने स्पष्ट किया है कि यह उन विशिष्ट सांस्कृतिक लक्षणों की व्यक्ति है, जिन्हें प्रथा परिवर्तन करने की अनुमति प्रदान करती है। इससे कि फैशन उन लक्षणों से ही सम्बन्धित है जिनमें परिवर्तन करते रहने से प्रथा प्रभाव नहीं पड़ता और प्रथा स्वयं उनमें परिवर्तन करने की अनुमति प्रदान है। इस प्रकार, फैशन व्यवहार करने का वर्तमान प्रचलित ढंग या तरीका है

फैशन परिवर्तनों से सम्बन्धित है। कुछ लक्षण ऐसे होते हैं, जिनमें की अनुमति प्रथा ने ही प्रदान कर रखी है, इसलिए उनमें नित्य नये परिवर्तन रहते हैं। फैशन इन परिवर्तनों को ही कहते हैं। फैशन की विशिष्टता परिवर्तन जेम्स ड्रेवर (James Drever) ने फैशन की परिभाषा इसकी परिवर्तन विशिष्टता के सन्दर्भ में ही की है। उसने लिखा है, "फैशन सामाजिक लोका एक ऐसा प्रकार या पक्ष है, जिसकी मुख्य विशेषता उसकी परिवर्तनशील और स्पर्धी प्रकृति है।"[2]

---

[1] **"Fashion may be defined as the current or prevailing mode, manner or characteristic of expression, presentation conception of those particular cultural traits which custom allows to change." K. Young, *A Handbook of Social Psy*... p. 411.**

[2] **"Fashion is a type or phase of social convention chara... mainly by its changing and competitive character." James D... *Dictionary of Psychology*.**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रॉस ने फैशन की परिभाषा करते हुए लिखा है, "फैशन किसी भी जनसमूह की रुचियों में होने वाले परिवर्तन होते हैं।"[1]

फैशन की व्यवहार के रूप में परिभाषा करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "व्यवहार के रूप में, फैशन पोशाक (वस्त्र), वैयक्तिक वेशभूषा, सजावट, फरनीचर मकान और अन्य प्रकार के विभिन्न सामाजिक अभिव्यक्तियों के अधिक या न्यून वर्तमान और मान्य व्यवहार हैं।"[2]

फैशन और प्रथा (Fashion and Custom)

फैशन और प्रथा दोनों ही सामाजिक प्रमाप हैं, इसलिए एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं; परन्तु इनमें कई भेद भी हैं। इनमें अंशों का अन्तर पाया जाता है। दोनों ही मानव व्यवहार को नियन्त्रित करते हैं और समूह के समरूप बनाने का प्रयत्न करते हैं।

प्रथा तुलनात्मक दृष्टि से स्थायी होती है। फैशन की प्रकृति अस्थायी होती है। फैशन शीघ्र परिवर्तित होता है। जो आज फैशन है, कल वह कोई नहीं करना चाहता और उसे दकियानूसी कहने लगते हैं। टार्डे के अनुसार फैशन अपने समकालीन का अनुकरण और प्रथा अपने पूर्वजों का अनुकरण है।[3]

प्रथा भूत की ओर उन्मुख होती है, तो फैशन भविष्य की ओर। हरबर्ट स्पेन्सर ने भी कहा है कि प्रथा जब पतन की ओर बढ़ती है, तो फैशन उसका स्थान ले लेता है और प्रगति की ओर बढ़ता है।

प्रथा और फैशन के भेद को समझाते हुए रास ने लिखा है, "यदि हम किसी समाज को एक बहती हुई जलधारा के रूप में चित्रित करें, तो हम प्रथा को प्रवाह की दिशा में अनुकरण और फैशन के प्रवाह को काटकर पार जाने वाला अनुकरण कह सकते हैं।"[4]

प्रथा और फैशन के भेद को हम अग्र रूप में भलीप्रकार समझ सकते हैं :

---

[1] "Fashion is a series of recurring changes in the choices of a group of people." E. A. Ross, *Social Psychology*, p. 941.

[2] "As a forms of behaviour, fashion has to do with more or less current and accepted matters of dress, personal adornment, decoration, furniture. houses and a wide variety of social manifestations." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 310

[3] G. Tarde, *Laws of Imitation* Eng. Trans. E. C. Person. Ch. VII.

[4] If we figure the life of a society as a flowing stream, then we think of one (custom) as down imitation, the other (fashion) as cross imitation." E. A. Ross, *Social Psychology*, p. 196.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रथा	फैशन
1. प्रथा उस मार्ग का अनुकरण है जो हमारे पूर्वजों ने प्रदर्शित किया।	1 फैशन उस मार्ग का अनु... जो समकालीन व्यक्तियों द्वारा ... होता है।
2. प्रथा पुरातन की ओर ले जाती है और नवीन का विरोध करती है।	2. फैशन नवीनता की ओर ... है; रुढ़िवादिता का विरोध करता है। नये मार्ग का प्रदर्शन करता है।
3. प्रथा जब एक बार समाप्त हो जाती है तो प्रायः इसका पुनर्विकास नहीं होता।	3. फैशन आज समाप्त हो ... पर उसका फिर कुछ समय उपरान्त ... हो सकता है। अधिकांश मनोवै... का मत है कि फैशन में एक ... (cycle) चलता है।
4 प्रथा में स्थायित्व होता है।	4. फैशन शीघ्र परिवर्तित ...
5. इसका सम्बन्ध समाज की स्थायी तथा महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं से होता है।	5. इसका सम्बन्ध समाज ... कालीन आवश्यकताओं से होता है।
6. परिवर्तन धीरे-धीरे होते हैं।	6. परिवर्तन एकदम होते हैं ... बड़ी तेज होती है।
7. प्रथा में केवल अनुकरण कार्य करता है।	7. फैशन में अनुकरण एवं ... आत्मप्रदर्शन भी कार्य करते हैं।

फैशन की प्रकृति या विशेषताएँ
(Nature and Characteristics of Fashion)

उपर्युक्त विवेचन से फैशन की प्रकृति के विषय में हमें कुछ ज्ञान हो गया ... फैशन अत्यधिक परिवर्तनशील है और इसमें परिवर्तन की गति भी अत्यन्त तीव्र ... है। जो आज है, वह कल नहीं। अधिक दिन तक तो कोई फैशन चलता ही नहीं ... फैशन की प्रकृति में नवीनता पायी जाती है।

फैशन में उपयोगिता का होना अनिवार्य नहीं है। प्रायः हम वही कार्य ... हैं, जो हमारे लिए उपयोगी होते हैं। फैशन में यह बात नहीं है। कभी-कभी ... स्त्रियों को जाड़े में भी धूप के चश्मे लगाये देखा होगा। वह एक प्रकार का फैशन ...

रॉस ने फैशन की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुए निम्न तथ्यों ... दिया है :

(1) फैशन का सम्बन्ध किसी समूह विशेष की पसन्द से है—प्रत्येक ... की कुछ पसन्द होती है। यही पसन्द उस समूह का फैशन होता है। जो एक ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की पसन्द हो, उसे हम फैशन नहीं कहेंगे। जो पसन्द दूसरों को भी पसन्द आये और वह उसका अनुकरण करे, तब वह पसन्द फैशन के रूप में परिवर्तित हो जाती है।

(2) **फैशन अत्यधिक परिवर्तनशील होते हैं**—फैशन अत्यधिक परिवर्तनशील होते हैं। जो आज हैं, वह कल नहीं। कहते हैं पेरिस में सुबह कुछ फैशन होता है और शाम को कुछ। फैशन नवीनता का उपासक है। सामाजिक नियम भी इसमें अधिक बाधा नहीं डालते।

(3) **फैशन में उपयोगिता अनिवार्य नहीं**—फैशन में उपयोगिता अनिवार्य नहीं है। फ़ैशन नवीनता की माँग है। इसकी उत्पत्ति में यह नहीं रहता कि वह उपयोगी ही हो। कुछ लोग उपयोगी वस्तुओं को नहीं खरीदते, पर फैशन की वस्तुओं को जरूर खरीदेंगे। विद्यार्थियों के लिए पुस्तकें अनिवार्य हैं, पर वे पुस्तकें न खरीद कर पहले टाइयाँ, धूप का चश्मा इत्यादि खरीदेंगे। इनका सम्बन्ध उनके आत्म-प्रदर्शन से है। यह तो आजकल का प्रचलन है कि लोग खाने में कमी कर सकते हैं। भूखे सो सकते हैं, पर नवीनतम कपड़े अवश्य पहनेंगे। इसमें दिखावे की भावना प्रधान है।

रॉस द्वारा वर्णित उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त निम्न विशेषताएँ और होती हैं:

(4) **व्यापक प्रचलन**—फैशन का प्रचलन तो रहता ही है, पर आधुनिक युग में अनेक कारणों से फैशन का व्यापक प्रचलन एवं विस्तार रहता है। जीवन का हर पक्ष इससे प्रभावित होता है।

(5) **फैशन में अनुरूपता**— आधुनिक समाज मे फैशन में अधिक अनुरूपता आ गयी है। संचार के साधनों जैसे प्रेस, रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा आदि के कारण फैशन कुछ ही समय में दूर-दूर तक प्रसारित हो जाता है। इस शीघ्र प्रसारण के कारण फैशन में अनुरूपता (conformity) बढ़ जाती है। जो फैशन अमरीका में प्रचलित है, वही भारत में भी पाया जाता है।

(6) **परिवर्तन की उन्मादी प्रवृत्ति**—फैशन में परिवर्तन की प्रकृति तो पायी ही जाती है और फैशन परिवर्तन से ही सम्बन्धित है, पर आधुनिक युग में फैशन की उन्मादी प्रवृत्ति हो गयी है। फैशन के पीछे लोग पागल से हो गये हैं। फैशन के परिवर्तन की इतनी अधिक उन्मादी प्रवृत्ति हो गयी है कि फैशन हर रोज-परिवर्तित होते रहते हैं और उनसे कदम मिलाना कठिन हो गया है। पार्क (Park) ने इस सम्बन्ध में ठीक ही लिखा है, "हम में से कुछ लोग फैशन के पीछे रह जाते हैं, परन्तु कोई भी इससे आगे नहीं निकल सकता।"[1]

---

1 "Some of us fall behind the fashion, but no one over goes ahead of it." Robert E. Park.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फैशन को परिवर्तित करना इसलिए आवश्यक होता है कि नकल हो उपरान्त लोग फिर से अनोखापन चाहते हैं, अतः अनुरूपता होते ही वे प्रारम्भ कर देते हैं। प्रायः स्त्रियाँ फैशन की दौड़ में पुरुषों से आगे रहती हैं। फुर्सत वाले लोगों का काम है।

(7) फैशन की तर्क शून्यता—फैशन तर्क शून्यता पर आधारित होता फैशन का तर्क से कोई सम्बन्ध नहीं होता। आधुनिक फैशन अहंवाद, व्यक्ति प्रदर्शनवाद, संवेगात्मक कल्पना और नवीनता पर आधारित है।

फैशन का मनोविज्ञान
(The Psychology of Fashion)

फैशन की प्रकृति एवं विशेषताओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि फैशन परिवर्तनशील होते हैं। परन्तु उपयोगिता से प्रेरित नहीं होते हैं। फिर प्रश्न यह है फैशन की उत्पत्ति एवं विकास क्यों और कैसे होता है? वे कौन से कारण हैं मनुष्यों को फैशन करने के लिए बाध्य करते हैं? फैशन के पीछे कुछ मनोवैज्ञानिक कारक हैं, जिनके कारण फैशन की उत्पत्ति होती है। इसी व्याख्या को फैशन मनोविज्ञान (The Psychology of Fashion) कहते हैं। प्रमुख रूप से मनोवैज्ञानिक कारक महत्त्वपूर्ण हैं :

(1) वैयक्तिता और समरूपता की इच्छा (Desire for Individuality and Conformity)—व्यक्ति में वैयक्तिकता और समरूपता दोनों की इच्छा रहती है। ये दोनों इच्छाएँ एक-दूसरे की विरोधी हैं, फिर भी मनुष्य में समय पर जागृत होती हैं। व्यक्ति समाज में दूसरों के अनुसार समरूपता भी बनना चाहता है जिससे उसे सुरक्षा मिलती है। व्यक्ति वैयक्तिकता (individuality) भी करना चाहता है जिससे उसे दूसरों से भिन्नता, अनोखापन, नवीनता आदि का होता है। ये दोनों प्रवृत्तियाँ—वैयक्तिकता और समरूपता ही फैशन की उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी हैं। जार्ज सिमेल ने लिखा है, "फैशन की उत्पत्ति के लिए दो सामाजिक प्रवृत्तियाँ अनिवार्य हैं। अर्थात एक ओर एकता की आवश्यकता और दूसरी ओर पृथकता की आवश्यकता। इनमें से एक की भी अनुपस्थिति में फैशन की रचना नहीं होगी और उसका बहाव एकदम समाप्त हो जायेगा।"[1]

किम्बाल यंग ने भी सिमेल की भाँति फैशन की उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "फैशन व्यक्तित्व के लिए समरूपता, सुरक्षा और सामाजिक एक

---

1 "Two social tendencies are essential to the establishment of fashion, namely, the need of union, on the one hand, and the need of isolation, on the other. Should one of these be absent fashion will not be formed—its sway will abruptly end..." George Simmel.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...छा एवं विशिष्टता, वैयक्तिकता और भिन्नता की इच्छा के बीच एक सुन्दर सन्तुलन ...न करता है।"[1]

फैशन वैयक्तिकता (individuality) और समरूपता (conformity) की ...छाओं के इस सन्तुलन में होने वाले अवरोधों के कारण प्रारम्भ होता है।[2] जब ...क्ति में अनोखेपन, नवीनता, दूसरों से भिन्न होने की इच्छा होती है तो वह परिवर्तन ...ता है और नयापन लाता है। फिर अन्य व्यक्ति उसका अनुकरण करने लगते हैं ...र शनैः-शनैः बहुत से लोग उसी फैशन को अपना लेते हैं। इस प्रक्रिया में समरूपता ...ती जाती है और फिर यह सामान्य बात हो जाती है। इस प्रकार से एक चक्र-सा ...न जाता है, जिसे निम्न चित्र के द्वारा व्यक्त कर सकते हैं :

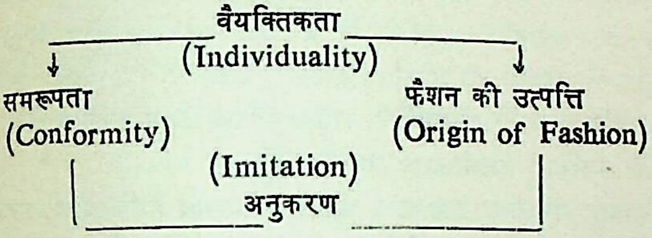

(2) **परिवर्तन की इच्छा** (Desire for Change)—वैसे तो परिवर्तन ...अवश्यम्भावी है। फिर भी व्यक्ति परिवर्तन की इच्छा करता है और यह उसकी मूल ...वृत्ति है। परिवर्तन के बिना मनुष्य जीवन से ऊब जाता है। एकरसता नीरसता को ...जन्म देती है। हम सभी जानते हैं कि एक प्रकार का कार्य करते-करते हम थक जाते ...और ऊबकर कह पड़ते हैं, 'भाई, बोर हो गये'। एकरसता थकान उत्पन्न करती है, ...जीवन को शिथिल एवं मन्द बना देती है। जीवन में शक्ति के लिए परिवर्तन आवश्यक ...है। इसीलिए व्यक्ति परिवर्तन की इच्छा करता है। फैशन परिवर्तन की इस इच्छा ...को संतुष्टि करता है। अतः फैशन परिवर्तन की इच्छा का भी परिणाम है।

(3) **क्षतिपूर्ति की इच्छा** (Desire for Compensation)—फैशन की ...उत्पत्ति की एक महत्त्वपूर्ण प्रेरणा है—क्षतिपूर्ति की इच्छा। बहुत से व्यक्तियों में ...शारीरिक या मानसिक दोष होते हैं, वे इस क्षति की पूर्ति कैसे करें। लोगों के सामने ...अपने को कैसे विशिष्ट रूप में प्रदर्शित करें कि उनका ध्यान उनकी ओर भी जाये। ...फैशन उनकी सहायता करता है और फैशन के द्वारा वे इस क्षति की पूर्ति कर लेते हैं।

(4) **अहं-परिवर्द्धन** (Ego Expansion)—फैशन के कारण अहं-परिवर्द्धन

---

[1] "This fashion furnishes for the personality a nice balance between the desire for conformity, security and social solidarity and the desire for distinction, individuality and differentiation." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 322.

[2] "The whole sway of fashion is related to the disturbance of this ever shifting balance of individual and conformity." *Ibid*, p. 322.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी होता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "फैशन और फैशन-परिवर्तन का आवाहन अहं के विस्तार का प्रतिनिधित्व करता है।"[1]

कुछ लोगों का मत है कि स्त्रियाँ इसी क्षति की पूर्ति के लिए अधिक करती हैं। समाज में उनका स्तर निम्न है और उन्हें हीन समझा जाता है। जो स्त्रियाँ काम करने लगी हैं, वे इतना अधिक फैशन नहीं करतीं। आर्कषित करने के अतिरिक्त फैशन करने का एक प्रमुख कारण हीनता को फैशन के द्वारा दूर करना भी है।

(5) **फैशन और यौन आकर्षण** (Fashion and Sex Attraction) फैशन का प्रमुख कारण आकर्षण भी है। स्त्रियाँ तो अधिकतर फैशन करती हैं कि पुरुष उनकी ओर आर्कषित हों। यदि कोई स्त्री फैशन किये हुए है आप उसकी ओर प्रशंसासूचक दृष्टि से न देखें तो वह अपना अपमान बहुत से पुरुष भी स्त्रियों को आर्कषित करने के लिए ही फैशन करते हैं। देखेंगे कि सहशिक्षा वाली संस्थाओं में लड़के अधिक फैशन करते हैं और रहता है कि लड़कियाँ उनकी ओर आर्कषित हों।

किम्बाल यंग तथा कुछ अन्य विद्वानों का मत है कि यौन आकर्षण का एक प्रमुख कारण नहीं है, विशेष रूप से उच्च वर्गों में ऐसा नहीं है। यह एक महत्त्वपूर्ण कारक है।

(6) **वस्त्रों का मनोविज्ञान** (Psychology of Dress)—दूसरों से को भिन्न करने के सिद्धान्त पर ही वस्त्रों का मनोविज्ञान कार्य करता है।

वस्त्रों का मनोविज्ञान
(Psychology of Dress)

वस्त्रों की नवीनता फैशन का एक प्रमुख अंग है। अतः उपर्युक्त वर्णित कारक वस्त्रों के मनोविज्ञान के भी कारक हैं। यहाँ पर हम वस्त्रों के मनोविज्ञान के विषय में कुछ और प्रकाश डालेंगे।

कुछ लोगों का मत है कि लोग कपड़े अपने शरीर की रक्षा के लिए हैं। इसमें उपयोगिता की भावना रहती है। दूसरा मत यह है कि कपड़े शर्म से बचाने के लिए पहले जाते हैं। शरीर के कुछ अंग हम किसी को नहीं चाहते।

तीसरा सिद्धान्त कहता है कि कपड़े हम दिखावे एवं सजावट के लिए हैं। मोर की तरह सुन्दर दिखाने का प्रयत्न है।

वास्तव में लोग अपने बदन के कुछ हिस्सों को छिपाने के लिए और दोनों के लिए ही कपड़े पहनते है।

---

1. "The whole appeal of fashion and fashion change represents extension of the self." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* p. 324.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ विद्वानों ने व्यक्तित्व और कपड़ों में सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयत्न किये हैं।"[1] इस प्रकार के प्रयत्न अभी वैज्ञानिक दृष्टि से सफल नहीं हुए हैं।

कपड़े हीनता की भावना की क्षति पूर्ति के लिए विशेष रूप से पहने जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं है कि कपड़े आदमी को चार चाँद लगा देते हैं। आधुनिक युग में तो कपड़ों का बड़ा महत्त्व है। इससे आत्म-सन्तुष्टि भी होती है। कपड़े व्यक्ति को विशिष्टता प्रदान करते हैं।

इससे स्पष्ट है कि वस्त्र व्यक्ति के व्यक्तित्व को एक महत्त्व प्रदान करता है। व्यक्तित्व के इस प्रकार विशिष्टता का आधुनिक जीवन में महत्त्व बढ़ता जा रहा है। आजकल लोग कपड़ा पहनना अधिक महत्त्वपूर्ण समझते हैं। वे खाना अच्छा नहीं खावेंगे, अन्य कार्य नहीं करेंगे, पर कपड़ा अच्छा व शानदार अवश्य पहनेंगे। कपड़े का यह महत्त्व आजकल की दुनिया में इसलिए भी बढ़ता जा रहा है कि हम दिखावे को अधिक महत्त्व दे रहे हैं और व्यक्तित्व को कम।

फैशन के प्रसार के नियम
(Laws of Diffusion of Fashion)

फैशन के प्रसार के नियम अनुकरण के नियमों से मिलते-जुलते हैं। प्राय: फैशन उच्च वर्ग से प्रारम्भ होते हैं और धीरे-धीरे निम्न वर्गों द्वारा अपना लिये जाते हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है : 'Yet in all in fashion change the elite plays an important role"[2] पहले फैशन की कोई वस्तु प्रारम्भ होती है तो बड़े लोगों के यहाँ होती है। फिर उसी की नकल धीरे-धीरे होती है और उसी प्रकार की सस्ती चीजें बनने लगती हैं। इसी प्रकार फिर निम्न वर्गों में उसका प्रचलन हो जाता है।

उच्च स्तर के व्यक्ति का निम्न स्तर के व्यक्तियों द्वारा अनुकरण होता है— प्राय: यह पाया गया है कि सामाजिक दृष्टि से उच्च स्तर के व्यक्तियों का निम्न स्तर के व्यक्तियों द्वारा अनुकरण किया जाता है। जो फैशन बड़े लोगों द्वारा प्रारम्भ होता है, उसकी नकल प्रारम्भ हो जाती है। राजेश खन्ना एक कपड़ा एक तरह का पहनने लगें, तो अन्य लोग उनकी नकल प्रारम्भ कर देते हैं। राजेश स्टाईल प्रारम्भ हो जाती है।

यह नियम विभिन्न क्षेत्रों में लागू होता हैं।

(अ) धनवानों का अनुकरण निर्धन करते हैं।

(ब) शक्ति सम्पन्न व्यक्तियों का अनुकरण अन्य लोग करते हैं।

---

[1] Mildred Graves Ryan. *Your Clothes and Personality*. Elizabeth Hawes *Why is a Dress?* J. C. Flugel. *The Psychology of Clothes*.

[2] K. Young, *A Handbook of Social Psychology*. (1951), p. 423.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(स) जो लोग जीवन में अधिक सफल होते हैं, उनका अनुकरण ... लोग करते लगते हैं

(द) नगरों के लोगों का अनुकरण कस्बों व ग्रामों के लोग करते हैं।

भारतीय स्त्रियाँ और वस्त्र
(Indian Women and Dress)

भारतीय स्त्रियाँ वस्त्र तो पहनती ही हैं, फैशन भी करती हैं। कुछ लोगों ... मत है कि वस्त्रों के फैशन में भारतीय स्त्रियों में रूढ़िवादिता पायी जाती है। ... मत को अब पूर्णरूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता।

भारतीय संस्कृति की छाप भारत पर है। फैशन संस्कृति के अन्तर्गत ही ... है। संस्कृति के विरुद्ध नहीं हो सकता।

इसलिए भारतीय स्त्रियों में रुढ़िवादिता पाया जाना स्वाभाविक है। वे ... करती हैं, पर संस्कृति के अन्तर्गत जितनी आज्ञा है।

दूसरा पक्ष भी है। नगरों में और विशेष रूप से बड़े नगरों में फैशन ... खूब करती हैं और किसी प्रकार की रूढ़िवादिता उनमें नहीं पायी जाती। ऐसा ... है, जैसे हम लन्दन, न्यूयार्क या पेरिस में हैं। तरह-तरह के फैशन आते रहते हैं ... स्त्रियाँ अनुकरण करती रहती हैं। चलचित्रों का प्रभाव इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है ... अभिनेत्रियों द्वारा नये-नये फैशन चित्रों में आते रहते हैं और स्त्रियाँ उनका ... करती रहती हैं।

मानव व्यवहार के नियन्त्रण में फैशन की भूमिका
(Role of Fashion in Controlling Human Behaviour)

मानव व्यवहार के नियन्त्रण अथवा सामाजिक नियन्त्रण (social control) में फैशन की भूमिका अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। फैशन सामाजिक नियन्त्रण का ... महत्त्वपूर्ण साधन है। समकालीन युग में मानव व्यवहार के नियन्त्रण में तो ... की भूमिका का और भी अधिक महत्त्व है क्योंकि समकालीन युग में फैशन का ... अधिक है।

इस दृष्टि से हमें सबसे पहले यह देखना होगा कि फैशन क्या है? ... परिभाषाओं पर हम प्रकाश डाल ही चुके हैं। फैशन, विस्तृत अर्थों में, समकालीन ... व्यवहारों का अनुकरण (imitation) होता है। यह व्यक्तियों को नवीनता ... विशिष्टता की भावना की सन्तुष्टि करता है और समरूपता (conformity) ... उत्पन्न करता है। फैशन के मनोविज्ञान का विश्लेषण करते हुए हम इस पर ... प्रकाश डाल चुके हैं।

फैशन सामाजिक नियन्त्रण को बनाये रखने में बड़ी सहायता करता है। ... वर्तमान सामाजिक व्यवस्था (social system) के अन्तर्गत रहते हुए ही ...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिवर्तनों को लाता है। जिनकी अनुमति प्रथाएँ प्रदान करती हैं। इससे बड़ा लाभ होता है। एक ओर तो व्यक्ति अपने परिवर्तन की इच्छा की पूर्ति कर लता है और दूसरी ओर वह उन सीमाओं में रहता है जो सामाजिक व्यवस्था निर्धारित करती हैं।

व्यक्ति सामाजिक व्यवस्था के मान्य व्यवहार प्रतिमानों की सीमा में रहते हुए नवीनता एवं परिवर्तन की इच्छा पूर्ति कर लेता है। व्यक्ति अनोखेपन और नवीनता का अनुभव भी कर लेता है और सामाजिक नियन्त्रण में भी रहता है।[1]

फैशन सामाजिक व्यवस्था की अतार्किक कठोरताओं एवं रूढ़युक्त व्यवहार से मुक्ति दिलाता है और उसे परिवर्तन की ओर उन्मुख करता है, परन्तु साथ ही साथ व्यवस्था की परिधि से बाहर भी नहीं जाने देता।

एक प्रकार से फैशन वह मध्य मार्ग है जो मूल सामाजिक व्यवस्था का बनाये रखता है और व्यक्ति को सामाजिक व्यवस्था के नियन्त्रण में रखते हुए उसकी इच्छाओं की भी पूर्ति करा देता है। एक प्रकार से फैशन निर्देशित स्वतन्त्रता (guided freedom) है, जो व्यक्ति की परिवर्तन की इच्छाओं को सामाजिक व्यवस्था की सीमाओं में रखकर पूरी करा देता है।

फैशन सामाजिक नियन्त्रण का एक प्रमुख साधन है और सामाजिक व्यवस्था को दृढ़ करने में सहायता करता है।

समकालीन युग में मानव व्यवहार को फैशन नियन्त्रित करता है और उसे युग के मान्य व्यवहारों के अनुरूप बनाता है क्योंकि फैशन समकालीन व्यवहार का प्रतीक है। समकालीन युग के फैशन के अनुसार व्यक्तियों को अपना व्यवहार करना पड़ता है क्योंकि उन्हें प्रतिष्ठा तभी मिल सकती है जबकि वे युग के अनुसार व्यवहार करें। इस प्रकार, फैशन समकालीन युग में मानव व्यवहार को नियन्त्रित करता है।

आधुनिक युग में तो फैशन का प्रभाव और भी अधिक बढ़ गया है क्योंकि शीघ्र परिवर्तन होते हैं और फैशन का प्रचलन अत्यधिक बढ़ गया है। फैशन से लोग आजकल बहुत अधिक प्रभावित हैं और फैशन के अनुसार ही रहना-सहना चाहते हैं। इस प्रकार फैशन का प्रभाव बढ़ गया है। जितना अधिक उसका प्रभाव बढ़ा है, उतना ही अधिक उसकी मानव व्यवहार को नियन्त्रित करने की शक्ति बढ़ती जाती है।

फैशन और संस्कृति
(Fashion and Culture)

फैशन और संस्कृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रत्येक फैशन सांस्कृतिक मूल्यों

1. "One of the most interesting aspects of fashion with regard to personality is that it provides a nice interplay between the sense of individualism and difference, on the one hand and the social conformity which is imperative if one is to be in style, on the other." K. Young.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के अनुरूप होता है। फैशन में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन रूढ़ियों और नियमों द्वारा मान्य होते हैं। उदाहरण के लिए, सामाजिक नियमों के अनुसार वस्त्र पहनना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य है, पर यह वस्त्र किस मात्रा या रूप में पहना जाय यह उस समय के फैशन के दशाओं पर निर्भर रहता है। किम्बाल यंग ने इस सम्बन्ध में कहा है कि "सांस्कृतिक प्रतिमान के रूप में फैशन एक प्रकार का ऐसा सामाजिक संस्कार है जिसके सम्बन्ध में यह आशा की जाती है कि लोग उसका निर्वाह करेंगे।"[1]

किम्बाल यंग ने यह भी लिखा है कि, "फैशन और फैशन के परिवर्तनों को एक समाज-विशेष की संस्कृति के वृहद संरचना के सन्दर्भ में समझा जा सकता है।"[2]

उपर्युक्त कथन को प्रमाणित करने के लिए यंग ने उदाहरण एवं युक्तियों का भी उल्लेख किया है। उन्होंने कहा है कि फैशन में परिवर्तन वास्तव में पश्चिमी देशों में अधिक तीव्र गति से होता है। कुछ समाजों में वेशभूषा, मकान, सजावट, आचार आदि में परिवर्तन की आज्ञा बहुत कम दी जाती है। लैफकाडिओ हियर्न (Lafcadio Hearn) ने इसकी शानदार मिसाल देते हुए मध्यकालीन जापान का उदाहरण प्रस्तुत किया। मध्यकालीन युग में जापान में सामन्तवाद का बोलबाला था। इसमें प्रत्येक वर्ग एक अनिवार्य नियम और शासन के आधीन था। मकानों के आकार, प्रकार, रूपों और मूल्यों, खाने-पीने की वस्तुओं की संख्या और सम्पत्ति की मात्रा, वस्त्रों की सजावट आदि के ऊपर राज्य द्वारा तरह-तरह के नियन्त्रण लगाये जाते थे।

सामन्तवादी यूरोप में भी इसी प्रकार के नियम स्त्रियों के लिए बनाये गये थे। इनमें भिन्न-भिन्न वर्गों के लिए भिन्न-भिन्न नियम बनाये गये थे जो कठोरता से पालन किये जाते थे, इस काल में राजकुमारियों और महारानियों के घूँघट के कपड़े उनके पैरों तक आते थे और उनके सिर पर ताज रहता था जबकि सामान्य स्त्रियों के घूँघट का कपड़ा उनकी कमर तक ही आता था और उनके सिर पर ताज नहीं रहता था। इसी प्रकार द्वितीय महायुद्ध से पहले अंग्रेज-व्यापारी रात का भोजन करने के लिए 'डिनरसूट' पहनना आवश्यक समझते थे जबकि अमरीका में व्यापारी और शिक्षित वर्ग में 'डिनरसूट का इस्तेमाल इतना सामान्य नहीं था। ब्रिटिश राजघराने में राज्याभिषेक आदि अवसरों पर पुराने रीतिरिवाजों के अनुसार वस्त्रों और आभूषणों को पहनना अनिवार्य समझा जाता है।

सामाजिक रूढ़ियाँ हर समाज में फैशन को नियन्त्रित करती रहीं हैं। 14वीं शताब्दी में समय-समय पर नग्न वस्त्रों को पहने जाने के विरुद्ध कानून बनते रहे

---

1 "As a cultural pattern, in fact, fashion is a kind of social ritual which people are supposed to fallow." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 311.

2 "Fashion and changes in fashion can only be understood within the larger frame werk of Culture of the given society." Ibid., p. 311.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और 16वीं शताब्दी में जब स्त्रियों ने इस प्रकार के नग्न वस्त्रों को पहनना किया जिनसे गर्दन व वक्षस्थल का काफी भाग खुला रहता था तो पादरियों नीतिवादिस्त्रियों ने इसका विरोध किया और इसे अश्लील व अभद्र बताया।

भारतवर्ष में भी रूढ़ियाँ और प्रथाओं के अनुसार वस्त्र और आभूषणों का किया जाता है। जिन वस्त्रों, आभूषणों और श्रृंगार प्रशाधनों का प्रयोग स्त्री कर सकती है उनमें से बहुत-सी चीजों का प्रयोग कुमारी लड़कियाँ या नहीं कर सकतीं। जैसे, विवाहित हिन्दू स्त्री माँग में सिन्दूर लगाती है और बिछुये पहनती है, इन दोनों चीजों का प्रयोग कुमारी लड़की अथवा विधवा कर सकती है। फैशन को स्वतन्त्रतापूर्वक विवाहित स्त्रियाँ ही अपना पाती हैं। बाद अविवाहित स्त्रियों का स्तर है और विधवाओं के सम्बन्ध में अनेक निषेध विधवाएँ रंगीन धोती नहीं पहन सकती हैं उन्हें सफेद धोती पहननी पड़ती है, वे बालों को आकर्षक ढंग से नहीं सजा सकती हैं और न तो वे सिन्दूर, आलता, इत्यादि का प्रयोग ही कर सकती हैं।

भारतवर्ष में जातीय संस्करण के अन्तर्गत विभिन्न जातियों के सदस्यों के अलग-अलग वस्त्रों, आभूषण आदि पहनने की व्यवस्था है। इनको पहनने के में उच्च जातियों को पूर्ण अधिकार है और निम्न जातियों जैसे, हरिजन जाति के लिए निषेध है। जैसे, सोने के जेवरों का प्रयोग हरिजन जाति के लोग कर सकते। उनके आभूषण गिलट या चाँदी के ही हो सकते हैं। विवाह तथा संस्कारों के समय विशेष प्रकार के वस्त्र पहनने की रीति हिन्दू समाज में पायी है। फैशन के परिवर्तनों को संस्कृति के सन्दर्भ में समझा जा सकता है। के लिए प्राचीनकाल में भारत में स्त्रियों में पर्दा प्रथा नहीं थी परन्तु मुसलमानों के आने के बाद हिन्दुओं की संस्कृति में मुसलमानों की संस्कृति का प्रवेश जिसके परिणामस्वरूप हिन्दुओं में पर्दा प्रथा सामाजिक मर्यादा का प्रतीक हो। मुस्लिम संस्कृति के प्रभाव के कारण ही साड़ियों में जरी के कामों, दुपट्टों, कुर्तों, बेलबूटेदार कपड़ों, चाँदी और सोने के आभूषणों की नयी डिजाइनों चलन हुआ। इन दो संस्कृतियों के सम्मिलन का प्रभाव केवल स्त्रियों के पहनावे नहीं पड़ा बल्कि पुरुषों के पहनावे में भी परिवर्तन हुआ। पुरुष चूड़ीदार पाजामा अचकन या शेरवानी आदि का प्रयोग करने लगे। अँग्रेजी शासन काल में, अंग्रेजी के प्रभाव से फिर फैशन परिवर्तन हुए और हमने कोट, पेंट, टाई, हैट, स्कर्ट, आदि फैशन को सरलतापूर्वक अपना लिया। अतः यह बात स्पष्ट होती है कि परिवर्तन, फैशन परिवर्तन की दिशा व स्वरूप का निर्धारण करता है। युग में सांस्कृतिक परिवर्तन की गति बहुत ही तीव्र है इसीलिए फैशन में भी तीव्रता से परिवर्तन हो रहा है। यही कारण है कि फैशन के क्षेत्र में जिन चीजों सामाजिक मान्यता नहीं प्राप्त थी, आज उन्हें सामाजिक मान्यता प्राप्त होती जा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फैशन में होने वाले उग्र परिवर्तनों का समाज द्वारा विरोध किया जाता है। कुछ ही दिनों पहले तंग कपड़ों के पहनने को लोग अशोभनीय बताते और उनका विरोध करते थे। सन् 1920 के लगभग अमरीका में स्त्रियों के हल्के और छोटे 'बेदिंग सूट' के विरुद्ध म्यूनिसपल कानून और रूढ़ियों ने युद्ध किया। अनेक अमरीकी समुदायों में मोजों के बिना घर से बाहर निकलना वर्जित था जबकि जापान और रूस में नंगी स्त्रियों और पुरुषों को एक साथ स्नान करते हुए देखकर वहाँ के निवासियों की नैतिक भावना को ठेस नहीं लगती। आज स्त्रियाँ सिगरेट पी रही हैं, परन्तु आज से कुछ वर्षों पूर्व यह रूढ़ि विरुद्ध कार्य था। लड़कियों द्वारा आज जिन पोशाकों व प्रसाधनों का प्रयोग किया जा रहा है वह उन्हें अश्लीलता और नग्नता की तरफ ले जा रहा है। इस सम्बन्ध में यंग महोदय ने लिखा है, "दूसरे विषयों की भाँति पोशाकों के मामले में भी अब पुरानी जनरीतियाँ व रूढ़ियाँ टूट गयी हैं। उन पृथक क्षेत्रों को छोड़कर जहाँ जीवनयापन की आधुनिक अवधारणाएँ अब भी लोकप्रिय नहीं हुई हैं, अन्य सभी समाजों में पोशाक तथा आभूषणों से सम्बन्धित रूढ़ियां पुराने नैतिक मानों से उत्तरोत्तर छुटकारा पाती दिखायी दे रही हैं। फैशन की जनरीतियों में जो कुछ उचित व ठीक माना जाता है उसी को सामान्यत: स्वीकार कर लिया जाता है।"[1] फिर भी फैशन उसी सीमा तक बदलते हैं जितनी सीमा समाज की संस्कृति के द्वारा मान्य होती है।

फैशन, घुन तथा झक
(Fashion, Fad and Craze)

'धुन' या 'फैड' और 'झक' या क्रेज फैशन से सम्बन्धित हैं। इनके अन्तर को स्पष्टीकरण अध्ययन की सुविधा के लिए अनिवार्य हैं। 'धुन' (fad) फैशन के अधिक परिवर्तनशील पहलू को, जो कि कम महत्त्वपूर्ण हो, कहते हैं। किम्बाल यंग (Kimball Young) ने भी इस सम्बन्ध में स्पष्टीकरण किया है "धुन एक प्रथा, मनोरंजन या पोशाक या सजावट का एक ढंग है जो कुछ समय के लिए अत्यधिक उत्साह से अपनाया जा सकता है।"[2] श्री यंग ने झक के बारे में भी कहा है कि

---

1 "As in many other fields, the breakdown of the old folkways and mores is evident in dress. Except in isolated areas where modern concepts of lining have not become common, conventions in cloths and ornamantation seem to be escaping more and more from the older moral standard. What is considered proper and right in the folkways of fashion is generally accepted." K. Young, *Ibid*, p. 318.

2 "A fad is a custom, amusement, or vogue in dress or decoration that is followed for a time with an exaggerated zeal." Kimball Young, op. cit., 1957 p. 327.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फैशन परिवर्तन के आडम्बरपूर्ण पक्षों (superfical aspects of fashion change) को ही प्राय: 'झक' (craze) कहते हैं।"[1]

उपर्युक्त स्पष्टीकरण के अनुसार वस्त्र, सजावट, मजाक आदि से सम्बन्धित फैशनों में सम्मिलित छोटे-छोटे अवयव 'धुन' कहलाते हैं। वास्तविकता यही है कि धुन फैशन का ही वह अंग है जो अपेक्षाकृत बहुत कम समय तक रहती है। धुन का मूल उद्देश्य दिखावा मात्र होता है इसीलिए इनका शीघ्र परिवर्तन आवश्यक है। उदाहरणार्थ, एक विशेष प्रकार की पेण्ट पहनना आज फैशन है कल उसी पेण्ट पर पैबन्द लगाना 'धुन' है। धुन उत्तेजनात्मक वातावरण में अपेक्षाकृत जल्दी पनपती पायी जाती है, जिस प्रकार आज के युग में फैशन के जन्मदाता अभिनेता और अभिनेत्रियों की नगरी 'बम्बई'। 'एलरीज' (Eldridge) के अनुसार "धुन फैशनों का चरम रूप है। धुन सम्बन्धी व्यवहार फैशन व्यवहार की अपक्षा अधिक क्षण-जीवी दिखावे से भरा हुआ और अनौखा होता है। साथ ही अधिक खर्चीला व कामोद्दीपक होने के कारण अक्सर सुरुचि और सदाचरण के नियमों के विरुद्ध होता है।"[1]

अधिक प्रचलित धुन जो कि विस्तृत रूप में पायी जाती हो 'झक' कहलाती है। फैशन के अधिक आडम्बरपूर्ण परिवर्तन को भी 'झक' के नाम से पुकारा जा सकता है। जब सामाजिक स्तर पर एक विशेष व्यवहार, क्रिया, वस्तु या क्रीड़ा धुन के रूप में पायी जाती है तो उसे 'झक' की संज्ञा दी जा सकती है। यह अत्यन्त शीघ्र और संक्रामक रूप से फैलती, विस्तार पकड़ती है। उदाहरणार्थ, विद्यार्थियों में ही किसी एक मुहावरे या शब्द का चलन जब प्रचलित होता है तो वह मुहावरा या शब्द हर समय प्रयोग या दुहराते देखा पाया जाता है चाहे उसकी तुक हो या न हो। यह मूर्खतापूर्ण तरीके से अधिक जल्दी लोकप्रिय हो जाता है। इसीलिए इसे 'मानसिक संक्रामक रोग' (mental epidermic) कहते हैं। जब कोई इसी प्रकार की वस्तु लोकप्रिय होकर स्थायी बन जाती है तो अक्सर फैशन बन जाती है। अधिक स्पष्ट दिखायी न देने पर भी फैशन, धुन और झक में केवल मात्रा, समय तथा विस्तार का ही अन्तर होता है।

प्रश्न

1. "फैशन और फैशन में परिवर्तन किसी भी समाज की संस्कृति के विस्तृत

[1] "Superficial aspects of fashion change are often called rages or crazes." K. Young *Ibid*, p. 327.

[1] "Fads are fashion carried to the extreme. Faddisn behaviour tends to be more ephemeral, spectacular and bizarre than fashion behaviour and being erotic and extravagant the fad often does violence to the prevailing canons of propriety and good taste." Eldridge, *Fundamentals of Sociology*, p. 436.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ढाँचे में ही समझे जा सकते हैं।" इस कथन के प्रकाश में वस्त्रों में परिवर्तन के प्रतिमानों के मनोविज्ञान की विवेचना कीजिए।

("Fashion and changes in fashion can only be understood within the larger frame work of the culture of the given society." Discuss the psychology of changing fashions in dress in the light of this statement.)

2. फैशन के मनोविज्ञान पर सामाजिक मनोवैज्ञानिकों के विचारों के सन्दर्भ में वस्त्रों के सम्बन्ध में भारतीय स्त्रियों की तथाकथित रूढ़िवादिता का विश्लेषण कीजिए।

(Account for the alleged conservatism of Indian women in matters of dress, in the light of the views held by social psychologists on the psychology of fashion.)

3. फैशन की परिभाषा दीजिए और उसके मनोविज्ञान की विवेचना कीजिए।

(Define 'fashion' and discuss its psychology.)

4. 'आधुनिक समाज में फैशन' पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

(Write a short essay on 'Fashions in Modern Society'.)

5. फैशन कैसे बनते हैं ? समकालीन युग में मानव-व्यवहार को नियन्त्रित करने में इनका क्या प्रकार्य है ?

(How are fashions made ? What is their function in controlling human behaviour in contemporary age ?)

6. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(i) फैशन और धुन (Fashions and Fads)।

(ii) फैशन का मनोविज्ञान (Psychology of Fashion)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

33

नेतृत्व
(Leadership)

प्रत्येक समाज में नेताओं की आवश्यकता पड़ती है। पहले राजा, महाराजा, सरदार इत्यादि नेता होते थे। प्रत्येक समूह में, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, कोई न कोई व्यक्ति नेतृत्व अवश्य करता है। प्रजातन्त्र में नेतृत्व का महत्त्व और भी बढ़ गया है। नेताओं की बाढ़-सी आ गयी है। समूह की नैतिकता (group moral) बनाये रखने के लिए नेता का अत्यधिक महत्त्व है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "और यह महत्त्वपूर्ण है कि वह सामूहिक नेता है जो नैतिकता की इस समस्या से अधिक रूप से सम्बन्धित है। समूह के अन्य किसी सदस्य से अधिक यह उसकी स्थिति में है और उसका उत्तरदायित्व है कि वह समूह की नैतिकता को ऊँचा उठाये और बनाये रखे।"[1]

नेतृत्व का अर्थ
(Concept of Leadership)

नेतृत्व का क्या अर्थ है? नेतृत्व एक प्रकार से प्रभुत्व (dominance) या ...ता है। एक व्यक्ति जब दूसरों पर प्रभुत्व रखता है, तब वह नेता कहलाता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "जो सामान्य प्रचलित रूप में नेतृत्व कहा गया है, शुद्धता से प्रभुत्व के अर्थों में विवेचनीय है।"[2]

प्रभुत्व (Dominance)

प्रभुत्व की परिभाषा करते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है कि "हम प्रभुत्व को एक कार्य या अनुभव के रूप में परिभाषित करते हैं, जो दूसरों की अभिवृत्ति और कार्य को प्रभावित करता है।"[3]

---

1. Krech and Crutchfield, *Theory of Problems of Social Psychology*, p. 404.
2. "What is popularly called leadership is more accurately to be discussed in terms of dominance." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 251.
3. "We define dominance as an act or response which affects the attitude and act of another." *Ibid*, p. 251.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रभुत्व एक प्रकार की शक्ति है। इस शक्ति के प्रयोग के द्वारा नेता अन्य व्यक्तियों पर अपना प्रभाव डालता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "यह एक शक्ति साधन के रूप में अवलोकित किया जा सकता है जो एक व्यक्ति द्वारा दूसरे अथवा दूसरों की अभिवृत्तियों और क्रियाओं को नियन्त्रित करने अथवा परिवर्तित करने के लिए प्रयोग किया जाता है।"[1]

सामाजिक अन्तःक्रिया में ही प्रभुत्व सम्भव है। व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों को उसी समय प्रभावित करेगा जब अन्तःक्रिया होगी। प्रभुत्व सामाजिक अन्तःक्रिया का ही प्रतिफल है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "तब भी यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि प्रभुत्व सामाजिक अन्तःक्रिया के ढाचे के अन्तर्गत उत्पन्न होता है और कार्य करता है। यह कहना कि एक व्यक्ति प्रभुत्वशाली है, स्पष्ट बताता है कि कोई दूसरा व्यक्ति उसके लिए आज्ञानुकूल (विनयशील स्थिति) में है।"[2]

प्रभुत्व एवं विनय समाज में सीखे जाते हैं। यदि बचपन में प्रभुत्व को परिवार के लोग अच्छा मानते हैं और पुरस्कृत करते हैं, तो इसका विकास होता है। यदि इसे पुरस्कृत न करके दण्ड देते हैं, तो प्रभुत्व विकसित नहीं होता। स्प्रॉट ने उचित ही लिखा है, "प्रभुत्व और विनय को तब हम व्यवहार की सीखी हुई पद्धतियों के रूप में समझ सकते हैं, बशर्ते कि कभी भी कुछ व्यक्ति पूर्णतया एक ढंग अथवा दूसरे ढंग में व्यवहार करते हों।"[3]

प्रभुत्व और विनय केवल मनुष्यों में ही नहीं पाया जाता। यह पशुओं में भी पाया जाता है। हम कहते हैं कि शेर जंगल का राजा होता है। इसका क्या अभिप्राय है? शेर का प्रभुत्व है। वह अपनी प्रबल शक्ति से दूसरे पशुओं को अपने आधीन कर लेता है।

प्रभुत्व और नेतृत्व (Dominance and Leadership)

स्प्रॉट ने प्रभुत्व और नेतृत्व में अन्तर करने का प्रयत्न किया है। उसने लिखा है, "वास्तव में 'नेता' शब्द अनुयायियों के विषय में सम्मति प्रकाशन करता हुआ

---

1 "This may be viewod as a power device used by one person to control or modify the attitudes and actions or another of others". *Ibid*, p. 251.

2 "Yet it must never be forgotten that dominance arises and functions within the frame work of social interaction. To say that a person is dominant implies that there is another individual in a submissive position toward him." *Ibid*, p. 251.

3 "Dominance and submission, then we may take as learnt methods of conduct, with provision that few people conduct themselves entirely in the one way or in the other." W. J. H. Sprott, *Social Psychology*, p. 71.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतीत होता है, यद्यपि वहाँ परिस्थितियाँ हो सकती है, जहाँ कि सम्मति निम्नतम है तथा तब भी हमें 'नेतृत्व' कहना चाहिए।"[1]

एण्डरसन ने भी 'dominative behaviour' और integrative behaviour' में अन्तर किया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सम्मति (acquiescence) आवश्यक है और नेतृत्व में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। वास्तविक नेतृत्व उसी को कहेंगे जिसमें यह सम्मति अनुयायियों में पायी जाती है। पर यह भेद इतना सूक्ष्म है कि दोनों में कोई महत्त्वपूर्ण भेद नहीं हो पाता और यह समझ में नहीं आता कि कहाँ पर सम्मति है और कहाँ नहीं। फिर प्रश्न खड़ा होता है कि सम्मति किस प्रकार प्राप्त की गयी है? इसलिए यही उचित है कि नेतृत्व को प्रभुत्व के ही रूप में समझा जाय।

प्रभुत्व और विनय एक सिक्के के दो चहरे हैं। एक तरफ देखिए तो प्रभुत्व और दूसरी तरफ देखिए तो विनिय। किम्बाल यग ने लिखा है, "बिना अधीनता के कोई भी प्रभुत्व नहीं; प्रचलित सम्भाषण में बिना अनुयायियों के कोई नेता नहीं होता।"[2]

नेतृत्व की परिभाषा

लेपियर और फार्न्सवर्थ ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "नेतृत्व वह व्यवहार है जो दूसरे व्यक्तियों के व्यवहारों को उससे कहीं अधिक प्रभावित करता है जितना कि उनका व्यवहार नेता को प्रभावित करता है।"[3]

नेतृत्व का यह प्रभाव करने वाला पक्ष है। वास्तव में यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सीमेन और मारिस ने भी लिखा है, "नेतृत्व का एक अस्थायी काल के लिए अपनाने योग्य लक्षण इसके शक्ति (प्रभाव) पहलू पर जोर देता है; नेतृत्व कार्य व्यक्ति द्वारा वे कार्य हैं जो दूसरे व्यक्तियों को एक विभाजित दिशा में प्रभावित करते हैं।"[4]

---

[1] "The word 'leader', in fact, seems to imply acquiescence on the part of the 'followers' though there may be cases in which the acquiescence is at a minimum and yet we should speak of 'leadership." W. J. H. Sprott, *Social Psychology*, p. 72.

[2] "There is no superordination without subordination ; in popular parlance no leaders without followers." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 251.

[3] "Leadership is behaviour that affects the behaviour of other people more than their behaviour affects that of the leader." LaPiere and Farnsworth, *Social Psychology*, p. 257.

[4] "One tentatively adop table definition of leadership emphasize its influence aspect. Leadership acts are acts by persons which influence other persons in shared direction." Seaman and Morris.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेतृत्व दो तत्त्वों पर आधारित है : प्रथम व्यक्तित्व और दूसरा पर्यावरण। जब व्यक्तित्व ऐसी स्थिति में होता है कि वह अन्य व्यक्तियों को प्रभावित करता है, तब नेतृत्व की अवस्था पायी जाती है। पीगर्स ने नेतृत्व की परिभाषा करते हुए लिखा है, "नेतृत्व व्यक्तित्व पर्यावरण की परिस्थिति का वर्णन करने के लिए एक व्यावहारिक सामान्य विचारधारा है, जब एक व्यक्तित्व पर्यावरण में इस प्रकार स्थित हो कि उसकी इच्छा, संवेदना एवं अन्तर्दृष्टि एक सामान्य कारण का अनुगमन करने के अन्तर्गत दूसरों को नियन्त्रित एवं निर्देशित करती है।"[1]

लेपियर ने लिखा है, "प्रत्येक सामाजिक अन्तःक्रिया में कुछ मात्रा में ध्यान का केन्द्रीकरण सन्निहित होता है, चाहे वह एक समय पर कितना ही क्षणिक क्यों न हो। वह व्यक्ति उस समय का नेता होता है। गुणात्मक एवं मात्रात्मक रूप में अन्य सदस्य उसके प्रति अधिक प्रतिक्रिया करते हैं, जितनी कि वह उनमें से किसी के प्रति करता है।"[2]

नेतृत्व की विशेषताएँ

नेतृत्व एक प्रकार का प्रभुत्व है। इसकी निम्न विशेषताएँ हैं :

(1) नेतृत्व में प्रभुत्व पाया जाता है।

(2) इसमें दूसरों की क्रियाओं या विचारों को प्रभावित किया जाता है। कभी-कभी यह आदेश का रूप भी ले लेता है। सुझाव का स्वरूप तो रहता ही है।

(3) अनुयायी में विनय पाया जाता है और वे प्रभावित होते हैं।

(4) सामाजिक सम्बन्ध का स्वरूप प्रभुत्व-विनय का पाया जाता है।

(5) नेता आदेश या सुझाव देता है और अनुयायी उसे ग्रहण करते हैं। इस प्रकार यह एक पारस्परिक उत्तेजना की प्रणाली है। पीगर्स ने लिखा है, "नेतृत्व पारस्परिक उत्तेजना की एक प्रक्रिया है।"[3]

(6) इसमें श्रेष्ठता का बोध होता है।

प्रभुत्व के प्रकार (Types of Dominance)

प्रभुत्व प्रमुख रूप से दो प्रकार का होता है। पहला वह जिसमें अनुयायी की कोई सम्मति नहीं ली जाती और समाज के नियमों के अनुसार उनको प्रभावित

---

[1] "Leadership is a concept applied to the personality environment relation to discribe the situation when a personality is so placed in the environment that his will, feeling, and insight direct and control others in persuit of a common cause." Pigors.

[2] "Every social interaction involves some degree of focalization of attention, however transitory, upon one member, That person, is for the moment the leader of the situation. Quantitatively and qualitatively the other members react more to him than he dose to any one them.' LaPiere, *Collective Behaviour*, p. 51

[3] "Leadership is a process of mutual stimulation."

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पड़ता है। इसे आधिपत्य (authority) कहते हैं। बच्चों पर माता-पिता का अधिकार, अध्यापक का विद्यार्थियों पर अधिकार, नौकर पर मालिक का अधिकार इसे ही प्रधान पद (headship) कहते हैं। समाज की संस्थाओं में इनका होता है। उन नियमों के अनुसार प्रभुत्व स्वीकार करना पड़ता है। आजकल समाज में इनकी संख्या बहुत बढ़ गयी है। प्रत्येक क्षेत्र में अधिकारी पाये जाते कालेज, स्कूल, सरकार, फैक्ट्री, फौज इत्यादि सभी में ये पाये जाते हैं।

प्रभुत्व का दूसरा प्रकार वह है जिसमें सुझाव एवं अनुनय (persuasion) दूसरों को प्रभावित किया जाता है। इसे नेतृत्व कहते हैं। इसमें प्रभावित वालों की सम्मति भी आवश्यक है। सम्मति की मात्रा कुछ भी हो। किम्बाल लिखा है: "Voluntary leadership is that form of dominance is more of less willingly accepted by the members who are ...ced or controlled". (p. 253). इसके उदाहरण हैं राजनैतिक नेता, ...िक क्षेत्रों में नेता, खेल-कूद में नेता इत्यादि। इस अध्याय में हमारा सम्बन्ध ...ही नेताओं से है।

एक तीसरे प्रकार का प्रभुत्व भी होता है। इसे वर्ग या स्थिति प्रभुत्व कहते ... उन समाजों में पाया जाता है जहाँ पर वर्ग व्यवस्था काफी मजबूत होती है। ... वर्ग के सभी व्यक्ति निम्न वर्ग पर प्रभुत्व रखते हैं। इसका सबसे अच्छा ... जाति व्यवस्था में मिलता है। उच्च जाति के लोग निम्न जाति पर प्रभुत्व ... हैं। एक ब्राह्मण चाहे जैसा भी हो, अनपढ़, बेवकूफ, गन्दा, दरिद्र, फिर भी ... जाति के लोगों पर उसका प्रभुत्व रहता है।

वर्ग शक्ति का पिरेमिड होता है। त्रिकोण में नीचे सबसे ज्यादा स्थान होता ... और सबसे ऊपर सबसे कम। उच्च वर्ग के लोग थोड़े होते हैं पर वे निम्न वर्गों पर ... करते हैं। उन्हें इस प्रकार की शिक्षा दी जाती है।

इस प्रकार प्रभुत्व के तीन प्रकार होते हैं: (1) प्रधान पद, (2) नेतृत्व और ... वर्ग या स्थिति प्रभुत्व।

नेतृत्व के निश्चायक कारक
(Determining Factors of Leadership)

नेतृत्व के निश्चायक कारक क्या हैं? एक व्यक्ति नेता कैसे बनता है? इस ... के अनेक उत्तर विद्वानों ने दिये हैं। हर क्षेत्र की तरह यहाँ पर भी वंशानु-... और पर्यावरण का विवाद काफी समय तक रहा है।

नेता पैदा होते हैं, बनाये नहीं जाते (Leaders are Born, not Made) ... विचारों के अनुसार नेता पैदा होते हैं। इसका अभिप्राय यही है कि ... के हो समय उनमें वे गुण पाये जाते हैं जो एक नेता में होने चाहिए। उनके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बाहकाणु में ही यह विशेषता होती है। नेतृत्व भी अन्य लक्षणों के समान एक लक्षण है। इस सिद्धान्त को एकाकी लक्षण सिद्धान्त (theory of unitary trait) कहते हैं। कुप्पुस्वामी ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "ऐसे विचार में यह सन्निहित है कि नेता 'जन्म-नेता' होता है और वह प्रत्येक समूह एवं प्रत्येक परिस्थिति में नेता होगा। वंशानुगत नेतृत्व इस प्रकार की विचारधारा पर आधारित है।"[1]

थामस कारलायल (Thomas Carlyle) भी इसी मत को मानते थे। इमरसन (Ralph Waldo Emerson) ने नेता को 'representative men' कहा है, पर वे भी इन्हें जन्मजात ही मानते थे।

बहुसंख्यक कारक (Multiple Factors)—फिर लोगों ने सोचा कि नेतृत्व का एक गुण नहीं होता, बल्कि इसके लिए अनेक लक्षणों की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए लक्षणों के झुण्ड (constellation of traits) का सिद्धान्त विकसित हो गया। ये लक्षण व्यक्ति में पाये जाते हैं।

नेता पैदा नहीं होते (Leaders are Not Born)—नेता पैदा नहीं होते। व्यक्ति जो कुछ भी होता है वह सामाजिक अन्त:क्रिया के फलस्वरूप होता है। सामाजीकरण के अध्याय में हम इस प्रश्न पर पर्याप्त रूप से विचार कर चुके हैं। बिना सामाजिक अन्त:क्रिया के नेता क्या, साधारण व्यक्ति भी विकसित नहीं होता।

इसमें सन्देह नहीं है कि व्यक्तित्व के लक्षण नेतृत्व के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। कुछ शारीरिक एवं मानसिक दशाएँ भी आवश्यक हैं, जो वंशानुसंक्रमण पर आधारित हैं। इस प्रकार व्यक्तित्व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, पर उससे ही कोई नेता नहीं बन जाता।

परिस्थितियाँ महत्त्वपूर्ण (Situations Important)—नेतृत्व के लिए परिस्थितियाँ अत्यन्त आवश्यक हैं। कुछ परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जो व्यक्ति को नेता बना देती हैं। अत: नेतृत्व के लिए व्यक्तित्व के लक्षण और परिस्थितियाँ दोनों ही आवश्यक हैं।

किम्बाल यंग (Kimball Young) ने इन्हीं पक्षों पर बल दिया है। प्रबलता (dominance) के विकास में जो सामाजिक और सांस्कृतिक कारक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, वे अनिवार्यत: सीखने (learning) पर आश्रित होते हैं। सीखना लोगों की योग्यता एवं क्षमताओं पर आधारित होता है। क्षमताओं और योग्यताओं

---

1 "Such a notion implies that a leader is a 'born leader' and that he will be a leader in every group and in every situation. The practice of hereditary leadership is based upon notions like this." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 473.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...र प्राणीशास्त्रीय आधार पर होते हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि प्रबलता ...जीवशास्त्रीय आधार पर आधारित है। यह नेतृत्व का पहला कारक है। दूसरा ...परिस्थिति (situation) है, जिसमें कि नेतृत्व विकसित होता है।

...जेनिंग्स (Jennings) ने लिखा है कि नेतृत्व किसी एक व्यक्तित्व-लक्षण ...व्यक्तित्व-लक्षण-समूहों पर आधारित नहीं होता है; अपितु इस तथ्य पर ...होता है कि विशिष्ट परिस्थितियों में व्यक्ति क्या भूमिका अदा करता है और क्या ...प्रदान करता है।

...इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि नेतृत्व के लिए कुछ गुण आवश्यक हैं, परन्तु ...अधिक आवश्यक है 'परिस्थिति', जो कि नेतृत्व का अवसर प्रदान करती है।

नेतृत्व में मौलिक स्थिर कारक (Basic Variables in Leadership)— ...में दो महत्त्वपूर्ण कारक हैं—(1) व्यक्तित्व के लक्षण और (2) परिस्थिति ...मूह कारक।

समूह एवं पारिस्थितिक कारक (Group and Situational Fact-... ...कुछ लोगों का मत है कि परिस्थितियाँ ही नेता बना देती हैं। 'समूह गति-...' के मानने वाले ऐसा ही सोचते हैं। गिब (Gibb), डॉरविन कार्टराइट (...win Cartwright), एलविन जेण्डर (Alvin Zander) का ऐसा ही मत ...। कार्टराइट और जेण्डर ने लिखा भी है, "इस सन्दर्भ में, समूह का कोई भी सदस्य ...हो सकता है, जबकि वह उस क्रिया को कर सके जो सामूहिक कार्यों के हित ...।"[1]

वास्तव में व्यक्तित्व और परिस्थितियाँ दोनों ही आवश्यक हैं और दोनों ...कर ही नेतृत्व को जन्म देती हैं। किम्बाल यग ने लिखा है: " "Our own view ...that both personality and situational factors must be taken into ...account." (p. 259)

अब हम पहले समूह एवं पारिस्थितिक कारकों का विवेचन करेंगे।

(1) समूह का आकार (Size of the Group)—नेतृत्व में समूह का ...र बहुत महत्त्वपूर्ण है। बड़े समूह में कई भिन्न विशेषताएँ पायी जायेंगी। सदस्यों ...वैयक्तिक अन्तर बहुत ज्यादा पाये जायेंगे। सामाजिक दूरी भी काफी पायी जायेंगी। ...गुट संगठन भी पाया जायेगा। नेतृत्व—जैसा कि बड़े-बड़े राजनैतिक दलों का ...है—इन्हीं बड़े समूहों के उदाहरण हैं। हिटलर ने भी इसी प्रकार का नेतृत्व ...प्राप्त किया था।

---

[1] "Any member of a group may be a leader in the sense that he may take action which serves group functions." Dorwin Cartwright and Alvin Zander (eds.), *Group Dynamics* (1953), p. 540.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समूह के आकार का नेतृत्व पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। हेम्पहिल[1] ने इस पर अनुसन्धान किया है। उसके अनुसार बड़े समूहों में नेता का सबसे बड़ा काम सदस्यों को उसमें बनाये रखना है। इनमें उत्तरदायित्व बाँटना पड़ता है: नेता का कार्य उनको आदेश देना व कार्य पूरा करवाना पड़ता है। उत्तरदायित्व समूह के आकार के अनुसार विकसित होता है। कुछ समूहों में उत्तरदायित्व स्पष्ट होता है और कुछ में स्पष्ट नहीं होता।

नेतृत्व के लक्षण
(Traits of Leadership)

ब्रर्ड ने नेतृत्व के लगभग 80 लक्षणों का वर्णन किया है। किन्तु कौफिन ने बर्ड द्वारा प्रस्तुत किये हुए 80 लक्षणों का 11 विभागों में वर्गीकरण करने का प्रयास किया है। कौफिन द्वारा प्रस्तुत लक्षण निम्नलिखित हैं:[2]

(1) बौद्धिक योग्यता (Intelligence)—इस लक्षण के अन्तर्गत बुद्धि, दूरदर्शिता, चातुर्य, बौद्धिक दृष्टि आदि का समावेश होता है।

(2) नैतिकता (Moral Sensitivity)—इस लक्षण में कौफिन ने बर्ड द्वारा प्रस्तुत किये हुए ईमानदारी, योग्य-निर्णय, व्यापक दृष्टिकोण, सत्यानुराग, परार्थ, नैतिक दृष्टि आदि लक्षणों का समावेश किया है।

(3) कल्पना (Imagination)—इसके अन्तर्गत उन्होंने मौलिकता, मानसिक प्रयास में परिवर्तनशीलता, विचरण आदि लक्षणों का समावेश किया है।

(4) आत्मनिर्भरता (Self Reliance)—इस विभाग के अन्तर्गत कौफिन ने बर्ड द्वारा प्रस्तुत किये हुए आत्मविश्वास, निर्णय करने की क्षमता, उद्देश्य का ज्ञान आदि का समावेश किया है।

(5) उत्तरदायित्व (Responsibility)—इस विभाग में उन्होंने कर्तव्य-निष्ठा, एकाग्रता, उद्देश्य-प्रेम, स्थायित्व आदि गुणों को स्थान दिया है।

(6) संयम (Restraint)—इसके अन्तर्गत आत्म-नियन्त्रण व संयम आदि लक्षणों को रखा गया है।

(7) शक्ति तथा निर्णय (Drive and Determination)—इस विभाग में वीरता, उमंग, उत्साह, लालसा, अध्यवसाय, लगन, एकनिष्ठता आदि लक्षणों का समावेश किया है।

(8) अन्य लोगों के साथ योग्य सम्बन्ध रखने की क्षमता (Easy Maintenance of Good Relations with Others)—इसमें मानवता,

---

[1] "John K. Hemphill, *Situational Factors in Leadership*, (1949).
[2] T. E. Coffin, *A Three Component Theory of Leadership.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकृति का ज्ञान, दया, सहयोगी भावना, सहानुभूति, युक्तियुक्तता आदि का समावेश होता है।

(9) व्याकुल न होने की क्षमता (Imperturbability)—इस विभाग में आशावादिता, सहनशीलता, प्रफुल्लता, सन्तोष आदि लक्षणों को स्थान दिया गया है।

(10) सामाजिकता (Social Responsiveness)—इसके अन्तर्गत सामाजिक कार्य में योग देना, प्रेम, मैत्री, बहिर्मुखत्व तथा सामाजिक उत्तेजनाओं से प्रभावित होने वाली शक्तियों को रखा गया है।

(11) क्रियाशील दैहिक स्वभाव (Dynamic Physical Characteristic)—इस विभाग में दैहिक शक्ति, रूप रंग, आकार आदि को स्थान दिया गया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कौफिन ने बर्ड द्वारा प्रस्तुत किए हुए 80 लक्षणों को 11 विभागों में बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है।

टर्मन ने भी नेतृत्व के लक्षणों पर प्रकाश डाला है। उन्होंने सन् 1904 में नेताओं के लक्षणों पर प्रयोगात्मक अध्ययन किया। उनके अध्ययन के अनुसार नेताओं में निम्नलिखित लक्षण पाये गये : (1) कम स्वार्थी, (2) अधिक साहसी, (3) देखने में अधिक आकर्षक, (4) अच्छा बड़ा आकार, (5) कम भावुक और अन्य विशेषताओं में उत्कृष्ट।

पैट्रिज (Patridge) ने भी कुछ इसी प्रकार का अध्ययन बालचरों की एक टोली पर किया। उन्होंने अपने अध्ययन के अनुसार नेतृत्व के निम्नलिखित गुण पाये : (1) शारीरिक पराक्रम, (2) अवलम्बन योग्यता, (3) आकृति और (4) बुद्धि।

बोगार्डस ने नेतृत्व के लक्षणों के सम्बन्ध में एक महिला कालेज में अध्ययन किया। उन्होंने अपने अध्ययन में नेतृत्व के लक्षणों और नेतृत्व विरोधी लक्षणों का वर्णन किया है। बोगार्डस ने नेतृत्व के लक्षणों और नेतृत्व के विरोधी लक्षणों को इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

नेतृत्व के लक्षण	नेतृत्व विरोधी लक्षण
1. प्रजातान्त्रिक धारणाएँ	उदासीनता
2. चेतनता	संकीर्णता
3. यथार्थता	कायरता
4. मित्रता	अलंकार और आडम्बर
5. उत्साह	अहम्
6. सहानुभूति	निर्बुद्धि
7. विश्वसनीयता	अस्थिरता
8. धैर्य	हठ अथवा जिद्द

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आर्डवे टीड (Ordway Tead) के अनुसार नेतृत्व के निम्नलिखित लक्ष... होते हैं : (1) स्नायु एवं दैहिक शक्ति, (2) उद्देश्य और साधनों का पर्याप्त ज्ञा... (3) मैत्री एवं अनुराग, (4) विश्वास, (5) पवित्रता, (6) निश्चय, (7... उत्साह, (8) बुद्धि, (9) तकनीकी मास्टरी और (10) शिक्षा देने की कुशलता।

अभी हम लोगों ने विभिन्न सामाजिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत नेता... लक्षणों का अध्ययन किया। इस अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि नेतृ... के लक्षणों के विषय में विद्वानों का एक मत नहीं है। प्रत्येक ने अपने मतानुसा... अलग-अलग लक्षणों का निर्धारण किया है। इस विभिन्नता को दूर करने का ए... उचित उपाय यह है कि व्यक्तिगत नेतृत्व की सफलता उक्त लक्षणों के परस्पर सम्ब... पर अत्यधिक निर्भर करती है; क्योंकि नेतृत्व के ये लक्षण नेतृत्व की स्थितियों... अनुसार बदलते रहते हैं।

स्प्रॉट ने नेतृत्व के लक्षणों के विषय में भिन्नता और असहमत होने का... कारण बताया कि नेता के लक्षण उसके अनुयायियों की आवश्यकताओं के अनुसा... चुने जाते हैं।

मर्फी और मर्फी तथा न्यूकोम्ब का कथन है, "एक समूह का प्रभावशा... और स्वीकृत नेता दूसरे समूह में अपने को अनेता या अलग भी पा सकता है औ... कुछ ऐसे होते हैं जिनका अन्तर्मानसिक संघर्ष इतना अधिक होता है कि वह कि... प्रकार की सामाजिक उपगम की पहुँच के बाहर होते हैं।"[1]

लापियर और फार्न्सवर्थ के मतानुसार यदि किसी व्यक्ति में सिर्फ दूस... व्यक्तियों से ज्यादा तेज और शीघ्र बोलने की योग्यता होती है तो उसकी इस योग्य... के अन्तर्गत नेतृत्व के कुछ अन्य लक्षण भी सन्निहित होते हैं। उनका कथन है कि... नेतृत्व का कोई एक ऐसा लक्षण नहीं है जो व्यक्ति को हर प्रकार की परिस्थितियों... और हर प्रकार के व्यक्तियों के बीच नेता बनने की सामर्थ्य प्रदान करता हो। इसलिए शेरिफ का कथन ठीक मालूम होता है कि "नेता के कार्यों का निर्धारण... केवल लक्षणों और सामर्थ्य से नहीं होता वरन उस समय की परिस्थिति की माँग... होता है।"[2]

क्रच और क्रचफील्ड का विचार है कि नेता और अनेता में वस्तुतः कोई विशे... अन्तर नहीं होता; क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को अनुकूल समूह और सामूहिक परिस्थिति...

---

1 "An effective, accepted, leader in one group may find himself a non-leader or even an isolate in another and few are they whose intra-psychic conflict is so great that they are in accessible to all forms of social approach." Murphy, Murphy and New Comb.

2 "........that the leader role is determined not by absolute traits and capacities but by the demands of the situation at hand." Sherif.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जायें तो वह नेता बन सकता है। उनका यह भी मत है कि जो व्यक्ति एक समूह और सामूहिक परिस्थितियों में नेता होता है यह जरूरी नहीं कि वही किसी दूसरे प्रकार के समूह और भिन्न परिस्थितियों में नेता बन सके। इतना अवश्य है कि वह व्यक्ति जो पहले किसी समूह का नेता रह चुका है, दूसरे समूह के व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक योग्य होगा, इसलिए किसी उचित परिस्थिति में नेता बनने की अधिक सम्भावना होती है।

नेताओं के सम्बन्ध में सामान्य अनुमान
(Generalization About Leaders)

नेता और उसके अनुयायियों का सम्बन्ध किस प्रकार को होना चाहिए ? इस सम्बन्ध में कई बातें और सामान्य अनुमानों को प्रस्तुत किया गया है। जे. एफ. ब्राउन ने इस सम्बन्ध में सामान्य अनुमान के दो सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है :

पहला, "सफल नेता के लिए यह आवश्यक है कि उसमें उस समूह के सदस्यता-चरित्र का प्रतिबिम्ब हो जिसका वह नेतृत्व करने का प्रयास कर रहा है।"[1]

दूसरा, "नेता को सामाजिक क्षेत्र में सर्वसाधारण से अधिक योग्य होना चाहिए।"[2]

ब्राउन द्वारा प्रतिपादित प्रथम सामान्य अनुमान का तात्पर्य यह है कि समूह के नेता में समूह के सदस्यों की सामान्य विशेषताओं का समावेश होना चाहिए अर्थात उसकी मनोवृत्तियाँ, आदतें व आचार-व्यवहार सब वही होने चाहिए जो समूह के सदस्यों में सामान्य हैं। नेता को उसी समूह का जन्मजात सदस्य होना चाहिए जिसका वह नेतृत्व कर रहा है। उसको पूर्ण रूप से समूह का होना चाहिए। उसके रहने-सहने, खाने-पीने, बोलने-चालने आदि के ढंग व तौर तरीके पूर्ण रूप से समूह के सदस्यों के तौर-तरीकों में ढले हुए होने चाहिए। उदाहरण के लिए, श्रमिक नेता के आचार-विचार, जीवन के रहन-सहन का स्तर आदि सब श्रमिक वर्ग की भाँति ही होने चाहिए जिसका वह नेतृत्व कर रहा है। अतः कुशल नेता के लिए यह आवश्यक है कि वह उन्हीं आकांक्षाओं और अनुभवों को प्रतिबिम्बित करे जिसका वह प्रतिनिधित्व करता है। संक्षेप में, उसका जीवन उसके अनुयायियों के सामान्य अनुभवों के अनुरूप होना चाहिए।

ब्राउन द्वारा प्रतिपादित दूसरा सामान्य अनुमान का सिद्धान्त यह है कि नेता को अपने समूह के सदस्यों की तुलना में सर्वश्रेष्ठ होना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह

---

1. "The successful leader must have membership-character in the group he is attempting to lead." J. F. Brown.
2. "The leader must represent a region of high potential in the social field." J. F, Brown.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है कि इसमें कोइ सन्देह नहीं कि नेता यद्यपि उसी समूह का एक सदस्य होता है जिसका वह प्रतिनिधित्व करता है, पर वह अपने अनुयायियों की भाँति वस्त्र पहनता हैं, उनका कॉमरेड भी होता है और गुणात्मक योग्यताओं की दृष्टि से समूह के सदस्यों से श्रेष्ठ होता है। इसके अतिरिक्त यह बात भी वांछनीय है कि नेता समूह की स्थिति और आवश्यकताओं को अच्छी प्रकार समझे जिसके फलस्वरूप सामूहिक कार्य सुगमतापूर्वक और कशलतापूर्वक होते रहें।

व्यक्तित्व प्रकार और सामाजिक कार्य
(Personality Types and Social Roles)

नेता पर उसके व्यक्तित्व का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। अपनी रुचि, आमवृत्ति एव विश्वासों के आधार पर ही वह कार्य करता है। इसके फलस्वरूप उसका क्षेत्र निश्चित होता है। सामाजिक कार्य (social role) और व्यक्तित्व में घनिष्ठ सम्बन्ध होता हैं। किम्बाल यंग ने इस आधार पर नेतृत्व के कुछ प्रकार बताये हैं। यहाँ पर राजनैतिक बॉस, प्रजातांत्रिक नेता, नौकरशाही नेता, कूटनीतिज्ञ, सुधारक, आन्दोलक और विचारक पर विचार करेंगे।

राजनैतिक बॉस (The Political Boss)—प्रत्येक राजनैतिक दल में कुछ प्रमुख राजनैतिक बॉस होते हैं। ये किसी नगर, जिला, राज्य या देश के स्तर पर होते हैं। ये दल को संगठित करते हैं और उसको ठीक से चलाते हैं।

राजनैतिक बॉस संघर्ष एवं राजनैतिक सत्ता को बनाये रखने के पर्यावरण में विकसित होता है। अतः वही व्यक्ति सफल हो सकता है जो सत्ता को चाहता हो, संघर्ष कर सके, दलवन्दी कर सके, चुनाव जीत सके और राजनैतिक चालें चल सकता हो। वह हर मूल्य पर अपनी सत्ता को बनाये रखना चाहता है। इससे स्पष्ट है कि बॉस वही हो सकता है जो चलता पुर्जा एवं होशियार हो।

उसमें मानव गुण भी होते हैं। इसके द्वारा ही वह अपने अनुयायी बनाता है, व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करता है और सहानुभूति प्रदर्शित करता है।

प्रजातांत्रिक नेता (The Democratic Leader)—यह समझौता करने वाला होता है। वह राजनैतिक दल से अधिक सम्बन्धित नहीं रहता। उसमें सहानुभूति एवं दूसरों को समझने की शक्ति होती है। वह अपनी ही बात नहीं मनवाता। सही और गलत को समझने का प्रयत्न करता है।

नौकरशाही नेता (The Bureaucrat or Functionary)—नौकरशाही नेता सरकार को चलाते हैं। यह नियमों के अनुसार दिन-प्रतिदिन का काम निर्धारित नीतियों के अनुसार चलाता है। यह अपने कार्य में व्यावहारिक विधिवत, कुशल, बुद्धिमान और अनुशासित होता है। काम की वारीकियों को समझता है। वह स्वयं कोई निर्णय नहीं लेना चाहता। वह सदैव निर्णय लेना टालता है। वह सत्ता और प्राप्त करना चाहता है, पर कोई भी हानि नहीं उठाना चाहता है। वह सुरक्षा चाहता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चापलूस भी होता है। अपने अफसरों एवं राजनैतिक नेता की खूब चापलूसी है। वह किसी का भी नहीं होता। जिसकी सत्ता होती है, बस उसी का होता है। उसके विचार संकुचित होते हैं। वह बँधी हुई एवं निश्चित आय चाहता है।

कूटनीतिज्ञ (The Diplomat)—कूटनीतिज्ञ वह होता है जो प्रत्येक वस्तु को बड़ी ही शान्ति से रखता है और अपनी बात मनवाने का प्रयत्न करता है। वह सरकार या कम्पनी द्वारा निर्धारित नीति पर वार्ता करता है और उनका प्रतिनिधित्व करता है। यह कोई भी चाल चल सकता है। दुरंगी नीति भी चलता है। वह व्यक्तियों या परिस्थितियों को अपनाने की कोशिश भी करता है, पर काम निकल जाने पर उनसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता।

कूटनीतिज्ञ के विषय में किसी ने कहा है : "If a diplomat says, 'yes' he means 'perhaps' ; if he says 'perhaps' he means 'no' ; if he says 'no' he is no diplomat."

सुधारक (The Reformer)—सुधारक आदर्शवादी होता है। वर्तमान समाज में उसे अनेक दोश दिखायी पड़ते हैं और एक नये संसार का स्वप्न वह हमेशा देखता रहता है। वह व्यावहारिक नहीं होता। उसके अनुसार सब कुछ सम्भव है। वह उद्वेगों से पूर्ण होता है। उसके विचार उद्वेगों पर आधारित होते हैं। वह भावुक होता है। समझौता करना उसे नहीं आता। वह सिद्धान्तों पर अटल रहता है। उसे किसी भी प्रकार पथ से गिराया नहीं जा सकता। वह लालची नहीं होता। उसके विचार तर्क पर आधारित होते हैं और वह विवेक से कार्य करता है। कमियों से उसका कोई समझौता नहीं होता।

आन्दोलक (Agitator)—आन्दोलक एक कट्टर सुधारक होता है। वह अपने सिद्धान्तों पर उत्तेजित हो जाता है और अपना उत्साह एवं उत्तेजना दूसरों तक पहुंचाता है। वह हिंसा में भी विश्वास करता है और अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उसका प्रयोग भी करने को तैयार रहता है। वह क्रान्तिकारी परिवर्तनों में विश्वास करता है। वर्तमान संस्थाओं में उसे कोई आस्था नहीं होती, वह उन्हें तुरन्त समाप्त करने के पक्ष में रहता है। वह समझौता करना नहीं जानता। इस पार या उस पार के सिद्धान्त में विश्वास करता है। वह दूसरों के विचारों को अपने विचारों की अपेक्षा तुच्छ समझता है। वह असहिष्णु होता है। अपने विरोधी विचारों को तो वह सुनना भी पसन्द नहीं करता। वह अव्यावहारिक भी होता है और अपने विचारों को कार्यरूप में पूर्णरूप से परिणत नहीं कर पाता।

विचारक (The Theorist)—विचारक संसार का तर्कयुक्त चित्र प्रस्तुत करता है। यह चित्र आदर्शवादी हो सकता है और कभी कभी कटु भी होता है। विचारक तर्क के संसार में रहता है और अपने विचारों को सदैव तर्क पर आधारित करता है। वह अव्यावहारिक होता है। वह अपने विचारों के लिए आन्दोलन नहीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करता और न उन्हें व्यवहार में रखने का ही प्रयत्न करता है। राजनीति के क्षेत्र में वह एक छोर पर होता है और राजनैतिक बॉस दूसरे छोर पर। विचारक केवल सोचता ही सोचता है और स्वप्नों के संसार में रहता है।

विज्ञान और दर्शन के क्षेत्र में भी वह केवल विचार प्रस्तुत करता है, उन्हें तथ्यों से प्रमाणित करने का प्रयत्न नहीं करता। वह अनुसन्धान वैज्ञानिक की बड़ी सहायता करता है। विचारक एवं वैज्ञानिक एक-दूसरे के सहयोग से बहुत कुछ कर सकते हैं। विचारक व्यवस्थित विचार एवं ज्ञान को प्रस्तुत करने में बड़ी सहायता करता है।

नेतृत्व के प्रकार और पारिवारिक पृष्ठभूमि
(Types of Leadership and Family Backgrounds)

नेतृत्व के प्रकार पारिवारिक पृष्ठभूमि पर आधारित होते हैं। लासवेल[1] ने इस प्रकार का अध्ययन किया है। उसने एक राजनैतिक आन्दोलक का अध्ययन किया। इस परिवार का पिता एकाधिकार रखने वाला था। परिवार के बच्चों के बीच प्रतिद्वन्द्विता पायी जाती थी। माता मर गयी थी और बच्चे पिता द्वारा पाले गये थे। पिता एक धार्मिक नेता था और नैतिक शिक्षा पर अधिक बल देता था। इस आन्दोलक का सर्वाधिकार विरोधी भावना-ग्रन्थि परिवार से ही प्रारम्भ हुई होगी। पिता के अधिकार के विरुद्ध वह हो ही जायेगी। भाइयों से तथा बहनों से प्रतिद्वन्द्विता के फलस्वरूप उसके मन में एक अपराध की भावना थी। बाद को यही भावनाएँ उसने संसार पर प्रक्षेपित कर दीं। वह पूँजीवाद, धार्मिक, रूढ़िवादिता एवं सैनिकवाद के विरुद्ध हो गया

इससे स्पष्ट है कि मौलिक व्यक्तित्व वही रहता है, परन्तु लक्ष्य बदल जाते हैं। लक्ष्य समय एवं स्थान की संस्कृति पर आधारित होते हैं। इस प्रकार इतिहास नेताओं का निर्माण करता है, नेता इतिहास नहीं बनाते। किम्बाल यंग ने लिखा है: "इस अर्थ में, निश्चय यह है कि इतिहास नेता बनाता है, न कि इसका उल्टा।"[2]

नेतृत्व के प्रकार
(Types of Leadership)

भिन्न-भिन्न विद्वानों ने नेतृत्व का वर्गीकरण किया है। बहुत से वर्गीकरण हैं। इनमें से हम कुछ पर ही विचार करेंगे। सर्वप्रथम हम प्रजातन्त्रात्मक और निरंकुश नेताओं पर प्रकाश डालेंगे।

प्रजातन्त्रात्मक और निरंकुश नेता

क्रच और क्रचफील्ड ने इन पर विस्तार से प्रकाश डाला है"[3] हुबर्ट बु

---

[1] Harold D. Lasswell, *Psychopathology and Politics*, (1930) Ch. 6.

[2] "In this sense, certainly, history makes leaders and not vice versa."

[3] Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...t Booner) ने भी नेताओं को तीन वर्गों में बाँटा है : (1) प्रजातन्त्रात्मक (democratic leadership), (2) निरंकुश नेतृत्व (authoritarian ...ship), और (3) अर्द्ध-दैविक नेतृत्व (charismatic leadership)। यहाँ पर ...प्रथम दो पर प्रकाश डालेंगे और बाद को अर्द्ध-दैविक नेतृत्व पर।

...च तथा क्रचफील्ड ने यह स्पष्ट कर दिया है कि यह वर्गीकरण केवल समझने ...से है। यह बहुत कुछ संस्कृति पर आधारित होता है।

निरंकुश नेतृत्व (Authoritarian Leadership)—निरंकुश नेता वह होता ...अधिकतर सत्ता व प्रभुत्व अपने पास रखता है और अधिकतर कार्य स्वय ...है। अनुयायी तो केवल आदेश के दास होते हैं। उन्हें जो आदेश दिया जाये, ...किसी रुकावट के पूरा करना होता है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, ...नेता प्रजातन्त्रात्मक नेता की अपेक्षा अत्यधिक निरंकुश शक्ति रखता है। ...अकेला ही समूह की नीतियों का निर्धारण करता है; वह अकेला ही बड़ी-बड़ी ...बनाता है; वह अकेला ही सामूहिक क्रियाओं के अगले पदों एवं उत्तरा- ...के विषय में पूर्णतया सचेत रहता है, वह अकेला ही सदस्यों की क्रियाओं ...सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों के विषय में उपदेश देता है; वह अकेला ही ...मध्यस्थ और न्यायाधीश के रूप में व्यक्तिगत सदस्यों को पुरस्कार और दण्ड ...कार्य करता है तथा कदाचित सामूहिक ढाँचे के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति के ...का निर्णय करता है।"[1]

निरंकुश नेता जानबूझकर ऐसा करता है। सदस्यों को नेता पर बिलकुल ...रहना पड़ता है। सदस्यों के उद्देश्य भी समान नहीं होते, बल्कि बँटे हुए होते ...इस प्रकार के समूह में नेता की अनुपस्थिति में कार्य नहीं हो पाता।

सदस्यों के आपस में सम्बन्ध सीधे नहीं होते। प्रत्येक सदस्य नेता से ही ...रखता है। जहाँ तक सम्भव होता है, वह सदस्यों के बीच संचार का माध्यम ...रहता है। इस प्रकार वह समूह के लिए अत्यन्त आवश्यक बन जाता है। इसके ...वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थ पूरे करता है। इसका फल यह होता है कि समूह ...पर ही आश्रित रहता है और उसके बिना समूह चल नहीं सकता। समूह के ...यों में आपस में कोई अन्तर्सम्बन्ध नहीं पाये जाते।

---

[1] "The authoritarian leader wields more absolute power than the democratic leader ; he alone determines policies of the group ; he alone makes major plans ; he alone is fully conizant of the succession of future steps in the group's activities; he alone dictates the activities of the members and the pattern of interrelations among the members ; he alone serves as the ultimate agent and judge of rewards and punishments for the individual members and hence of the fate of each individual within the group structure." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Socia... Psychology*, p. 423,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नेता औ अन्य सदस्या क अन्तर्सम्बन्धों का यदि एक समाजमितीय चित्र बनाया जाय ता एक सितारे की शक्ल का बनेगा। छोटे समूहों में सारे सदस्यों का केवल नेता से हा सम्बन्ध होगा। बड़े समूहों में नेता के कुछ सहयोगियों के द्वारा यह सम्बन्ध नेता से होगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि नेता सम्बन्धों का केन्द्र है और सदस्यों में आपस में कोई सम्बन्ध नहीं है।

प्रजातन्त्रात्मक नेतृत्व (Democratic Leadership)—प्रजातन्त्रात्मक नेता का शक्ति एवं प्रभुत्व कम नहीं होता, पर समूह में उसके कार्य की प्रकृति भिन्न होती है। प्रजातन्त्रात्मक नेता प्रत्येक सदस्य का समूह की क्रियाओं में अधिक से अधिक सहभाग चाहता है। वह उत्तरदायित्व को केन्द्रित न करके सदस्यों में प्रसारित करता है। वह सदस्यों के बीच अन्तर्सम्बधों को प्रोत्साहित करता है। वह समूह के सदस्यों के बीच उत्पन्न तनाव एवं संघर्ष को कम करता है। इनके सम्बन्ध नेता से भी होते हैं और आपस में भी होते हैं।

निरंकुश नेता समूह का संचालक या सर्वसत्ताधारी होता है। प्रजातन्त्रात्मक नेता अपने समूह का प्रतिनिधि होता है

निरंकश नेता अपने को समूह के लिए अपृथकनीय बनाता है। इसके विपरीत प्रजातन्त्रात्मक नेता अपने समूह को उसके पैरों पर खडा कर देता है और अपने बिना समूह का कार्य चल सके, इसमें गर्व करता है।

एक परीक्षण (One Experiment)—निरंकश और प्रजातन्त्रात्मक नेतृत्व पर लेविन क निर्देशन में लिप्पिट (Lippitt) और अन्य ने एक परीक्षण किया। उन्होंने बच्चों का दो समूहों में बाँटा—एक को निरंकुश नेतृत्व दिया और दूसरे को प्रजातन्त्रात्मक। ऐसा करने में उन्होंने निम्न विधियों का प्रयोग किया

निरंकुश	प्रजातन्त्रात्मक
1. नीति का सम्पूर्ण निश्चय नेता के द्वारा ही हुआ।	1. नीतियों का निश्चय समूह के निर्णय पर रहा, यद्यपि नेता ने उन्हें बनाया और प्रस्तुत कर किया।
2. उद्देश्य की प्राप्ति के लिए नेता ने विधियों एवं मार्गों का आदेश दिया और अनुयायियों का यह ज्ञान नहीं था कि भविष्य में क्या मार्ग अ ायेंगे	2. प्रथम बैठक में कार्य का पूरा चित्र प्रस्तुत किया गया। इसके कारण लोगों को भविष्य में क्या करना है, का पूरा ज्ञान था। जहाँ पर टेक्निकल राय की आवश्यकता थी, उसके लिए नेता ने दो या तीन विकल्प प्रस्तुत किये। अनुयायी इनमें से कोई चुन सकते थे।
3. प्राय: नेता ही काम निश्चित	3. सदस्य किसी के भी साथ कार्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...था और कौन किसके साथ कार्य ...ता, यह भी नेता ही निश्चित करता। ...4. नेता प्रत्येक सदस्य के कार्य की ...या आलोचना व्यक्तिगत आधार ...करता और कोई कर्म-विषयक कारण ...ताता। वह सक्रिय समूह सहभागिता ...रहता। प्रदर्शन के समय वह ...भाग लेता।

कर सकते थ। कार्य का विभाजन भी समूह पर ही आधारित था।

4. नेता कर्म-विषयक आलोचना करता जो तथ्यों पर आधारित होती। वह समूह में एक सदस्य की भाँति रहता, यद्यपि कार्य नहीं करता।

इस परीक्षण में जो अन्तर दोनों समूहों में देखने को मिले, वे निम्न हैं:

(1) निरंकुश समूह में आक्रमण तथा उपेक्षा का भाव अधिक पाया गया। ...दूसरे की आलोचना करते, नेता को कुछ न कहते। उनका अधिकतर आक्रमण ...भूतपूर्व सदस्यों पर रहता, जो समूह को छोड़ गये थे।

(2) निरंकुश समूहों में नेता के साथ अधिक विनय का व्यवहार अनुयायी ...और वे नेता का ध्यान भी अपनी ओर अधिक आकर्षित करना चाहते। प्रजा-...त्मक समूहों में अनुयायियों का व्यवहार नेता के प्रति अधिक मित्रतापूर्ण एवं ...से सम्बन्धित रहता।

(3) निरंकुश समूहों में सदस्यों का आपसी सम्बन्ध प्रजातन्त्रात्मक समूहों ...तुलना में अधिक आक्रमणकारी एवं प्रभुत्वपूर्ण रहता।

(4) निरंकुश समूहों में 'मैं' की भावना अधिक रहती। प्रजातन्त्रात्मक ...समूहों में 'हम' की भावना अधिक रहती। प्रजातन्त्रात्मक समूहों में सामूहिक एकता ...अधिक पायी जाती।

(5) निरंकुश समूहों में नेता की अनुपस्थिति में कार्य अधिक गिर जाता, ...प्रजातन्त्रात्मक समूहों में अपेक्षाकृत कार्य कम गिरता।

(6) कार्य की दशा में कुण्ठा उत्पन्न होने पर प्रजातन्त्रात्मक समूहों में ...कठिनाइयों का अधिक संगठित प्रकार से सामना करते। निरंकुश समूह में ऐसी ...अवस्था में कठिनाई खड़ी हो जाती और वे उसका सामना नहीं कर पाते; क्योंकि ...कुण्ठित होकर सामना न करते और एक-दूसरे पर आरोप लगाते।

(7) निरंकुश नेतृत्व असुरक्षा के दिनों में अधिक स्वीकार किया जाता है।

(8) समूह नैतिकता प्रजातन्त्रात्मक नेतृत्व में अधिक स्थायी होती है।

...दैविक नेता (Charismatic Leadership)

इस प्रकार के नेतृत्व का अर्थ अर्द्ध-दैविक होता है। अनुयायियों का यह विश्वास होता है कि उनके नेता को कोई गुप्त (mystical) औद अर्द्ध-दैवीय (semi-divine) शक्ति प्राप्त है। लोग ऐसे नेता में अन्धविश्वास रखते हैं। धार्मिक नेता अधिकतर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार के होते हैं। हजरत मोहम्मद, बुद्ध, ईसा मसीह, इत्यादि इसी प्रकार के नेता थे। महात्मा गाँधी को भी लोग बहुत कुछ अर्द्ध-दैविक नेता मानते थे।

नेतृत्व के कुछ विशेष आधारों पर नेताओं के प्रकार का वर्गीकरण किया जा सकता है। जिन आधारों पर नेताओं के प्रकार का वर्गीकरण किया जा सकता है, वे निम्नलिखित हैं :

(अ) नेता और अनुयायियों के सम्पर्क के आधार पर;

(ब) नेतृत्व की उत्पत्ति के आधार पर;

(स) उद्देश्यों के आधार पर तथा

(द) नेतृत्व को प्रकृति के आधार पर।

अब हम प्रत्येक नेतृत्व के आधार पर आधारित नेतृत्व के स्वरूपों अर्थात प्रकारों का अध्ययन करेंगे।

(अ) नेता और अनुयायियों के सम्पर्क के आधार पर (On the Basis of Relation Between the Leader and Led)—नेता और अनुयायियों के सम्पर्क के आधार पर हम बार्टलेट (Barlett) के नेतृत्व के तीन स्वरूपों अथवा प्रकारों को मान सकते है। बार्टलेट द्वारा वताये हुए नेताओं के निम्नलिखित तीन प्रकार हैं :

(i) पदासीन-प्रमुख अथवा संस्थात्मक नेता (Institutional Leader)—संस्थात्मक नेता अपने समूह का प्रमुख होता है। वह संस्था द्वारा संस्थात्मक व्यवस्था के आधार पर नियुक्त किया जाता है और इसके अलावा वह संस्था का अधिशासी अधिकारी होता है। देश का राष्ट्रपति, जिले का जिलाधीश, कालेज का प्रधानाचार्य कम्पनी का मैनेजर आदि सब संस्थात्मक नेता होते हैं। संस्थात्मक नेता का मुख्य कार्य संस्था की स्थिति, प्रतिष्ठा को बनाये रखना है। इसके अतिरिक्त वह अपने अनुयायियों को कार्यक्रम के संचालन की ओर उन्मुख करता है। संस्थात्मक नेतृत्व वंशानुगत भी चलता है; जैसे—इंगलैण्ड का राजा या रानी। इस प्रकार के नेतृत्व के लिए यह आवश्यक नहीं कि नेता और अनुयायियों का सम्पर्क प्रत्यक्ष (आमने-सामने) हो या अप्रत्यक्ष हो। दोनों प्रकार के सम्वन्ध अथवा सम्पर्क में से कोई भी सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है।

(ii) शासक वृत्ति वाले नेता (Dominant Leaders)—इस प्रकार के नेता में उग्रता कट्टरता की विशेषताओं का समावेश होता है। शासक-वृत्ति वाले नेताओं को समूह की सार्वजनिक समस्याओं का कोई पर्याप्त ज्ञान नहीं होता। उनका उद्देश्य तो जनता को अपने प्रभुत्व से प्रभावित करना होता है। जब समूह में कोई समस्या खड़ी हुई हो तो उसका समाधान, इस प्रकार के नेता, धैर्यपूर्वक नहीं वरन क्रियाशील प्रक्रिया के प्रयोग द्वारा करते हैं। इस प्रकार के नेतृत्व में एक मुख्य सिद्धान्त यह है कि किसी समस्या के समाधान करने के लिए उसके विषय में विचार करने की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...किसी प्रकार की क्रिया-प्रक्रिया का अपनाना उचित है। जनरल अयूब इस ...के नेतृत्व के स्वरूप के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

(iii) **हृदयग्राही नेता** (Persuasive Leaders)—नेतृत्व के इस स्वरूप में ...का सम्पर्क अपने व्यक्तियों के साथ अत्यधिक घनिष्ठ एवं निकटतम होता है। ...प्रकार का नेता समूह के लोगों में घुलमिल जाता है। वह उनकी समस्याओं, ...कताओं एवं संवेदनाओं आदि का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करता है। वह अपने ...की समस्याओं को हल करने और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने का ...प्रयास करता है। इस प्रकार वह जनप्रिय होता है। इसके अतिरिक्त उसमें ...और विशेषता यह होती है कि वह अपने वाक्‌चातुर्य से लोगों के दिल जीत ...है। अतः वह जो बात भी जनता के सम्मुख रखता है, उसको जनता विश्वास-...स्वीकार कर लेती है। गांधी जी हृदयग्राही नेता के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

(ब) **नेतृत्व की उत्पत्ति के आधार पर** (On the Basis of Origin of Leadership)—नेतृत्व की उत्पत्ति के आधार पर नेता के प्रकारों का वर्गीकरण ...प्रकार से किया जा सकता है

(i) **आत्म-नियुक्त नेता** (Self-appointed Leaders)—इस श्रेणी के ...र्गत वही नेता स्थान पाते हैं जो अपने नेतृत्व को अपने प्रयत्नों द्वारा स्वयं ही ...करते हैं। इस प्रकार नेता अपनी व्यक्तिगत योग्यताओं और लक्षणों (जैसे ...ल, उत्साह, बुद्धि और आत्मप्रदर्शन, आदि) के कारण स्वयं ही किसी समूह के ...बन जाते हैं। नेपोलियन बोनापार्ट इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

(ii) **समूह-नियुक्त नेता** (Group-appointed Leaders)—इस प्रकार के ...त्व के स्वरूप में नेता को समूह द्वारा नियुक्त किया जाता है। इस प्रकार के नेता ...नियुक्ति चुनाव द्वारा की जाती है। समूह के सभी सदस्य (जो सदस्य बनने के ...होते हैं) उसके चुनाव में हिस्सा लेते हैं। इस प्रकार नेतृत्व का स्वरूप लोकतन्त्र ...में अधिक पाया जाता है। अतः समूह नियुक्त नेता चुनाव पद्धति द्वारा नियुक्त ...या जाता है।

(iii) **अधिशासी द्वारा नियुक्त नेता** (Executive-appointed Leaders)—...वर्गीकरण के अन्तर्गत वही नेता आते हैं जो अधिशासी (executive) द्वारा ...युक्त किये जाते हैं। यह नेता अपने क्षेत्र में व्यक्तियों पर पूर्ण नियन्त्रण रखता है। ...अधिशासी द्वारा नियुक्त नेता जिले के जिलाधीश को कहा जा सकता है।

(स) **उद्देश्यों के आधार पर** (On the Basis of Objectives)—उद्देश्यों ...के आधार पर नेताओं को निम्न तीन विभागों में बाँट सकते हैं :

(i) **अधिशासी नेता** (Executive Leaders)—अधिशासी नेता के विषय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में हम ऊपर बता चुके हैं। अर्थात् जो व्यक्ति शासन विभाग द्वारा अधिशासन के लिए नियुक्त किये जाते हैं, वे अधिशासी नेता कहलाते हैं; जैसे—जिलाधीश।

(ii) **बौद्धिक नेता** (Intellectual Leaders)—जो व्यक्ति अपनी बौद्धिक योग्यता द्वारा किसी बौद्धिक क्षेत्र में मान्यता प्राप्त कर लेते हैं, वे उस विशेष क्षेत्र के नेता माने जाते हैं। इस प्रकार के नेता को बौद्धिक नेता कहते हैं; जैसे—रवीन्द्रनाथ टैगोर, फ्रायड आदि।

(iii) **कलात्मक नेता** (Artistic Leaders)—जो व्यक्ति अपने निरन्तर प्रयास व अपनी लगन से किसी कला या कौशल को सीखता है और उस कलात्मक कार्य में जिस समय प्रवीण हो जाता है अर्थात् अपने साथी या प्रतिस्पर्धियों में अग्रगामी होता है तो उसको कलात्मक नेता कहा जाता है। उदाहरण के लिए, संगीत सम्राट तानसेन।

बोगार्डस के अनुसार नेता के प्रकार
(Types of Leader According to Bogardus)

बोगार्डस ने नेताओं के प्रकार का निम्नलिखित वर्गीकरण किया है:

(अ) **प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष नेता** (Direct and Indirect Leaders)—प्रत्यक्ष नेता अपने अनुयायियों के साथ प्रत्यक्ष सम्पर्क रखता है। प्रत्यक्ष नेता अपने समूह के प्रत्येक सदस्य से सम्बन्ध रखता है। वह समूह के व्यक्तियों की समस्याओं व आवश्यकताओं आदि को समझता है और उसकी समस्याओं का समाधान व आवश्यकताओं की पूर्ति करने का प्रयास करता है। इस प्रकार का नेता समूह में मौखिक शब्दों द्वारा नेतृत्व करता है। समूह के व्यक्ति उसको देख सकते हैं, सुन सकते हैं और बोल सकते हैं। यह नेता अपने वाक्चातुर्य से व्यक्तियों का हृदय जीत लेता है और जो कुछ उनसे कहता है वे उसको विश्वासपूर्वक स्वीकार कर लेते हैं। अतः वह अपनी इस विशेषता द्वारा एक ही समय में समर्थन या विरोध दोनों ही प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार के नेता प्रायः धार्मिक नेता होते हैं जो लोगों को अपना मत बदलने के लिए प्रेरित करते हैं।

अप्रत्यक्ष नेता का सम्बन्ध अपने अनुयायियों के साथ अप्रत्यक्ष होता है। अप्रत्यक्ष नेतृत्व उस समय प्रकट होता है जब देर से या जल्दी ही मानव-क्रियाओं और धारणाओं में परिवर्तन हो जाता है। बोगार्डस के अनुसार अप्रत्यक्ष नेता की ख्याति में वृद्धि उसकी मृत्यु के पश्चात ही होती है। किन्तु प्रत्यक्ष नेता की ख्याति अर्थात उसके सुनहरे दिन उसकी जिन्दगी में ही आ जाते हैं। इस प्रकार के नेतृत्व का ज्वलन्त उदाहरण, थामस ए. एडीसन (Thomas A. Edison) हैं। उन्होंने अपने जीवन काल में Madding Crowd के बाद अनेक आविष्कार किये। जिनके फलस्वरूप उनसे अनेक संस्थाएँ प्रभावित हुईं और उनको महान नेता स्वीकार किया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

था। उनके नेता बनने का मूल कारण यह था कि उनके आविष्कारों द्वारा लोगों की मानव क्रियाओं और धारणाओं में परिवर्तन हुआ जिसके फलस्वरूप उनको महान नेता स्वीकार किया गया।

(ब) **सपक्षी और वैज्ञानिक नेता** (Partisan and Scientific Leaders)—सपक्षी नेता अपने समूह के पक्ष में कार्य करता है। इस प्रकार के नेता का यह गुण होता है कि वह अपने समूह के प्रशंसाजनक और अच्छे पहलुओं को ही अन्य समूहों के सम्मुख प्रस्तुत करता है और खराब पहलुओं को प्रकाश में नहीं लाता; क्योंकि वह अपने समूह को अन्य समूहों की तुलना में सर्वश्रेष्ठ बनाना चाहता है। इसलिए वह समूह का एकांगी चित्रण करता है। वाद-विवाद की प्रतियोगिता में भाग लेने वाले व्यक्ति सपक्षी दृष्टिकोण ही अपनाते हैं। वकील और राजनैतिक दलों के नेता सपक्षी नेता होते हैं। क्योंकि वकील अपने मुवक्किलों (clients) के पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है और उनकी बुराइयों व कमजोरियों पर दृष्टिपात नहीं करता। इसी प्रकार राजनैतिक नेता अपने पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं।

वैज्ञानिक नेता सपक्षी नेता के बिलकुल विपरीत होता है; क्योंकि वैज्ञानिक नेता सदैव सत्य की खोज में तल्लीन रहता है। वह कमजोरियों और बाधाओं को निकालने अथवा दूर करने का प्रयास करता है। तथ्य चाहे सत्य हो या असत्य वह दोनों को प्रकाश में लाता है। सपक्षी नेता की भाँति असत्य पर पर्दा नहीं डालता। वैज्ञानिक नेता अपने हितों की ओर ध्यान नहीं देता। उसको केवल अपने सिद्धान्त में ही रुचि होती है। उसको प्रत्येक क्षण अपने सिद्धान्त को कार्यरूप में परिणत करने के विषय में अधिक चिन्ता लगी रहती है। वैज्ञानिक नेता न तो सामाजिक नेता होता है न अधिशासी नेता होता है और न वह एक अच्छा कलाकार ही होता है। वह विज्ञान के क्षेत्र में प्रवीण होने के कारण सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक नेता बन जाता है। इस प्रकार के नेता बहुत कम होते हैं। वैज्ञानिक नेता का ज्वलन्त उदाहरण, पियरे और मेरी क्यूरी (Pierre and Mary Curie) थे, जिन्होंने रेडियम की खोज की।

(स) **सामाजिक, अधिशासी व मानसिक नेता** (Social, Executive and Mental Leaders)—सामाजिक नेता समूह के लिए सामाजिक एव सार्वजनिक कार्य करता है। सामाजिक नेतृत्व में प्राय: प्रत्यक्ष सम्पर्क पाया जाता है। सामाजिक नेता समूह की सामाजिक समस्याओं आदि का समाधान करता है। इस प्रकार के नेता का कार्यक्षेत्र सीमित होता है। इसलिए अपने गुणों और कार्यों के कारण यह जनप्रिय होता है। सामाजिक नेता का सम्बन्ध अपने अनुयायियों से अधिक घनिष्ठ होता है। वह अपने लोगों की समस्याओं, आवश्यकताओं एवं वेदनाओं का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करता है। सामाजिक नेता की एक मुख्य विशेषता यह है कि वह अपने अनुयायियों के सामने कभी-कभी अत्यधिक उत्साही और उत्तेजित हो जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानसिक नेता की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसको अच्छे से अच्छे कार्य करने के लिए एकाकी और शान्तिपूर्ण वातावरण चाहिए। एकाकी और शान्तिपूर्ण वातारण में ही मानसिक नेता के नेतृत्व का विकास होता है। यह अपनी विचारधाराओं के द्वारा लोगों की क्रियाओं और धारणाओं में परिवर्तन लाता है। किन्तु वे विचारधाराएँ तभी महत्त्वपूर्ण हो सकती हैं, अर्थात लोगों की धारणाओं को परिवर्तित करने में सहायक हो सकती हैं, जब वे व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करें। इसके साथ-साथ वे विचारधाराएँ कार्यरूप में परिणत की जा सकती हों। यदि ऐसा नहीं होता तो वह नेतत्व के पद पर अधिक दिन आसीन नहीं रह सकता।

अधिशासी नेता के लिए आवश्यक है कि उसम सामाजिक और मानसिक दोनों प्रकार के नेताओं के गुणों का समावेश हो। सामाजिक नेता की भाँति उसको सार्वजनिक और जनहितकारी कार्य करने चाहिए। मानसिक नेता की भाँति उसमें नये-नये विचारों व आदर्शों का समावेश होना चाहिए। इन योग्यताओं के अलावा, जैसा कि अधिशासी नेता की संज्ञा से स्पष्ट है, उसमें अधिशासन सम्बन्धी योग्यता होना परम आवश्यक है। उदाहरणार्थ, अधिशासी नेता, जिलाधीश होता है जो अधिशासन के साथ-साथ समयानुसार सामाजिक व मानसिक कार्यों को भी क्रियान्वित करता है।

(द) निरकुश, पैतृक व प्रजातान्त्रिक नेता (Autocratic, Paternalistic and Democratic Leaders)—निरंकुश नेता लोगों की इच्छा के विरुद्ध उन पर राज्य करता है। उसके हाथ में शासन सत्ता आते ही वह पूर्व कार्यप्रणाली को अपनी इच्छानुसार निरंकुशता में परिवर्तित करता है। इस प्रकार का नेता अपनी आवश्यकताओं, सुविधाओं और अपने हित के सामने जनता की आवश्यकताओं, सुविधाओं और उसके हित की जरा भी परवाह नहीं करता। निरंकुश नेता से जनता प्रसन्न नहीं रहती और उसको हटाने की टोह में रहती है।

पैतृक नेता सदस्यों के लिए पितृ-स्वरूप होता है। वह समूह के सदस्यों से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है। वह सदस्यों की कठिनाइयों एवं समस्याओं को दूर करने के लिए हर समय तैयार रहता है। प्रत्येक क्षण वह समूह-कल्याण के विषय में चिन्तित रहता है। इस कारण पैतृक नेता सार्वलौकिक होता है। यदि समूह के सदस्य कोई गलत योजना बनाते हैं तो पैतृक नेता उसको अस्वीकार कर सकता है। पैतृक नेतृत्व के पश्चात समूह पैतृक नेता के बिना समूह की व्यवस्था एकदम अस्त-व्यस्त हो जाती है।

प्रजातान्त्रिक नेता का मुख्य उद्देश्य अपने समूह को उच्च से उच्च स्तर पर आधारित करना होता है। वह समूह की आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर विशेष ध्यान देता है जिसके फलस्वरूप नेता की जड़ें सुदृढ़ हो जाती हैं। यदि वह लोगों की इच्छानुसार उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति और उसकी समस्याओं का समाधान करता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो लोग उसके नेतृत्व को सदैव बनाये रखना चाहेंगे। वह अपनी सुविधा, इच्छा और आवश्यकता के लिए कार्य-प्रणाली को बदलना अच्छा नहीं समझता और न बदलता ही है। इस नेतृत्व की एक विशेषता यह भी है कि नेता अन्य व्यक्तियों को नेतृत्व की शिक्षा देता है जिसके परिणामस्वरूप वे आवश्यकता पड़ने पर समूह का नेतृत्व प्रजातान्त्रिक ढंग से कर सकें।

(य) पैगम्बर, सन्त, विशेषज्ञ व मालिक (Prophets, Saint, Expert and Boss)—पैगम्बर किसी शक्ति का आदेश वक्ता के रूप में लोगों तक पहुँचाता है। वह जिस शक्ति का प्रतिनिधित्व करता है तो ऐसा मालूम होता है कि मानो उस शक्ति की सारी शक्ति पैगम्बर में आ गयी हो। व्यक्ति उसकी इस प्रकार की प्राकृतिक शक्ति को देखकर प्रभावित हो जाते हैं और उसके अनुयायी बन जाते हैं। धार्मिक पैगम्बर ईश्वर का आदेश लोगों तक वक्ता या दूत के रूप में पहुँचाते हैं।

सन्त एक प्रकार का श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करने के कारण कुछ अनोखे कार्य करता है। पवित्र जीवन बिताने के कारण सन्त में कुछ असाधारण विशेषताएँ उत्पन्न हो जाती हैं। इस कारण लोग उन असाधारण एवं गुणात्मक विशेषताओं से प्रभावित होकर उसकी ओर आकर्षित होते हैं और अनुकरण एवं आदर करने लगते हैं।

कोई व्यक्ति किसी कार्य में उस समय विशेषज्ञ होता है जब वह उस कार्य में विशेषीकरण प्राप्त कर ले। व्यक्ति अपने निरन्तर प्रयास के कारण किसी कार्य, कला या कौशल में प्रवीण हो जाता है। अतः उसमें जब उच्च श्रेणी के विशेषीकरण का गुण विकसित हो जाता है और अपने प्रतिस्पर्धियों से उस क्षेत्र में अधिक कुशल होता है, उस समय वह विशेषज्ञ नेता कहलाता है; क्योंकि अपने क्षेत्र में वह सर्वोच्च होता है।

मालिक या बॉस (boss) एक प्रत्यक्ष (direct) सपक्षी (partizan) और निरंकुश (autocratic) नेता होता है। बॉस अपनी चतुराई से व्यक्तियों की इच्छाओं और उनके विचारों पर अपना अधिकार जमा लेता है। नेतृत्व के इस वर्गीकरण के अन्तर्गत प्रत्येक प्रकार के कारखाने, फैक्टरी, या आफिस के निरकश से लेकर विनीत और नम्र बॉस व राजनीतिज्ञ आते हैं।

सर मार्टिन कान्वे के अनुसार नेताओं के प्रकार
(Types of Leaders According to Sir Martin Convay)

सर मार्टिन कान्वे ने नेताओं के प्रकार को तीन भागों में विभाजित किया है :

(i) **नियन्त्रणकर्ता नेता** (Crowd Compellers)—इस प्रकार के नेताओं की मुख्य विशेषता यह होती है कि ये अपने वाक्चातुर्य द्वारा व्यक्तियों को अपने वश में कर लेते हैं। केवल वश में ही नहीं कर लेते वरन वे लोगों के दिल जीत लेते हैं। ये नेता इतने जनप्रिय हो जाते हैं कि व्यक्ति उस बात को अस्वीकार नहीं कर सकते जो नेता द्वारा कही गयी है। अतः इस प्रकार के नेता जनता को अपनी इच्छा के अनुसार काम करने के लिए बाध्य करते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ii) **प्रतिनिधि नेता** (Crowd Representatives)—जैसे कि इसके नाम से स्पष्ट है, इस प्रकार का नेता जनता का प्रतिनिधित्व प्रतिनिधि के रूप में करता है और जनता की इच्छानुसार कार्य करता है।

(iii) **मार्ग-प्रदर्शक नेता** (Crowd Exponents)—मार्ग-प्रदर्शक नेता जनता में एक नयी प्रकार की जागृति उत्पन्न करता है। वह जनता को उसकी समस्याओं और आवश्यकताओं के विषय में बताता है। इसके साथ-साथ उन समस्याओं के हल करने और आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साधनों को जनता के सम्मुख रखता है जिनके फलस्वरूप समस्याओं का हल किया जा सके और जनता की आवश्यकताओं की भी सन्तुष्टि की जा सके। मार्ग-प्रदर्शक नेता जनता में जागृति का निर्माण करता है जिसके फलस्वरूप जनता अपने उद्देश्यों की पूर्ति स्वयं कर सके।

नेतृत्व की प्रविधियाँ
(Techniques of Leadership)

नेता सदस्यों को अपने वश में करने का प्रयास करता है ताकि वह समूह को नियन्त्रित रख सके। सदस्यों को अपने वश में करने और समूह को नियन्त्रित रखने के लिए नेता विभिन्न प्रविधियों का योग करता है। इन प्रविधियों को तीन वर्गों में विभाजित किया गया है : (1) निरोध-प्रविधियाँ, (2) प्रसार-प्रविधियाँ, (3) कार्य प्रविधियाँ।

अब हम इन तीनों प्रविधियों का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

(1) निरोध-प्रविधियाँ (Techniques of Repression)

अरस्तू ने इस प्रविधि को तीन भागों में विभाजित किया है। उनके अनुसार नेता, सदस्यों को अपने वश में रखने के लिए निम्नलिखित तीन परिस्थितियों को निरोधात्मक प्रविधि के अन्तर्गत उत्पन्न कर देता है :

(क) तनाव (Tensions)—सर्वप्रथम नेता अपने ही व्यक्तियों को कुछ इस प्रकार भड़काता है कि वे अपने ही समूह के सदस्यों के प्रति अविश्वास की भावना रखने लगते हैं तथा आपस में संघर्ष करते हैं। अत: नेता की नीति समूह में अपनी स्थिति को दृढ़ बनाने की होती है। वह प्रभावशाली व्यक्तियों की शक्ति को नष्ट कर देना चाहता है ताकि उसकी स्थिति समूह में सुदृढ़ रह सके। इसलिए वह दो मित्रों को आपस में लड़ाता है और उनमें अविश्वास का बीज बोता है। जब तक लोग एक-दूसरे में विश्वास नहीं करते तब तक वे नेता को नहीं हटा सकते अर्थात् नेता की जड़ें नहीं उखाड़ सकते। अत: इस प्रविधि द्वारा नेता समूह के सदस्यों में तनाव उत्पन्न करा देता है और इस प्रकार समूह में अपने पैर जमाने लगता है।

(ख) आतंक की नीति (Policy of Terror)—दूसरा नीति, समूह को अपने नियन्त्रण में रखने के लिए नेता आतंक की नीति अपनाता है। इस नीति के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...प्रभावशाली व्यक्ति या तो पदच्युत कर दिया जाता है या उसको कठोर ...दण्ड दिया जाता है जिससे उसकी शक्ति नष्ट हो जाये। इसके अलावा ...आतंक फैलाने के लिए नेता समूह में अपने जासूस छोड़ देता है। आतंक की ...के कारण समूह के सदस्यों पर भय छाया रहता है और वे नेता के विरुद्ध आवाज़ ...की सामर्थ्य नहीं रखते।

(ग) निर्धन बनाने की नीति (Policy to Make Poor)—इस प्रकार की ...त्मक प्रविधि के अन्तर्गत समूह के सदस्यों को इतना निर्धन बना दिया जाता ...वे प्रत्येक क्षण अपनी निर्धनता की समस्या में ही विलीन रहते हैं। लोगों को ...बनाने के लिए टैक्स दुगने, तिगुने बढ़ा दिये जाते हैं जिसके कारण लोग निर्धन ...शक्तिहीन बन जाते हैं। अरस्तू का विचार है कि जिस व्यक्ति पर एक बार ...त्मक अंकुश रख दिया जाता है तो फिर उसमें विरोध करने की शक्ति नहीं ...जाती। प्रायः देखा गया है कि समूह विद्रोह उसी समूह में उत्पन्न होता है जिसके ...कम होता है और अधिक लेने की चाह रखता है। इतिहास पर दृष्टिपात करने ...पता चलता है कि विद्रोह अत्यन्त निर्धन व्यक्तियों से आरम्भ नहीं हुआ।

प्रसार-प्रविधियाँ (Techniques of Propaganda)

प्रसार-प्रविधि के अन्तर्गत कुछ कार्य विधियाँ होती हैं, जिनका उल्लेख हम ...कर रहे हैं :

(अ) उद्देश्यों व इच्छाओं की पूर्ति का आश्वासन—अपने अनुयायियों पर ...प्रभाव रखने और उन्हें अपना बनाये रखने के लिए नेता को एक से अधिक इच्छा ...उद्देश्य की पूर्ति का आश्वासन देना चाहिए। यदि संस्थात्मक नेता अपने अनुयायियों ...इच्छाओं की पूर्ति करता रहे और संस्था के उद्देश्यों को भी प्राप्त करता रहे तो ...अनुयायी सदैव उसको अपना नेता बनाए रखना चाहते हैं। आधुनिक राजनैतिक ...इस कारण बदनाम हैं कि उनके नेता प्रत्येक व्यक्ति की इच्छा की पूर्ति करने का ...आश्वासन तो दे देते हैं; किन्तु इच्छा किसी की भी पूरी नहीं हो पाती। यही कारण ...कि आजकल लोग किसी भी राजनैतिक दल से सन्तुष्ट नहीं हैं और नेताओं को ...की समस्या में उलझे रहते हैं।

(ब) संस्था के कार्यों की सफलता का प्रसार (Propaganda of Achievements of the Institution)—संस्थात्मक नेता को चाहिए कि वह अपनी संस्था ...कार्य-क्षेत्र की सफलताओं का प्रसार कराये। लोगों को तो यह मालूम ही नहीं ...कि उनके संगठन ने कितना काम किया और कितनी सफलता प्राप्त की। संस्था ...की आवश्यकताओं की पूर्ति का एक अप्रत्यक्ष साधन है। अतः लोगों को इस ...का ज्ञान कराने के लिए कि उनके संगठन ने कितनी सफलतापूर्वक कार्य किया है, ...को चाहिए कि वह संस्थात्मक सफलता का उससे कहीं अधिक भड़कीला विज्ञापन ...कराये जितनी सफलता प्राप्त हुई है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(स) सामान्य शत्रु और खतरे का उत्पन्न करना (To Create a Com Enemy and Danger)—समूह में विशाल एकता उत्पन्न करने के लिए नेता चाहिए कि वह समूह के सम्मुख सामान्य शत्रु और खतरे को उपस्थित करे। इ फलस्वरूप लोगों नें नेता का साथ देने के लिए एकता की उद्दीप्ति होगी; क्योंकि वे सामान्य शत्रु और खतरे को अपने सम्मुख देखेंगे तो उससे बचने के लिए वे का साथ देंगे। यदि समूह में कोई ऐसी स्थिति नहीं है तो नेता को चाहिए कि एकता स्थिति प्रसार द्वारा उत्पन्न करे। वह समूह सामान्य शत्रु समझा जाता है किसी दूसरे समूह के लिए घृणा का विषय हो। आजकल अमरीका में कम्युनिस्ट का विषय है। अत: लोगों को अपना बनाये रखने के लिए समूह के सम्मुख सामान्य शत्रु या खतरे का उत्पन्न करना नेता के लिए सुविधाजनक है जिसके स्वरूप वह सदस्यों को अपने वश में रख सकता है।

(द) संस्था के आदर्शों को प्रस्तुत करना (To Produce the Ideolog of the Institution)—जनता के सम्मुख संस्था के आदर्शों को बराबर करते रहना चाहिए। उनके सम्मुख उनके पूर्व संगठनों द्वारा प्राप्त किये आदर्शों को प्रस्तुत करते रहना चाहिए। इसके फलस्वरूप जनता में उत्साह बढ़ता क्योंकि वे अपने पुरखों के आदर्शों को आदर की दृष्टि से देखते हैं। ऐसा करने जनता संस्था द्वारा किये जाने वाले आदर्श कार्यों और रीतियों को स्वीकार करती है। नेता को चाहिए कि संस्थात्मक आदर्शों को जनता के सम्मुख प्रदर्शित करता जिसके फलस्वरूप जनता नेता के कार्यों में रुचि लेगी।

(3) कार्य-प्रविधियाँ (Techniques of Action)

निरोधात्मक और प्रसार की प्रविधियों के द्वारा तो नेता जनता को वशीभूत कर सकता ही है, इसके अतिरिक्त नेता व्यक्तियों को अपने कार्यों द्वारा भी वशीभूत कर सकता है। निरोधात्मक और प्रसारात्मक प्रविधियों का वर्णन हम पीछे कर चुके हैं। अत: यहाँ हम कार्य सम्बन्धी प्रविधियों का वर्णन करेंगे। कार्य प्रविधियों के अन्तर्गत निम्नलिखित विधियों को स्थान दिया जा सकता है:

(अ) विरोधी दलों के नेताओं का दमन (Repression of the Leaders of Opposite Groups)—नेता को अपनी सफलता प्राप्त करने के लिए और समूह के सदस्यों को पूर्णरूप से अपने वश में करने के लिए विरोधी दलों के नेताओं एवं प्रभावशाली और खतरनाक व्यक्तियों का दमन कर लेना चाहिए। उनका दमन कई प्रकार से किया जा सकता है। उसको धन से और उनकी व्यक्तिगत इच्छाओं की पूर्ति करके खरीदा जा सकता है, अर्थात अपने वश में किया जा सकता है। प्रभावशाली व्यक्तियों को नेता अपनी संस्था के अन्दर छोटे-छोटे पदों पर नियुक्त करके अपने वश में कर सकता है। खतरनाक युवकों को वह अपने शासक वर्ग में रख सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि असन्तुष्टि खतरनाक, विरोधी और प्रभावशाली व्यक्तियों को इस प्रविधि द्वारा नाना प्रकार से नेता अपने वश में कर सकता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ब) जनता से धन इकट्ठा करना (To Collect Money from People)—नेता को चाहिए कि जनता को संस्थात्मक सेवाएँ उपलब्ध कराने हेतु जनता से इस प्रकार पैसा इकट्ठा करे कि जनता को धन देने में अधिक कष्ट न उठाना पड़े। धन इकट्ठा करने के लिए अनेक साधनों को अपनाया जा सकता है जैसे ठाठ-बाट आदि की वस्तुओं पर टैक्स लगाया जाये; किन्तु जीवन की अत्यन्त आवश्यक वस्तुओं जैसे पोषण सम्बन्धी वस्तुओं आदि पर टैक्स नहीं लगाना चाहिए।

(स) जनता की सेवा (Services for People)—जनता को अपना समर्थक और अनुयायी बनाने के लिए नेता वे सब कार्य अधिक करे जिनसे जनता की अच्छी सेवा की जा सके। जनता नेता से ऐसी बहुत-सी आशाएँ रखती है जिनसे उसका कल्याण हो सके। अतः नेता आवश्यक रूप से उन कार्यों को करे जिनकी उससे आशा की जाती है। यदि नेता उन कार्यों को करने में रुचि लेता है और उनको करने में सतत् प्रयास करता है तो जनता उसको पसन्द करने लगती है और उसको ही अपना नेता बनाये रखना पसन्द करती है।

उपर्युक्त नेतृत्व की प्रविधियों में से किसी एक प्रविधि को पूर्ण नहीं समझा जा सकता, जो नेता को जनता को अपने वश में करने और उन पर नियन्त्रण करने में सहायक हो। प्रत्येक प्रविधि समयानुकूल और परिस्थिति के अनुकूल अपना महत्त्व रखती है। कभी नेता को व्यक्तियों को अपने वश में करने के लिए निरोधात्मक प्रविधियों की आवश्यकता पड़ती है, कभी प्रसार और कार्य सम्बन्धी प्रविधियों की आवश्यकता होती है। अन्त में हम उपर्युक्त विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि नेता को प्रत्येक प्रविधि का प्रयोग आवश्यकतानुसार और परिस्थिति के अनुसार करना चाहिए। अतः सभी प्रविधियों को महत्त्वपूर्ण समझा जाना चाहिए।

नेता के कार्य
(Functions of Leader)

नेता समूह के लिए महत्त्व का एक केन्द्र होता है जो समूह के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने के हेतु अपने समूह में एक विशेष स्थान रखता है; क्योंकि नेता अपनी गुणात्मक विशेषताओं द्वारा समूह के उद्देश्यों, कार्यों व सामूहिक स्थितियों को निर्धारित करता है। प्रायः देखा गया है कि उक्त वस्तुओं पर ही सामूहिक नैतिक स्तर आधारित होता है। नेता समूह में एक विशेष स्थान रखता है। उसका मुख्य उद्देश्य अपने समूह के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाना होता है। अतः सामूहिक नैतिक स्तर ऊँचा उठाने के लिए नेता को कुछ कार्य करने पड़ते हैं, जिनके द्वारा समूह का नैतिक स्तर ऊँचा उठ जाता है। कोई भी नेता तब तक कुशल एवं अच्छा नेता नहीं कहला सकता। जब तक कि वह सामूहिक नैतिक स्तरों को ऊँचा उठाने में असमर्थ हो अथवा समूह के सदस्यों को सन्तोष न प्रदान कर सकता हो। इसलिए हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम उन कार्यों का अध्ययन करें जो एक कुशल और योग्य नेता को अपने समूह का नैतिक स्तर ऊँचा उठाने के लिए आवश्यक हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रच तथा क्रचफील्ड ने नेता के कार्यों की ओर संकेत करते हुए लिखा "....सभी नेताओं को कुछ मात्रा में अधिशासक, नियोजक, नीति-निर्माता, विशेष समूह का बाह्य प्रतिनिधि, आन्तरिक सम्बन्धों के नियन्त्रक, पुरस्कार और दण्ड निर्धारक, पंच एवं मध्यस्थ और आदर्शवादी के रूप में कार्य करना पड़ता है।"[1]

क्रच और क्रचफील्ड के मतानुसार यहाँ हम नेता के कार्यों का संक्षेप में वर्णन करेंगे। नेता के कार्य निम्नलिखित हैं :

(1) अधिशासी के रूप में नेता (The Leader as Executive)—अधिशासी के रूप में नेता किसी भी समूह की क्रियाओं का चालक होता है। सामूहिक क्रियाओं के संचालन नेता के निर्देशन में किये जाते हैं। यह समूह के नेता की जिम्मेदारी है कि वह यह देखे कि समूह सम्बन्धी नीतियों का संचालन कुशलतापूर्वक किया जा रहा है या नहीं। नेता ही समूह की नीतियों का निर्धारण करता है और प्रत्येक कार्य के लिए समूह के सदस्यों को नियुक्त करता है जिस कार्य के लिए (सदस्य) पूर्णरूप से नेता के प्रति उत्तरदायी होते हैं। वह लोगों के उत्तरदायित्व में समय-समय पर हस्तक्षेप भी करता है।

(2) अधियोजक के रूप में नेता (The Leader as Planner)—समूह के अधिशासन (execution) के पश्चात नेता समूह के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए योजनाओं का निर्माण करता है। उद्देश्यों की प्राप्ति के साधनों की योजना अल्पकालीन भी हो सकती हैं और दीर्घकालीन भी।

(3) नीति निर्माता के रूप में नेता (The Leader as Policy Maker)—नेता के सब कार्यों में से, सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य समूह के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की नीतियों का निर्माण करना है। साधारणतया समूह के उद्देश्य तीन साधनों द्वारा निश्चित किये जाते हैं :

प्रथम, ऊपर से। तात्पर्य यह है कि समूह की नीतियाँ किसी उच्च अधिकारी द्वारा स्थानान्तरित की जाती हैं; जैसे—सेना में उच्च अधिकारी निम्नाधिकारियों को आज्ञा देते हैं। निम्नाधिकारियों को उनके द्वारा निर्धारित एवं दी हुई नीतियों का पालन करना पड़ता है।

द्वितीय, नीचे से। अर्थात सम्पूर्ण सदस्यों द्वारा निर्धारित किया हुआ निर्णय।

तृतीय, स्वयं नेता द्वारा अर्थात जो आदेश या निर्णय न तो ऊपर से प्राप्त

---

1 "......all leaders must partake to some degree of the functions of executive, planner, policy maker, expert, external group representative, controller of internal relationships, purveyor of rewards and punishment, arbitrator and mediator, and exemplar." D. Krech and R. S. Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology* (1948), p, 417.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...ता हो और नीचे से, वरन नेता स्वयं अपनी इच्छानुसार नीतियों का निर्णय ...है।

(4) विशेषज्ञ के रूप में नेता (The Leader as Expert)—अधिशासन, ...और नीति निर्माण करने वाले कार्यों के अतिरिक्त नेता का महत्त्वपूर्ण कार्य ...ता है। नेता समूह का प्रतिनिधि और प्रतीक होता है। इसलिए उसको ज्ञान ...कुशलता का साधन समझा जाता है। इसी कारण कभी नेता एक विशेषज्ञ के ...में कार्य करता है कभी निर्देशक के रूप में और कभी सलाहकार के रूप में कार्य ...है।

(5) समूह के बाह्य प्रतिनिधि के रूप में नेता (The Leader as External Group Representative)—एक द्वैतीयिक समूह के सब सदस्य किसी ...समूह के सदस्यों से सम्पर्क स्थापित नहीं कर सकते। इसलिए समूह का नेता ...समूह का प्रतिनिधित्व करता है। नेता ही समूह के बाह्य सम्बन्धों को स्थापित ...है। नेता ही दूसरे समूहों की माँगों और सम्पर्कों को स्वीकृति देता है तथा ...साथ वह अपने समूह की माँगों और सम्पर्कों को जो दूसरे समूहों से सम्बन्धित ...उनका निर्धारण करता है। क्रच और क्रचफील्ड ने इस विषय में कहा है, "वह ...के लिए मान्य अधिवक्ता होता है।"[1]

इस सम्बन्ध में लेविन ने भी कहा है कि नेता एक 'द्वार-रक्षक' (gate-keeper) है।

(6) अन्तःसामूहिक सम्बन्धों का नियन्त्रक (The Leader as Controller of Internal Relationships)—नेता अतः सामूहिक व्यक्तिगत ...सम्बन्धों पर भी नियन्त्रण करता है। समूह का नेता किन्हीं अन्य सदस्यों की अपेक्षा ...के विशिष्ट विवरण, समूह के संगठन और समूह के स्वरूप के विषय में अधिक ...ता है। इसलिए नेता उनसे कहीं अधिक भलीभाँति उक्त विषयों को इस प्रकार ...त करता है जिसके फलस्वरूप समूह के आन्तरिक सम्बन्ध प्रभावित होते हैं।

(7) पुरस्कार एवं दण्ड के निर्धारक के रूप में (The Leader as Purveyor of Rewards and Punishment)—उपर्युक्त विशिष्ट कार्यों के अलावा ...का नेता सदस्यों को पुरस्कार एवं दण्ड देने का भी कार्य करता है। यह कार्य ...प्रकार से बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि दण्ड और पुरस्कार द्वारा नेता समूह में ...त्मक और प्रेरणात्मक नियन्त्रण रखता है।

(8) पंच एवं मध्यस्थ के रूप में नेता (The Leader as Arbitrator and Mediator)—नेता का एक महत्त्वपूर्ण कार्य यह भी है कि वह समूह के

[1] "He is the official spokesman for the group." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology* (1948), p. 419.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आन्तरिक संघर्ष अथवा तनाव के समय एक पंच और मध्यस्थ का कार्य करता है। नेता समूह के अन्तर्गत एक न्यायाधीश का स्थान रखता है और सामूहिक जीवन को शान्तिमय बनाये रखता है। यह नेता के ऊपर निर्भर करता है कि वह सामूहिक द्वेष और तनाव को कम कर दे या और बढ़ा दे। आदर्श रूप में नेता निष्पक्ष न्याय करता है और हर प्रकार से समूह का वातावरण शान्तिमय बनाये रखने का प्रयत्न करता है।

(9) आदर्श के रूप में नेता (The Leader as Examplar)—नेता समूह के लिए एक आदर्श होता है। नेता होने के नाते वह समूह का प्रतीक होता है। इसलिए वह समूह के सदस्यों के लिए आदर्श व्यवहार उपस्थित करता है। नेता की यह इच्छा होती है कि उसके समूह के सभी सदस्य सर्वोच्च चरित्र और चाल-चलन के हों: अतः वह स्वयं को समूह के सम्मुख आदर्श के रूप में उपस्थित करता है।

(10) सामूहिक प्रतीक के रूप में नेता (The Leader as Symbol of the Group)—समूह की एकता के बढ़ाने का एक कारक है समूह के सदस्यों के कार्यों में ज्ञानात्मक स्पष्टता (cognitive clarity) का होना। इसलिए सामूहिक एकता बढ़ाने के लिए ज्ञानात्मक स्पष्टता के अनेक साधनों को प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण के लिए, बल्ले, वर्दी, झण्डे आदि। नेता का यह एक विशेष कार्य है। वह भी सामूहिक एकता बनाये रखने के लिए उक्त कार्य करता है। इसके अतिरिक्त वह समूह की एकता का ज्ञानात्मक प्रतीक होता है। समूह के ज्ञानात्मक प्रतीक के रूप में इंगलैण्ड की महारानी एलिजाबेथ, इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

(11) नेता व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का प्रतिनिधि (The Leader as Surrogator for Individual Responsibility)—नेता एक ऐसा महत्वपूर्ण कार्य अपने समूह के लिए करता है जिससे समूह के सदस्यों को अपने व्यक्तिगत उत्तरदायित्वों से छुटकारा मिल जाता है; क्योंकि समूह के सभी सदस्यों का उत्तरदायित्व अकेले नेता पर ही आ पड़ता है। वही उनके व्यक्तिगत उत्तरदायित्वों का प्रतिनिधि होता है। सदस्य इन उत्तरदायित्वों से इसलिए स्वतन्त्र हो जाते हैं कि उनको नेता के प्रति यह विश्वास होता है कि नेता जो काम करेगा, कुशलता और सफलतापूर्वक करेगा। इसके अतिरिक्त वह कार्य समूह के सदस्यों के हित में होगा।

(12) विचारक के रूप में नेता (The Leader as Ideologist)—कुछ परिस्थितियों में नेता समूह के सदस्यों के समक्ष नयी-नयी विचारधाराएँ प्रस्तुत करता है। किसी समूह के आदर्शवाद (ideology) को नेता ही प्रदर्शित करता है; क्योंकि समूह के साधारण सदस्य की अपेक्षा नेता के विचार, विश्वास व व्यवहार समूह के आदर्शवाद तो बहुत अच्छी प्रकार प्रदर्शित करते हैं। इसके अलावा वह सामूहिक आदर्शवाद (group ideology) को उसके वास्तविक रूप में समूह के सदस्यों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...प्रस्तुत करता है; क्योंकि प्रत्येक सदस्य को अपने समूह के आदर्शवाद ... में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त नहीं होता। अतः नेता इस सम्बन्ध में उन्हें ... योग प्रदान करता है। क्रच और क्रचफील्ड ने लिखा है कि "गाँधी जी ...त्मिक नेता थे जो करोड़ों भारतवासियों के नैतिक निर्देशक का कार्य भी किया ...है।"[1]

(13) पिता के रूप में नेता (The Leader as Father Figure)—...अपने सदस्यों की भावात्मक वेदनाओं पर प्रकाश डालता है। वह समूह के ...के लिए पितृस्वरूप होता है। इस सम्बन्ध में क्रच और क्रचफील्ड ने लिखा ...तादात्म्य अथवा पहचान, परिवर्तन, एवं नम्रता की वेदनाओं का आदर्श ...है।"[2] मनोविश्लेषण सिद्धान्तशास्त्रियों (psychoanalytic theorists) ...और उसके अनुयायियों के सम्बन्ध पर विशेष प्रकाश डाला है। यह वास्तव ...ही मालूम देता है कि कुछ समूहों में नेता का पितृस्वरूप कार्य बहुत महत्त्वपूर्ण ...जाता है। उदाहरण के लिए, हिटलर और रूजवेल्ट अपने अनुयायियों के लिए ...तुल्य थे।

(14) बलि के बकरे के रूप में नेता (The Leader as Scape Goat)—...देखा गया है कि पहले जिस नेता को सब पसन्द करते थे उसे बड़ी असभ्यता ...से अलग कर दिया जाता है।"[3]

जिस प्रकार नेता समूह के प्रति भावात्मक वेदनाएँ निर्मित कर सकता है, ...प्रकार परिस्थितियों के अनुसार वह अपने को असन्तुष्ट व्यक्तियों में डालकर ...युयुत्सा का शिकार बन सकता है। जब नेता किसी उद्देश्य प्राप्ति में असफल ...होता है तो समूह के सदस्य यह समझते हैं कि नेता ने उन सबके साथ विश्वासघात ...है। अतः ऐसी विचारधाराओं और परिस्थितियों को दृष्टिपात करते हुए नेता ...के बकरे के समान प्रशंसनीय कार्य करने की इच्छा रखता है। क्योंकि यदि नेता ...ध्येय की प्राप्ति में असफल हो जाता है तो सभी सदस्य समूह की असफलता ...के सर ही मढ़ देते हैं और उस असफलता का उत्तरदायी नेता को ही ठहराते हैं।

---

1. "Gandhi served in this sense as a 'spiritual' leader the living conscience, and moral guide of millions of Hindus." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 421.
2. "He is the ideal object for indentification, for transference, for the feeling of submissiveness." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p, 421.
3. "It is astounding to see the savageness with which a previousy loved leader may be repudiated and excoriated by the group." Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 44.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक नेता में उपर्युक्त सभी गुणात्मक कार्यों का समावेश हो। इतना अवश्य होना चाहिए कि प्रत्येक गुणात्मक कार्यों का कुछ न कुछ अंश नेता में सन्निहित हो, क्योंकि हर एक गुण किसी न किसी समय काम आ ही जाता है।

नेता और अनुयायियों का सम्बन्ध
(Relation of Leader and Followers)

नेता और अनुयायियों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। यदि नेता की कोई बात ही न माने, तो नेता कहाँ का। नेता और अनुयायी में पारस्परिक सम्बन्ध रहता है। नेता अनुयायियों को प्रभावित करता है और बहुत अधिक प्रभावित करता है, पर इसका यह तात्पर्य नहीं कि प्रभावित करने की प्रक्रिया एकतरफा ही होती है। नेता भी अनुयायियों से प्रभावित होता है।

नेता प्रभुत्व रखता है और अनुयायी उसका प्रभुत्व मानते हैं। नेता योजना बनाता है, स्थिति को स्पष्ट करता है और उसे सुलझाने का रास्ता बनाता है। नेता प्रभुत्व की स्थिति में होता है और अनुयायी उसके विचारों के अधीन।

नेता और अनुयायियों के सम्बन्धों का एक सुन्दर अध्ययन स्टाउफर तथा अन्य ने किया है। इस पर उन्होंने दो पुस्तकें प्रकाशित की हैं।[1]

अपने अध्ययन के आधार पर उन्होंने लिखा है कि अधिक पढ़े-लिखे लोग अफसरों के प्रति उदासीन पाये गये। उन अफसरों का अधिक मान था जो अपना काम अच्छी तरह जानते थे। उन अफसरों का और भी अधिक मान था जो उनके कल्याण का ध्यान रखते थे। उन नेताओं का अधिक प्रभाव रहता है जो अपने अनुयायियों की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं और उन्हें पूरा करने का प्रयत्न करते हैं। नेताओं को कम स्वार्थी भी होना चाहिए।

प्रतिष्ठा (Prestige)—नेतृत्व का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष प्रतिष्ठा है। अनुयायियों में तथा अन्य व्यक्तियों में प्रतिष्ठा नेता के लिए आवश्यक है।

अनुयायी नेता का चित्र प्रतिष्ठा में प्रदर्शित करते हैं। वह नेता को क्या और कैसे समझते हैं। नेता के बारे में उनके क्या विचार हैं। यह नेता-अनुयायी सम्बन्ध के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

नेता आदर्श के रूप में (Leader as Ideal)—अनुयायी नेता को आदर्श रूप में मानते हैं। वह उनका आदर्श होता है।

---

1 S. A. Stouffer and others, *Studies in Social Psychology*; in World War II, Vol. I, *The American Soldier : Adjustment During Army Life*; Vol. II, *The American Soldier : Combat and Its Aftermath*, Princeton University Press, Princeton (1949).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुयायी अपने नेता के साथ तादात्म्य करता है और इससे उसे बड़ा सुख ता है। नेता की सफलताओं और महान कार्यों को वह अपनी सफलता एवं कार्य ता है।

नेता की बड़ी प्रशंसा की जाती है और ऐसे-ऐसे गुण बखाने जाते हैं जो उसके हीं नहीं; परन्तु नेता को भी अपने अनुयायियों से प्रभावित होना पड़ता है और गुणों का विकास करना पड़ता है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कोई व्यक्ति स्वयं योग्य नहीं होता, पर पद उस पर ये योग्यताएँ थोप देता है।

अनुयायी नेताओं को आदर्श के रूप में मानते हैं। हमारे देश में महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस, नेहरू इत्यादि आदर्श हैं। साम्यवादियों में मार्क्स और लेनिन के नाम जादू का काम करते हैं। अमरीका में John Brown का नाम महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार रिपब्लिकन पार्टी के लिए लिंकन (Lincoln) का नाम महत्त्वपूर्ण है और डेमोक्रेट्स के लिए जेफरसन (Jefferson) और जैकसन (Jackson) का। इसी प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में आदर्श के रूप में नेता रहते हैं। लोग अपने नेताओं को वह वीरों के रूप में पूजते हैं।

नेताओं पर प्रशंसा का प्रभाव (The Effects of Veneration on Leaders)—नेताओं पर इसका अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। अनुयायी नेताओं के कुछ आवश्यक गुण इस प्रक्रिया के द्वारा निश्चित कर देते हैं और नेताओं को उन गुणों को विकसित करना पड़ता है। जनता की भावनाओं के अनुसार ही नेताओं को बनाना पड़ता है। जनता की एक संस्कृति होती है और नेता इसी संस्कृति के अनुसार बनता है। रूढ़ियों एवं जनरीतियों से नेता को प्रभावित होना पड़ता है और उन्हीं के अनुसार कार्य करना पड़ता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "सर्वप्रथम, जनसाधारण उस संस्कृति को रखती है जिसके अन्तर्गत नेतृत्व के विशेष कार्य आश्रित होते हैं।"[1]

जो लोग इन रूढ़ियों एवं रीतिरिवाजों के विरुद्ध चलते हैं, वे अपना नेतृत्व खो देते हैं। गांधीजी ने इसीलिए धर्म को सदैव प्रमुख स्थान दिया। साम्यवादी इस देश में इसलिए सफल नहीं हो पा रहे हैं; क्योंकि वे यहाँ की रूढ़ियों को स्वीकार नहीं करते। जो लोग इनका उल्लंघन करते हैं वे अपने को नष्ट कर लेते हैं।

लोग भौतिक संस्कृति के क्षेत्र में परिवर्तन शीघ्र स्वीकार कर लेते हैं। नये प्रकार का रेडियो, टेलीविजन, मोटर स्वीकार करने में समूह को कोई कठिनाई नहीं

---

1 "First of all, the masses carry the culture within which the special functions of leadership rest." K. Young. *A Handbook of Social Psychology*, p. 283.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होती। इन क्षेत्रों में नेता जो भी परिवर्तन करना चाहें, वह स्वीकार कर लिया जाता है। भौतिक क्षेत्र के बाहर रूढ़ियाँ और जनरीतियाँ कठिनाई से परिवर्तित होती हैं। विशेष रूप से लिंग सम्बन्धी, धर्म एवं राजनैतिक संगठन सम्बन्धी व्यवस्थाओं में परिवर्तन कठिनाई से आता है। नेहरू जी देश में अनेक परिवर्तन करते रहे—नये भवन बनवाये, नदियों के मार्ग बदले, बाँध बँधवाये, इत्यादि—जनता ने विरोधी आवाज नहीं उठायी; परन्तु हिन्दू कोड बिल आया और जनता ने नेहरू का भी विरोध किया। नेहरू जी ने धमकी भी दी और कहा कि हिन्दू कोड बिल न पास हुआ तो मैं सरकार छोड़ दूँगा। पर जनता नहीं मानी और विरोध बढ़ता ही गया। आखिर हिन्दू कोड बिल पास न हो सका। इससे स्पष्ट है कि नेताओं को भी समूह की संस्कृति के अनुसार ही कार्य करना पड़ता है।

जो सामाजिक-सांस्कृतिक क्रान्तियाँ हुई हैं, वे केवल नेताओं के कारण ही नहीं हुई हैं बल्कि जनता भी उनसे सहमत थी, चाहे सक्रिय न रही हो। सोवियत रूस, इटली, जर्मनी इसके उदाहरण हैं। ये क्रान्तियाँ क्रान्तिकारी दलों द्वारा हुईं, पर ये दल जनता की आवश्यकताओं को व्यक्त करते थे। कुछ लोगों की यह कल्पना कि नेता मूर्ख जनता पर कुछ भी लाद सकते हैं निरर्थक है।

नेता पिता के रूप में (Leader as Father Image)—जनता नेता को पिता के रूप में मानती है। उदाहरण के लिए, गाँधीजी को ही लीजिए। अति शीघ्र उन्हें जनता ने राष्ट्रपिता मान लिया। नेता के ही समान पिता भी बच्चों पर प्रभुत्व रखता है। इस प्रकार से उसमें वही प्रतिछाया उभर आती है।

नेतृत्व के सिद्धान्त
(Theories of Leadership)

नेतृत्व के विषय में अनेक सिद्धान्त प्रचलित हैं। उनमें से प्रमुख सिद्धान्तों का हम यहाँ उल्लेख कर रहे हैं :

(1) विलक्षणता का सिद्धान्त (The Marginal Uniqueness Theory)—नेतृत्व के इस सिद्धान्त के अनुसार कुछ व्यक्तियों में कुछ न कुछ विशेष योग्यताएँ और गुण होते हैं जो उसको नेता बनाने में सहायक होते हैं। विलक्षणता की विभिन्न दशाएँ एवं स्थितियाँ होती हैं। यह योग्यताएँ और गुण वशानुक्रम और परम्परागत प्राप्त किये जाते हैं। ये योग्यताएँ (जैसे—आर्टिस्टिक, स्मरणशक्ति सम्बन्धी, मैकेनिकल, तकनीकी सहानुभूति प्रकट करना आदि) वंशानुगत प्राप्त की जाती हैं। व्यक्ति में यह गुण और योग्यताएँ अनोखी होती हैं; क्योंकि संसार में कोई भी दो व्यक्ति एक रूप अथवा एक जैसे नहीं मिल सकते। इसके भी तीन मुख्य कारण यह हैं कि उनमें से प्रत्येक जन्म से, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से और अपने दैनिक अनुभवों से अनोखा होता है। यही कारण है कि किसी व्यक्ति की योग्यताएँ एवं उसके गुण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...व्यक्ति से नहीं मिलते। इसके साथ-साथ उक्त तीनों कारणों के संयोग से ...की विशेषताओं और योग्यताओं में विलक्षणता पायी जाती है।

इस प्रकार विलक्षण गुणों और योग्यताओं वाला व्यक्ति अपने विचारों और ...को ऐसे तौर-तरीकों एवं ढंगों में परिणत करता है जो समूह के लिए आवश्यक ...वांछनीय होते हैं। वह अपनी विचारधाराओं को समूह के सदस्यों के सम्मुख ...है तो वे उसके विचारों और कार्यों की प्रशंसा करते हैं। इसके फलस्वरूप वह ...समूह का नेता बन जाता है।

(2) मानसिक शक्ति के केन्द्रीकरण का सिद्धान्त (The Theory of ...lization of Psychic Energy)—इस सिद्धान्त के अनुसार किसी भी ...की योग्यता रखने वाला व्यक्ति किसी भी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपने ...तर प्रयत्नों और शक्ति को उस उद्देश्य की प्राप्ति की ओर केन्द्रित कर देता है। ...में उसको सफलता अवश्य मिलती है। अतः इस सिद्धान्त के अनुसार साधारण ...ताओं वाला व्यक्ति अपने परिश्रम, प्रयास और अपनी लगन द्वारा कठिन से ...कार्यों में सफलता प्राप्त कर सकता है। इस सिद्धान्त के अनुसार निर्धनता के ...वरण में पला हुआ व्यक्ति जिसको कभी प्रोत्साहन न मिला हो यदि किसी काम ...करने के लिए अपनी पूरी लगन से जुट जाये तो वह सफलता प्राप्त कर सकता ...। जब व्यक्ति अपने निरन्तर प्रयत्नों और प्रयासों द्वारा किसी दिशा में सफलता ...कर लेता है तो लोग उसकी प्रशंसा करते हैं। लेस्टर वार्ड (Lester Ward) ...ऐसे व्यक्ति को 'कठिन परिश्रम से बुद्धिमान' कहा है।

इस सिद्धान्त के अनुसार कोई भी व्यक्ति किसी भी स्तर की योग्यता रखता ...अपनी मानसिक शक्ति को एक दिशा में केन्द्रित करके उस दिशा में सफलता ...कर सकता है। मानसिक शक्तियों का केन्द्रीकरण निम्न प्रकार से किया जा ...ता है :

(अ) किसी काम में थोड़ा समय नित्य देकर व्यक्ति उस क्षेत्र में पूर्ण योग्यता ...करने के पश्चात अपने साथियों का प्रतिनिधित्व करता है।

(ब) थोड़े समय की अवधि के लिए किसी विशेष काम में गहन केन्द्रीकरण ...ना; जैसे—टेबिल टेनिस का प्रसिद्ध खिलाड़ी।

(स) किसी विशेष कार्य के लिए व्यक्ति का अपने सम्पूर्ण जीवन का केन्द्री...करण कर देने पर सफलता के पश्चात सर्वत्र उसकी ख्याति होती है।

(द) दो व्यक्तियों का मिलकर किसी विशेष कार्य में एक दीर्घ समय तक ...समस्त समय व मानसिक शक्ति उस कार्य की ओर केन्द्रित कर देने को दोहरा ...केन्द्रीकरण कहते हैं।

(य) एक व्यक्ति अपने जीवन के आंशिक भाग का केन्द्रीकरण करके किसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक विशेष प्रकार के कौशल में प्रवीण हो जाता है और इस विशेष क्षेत्र में अपने प्रतिस्पर्धियों को हराकर सर्वश्रेष्ठ स्थान पाता है।

(3) सन्तुलन का सिद्धान्त (The Theory of Balance)—इस सिद्धान्त के संस्थापकों का कहना है कि किसी व्यक्ति में कोई एक व्यक्तित्व-गुण के विकसित हो जाने से ही केवल वह नेता नहीं बन जाता। जैसे, नेतृत्व के लिए शक्ति और क्रिया आवश्यक गुण हैं, किन्तु ये गुण व्यक्ति को कभी-कभी जिद्दी और हठी भी बना देते हैं और यदि लोग उसकी इस प्रवृत्ति को सहन न करें तो उस समय उसका नेतृत्व छिन जाने की सम्भावना है। इस सिद्धान्त का सारांश यह है कि व्यक्ति के मानसिक गुणों एवं लक्षणों में सन्तुलन रहना चाहिए। जब भी उन लक्षणों के द्वारा असन्तुलन प्रतीत होगा तभी उस व्यक्ति के नेतृत्व को रोका जायेगा। गुणों व लक्षणों में सन्तुलन बनाये रखना एक गूढ़ विषय है; क्योंकि कभी भी दो या तीन व्यक्तित्व गुणों द्वारा सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती।

वास्तव में सन्तुलन के सिद्धान्त का अर्थ विभिन्न व्यक्तित्व-गुणों के ऐसे संगठन से है जो आपस में एक-दूसरे गुण के सहायक हों। सन्तुलन से कुछ लोग यह अर्थ निकालते हैं कि विरोधी गुणों से एक-दूसरे का मार्ग रोकना या उनकी क्रिया में बाधा डालना चाहिए। किन्तु यह विचार उपयुक्त नहीं; क्योंकि इसमें सन्तुलन किसी प्रकार नहीं बन सकता। इसके विपरीत सन्तुलन का तात्पर्य उन गुणों एवं लक्षणों के संयोग से है जिनकी क्रियाशीलता में एक प्रकार का सन्तुलन बना रहे। ऐसी स्थिति में व्यक्ति कठिन से कठिन समस्याओं का हल सरलता से निकाल लेता है और लोग उपद्रव करने में असमर्थ होते हैं; क्योंकि व्यक्ति के सन्तुलित गुणों के कारण उसके समूह में भी सन्तुलन बना रहता है। इसके फलस्वरूप उसको नेतृत्व प्राप्त होता है।

(4) अन्तर्दृष्टि का सिद्धान्त (The Flashes of Insight Theory)—नेतृत्व के इस सिद्धान्त के अनुसार यदि कोई व्यक्ति अचानक किसी ऐसी समस्या को हल कर देता है जो बहुत कठिन मालूम होती है और उसका समाधान अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है तो लोग उसकी प्रशंसा करते हैं और उसका प्रतिनिधित्व एवं नेतृत्व स्वीकार कर लेते हैं। वह व्यक्ति एक प्रकार की ऐसी अन्तर्दृष्टि रखता है जो उसके साथियों से अधिक गहरी और महत्त्वपूर्ण है और जो समस्या का पूर्ण समाधान करने की सामर्थ्य रखती है। इस प्रकार वह व्यक्ति लोगों को किसी अमुक समस्या को हल करने के ढंगों को बताता है। अतः वह अपनी इस गहरी अन्तर्दृष्टि के फलस्वरूप नेता बन जाता है।

अपने साथियों से पहले और अधिक गहरी अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना नेतृत्व के लिए परम आवश्यक है। इस प्रकार की अन्तर्दृष्टि का ज्ञान बिजली की कौंध की भाँति अचानक होता है। यदि कोई व्यक्ति कठिन परिश्रम कर रहा हो या कड़ी से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेहनत रात-दिन कर रहा हो, उसी बीच यह अन्तर्दृष्टि एक किरण की भाँति ती है।

यह अन्तर्दृष्टि कड़ी मेहनत या विलक्षण बुद्धि अथवा ज्ञान और अनुभव से होती है। वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में अनेक प्रयोगों द्वारा ज्ञान और अनुभव एक बड़ा-सा भण्डार तैयार कर लेता है। जिसके फलस्वरूप किसी समय भी र्दृष्टि वैज्ञानिक द्वारा तैयार किये हुए क्षेत्र में बिजली की कौंध की तरह आती जिससे वैज्ञानिक को अपनी समस्या के समाधान का साधन प्राप्त हो जाता है। णामस्वरूप वह वैज्ञानिक उस क्षेत्र में सबसे योग्य समझा जाता है और उसका स्वीकार कर लिया जाता है।

(5) सामूहिक प्रक्रियात्मक सिद्धान्त (The Group Process ory)—सामूहिक प्रक्रियात्मक सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति छोटे-मोटे समूहों में योगपूर्वक काम करना सीखता है और साथ हो साथ अपने विचारों को स्वतन्त्रता- प्रकट करना सीखता है। इस अन्त:क्रिया की प्रक्रिया के फलस्वरूप व्यक्ति का जन्म लेता है। समूह के नेतृत्व के लिए वे लोग ही चुने जाते हैं जो अपने समूह आवश्यकताओं की पूर्ति करने और अपने समूह का ठीक प्रकार संचालन करने में हो सकते हैं।

(अ) समूह में एक इस प्रकार का नेता होता है जिसकी कुछ व्यक्ति काफी सा करते हैं और अधिकतर लोग कम। क्योंकि वह नेता कुछ चुने हुए व्यक्तियों के र्य के लिए काम करता है और अन्ध-पक्षपात के अनुसार कार्य करता है।

(ब) कुछ नेताओं की प्रशंसा बहुत कम होती है या प्राय: उससे घृणा की ती है; क्योंकि वह समूह में केवल अपने लाभ के लिए ही नेता बनता है। इस कार का नेता बहुत थोड़े समय ही नेता रह पाता है, क्योंकि लोग उससे तंग आकर के पैर उखाड़ना शुरू कर देते हैं।

(स) जो नेता समूह के सदस्यों का आपस में समझौता करने का कार्य ता है। उसकी प्रशंसा भी होती है और निन्दा भी। रक्षक के रूप में प्रशंसा और तरफा बात करने वाले के रूप में निन्दा होती है। निन्दा वाली स्थिति में वह नेता नति नहीं कर सकता।

(द) समूह में न्यायाधीश का अधिक सम्मान होता है। यदि वह पक्षपात रहित निर्णय करता है और उसको निर्णय के विषय में उच्चकोटि का प्रशिक्षण मिला होता है तो उसकी प्रशंसा होती है और यदि वह पक्षपात सहित निर्णय करता है तो समूह में उसकी घोर निन्दा की जाती है।

(य) उन नेताओं को समूह में अधिक प्रतिष्ठित किया जाता है जो समूह की समस्याओं को हल करने और आवश्यक सामूहिक परिवर्तन के लिए अपना सब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ समूह को अर्पित कर देते हैं। यहाँ तक कि वे समूह के जीवन को सुखी बनाने के लिए अपने जीवन की बाजी भी लगा देते हैं।

(फ) समूह में कुछ प्रगतिवादी नेता भी जन्म लेते हैं। जो समूह के पुराने रूढ़िवादी, रीति-रिवाजों को नये रीति-रिवाजों और नयी-नयीं विचारधाराओं में परिवर्तित करते हैं। इन नेताओं का विरोध प्राचीन रूढ़िवादी करने का प्रयास करते हैं; किन्तु उनका विरोध नये जमाने के युवकों की आवाजों के सामने दब जाता है और धीरे-धीरे नेता सर्वप्रिय बन जाता है।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति छोटे-छोटे समूहों में मिलकर कार्य करना सीखता है और इस अन्तःसामूहिक प्रक्रिया में ही उस व्यक्ति के नेतृत्व के गुणों की उद्दीप्ति होती है। जिसके फलस्वरूप वह अवसर आने पर नेता बन जाता है।

(6) अयोग्यता में योग्यता का सिद्धान्त (The Ability-in-Disability Theory)—नेतृत्व सम्बन्धी सिद्धान्तों के विषय में से एक सिद्धान्त अयोग्यता में योग्यता का भी है। इसका प्रतिपादन ऐल्फ्रेड एडलर ने किया था। उनका कहना है कि यह प्राकृतिक सिद्धान्त है कि जो व्यक्ति कमजोर और हीन होते हैं उनकी इस कमी को दूर करने के लिए प्रकृति उस व्यक्ति को कुछ विशेषताएँ, गुण, बुद्धि व कौशल प्रदान करती है। इस प्रकार व्यक्तियों के शारीरिक अवगुण विशेष योग्यताओं में परिवर्तित हो जाते हैं। अतः व्यक्ति की अयोग्यता योग्यता में बदल जाती है।

इस सिद्धान्त के अनुसार उन स्थितियों में व्यक्ति की योग्यताओं का कोई विशेष विकास नहीं होता, जहाँ उसको सुगमता एवं सरलता से सफलता प्राप्त हो जाती है। उसकी योग्यताओं का विकास उन स्थितियों में होता है जहाँ वह एक-दो बार की पराजयों के कारण हतोत्साहित नहीं होता, वरन् मार्ग में अड़ी हुई बाधाओं को दूर करने के लिए और पराजयों को सफलताओं का रूप प्रदान करने के लिए वह पुनः अपनी शक्तियों का सुसंगठन करता है और दुगुने-चौगुने वेग एवं कौशल के साथ विजय प्राप्त करने की ओर अग्रसर होता है। अन्त में वह विजय प्राप्त कर ही लेता है अर्थात अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार इन परिस्थितियों में व्यक्ति की योग्यताओं का विकास होता है और वह नेता बन सकता है। इस सिद्धान्त की पुष्टि में एक अत्यन्त सुन्दर उदाहरण हमें डेमास्थनीज से मिलता है। डेमास्थनीज अपनी बाल्यावस्था में हकलाता था। साधारण व्यक्ति यदि डेमास्थनीज की इस दशा में होता तो वह अपनी पराजय चुपचाप मान लेता। किन्तु डेमास्थनीज ने इस अयोग्यता को योग्यता में बदलने का प्रयास किया। वह समुद्र तट पर गया, अपने मुँह को कंकड़ों से भर लिया और लहरों से तब तक बात करता रहा जब तक उसका हकलाना बन्द न हो गया तथा वह शब्दों का शुद्ध उच्चारण न करने लगा। इस प्रकार उन्होंने अपनी इस अयोग्यता को भाषण देने की ऐसी योग्यता में परिवर्तित कर लिया कि आज भी वे संसार के सर्वश्रेष्ठ वक्ता माने जाते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रश्न

1. नेतृत्व का प्रभुत्व के स्वरूप में वर्णन कीजिए। अपने उत्तर की उदाहरण सहित व्याख्या कीजिए।

(Discuss leadership as a phase of dominance, Illustrate your answer with examples.)

2. नेतृत्व की उत्पत्ति, प्रकृति और कार्यों पर एक निबन्ध लिखिए।

(Write an essay on the genesis, nature and function of leadership.)

3. प्रभुत्व क्या है ? प्रभुत्व के दो विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कीजिए।

(What is dominance ? Explain two different forms of dominance.)

4. नेतृत्व का विश्लेषण कीजिए। अपने उत्तर की व्याख्या महात्मा गांधी के उदाहरण से कीजिए।

(Analyze leadership. Illustrate your answer by citing the example of Mahatma Gandhi.)

5. नेतृत्व में कौन-से मनोवैज्ञानिक कारक सन्निहित हैं ? क्या नेता पैदा होते हैं या बनाये जाते हैं ?

(What are the psychological factors involved in leadership ? Are leaders born or made ?)

6. व्याख्या कीजिए कि नेता जन्म से होते हैं या बनाये जाते हैं। निरंकुशात्मक और प्रजातन्त्रात्मक प्रकार के नेतृत्व की विशेषताओं की विवेचना कीजिए।

(Discuss whether leaders are born or made. Describe the characteristics of authoritarian and democratic types of leadership.)

7. प्रजातन्त्रात्मक और निरंकुशात्मक प्रकार के नेतृत्व में भेद कीजिए। भारतीय उदाहरण दीजिए।

(Distinguish between democratic and authoritarian types of leadership. Give Indian examples.)

8. नेतृत्व की परिभाषा कीजिए। नेता और (अ) आन्दोलनकर्ता, (ब) लोक नेता (प्रसिद्ध कल्पित वक्ता), (स) अधिकार के प्रतिनिधि का अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(Define leadership, Draw a clear distinction between leader and (a) agitator, (b) demagogue, (c) agent of authority.)

9. नेतृत्व क्या है ? परम्परात्मक, प्रजातन्त्रात्मक और अनन्त नेतृत्व में भेद कीजिए।

(What is leadership ? Distinguish between traditional, democratic, and dictatorial leadership.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

10. नेतृत्व के विभिन्न प्रकारों का पूर्ण विवरण दीजिए।
(Describe fully the different types of leadership.)

11. गांधी या नेहरू के व्यक्तित्व एवं भारत के नेतृत्व के प्रमुख लक्षण स्पष्ट रूप से लिखिए।
(Bring out clearly the salient features of Gandhi or Nehru's personality and leadership of India.)

12. कथन की समीक्षा कीजिए : "जनसाधारण उस संस्कृति को रखते हैं जिनके अन्तर्गत नेतृत्व के विशेष कार्य आश्रित होते हैं।"
(Comment on the statement : "The masses carry the culture within which the special functions of leadership rest.")

13. "नेहरू एक प्रजातान्त्रिक के वेश में एक अधिनायक थे।" इस कथन की व्याख्या महान नेता के जीवन एवं कार्यों से उदाहरण लेते हुए वैज्ञानिक रूप से कीजिए।
("Nehru was a dictator in the garb of a democrat." Discuss this statement scientifically by drawing heavily from the life and works of the great leader.)

14. नेतृत्व की परिभाषा कीजिए और नेतृत्व के विभिन्न सिद्धान्तों की भी विवेचना कीजिए।
(Define leadership and also discuss the various theories of leadership.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

34

भीड़ व्यवहार

(Crowd Behaviour)

भीड़ व्यवहार बड़ा विचित्र होता है। अकेला व्यक्ति उस प्रकार का व्यवहार करता। जैसा कि वही व्यक्ति भीड़ में विचित्र एवं रोमांचकारी व्यवहार करता भीड़ एक नवीन उत्तेजना उत्पन्न करती है।

समूह या मनुष्यों के गुट संगठन की दृष्टि से दो प्रकार के होते हैं। एक त और दूसरा असंगठित। संगठित समूह को समितियों के नाम से पुकारते हैं। विषय में विस्तार में प्रकाश डाला जा चुका है।[1] दूसरे प्रकार के समूह का र बड़ा ही विचित्र होता है। यह भी शारीरिक सम्बन्ध के आधार पर दो भागों टा जा सकता है। एक वे समूह जो शारीरिक सम्बन्ध पर आधारित होते हैं। लिए यह आवश्यक है कि समूह के सदस्य एक-दूसरे के इतने निकट हों कि र देख, सुन एवं वार्तालाप कर सकें। दूसरे वे जिनमें किसी शारीरिक सम्बन्ध वश्यकता नहीं होती, परन्तु मानसिक सम्बन्धों का आधार रहता है। किसी न विचार पर जिन व्यक्तियों के मस्तिष्क लगे होते हैं वे एक समूह बनाते हैं। मूह को जनता कहते हैं। जिन असंगठित समूहों का आधार शारीरिक उपस्थिति र्भर रहता है, उन्हें भीड़ कहते हैं।

इस अध्याय में भीड़ व्यवहार पर विशेषतया विचार करना है। भीड़ दो र की होती है—प्रथम, अनौपचारिक (informal) और द्वितीय, औपचारिक mal or institutionalized)। अनौपचारिक भीड़ में किसी भी प्रकार की था अथवा रीतियों का पालन नहीं होता; परन्तु औपचारिक भीड़ में कुछ रीतियों पालन होता है और एक निश्चित व्यवस्था पायी जाती है। औपचारिक भीड़ को तागण (audience) कहते हैं।

अनौपचारिक भीड़ और भी दो भागों में विभक्त की जा सकती है—प्रथम, क्रमणकारी भीड़ या उपद्रवी भीड़ और दूसरी, भयभीत भीड़ (panic crowd)।

[1] विस्तृत अध्ययन के लिए प्रो० रामबिहारी सिंह तोमर की पुस्तक समाजशास्त्र की रूपरेखा भाग 1 में प्राथमिक परिभाषाओं का अध्ययन पढ़िए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसको निम्न चार्ट द्वारा व्यक्त कर सकते हैं :

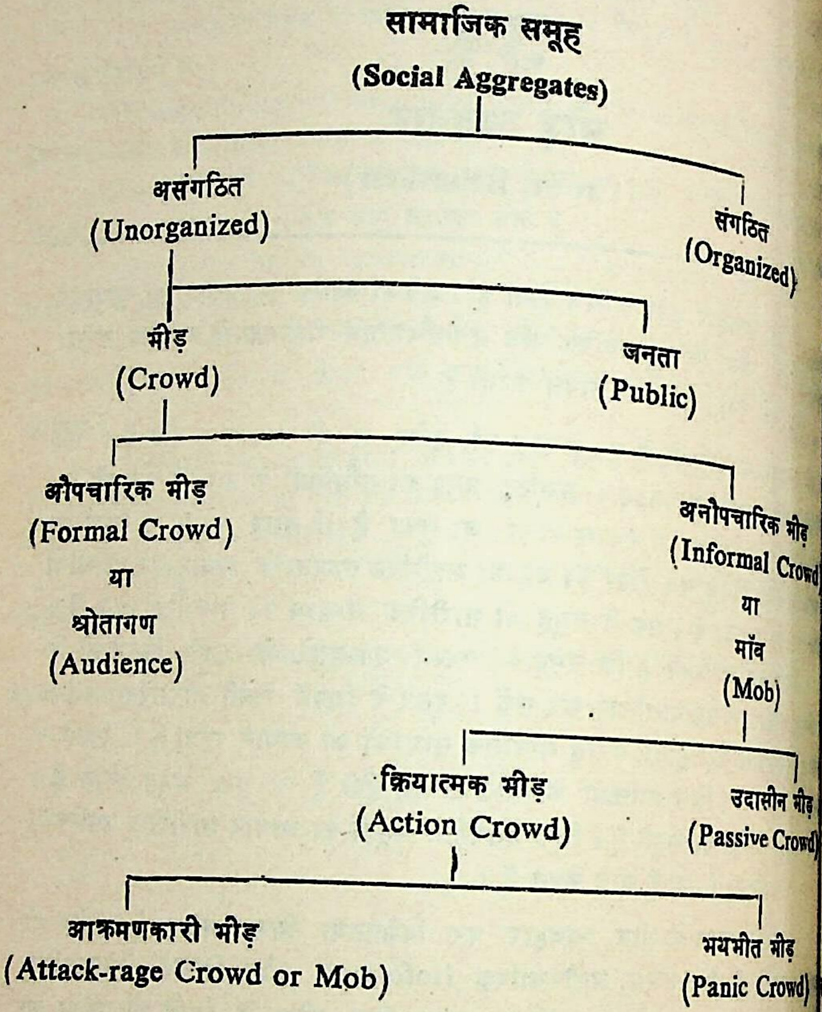

भीड़ का अर्थ
(Meaning of Crowd)

भीड़ शब्द का प्रयोग हम दैनिक जीवन में कई बार करते हैं। सन्ध्या हुई, पाँच बजे कि हजारों बाबू एवं अफसर, कुछ साइकिलों पर, लोकसभा एवं केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से निकलकर लोकसभा मार्ग पर चलते हुए दिखायी पड़ते हैं। हमारे मुख से निकल पड़ता है 'कितनी भीड़ है', परन्तु मनोवैज्ञानिक अर्थ में इसे भीड़ नहीं कह सकते। किम्बाल यंग ने लिखा है, "भीड़ मनुष्यों के उस समूह को,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...या सामान्य विचार के चारों ओर एकत्रित होता है, कहते हैं।[1] उनके अनु-
...वह समूह है जो किसी एक विचार या कार्य की ओर केन्द्रित होता है।
...लिए दो साइकिलों में भिड़न्त हो जाती है और तमाम लोग उनके झगड़े को
...लिए खड़े हो जाते हैं, यह देखने वालों का समूह भीड़ कहलायेगा। इसकी
...चुम्बक के चारों ओर छितरे हुए लोहकणों से की जा सकती है। केवल मनुष्यों
...एक भीड़ का निर्माण नहीं कर सकता। इसके लिए किसी न किसी सामान्य
...की ओर आकर्षित होना एक अत्यन्त आवश्यक तत्त्व है।

'भीड़' शब्द का प्रयोग विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से किया है। ले बां
...) ने भीड़ शब्द का प्रयोग बड़े ही विस्तृत अर्थों में किया है। उसके अनुसार
...उपस्थिति आवश्यक नहीं है। उसका विचार है कि भीड़ के लिए केवल
...यक तत्त्व यह है कि कुछ लोगों की भावनाएँ और विचार एक दिशा की
...चाहिए और अन्त में एक सामूहिक मस्तिष्क का निर्माण होना चाहिए।
...र्गत भीड़, जनता, श्रोतागण, इत्यादि सभी आ जाते हैं। सर मार्टिन कोनवे
(Martin Conway) ने तो भीड़ शब्द से किसी भी उस समूह को, जो पृथक
...अस्तित्व रखता हो, समझा। इसके अन्तर्गत आक्रमणकारी भीड़, श्रोतागण,
...साम्राज्य, राष्ट्र इत्यादि सभी आ जाते हैं।

आधुनिक विचारधारा के अनुसार हम इस शब्द का प्रयोग इन विस्तृत
...नहीं करते। भीड़ के लिए आवश्यक है कि व्यक्तियों का एक समूह हो और
...शारीरिक उपस्थिति हो एवं किसी एक विचारधारा या कार्य पर ध्यान
...हो।

भीड़ की परिभाषाएँ
(Definitions of Crowd)

(1) **किम्बाल यंग की परिभाषा (Definition of Kimball Young)**—
...यंग ने भीड़ की परिभाषा करते हुए लिखा है, "भीड़ मनुष्यों के उस समूह,
...या सामान्य विचार के चारों ओर एकत्रित होता है, को कहते हैं।"[2] किम्बाल
...सन् 1957 के संस्करण में इस परिभाषा को और अधिक विस्तृत कर दिया
...ने लिखा है, "भीड़ एक ऐसी सामूहिकता है जिसमें किसी सामान्य ध्यान-

1. ...crowd is a gathering of a considerable number of persons ...around a center or point of common attention." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 387, Routledge & Kegan paul ...English Ed., Fifth Impression (1953).
2. ...crowd is a gathering of a considerable number of persons ...around a centre or point of common attention." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 387.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बिन्दु के प्रति एक सीमित स्थान के अन्दर प्रतिक्रिया करते हुए व्यक्तियों की अनि... रूप से बहुत बड़ी संख्या सम्मिलित हो।"[1]

किम्बाल यंग ने मीड़ के लिए दो आवश्यक तत्त्व बताए हैं—प्रथम, ... स्थान पर बहुत बड़ी व्यक्तियों की संख्या और द्वितीय, किसी सामान्य ध्यान-बिन्दु पर केन्द्रीकरण। मीड़ के लिए मनुष्य समूह तो होना ही चाहिए, साथ ही साथ समूह का किसी वस्तु या उद्देश्य पर ध्यान भी केन्द्रित होना चाहिए। ये मीड़ ... मनोवैज्ञानिक विशेषता है। लाखों व्यक्ति भी एक स्थान पर एकत्रित होकर भीड़ ... निर्माण नहीं कर सकते जब तक कि उनका ध्यान किसी वस्तु पर केन्द्रित न हो ... मान लीजिए, सड़क पर एक बस और जीप की टक्कर हो जाये और एक या अधिक व्यक्ति जख्मी हो जायें या मर जायें और वहाँ पर लोग इकट्ठे हो जायें और उनका ध्यान दुर्घटना पर केन्द्रित हो जाये, तो वह मीड़ कहलायेगी।

(2) थाउलस की परिभाषा (Definition of Thouless)—थाउलस ... अनुसार, "मीड़ एक अस्थिर, एक-दूसरे को स्पर्श करता हुआ समूह होता है जो कि ... सामान्य रुचि के फलस्वरूप बन जाता है और यहाँ तक असंगठित होता है कि उसकी सीमाएँ पारगम्य होती हैं।"[2] थाउलस ने मीड़ की प्रमुख विशेषताओं का सुन्दर चि... किया है। इस परिभाषा के अनुसार मीड़ की विशेषताएँ हैं—(i) मीड़ एक अस्थिर एवं अस्थायी समूह होता है। (ii) मीड़ में सम्बन्ध स्पर्श करता हुआ होता है ... इसका अभिप्राय यह है कि व्यक्ति बहुत पास-पास कन्धे से कन्धे मिलता हुआ ... है। मीड़ में लोग दूर-दूर छिटके हुए नहीं होते अपितु बहुत पास-पास होते हैं। (iii) मीड़ एक असंगठित समूह होता है, उसमें किसी प्रकार का भी संगठन नहीं पाया जाता। (iv) मीड़ स्वतः बनती है। लोग आते जाते हैं और शामिल होते जाते हैं। (v) मीड़ बनने के लिए यह आवश्यक है कि वह किसी सामान्य रुचि के चारों ओर केन्द्रित हो। बिना इस सामान्य रुचि के मीड़ का निर्माण नहीं होता है। यह मीड़ ... मनोवैज्ञानिक विशेषता एवं अनिवार्यता होती है।

(3) मैकाइवर की परिभाषा (Definition of MacIver)—मैकाइवर के अनुसार, "मीड़ उन मनुष्यों, जो एक-दूसरे के प्रत्यक्ष, अस्थायी एवं असंगठित सम्बन्ध में पाये जाते हैं, का शारीरिक घना संगठन है।"[3] मैकाइवर ने भीड़ की विशेषताओं ...

---

[1] "The crowd is a collectivity involving essentially a considerable number of individuals responding within a limited space to some common object of attention." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, Revised Edition (1957), p. 286.

[2] "A crowd is a transitory contiguous group, unorganised with completely permeable boundaries spontaneously formed as a result of some common interest." Thouless.

[3] "Crowd is a physically compact organisation of human beings brought into direct, temporary and unorganised contact, with one another." MacIver.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किया है। उनके अनुसार भीड़ मनुष्यों का समूह है जो अस्थायी, असंगठित सम्बन्धों से विभूषित होता है। मैकाइवर ने अपनी परिभाषा में भीड़ के करण पर बल नहीं दिया है। किसी सामान्य रुचि पर केन्द्रीकरण अनिवार्य है।

(4) केन्ट्रिल की परिभाषा (Definition of Cantrill)—केन्ट्रिल के "भीड़ उन व्यक्तियों का जमघट समूह है, जिन्होंने थोड़े समय के लिए अपने मान मूल्यों से तादात्म्य कर लिया हो और जो समान उद्वेग व्यक्त कर रहे हों।"[1] ने भीड़ के मानसिक तत्त्वों को ही व्यक्त किया है और शारीरिक विशेषताओं लेख नहीं किया है। इस दृष्टि से केन्ट्रिल की परिभाषा अधूरी है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से भीड़ का अर्थ कुछ स्पष्ट हुआ है। अब हम भीड़ श्यक तत्त्वों का विश्लेषण करेंगे।

भीड़ के आवश्यक तत्त्व
(Essential Elements of a Crowd)

क्रियात्मक भीड़ और श्रोतागण दोनों का समूह ही भीड़ कहलाता है। इसके क तत्त्व इस प्रकार हैं—

(1) अभिस्पन्दन (Polarisation)—जिस प्रकार चुम्बक के चारों ओर हुए लोहे के टुकड़ों का आकर्षण चुम्बक होता है उसी प्रकार समूह के सभी ों का ध्यान एक केन्द्र पर केन्द्रित होना चाहिए। भीड़ में अभिस्पन्दन होता है। रण के लिए, कोई व्यक्ति एक सुन्दर ध्वनि बजा रहा है और श्रोतागण उसे रहे हैं। या कोई नेता आता है तो उसे देखने के लिए भीड़ जमा हो जाती है। एकत्रित भीड़ का ध्यान एक ही ओर केन्द्रित है, अतः वह भीड़ कहलायेगी। इसे शब्दों में भी व्यक्त किया जा सकता है कि एक सामान्य रुचि, ध्यान या कार्य से वस्तु पर केन्द्रीकरण की प्रक्रिया को अभिस्पन्दन (polarisation) कहते हैं।

(2) अस्थिर प्रकृति (Transitory Nature)—स्वतः एकदम किसी तरफ केन्द्रित हो जाता है इसीलिए यह अत्यन्त अस्थिर प्रकृति होती है। अस्थिरी- से स्पष्ट है कि यह बहुत अल्प समय में बनकर छिन्न-भिन्न हो जाती है। इतनी अस्थिर होती है कि समूह शब्द का प्रयोग भी इसके लिए करना अनुचित मले ने लिखा है, "इसकी रचना इतनी अव्यवस्थित है कि हम इसे एक समूह तभी कह पाते हैं जबकि इस शब्द के अर्थ को कुछ विस्तृत करते हैं।"[2] सड़क

[1] "Crowd is a congregate group of individuals who have temporarily identified themselves with common values and who are expressing similar emotions." Cantrill.

[2] "Its texture is so loose that we may speak of it as a 'group' only by stretching his term somewhat." F. E. Lumley, *Principles of Sociology*, p. 191. McGraw-Hill Book Company, New York and London, Second Edition, Ninth Impression (1935).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर दो लोगों में झगड़ा हो गया और इस केन्द्र के चारों ओर भीड़ एकत्रित हो गयी। जरा देर में दोनों लड़ने वाले चल दिये और भीड़ भी तितर-बितर हो गयी। नहीं इस भीड़ में कौन था और कौन नहीं।

(3) असंगठित (Unorganised)—भीड़ असंगठित होती है। इसके पूर्व निश्चित उद्देश्य एवं नियम नहीं होते। इसके नेता भी निश्चित नहीं होते। इसकी कोई निश्चित सदस्यता भी नहीं होती। भीड़ के सदस्यों को पूर्व निश्चित उद्देश्य एवं कार्य से एकत्रित नहीं किया जाता, न इनमें किसी प्रकार के व्यवहारों के स्वरूप में, संगठन ही होता है। जिसके जो मन में आता है वह वैसा करता है।

(4) एक सामान्य उद्वेग (A Common Emotion)—भीड़ के लिए आवश्यक है कि उनमें एक सामान्य उद्वेग पाया जाय। यदि उनके मस्तिष्क में भाव और उनके मस्तिष्क की बनावट समान नहीं है तो वे एक भीड़ का निर्माण नहीं कर सकते। एक वक्ता भाषण दे रहा है और यदि उसको सुनने वाले उसकी बात को नहीं समझते और उनमें सम उद्वेग उत्पन्न नहीं होता तो ऐसा समूह भीड़ नहीं कहलायेगा। अतः भीड़ के लिए सामान्य उद्वेग और विचारों का उत्पन्न होना और समस्या में रुचि रखना आवश्यक तत्त्व है।

(5) पारस्परिक प्रभाव (Mutual Influence)—भीड़ के लिए मनुष्यों की संख्या उतनी आवश्यक नहीं जितनी कि पारस्परिक प्रभाव की स्थिति। भीड़ में सदस्यों की मानसिक स्थिति एक विशेष प्रकार की हो जाती है। इस मानसिक स्थिति के फलस्वरूप सदस्य एक-दूसरे को अपने व्यवहारों तथा विचारों से उत्तेजित करते हैं और वे एक-दूसरे के व्यवहारों से प्रभावित एवं उत्तेजित भी होते हैं। सुझाव ग्रहण क्षमता अत्यधिक भयंकर रूप में कार्य करने लगती है।

(6) स्थानीय वितरण (Spatial Distribution)—भीड़ के सदस्य एक स्थान पर पाये जाते हैं। उनकी शारीरिक उपस्थिति अनिवार्य है। यद्यपि आमने-सामने (face to face) का सम्बन्ध सरलता से सम्भव नहीं है, तथापि कन्धे से कन्धे का सम्बन्ध भीड़ में आवश्यक होना चाहिए।

(7) सामूहिक शक्ति की अनुभूति (Sense of Mass Strength)—भीड़ में सदस्यों को सामूहिक शक्ति का अनुभव होने लगता है। प्रत्येक सदस्य अपनी शक्ति का ही केवल अनुभव नहीं करता, बल्कि वह सम्पूर्ण भीड़ के सदस्यों की शक्ति को अपनी शक्ति मान बैठता है। इसके कारण उसका आत्मविश्वास कई गुना बढ़ जाता है।

अनौपचारिक भीड़
(Informal Crowd)

अनौपचारिक भीड़ दो प्रकार की होती है—प्रथम, क्रियात्मक और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

crowd) और दूसरी उदासीन, भीड़ (passive crowd)। उदासीन भीड़ होती है जो केवल देखती या सुनती है; परन्तु स्वयं कोई कार्य नहीं करती, बड़े-बड़े नेताओं एवं महापुरुषों को देखने एवं सुनने के लिए एकत्रित भीड़, किसी के चारों ओर एकत्रित व्यक्ति, सिने-भवन के सम्मुख लगे पोस्टरों को पढ़ने के लिए एकत्रित भीड़ इत्यादि। क्रियात्मक भीड़ वह भीड़ है जो उद्वेगों हुई होती है और कुछ न कुछ कार्य करती है। इसको दो विभागों में विभक्त जा सकता है—एक, आक्रमणकारी भीड़ (attack-rage crowd) और दूसरी, भीड़ (panic crowd)। प्रथम के उदाहरण लूटमार, दंगे, सामूहिक आक्रमण हिक हत्याएं हैं। दूसरी के उदाहरण सेना के भागते हुए सिपाही, किसी हॉल लग जाय और उससे बचकर भागने वाले व्यक्ति इत्यादि हैं।

क्रियाशील भीड़
The Action Crowd)

क्रियाशील भीड़ की परिभाषा हम ऊपर कर ही चुके हैं। अब हम इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालेंगे।

क्रियाशील भीड़ का मनोविज्ञान
Psychology of the Action Crowd)

क्रियाशील भीड़ का मनोविज्ञान क्या है? इसका अभिप्राय यही है कि क्रिया- भीड़ की क्या मानसिक विशेषताएँ हैं। पहले सर्वसाधारण रूप से हम इसकी करेंगे, फिर विशिष्ट रूप से इसकी मानसिक विशेषताओं पर प्रकाश डालेंगे।

भीड़ के पास विचारने की शक्ति नहीं रहती। वह केवल उन्हीं बातों पर करती है जो उसके अपने स्वार्थ के होते हैं। मार्टिन ने लिखा है, "भीड़ के सामने कोई समस्याएँ नहीं होतीं। वह अपना मामला पहले से ही बन्द कर है। भीड़ केवल वही विश्वास करती है जो वह करना चाहती है और कुछ भी विश्वास करती)।"[1]

सीगहले (Sighele) ने भीड़ की इस अवस्था का कारण सुझाव बताया टार्डे ने इसे अनुकरण बताया है। मैकडूगल ने 'प्राचीन निष्क्रिय सहानुभूति' mitive passive sympathy) बताया है। इस प्रकार सुझाव, अनुकरण और नुभूति तीनों ही भीड़ की मानसिक विशेषताएँ हैं। आल्पोर्ट ने 'सामाजिक कार्य' (social facilitation) पर विशेष बल दिया है। मिलर एवं डोलर्ड तथा

[1]"To the crowd mind, as such, there are no problems. It has closed its case beforehand. The crowd believes what it wants to believe and nothing else." E. D. Martin, *The Behaviour of Crowds.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्ल्यूमर (Blumer) ने 'चक्रीय प्रतिक्रिया' (circular reaction) इसकी ... मानसिक विशेषता बतायी है। वास्तव में भीड़ में ये सभी मानसिक वि... पायी जाती हैं। अब हम स्पष्ट रूप से भीड़ की मानसिक विशेषताओं पर ... डालेंगे।

क्रियाशील भीड़ की मानसिक विशेषताएँ

(1) बुद्धि का निम्न स्तर (Low Degree of Intelligence)—भी... प्रमुख एवं आश्चर्यजनक विशेषता यह है कि बुद्धिमान से बुद्धिमान व्यक्ति भी... में ऐसे कार्य करते हैं जो उनकी बुद्धि से कहीं निम्न स्तर के होते हैं। भीड़... निम्न स्तर की बुद्धि रखती है। जब समितियाँ, लोकसभाएँ और राज्यसभाएँ, ... किसी राष्ट्र के बुद्धिमान राष्ट्रनायक होते हैं, त्रुटिपूर्ण निर्णय कर सकती हैं तो ... रण भीड़ का क्या कहना। भीड़ के सदस्य उद्वेगों में बह जाते हैं और उन्हें ... स्तर के तर्क शीघ्र समझ में आ जाते हैं। यह उनकी बुद्धि के निम्न स्तर के ... प्रमाण है।

भीड़ के निम्न स्तर के होने का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण (Psycholo... Explanation of the Low Degree of Intelligence of the Crowd)

(अ) निम्न स्तर की बुद्धि वालों का बहुमत—भीड़ में सब प्रकार के व्यक्ति होंगे ... अधिकतर व्यक्ति निम्न स्तर की बुद्धि वाले होंगे। भीड़ से यदि कुछ करवाना है ... ऐसी बात करनी चाहिए जो सबकी समझ में आ जाय और वे उसकी प्रशंसा ... निम्न स्तर की बुद्धि वालों का बहुमत होता है अतः निम्न स्तर के तर्क दिये जाते हैं ... इस कारण बुद्धिमान व्यक्तियों की बुद्धि का स्तर भी गिर जाता है।

(आ) सामूहिक विचार-विमर्श असम्भव है—दूसरा कारण भीड़ में बुद्धि ... निम्न स्तर के होने का यह है कि भीड़ में सामूहिक विचार-विमर्श नहीं किया ... सकता। विचार-विमर्श, स्वतन्त्र वाद-विवाद एवं विचारों का आदान-प्रदान ... तत्त्व हैं; परन्तु भीड़ में यह असम्भव है। नक्कारखाने में तूती की आवाज़ ... सुनता है?

(इ) सुझाव-ग्रहण क्षमता बढ़ जाती है—भीड़ में सुझाव-ग्रहण क्षमता ... जाती है। जो कुछ भी मत या विचार भीड़ की ओर से आता है वह ... होता है।

(ई) उत्तेजना बढ़ जाती है—भीड़ में उत्तेजना अत्यधिक बढ़ जाती है ... वह विचार करने की शक्ति को समाप्त कर देती है। इस कारण किसी ... विचार नहीं किया जा सकता।

(उ) अनुकरण—भीड़ में प्रत्येक व्यवहार का अनुकरण बड़ी तीव्र ... होता है। इसके कारण जो भी कार्य प्रारम्भ हुआ उस पर बिना किसी विचार ... लोग अनुकरण करते जाते हैं। इस प्रकार भीड़ में लोग बुद्धि से काम नहीं लेते। ... कारणों से भीड़ में बुद्धि का स्तर गिर जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) सामाजिक सौकार्य (Social Facilitation)—भीड़ में सामाजिक कार्य अत्यधिक रूप में पाया जाता है। सामाजिक सौकार्य उस प्रक्रिया को कहते जिसमें एक व्यक्ति की प्रतिक्रियाएँ दूसरे व्यक्तियों के उपस्थित होने के कारण क तीव्र गति से होती हैं। कन्धे से कन्धे की रगड़ लगने से आँख और कान की तथा सुनने की क्रिया में तीव्रता आ जाती है। ये सब प्रक्रियाओं की गति को देते हैं। मिलकर (Neal E. Miller) और डोलर्ड (John Dollard) इसे की प्रेरणा (crowd stimuli) कहते हैं। भीड़ में व्यक्ति एकत्रित होते हैं और सरे को देखते हैं। इसके कारण उनके अन्दर कार्य करने की शक्ति बढ़ जाती ड़ में सामाजिक सौकार्य अत्यधिक बढ़ जाता है। इसके फलस्वरूप भीड़ कुछ करने को तैयार हो जाती है। ले बाँ (LeBon) ने लिखा है, "एक भीड़ में क स्थायीभाव या कार्य फैलने वाला होता है और इतना अधिक फैलने वाला कि व्यक्ति तुरन्त बड़ी तत्परता से अपना व्यक्तिगत स्वार्थ सामूहिक स्वार्थ के लिए देता है।"[1]

(3) उत्तेजना (Emotionalism)—भीड़ उत्तेजना से पूर्ण होती है। जना के कारण सुझाव-ग्रहण-क्षमता बढ़ जाती है। भीड़ की एकता का प्रमुख ण उत्तेजना है। बर्नार्ड ने लिखा है, "यह प्रायः कोई शक्तिशाली उत्तेजना या या विलक्षण प्रेरणा होती है जो भीड़ की एकता का निर्माण करती है।"[2] ने भी लिखा है, "वह आदिम प्राणी स्वतः हिंसा, क्रोध और उत्साह एवं वीरता रखता है।"[3]

उद्वेग द्वारा उत्तेजना इतनी बढ़ जाती है कि वह प्रत्येक कार्य को अति शीघ्र कार कर लेता है और यह अनुभव करता है कि उसकी शक्ति बढ़ गयी है। यदि हंसता है तो बहुत जोर से, यदि कुछ कहना चाहता है तो चिल्लाता है, यदि क्रोध ता है तो मदान्ध हो जाता है। इन सबके कारण उसकी मानसिक स्थिति ऐसी हो ती है कि वह किसी भी बात को तुरन्त स्वीकार करके कर डालता है।

(4) अचेतन प्रेरणाएँ (The Unconscious Impulses)—आक्रमण-री भीड़ केवल उद्वेगों एवं उत्तेजनाओं द्वारा ही प्रेरित नहीं होती, बल्कि अचेतन

---

[1] "In a crowd every sentiment and act is contagious and contagious to such a degree that an individual readily sacrifices his personal interest to the collective interest." LeBon, *The Crowd*.

[2] "It is usually some strong emotion or curiosity impulse which integrates the crowd." L. L. Bernard, *An Introduction to Social Psychology*, p. 458, Henry Holt & Co., New York (1926).

[3] He possesses the spontaneity, the violence, the ferocity and also the enthusiasm and heroism of primitive beings." LeBon, *The Crowd*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Saraswati Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रेरणाएँ भी इसे प्रेरणा देती हैं। साधारण अवस्था में इन अचेतन प्रेरणाओं को व्यक्ति दबा देता है। इनका श्रोता अचेतन होता है। सिगमँड फ्रायड ने इन प्रेरणाओं को इड-प्रेरणाएँ (Id-impulses) कहा है। मनुष्य भीड़ में एक विचित्र अवस्था में होता है। वह उस स्वप्नावस्था में होता है जिसमें विचार और कार्य दोनों में मनुष्य हो जाता है। इसके कारण सत्यता से दूर वह स्वच्छन्द एवं अनुत्तरदायित्व की भावना का अनुभव करता है। जैसे, स्वप्न में कोई व्यक्ति कुछ कार्य करता है, और आँख खुलते ही वह उस पर विचार करके आश्चर्य करता है। उसी प्रकार भीड़ में किये गये कार्यों पर आश्चर्य करना पड़ता है। इसका तात्पर्य यहीं नहीं कि भीड़ में मनुष्यों को यह पता नहीं चलता कि वे क्या कर रहे हैं, बल्कि सारी बौद्धिक एवं सही व गलत सामाजिक धारणायें, प्रेम, दयालुता इत्यादि हानि करने की प्रेरणा द्वारा दबा दिये जाते हैं और उद्वेगवश होकर भीड़ में सारे कार्य मनुष्य कर जाते हैं।

(5) **उत्तरदायित्व की भावना का अभाव** (Lack of the Sense of Responsibility)—भीड़ के व्यक्तियों में उत्तरदायित्व की भावना का अभाव रहता है। इस अभाव के कई कारण हैं। प्रथमतः प्रत्येक व्यक्ति उत्तरदायित्व को सम्पूर्ण भीड़ पर डाल देता है। उत्तरदायित्व का विभाजन हो जाता है। भीड़ में कौन किसको पहचानता है। इसके कारण प्रत्येक व्यक्ति सोचता है कि जो कुछ भी मैं कर रहा हूँ उसे कौन देखता है और यदि कोई देखेगा भी तो उसका उत्तरदायित्व मेरे ऊपर सिद्ध करना बड़ा कठिन कार्य होगा। मैकडूगल ने लिखा है कि अनुत्तरदायित्व की भावना केवल इस कारण से ही नहीं है, बल्कि आत्मसम्मान की भावना के लोप हो जाने के कारण है। जब आत्मसम्मान की भावना नहीं रहती तो मनुष्य कुछ भी कर सकता है; क्योंकि उसे अपमान का कोई डर नहीं रहता। भीड़ में व्यक्तियों के पास अन्तःकरण नहीं होता, इस कारण वे बुरे कार्यों को करने में तनिक भी नहीं हिचकते। अनुत्तरदायित्व की भावना इस कारण भी आ जाती है कि भीड़ अपने को सर्वशक्तिमान समझने लगती है। भीड़ के व्यक्ति अपने को अज्ञात समझते हैं। इस अज्ञात होने की अवस्था के कारण वे कुछ भी कर सकते हैं। रॉस ने उचित ही लिखा है, "अज्ञात होने की अवस्था के मुखावरण के कारण लोग अपनी भावनाओं को स्वतन्त्र प्रदर्शन करने के लिए अपने को स्वतन्त्र अनुभव करते हैं।"[1]

(6) **शक्ति का अनुभव** (Sense of Power)—भीड़ एक विचित्र शक्ति का अनुभव करती है। उसके अन्दर यह भावना विकसित हो जाती है कि वह सर्वशक्तिमान है और जो कुछ चाहे कर सकती है। भीड़ का नेता शक्ति के इस अनुभव के कारण ऐसे सुझाव देता है और भीड़ उसे स्वीकार कर लेती है, जिसे साधारण

---

[1] "Masked by their anonymity, people feel free to give reign to the expression of their feelings." E. A. Ross, *Social Psychology*, p. 46.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...स्थिति में करने का स्वप्न भी नहीं देखा जा सकता। बरहम ने उचित कहा है कि "When the little heart is big, a little sets it off."[1]

(7) सुझाव-ग्रहण क्षमता बढ़ जाती है (Heightened Suggestibility)—भीड़ में सुझाव-ग्रहण क्षमता अत्यधिक बढ़ जाती है। सुझाव-ग्रहण क्षमता के विषय में पहले लिख चुके हैं। भीड़ में सुझाव-ग्रहण क्षमता बढ़ने के तीन कारण हैं: (1) भीड़ की समूह के नाते प्रतिष्ठा बढ़ जाती है, (2) नेता की प्रतिष्ठा पराकाष्ठा पर होती है, (3) उद्वेगों से पूर्ण होने के कारण कोई भी विचार बिना सोच-विचार स्वीकार कर लिए जाते हैं।

(8) पारस्परिक उत्तेजना (Inter-stimulation)—भीड़ में पारस्परिक उत्तेजना भी एक महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। दूसरों के व्यवहार को देखकर वैसा ही व्यवहार करने के लिए उत्तेजना किसी एक व्यक्ति को मिलती है। उस व्यक्ति के व्यवहार से उत्तेजना अन्य किसी को मिलती है। यह चक्र एक से दूसरे के पास चलता रहता है और सब एक-दूसरे से उत्तेजना ग्रहण करते रहते हैं। सिनेमा में एक व्यक्ति सीटी बजाता है तो अन्य व्यक्ति भी बजाने लगते हैं। इन लोगों से उत्तेजना प्राप्त करके पहला व्यक्ति और जोर से सीटी बजाता है और इस व्यक्ति से उत्तेजना प्राप्त करके अन्य व्यक्ति भी सीटियाँ बजाते हैं। यह क्रम चलता रहता है। इसके कारण उत्तेजना का चढ़ाव बढ़ जाता है। मैकडूगल ने लिखा है, "प्रत्येक व्यक्ति (भीड़ में) सब ओर भय के लक्षण, भय के कारण, श्वेत एवं विकृत चेहरे, फैली हुई पुतलियाँ, ऊंचे स्वर की कांपती हुई वाणियाँ और अपने साथियों की भयपूर्ण चिल्लाहटों को देखता है और ऐसे प्रत्येक ज्ञान के अनुभव के साथ-साथ उसकी स्वयं की प्रेरणाएं और उद्वेग उग्ररूप धारण कर लेते हैं।"[2]

(9) सहज विश्वास (Credulity)—भीड़ अत्यधिक सहज विश्वासी होती है। भीड़ के व्यक्ति सुझाव-ग्रहण क्षमता के बढ़ जाने के कारण विचारशक्ति को खो देते हैं। रॉस ने लिखा है, 'विवेकशील विश्लेषण और परीक्षा का कोई प्रश्न नहीं उठता। जिन शक्तियों के कारण हम शंका करते हैं वे सो जाती हैं।"[3]

---

1. Quoted by W. J. H. Sprott, *Social Psychology*, Methuen & Co. Ltd., London (1952), p. 59.

2. "Each man (in a crowd) perceives on every hand the symptoms of fear, the blanched distorted faces, the dilated pupils, the high-pitched trembling voices, and the screams of error of his fellows and with each such perception his own impulses and his own emotion rise to a higher pitch of intensity." W. Mc Dougall, '*The Group Mind*, Cambridge (1920), p. 25.

3. "Rational analysis and test are out of question. The faculties, we doubt with, are asleep." E. A. Ross, *Social Psychology*, p. 55.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके कारण भीड़ सहज विश्वासी होता है। सहज विश्वासी होने के कारण अफवाहें भीड़ द्वारा शीघ्र मान ली जाती हैं और उसके अनुसार लोग कार्य करने लगते हैं। अफवाहें फैलाने के तीन प्रमुख साधन हैं :

(1) मौखिक रूप से—यह सबसे उत्तम साधन है।

(2) पत्र, टेलीफोन और तार द्वारा, और

(3) समाचार-पत्र, रेडियो, चलचित्र, पत्रिकाएँ और पुस्तकों के द्वारा।

(10) **विचार शक्ति का अभाव** (Lack of Volition)—भीड़ के कार्य अविवेकशील होते हैं। वे बिना सोचे-समझे प्रत्येक कार्य करते हैं। उचित कार्य वह कार्य होता है जो सोच-समझकर किया जाता है। भीड़ में सोचने की शक्ति नहीं होती, इस पर हम पहले ही प्रकाश डाल चुके हैं।

(11) **अस्थायी उद्वेग और विचार** (Instable Emotions and Ideas)—भीड़ के विचार और उद्वेग अस्थायी होते हैं। किसी विशेष कार्य के लिए भीड़ अपना विचार बनाये तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह उसे पूर्ण करेगी ही। यदि मार्ग में विचार परिवर्तित हो गया तो उस परिवर्तित विचार के अनुसार कार्य करने लगेगी। विचारों का परिवर्तन अति शीघ्र होता है। यहाँ तक कि उसके नेताओं तक की स्थिति डांवाडोल रहती है। न जाने कब तक भीड़ उसका कहना माने। कभी-कभी तो क्षणों में परिवर्तन होते हैं। रॉस ने लिखा है, "एक क्षण जो उसका (भीड़ का) नायक है, दूसरे क्षण वही उसका शिकार (बलि) हो सकता है।"[1]

(12) **नेता का अनुसरण** (Following of the Leader)—भीड़ में नेता का प्रमुख स्थान रहता है और वह भीड़ को अत्यधिक उत्तेजना प्रदान करता है। प्रतिष्ठित-सुझाव के कार्य का उसमें अनुपम दृश्य मिलता है। नेता निम्न प्रकार की उत्तेजनाएँ प्रदान करता है :

(1) वह भीड़ का केन्द्र बन जाता है। इस केन्द्र के कारण भीड़ तितर-बितर नहीं हो पाती।

(2) वह लोगों के अस्पष्ट विचारों एवं भावनाओं को स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करता है और वही बाद में कार्य करने के लिए उत्तेजना देता है।

(3) वह लोककथाओं, कहानियों एवं दूसरी ऐसी परिस्थितियों का विवरण देता है जो कि उद्वेगों को उत्तेजित करती हैं।

(4) वह सामूहिक क्रिया के लिए दिशा निर्देशित करता है।

(5) कभी-कभी वह स्वयं कार्य का नेतृत्व करता है।

भीड़ में नेता का कार्य अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। लेपियर और

---

1 "Its hero one moment may be its victim the next." *Ibid*, p. 54.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...र्थ लिखते हैं, "इस प्रकार नेतृत्व न लाभदायक ही है और न ही इसके ...रीत ही।"[1]

मीड़ को किसी के नेतृत्व की अत्यधिक आवश्यकता रहती है। भीड़ गुलामों ...समान होती है। ले बाँ ने लिखा है, "भीड़ एक गुलाम झुण्ड है, जो अपने स्वामी ...और कभी कुछ नहीं कर सकता।"[2]

भीड़ में ... के महत्त्व को स्वीकार करते हुए किम्बाल यंग ने भी लिखा है, ...याशील भीड़ में नेता का कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अन्य बातों के साथ, वह ...ठा सुझाव करने का कार्य करता है।"[3]

भीड़ नेता के साथ जितनी सहमत होती है उतनी ही जोर से चिल्लाती है ...र इसके कारण नेता का प्रभाव बढ़ता जाता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, ...उतना ही हम सहमत होते हैं, उतना ही चिल्लाते हैं, उतना ही हम आगे धक्का देते ...उतना ही अधिक, नेता के बताये हुए बाह्य व्यवहार को करने की शक्ति हो ...ती है।"[4]

(13) आत्म उत्तेजना (Self-stimulation)—हमें आत्म-उत्तेजना भी ...में प्राप्त होती है और वह एक प्रमुख कार्य करती है। नेता और दूसरे व्यक्तियों ...बात का अनुमोदन जब अपने अन्तःकरण द्वारा होता है तो उत्तेजना की आन्तरिक ...र दौड़ने लगती है।

(14) अन्तःप्रेरणा और चक्रीय प्रतिक्रिया (Inter-stimulation and ...cular Reaction)—भीड़ में एक-दूसरे के उद्वेगों से अन्तःप्रेरणा प्राप्त होती ...। प्रत्येक व्यक्ति चिल्लाता है और दूसरे व्यक्ति में प्रेरणा उत्पन्न करता है। थोड़ी ...वाज को दूसरा व्यक्ति बढ़ाता है और इसी प्रकार यह बढ़ती जाती है। मैकाइवर ...लिखा है, "यहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति भाव, भावना या जबानी अभिव्यक्ति को बढ़ाने ...वाला यन्त्र होता है।"[5]

---

1. "As such leadership is neither advantageous nor the reverse." Lapiere and Farnsworth, *Social Psychology*, McGraw Hill Publication, 3rd Edition (1949), p. 468.
2. "A crowd is a servile flock that is incapable of everdoing without a master." LeBon, *The Crowd*.
3. "In the action crowd, the role of a leader is highly important. Among other things, of course, he functions to produce prestige suggestion." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 300.
4. "The more we agree, the more we shout ; the more we push forward, the greater becomes the drive to carry on overtly in the direction indicated by the leader." *Ibid*, p. 301.
5. "Here each individual seems to function as amplifier of mood, of a feeling or, merely of a verbal expression" MacIver.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक व्यक्ति कुछ कहता है । दूसरा उससे उत्तेजित होकर और जोर से कहता है और यह प्रक्रिया इस प्रकार चलती रहती है । इसे हम चक्रीय प्रतिक्रिया (circular reaction) भी कह सकते हैं । चक्रीय प्रतिक्रिया शब्द की परिभाषा करते हुए कुप्पुस्वामी ने लिखा है :

"Circular reaction is a type of inter-stimulation by which the response of one individual reproduces the stimulation that has come from the other individual and is reflected back and inforces the stimulation." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 419.

(15) **भीड़ की अनैतिकता** (Immorality of the Crowd)—भीड़ अनैतिक होती है । बहुत से विद्वानों का मत है कि भीड़ में व्यक्ति आचार रहित हो जाते हैं और वे उत्तरदायित्व-हीन व्यवहार करते हैं । किम्बाल यंग ने लिखा है, "वह संयुक्त व्यवहार में केवल अनुरूपता की भावना ही नहीं पाता, बल्कि एक प्रकार की अभिमति भी पाता है ।"[1]

इस शक्ति का सहानुभूति से मदान्ध होकर एवं विचार शक्ति के लोप होने के कारण वह आचार रहित एवं अनैतिक व्यवहार करता है । व्यवहार समाप्त होने के उपरान्त जब भीड़ से पृथक वही लोग एकान्त में होते हैं तो अपने किये कार्यों पर स्वयं पश्चाताप करते हैं, परन्तु भीड़ में वे अपने व्यवहार को हर प्रकार से उचित सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं । सामाजिक निषेध समाप्त हो जाते हैं और भीड़ स्वच्छन्दता के सागर में लीन हो जाती है ।

कुछ विद्वानों का मत है कि भीड़ का व्यवहार नैतिक या अनैतिक दोनों ही प्रकार का हो सकता है । यह दिशा निर्धारण का कार्य नेता का है । अतः भीड़ को अनैतिक न कहना चाहिए । गिन्सबर्ग ने लिखा है, "भीड़ स्वतः न तो अच्छी है और न बुरी ही, परन्तु भीड़ एक प्रकार की या दूसरे प्रकार की, समयानुसार जिस प्रकार की भी उत्तेजना होती है, बन जाती है । भीड़ निर्दयी भी हो सकती है, परन्तु वह कृपालु और सहानुभूति से परिपूर्ण भी हो सकती है ।"[2]

गिन्सबर्ग का मत निस्सन्देह सत्य है, फिर भी यह कहना पड़ता है कि क्रियाशील भीड़ और विशेषतया आक्रमणकारी भीड़ अनैतिक होती है; क्योंकि उनक

---

1 "He finds in joint action not only a sense of conformity but a certain sanction." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, Routledge & Kegan Paul Ltd. London, Fifth Impression (1953) p. 398.

2 "Crowds are in themselves neither good nor evil, but they may be either the one or the other on occasions according to the stimulus. Crowds may be brutal but they may also be generous, sympathetic." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 133.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...साधारणतया विनाशकारी होता है। नेता निश्चित ही एक प्रमुख भाग लेता; ...भी भीड़ के उद्वेगों का ध्यान रखना पड़ता है और यदि वह ऐसा नहीं करता ...उसका नेतृत्व ही समाप्त हो जाता है।

(16) **भीड़ अति निम्न प्रकार की मानव समिति है (Crowd is the ...est Form of Human Association)**—कुछ विद्वानों का मत है कि ...मानव समितियों का अति निम्न प्रकार है। रॉस ने लिखा है, "निश्चित रूप से ...पूर्वजों के समान और भावहीन (होने के कारण) भीड़ की गणना अति निम्न ...की मानव समितियों में की जाती है।"[1] इसी मत का समर्थन बर्नार्ड ने भी ...शब्दों में किया है, "वे (भीड़) लगभग निम्न पशुओं के झुण्ड से मिलती-...ती है।"[2]

इन विद्वानों ने भीड़ के एकाकी व्यवहार को देखकर यह काला चित्र चित्रित ...है। वास्तव में इससे पूर्णतया सहमत नहीं हुआ जा सकता। भीड़ मानव के ...आवश्यक एवं सुखदायक भी है। भीड़ द्वारा ऐसे कार्य किये जा सकते हैं जो और ...प्रकार भी पूर्ण नहीं हो सकते। अन्याय और अत्याचार से मुक्ति प्राप्त करने ...को भीड़ का सहारा लेना पड़ता है। भीड़ अत्याचारी एवं अनैतिक होने ...तथा सहानुभूति से परिपूर्ण प्रसन्नता से भरी हुई एवं रंगीली और रूपहली ...प्रफुल्ल चित्त भी होती है; जैसे—विवाहोत्सव, राजनैतिक सभा, मनोरंजन ...(picnics) इत्यादि।

मेले हमारे जीवन में एक विशेष महत्त्व रखते हैं और जीवन का आह्लाद ...कर देते हैं। रेनहॉर्ट ने उचित ही लिखा है, "जीवन बिना भीड़ के नीरस हो ...गा।"[3]

भीड़ और आक्रामक अथवा हिंसक भीड़ में अन्तर
(Distinction Between Crowd and Mob)

भीड़ और हिंसक भीड़ में केवल अंशों का अन्तर है। दोनों में अन्तर का ...न देते हुए रेनहॉर्ट ने लिखा है, "हिंसक भीड़ (mob) साधारण भीड़ से भिन्न ...विवेकशील एवं हिंसक क्रियाओं की विशेषता द्वारा पहचानी जाती है।"[4] कहने

---

1. "Essentially atavistic and sterile, the crowd ranks as the lowest form of human association". E. A., Ross. *Social Psychology*, p. 56.
2. "They approximate most closely to the packs and herds of the lower animals." L. L. Bernard, *Introduction to Social Psychology*, Henry Holt & Co., New York (1926), p. 458.
3. "Life would be dreary indeed without crowds." J. M. Reinhardt, *Social Psychology*, p. 208.
4. "The mob then, as distinguished from the ordinary crowd is characterized by irrational and violent action." J. M. Reinhardt, *Social Psychology*, p. 207.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का तात्पर्य यह है कि साधारण भीड़ दोनों की क्रियाशीलता और प्रकृति में अन्तर होता है। इनमें प्रमुख अन्तर निम्नलिखित हैं :

(1) साधारण भीड़, ध्यान के सामान्य केन्द्र के चारों ओर एकत्रित होती है। इसमें हिंसात्मक प्रवृत्ति नहीं देखने को मिलती। इसमें भीड़ के सामान्य गुण जैसे—सामूहिक शक्ति एवं उत्तेजना होती है, परन्तु कोई हिंसा का भाव नहीं होता। हिंसक भीड़ सक्रिय होती है। उदाहरण के लिए, एक ट्रक ड्राइवर की लापरवाही से कोई व्यक्ति दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है, लोग एकत्रित हो जाते हैं और ड्राइवर को मारते हैं, उसे पुलिस के हवाले कर देते हैं, यह हिंसक भीड़ का उदाहरण है। इसके विपरीत एक भिखारी सड़क पर बैठकर सुन्दर गाना गा रहा है उसके मधुर स्वर को सुनकर लोग एकत्रित हो जाते हैं और शान्तिपूर्वक उसके गाने को सुनते हैं, यह निष्क्रिय भीड़ हो गयी। इस प्रकार दोनों प्रकार की भीड़ों में यह प्रथम प्रमुख अन्तर है कि साधारण भीड़ निष्क्रिय और शान्त होती है और हिंसक भीड़ तोड़-फोड़ और मारपीट करने वाली होती है।

(2) दूसरा अन्तर यह होता है कि हिंसक भीड़ अविवेकशील होती है और साधारण भीड़ में अविवेकशीलता यदि होती भी है तो बहुत ही कम मात्रा में होती है। साधारण भीड़ विवेकपूर्ण एवं तर्क युक्त भी हो सकती है; जैसे—यदि कोई ड्राइवर बच्चे को कुचल देता है तो भीड़ इकट्ठी हो जाती है, वह पहले बच्चे को अस्पताल भेज देती है और ड्राइवर को पुलिस के हवाले कर देती है। इस प्रकार की भीड़ तर्कशील और विवेकपूर्ण भीड़ कहलाती है। इस प्रकार के तर्कपूर्ण एवं विवेकशील भीड़ की आशा हम आक्रमक भीड़ से नहीं कर सकते। उसमें जोश और उत्तेजना इस मात्रा में होती है कि लोग अपना विवेक खो बैठते हैं।

(3) आक्रमक भीड़ की अपेक्षा साधारण भीड़ का बौद्धिक स्तर ऊँचा होता है, इसका प्रमुख कारण यह है कि जैसे ही भीड़ हिंसक कार्यवाहियाँ करने को तैयार होती है वैसे ही शान्तिप्रिय और विवेकी लोग अपने को उस भीड़ से अलग कर लेते हैं। ऐसी भीड़ में संवेगों की प्रबलता होती है और विचार-विमर्श करने का अवसर कम रहता है। संवेगों की प्रबलता के कारण लोग अधिक उत्तेजित रहते हैं इसलिए लोग सुझावों को जल्दी स्वीकार कर लेते हैं और सहज विश्वास कर लेते हैं।

(4) आक्रमक भीड़ में उत्तरदायित्व की भावना का नितान्त अभाव होता है, इसलिए लोग जघन्य काम करने में भी हिचक नहीं महसूस करते हैं। आक्रमक भीड़ के सदस्य उत्तेजना के आवेग में आकर अपने आत्मसम्मान को खो बैठते हैं और उन्हें बदनामी या नेकनामी की कोई परवाह नहीं रह जाती। साधारण भीड़ में उत्तेजना न होने के कारण अपना विवेक बनाये रखते हैं और इसलिए उनमें उत्तरदायित्व की भावना बनी रहती है।

(5) आक्रमक भीड़ में व्यक्ति को अपने दमित संवेगों के प्रकाशन का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मिल जाता है इसलिए वह इस प्रकार का व्यवहार करके सन्तुष्टि प्राप्त करता साधारण भीड़ सामाजिक नियमों और निषेधों के सम्बन्ध में जागरूकता होती आक्रमणकारी भीड़ समस्त सामाजिक बन्धनों से मुक्त होती है। इसलिए इसके तोड़-फोड़, गाली-गलौज व मारपीट करते हैं।

भीड़ तथा समाज में अन्तर
(Distinction Between Crowd and Society)

भीड़ तथा समाज में निम्न अन्तर है :

(1) समाज एक संगठित व्यवस्था है जिसके सभी अंग प्रकार्यात्मक सम्बन्ध (...tional relations) के आधार पर एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। इसके ...भीड़ असंगठित होती है। यह किसी पूर्व निश्चित नियमों या कार्यक्रमों के ...पर नहीं बनती और न ही अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कोई निश्चित ...अपनाती है। प्रत्येक समाज की व्यवस्था कुछ निश्चित तरीकों और नियमों ...धार पर होती है इन उद्देश्यों की पूर्ति समाज द्वारा मान्य या संस्थागत तरीकों ...होती है।

(2) समाज एक स्थिर व्यवस्था है और भीड़ अस्थिर होती है। समाज में ...वर्तन होते हैं, लेकिन इसमें समाज की निरन्तरता पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती है। ...णिक होती है। इसके विचार, भाव व संवेग सभी कुछ अल्पकालीन होते हैं। ...विपरीत सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ इसके विचार, भावनाएँ, आदर्श ...लम्बे अर्से तक चलते रहते हैं।

(3) भीड़ किसी भी सीमित स्थान पर एकत्रित हो सकती है, उसका कोई ...त स्थान या समय नहीं होता। भीड़ निर्माण में सदस्यों की शारीरिक ...स्थिति अनिवार्य होती है। समाज के लिए निश्चित भूभाग की आवश्यकता नहीं ...और न इसमें शारीरिक उपस्थिति ही अनिवार्य होती है। समाज 'विश्वसमाज' ...भी धारण कर सकता है, पर विश्व भीड़ की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ...के सदस्य उपस्थित न हों तो भी पारस्परिक जागरूकता के कारण समाज का ...होता है

(4) समाज की एक निश्चित कार्यप्रणाली, नियम, कानून, रीतिरिवाज, प्रथा, ...रा, आचार और आदर्श आदि होते हैं, इसलिए उसके सदस्यों के व्यवहार के ...में भविष्यवाणी की जा सकती है। परन्तु भीड़ के सम्बन्ध में इस प्रकार की ...ष्यवाणी करना असम्भव है। एक निष्क्रिय भीड़ किसी भी क्षण आक्रमक भीड़ ...रूप धारण कर सकती है।

(5) भीड़ के सदस्यों में संवेगों की प्रबलता, उत्तरदायित्व की कमी, संकल्प ...का अभाव, दमित प्रेरणाओं का प्रभाव, अनैतिकता की प्रधानता आदि देखने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को मिलते हैं। इसके विपरीत समाज एक वृहद् संगठन है और भीड़ उसी के अन्दर एक अव्यवस्थित, अस्थिर और तात्कालिक घटना का बोध है।

भीड़ व्यवहार की व्याख्याएँ
(Explanations of Crowd Behaviour)

भीड़ व्यवहार व्यक्ति के व्यवहार से भिन्न होता है। भीड़ व्यवहार की व्याख्या एवं विश्लेषण करने का अनेक विद्वानों ने प्रयत्न किया है और कई सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं। उनमें से कुछ प्रमुख सिद्धान्तों पर प्रकाश डालेंगे। प्रायः ये सभी सिद्धान्त एकांगी हैं। इन लोगों ने किसी एक विशेषता को विशेष महत्त्व दे दिया है।

(1) **समूह मन का सिद्धान्त** (Theory of Group Mind)—ले बाँ (Le Bon) तथा अन्य लेखकों का मत है कि भीड़ का एक नया मन निर्मित हो जाता है जो उन व्यक्तियों के मन से भिन्न होता है जो भीड़ के सदस्य होते हैं। ले बाँ ने सामूहिक चेतना के विकास को मानसिक एकता का सिद्धान्त (Law of the mental unity) लिखा है। ले बाँ ने इस विचार को अपनी पुस्तक "दी क्राउड" में निम्न प्रकार से व्यक्त किया है, "कुछ निश्चित परिस्थितियों में और केवल उन्हीं परिस्थितियों में मनुष्यों का समूह नवीन विशेषताएँ प्रस्तुत करता है जो समूह के सदस्यों की विशेषताओं से भिन्न होती हैं। भीड़ के समस्त व्यक्तियों के उद्वेग और विचार एक ही दिशा में बहने लगते हैं और उन मनुष्यों का जागरूक व्यक्तित्व समाप्त हो जाता है। एक सामूहिक मन का निर्माण हो जाता है जो निस्सन्देह ही अस्थिर होता है, परन्तु निश्चित एवं स्पष्ट विशेषताओं को प्रस्तुत करता है। यह समूह एक मनोवैज्ञानिक भीड़ बन गया है। वह एक प्राणी का रूप धारण करता है और भीड़ की मानसिक एकता के सिद्धान्त के अधीन होता है।"[1] समूह मन की कल्पना विचित्र है। समूह के पास एक व्यक्ति के समान मन कैसे हो सकता है जबकि समूह स्वयं एक प्राणी नहीं है? रेनहॉर्ट ने लिखा है, "यह माना जाता है कि कोई भी स्वस्थ मन का व्यक्ति यह विश्वास नहीं करता कि भीड़ मन, महत्त्वपूर्ण अहं के रूप में वातनाड़ी मण्डल से भिन्न और पृथक स्वरूप में रहता है।"[2]

---

1 "Under certain given circumstances and only under those circumstances, an agglomeration of men presents new characteristics very different from those of the individuals composing it. The sentiment and ideas of all the persons in the gathering take one and the same direction, and their conscious personality vanishes. A collective mind is formed, doubtless transitory, but presenting very clearly defined characteristics. The gathering has thus become a psychological crowd. It forms a single being, and is subjected to the *law of the mental unity of crowds*." G. Le Bon, *The Crowd*, p. 1, English translation.

2 It is assumed that no sane individual believes that a mob mind exists as a form of transcendent ego separate and apart from nervous tissue." James Reinhardt, *Social Psychology*, p. 206.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह सिद्धान्त आधुनिक युग में बिलकुल ही स्वीकार नहीं किया जाता। समूह की धारणा अनुचित्त एवं मिथ्या है। इस व्याख्या द्वारा भीड़ व्यवहार का विश्लेषण वैज्ञानिक है।[1]

(2) निरुद्ध चालकों की मुक्ति का सिद्धान्त (The Thesis of Release of Repressed Drives)—फ्रायड तथा उसके अनुयायियों ने निरुद्ध चालकों की मुक्ति का सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। उनका मत है कि भीड़ में मनुष्य की भावनाओं और चालकों का प्रबन्ध टूट जाता है। इसे दूसरे शब्दों में हम इस प्रकार कह सकते हैं कि मनुष्य चेतन अवस्था में नहीं रहता। साधारण व्यवहार चेतनावस्था द्वारा नियन्त्रित और आचार के अनुसार होता है; परन्तु वे विचार, जो मूलप्रवृत्तियों के कारण उत्पन्न होते हैं और सामाजिक नियन्त्रण के कारण चेतनावस्था में दबा दिये जाते हैं, समाप्त नहीं होते बल्कि अचेतन मस्तिष्क में बन्दी हो जाते हैं। भीड़ में अचेतन मस्तिष्क, चेतनता नष्ट होने के कारण, सक्रिय हो जाता है और इन दमित एवं निरुद्ध चालकों को मुक्ति मिल जाती है और वे मनुष्य के व्यवहार को निर्देशित करते हैं। इस कारण भीड़ का व्यवहार व्यक्तिगत व्यवहार से भिन्न होता है।

फ्रायड तथा उसके अनुयायियों ने निम्न श्रेणी के पशु व्यवहार से इसकी तुलना की है। यद्यपि यह सिद्धान्त भीड़ व्यवहार पर कुछ प्रकाश डालता है तथापि यह स्वीकार नहीं किया जा सकता कि भीड़ में मनुष्य केवल इन निरुद्ध चालकों से निर्देशित होता है।

मनोविश्लेषणवादी या फ्रायड के अनुयायी भीड़ व्यवहार की मनोविश्लेषणात्मक व्याख्या निरुद्ध चालकों की मुक्ति पर ही आधारित करते हैं।

(3) 'सामाजिक सौकार्य' का सिद्धान्त (Theory of 'Social Facilitation')—यह सिद्धान्त आल्पोर्ट ने प्रतिपादित किया है। उनका कहना है कि व्यक्ति एक प्रकार का व्यवहार भीड़ में इसलिए करता है कि उसे दूसरों की उत्तेजना प्राप्त होती है और एक प्रकार का सामाजिक सौकार्य होता है। एक व्यक्ति जो कार्य करता है वही दूसरा व्यक्ति भी ग्रहण कर लेता है। आल्पोर्ट का कहना है, "व्यक्ति भीड़ में वैसे ही व्यवहार करता है जैसे वह अकेले में करेगा, केवल अधिक व्यवहार करता है।"[2]

आल्पोर्ट ने सामाजिक या समूह मन के सिद्धान्त की आलोचना की है। व्यक्ति अपने ही मन से चालित होता है, पर उत्तेजना बढ़ जाती है और दूसरे की

[1] समूह मन की आलोचना एवं अन्य सिद्धान्त, अध्याय ३५ में पढ़िए।

[2] "The individual in a crowd behaves just as he would behave alone, only more so." Allport.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देखादेखी व्यवहार करने लगता है। पारस्परिक उत्तेजना के कारण व्यवहार असामान्य हो जाता है। पारस्परिक उत्तेजना, सामाजिक अन्तःक्रिया, सामाजिक आत्मीकरण, सामाजिक मान्यता, संवेगात्मक परिस्थिति के कारण भीड़ के सदस्य इस प्रकार का व्यवहार करते हैं।

(4) **शेरिफ का सिद्धान्त** (Theory of Sherif)—शेरिफ का कहना है कि भीड़ व्यवहार सांस्कृतिक तत्त्वों पर आधारित है। भीड़ में नये आदर्श एवं नये सामाजिक मूल्यों का निर्माण होता है, जिनके साथ व्यक्ति सदस्य होने के नाते तादात्म्य करता है। वह इन नये मूल्यों के अनुसार व्यवहार करता है।

(5) **सामाजिक दशाओं का सिद्धान्त** (Theory of Social Conditions)—भीड़ के व्यवहार और सामाजिक एवं सांस्कृतिक दशाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध दिखायी पड़ता है। सांस्कृतिक छाप भीड़ पर अवश्य होती है। जिस प्रकार का समाज होगा, उसी प्रकार की उस समाज के अन्तर्गत होने वाली भीड़ें भी होंगी।

इसका उदाहरण हम अमरीका और इंग्लैण्ड में पायी जाने वाली भीड़ों में [illegible] सकते हैं। अमरीका में किसी मेले के लिए जो भीड़ जमा होती है वह शोरगुल मचाती है, लापरवाह होती है और चीजें इधर-उधर फेंकती है। भारत की भीड़ में भी ऐसा ही होता है। मेले के बाद जमीन पुराने समाचारपत्रों, खाली बोतलों तथा कूड़ा-करकट से ढकी हुई मिलती है। इंग्लैण्ड में ऐसा नहीं होता। किंग जार्ज पंचम की सिलवर जुबली के उत्सव में लाखों व्यक्ति बकिंघम पैलेस के सामने के पार्क में एकत्रित हुए और कई दिन तक तम्बू लगाकर रहे, पर जब वे गये तो स्थान स्वच्छ था। किसी ने भी कूड़ा-करकट नहीं फेंका और न किसी ने एक फूल ही तोड़ा या किसी और सम्पत्ति का नाश किया।

श्रोतागण
(Audience)

भीड़ का विभाजन दो भागों में किया जा चुका है—एक तो औपचारिक भीड़ और दूसरी अनौपचारिक भीड़। औपचारिक भीड़ को ही श्रोतागण (audience) शब्द से सम्बोधित करते हैं।

किम्बाल यंग ने श्रोतागण की परिभाषा इन शब्दों में की है, "श्रोतागण एक प्रकार की संस्था के सिद्धान्तों पर आधारित भीड़ है।"[1]

श्रोतागण वह भीड़ है जो निश्चित नियमों पर आधारित होती है। इसका उद्देश्य अधिकांश मात्रा में निश्चित होता है। इसका समय और स्थान भी निश्चित होता है।

---

[1] "The Audience is a form of institutionalized crowd." [illegible] p. 399.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...गण का वर्गीकरण

श्रोतागण का वर्गीकरण बड़ा कठिन है, फिर भी विभिन्न लेखकों ने विभिन्न ...करण किये हैं। किम्बाल यंग ने इसको दो भागों में बाँटा—पहला, सूचना प्राप्त ...वाला और द्वितीय, मनोरंजन पाने वाला। लेपियर ने एक भाग और जोड़ ...वह है विचार परिवर्तन हेतु श्रोतागण (conversional audience)। इसके ...लेपियर ने दो प्रकार के भेद और बताये—प्रथम, नाटकीय श्रोतागण और ...भाषण श्रोतागण। इनको कार्य एवं उद्देश्य के अनुसार आर्थिक, राजनैतिक, ...एवं मनोरंजक विभागों में बाँट सकते हैं। इसे अगले पृष्ठ पर दिये चार्ट द्वारा ...किया जा सकता है।

श्रोतागण की विशेषताएँ
(Characteristics of Audience)

इनकी निम्न विशेषताएँ होती हैं :

(1) **इसका एक निश्चित उद्देश्य होता है** (It has a Definite Aim)—...गण एक निश्चित उद्देश्य से बुलाये जाते हैं। उदाहरणस्वरूप, पण्डित नेहरू ...के दौरे पर अजमेर आये। उनके आने पर चारों तरफ सभा की सूचना दो ...है। इस सभा का उद्देश्य निश्चित होता है। इसी प्रकार से प्रत्येक श्रोतागण ...एक निश्चित उद्देश्य होता है।

(2) **श्रोता पूर्व निश्चित समय और स्थान पर एकत्रित होते हैं** (The ...ience Assembles at Previously Fixed Time and Place)—श्रोता-...पूर्व निश्चित स्थान एवं समय पर एकत्रित होते हैं; क्योंकि इसकी सूचना पहले से ...जाती है और लोग उसी सूचना के आधार पर एकत्रित होते हैं।

(3) **अभिस्पन्दन का एक निश्चित आदर्श स्वरूप होता है** (It has a ...ndard Form of Polarisation)—अभिस्पन्दन का एक आदर्श स्वरूप ...भाषण में पाया जाता है। इसके लिए एक विशिष्ट प्रकार की व्यवस्था करनी ...ती है। अभिस्पन्दन से तात्पर्य यह है कि श्रोतागणों का ध्यान वक्ता पर केन्द्रित ...ना चाहिए। इस ध्यान को वक्ता पर केन्द्रित करने के लिए निम्नलिखित बातों को ...न में रखना चाहिए :

(अ) **सभा के स्थान के भौतिक लक्षण**—(i) बैठने की व्यवस्था ऐसी होनी ...चाहिए कि वक्ता सबके निकट हो। (ii) वक्ता का स्थान ऊँचा होना चाहिए ...जिससे सब लोग उसे आसानी से देख सकें। (iii) रोशनी का प्रबन्ध ऐसा होना ...चाहिए कि एकत्रित व्यक्ति उद्वेगों में बहने लग जाय। (iv) सभा का भवन ऐसा ...होना चाहिए कि खचाखच भरा हो। यदि कम लोगों के आने की सम्भावना है तो ...छोटे भवन का प्रबन्ध करना चाहिए। साधारणतया भीड़भाड़ दिखायी देनी चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

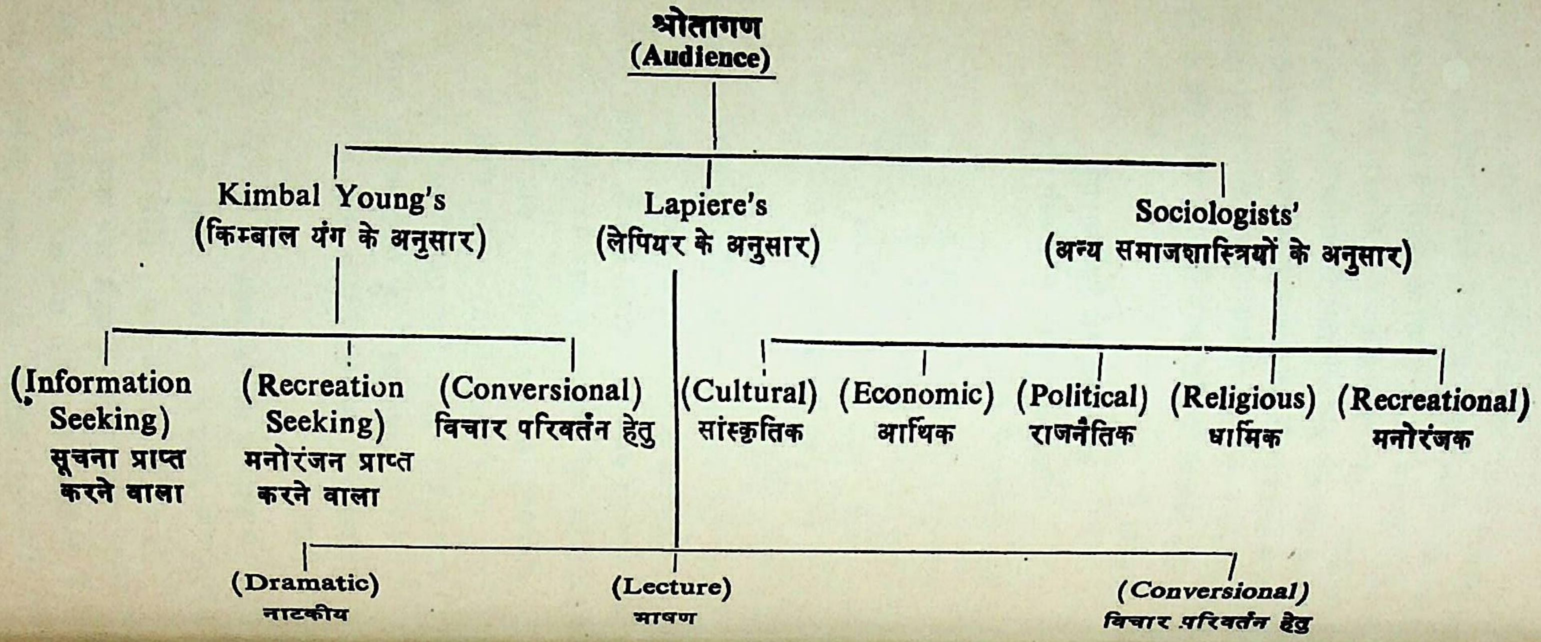

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भवन की सजावट, तापमान, हवा का प्रबन्ध इत्यादि भी श्रोतागण पर प्रभाव डालते हैं।

(ब) प्रबन्धकों द्वारा प्रारम्भ कार्यक्रम—श्रोतागण का अधिक से अधिक ध्यान आकर्षित करने के लिए, प्रबन्धकों द्वारा किस प्रकार कार्यक्रम प्रारम्भ किया जाता है, एक अति महत्त्वपूर्ण तत्त्व है।

(स) वक्ता या कार्य करने वाले का प्रभाव—ध्यान आकर्षित करने में सबसे बड़ा भाग वक्ता या कार्य करने वाले का होता है, यदि वह नेतृत्व को स्थापित कर सके तो सब कुछ ठीक प्रकार से होता है।

श्रोतागण का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण
(Psychological Analysis of the Audience)

श्रोतागण और नेता के पारस्परिक प्रभाव में मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएं कार्य करती हैं। उनको हम निम्न प्रकार से समझा सकते हैं :

(1) **प्रारम्भिक मनोभाव का निर्माण (Preliminary Tuning)**—किसी श्रोतागण के लिए यह आवश्यक है कि कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए प्रारम्भिक मनोभावों का निर्माण करे। इसके लिए प्रचार के विभिन्न साधनों का प्रयोग करना पड़ता है। इसके द्वारा लोगों की जिज्ञासा को जागृत करना पड़ता है।

(2) **श्रोतागण की प्रारम्भिक प्रतिक्रियाएँ**—सभा शुरू होने के पूर्व एक पूर्व निश्चित विधि या रीति के अनुसार श्रोतागणों का ध्यान केन्द्र की ओर आकर्षित करना पड़ता है। उदाहरणस्वरूप, किसी भाषण के पूर्व वक्ता का परिचय कराया जाना, उसे माला पहनाना एवं वन्दना करना इत्यादि।

(3) **सम्बन्ध स्थापित करना एवं बनाए रखना**—इसके उपरान्त उस ध्यान को केन्द्र पर बनाए रखने का कार्य वक्ता या कार्य करने वाले का होता है। वह अपनी युक्तियों द्वारा इसको बनाए रखता है। बीच-बीच में हँसी, गीत एवं अन्य वस्तुएं, जिनके द्वारा श्रोतागण केन्द्र पर ध्यान बनाए रखें, प्रयोग में लायी जाती हैं।

(4) **सुझाव देना और उसको स्वीकार करवाना**—उद्वेगों पर आधारित, परन्तु देखने में तर्कपूर्ण, युक्ति प्रस्तुत करनी चाहिए और उसे श्रोतागणों के सांस्कृतिक आधार पर रखकर स्वीकार करने के लिए सरलता से उन्हें बाध्य करना चाहिए।

(5) **कार्य करने के लिए उत्तेजना**—कई बार श्रोतागणों को कार्य करने के लिए भी उत्तेजना दी जाती है। जब वे कार्य करने लगते हैं, तो श्रोतागण से क्रियाशील भीड़ में परिवर्तित हो जाते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भीड़ और श्रोतागण में अन्तर
(Difference Between Audience and Crowd)

श्रोतागण	अनौपचारिक भीड़
1. इसका एक निश्चित समय एवं स्थान होता ह। लोग उसी समय एवं स्थान पर एकत्रित होते हैं।	1. इसका कोई निश्चित समय व स्थान नहीं होता। यह अचानक आ होना शुरू हो जाती है।
2. इसका निश्चित उद्देश्य होता है।	2. इसका उद्देश्य पूर्व निश्चित नहीं होता। जिधर चल पड़े, उधर चल पड़े।
3. इसे इच्छापूर्वक बुलाया जाता है।	3. यह स्वयं एकत्रित हो जाती है।
4. इसमें ध्यान एक बाहरी केन्द्र पर केन्द्रित होता है और इस कारण यह अभिस्पन्दन आदर्शस्वरूप होता है। इसके सदस्य एक-दूसरे की उपस्थिति या व्यवहार से अधिक प्रयोजन नहीं रखते।	4. इसमें ध्यान का केन्द्र भीड़ में ही होता है और एक-दूसरे से पारस्परिक उत्तेजना लेते रहते हैं।
5. इसके व्यवहार निश्चित रीतियों के अनुसार होते हैं।	5. इसका व्यवहार अनिश्चित रहता है।
6. इसमें तार्किक सुझावों का अधिक प्रभाव पड़ता है।	6. इसमें उद्वेगात्मक सुझावों का अधिक प्रभाव पड़ता है।
7. इसमें बुद्धि का ह्रास नहीं होता।	7. इसमें बुद्धि का ह्रास हो जाता है।

प्रश्न

1. एक भीड़ के निर्माण एवं व्यवहार की विवेचना कीजिए। उसके क्या लक्षण हैं?

(Discuss the formation and behaviour at a crowd. What are its characteristics ?)

2. एक भीड़, जिसे आपने कार्यरत देखा हो, का वैज्ञानिक विश्लेषण दीजिए। भीड़ में नेता का क्या कार्य होता है?

(Make a scientific analysis of a crowd that you have seen in action. Bring out the role of the leader in the crowd.)

3. भीड़ और श्रोतागण में तुलना एवं भेद बताइए। क्रियाशील भीड़ के मनोविज्ञान की व्याख्या कीजिए।

(Compare and contrast between audience and crowd. Discuss the psychology of action crowd.)

4. भीड़ और एक समाज में क्या भेद है? भीड़ को विशेषित करने वाले मनोवैज्ञानिक लक्षणों पर प्रकाश डालिए?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(What is the distinction between a crowd and a society ? Bring
e psychological features which characterize a crowd.)

5. भीड़ मन के सम्बोध का परीक्षण कीजिए। भीड व्यवहार की मनोवैज्ञानिक
ा में किन परिवर्तनों का सुझाव आप देंगे ?

(Examine the concept of the crowd mind ? What alternatives
d you suggest for the psychological explanation of crowd
viour ?)

6. भीड़ की परिभाषा कीजिए और भीड़ व्यवहार के विभिन्न सिद्धान्तों की
ना कीजिए ?

(Define 'crowd' and discuss the various theories of crowd
viour.)

7. जब व्यक्ति एक भीड़ का सदस्य बन जाता है तो वह अपने सामान्य
ार से भिन्न व्यवहार क्यों करने लगता है ? मनोवैज्ञानिक युक्तियाँ दीजिए और
था श्रोतागण में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(Why does an individual behave differently when he becomes
mber of a crowd ? Give psychological reasons and distinguish
een crowd and audience.)

8. "........एक अकेले व्यक्ति की तुलना में भीड़ सदा ही बौद्धिक तौर पर
कोटि की होती है।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? कारण बताइए।

("........the crowd is always intellectually inferior to the
ted individual." Do you agree with this statement ? Give
ons.)

9. एक क्रियाशील भीड़ के मनोवैज्ञानिक लक्षण क्या हैं ? भीड़ तथा श्रोता-
में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

(What are the mental characteristics of an action crowd ?
inguish between crowd and audience.)

10. ले बॉं ने भीड़ को मन्द बुद्धि और मार्टिन ने मानसिक रूप से विकृत
ा है। मूल्यांकन कीजिए।

(Le Bon regarded the crowd as feeble-minded and Martin
sidered is psychopathic. Evaluate.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

35

सामाजिक मन या समूह मन
(Social Mind or Group Mind)

पिछले खण्ड में हमने व्यक्ति के व्यवहार के प्रमुख मूलाधारों पर प्रकाश डाला। उससे हमें यह ज्ञात हुआ कि व्यक्ति भी अन्य प्राणियों की भाँति एक प्राणी है और उसके व्यवहार का आधार दैहिक एवं जैविक तत्त्वों में है; फिर भी व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी है और वह भी विवेकशील। पिछले अध्याय में हमने विवेक एवं संकल्प के महत्त्व पर प्रकाश डाला। इस खण्ड में हम व्यक्ति और समाज के सम्बन्धों पर प्रकाश डालेंगे। समाज व्यक्ति के व्यवहार को अनेक दृष्टियों से प्रभावित करता है। कुछ लोगों ने तो इसका इतना अधिक प्रभाव माना है कि वे व्यक्ति को केवल समाज का पुतला कहते हैं। कुछ लोगों का मत है कि व्यक्ति की ही तरह समाज या समूह का भी शरीर है। इसी विचारधारा का फल है कि समाज या समूह के मन के विषय में हम सोचते हैं। इस अध्याय में हम समूह या सामाजिक मन के सम्बन्ध में विचार करेंगे।

सामाजिक समूहों की दो विचारधाराएँ
(Two Schools of Social Grouping)

गत शताब्दियों के विचारकों ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि व्यक्तियों के मन से अलग समूह का मन भी होता है, जो समाज और समूह में व्यक्ति-गत क्रियाकलाप एवं आचरण पर नियन्त्रण करता है। इस विषय पर प्लेटो से लेकर प्रायः आधुनिक काल के विचारकों तक ने अपने-अपने विचार प्रकट किये हैं। ... वैयक्तिक एवं सामूहिक मानवीय व्यवहारों की संमस्या विचारकों के चिन्तन का आधार बन गयी है। प्राचीन विचारक, जिनका ध्यान सामाजिक अथवा सामूहिक नियन्त्रण की ओर गया, वे प्रधानतः प्राचीन व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से प्रभावित थे। समय के साथ-साथ विद्वानों की विचारधाराओं में भी परिवर्तन होता रहा। यही कारण है कि आज सामाजिक एव वैज्ञानिक अनुसन्धानों द्वारा व्यक्ति और समाज की प्रकृति सम्बन्धी अनेक विचारधाराएँ मिलती हैं; परन्तु विभिन्न मतों को जो सामाजिक समूह की प्रकृति के ऊपर आधारित हैं, मुख्यतः दो दृष्टिकोणों में विभाजित किया जा सकता है :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

1. व्यक्तियों की विशेषताओं द्वारा सामाजिक समूह की व्याख्या।
2. वैयक्तिक स्वभाव सामाजिक समूह की प्रकृति के अनुसार निर्धारित होने की व्याख्या।

प्रथम मत—व्यक्तियों की विशेषताओं द्वारा सामाजिक समूह की व्याख्या

इस मत के अनुसार विद्वानों का कथन है कि सामाजिक समूह का स्वरूप समूह में रहने वाले व्यक्तियों के कारण ही है। व्यक्तियों की विशेषताएँ ही सामाजिक समूह के निर्माण की आधारभूत हैं; क्योंकि व्यक्ति का अस्तित्व समूह के स्वरूप से पहले है। व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों से संघर्ष करना पड़ा तथा अपनी सुविधा के लिए व्यक्ति ने समझौते के अनुकूल समूह का निर्माण किया कि वह समूह के साथ भलीप्रकार भौतिक, भौगोलिक व अन्य परिस्थितियों से संघर्ष कर सके। अतः इस मतानुसार विचारक व्यक्तियों की विशेषताओं के द्वारा सामाजिक समूह के स्वरूप की व्याख्या करते हैं।

द्वितीय मत—वैयक्तिक स्वभाव सामाजिक समूह की प्रकृति के अनुसार निर्धारित होने की व्याख्या

द्वितीय मत की विचारधारा प्रथम मत के विद्वानों के कथन के वस्तुतः प्रतिकूल विपरीत है। इस मत के विचारकों का विचार है कि सामाजिक समूह का स्वरूप समूह के निर्माण करने वाले व्यक्तियों की विशेषताओं द्वारा नहीं समझा जा सकता, अर्थात् वैयक्तिक स्वभाव के आधार पर सामाजिक समूह अथवा समाज की प्रकृति को नहीं समझा जा सकता और न व्यक्ति को हां समूह से पृथक करके समझा जा सकता है। इस मत के विद्वानों का कथन है कि समाज ही वैयक्तिक स्वभाव की विशेषता का निर्धारण एवं विकास करता है। उनका कहना है कि व्यक्ति की सारभूत विशेषताएं, स्वभाव व व्यक्तित्व का विकास सामाजिक समूह के वातावरण के अन्दर ही होता है; क्योंकि मनुष्य जन्म से मृत्यु तक समाज में ही अपना जीवन व्यतीत करता है। अतः सामाजिक समूह की प्रकृति के अनुकूल ही व्यक्ति के स्वभाव की सारभूत विशेषताओं का विकास एवं निर्धारण होता है। अतः इस मत के विद्वानों का सामाजिक वर्गीकरण के दृष्टिकोण का सारांश यह है कि किसी विशिष्ट समूह की विशेषताएं उसके निर्माण करने वाले व्यक्तियों की विशेषताओं द्वारा निर्धारित नहीं हो सकतीं, वरन् सामाजिक समूह की विशिष्ट विशेषताओं का विकास उसके सामाजिक जीवन की परिस्थितियों, उसके प्राचीन इतिहास और अन्य समूहों के साथ उसके सम्बन्धों द्वारा होता है।

सामाजिक वर्गीकरण की विचारधाराओं की आलोचना

इन दोनों मतों के विरुद्ध अनेक आक्षेप लगाकर इनकी कटु आलोचना की गयी है। पहला मत व्यक्तियों को अनुचित रूप के एकपक्षीय दृष्टिकोण से व्यक्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को पृथक करके बहुत ही सूक्ष्म रूप में देखता है । इस मत के विद्वान समाज के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथ्य को भूल जाते हैं । ज्यों ही कोई सामाजिक समूह कुछ स्थायी बन जाता है, त्यों ही उसकी अपनी कुछ संस्थाओं एवं परम्पराओं की स्थापना हो जाती है और फिर यह संस्थाएँ एवं परम्पराएँ समयानुसार विकसित होती रहती हैं । इस प्रकार सामाजिक समूह के एक विशिष्ट स्वरूप का निर्माण हो जाता है जो व्यक्तियों के क्रियाकलाप एवं आचरण को एक विशेष प्रकार का रूप देता है । अतः समाज व्यक्तियों के विचारों और वेदनाओं पर एक विशेष प्रकार का प्रभाव डालता है । एक प्रकार से इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता; क्योंकि व्यक्ति का स्वरूप प्राथमिक है, किन्तु यह स्वीकार नहीं किया जा सकता कि व्यक्ति समाज से अलग अपना अस्तित्व रखता है; क्योंकि व्यक्ति ने परिस्थितियों से संघर्ष करने एवं अपनी सुविधा के लिए एक सामाजिक समूह का निर्माण किया होगा । अत: इस प्रकार समूह का विकास हो जाता है तब वह व्यक्ति के क्रियाकलापों एवं आचरणों का नियन्त्रण करता है, तथा इसके साथ-साथ अपने सदस्यों अर्थात व्यक्तियों के विचारों और वेदनाओं को प्रभावित करता है । अत: वह विद्वान जो व्यक्ति को अनुचित रूप से बहुत ही सूक्ष्म एवं स्थूल रूप से समाज से पृथक मानते हैं, दोषपूर्ण हैं, क्योंकि समाज से पृथक व्यक्ति का वैयक्तिक विकास नहीं हो सकता ।

दूसरे मत में प्रथम मत की अपेक्षा यद्यपि सत्यता का एक बड़ा अंश वर्तमान है, परन्तु इस मत के विद्वानों ने इसको इस ढंग से हमारे सामने प्रस्तुत किया है जो समाज को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान देता है, अर्थात उन्होंने समाज को एक ऐसी वस्तु माना है जो व्यक्तियों से पृथक है तथा इस व्याख्यानुसार व्यक्त का कुछ महत्त्व ही नहीं रह जाता । कुछ विद्वान ने इस मत की आलोचना करते हुए एक आपत्ति उपस्थित की है कि कोई ऐसी व्याख्या अब तक प्राप्त नहीं हुई है जिसके द्वारा सामाजिक समूहों की एकता को समझाया गया हो । अत: उनका यह कथन है कि अब तक सामाजिक समूहों की एकता सम्बन्धी विचारधाराओं में न तो एकरूपता ही है और न कोई दृढ़ता है ।

यह आपत्ति अथवा इस प्रकार के झूठे विरोध उचित नहीं हैं; क्योंकि वे विद्वान जो ऐसी आपत्ति खड़ी करते है वे समाज एवं व्यक्ति के स्वभाव की व्याख्या एकपक्षीय दृष्टिकोण से करते हैं, और अपने मतानुसार ऐसी आपत्ति प्रस्तुत करते हैं। किसी सामाजिक समूह की एकता का स्पष्टीकरण उस समूह की इकाइयों (व्यक्तियों) की प्रकृति से नहीं किया जा सकता; क्योंकि व्यक्तियों के समाज से अलग कर देने पर उनका कोई अस्तित्व नहीं रह जाता । इस सम्बन्ध में गिन्सबर्ग ने लिखा है, "ऐसी बात नहीं है कि पहले व्यक्ति होते हैं और तब एक सामाजिक एकत्व का निर्माण होता है जिस प्रकार पहले इंट होती है और फिर उनका ढेर बनता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...ओं को परस्पर सुसम्बद्ध करने वाले सम्बन्ध आन्तरिक तथा वस्तुतः व्यक्ति के ...क हैं।"[1]

इस प्रकार दोनों मतों में से कोई भी मत पूर्णतया सत्य नहीं है। व्यक्तिवादी ...के विरोध में प्रस्तुत किया गया दूसरा मत पहले मत की अपेक्षा कम दोषपूर्ण ... यह कथन सत्य है कि समाज से अलग व्यक्ति का कोई अस्तित्व नहीं होता। ...यह कहना भी कुछ गलत न होगा कि व्यक्तित्व का विकास ही सामाजिकता का ...ता है; फिर भी समाज व्यक्तियों के सम्बन्धों पर ही आधारित है। अतः यह ...ना कि समाज के स्वभाव के आधार पर व्यक्ति के स्वभाव की व्याख्या की जा ...ती है, क्योंकि व्यक्तियों में कुछ ऐसे अद्वितीय अंग होते हैं जिनका प्रदर्शन सम्भव ... होता, अर्थात जो प्रत्येक व्यक्ति में होता है किन्तु दूसरों के लिए अज्ञेय है। अतः ...का सामाजिक व्यवहार वही होता है जिसका प्रदर्शन किया जाता है; किन्तु जब ... व्यक्तित्व के एक अंग का प्रदर्शन नहीं किया जा सकता तो उसका अनुमान ... लेना सम्भव नहीं, अर्थात दोनों विचारधाराएँ एकपक्षीय हैं।

...र्ष

उपर्युक्त वाद-विवाद द्वारा हम इस निष्कर्ष पर अवश्य पहुँच गये हैं कि ...क्तियों का एक-दूसरे के साथ आन्तरिक एवं मूलतः सम्बन्ध हैं। समाज न कोई ... उत्पन्न कृत्रिम (artificial) रचना है और न कोई यान्त्रिक योजना ही है जो ...न्त्र व्यक्तियों को एक सूत्र या समूह में बाँध देने मात्र हो। व्यक्तिगत पारस्परिक ...न्धों एवं अन्तःक्रियाओं के फलस्वरूप ही समाज की उत्पत्ति हुई। ये पारस्परिक ...न्ध ही मुख्य आधार हैं जो व्यक्तियों को एक-दूसरे के साथ रहने तथा सामूहिक ...न व्यतीत करने के लिए बाध्य करते हैं। ये पारस्परिक सम्बन्ध तथा अन्तःक्रियाएँ ...ओं, विचारों, इच्छाओं, अनुभूतियों व प्रयोजनों पर आधारित होते हैं। ये मनो-...ज्ञानिक प्रतिक्रियाएँ होती हैं। जिनके परिणामस्वरूप मन के अस्तित्व का जन्म ...ता। विद्वानों ने इसको उपर्युक्त आधार पर सामाजिक मन कहा है।

सामाजिक मन की धारणा
(Concept of Social Mind)

जिस प्रकार व्यक्ति की क्रियाओं व आचरणों का संचालन वैयक्तिक मन द्वारा ...ता है ठीक उसी प्रकार सामाजिक क्रियाओं का संचालन भी मन अथवा मस्तिष्क ...द्वारा होता है, जो वैयक्तिक मन न होकर सामूहिक मन होता है, उसी को सामाजिक

[1]"There are not at first individuals and then a social unit, as there might be bricks and then a pile of them. The relations that bind individuals together are intrinsic, actually constitutive of the individual." M. Ginsberg, *Psychology of Society*, p. 47, Methuen & Co. Ltd. (1954).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन कहा जा सकता है। सामाजिक मन का प्रयोग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जब समाज के प्रतीक के रूप में सामाजिक अथवा सामूहिक मन पद का प्रयोग किया जाता है तो अनायास ही समाज एक कृत्रिम (artificial) एकता के रूप में प्रतीत होता है। सामाजिक मन के सिद्धान्त के समर्थन करने वाले विद्वानों का कथन है कि सामाजिक मन का स्वरूप वैयक्तिक मन पर ही आश्रित रहता है तथा समाज का निर्माण वैयक्तिक मन द्वारा होता है। इसको आधारभूत मानते हुए विद्वान जब अपने सिद्धान्त का स्पष्टीकरण करते हैं तो वे अपने सिद्धान्त की व्याख्या में व्यक्ति को इस सम्पूर्ण में विलीन कर देते हैं। वस्तुतः तथ्य यह नहीं हैं, क्योंकि इस सम्पूर्ण के किसी भी अंश को लेकर यह नहीं माना जा सकता कि यह व्यक्ति के मन का भाग है। अतः यह सिद्धान्त अत्यन्त गम्भीर दोषों से परिपूर्ण है। इसलिए इसके अध्ययन के अन्तर्गत अनेक आपत्तियाँ प्रतीत होती हैं।

सामाजिक मन के पद के प्रयोगों में आपत्तियाँ

1. **व्यक्तित्व के महत्त्व को कम कर देता है**—पहली आपत्ति यह है कि सामाजिक मन शब्द का प्रयोग करने का परिणाम यह है कि समाज पर एक कृत्रिम एकता का आरोप कर दिया जाता है जो वस्तुतः उचित नहीं है। फलस्वरूप व्यक्ति और छोटे-छोटे समूहों का महत्त्व कम हो जाता है, अर्थात इनको तुच्छ समझा जाने लगता है। इसके साथ-साथ समाज के हित तथा व्यक्ति के हित के मध्य अवांछनीय विरोध उत्पन्न हो उठता है। इन विद्वानों की कुछ ऐसी धारणा है कि जिन क्रियाओं से समाज का कल्याण हो सकता है उनसे व्यक्ति का कल्याण नहीं हो सकता; किन्तु यह धारणा भ्रान्तिमूलक एवं शरारतपूर्ण है। इस विषय में गिन्सबर्ग ने लिखा है, "प्रायः सामूहिकता में कोई विशेषता नहीं है। सभी मूल्य व्यक्तियों के लिए मूल्य (values) हैं और सम्पूर्ण हित सभी हितों की प्रकार व्यक्तियों का हित है, वह व्यक्तित्व के लिए एक आन्तरिक वस्तु है; अर्थात ऐसी वस्तु है जो व्यक्तित्व का विकास करती है और मनुष्य के अन्दर की सामर्थ्य को वास्तविक बनाने का काम करती है।"[1]

कहने का तात्पर्य यह है कि समष्टि का हित भी व्यक्तियों के हित में होना चाहिए। समाज के हित की प्राप्ति भी आन्तरिक व्यक्तित्व का विकास करने वाली होनी चाहिए, अर्थात इस विषय में यह कहा जा सकता है कि यदि व्यक्ति के हित की प्राप्ति नहीं होती तो समाज के हित की प्राप्ति भी सम्भव नहीं।

---

[1] There is no virtue in mere collectivity or even wholeness. All values are values for persons, and the good of the whole, like any other good, must be a good persons, must consist in something intrinsic to personality, in something that enhances individuality and serves to actualize some human potentiality." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*. Methuen & Co. Ltd., (1954), p. 48.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समाज के कुछ स्थायी मूल्य अथवा संस्कृति एवं संस्थाएँ होती हैं। संस्थाएं संस्कृति व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक स्थायी नहीं होतीं। यह भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती रहती है और व्यक्तियों द्वारा इनमें विकास एवं संशोधन होते रहते हैं। स्पष्ट है कि संस्कृतियाँ तथा संस्थाओं का हित इनके सदस्यों के हित के विरुद्ध नहीं हो सकता।

2. एकतन्त्र (Autocracy) तथा कुलीनतन्त्र (Aristocracy) प्रजातन्त्र के रूप में प्रकट होने लगते हैं—सामाजिक मन का सिद्धान्त निरंकुशता एवं शासन को छद्म में हमारे सामने आने का अवसर पा जाता है। इसमें कोई शंका नहीं कि सामाजिक मन श्रेष्ठ होता है और कभी गलती नहीं कर सकता। इतना होते हुए भी सामाजिक मन अपनी बात स्वयं नहीं कर सकता। ईश्वर जैसी महान शक्ति को भी जनता सन्देश देने के लिए एक अवतार की आवश्यकता पड़ी जो ईश्वर का सन्देश व्यक्तियों को समझा सके। और अवतार, इस सिद्धान्तानुसार इस बात का दावा करता है कि वह जनता के मनोभावों को अभिव्यक्त कर रहा था। डा० मैकडूगल ने इस बात का समर्थन किया है कि लोकमत की सर्वोत्तम व्याख्या सबसे अच्छे मस्तिष्कों द्वारा ही सम्भव है। इसके अतिरिक्त सर्वोत्तम मस्तिष्क भी इस बात का दावा करता है कि उनकी व्याख्या सर्वोत्तम है। जिस प्रकार एक राजा, जो अपने आपको अपने समूह का सर्वोत्तम मन मानता है और जनता के सामने किसी भी बात को बताते हुए कहता है कि यह सामाजिक मन क्या चाहता है। अतः इस प्रकार शासन-सत्ता, जो उस समय प्रचलित होती है, अति पूज्य बन जाती है और व्यक्ति के विभिन्न प्रकार के कामों में हस्तक्षेप करने के लिए यह घोषणा कर दी जाती है कि सामाजिक मन की दैवी वाणी यही चाहती है। अतः इस सिद्धान्त के अनुसार जिस राष्ट्र में जैसी शासन व्यवस्था होगी उसे दैवी घोषित कर दिया जाता है। अतः सामूहिक मन-सिद्धान्त में तात्विक कृति (real will) का सिद्धान्त भी वास्तविक कृति (actual will) नहीं है; क्योंकि जनमत तथा जनहित के नाम पर शासन-सत्ता वर्ग के लोग अपने हित को जनता के सम्मुख रखते हैं। अतः शासक वर्ग बड़ी चतुराई के साथ सामाजिक मन के सिद्धान्त से लाभ उठाकर अपनी इच्छाओं को ही जनमत के रूप में लोगों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। इसलिए इस सिद्धान्त में सामाजिक मन के नाम पर निरंकुश वर्ग की शासन-सत्ता प्रजातन्त्र के वेश में प्रकट होने का अवसर प्राप्त कर लेती है।

3. समाज को देववत् मानना—तीसरी आपत्ति इस सिद्धान्त के अन्दर यह है कि समाज को देववत् माना जाता है, अर्थात समाज को व्यक्ति से उच्च देव रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। इसके साथ-साथ समाज को व्यक्तियों के एक सूत्र में बाँधने वाले नैतिक सिद्धान्तों व नियमों से भी अधिक शक्ति और गौरव का रूप प्राप्त कर लेता है। इसके अतिरिक्त वैयक्तिक आचरणों का प्रतीक मान लिया जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

4. देवीकरण (Deitification) रूढ़िवाद (Conservation) यथास्ति (Status Quo) को जन्म देता है—सामाजिक मन सिद्धान्त में आपत्ति यह है कि राज्य के इस प्रकार से देवता बन जाने से रूढ़िवादिता, यथास्थिति को उचित मानने की प्रवृत्ति व्यक्तियों में जन्म लेती है; क्योंकि जब राज्य अथवा समाज के बारे में एक ऐसी धारणा बन जाये कि अति-व्यक्ति (super individual) जो कुछ भी करता है वह उचित होता है। क्योंकि अति-व्यक्ति का मन बहुत श्रेष्ठ है और जो कुछ वह कहता या करता है उसे बिना तर्क विचार के मान लिया जाता है। फलस्वरूप व्यक्तियों में उस अति-व्यक्ति के प्रति आज्ञाकारिता एवं पूर्ण का भाव उत्पन्न हो जाता है। अतः उसको देवता के स्वरूप में मानते हुए व्यक्ति उसका विरोध करने की इच्छा जाग्रत नहीं हो पाती। यदि कोई व्यक्ति यह सोचता है कि राज्य में कुछ अनुचित है फिर भी उसमें इतनी सामर्थ्य नहीं होती कि वह राज्य के विरुद्ध खड़ा हो सके।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सामाजिक मन का सिद्धान्त आपत्तिपूर्ण है। फिर भी अनेक विचारकों ने इस सिद्धान्त का स्पष्टीकरण किया है। अतः यहाँ हमको यह जानना आवश्यक है कि क्या कुछ ऐसे प्रमाण एवं आधार उपलब्ध हैं जिनके ऊपर इस सिद्धान्त को आश्रित कर हम व्यक्ति तथा समाज के स्वभाव का अध्ययन कर सकें। अतः अब हम अगले पृष्ठों में विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रतिपादित किये हुए सामाजिक-मन के सिद्धान्त के अन्दर व्यक्ति तथा समाज के स्वभाव का मनोवैज्ञानिक आधारों पर अध्ययन करने का प्रयास करेंगे।

सामाजिक मन सम्बन्धी विभिन्न सिद्धान्त

विभिन्न प्रकार के समूहों की सामाजिक एकता की समस्या पर सामाजिक वर्गीकरण के आधार पर अनुभवमूलक (empirical) या आगमन पद्धति (inductive method) द्वारा सामाजिक एकता के सिद्धान्त की विवेचना करने का प्रयत्न विद्वानों द्वारा नहीं किया गया है। समाज भी कई प्रकार के होते हैं, अतः उनके एकत्व की मात्रा प्रत्येक समूह में भी भिन्न होती है। उदाहरणार्थ, कुछ सामाजिक समूहों का संगठन सुदृढ़ होता है और कुछ का शिथिल। कुछ समूह विस्तृत होते हैं और कुछ अति संकुचित। सामाजिक मन का सिद्धान्त साधारणतः सुदृढ़ संगठन वाले राज्यों; जैसे—संगठित समाज को दृष्टिपात करते हुए बनाया गया है, विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रतिपादित सामाजिक मन के सिद्धान्त को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

सामाजिक मन सम्बन्धी सिद्धान्त के तीन वर्ग

1. सामूहिक चेतना का सिद्धान्त

यहाँ हम इस सिद्धान्त के मुख्यतः दो विद्वानों—एस्पिना तथा दुरखीम—की विचारधाओं पर विस्तृतरूप में अध्ययन करेंगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(अ) **सामाजिक मन के सिद्धान्त पर एस्पिना के विचार**—एस्पिना के विचार माज एक सामूहिक चेतना का स्वरूप है। इनके विचार में विचार और चारा का मिश्रण होता है और इस प्रकार आत्मा-आत्मा के बीच पारस्परिक -प्रदान की क्रिया होती है जिसके फलस्वरूप "अनेक चेतनाएँ घुलमिल कर एक बन जाती हैं।"[1] अतः चेतना अलग-अलग इकाइयों का एक समूह है। जिक समूह के सदस्यों में एक विशेष प्रकार का अनुराग होता है जो वे एक के प्रति महसूस करते हैं। अतः इस प्रकार एक व्यक्ति की चेतना में समूह न्य सदस्यों की चेतना समाविष्ट हो सकती है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि का केवल समावेश हो सकता है, विभाजन नहीं। चेतना विभाजित भी होती र उसका प्रसार भी होता है। प्रत्येक सामाजिक चेतना के दो मुख्य घटक ituents) होते हैं—संवेदना और आवेग। प्रत्येक सामाजिक चेतना का संवेदनाओं और आवेगों द्वारा होता है। व्यक्ति की चेतना दूसरे व्यक्ति की में संकेतों व प्रतीकों द्वारा प्रसारित होती हैं। संवेग और आवेग किसी भी के संकेत मात्र द्वारा क्षण भर में उसके श्रोतागण या सदस्यों में फैल जाते हैं। ना का विचार है कि चेतना में प्रसरण (diffusion) तथा विभाजित होने के लक्षण विद्यमान रहते हैं। तात्पर्य यह है कि विचारों द्वारा प्रेरित प्रेरणाएँ उन क शक्तियों के समान हैं जिनका प्रसरण, स्थानान्तरण और विभाजन हो सकता तः सामाजिक चेतना और कुछ नहीं केवल मनुष्य के विचारों, आवेगों और ओं की ही पृष्ठभूमि है। इन प्रेरणाओं का प्रसार और विकास पीढ़ी-दर-पीढ़ी तियों के अनुकूल होता है। यह पृष्ठभूमि विशेष रूप से विकसित होने के पश्चात क-दूसरे से पृथक नहीं की जा सकती; क्योंकि मनुष्यों की प्रवृत्तियों और रिक बनावट को प्रत्यक्ष रूप में नहीं देखा जा सकता। फिर भी इनका विकास संशोधन जातीय आधारों पर निर्धारित होता है, न कि वैयक्तिक आधार पर।

एस्पिना का यह कथन है कि समाज की अपनी एक अलग सत्ता अर्थात विकता होती है। समाज की वास्तविकता को परखने के लिए कुछ मापदण्ड एकता और एकरूपता (coherence and consistency) मापदण्ड आधार हैं। जिक घटनाओं की एक व्यवस्था होती है और वे नियमानुकूल होती हैं। अतः मापदण्ड के आधार पर यह कहा जा सकता है कि समाज की अपनी सत्ता होती एक दूसरी कसौटी है—अपने लिए अस्तित्व का होना। समाज का अपना त्व होता है, क्योंकि इसकी आत्मचेतना होती है। इसी विषय में एस्पिना ने

"Fusion de consciences multiples en une seule." Espinas. quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 52, Methuen & Co. Ltd. (1954).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहा है, "यह ऐसी चेतना है जो अपने में और अपने ही लिए अस्तित्व रखती है।"[1] अतः सारांश यह है कि समाज एक वास्तविक सत्य है। व्यक्तियों की मानसिक प्रक्रियाएँ अथवा चेतनाएँ संग्रहीत होकर एक सामूहिक चेतना का स्वरूप धारण कर लेती हैं।

एस्पिना के मत की समीक्षा

(1) एस्पिना के सिद्धान्त में यह मुख्य दोष है कि वह मानसिक प्रक्रिया और मानसिक तत्त्वों में भ्रम पैदा कर देता है। वह इनके भेदों को स्पष्ट रूप में व्यक्त न कर सका, यद्यपि चेतना की प्रक्रियाओं और तत्त्वों में स्पष्ट अन्तर है। मनोविज्ञान और ज्ञान शास्त्र ने स्पष्टतः समझाया है कि तत्त्व मानसिक नहीं होता वरन मन का एक अंश होता है।

एस्पिना इन दोनों में कोई अन्तर नहीं मानते। कभी तो वे शिथिलतापूर्वक मानसिक प्रक्रियाओं को एक व्यक्ति की चेतना से दूसरे व्यक्ति की चेतना में बाह्य चिन्हों व संकेतों द्वारा प्रसार करने की बात करते हैं। और कभी विचारों और अनुभवों को दूसरों के मन में संचरण करने की बात करते हैं। समाज अथवा भीड़ में जो व्यवहार हम देखते हैं उनसे मानसिक प्रक्रियाओं के संचरण की बात सिद्ध नहीं होती। मानसिक प्रक्रियाएँ व्यक्तिगत होती हैं। उनके एकत्व का अनुमान करना उचित नहीं; क्योंकि हम देखते हैं कि एक समान उत्तेजना होने पर भी प्रत्येक व्यक्ति की मानसिक प्रक्रियाएँ विशिष्ट वातावरण और परिस्थितियों के अनुकूल भिन्न-भिन्न होती हैं। उदाहरणार्थ, जब एक भीड़ भय या जोश द्वारा संचालित होती है तो यह जरूरी नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति समान संवेगों का अनुभव करे, जो अन्य कर रहे हैं। प्रायः हम देखते हैं कि भीड़ के अन्दर व्यक्तियों में सुझावग्राह्यता (suggestibility) तथा अनुकरण (imitation) की प्रवृत्ति निस्सन्देह बढ़ जाती है और सोचने-विचारने की शक्ति क्षीण पड़ जाती है, किन्तु फिर भी सहानुभूति (sympathy) और अनुकरण की प्रक्रियाएँ प्रत्येक व्यक्ति में अपनी निजी होती हैं। अतः वास्तविकता यह है कि एस्पिना ने अनुभव की प्रक्रिया में एक इस प्रकार का भ्रम पैदा कर दिया है कि इसकी स्पष्ट रूप से विवेचना नहीं की जा सकती।

(2) **वास्तविकता की कसौटी अनुपयुक्त**—एस्पिना की समाज की वास्तविकता सम्बन्धी यह कसौटी कि "समाज एक ऐसी चेतना है जो अपने में और अपने ही लिए अस्तित्व रखती है," उचित नहीं है। यहाँ प्रश्न उठता है कि क्या वस्तुतः समाज की चेतना होती है? यदि हाँ, तो यह सामाजिक मन क्या सोचता रहता है? उसके विचारों का समाज के व्यक्तियों को पता क्यों नहीं चलता? यह समझना अत्यन्त कठिन है कि समाज क्या सोचता है। प्रत्येक व्यक्ति का मन भिन्न होता है

---

[1] "It is a consciousness excisting in itself and for itself." Espinas quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 53.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विभिन्न मन वैयक्तिक ढंग से ही सोचते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि व्यक्ति अथवा समाज के अन्तर्गत उसकी आध्यात्मिक सम्पत्ति व वस्तुओं में भाग लेते इसलिए यह आध्यात्मिक आदान-प्रदान मानसिक प्रक्रियाओं का नहीं होता वरन त्मिक तत्त्वों का होता है। उक्त तत्त्वों के सम्बन्ध में इतना अवश्य कहा जा है कि उनका अनुभव करते हुए अनुभूति प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत रूप से होती है। अतः हमें यहाँ यह जानना आवश्यक है कि पारस्परिक आदान-प्रदान धार पर समाज की आध्यात्मिक सम्पत्ति का विकास किस प्रकार होता है? भी समाज की भाषा, पौराणिक कथाएँ (myths) तथा परम्पराएँ व प्रचलन का विशेष व्यक्ति के मन की उपज नहीं होतीं। यह किसी एक व्यक्ति के मन का नहीं होतीं वरन इनका स्वरूप भी समाज की तरह सार्वलौकिक होता है। प्रत्येक समाज में प्रचलन, पुराण तथा रीति आदि कुछ विचार किसी दूसरे के विचारों से मिलते-जुलते से हैं तो इसका यह तात्पर्य नहीं निकाला जाना कि कोई एक सामाजिक मन है जो एकरूपीय सामाजिक तत्त्वों की उत्पत्ति रहता है।

(3) व्यक्ति-चेतना का दोहरा अर्थ—एस्पिना के सामाजिक मन के सिद्धान्त और गम्भीर दोष यह है कि एस्पिना ने अपने सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए की चेतना का दोहरा प्रयोग किया है। एक तो व्यक्ति चेतना के रूप में, सामाजिक चेतना में भाग लेने वाली एक इकाई के रूप में। इन दोनों प्रकार चेतनाओं में क्या गुणात्मक अन्तर है, इसका कोई स्पष्टीकरण उन्होंने अपने न्त में नहीं किया।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि एस्पिना ने अपने सामाजिक मन के न्त में समाज के मानसिक स्वरूप की व्याख्या करने में वैज्ञानिक-अध्ययन-ढंग अपनाया है। इसके अतिरिक्त न वे व्यक्ति के स्वभाव और सामाजिक स्वभाव स्पष्टतः विवरण ही दे सके हैं।

(ब) सामाजिक मन के सिद्धान्त पर दुरखीम का मत—दुरखीम का सामाजिक का सिद्धान्त भी एस्पिना के सिद्धान्त की विचारधाराओं पर आधारित है; किन्तु र यह है कि दुरखीम ने उन्हीं आधारों की विस्तृत विवेचना कर अपने सिद्धान्त बोधगम्य रूप देने का अधिक प्रयास किया है। प्रधानतः दुरखीम का सामाजिक का सिद्धान्त व्यक्तिगत प्रतिकृति (representation) और सामाजिक प्रतिकृति द पर आधारित है। दुरखीम ने इन दोनों प्रतिकृतियों में अन्तर किया है। के विचार में आत्मा अथवा द्रव्य जैसी कोई वस्तु मानने की आवश्यकता नहीं। खीम के विचार में मानसिक जीवन वैयक्तिक एवं सामूहिक प्रतिमाओं का स्वरूप है। इन्होंने सामाजिक चेतना का अध्ययन व्यक्तिगत चेतना की व्याख्या द्वारा करने प्रबल किया है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उनका कहना है कि वैयक्तिक चेतना का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि इसका मूल आधार संवेदनाओं में विद्यमान रहता है। यह संवेदनाएं मस्तिष्क के विभिन्न कोषों के पारस्परिक प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप होती हैं। इस प्रकार विभिन्न कोषों द्वारा उत्पन्न हुई संवेदनाओं में अपनी विशेषताएँ होती हैं जो संवेदनाओं के संगठन से पूर्व किसी स्नायुकोषों में विद्यमान नहीं थीं। इस संगठन एवं सम्मेलन द्वारा एक नवीन वस्तु बनती है, जिसे दुरखीम ने 'स्वतः उत्पन्न संश्लेष' (sui generis) कहा है। उसके पश्चात पुनः ये संवेदनाएँ सम्मिलित होती हैं जिनके द्वारा बिम्ब की उत्पत्ति होती है। फिर बिम्ब अथवा प्रतिमाओं के सम्मिश्रण से व्यक्ति विचारों (representations) का निर्माण होता है, अर्थात् सम्मिश्रण की यह प्रक्रिया यहाँ तक व्यक्ति में सीमित रहती है। इस स्थान के पश्चात इस प्रक्रिया का माध्यम बदल जाता है। संवेदनाओं के सम्मिश्रण का अवसर मिलने के पश्चात विचार आकार में परिवर्तित हो जाते हैं। अतः मनुष्य की वाक्शक्ति व संकेत आदि मानवीय विचारों की इस परिवर्तित शक्ति का प्रसार करते हैं और इस प्रकार वे एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक स्थानान्तरित होती हैं। इस स्थान पर विभिन्न वैयक्तिक चेतनाएं जिनको एस्पिना ने 'conscience multiples' कहा है, आपस में संगठित होकर एक नवीन चेतना का निर्माण करती हैं। जिसे 'सामाजिक चेतना' कहते हैं। अब यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस प्रकार वैयक्तिक विचारों का आधार मस्तिष्क के विभिन्न कोषों में है, बिलकुल ठीक उसी प्रकार सामाजिक विचारों का मूल आधार समाज के व्यक्ति होते हैं। अतः सामाजिक चेतना का विकास वैयक्तिक चेतना के संगठन से सम्मिश्रण से होता है। जब वैयक्तिक विचारों का सम्मिश्रण होता है तो एक नवीन विचार की उत्पत्ति होती है, जिसे 'सामूहिक विचार कहते हैं।'

इस सामूहिक विचार के विशेष में दुरखीम ने कहा है, "सामूहिक विचार एक बहुत विशाल सहयोग की उपज होते हैं जिसका विस्तार न केवल देश में होता है वरन काल में भी; सामूहिक विचारों के निर्माण के लिए असंख्य व्यक्तियों ने अपने विचारों और भावनाओं का सम्बन्ध, एकीकरण और संयोग किया है, उनकी बहुत लम्बी पीढ़ियों ने अपने अनुभव और ज्ञान का संचय किया है। अतः उनमें एक विशेष बौद्धिक प्रक्रिया केन्द्रीभूत हुई है जो व्यक्तिगत प्रक्रिया की अपेक्षा अनन्त परिमाण में सम्पन्न और अधिक जटिल है।"[1]

---

[1] "Collective representations are the result of an immense coope-ration which stretches out not only into space, but into time as well, to make them a multitude of minds have associated, united and combined their ideas and sentiments; for them long genera-tions have accumulated their experience and knowledge. A special intellecutal activity is therefore concentrated in them which is infinitely richer and more complex than that of the individual." Durkheim, quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, Methuen & Co. Ltd. (1954), p. 55.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुरखीम के इस सिद्धान्त के अनुसार ये विकसित विचार अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखते हैं। इसके अतिरिक्त इस प्रकार से विकसित विचारों में परस्पर आकर्षण और निषेध की शक्ति होती है, अर्थात सामाजिक संगठन के आधार पर नये सम्मेलन की शक्ति भी होती है। जब ये विकसित विचार अपने विशेष संगठन में वैयक्तिक चेतना से परिवर्तित होकर सामूहिक चेतना का रूप धारण कर लेते हैं तो इनको फिर विभाजित नहीं किया जा सकता, अर्थात वैयक्तिक चेतनाएँ पुनः प्राप्त नहीं की जा सकतीं। दुरखीम के अनुसार सामूहिक चेतना की निम्न विशेषताएं हैं :

(1) **सामूहिक चेतना वैयक्तिक चेतना से बाह्य होती है**—व्यक्ति के अन्दर सामाजिक मन का केवल एक अंश मात्र ही रह सकता है। सामूहिक विचारों का जन्म समूह के विभिन्न वैयक्तिक विचारों के सहयोग का प्रतिफल है; किन्तु इतना होते हुए भी वह व्यक्ति से कहीं अधिक महान होता है। जिस प्रकार विज्ञान बृहत वैज्ञानिकों के सहयोग का फल है, किन्तु वह एक व्यक्ति की मानसिक क्षमता से कहीं अधिक परिपक्व और महान है, उसी प्रकार सामूहिक चेतना वैयक्तिक चेतना के ... है।

दुरखीम ने समझाया है कि धार्मिक विचार व्यक्ति के मन के बाहर से आते हैं उसके मस्तिष्क की देन नहीं हैं। उन्होंने आत्महत्या के कारणों को बताते हुए यही कहा है कि इसका कारण व्यक्तिगत मानसिक चेतना न होकर सामाजिक विघटन (social annomie) है, अर्थात ये सामाजिक लहरें (social currents) वैयक्तिक चेतना से बाहर होती हैं।

(2) **सामूहिक विचारों और वैयक्तिक विचारों में अन्तर होता है**—इसकी व्याख्या करते हुए दुरखीम ने कहा है, "सामूहिक अपने सदस्यों की अपेक्षा, यदि वे समूह से पृथक हों, बिल्कुल भिन्न तरीके से सोचता, काम करता और महसूस करता है।"[1] वैयक्तिक चेतनाओं के सम्मिश्रण से सामाजिक चेतना का निर्माण होता है और जब सामाजिक चेतना विकसित हो जाती है तब उसके विचार व्यक्ति के विचारों से भिन्न होते हैं। इसके अलावा समूह की अपनी विशिष्ट आवाश्यकताएँ और आदतें होती हैं। इस प्रकार की आदतें व आवश्यकताएँ समूह के सदस्यों की प्रकृति, संख्या व प्रसार पर आधारित होती हैं। अतः इन्हीं आधारों के फलस्वरूप समूह की विशिष्ट विशेषताओं का विकास होता है और उसको व्यक्ति की चेतना से बिलकुल अलग स्वरूप प्राप्त होता है।

(3) **सामाजिक चेतना को वैयक्तिक चेतना से उच्च माना है**--दुरखीम के

[1] "The group thinks, acts, feels quite differently than its members, would, were they isolated." Durkheim, quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 56.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनुसार सामाजिक चेतना मानसिक जीवन का उच्चतम रूप है; क्योंकि सामूहिक चेतना वैयक्तिक चेतनाओं की समष्टि चेतना है। इसके अतिरिक्त नैतिक दृष्टिकोण से भी व्यक्ति की अपेक्षा उच्च और धार्मिक वस्तु है। इसके बारे में दुरखीम का कथन है, "समाज ही वास्तविक देवता है।"[1]

(1) **दुरखीम के सिद्धान्त की समीक्षा**—अन्तर्वस्तु और स्वरूप दोनों ही दृष्टिकोणों से व्यक्ति सामाजिक मन का आभारी है अपने सिद्धान्त में दुरखीम ने वैयक्तिक संवेदनाओं को अन्तर्वस्तु अथवा विचारों के वास्तविक तत्त्वों पर ठीक से प्रकाश नहीं डाला है। ऐसा मालूम पड़ता है कि वे शरीर सम्बन्धी अनुभव हैं। विचारों के स्वरूप के विषय में दुरखीम का कहना है कि मन जिन पदों का प्रयोग करता है, जैसे समय, स्थान, कारण और मात्रा आदि, वे सब समाज द्वारा ही प्राप्त होते हैं। इसका स्पष्टीकरण करते हुए दुरखीम ने लिखा है, "प्रत्यय सामाजिक सत्ता के विभिन्न पहलू होते हैं, वर्ग का प्रत्यय शुरू-शुरू में मानव समूह के प्रत्यय से अलग नहीं था; काल के प्रत्यय का आधार सामाजिक जीवन की नियमित गति है; समाज का जिस प्रदेश में निवास होता है वह देश के प्रत्यय के लिए सामग्री जुटाता है, सामूहिक शक्ति कार्यकारी शक्ति के प्रत्यय का आदि रूप था, जो कारणत्व के प्रत्यय का एक आवश्यक तत्त्व है।"[2]

अतः वैयक्तिक मन जिन पदों का प्रयोग करता है उन सब का विकास व प्रसार समाज के विशिष्ट संगठन द्वारा ही हुआ है। इसीलिए वैयक्तिक मन अपने स्वरूप और अन्तर्वस्तु के लिए समाज का आभारी है।

दुरखीम ने उक्त पदों को केवल विचारों के रूप में ही देखने का प्रयास किया है। यदि इन पदों को नियमों के रूप में देखा जाय और इनको विभिन्न विधियों के दृष्टिकोणों से समझने का प्रयास करें, जिनके द्वारा मन अपने अनुभवों का संगठन करता है, तो ये पद सामाजिक मन ही नहीं, वरन वैयक्तिक मन के अंग भी हो सकते हैं। अतः दुरखीम भी एस्पिना की भाँति प्रक्रिया तथा वस्तु के विषय में भ्रम में पड़ जाते हैं।

(2) दुरखीम ने अपने सामाजिक मन के सिद्धान्त का निर्माण प्रारम्भिक अवस्थाओं के सम्मिश्रण के कारण उच्च सत्ता पर आधारित किया है। दुरखीम अपने

---

1 "Society is the real god." Durhkeim, quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 56.

2 "The categories are the different aspects of the social being, the category of class was at first indistinct from the concept of the human group; it is the rhythm of social life which at the basis of the category of time; the territory occupied by the society furnished the material for the category of space, it is the collective force which was the prototype concept of efficient force, an essential element in the category of causality." *Ibid.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के अन्दर यह भी भली प्रकार से प्रमाणित नहीं कर सके हैं कि वैयक्तिक चेतनाओं का मिश्रण किस प्रकार होता है। उनके सिद्धान्त को दृष्टिगोचर यह निश्चित नहीं किया जा सकता कि वैयक्तिक मनों का कार्य किस क अवस्थाओं के संयोग से उत्पन्न होता है। अतः सामाजिक चेतना को किस ठीक मान लिया जाय। इनके सिद्धान्त में इस बात का क्या प्रमाण है कि मनों का सम्मिश्रण और प्रसार होता है तथा इसी को आधारभूत मानते हुए क चेतना का विकास होता है। अतः दुरखीम द्वारा प्रतिपादित यह सामाजिक सिद्धान्त प्रमाणित नहीं है।

(3) दुरखीम ने अपने सिद्धान्त में वैयक्तिक चेतनाओं का विकास विभिन्न के कोषों के सम्मिश्रण पर आधारित किया है। इसी प्रकार से वैयक्तिक ों के सहयोग के आधार पर सामाजिक चेतना को आधारित किया है। यह समझ में आ जाती है कि वैयक्तिक चेतना का अस्तित्व होता है; लेकिन संवेदनाओं को सम्मिश्रण का अवसर प्रदान करने का आधारभूत, जो एक विद्यमान पृष्ठभूमि का कार्य करता है, किसी मानवीय समूह के सदस्यों के कोई ऐसा सातत्य (continuity) नहीं होता। अतः सामूहिक चेतना में कोई विद्यमान पृष्ठभूमि होती है इसका कोई प्रमाण दुरखीम के सामाजिक मन के में नहीं मिलता। जब दुरखीम सम्मिश्रण की बात करते हैं तो उनका मानसिक तत्त्वों से होता है न कि प्रक्रियाओं से। इस सिद्धान्त के अनुसार क चेतना की एक स्वतन्त्र सत्ता मानी जाती है। इसके अन्दर व्यक्तिगत ओं के अनुसार पारस्परिक सम्बन्ध के सम्मिश्रण करने की शक्ति की कल्पना ती है।

उपर्युक्त कल्पना के आधार पर एक दार्शनिक समस्या का उत्थान होता है। यह आन्तरिक वस्तु अथवा आन्तरिक तत्त्व क्या हैं, जिनका सम्मिश्रण होता प्रोफेसर डाज हिक्स (Prof. Dawes Hicks) के विचार में अन्तर्वस्तु की की प्रक्रिया का कोई अस्तित्व नहीं होता। इसी मत का समर्थन गिन्सबर्ग किया है। अतः जब इनका स्वतन्त्र अस्तित्व ही नहीं माना जा सकता तो सम्मिश्रण भी असम्भव है। इसके फलस्वरूप वैयक्तिक मन की अन्तःक्रिया अपूर्ण कहा जा सकता है। यह तो सत्य है कि व्यक्ति का मन अन्य व्यक्तियों की क्रियाओं से प्रभावित होता है; किन्तु यह परोक्ष रूप से होता है। गिन्सबर्ग दुरखीम के सिद्धान्त की समीक्षा करते हुए लिखा है, "निस्सन्देह मनों का सम्बन्ध घनिष्ट होता है, एक मन दूसरे मन की क्रियाओं से प्रभावित होता है, परन्तु परोक्ष रूप में ही होता है। भाषा तथा अन्य संकेतात्मक माध्यम द्वारा एक मन व्यक्तियों के वर्तमान तथा पहले विचारों को फिर से सोच सकता है, अथवा व्यक्तियों के आदर्शों और प्रयोजनों को स्वीकार कर सकता है और उनके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साथ मिलकर उनकी प्राप्ति के हेतु कार्य करने की प्रवृत्ति में लग सकता है। प्रा सम्मिश्रण और परस्पर क्रिया जैसे शब्द मन पर लागू किये जाते हैं तो उनका कोई अर्थ नहीं रहता।"[1]

इस प्रकार सामान्य विचारों और उद्देश्यों के आधार पर मनों के सम्मिश्रण द्वारा प्रस्तुत की हुई चेतना का विकास होने की कल्पना आवश्यक नहीं होती।

(4) अन्य मुख्य आरोपण दुरखीम के सिद्धान्त पर यह है कि व्यक्ति सामाजिक मन में विलीन हो जाता है और उसका कोई व्यक्तित्व शेष नहीं रह पाता। वैयक्तिक मन के विषय में दुरखीम ने कहा है कि वैयक्तिक मन "उन मानसिक अवस्थाओं से बना है जो केवल हमसे और हमारे व्यक्तिगत जीवन की घटनाओं से सम्बन्ध रखती हैं।[2] इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारा अपना ज्ञान सामाजिक तत्त्वों और परिस्थितियों पर निर्भर है। हमारी शारीरिक एवं मानसिक अवस्थाएं भी सविकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान पर निर्भर हैं, जिसका स्वरूप भी सामाजिक होता है; क्योंकि हमारा ज्ञान हमारी शिक्षा और अन्य व्यक्तियों के प्रभाव का फल है। अतः प्रत्यक्ष ज्ञान सामाजिक ही होता है वैयक्तिक नहीं।

इस प्रकार दुरखीम के सिद्धान्त का निष्कर्ष यह निकलता है कि व्यक्तियों की विभिन्नताएँ शारीरिक वेदना की विभिन्नता के कारण हैं। जिस प्रकार "शरीर एक-दूसरे से भिन्न है और उनका अस्तित्व देश और काल के अलग-अलग अंशों में होता है, इसलिए उनमें से हर एक-एक विशेष केन्द्र होता है जिसके आस-पास सामूहिक विचार प्रतिफलित होते हैं और अपने आपको अलग-अलग रंगों में रंगते हैं।"[3]

इसका अर्थ यह निकलता है कि व्यक्ति में मौलिकता और रचना की कोई शक्ति प्राप्त नहीं। गिन्सबर्ग ने इस सिद्धान्त की समीक्षा करते हुए लिखा है, "

---

1 "No doubt minds are independent, influenced by the activities of other minds, but the influence is of an indirect character. Through speech or other symbolic communication, one mind may be made to rethink the ideas of other people in the present or past, or to accept the ideals and purposes of others and be induced to work with them for their realization. But such common ideas or purposes do not necessitate a fusion of minds. Perhaps such terms as fusion or interaction have really no meaning at all when applied to minds." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, pp. 57-58.

2 "All the mental states which are related only to ourselves and to the events of our personal life." Durkheim, quoted by M. Ginsberg, *Ibid*, p. 58.

3 "As bodies are distinct from each other, and as they occupy different points of space and time, each of them forms a special centre about which the collective representations reflect and colour themselves differently." Quoted by M. Ginsberg, *Ibid*, p. 58.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...वस्तुओं के वास्तवीकरण का और मन की प्रक्रिया और प्रकार्य के दृष्टिकोण की ...का परिणाम है। अन्तर्वस्तुएं अनिवार्यतः सामान्य स्वभाव की होती हैं और ...याएं वैयक्तिक के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकतीं।"[1] अतः दुरखीम के इस ...न्त के अनुसार व्यक्ति अपना कुछ भी महत्त्व नहीं रखता अथवा समाज में ही ...लीन हो जाता है।

(5) दुरखीम का कथन है कि प्रत्ययों (categories) की उत्पत्ति का ...वीकरण होता है (प्रत्यय जैसे काल, देश व कारण आदि)। परन्तु वह ऐसा ...लिए करता है क्योंकि वह इन्हें सामान्य प्रत्यय के रूप में मानता है। यदि हम ...न्हीं को प्रक्रिया की विधियों के रूप में देखें अर्थात जिनसे मन अपने अनुभवों का ...ठन करता है, तो उनको सरलतापूर्वक वैयक्तिक मन की रचना का एक आवश्यक ...माना जा सकता है।

(6) दुरखीम अपने सिद्धान्त में वैयक्तिक एवं सामूहिक संवेदनाओं व विचारों ...भेदों का स्पष्टीकरण नहीं कर सके हैं। इस तथ्य में कोई सन्देह नहीं कि व्यक्ति ...व्यवहार समूह में कुछ और होता है और अकेले में कुछ और। इसलिए व्यक्ति ...व्यवहार समूह में अकेले होने के समय की अपेक्षा भिन्न होता है। व्यक्ति के ...वहार में भिन्नता का एक कारण सुझाव अथवा अनुकरण है; किन्तु इस विभिन्नता ...आधार पर यह नहीं माना जा सकता कि व्यक्तियों के एक स्थान पर एकत्रित हो ...ने के कारण एक नवीन सत्ता या मन का निर्माण हो जाता है। इस विभिन्नता का ...नुसन्धान न करके पुरुषोत्तम मन की कल्पना करना उचित नहीं।

(7) अन्त में दुरखीम ने अपने सामाजिक मन के सिद्धान्त में सामाजिक मन ...चेतना को वैयक्तिक चेतना की अपेक्षा उच्चतर माना है; किन्तु इस उच्चता का ...कोई प्रमाण नहीं मिलता; क्योंकि हम यह नहीं जान पाते कि समाज क्या विचार ...करता है। उन विचारों को ज्ञात करने का कोई परोक्ष साधन उपलब्ध नहीं है। ...यदि समाज में क्रियाशील मानसिक शक्तियों की रचना सामाजिक मन का निर्देशन ...है तो हम कह सकते हैं कि सामाजिक चेतना वैयक्तिक चेतना से कभी उच्च नहीं हो ...सकती; क्योंकि समाज की क्रियान्वित मानसिक शक्तियों की रचना में एकता और ...प्रत्यक्ष ज्ञान का अभाव होता है। किन्तु यह अभाव हम महान व्यक्ति के मन में नहीं ...पाते। महान पुरुषों के मन में एकता और उद्देश्य का प्रत्यक्ष स्पष्टीकरण होता है। ...अतः इस प्रकार महान व्यक्ति का मन सामाजिक व्यक्ति की अपेक्षा उत्तम है।

हमने देखा कि उपर्युक्त सामूहिक चेतना के सिद्धान्त में एस्पिना और दुरखीम

---

[1] "This is the result of a hypostatization of contents and neglect of looking at the mind from the point of view of process and function. Contents are essentially universal in character, but processes never can be anything but individual." M. Ginsberg, *Ibid*, p. 58.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने अपने मतानुसार सामाजिक मन की सामूहिक चेतना के विषय में अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये; किन्तु इनके सिद्धान्त सामाजिक मन की व्याख्या में सफल न हो सके। अब हम जर्मन आदर्शवादियों के सिद्धान्त की विवेचना करेंगे।

(2) जर्मन आदर्शवादियों का सिद्धान्त

जर्मन विचारकों ने सामूहिक चेतना को किसी वस्तु या पदार्थ की भाँति नहीं माना है। उनका कथन है कि व्यक्ति के मन में रहने वाले तथ्यों में सामाजिक विशेषताएँ लक्षित होती हैं। जर्मन विचारकों ने फ्रांसीसी विचारकों, एस्पिना और दुरखीम की भाँति यह सिद्ध करने का प्रयास नहीं किया है कि व्यक्तियों की चेतनाएँ एकत्र होकर एक चेतना बन जाती हैं जो समूह का प्रतिनिधित्व करती हैं। जर्मन आदर्शवादियों का कहना है कि व्यक्ति जिस समूह में जन्म लेकर विकसित होता है उस समूह से प्रतिक्रियात्मक सम्बन्ध रखता है। अतः व्यक्ति के विचारों, भावों और व्यक्ति की क्रियाओं में समूह का प्रभाव झलकता है। साथ ही उनका यह भी कथन है कि पूर्ण समूह पर व्यक्तियों की विशेषताओं की छाप भी होती है। अतः इस प्रभाव को प्रमाणित करने के लिए किसी सामूहिक चेतना आदि जैसी वस्तु की कल्पना करने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। उनका कहना है कि किसी भी प्रक्रिया का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से कल्पनाओं के आधार पर नहीं किया जा सकता। अतः कुछ जर्मन मनोवैज्ञानिकों ने इस मत को अवैज्ञानिक अध्ययन से मुक्त करने की कोशिश की है। दो जर्मन मनोवैज्ञानिकों, जार्ज सिमेल (George Simmel) और मैक्स वेबर (Max Weber) ने इस ओर विशेष जोर दिया है। इसलिए यहाँ हम उनके द्वारा प्रतिपादित सामाजिक मन के सिद्धान्तों का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

(1) जार्ज सिमेल का सिद्धान्त—जार्ज सिमेल ने समाज और व्यक्ति के प्रक्रियात्मक प्रश्न को छोड़कर समाज की स्थिरता का आधार खोजने का प्रयास किया है। उनका मत है कि समाज के आधार के रूप में किसी एक व्यक्ति का कोई विशेष महत्त्व नहीं होता; क्योंकि समूह के सदस्यों का परिवर्तन हौले-हौले होता रहता है। अतः समूह की एकता भंग नहीं होती। एक व्यक्ति समूह को छोड़कर बाहर चला गया अथवा उसमें कोई नया सदस्य आ गया, इससे समूह की एकता व परम्पराओं में कोई अन्तर नहीं आ पाता। धीरे-धीरे परिवर्तन द्वारा समूह में एकता स्थापित रहती है अथवा यही सनातन एकता है जो समाज के आधारों में से एक है।

समाज का दूसरा आधार है भाव प्रकाशन करने के माध्यम की एकरूपता। जिस समूह के अन्तर्गत जो भाषा बोली जाती है उसमें भी व्यक्तियों के परिवर्तन द्वारा कोई अन्तर नहीं आता। चाहे समूह में कुछ नवीन व्यक्ति आ जायें, चाहे कुछ व्यक्ति समूह से बाहर चले जायें, इससे समूह की भाषा व भाव प्रकाशन के अन्दर कोई परिवर्तन नहीं होता।

समाज का तीसरा आधार उसके सामूहिक नियम होते हैं। इन नियमों में भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ता होती है । समूह में नियमों का सहारा प्रत्येक व्यक्ति को सुविधा देता है । र व्यक्ति सामूहिक नियमों को बनाये रखना चाहता है, अर्थात समाज को ते नहीं देता और सब बातों से समूह को स्थिर रखने वाले ढंगों व साधनों का न हो जाता है । संक्षेप में, समाज की एकता, भाव व्यक्त करने के माध्यम की ता व सामाजिक नियमों द्वारा समाज स्थिर रहता है ।

जार्ज सिमेल के सिद्धान्त की समीक्षा--सिमेल के सिद्धान्त द्वारा हम सभी के समूहों की एकता का अध्ययन करने में सफल नहीं हो सकते । जो तीन त बातें समाज के आधार के विषय में बतायी गयी हैं वे केवल छोटे समूहों में विद्यमान होती हैं, बड़े समूह में नहीं मिल सकतीं । यह तीन विशेषताएँ उसी में हो सकती हैं जहाँ सदस्यों का अत्यन्त निकट सम्पर्क रहता हो । जैसे— या छोटे गाँव के छोटे समूहों में विद्यमान हो सकती हैं । ऐसा प्रतीत होता जार्ज सिमेल का ध्यान छोटे-छोटे समूहों की ओर ही गया बड़े समूहों की ओर जहाँ पारस्परिक सम्पर्क सम्भव नहीं—जैसे राष्ट्र ।

संसार में शायद ही कोई राष्ट्र हो जहाँ सब लोग एक-दूसरे को जानते हों । तो बहुत दूर की बात है, आप एक छोटे समुदाय, जैसे किसी नगर के एक मुहल्ले ले लीजिए, मुहल्ले के निवासी भी एक-दूसरे को नहीं जानते । इसी प्रकार किसी या वर्ग को ले लीजिए । किसी भी जाति या वर्ग के लोगों के लिए यह सम्भव कि वे जाति अथवा वर्ग के प्रत्येक व्यक्ति को जानते हों, किन्तु फिर भी उनमें ता की भावना पायी जाती है । अर्थात बड़े से बड़े समूह में एकता की भावना होती है और अवसर आने पर प्रकट हो जाती है । इसी प्रकार राष्ट्र में भी ता की भावना होती है । उदाहरणार्थ, भारतवासी भी अवसर पड़ने पर भारतीय का प्रमाण देंगे । भारतवासियों में एकता की भावना तब जागृति होती है जब दूसरा राष्ट्र उन पर आक्रमण करे । उस समय प्रत्येक भारतीय की भावनाएँ रूपता की प्रतिमा होगी । यदि हम मानव व्यवहार का अध्ययन करें तो ज्ञात कि प्रत्येक व्यक्ति में एकता का ज्ञान अचेतन में रहता है और अवसर पर उसकी ना जागृत हो जाती है । भारतवासी को अपने भारतीय होने का ज्ञान तब होगा वह भारत से बाहर किसी दूसरे देश में जाये । इसी प्रकार बंगाली को पंजाब में र पंजाबी को बंगाल में आभास होगा कि वह किस भौगोलिक समूह का सदस्य है ।

उपर्युक्त उदाहरणों से यह ज्ञात होता है कि सभी समूहों में एकता पारस्परिक सम्बन्धों पर ही आधारित नहीं होती । पारस्परिक सम्बन्ध तो छोटे समूह में ही होते हैं । बड़े समूहों में एकता निकटतम सम्पर्कों व सम्बन्धों पर आश्रित न होकर मानसिक आधार पर आधारित होती है । इसलिए गिडिंग्स (Giddings) ने सामूहिक चेतना या सामूहिक मन के स्थान पर जातीय चेतना (consciousness of kind) का प्रयोग किया है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) **मैक्स वेबर का सिद्धान्त**—उपर्युक्त कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए मैक्स वेबर ने दो प्रकार के समूह माने हैं :

(1) प्राथमिक समूह (primary group);

(2) सहायक समूह (secondary group)।

(1) **प्राथमिक समूह**—वेबर का कथन है कि इस समूह में व्यक्ति एक-दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। इन समूहों की एकता का आधार परस्पर सम्बद्ध होने की वैयक्तिक चेतना पर आश्रित है। इसके अन्तर्गत परम्परागत समूह आते हैं जिनको यह चेतना होती है कि वे एक-दूसरे से आवश्यक रूप से सम्बन्धित हैं, जैसे पारिवारिक समूह।

(2) **सहायक समूह**—सहायक समूह के सदस्यों में यह भावना नहीं होती कि वे आपस में आवश्यक रूप से सम्बद्ध हैं। इस समूह के व्यक्ति एक-दूसरे से अपना सम्बन्ध मानसिक विचारों के आधार पर मानते हैं। मानसिक विचारों की एकता के कारण इस समूह के सदस्य एक-दूसरे से नाता जोड़ लेते हैं। इनकी एकता को प्रत्ययात्मक (conceptual) कहा गया है; जैसे राष्ट्र, भौगोलिक समूह जैसे पंजाब, यू. पी. आदि।

समीक्षा—जर्मन विद्वानों ने समाज की एकता के उन आधारों की ओर संकेत किया है जिनका अध्ययन किया जाय तो मालूम होता है कि उन्होंने समूह की एकता की भावना उत्पन्न करने वाले भौतिक तत्त्वों पर प्रकाश डाला है। यद्यपि इन विद्वानों ने वैज्ञानिक अध्ययन करने का प्रयत्न किया है; परन्तु अपने सिद्धान्त को अवैज्ञानिकता से नहीं बचा सके हैं। इसके अतिरिक्त ये विद्वान व्यक्ति और समाज के मानसिक स्वरूप की पर्याप्त व उचित व्याख्या नहीं कर सके हैं।

जर्मन आदर्शवादियों ने वैसे तो वास्तविक सामाजिक चेतना को स्वीकार नहीं किया; किन्तु अपने सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए शायद अनजाने ही सामाजिक चेतना की कल्पना कर बैठे हैं। अतः यह कठिन हो जाता है कि इस सिद्धान्त को सामूहिक चेतना के सिद्धान्त—जिसके विचार एस्पिना और दुरखीम के हैं—से अलग कर सकें।

(3) डॉ. मैकडूगल का सिद्धान्त

डा. विलियम मैकडूगल ने उपर्युक्त सिद्धान्तों के लक्षणों में भिन्नता लिये हुए समूह मन (group mind) के सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया है। इसकी विशद व्याख्या उन्होंने अपनी पुस्तक समूह मन (group mind) में की है।

उन्होंने अपने सिद्धान्त द्वारा अन्य विचारकों के मतों में सुधार करने का प्रयत्न किया है। वे एस्पिना, दुरखीम व अन्य जर्मन आदर्शवादियों के सिद्धान्त को नहीं मानते। उनका कथन है कि सामूहिक चेतना समूह के विभिन्न व्यक्तियों की चेतना से पृथक कोई वस्तु नहीं है। मैकडूगल का प्राथमिक विचार यह था कि प्रत्येक व्यक्ति की समूह सम्बन्धी चेतना है और यह चेतना प्रत्येक व्यक्ति के मन में विद्यमान होती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसकी पुष्टि करते हुए मैकडूगल ने लिखा है, "मैं निश्चय यह कह सकता हूँ कि सामाजिक मस्तिष्क सम्बन्धी मेरे और जर्मन आदर्शवादियों के मत में मुख्य अन्तर यह है कि मैं कम से कम वैकल्पिक रूप से, अपरीक्ष्य कल्पना मानकर, उस मत का विरोध करता हूँ जो सामूहिक अथवा व्यक्ति से महान चेतना में किसी न किसी रूप में समूह का निर्माण करने वाले व्यक्तियों की चेतनाओं को सम्मिलित करता है।"[1]

सामूहिक चेतना के सिद्धान्त को अस्वीकार करते हुए मैकडूगल ने समूह मन के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। वह मस्तिष्क का अर्थ मानसिक और प्रयोजनशील (purposive) शक्तियों के संगठन से लेते हैं, अर्थात वह समाज में एक सामूहिक मन होना मानते हैं; क्योंकि समाज में एक प्रकार का संगठन होता है जो केवल मन की सहायता से ज्ञात हो सकता है। वैयक्तिक मन इसकी इकाई है और इनके पारस्परिक सम्बन्धों द्वारा ही समाज का विकास होता है। अतः समाज में एक समूह मन होता है

समूह मन के तीन आधार—डा. मैकडूगल समूह मन के निम्नलिखित तीन आधार मानते हैं :

(1) **वैयक्तिक मन**—समाज का निर्माण वैयक्तिक मनों के सम्मिश्रण द्वारा होता है जो एक-दूसरे की पूर्ति के लिए होते हैं। वैयक्तिक मनों के बीच जो सम्बन्ध स्थापित होते हैं वे व्यक्तिगत मन के स्वभाव के ही अभिन्न अंग होते हैं, व्यक्तिगत मन के स्वभाव के परे नहीं होते। समाज भी आपस में सम्बन्धित मनों की समष्टि है; क्योंकि वह भी उसी सामग्री से बना है जिससे वैयक्तिक मन। अतः समाज को केवल मन के ही रूप में समझा जा सकता है।

यह सत्य है कि समाज को समझने के लिए मन की सहायता लेना आवश्यक है लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि व्याख्या करने के साधन उपलब्ध न होने के कारण मन के परस्पर सम्बन्धों से जो वस्तु बनती है वह स्वयं भी मन है। इसके विषय में गिन्सबर्ग ने लिखा है, "......फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि मनों के पारस्परिक सम्बन्धों से जो चीज बनती है वह स्वयं भी मन है, जैसे यह नहीं कहा जा सकता कि ईंटों का जो मकान बनता है वह भी ईंट है।"[2]

---

1 "I could say at once that the crucial point of difference between my own view of the group mind and that of the German 'Idealist' school···is that I repudiate, provisionally at least, as an unverifiable hypothesis the conception of a collective or super-individual consciousness, somehow comprising the consciousness of the individuals composing the group." W. McDougall, *Group Mind*. Introduction, p. 19

2 "...It does not follow that the system that results from their inter-relation is itself a mind, a mind any more than a house that consists of bricks is itself a brick." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 61.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गिन्सबर्ग के इस कथन से स्पष्ट हो जाता है कि मैकडूगल ने जिस सामाजिक मन के प्रथम आधार का वर्णन किया है वह उपयुक्त नहीं मालूम होता।

(2) **विभिन्न वैयक्तिक मन समाज का निर्माण नहीं करते**—डॉ. मैकडूगल के सिद्धान्त के अनुसार समाज का दूसरा आधार यह है कि विभिन्न वैयक्तिक मन समाज का निर्माण नहीं करते वरन इसके विपरीत समाज की बहुत-सी सूक्ष्म शक्तियों द्वारा वैयक्तिक मन ढलते और विकसित होते हैं। इसीलिए डा. मैकडूगल ने समूह मन की कल्पना की है। अपने इस कथन कि पुष्टि करते हुए उन्होंने कहा है कि समाज "शक्तियों की एक संगठित समष्टि है, इसका अपना अलग जीवन है, अपनी अलग प्रवृत्तियाँ हैं, यह अपने अंशभूत व्यक्तियों को ढालने की और अपने को सदा एक जैसा बनाये रखने की शक्ति रखता है और यदि इसमें कोई परिवर्तन होता है तो बहुत धीरे।"[1]

(3) **वैयक्तिक और सामूहिक व्यवहार में अन्तर**—डॉ. मैकडूगल का कथन है कि व्यक्तिगत व्यवहार और सामूहिक व्यवहार में अन्तर होता है, इसका स्पष्टीकरण करते हुए मैकडूगल ने लिखा है, "हर एक आदमी समाज के एक सदस्य के रूप में जो कुछ सोचता या काम करता है वह उससे बहुत भिन्न होता है, जो वह एक एकाकी व्यक्ति के रूप में सोचता और करता है।"[2] अतः दुरखीम की भाँति डॉ मैकडूगल यह मानते हैं कि समाज अपने अंगों से अधिक महान है। सामाजिक क्रियाएँ उसके सदस्यों की एकांकी क्रियाओं का समूह नहीं है।

यही कारण है कि मैकडूगल दुरखीम की भाँति यह मानते हैं कि समाज अपनी इकाइयों के सम्मिश्रण से अधिक उच्च और महान है। उनका कथन यहाँ तक है कि संगठित समाज बुद्धि और नैतिकता का एक उच्चतर रूप होता है जो अपने सामान्य व्यक्तियों और महान व्यक्तियों में इतना उच्च नहीं होता। इस प्रकार एक संगठित समाज मनुष्य से अधिक बुद्धिमान और नैतिक होता है।

सारांश यह है कि मैकडूगल ने वैयक्तिक व्यवहार और सामाजिक व्यवहार के अन्तर और समाज के उच्च नैतिक व बौद्धिक स्तर को सामूहिक मस्तिष्क के अस्तित्व का आधार माना है।

---

1 "An organized system of forces, which has a life of its own, tendencies of its own, a power of moulding all its component individuals and a power of perpetuating itself as a self identical system subject only to slow and gradual change." W. McDougall, *Group Mind*, p. 9.

2 "The thinking and acting of each man, in so far as he thinks and acts as a member of society, are very different from his thinking and acting as an isolated individual." W. Mc Dougall, *Group Mind*, pp. 9-10.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

…गल के सिद्धान्त की समीक्षा

(1) डॉ. मैकडूगल ने एस्पिना, दुरखीम व जर्मन आदर्शवादियों के सिद्धान्तों …सुधार करके आपत्तियों से मुक्त एक नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसे …ह मन' का सिद्धान्त कहा गया है। किन्तु यह सिद्धान्त भी आपत्तियों से मुक्त …हीं है। उनके मत के अनुसार समूह मन समाज के व्यक्तियों के परस्पर सम्बन्धित …ों का एक संचित रूप है। इसके अतिरिक्त समाज उसी सामग्री से बना है जिससे …क्ति के मन का निर्माण हुआ है। यहाँ यह सोचने की बात है कि यदि समाज विभिन्न …ों का संयोग है तो समाज का अपना स्वतन्त्र मन कैसे हो गया ?

मैकडूगल जर्मन आदर्शवादियों के मत से सहमत हैं। उनका कहना है कि …ठित समाज का मन उत्तम पुरुष के मन से भी अधिक महान, उच्च बौद्धिक, …क होता है। यही बात जर्मन आदर्शवादियों ने भी कही है। इस प्रकार मैकडूगल …व जर्मन आदर्शवादियों के बीच कोई भी अन्तर नहीं रह जाता। इसके अतिरिक्त …डूगल ने सामूहिक चेतना का विरोध अवश्य किया है। वे आदर्शवादी विचारकों …सामूहिक चेतना को अवैज्ञानिक कहते हैं; किन्तु मैकडूगल जब अपने मत की व्याख्या …ते हैं तो उनकी व्याख्या में सामूहिक चेतना का भाव भी मिलता है।

(2) सत्य तो यह है कि उन्होंने सामाजिक मन का प्रयोग दो भिन्न-भिन्न अर्थों …किया है। एक जगह तो सामाजिक मन उस समाज का प्रतीक है जहाँ सामूहिक …ना (esprit de corps) बहुत विकसित होती है। एक ऐसा समाज जिसमें प्रत्येक …क्ति एक लम्बे समय से समूह से सम्बन्धित होने के कारण समूह के विषय में एक …ष्ट धारणा बना लेता है; फलस्वरूप समूह के कुछ स्थायीभावों का विकास होता …। ये स्थायीभाव व्यक्ति के आत्मरक्षा-सम्बन्धी स्थायीभाव होते हैं जिनमें समूह का …भी सम्मिलित होता है। मैकडूगल के इस सिद्धान्त के विश्लेषण से यह निष्कर्ष …काला जा सकता है कि इसका सिद्धान्त प्रत्येक समाज व समाज-व्यवस्था की …ख्या पर उचित रूप से लागू नहीं होता। यद्यपि यह माना जा सकता है कि कुछ …समाज होते हैं जिनके सदस्यों को अपने समूह का स्पष्ट ज्ञान होता है। मैकडूगल …की यह व्याख्या भारतीय परिवारों की समाज-व्यवस्था के सम्बन्ध में उपयुक्त हो …सकती है। लेकिन मैकडूगल ने सामाजिक मन का प्रयोग इस मत के अनुसार बहुत …म किया है।

उन्होंने सामाजिक मन का एक दूसरा अर्थ माना है, यह आवश्यक नहीं कि …क व्यक्ति के मन में समूह सम्बन्धी विचार हों। सामूहिक जीवन विचारों, रुचियों …व आदर्शों पर आश्रित है। ये विचार किसी एक व्यक्ति के मन की उपज नहीं हैं, …न्त सभी व्यक्तियों के विचारों द्वारा विकसित होते हैं। इसलिए वे व्यक्ति से भी …महान होते हैं। अतः इस दृष्टिकोण से भी मैकडूगल और जर्मन आदर्शवादियों के …सिद्धान्तों में कोई अन्तर नहीं मिलता।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निस्सन्देह यह स्वीकार किया जा सकता है कि सामाजिक विचारों, परम्पराओं की उत्पत्ति किसी एक व्यक्ति के मन द्वारा नहीं हो सकती, वरन बहुत से व्यक्तियों के सहयोग द्वारा हुई होगी। लेकिन यह बात नहीं स्वीकार की जा सकती कि समाज में एक प्रकार की जीवित एकता होती है, जैसी व्यक्ति में होती है। व्यक्ति में तो इस प्रकार की एकता पायी जा सकती है; क्योंकि उसके व्यक्तित्व के विभिन्न अंग एकता द्वारा संगठित रहते हैं। मैकडूगल का यह सिद्धान्त अन्तर्वस्तु की एकता और प्रक्रिया की एकता में स्पष्ट भेद करने में असमर्थ है।

(3) इनके सिद्धान्त के अनुसार सामूहिक मन बौद्धिक और नैतिक दृष्टियों से उच्च होता है; किन्तु वे अपने कथन को अधिक स्पष्ट नहीं कर सके हैं। इस व्याख्या के भी दो अर्थ निकाले जा सकते हैं।

प्रथम, यह है कि संगठित समूह जो भी निर्णय करता है वह समूह के सर्वोत्तम व्यक्तियों के मन से भी उच्च रूप में नैतिक और बौद्धिक रूप धारणा किये होता है। इस तथ्य पर मैकडूगल ने अधिक बल दिया है; किन्तु यह विचार हमारे अन्दर संशय उत्पन्न कर देता है; क्योंकि प्रायः देखा गया है कि क्रांतिकारी युगों में परिवर्तन सामूहिक मन द्वारा नहीं वरन महान व्यक्ति के मन के आधार पर हुए हैं। लोक निर्णय (public opinion) सदा नैतिकता और बौद्धिक दृष्टियों में महान व्यक्तियों के मनों से बढ़कर नहीं होते।

यदि संगठित समाज सर्वोत्तम और महान होता है तो उसका एक कारण समाज के सदस्यों का पारस्परिक सम्बन्ध हो सकता है। यह पारस्परिक सम्बन्ध उसी समाज में सम्भव हो सकता है जहाँ सदस्यों को सामूहिक वाद-विवाद के साधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हों। इस सामूहिक विचार-विमर्श द्वारा समाज में सदस्य एक दूसरे से कुछ सीख सकते हैं, अपनी समस्याओं और सामाजिक पहलुओं को सुलझा सकते हैं। ऐसी परिस्थिति में व्यक्तियों के मन सहयोग से काम करते हैं। वे उन समस्याओं पर विचार करते हैं जिन पर उनका ध्यान एकान्त में नहीं जा सकता।

यहां एक बात यह समझ में नहीं आती कि समूह मन की कल्पना करने की आवश्यकता ही क्या है; क्योंकि समाज के व्यक्तियों के बहुत से मन अपने पारस्परिक सहयोग द्वारा एक विशेष निर्णय पर पहुँचते हैं। अतः यह विशेष निर्णय किसी एक व्यक्ति के मन की देन नहीं है, वरन समाज के अन्य व्यक्तियों के मनों के सहयोग का फल है। इस प्रकार यह निर्णय मन के रूप में व्यक्तियों से उच्च व महान किस प्रकार हो गया?

मैकडूगल ने समूह मन की श्रेष्ठता का दूसरा अर्थ इस प्रकार लिया है कि समाज की परम्पराएँ नीति व संस्थाएँ किसी एक विशेष व्यक्ति के मन की देन नहीं हैं वरन विभिन्न मनों द्वारा प्रतिपादित हैं और अपनी महानता एवं विस्तार में एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...के मन से उत्पन्न हैं। ये संस्थाएँ और परम्पराएँ व्यक्तियों द्वारा ही पीढ़ी-दर-...जीवित रखी जाती हैं। यह तो स्वीकार किया जा सकता है कि इनकी विषय-...व्यक्ति की मानसिक योग्यता से परे है; किन्तु इनकी यह विषय-वस्तु ...के पारस्परिक सहयोग में काम करने वाले मनों से महान नहीं है।

(4) मैकडूगल का कथन है कि समाज का अपना एक मानसिक जीवन होता ...इकाइयों (व्यक्तियों) का मानसिक संयोग मात्र नहीं है; क्योंकि इसकी ...की प्रकृति के आधार पर समष्टि अथवा समाज के स्वभाव का अनुमान ...लगाया जा सकता। इस प्रकार के तर्क उचित नहीं हैं; क्योंकि प्रत्येक इकाई ...में सामाजिक सम्बन्धों की छाप होती है। इस तथ्य को स्वयं मैकडूगल ...इवर के मत को मानते हुए कहा है कि ये सामाजिक सम्बन्ध व्यक्ति के स्वभाव ...वश्यक अंग हैं जो व्यक्ति के अन्दर विद्यमान रहते हैं। व्यक्ति समूह के सदस्य ...में और अन्य व्यक्ति के सम्पर्क में ही रहता है। अतः यह धारणा, कि व्यक्तियों ...स्परिक सम्बन्धों का योग तो प्राप्त किया जा सकता है और उनको सामाजिक ...के विरुद्ध रखा जा सकता है, यथार्थ है।

(5) मैकडूगल आधुनिक समाजों में सामूहिक मन के अस्तित्व के विषय में ...ता (complexity) और परस्परच्छेद (intersection) का भी उपयुक्त ...नहीं कर सके हैं। मैकाइवर ने ठीक ही लिखा है, "सामाजिक संगठन हर ...और हर मात्रा की व्यापकता लिए हुए होते हैं। अगर इंगलैण्ड का एक समूह ...तो बर्मिघम का क्यों नहीं और बर्मिघम के हर मुहल्ले का क्यों नहीं? अगर ...का एक समूह मन है, तो एक धार्मिक संस्था का भी है और एक व्यापारिक ...का भी और ऐसे समूह मन भी मानने पड़ेंगे जो बड़े समूह मनों के अंश हैं तथा ...जो दूसरे समूह मनों को काटते हैं।"[1]

मैकाइवर के इस कथन के उत्तर में डॉ० मकडूगल ने कहा है, "संगठन की ...मात्रा की आवश्यकता होगी जबकि यह कहा जा सके कि इस समाज का ...सिक जीवन है और अपना समूह मन है—यह मात्रा का प्रश्न है। समूह-मन के ...का प्रतिपादन करने वाले के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह इस प्रश्न का

---

[1] "Social organizations occur of every kind and every degree of universality. If England has a collective mind, why not Birmingham and why not each of its wards? If a nation has a collective mind, so have a church and a trade union. And we shall have collective minds that are parts of greater collective minds and collective mind that intersect other collective minds." MacIver. quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 65

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एकदम ठीक-ठीक उत्तर दे।"[1] किन्तु मैकाइवर के आक्षेप का निराकरण नहीं किया जा सकता; क्योंकि एक ही व्यक्ति विभिन्न समूहों का सदस्य हो सकता है जो जीवन के आंशिक पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं। अतः इन समूहों में उस प्रकार ठोसपन व एकता नहीं पायी जाती जो व्यक्ति के मन में हो सकती है।

मैकडूगल ने अपने सिद्धान्त का स्पष्टीकरण करते हुए एक तर्क यह भी दिया है कि हमको समूह मन की कल्पना इसलिए भी करनी है क्योंकि सामूहिक जीवन की समस्याओं की व्याख्या किन्हीं और सिद्धान्तों द्वारा स्पष्ट नहीं हो पाती। अतः सामूहिक मन का सिद्धान्त उस कमी को पूरा कर देता है।

मैकडूगल का यह तर्क अपने सिद्धान्त की पुष्टि में अत्यन्त अवैज्ञानिक है क्योंकि जिन समूह समस्याओं व सामाजिक जीवन की समस्याओं की जो व्याख्या उन्होंने समूह मन के रूप में किया है, उन्हें स्वयं कोई स्पष्ट ज्ञान उन समस्याओं के स्वरूप, अस्तित्व व स्वभाव के विषय में प्राप्त नहीं है। यही कारण है कि वह अन्य सिद्धान्तों की आलोचना करते हुए भी घुमा फिराकर वही बात करते हैं जो अन्य विचारकों के सिद्धान्तों में मिलती है।

मैकडूगल के सिद्धान्त का उपसंहार

मैकडूगल ने जो समूह मन की व्याख्या की है वह दुरखीम व एस्पिनास के सिद्धान्तों की व्याख्या से अपेक्षाकृत अधिक मूल्यवान है। इस विषय में गिन्सबर्ग ने लिखा है, "मैकडूगल ने समूह मन का जो विश्लेषण किया है वह कुछ दृष्टियों से दुरखीम के विश्लेषण से, बल्कि अधिकांश ऐसे लेखकों के विश्लेषण से, जिनको मैं जानता हूँ अधिक मूल्यवान है।"[2] मैकडूगल ने अपने सिद्धान्त की व्याख्या में यह बताया है कि विभिन्न प्रकार के सामाजिक समूहों की मनोवृत्ति में क्या भेद है। उन विधियों को भी बताते हैं जो मन के क्रमिक विकास को और समाज के चेतन नियन्त्रण करती हैं; फिर भी उनके सिद्धान्त का मूल्य इसलिए गिर जाता है कि स्पष्ट रूप में उनका विवेचन न कर सके और समूह मन सम्बन्धी अनेक अर्थों को समझने में लगे रहे। वे कहीं तो सामूहिक चेतना की धारणा का खण्डन करते हैं और फिर कहीं इस धारणा में विश्वास भी करने लगते हैं। कहीं व्यक्ति को ऊँचा ...

---

[1] "By this my withers are quite unwrung. What degree of organization is necessary before a society can properly be said to enjoy a collective mental life or have a group mind is a question of degree, and the exponent of the group mind is under not obligation to return a precise answer to this question." W. McDougall, *Group Mind*, p. 11.

[2] "In some respects the analysis of the group mind given by MeDougall is more valuable than that of Durkheim and, as far as I know, than that of other writers." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 65.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर कहीं सामूहिक मन को वैयक्तिक मन की अपेक्षा उच्च, बौद्धिक और मानते हैं। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि मैकडूगल भी अन्य विद्वानों की भाँति सिद्धान्त का स्पष्टीकरण करने में असमर्थ रहे हैं।

सामाजिक मन सम्बन्धी सिद्धान्तों का साराश

उपर्युक्त तीनों सिद्धान्त मानसिक जीवन व सामाजिक समष्टियों (social ...es) का उचित एवं वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए प्रतिपादित किये गये। सभी सिद्धान्तों की विवेचना करने के बाद भी समूह मन के विषय में कोई चित्र न खींचा जा सका। इसके कई कारण हो सकते हैं। एक तो यह कि उन ...तों का प्रतिपादन ठीक नहीं हुआ अथवा उनमे सामाजिक सत्यों की व्याख्या नहीं। फिर भी हम उपर्युक्त वाद-विवाद के अध्ययन के आधार पर इस ...पर कुछ निष्कर्ष निकाल सकते हैं।

सामाजिक समष्टि का वास्तव में मन होता है; क्योंकि समाज की विशिष्ट ...होती हैं जिनका निर्माण समूह के विभिन्न व्यक्तियों के मनों के अन्तर्सम्बन्ध होता है, और सम्बन्ध मस्तिष्क अथवा मन पर ही आधारित होते हैं। अतः इस ...को अस्वीकृत नहीं किया जा सकता कि सामाजिक एकता मानसिक एकता के ...नहीं होती। लेकिन तथ्य यह है कि समाज के मन को स्वतन्त्र मान लेना ...उचित नहीं; क्योंकि समाज का निर्माण उसके व्यक्तियों द्वारा होता है। अतः ...मन को व्यक्तियों से परे की कल्पना करना कोई वैज्ञानिक कल्पना नहीं है, ...उसका कोई भौतिक आधार ही नहीं होता। इसलिए इस प्रकार की कल्पना ...अध्ययन वैज्ञानिक ढंग द्वारा नहीं किया जा सकता। इसी बात को समझाते हुए ...हॉबहाउस ने लिखा है, "समाजशास्त्रीय गवेषणा में इतनी बाधा किसी चीज से ...होती जितनी पारिभाषिक शब्दों की कमी से अथवा उनकी जगह हो सकने वाले ...रूपकों की कमी से होती है। समाजशास्त्र को अनुभव के अन्य क्षेत्रों से लिए ...शब्दों और अन्य शास्त्रों में गढ़ी हुई धारणाओं को इस्तेमाल करना पड़ता है। ...चीज से हमको सबसे अधिक दूर रहना चाहिए वह है कोई भी ऐसा शब्द जो ...ऐसी एकता का सुझाव देता है जो किसी दूसरी समष्टि में तो पायी जाती हो ...उस विशेष सामाजिक समष्टि में, जिस पर हम विचार कर रहे हैं न पायी ...हो।"[1] प्रो. हॉबहाउस के कथन से स्पष्ट हो जाता है कि समाजशास्त्र में

---

[1] "Social inquiry suffers from nothing so much as a lack of technical terms or of suitable metaphor to supply one place of technical terms. It has to use words derived from other orders of experience and conceptions elaborated in other sciences. What we must most eschew is any term suggesting a form of unity realized in some other whole than the particular social whole which we are considering." Professor HobHouse Quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 66.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपयुक्त शब्दों का प्रयोग करके वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करना चाहिए। समाज मन की कल्पना करना कोई वैज्ञानिक कल्पना नहीं है। यह कल्पना उसी कल्पना समान है जिसमें लोग ईश्वर की मूर्ति बनाकर उसके व्यक्तित्व की स्थापना करते हैं पर यह किसी को ज्ञात नहीं है कि भगवान कहाँ है, उनका रूप कैसा है और उनको किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है? यह कल्पना तो केवल एक अन्धविश्वासी कल्पना हो गयी है। इसी प्रकार समाज के मन की कल्पना की गयी है जो बिल्कुल अवैज्ञानिक है।

उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि समाज अथवा समूह का अपना कोई स्वतन्त्र मन नहीं होता। इसके अलावा यह भी मानना पड़ता है कि सामूहिक मानसिक व्यवहार व्यक्तिगत सदस्यों की अपेक्षा भिन्न होती है। अतः समूह का मानसिक जीवन विभिन्न व्यक्तिगत मनों का मानसिक जीवन होता है अर्थात् वह सामाजिक या सामूहिक जीवन की एकता का आधार है।

इसके अतिरिक्त हम यह देखते हैं कि विभिन्न समुदायों या समूहों में एकता की विभिन्न मात्राएँ मिलती हैं। उदाहरणार्थ भीड़ की एकता का स्तर साधारण होता है। इसकी एकता किसी सामान्य अवधान विषय (common object of attention) पर आधारित होती है। भीड़ की एकता किसी प्रधान भावात्मक प्रवृत्ति पर आधारित होती है। भीड़ के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति उपसेवनीय (suggestible), न्यूनतर उत्तरदायी (less responsible) और न्यूनतर समीक्षाशील (less critical) होता है। व्यक्ति का व्यवहार भीड़ में उस व्यवहार से अपेक्षाकृत भिन्न होता है जो एक व्यक्ति एकाकी होने पर करता है। इस व्यावहारिक भिन्नता का मुख्य कारण भिन्न पर्यावरण और परिस्थितियाँ ही हैं।

अतः इस व्यवहार की व्याख्या करने के लिए किसी मन की कल्पना करना अनिवार्य नहीं; क्योंकि कोई भी कल्पना वैज्ञानिक और उपयुक्त ढंग से व्यवहार की व्याख्या करने में पूर्ण रूप से समर्थ नहीं होती।

अधिक संगठित समाज में मनुष्य अपने हितों का एकीकरण सामाजिक हितों के साथ कर लेता है। इसके फलस्वरूप व्यक्ति के समाज के प्रति एक स्थायी भाव की प्रवृत्ति जागृत हो जाती है। अतः सामान्य उद्देश्य और सामान्य स्थायीभाव समूह मन के परिणामस्वरूप नहीं होते। इस विचार को गिन्सबर्ग ने स्पष्ट करते हुए लिखा है "ये वे विचार और भावानाएँ हैं जिनकी उत्पत्ति व्यक्तियों के अन्दर एक जैसे या एक ही वस्तुओं से सम्पर्क के कारण होती है। केवल प्रक्रिया और अन्तर्वस्तु में ठीक भेद न कर पाने से ही सामान्य मन का सहारा लेने की जरूरत पैदा होती है। कुछ भी हो, संघों की शरीर की-सी विशेषता बहुत बढ़ा-चढ़ाकर दिखायी गयी है और निश्चय ही द्रव्य की वह अविच्छिन्नता तो उनमें नहीं होती जो वैयक्तिक मन में पायी जाती है। संघः जिसके अंश मात्र होते हैं और जिसमें संघों के अतिरिक्त सामाजिक और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रतियोगिता और सहयोग के व्यक्तियों के बीच होने वाले वे सभी सूक्ष्म सम्बन्ध हैं जिनको संगठन में नहीं बांधा जा सकता, ऐसी व्यापार सत्ता जिसको समुदाय कहते हैं, सबसे अधिक जटिल होती है और उसकी परिभाषा देना सबसे कठिन है। यह कहने से कोई बात साफ नहीं होती कि सम्प्रदाय एक मन है।"[1]

इस प्रकार की सामान्य मन की धारणा निम्नलिखित तत्त्वों पर आश्रित है :

(1) समूह में एकत्व की मात्रा उतनी ही अधिक होगी जितना समूह के व्यक्तियों को समूह के उद्देश्यों के विषय में ज्ञान प्राप्त होगा। समूह के सदस्य समूह के उद्देश्यों के मानसिक तत्त्वों को भलीभाँति समझ सकेंगे।

(2) इन उद्देश्यों और समूह के प्रति सदस्यों में जितने आवक स्थायीभाव उतना ही अधिक समूह में एकता का संगठन होगा।

(3) यदि समाज के सभी सदस्य अपने हितों में और समाज के हितों में द्वंद नहीं करते और उनमें समाज के प्रति उत्साह और निष्ठा (loyalty) है तो समाज की एकता अधिक स्थायी और उच्च स्तर पर होगी।

प्रायः यह देखा गया है कि संगठित समूहों में भी अधिकतर सदस्यों को समूह के उद्देश्यों का स्पष्ट ज्ञान और उनमें समूह के प्रति निष्ठा और उत्साह की भावना नहीं होती। इसके विपरीत अधिकांश सदस्य आदत और निर्देश के आधार पर ही समूह में बने रहते हैं। इन आधारों पर (आदत, निर्देश, समान उद्देश्य व स्थायीभाव आदि) आश्रित सामाजिक एकता की व्याख्या के हेतु भी किसी सामान्य मन की कल्पना करना आवश्यक नहीं। अतः केवल अन्तर्वस्तु व तत्त्वों के बारे में गोलमाल होने के कारण ही समूह की चेतना अथवा सामाजिक मन की कल्पना करनी पड़ती है।

जो विद्वान, सामाजिक मन अथवा समूह मन के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करते, वे सामाजिक समूहों का निषेध नहीं कर सकते। उसका कहना केवल यह है कि समूह स्वयं व्यक्ति या मन नहीं हो सकता; क्योंकि सामाजिक समूह भी उतने

---

[1] "They are ideas entertained and sentiments felt by individuals with reference to similar or identical objects. Only a confusion of process and content necessitates the appeal to the common mind. In any case the organic character of associations is much exaggerated and they certainly do not possess the substantive continuity which characterizes individual minds. The kind of reality that belongs to the community, of which associations are merely parts, and which includes, in addition to them, all the subtle relations of harmony and conflict, of competition, and co-operations beetween individuals which escape organization, is the most complex and difficult to define. To say that it is a mind is not in any sense illuminating." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, Methuen & Co. Ltd. (1954), pp. 67-68.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही वास्तविक होते हैं जितने उनके व्यक्ति। समूहों में जो एकता व सामान्य… विद्यमान हैं उनके विश्लेषण के लिए समाज मे (कसी मन या व्यक्ति का निर्माण) करना जरूरी नहीं; क्योंकि उपर्युक्त मनों की कोई भी एकता उक्त सामान्य तत्त्व पर आश्रित नहीं होती। अतः सामाजिक मन के सिद्धान्त का अध्ययन वैज्ञानिक … पर नहीं किया जा सकता।

क्या वास्तव में समूह मन का अस्तित्व है ?
(Does Group Mind Really Exist ?)

समूह मन के विभिन्न सिद्धान्तों की हमने समीक्षा की है। इन सिद्धान्तों के आधार पर यह प्रश्न उठता है कि क्या वास्तव में समूह मन का अस्तित्व है या नहीं है ? समूह मन के सिद्धान्तों से एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यही निकलता है कि व्यक्तियों से पृथक समाज मन या समूह मन होता है, जिसका व्यक्तियों के मन से स्वतन्त्र अस्तित्व है।

कोई भी विद्वान या वैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार नहीं कर सकता कि व्यक्तियों (जो प्राणीशास्त्रीय जीव हैं) के मन से पृथक कोई समाज या समूह मन होता है, क्योंकि समाज या समूह प्राणीशास्त्रीय जीव नहीं हैं, अपितु प्रत्यय मात्र हैं। मन या मस्तिष्क होने के लिए प्राणीशास्त्रीय आधार होना चाहिए, पर समाज या समूह प्राणीशास्त्रीय तत्त्व नहीं है। फिर समाज मन या समूह मन किस प्रकार हो सकता है। इस दृष्टि से यह कल्पना मात्र है। समूह मन के अस्तित्व को बुद्धि स्वीकार नहीं करती। अतः स्पष्ट है कि समाज मन या समूह मन का वास्तव में अस्तित्व नहीं है। समाज मन या समूह मन के सिद्धान्तकारों ने समाज मन या समूह मन के अस्तित्व को कल्पना में सर्जित किया है और इसका अस्तित्व केवल उनके सिद्धान्तों में है, जो वास्तविकता से बहुत दूर हैं। ये कोरी कल्पना मात्र है।

यह सम्भव हो सकता है कि समूह मन की कल्पना इन विद्वानों ने केवल उदाहरण देने के लिए की हो। कई बार सामाजिक घटनाएँ इतनी जटिल होती हैं कि उनके लिए उपयुक्त तकनीकी शब्द उपलब्ध नहीं होते हैं और हम उन्हें अन्य क्षेत्रों के तकनीकी शब्दों से समझाने का प्रयत्न करते हैं। हॉबहाउस (Hobhouse) ने लिखा है कि सामाजिक सर्वेक्षण एवं अध्ययन की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि तकनीकी शब्दों का अभाव रहता है और हम इस अभाव को अन्य विज्ञानों के प्रत्ययों द्वारा पूरा करते हैं। इन शब्दों के प्रयोग से कई गलत धारणाएँ पनपती हैं, क्योंकि हर शब्द का अर्थ उसके अपने सन्दर्भ में होता है। सन्दर्भ के बाहर उस शब्द का अर्थ भिन्न हो जाता है।[1] समूह मन या समाज मन का प्रत्यय भी इसी निर्बलता का शिकार है। मन या मस्तिष्क (mind) का प्रयोग प्राणीशास्त्र के क्षेत्र में होता है। प्राणी…

---

[1] L. T. Hobhouse, *The Metaphysical Theory of the State*, p. 131.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मस्तिष्क एक वास्तविकता है, पर जो प्राणी नहीं हैं; जैसे—समाज, समूह उनके मन या मस्तिष्क होने का प्रश्न ही नहीं उठता। केवल समाज या समूह विक प्रक्रियाओं को व्यक्त करने के लिए मन शब्द का प्रयोग किया गया है, अर्थ का अनर्थ हो गया है।

समाज या समूह की अपनी समाजशास्त्रीय वास्तविकता है और उसी आधार के विचार, अभिवृत्तियाँ, धारणाएँ, मूल्य आदि होते हैं, जिनका प्रभाव व्यक्तियों त्व पर पड़ता है। पर इसका यह तात्पर्य नहीं है कि समाज मन या समूह ता है। समाज या समूह अपने विचारों का संचारण अपने सदस्यों के द्वारा ता है, जो प्राणीशास्त्रीय वास्तविकता है। व्यक्तियों से पृथक समाज या समूह कोई मन या मस्तिष्क नहीं होता है। समूह के सदस्यों की अन्तःक्रियाओं के रूप समाज या समूह कार्य करते हैं।

व्यक्तिगत व्यवहार सामाजिक व्यवहार से भिन्न होता है, इस सत्य को सभी र करेंगे। पर इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं निकाला जा सकता कि व्यक्ति के से पृथक स्वतन्त्र रूप से समाज मन या समूह मन होता है। वास्तव में, सामा- व्यवहार कुछ विशिष्ट परिस्थितियों से प्रभावित होता है, जिनमें व्यक्ति व्यवहार है। मान लीजिए, एक व्यक्ति भीड़ में भिन्न प्रकार का व्यवहार करता है, तो परिस्थितियों-विशेष का प्रभाव है, न कि भीड़ मन (crowd mind) का। भीड़ तेक प्रेरक होते हैं जो व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। गिन्सबर्ग sberg) ने लिखा है, "यह नहीं होता है कि भीड़ में व्यक्तियों के व्यक्तित्व हो जाते हैं अथवा कोई रहस्यपूर्ण सामूहिक चेतना कार्य करने लगती है, अपितु होता है कि भीड़ में प्रत्येक व्यक्ति कम सावधान, कम जिम्मेदार, दूसरों पर कम विश्वास करने वाला और अधिक सुझाव स्वीकार करने वाला हो जाता है। में सन्देह नहीं है कि भीड़ में कोई भी व्यक्ति अकेला नहीं होता, इसलिए वह अनुभव करता है, सोचता है और काम करता है। परन्तु व्यवहार की यह ता केवल एक भिन्न परिस्थिति में प्रतिक्रिया करने का परिणाम है। इसको सम- के लिए निश्चय ही किसी रहस्यात्मक सामूहिक मन का सहारा लेने की आवश्य- नहीं है, जो लोगों के जमा होते ही यकायक उत्पन्न हो जाता है।"

गिन्सबर्ग ने इसी प्रक्रिया को आगे समझाते हुए लिखा है कि अधिक स्थायी संगठित समूहों में कुछ अन्य तत्त्व कार्य करते हैं जिनके कारण व्यक्ति उनमें व्यवहार करता है। समितियों (associations) में उद्देश्य या उद्देश्यों की चेतना व्यक्तियों में एक प्रेरणा का कार्य करती है। ये सदस्यों को जितने अधिक स्पष्ट होते हैं, उतनी ही अधिक एकता समितियों में पायी जाती है। समान लक्ष्यों समान भावनाओं के कारण समिति के सदस्यों का व्यवहार व्यक्तिगत व्यवहार से भिन्न हो जाता है। पर यहाँ पर सामान्य मन की कल्पना कर लेना एक ज्यादती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामान्य मन, समूह मन या समाज मन का कोई अस्तित्व नहीं होता, अपितु परिस्थितियों-विशेष के कारण व्यवहार में भिन्नता पायी जाती है। अतः व्यवहार में भिन्नता की व्याख्या परिस्थितियों के सन्दर्भ में करनी चाहिए, न कि समूह मन की मनगढ़न्त कल्पना करनी चाहिए।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि समाज मन या समूह मन की अवधारणा कोरी कल्पना है और उनका कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं है। समूह में व्यक्ति की मानसिक प्रक्रियाओं की व्याख्या सामाजिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में समझायी जा सकती है। व्यक्ति से पृथक स्वतन्त्र समाज मन या समूह मन न होता है और न हो सकता है, क्योंकि मन केवल प्राणीशास्त्रीय जीव में ही होता है और समाज या समूह प्राणीशास्त्रीय जीव नहीं है, अपितु समाजशास्त्रीय कल्पनाएँ एवं अवधारणाएँ मात्र हैं।

प्रश्न

1. मैकडूगल के समूह मन के सिद्धान्त की विवेचना कीजिए। यह ले बॉ और दुरखीम के सिद्धान्तों से किस प्रकार भिन्न है?

(Discuss McDougall's theory of group mind. How does it differ from the theories of LeBon and Durkheim?)

2. समूह मन के महत्त्व की विवेचना कीजिए।

(Discuss the significance of 'group mind'.)

3. समूह मन के विभिन्न सिद्धान्तों का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।

(Analyze critically different theories of group mind.)

4. सामाजिक मनोविज्ञान समूह मन के अस्तित्व पर क्या प्रकाश डालता है?

(What light does social psychology throw on the existence of group mind?)

5. दुरखीम के समूह मन के सिद्धान्त का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए। क्या समूह मन वास्तव में होता है?

(Discuss critically Durkheim's Theory of Group Mind. Does group mind really exist?)

6. समूह मन के किन्हीं दो सिद्धान्तों का आलोचनात्मक विवेचन कीजिए।

(Discuss critically any two theories of group mind.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

36

सामान्य संकल्प की अवधारणा

(Conception of General Will)

पिछले अध्याय में अनेक विद्वानों ने 'समूह मन' के सम्बन्ध में कल्पना की है और उसे प्रमाणित करने का प्रयत्न भी किया है। सामान्य संकल्प की समस्या भी समूह मन से सम्बन्धित है। व्यक्ति सामाजिक वातावरण में अपना जीवन व्यतीत करता है। कभी-कभी व्यक्ति उत्तेजित होकर ऐसी परिस्थितियों में फंस जाता है कि उसके सम्मुख परस्पर विरोधी प्रक्रियाएँ उदीप्त हो जाती हैं। उन परिस्थितियों के अनुकूल वह अपने संकल्प को दमन करके समाज या समग्र के संकल्प में अपने संकल्प को विलीन कर देता है।

'सामान्य संकल्प' के सिद्धान्त को समझने के लिए यह समझ लेना आवश्यक है कि सामान्य का क्या अर्थ है। 'सामान्य' शब्द इसलिए प्रयोग किया गया है कि संकल्प किसी व्यक्ति का संकल्प न होकर पूरे समूह का संकल्प होता है। इसलिए इसको 'सामान्य संकल्प' की संज्ञा दी गयी है। सामान्य संकल्प समूह के सब सदस्यों के संकल्पों के योग से नहीं बना, वरन् यह उस मन का संकल्प है जिसमें समूह के प्रत्येक व्यक्ति के मन ने इस प्रकार भाग लिया है जिस प्रकार किसी व्यक्ति के मन में उसकी इच्छाएँ, संवेदनाएँ आदि भाग लेती हैं। समूह में व्यक्ति कभी-कभी अपने संकल्प के विरुद्ध भी काम करता है और समूह के संकल्प के सामने अपने संकल्प का दमन कर लेता है। इससे यह ज्ञात होता है कि व्यक्तिगत संकल्पों और समाज के संकल्प में कुछ अन्तर होता है। इसी अन्तर के आधार पर सामान्य संकल्प की कल्पना की गयी है।

इस अध्याय में हमको यह समझना है कि 'सामान्य संकल्प' मत की अवधारणा किस प्रकार विकसित हुई और इसके समर्थकों ने कौन-कौन से विचार प्रस्तुत किए हैं। सामान्य संकल्प की कल्पना मनोवैज्ञानिक आधारों पर इतनी आश्रित नहीं है जितनी कि राजनैतिक और नीतिशास्त्र सम्बन्धी आधारों पर है। इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि सोलहवीं शताब्दी में समाज मनोविज्ञान की अनेक समस्याएँ अधिकतर राजनीति, दर्शनशास्त्र और नीतिशास्त्र के सम्पर्क के आधार पर विकसित हुईं। राजनीति और इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जायेगा कि सोलहवीं शताब्दी के अन्त तक अच्छे शासन की नींव डालने की समस्या बहुत महत्त्वपूर्ण थी। सोलहवीं शताब्दी के अन्त तक राजाओं ने अपनी दैवी शक्ति की ओट में जनता पर खूब अत्याचार किए। जनता ऐसी शासन-सत्ता से पीड़ित थी। विचारक इस शासन-सत्ता को अच्छी शासन-सत्ता में परिवर्तित करने की ओर चिन्तित थे; किन्तु उचित शासन-व्यवस्था करने में अनेक कठिनाइयाँ थीं। जनता में शासन-सत्ता के प्रति विश्वास कायम करना था। इस कार्य को सर्वप्रथम हॉब्सहाउस ने कार्यान्वित किया। हॉब्सहाउस ने जनता को सान्त्वना दी कि निरंकुश शासन-सत्ता की व्यवस्था को हटाकर जनता की इच्छानुसार शासन-व्यवस्था की स्थापना होगी। उपर्युक्त आधार पर हॉब्सहाउस ने सर्वप्रथम सामान्य संकल्प की अवधारणा को जन्म दिया। इसके पश्चात् जान लॉक (1632–1704) ने समझौते के मत (social contract) की पुष्टि करते हुए राज-सत्ता को 'सामान्य संकल्प' पर आधारित किया। लॉक का विचार है कि 'सामान्य संकल्प' का आधार 'सामान्य उद्देश्य' होते हैं। लॉक का कथन है कि सामान्य संकल्प तभी हो सकता है जबकि व्यक्तियों के उद्देश्य, इच्छाएँ और रुचियाँ भी समान हों। रूसो ने सबसे पहले सामान्य संकल्प के सिद्धान्त की व्याख्या की है।

सामान्य संकल्प की समस्या पर अनेक विद्वानों ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये हैं; किन्तु उनकी व्याख्या का कोई व्यवस्थित रूप नहीं है। गिन्सबर्ग ने 'सामान्य संकल्प' का अध्ययन करने के हेतु अनेक विद्वानों के मतों को पांच दलों में विभाजित किया है। यद्यपि ये पाँचों दल एक-दूसरे के विरोधी नहीं हैं, फिर भी सामान्य संकल्प की अवधारणा को भलीभाँति समझने के लिए प्रत्येक मत का अध्ययन करना उचित रहेगा। जैसा कि हम उपर्युक्त विश्लेषण में कह चुके हैं कि सर्वप्रथम सामान्य संकल्प के सिद्धान्त की पूर्ण व्याख्या रूसो ने की थी। अतः हमारे लिए यह भी आवश्यक हो जाता है कि हम रूसो के मत का भी अध्ययन करें। इस प्रकार रूसो के सामान्य संकल्प के सिद्धान्त को मिलाकर छह दल हो जाते हैं। सर्वप्रथम हम रूसो के मत पर विचार करेंगे।

1. रूसो का सामान्य संकल्प का सिद्धान्त
(Rousseau's Theory of General Will)

रूसो के 'सामान्य-संकल्प' के सिद्धान्त की नींव उस समय पड़ी जब उसने अपने राजनैतिक विचारों में 'सामाजिक प्रसंविदा' (social contract) के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। रूसो का मत है कि सामाजिक प्रसंविदा के आधार पर ही समाज की उत्पत्ति हुई है, किन्तु उसमें व्यक्तियों की अहं इच्छा अत्यन्त आवश्यक है। समाज का विकास समाज के प्रत्येक सदस्य की इच्छा पर आश्रित होता है फिर उसके पश्चात् सामान्य संकल्प की अवधारणा होती है।

सामान्य संकल्प के हेतु व्यक्तिगत संकल्प का दमन—इस मत के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति में दो प्रकार की इच्छाएँ होती हैं—एक इच्छा तो वह, जो व्यक्ति के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हित व स्वार्थ की पूर्ति के लिए होती है और दूसरी वह, जो दूसरों के हित के होती है। जब व्यक्ति समाज के अन्तर्गत अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है वह अन्य व्यक्तियों के विरोध के भय के कारण अपने वास्तविक संकल्प को, जो अपने हित के लिए होता है, अव्यक्त रखता है और व्यक्ति अपने व्यक्तिगत अथवा वास्तविक संकल्प (actual will) का दमन करके सामूहिक स्वार्थ नैतिक इच्छा (real will) में विलीन कर देता है और सामान्य संकल्प के आधार पर पूर्ण समष्टि की इच्छाओं की पूर्ति की जाती है। सामान्य संकल्प के में रूसो ने लिखा है, "सामान्य संकल्प सदा ठीक ही होता है और सार्वजनिक की ओर अग्रसर होता है।"[1]

सामान्य संकल्प और सबके संकल्प में अन्तर (Difference Between General Will and Will of All)—रूसो के अनुसार सामान्य संकल्प सबके संकल्प से भिन्न है। सामान्य संकल्प पूर्ण समूह के व्यक्तित्व का संकल्प होता है जो समान हितों की पूर्ति की ओर ध्यान देता है। इसके विपरीत सबका संकल्प व्यक्तियों के संकल्पों का योगफल ही है जो व्यक्तिगत स्वार्थों पर विचार करता है। सामान्य संकल्प को अच्छी प्रकार समझा जा सकता है, यदि हम इसकी विशेषताओं की विवेचना करें। रूसो के अनुसार सामान्य संकल्प की निम्न प्रमुख विशेषताएँ हैं :

सामान्य संकल्प की विशेषताएँ

(i) **एकता (Unity)**—सामान्य संकल्प किसी राष्ट्र में एकता की स्थापना करता है और उस राष्ट्र के किसी आदर्श नागरिक के गुणों द्वारा प्रदर्शित होता है।

(ii) **स्थायित्व (Permanence)**—सामान्य संकल्प वैयक्तिक संकल्प की अपेक्षा अधिक स्थायी होता है।

(iii) **शुद्ध संकल्प (Right Will)**—यह संकल्प उचित संकल्प होता है, क्योंकि यह सदैव सामान्य हित की ओर उन्मुख रहता है। इसके अतिरिक्त यह दोष-रहित होता है।

समीक्षा (Criticism)—कुछ विद्वानों ने रूसो के सिद्धान्त के विरुद्ध निम्नांकित आरोप लगाये हैं :

(1) यह निर्धारित करना कि सामान्य संकल्प क्या है, अत्यन्त कठिन है। रूसो के इस सिद्धान्त द्वारा सामान्य संकल्प के स्वरूप को नहीं समझा जा सकता।

(2) हम पहले से ही यह अनुमान नहीं लगा सकते कि जो काम सामान्य संकल्प के अन्तर्गत किया जायेगा वह उचित सिद्ध होगा या नहीं। इसका अनुमान तो कार्य समाप्ति पर ही किया जा सकता है।

[1] "The general will is always right and always tends to the public advantage." Rousseau.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) संकल्प किसी एक व्यक्ति का हो सकता है। समाज के सामान्य संकल्प का कोई मौतिक आधार नहीं, क्योंकि समाज केवल एक व्यक्ति तो नहीं है और किसी ऐसे संकल्प का होना कठिन है जो किसी एक व्यक्ति का न हो।

(4) सामान्य संकल्प की अवधारणा निरंकुशता का प्रसार करती है, क्योंकि सामान्य संकल्प के आधारभूत कुछ थोड़े से व्यक्ति ही होते हैं और वे इसके नाम की आड़ में जनता पर मनमाने अत्याचार करते हैं।

उपर्युक्त आरोपों के होते हुए भी लार्ड के अनुसार रूसो के मत का अपना महत्त्व है। लार्ड ने अपनी पुस्तक (Principles of Politics) में रूसो के सिद्धान्त की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताओं का उल्लेख किया है, जिनको अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

रूसो के सिद्धान्त का महत्त्व

(1) **गतिशील मन** (Dynamic Mind)—रूसो का सामान्य संकल्प का सिद्धान्त समाज के गतिशील मन की स्थापना करता है। समाज के नियम स्थायी रूप में निश्चित नहीं किये जा सकते, क्योंकि समाज के नियम जनता की आवश्यकताओं और हितों पर निर्मित किये जाते हैं। समाज की आवश्यकताओं और हितों के अनुसार समाज के नियम भी बदलने पड़ते हैं।

(2) **सामुदायिक हितों की समानता** (Likeness of Group Interests)—सामुदायिक हित समुदाय के प्रत्येक सदस्य के लिए समान होता है। सामान्य संकल्प में सामुदायिक हितों को प्रधानता मिलनी चाहिए। यह समूह के सदस्यों के लिए आदर्श निर्मित करता है और सामान्य हित को अपना लक्ष्य बनाता है।

(3) **समाज एक समष्टि है** (Society is Itself a Whole)—समाज विभिन्न तत्त्वों का योगमात्र ही नहीं है, वरन् एक सम्पूर्ण इकाई है। इस सिद्धान्त द्वारा एकता की भावना विकसित होती है।

(4) **राज्य का आधार सामान्य संकल्प** (General Will, the Basis of State)—रूसो का सिद्धान्त इस बात पर विशेष बल देता है कि राज्य का आधार सामान्य संकल्प पर आश्रित होना चाहिए।

उपर्युक्त सब विशेषताएँ राजनैतिक दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण हैं, किन्तु उन तथ्यों को मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने पर हमें इस सिद्धान्त से कोई विशेष बात ज्ञात नहीं होती। रूसो के सिद्धान्त से हमको मनोवैज्ञानिक आधार पर इतना जरूर मालूम हो जाता है कि अनेक व्यक्तियों के मत सामान्य संकल्प पर आधारित होते हैं। किन्तु यह नहीं ज्ञात हो पाता कि इसके मानसिक तत्त्व क्या होंगे और इस प्रक्रिया का विकास किस प्रकार होगा। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि इसको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिद्धान्त मनोविज्ञान की दृष्टि से हमें सामान्य संकल्प की अवधारणा के अध्ययन विषय में कोई विशेष सहायता नहीं देता।

2. मैकडूगल और नोविकोव का मत (Views of McDougal and Novikov)

(अ) मैकडूगल का मत—मैकडूगल के समूह मन के सिद्धान्त में और सामान्य संकल्प के सिद्धान्त में कोई विशेष अन्तर नहीं है। मैकडूगल के अनुसार सामान्य संकल्प की उत्पत्ति तब होती है जबकि समाज के प्रत्येक व्यक्ति या समाज अथवा समूह के अधिकाधिक व्यक्तियों को समूह या समाज की सम्पूर्णता का स्पष्ट ज्ञान हो और वे समूह के हित को एक ही मानें।

(ब) नोविकोव का मत—नोविकोव के मतानुसार इस प्रकार के समष्टि सम्बन्धी विचार समाज के महान व्यक्तियों (social elite) में ही विद्यमान होते हैं। उनका कथन है कि यदि समाज के वास्तविक नेता सामान्य हित का ध्यान रखते हैं तो यही सम्पूर्ण सम्बन्धी विचार होगा और यही सामान्य संकल्प का प्रतिनिधित्व करते हैं।

नोविकोव और मैकडूगल के विचार लगभग एकसे ही हैं। नोविकोव ने अपने सिद्धान्त में कोई नयी बात नहीं प्रस्तुत की। उसके सिद्धान्त में भी वही दोष विद्यमान हैं जो मैकडूगल के सिद्धान्त में हैं।

3. प्रोफेसर मैकेन्जी द्वारा सामान्य संकल्प का स्पष्टीकरण (Professor Mackenzie's View on General Will)

प्रोफेसर मैकेन्जी ने इस सिद्धान्त पर अपनी पुस्तक में स्पष्ट रूप से विवरण दिया है। अपने मत का स्पष्टीकरण उन्होंने एक उदाहरण द्वारा किया है। उनका कथन है कि मान लीजिए कि किसी परिवार के सदस्य छुट्टियाँ व्यतीत करने के लिए कहीं बाहर जाने के इच्छुक हैं। परिवार का प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने मतानुसार कोई जगह चुनता है। ऐसी परिस्थिति में अनेक व्यवहार प्रगट होने की सम्भावन हो सकती है।

एक सम्भावना तो यह हो सकती है कि जिसकी जहाँ इच्छा हो चला जाय। दूसरी सम्भावना यह भी हो सकती है कि परिवार का बड़ा-बूढ़ा जहाँ के लिए कह दे परिवार वहाँ चला जाये। इस परिस्थिति में परिवार के बड़े-बूढ़े का संकल्प परिवार के सदस्यों के संकल्पों को दबाकर काम करेगा। तीसरी सम्भावना यह हो सकती है कि परिवार के सभी सदस्य एक ऐसी जगह चुन लें जो सबको रुचिकर हो और जहाँ सब लोग जाना चाहते हों। यह सबकी इच्छा हुई। एक सम्भावना यह भी हो सकती है कि परिवार के सदस्य उस जगह पर जाने का निर्णय करें जहाँ सबको समान सुविधाएं व असुविधाएँ हों। इस प्रकार के संकल्प को मैकेन्जी ने सामूहिक संकल्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(co-operative will) कहा है। अन्तिम स्थिति यह हो सकती है कि मान लीजिए कि परिवार से कोई बीमार व्यक्ति है। इस विशेष परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए परिवार के सभी सदस्य सामूहिक मन से किसी एक स्थान का चुनाव कर लें। इस परिस्थिति में जो निर्णय हुआ कि वह सामान्य संकल्प द्वारा हुआ। गिन्सबर्ग ने मैकेन्जी के मत का उल्लेख करते हुए लिखा है, "संकल्प तभी सामान्य कहलायेगा जब विचारपूर्ण विवाद के पश्चात् ऐसा निर्णय किया जाये जिसका उद्देश्य विभिन्न मतों का एकीकरण करना हो। केवल व्यक्तिगत संकल्पों का योगफल मात्र नहीं, वरन् समूह के प्रत्येक सदस्य का सहयोग प्राप्त करना जिसका लक्ष्य हो।"[1] इस आधार पर मैकेन्जी के सामान्य संकल्प के सिद्धान्त की दो विशेषताएँ हैं।

1. किसी निर्णय तक पहुँचने में कई व्यक्तियों का सहयोग होना।
2. उस निर्णय के अन्तर्गत पूरे समूह के हित व भलाई का ध्यान रखना आवश्यक है।

उपर्युक्त दोनों विशेषताएँ जिस किसी निर्णय में विद्यमान होंगी उसका हम सामान्य संकल्प का निर्णय कहेंगे।

समीक्षा (Criticism)—प्रोफेसर मैकेन्जी द्वारा प्रतिपादित सामान्य संकल्प के सिद्धान्त की प्रथम विशेषता, कि समूह में किसी समस्या के निर्णय में समूह के सभी सदस्यों का सहयोग हो, सदैव सम्भव नहीं है। साधारणतः निर्णय सभी सदस्यों के मतानुकूल नहीं होता, वरन निर्णय उन व्यक्तियों के दृष्टिकोण के अनुकूल होता है जो निर्णय से प्रभावित होते हैं। यदि इस विशेषता को हटा दिया जाये तो निर्णय कुछ व्यक्तियों की इच्छा पर निर्भर हो जायेगा। ऐसी स्थिति में कुछ व्यक्तियों का निर्णय सामान्य संकल्प का रूप धारण कर लेता है। वास्तव में, निर्णय बहुत कुछ ही थोड़े व्यक्तियों की अनुमति के परिणामस्वरूप होते हैं।

इसके अतिरिक्त मैकेन्जी का यह सिद्धान्त बहुत छोटे समूह, जैसे—परिवार पर लागू किया जा सकता है; क्योंकि वहाँ सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध घनिष्ठ होते हैं और वे एक-दूसरे की सुविधा व असुविधा को भली प्रकार समझते हैं। प्रत्येक समूह में अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं, जो दूसरे समूहों से भिन्न होती हैं। इन समूहों; जैसे—बड़े-बड़े समूहों पर इस प्रकार के सामान्य नियमों की कल्पना नहीं की जा सकती। अतः बड़े समूहों के क्षेत्र में लागू करने से उपर्युक्त दोषों का समावेश होने की सम्भावना है।

"[1]......a will is said to be general when a decision is arrived at by deliberate discussion, aiming at a real integration of differences, i. e., at utilizing the contribution of each constituent member of a group, and not at mere blending of individual wishes." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 71

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मिस फालेट ने अनेक मतों के संयोग को मनों की सम्मिश्रण की अवस्था में ...ा दिया है। अतः इस परिस्थिति के अनुकूल 'सामान्य संकल्प' मैकडूगल के अनु-...र एक यथार्थ सत्ता बन जाती है।

4. बार्थ का सिद्धान्त
(Barths Theory)

बार्थ का मत है कि व्यक्ति सदैव अपने हित का ही चिन्तन करता रहता है। ...समाज की भलाई सामान्य चिन्तन का विषय तभी बन सकती है जब सामाजिक ...विकास के उच्चतम प्रक्रम (stages) उपलब्ध हों। गिन्सबर्ग के अनुसार यह उचित प्रतीत होता है। यदि समाज के सदस्य दूसरे सदस्यों की भलाई व हित के चिन्तन ...लग जायें तो धीरे-धीरे यह आदत व विचार समाज के सदस्यों के चिन्तन के तत्त्व ...बन जायेंगे, जिसके परिणामस्वरूप सामान्य संकल्प की स्थापना हो सकती है।

बार्थ ने व्यक्ति की आत्मचेतना की प्रक्रिया के आधार पर समाज की आत्म-...चेतना (self-consciousness) की व्याख्या की है। व्यक्ति की चेतना भी स्थायी ...व अस्थायी होती है। बार्थ ने कहा है कि समूह या समाज के जीवन में कुछ ऐसी ...घटनाएँ व ऐसे समय उपस्थित होते हैं जब समाज के अन्तर्गत विचार, इच्छा व ...भावना कुछ सीमित समय या क्षणों तक चलते हैं। इस परिस्थिति में समाज की ...आत्मचेतना अपने निम्न स्तर पर होती है। बार्थ के इस सिद्धान्त के अनुसार वैयक्तिक ...चेतना अस्थिर और स्थायी तत्त्वों का सम्मिश्रण एव संयोग है। अस्थिर तत्त्वों व ...स्थिर और स्थायी तत्त्वों का भेद व्यक्ति को आत्मचेतन (self-conscious) बना ...देता है। ठीक इसी प्रकार समाज में भी कुछ तत्त्व अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होते हैं; ...जैसे—परम्पराएँ और सामान्य अतीत की चेतना। जब इन स्थायी तत्त्वों (परम्पराएँ ...आदि) के सम्पर्क में नवीन विचारधाराएँ व अनुभव (अस्थायी तत्त्व) आते हैं तो ...समाज आत्मचेतन हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप समाज में सामान्य संकल्प की ...उत्पत्ति हो जाती है।

समीक्षा (Criticism)—इस सिद्धान्त पर विचार करने के लिए हमें दो मुख्य ...बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

(1) हमें संकल्पात्मक क्रिया और संकल्प की वस्तु (उद्देश्य) की भिन्नता ...स्पष्ट रूप में समझ लेना चाहिए।

(2) संकल्प की विशेष क्रिया और संकल्प के अभ्यासों (आदतों व प्रवृत्तियों) ...की भिन्नता समझ लेना चाहिए और उनमें भेद कर लेना चाहिए।

मनुष्य जन्म से मृत्यु तक समाज में रहता है। व्यक्तियों के विचारों के परि-...णामस्वरूप परम्पराएँ एवं धारणाएँ उत्पन्न होती हैं। इन पर सामाजिक वातावरण ...विभिन्न परिस्थितियों द्वारा प्रभाव डालता है। इसके प्रभाव से समाज के सदस्य भी ...नहीं बचते। जिसके फलस्वरूप समूह में व्यक्ति को संकल्प की विशिष्ट क्रिया या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

•CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संकल्प द्वारा कार्य करने की आदत पड़ जाती है। बार्य का कहना है कि ऐसी स्थिति में जबकि व्यक्तियों के संकल्प की क्रियाएँ और प्रवृत्तियाँ एक प्रकार की हों, तब हम इसे समाज का 'सामान्य संकल्प' कह सकते हैं। इसका यह तात्पर्य नहीं कि समाज के सभी सदस्यों का लक्ष्य सामान्य होता है या संकल्प अनेक विशिष्ट संकल्पों से पृथक सामान्य हो। यह भी सम्भव नहीं कि समाज के सभी सदस्य संकल्प द्वारा एक ही लक्ष्य या हित की ओर उन्मुख हों। इसके अतिरिक्त स्वतन्त्र सामान्य संकल्प भी असम्भव-सा है। तथ्य तो यह है कि 'सामान्य' शब्द इस बात का प्रतीक है कि जो कुछ सामान्य विचार व आदर्श होते हैं, व्यक्तियों के विशेष संकल्प की क्रियाओं को प्रभावित करते हैं और उसके साथ-साथ सदस्यों को समान निर्णय करने की ओर प्रेरित भी करते हैं। इस तथ्य का स्पष्टीकरण करते हुए गिन्सबर्ग ने लिखा है, "ऐसी स्थिति में हम 'समष्टि का संकल्प' कहने के अधिकारी नहीं हैं, किन्तु 'सबका संकल्प' कहेंगे जो समष्टि के हित के बोध द्वारा निर्धारित होती है। संकल्प की क्रियाएँ अनिवार्य रूप से वैयक्तिक और वास्तविक ही होती हैं।"[1]

सामाजिक व सार्वजनिक कार्यों की व्याख्या करने वाली मानसिक शक्तियों में कोई ऐसा अंश नहीं मिलता जिसे शुद्ध संकल्प (**right will**) कहा जा सके। इन मानसिक शक्तियों के अन्तर्गत अस्पष्ट उद्देश्यों, अन्ध आवेगों, अचेतन प्रवृत्तियों व आदतों आदि का समावेश होता है। अतः यह हमारे लिए अत्यन्त कठिन हो जाता है कि हम इस ढेर में संकल्प के तत्त्वों को ढूंढ सकें। इस सम्बन्ध में गिन्सबर्ग ने ग्राहम वेलैस के कथन की पुष्टि करते हुए लिखा है, "बड़े-बड़े राजनैतिक निर्णय भी बहुत कम किसी समूह के सब सदस्यों या बहुसंख्यक सदस्यों के स्पष्ट सहयोगपूर्ण विचार-विमर्श की उपज होते हैं।" उक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज की साधारण क्रियाओं या बड़े-बड़े राजनैतिक निर्णयों में भी सामान्य संकल्प का स्वरूप नहीं मिलता।

यदि डॉ. मैकडूगल के मत से सहमत होकर हम सामान्य संकल्प को समूह के उन कामों तक सीमित रखें जिनसे समूह के प्रत्येक सदस्य के संकल्प द्वारा निर्णय किये गये हों और समूह के प्रति सम्मान की भावना के परिणामस्वरूप हों तब सामान्य संकल्प का दायरा बहुत सीमित हो जायगा। इस प्रकार की सामान्य संकल्प की धारणा केवल परिवार जैसे छोटे समूह तक ही उपयुक्त हो सकती है। विस्तृत समूहों में इस प्रकार का संकल्प केवल आकांक्षा मात्र ही हो सकता है।

राष्ट्र अनेक समूहों का संयोग है और प्रत्येक समूह अपने पृथक उद्देश्यों पर आश्रित होता है। यह सत्य है कि राष्ट्र के उच्चतम व्यक्तियों में राष्ट्र के लिए सुरक्षा

---

1 "We are not in such cases entitled to speak of a *will of the whole*, but merely of a *will of all*, determined by a sense of the good of *the whole*. The acts of volition must remain individual, concrete." Morris Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 73

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सहयोग की भावनाएँ पायी जा सकती हैं; किन्तु फिर भी अधिकतर व्यक्ति प्रकार के सुप्त विचारों, अस्पष्ट इच्छाओं और आवेगों द्वारा संचालित हैं। विषय में गिन्सबर्ग का कथन है, "इसलिए हम कह सकते हैं कि जटिल समूहों में आत्मचेतना-युक्त संकल्प विद्यमान है तो वह सामान्य नहीं होती और यदि किसी में काम करने वाली मानसिक शक्तियाँ सामान्य होती हैं तो वे संकल्प हैं।"[1]

बार्थ के मतानुसार जब राष्ट्र संकट में हो तो राष्ट्र एक चेतना या एक समष्टि में क्रियाशील हो सकता है, किन्तु बार्थ ने राष्ट्र सम्बन्धी जिस आत्मचेतना विवरण दिया है वह कभी-कभी घटित होता है। जब राष्ट्र को यह आभास है कि राष्ट्र की सुरक्षा या गौरव संकट में है तो राष्ट्र एक सम्पूर्ण इकाई के क्रियाशील होता है; किन्तु इससे सामान्य संकल्प का तात्पर्य कदापि नहीं चाहिए, वरन् ऐसे अवसरों पर अथवा संकट के समय पर तो प्राकृत समूह (...) मनोवृत्ति के अन्तर्गत निम्न कोटि के आवेग और मूलप्रवृत्यात्मक व्यवहार हो जाते हैं। उपर्युक्त कथन से यह सिद्ध हो जाता है कि जिस प्रकार बार्थ कि संकट के समय सामान्य संकल्प द्वारा कार्य होता है, सत्य नहीं है, वरन् समय तो संवेग और मूलप्रवृत्तियाँ सर्वोपरि होती हैं।

बार्थ ने अपने सामान्य संकल्प के सिद्धान्त में जिन दो मुख्य बातों का वर्णन है कि वे सबके हितों के लिए हों और उनमें सबका सहयोग हो—इस प्रकार सामान्य संकल्प की धारणा केवल वर्गहीन समाज और प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में सम्भव हो सकता है। इसके अतिरिक्त इन दोनों विशेषताओं की पूर्ति के लिए नैतिक विकास के उच्चतम प्रक्रम होने चाहिए। इसके साथ-साथ समाज का वर्गहीन होना अत्यावश्यक है। किन्तु आज के समाज के वर्तमान स्तर पर दृष्टि-पात करते हुए, जो वर्गों का एक समूह है, यह कहा जा सकता है कि यह अवधारणा निराधार है।

वुण्ट का सिद्धान्त
(Wundt's Theory)

वुण्ट का सामान्य संकल्प का सिद्धान्त विचार और संकल्प के पारस्परिक सम्बन्धों पर प्रतिष्ठित है। वुण्ट का मत है कि संकल्प केवल क्रियाओं का ही ज्ञान नहीं कराता, वरन् संकल्प में वस्तु और प्रयोजन के रूप में विचार (presentation) सन्निहित होता है। इसके अतिरिक्त विचारों में विचार प्रस्तुत करने की सामर्थ्य

[1] "In the case of complex groupings, we may say, therefore, that in so far as there is present self-conscious volition, it is not general, and in so far as the psychical forces operating in a society are general, they are not will." Morris Ginsberg, *The Psychology of Society*, pp. 74-75.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निहित होती है। इन विचारों की उत्पत्ति संकल्पों के पारस्परिक क्रिया-प्रतिक्रिया के कारण होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी ठोस संकल्प में अन्य संकल्पों की क्रियाएँ भी समावेश करती हैं।

वुण्ट के मतानुसार किसी भी ठोस संकल्प के पीछे संकल्पों की शृंखला होती है जो आपस में सम्बन्धित होते हैं। व्यक्तिगत संकल्प एक सामान्य संकल्प मात्र जिनमें निम्न स्तर के संकल्प के प्रकार एकीकृत होते हैं। इसी प्रकार सामान्य संकल्प में अनेक प्रकार के एकत्व के तत्त्व सम्मिलित होते हैं। वैयक्तिक संकल्प केवल कल्पना मात्र है, इसका अस्तित्व रखने वाला कोई तत्त्व नहीं। इसी को आधार मानते हुए समूह के सामान्य संकल्प का अनुमान लगाया जा सकता है। यह समूह के सदस्यों को एक सूत्र में बाँधकर सामान्य उद्देश्यों व हितों की पूर्ति करता है। अन्तिम और सर्वोच्च एकता का आधार धार्मिक चेतना, भगवान की इच्छा (will of God) का स्वरूप है, जो व्यक्ति की वास्तविक, सामान्य आध्यात्मिक जीवन और सचेतन क्रिया की स्थिति है। वुण्ट के इस मत के अनुसार सामान्य संकल्प (gesamt wille) एक बहुत जटिल संकल्प है जिसमें अनेक प्रकार की एकीकृत और भिन्न-भिन्न आयाम व शक्तियाँ विकसित होती हैं। वास्तव में व्यक्ति की आत्मा का अस्तित्व वास्तविक आध्यात्मिक जीवन में ही मिल सकता हैं। वस्तु और विचारों में इसका अस्तित्व नहीं हो सकता। व्यक्तिगत आत्मा का प्रमाण मनुष्य की चेतन क्रियाएँ आदि हैं और सामूहिक जीवन के प्रमाण सभ्यता का आन्दोलन और संस्कृति का उत्थान आदि है। वुण्ट के विचार में सामान्य संकल्प को व्यक्तिगत संकल्प की अपेक्षा अधिक महत्त्व नहीं देना चाहिए।

कुछ व्यक्ति समाज में ऐसे होते हैं जो समाज के सामान्य संकल्प के हित एवं उद्देश्यों की रचना और उनका प्रतिनिधित्व भी करते हैं। इसके अतिरिक्त अपनी इच्छाओं के अनुकूल सामान्य संकल्प पर अपना अनूठा रंग चढ़ाकर अपने चरित्र की छाप लगा देते हैं। इसके परिणामस्वरूप समय की विचारधाराओं को अपनी इच्छानुसार 'सामान्य संकल्प' द्वारा प्रसारित करते हैं और इस प्रकार सामान्य संकल्प की उत्पत्ति करते हैं।

वुण्ट के सिद्धान्त की विशेषताएं

इस सिद्धान्त की मुख्य विशेषता तो यह है कि वुण्ट ने सामान्य संकल्प को व्यक्तिगत संकल्पों से अलग नहीं माना है। उनका कहना है कि इनकी कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं होती। इसके अतिरिक्त वुण्ट ने अपने सिद्धान्त में यह भी स्वीकार किया है कि सामान्य संकल्प के अन्तर्गत छोटी-छोटी एकताओं का अस्तित्व होता है।

समीक्षा (Criticism)—उक्त विशेषताओं के साथ-साथ वुण्ट के सिद्धान्त में निम्न दोष भी हैं :

वुण्ट के सिद्धान्त में जो विचार (presentation) सम्बन्धी विचार प्रस्तुत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं वे इतने जटिल एवं अस्पष्ट हैं कि उनको समझने में अनेक गलतियाँ हैं। वुण्ट विचार और संकल्पात्मक क्रियाओं में भेद नहीं कर पाये हैं। क्या करने की प्रक्रिया को ही संकल्प कहा जा सकता है? ऐसा सम्भव नहीं, विचार की प्रक्रिया तो व्यक्तिगत होती है। ऐसा हो सकता है कि अनेक सहयोग से एक इकाई की भाँति उद्देश्य प्राप्ति के लिए अग्रसर हों और इसके उनके सामान्य विचार भी हों। अतः वुण्ट विचार और उद्देश्य (विचार) की प्रक्रिया में कोई स्पष्ट भेद नहीं कर सके हैं।

वुण्ट के सिद्धान्त के इस विचार के साथ यदि इस सिद्धान्त का भी समावेश जाये कि आत्मा का वास्तविक आधार क्रिया में ही आश्रित होता है तो व दुरखीम आदि के 'मन' के सिद्धान्त की स्थापना हो जायगी। लेकिन अपने समूह-मन के सिद्धान्त में यह स्पष्ट कर चुके हैं कि सामाजिक विचार के सदस्य के मन में विद्यमान रहते हैं। इसके पश्चात भी दुरखीम ने समूह कल्पना करके उसका स्वतन्त्र अस्तित्व माना और समूह मन की वैयक्तिक अपेक्षा महान माना। इस विचार के दोषों की समीक्षा हम पिछले अध्याय चुके हैं।

गिन्सबर्ग का कथन है कि एक तरह से हम विचारों के स्वतन्त्र अस्तित्व को कार नहीं कर सकते; जैसे—पौराणिक कथाएं (mythologies)। ये विचार के अनन्तर विचारों की क्षमता के आधार पर विकसित हुए हैं। किन्तु इन को आत्मा व चेतना या स्वतन्त्र मन का निर्माण करने वाला नहीं स्वीकार चाहिए। इस विषय में स्वयं गिन्सबर्ग ने लिखा है, "किन्तु वास्तव में इसकी है कि विचार प्रारम्भ में किसी व्यक्ति द्वारा सोचा गया होगा और यह दूसरों तक पहुँचेगा जो आवश्यक रूप से दूसरों के विचारों को संपरिवर्तित है। इसका यह अर्थ नहीं कि सामूहिक विचारों को मन, आत्मा या चेतना का करने वाला समझ लें।"[1]

प्रोफेसर बोसांके का सामान्य संकल्प का सिद्धान्त

(Professor Bosanquet's Doctrine of General Will)

प्रोफेसर बोसांके का मत है कि संसार की प्रत्येक भौतिक वस्तु पूर्ण का एक है। संसार में कोई व्यवस्था न होने के कारण वह वस्तु हमें अपूर्ण दिखायी देती इसी दृष्टिकोण से व्यक्ति भी पूर्ण का एक अंग है और पूर्ण की प्राप्ति के लिए

But this really means that an idea once having been thought out by an individual and communicated to others must necessarily modify the ideas of those others. There is no warrant, however, for speaking of collective presentations as constituting a mind, or soul, or consciousness." Morris Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 78.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विकास कर रहा है। समाज एक पूर्ण है और सदस्य पूर्ण के अंग हैं, जो समाज (पू… की रचना करते हैं। समाज में भी व्यवस्थित विचार होते हैं। जब समाज… व्यक्तियों का विकास उस सीमा तक हो जायेगा कि वह व्यवस्थित विचारों को प्र… कर लेगा तभी 'सामान्य संकल्प' की विशेषताओं को प्राप्त कर सकेगा। बर्नार्ड बोसां… के सिद्धान्त में मुख्यतः तीन प्रधान तत्त्व हैं :

(1) किसी व्यक्ति की विशेष संकल्पात्मक क्रियाएँ और व्यक्ति की संक… त्मक प्रवृत्ति अथवा लक्ष्य दोनों ही विद्यमान-संकल्प (actual will) कहे जा स… हैं। वास्तविक संकल्प अथवा वास्तविक आत्मा का संकल्प (real will) विद्यमा… संकल्प में सन्निहित होते हैं। वास्तविक संकल्प का अर्थ आदर्श संकल्प से है… "व्यक्ति के सर्वोत्तम जीवन के पूर्णतः स्पष्ट विचार"[1] पर आधारित है।

(2) बोसांके ने कहा है कि इस प्रकार का वास्तविक संकल्प सामाजिक… होता है। यह सभी व्यक्तियों में गुणात्मक दृष्टि से समान रूप में विद्यमान र… है। इसीलिए इसको एक संकल्प माना जाता है। अतः यह सामान्य संकल्प… होता है।

(3) इस प्रकार का संकल्प वास्तविक या सामान्य राज्य में मूर्तिमान हो… है। अब हम प्रत्येक तत्त्व पर विचार करेंगे।

(1) **बोसांके का वास्तविक संकल्प विषयक मत** (View of Bosanq… on Real Will)—बोसांके ने वास्तविक संकल्प (real will) और विद्यमान… संकल्प (actual will) दोनों में विरोध बताया है। उनका कहना है कि विद्यमान… संकल्प व्यक्ति का वह संकल्प है जिससे वह रोजाना अपनी जीवन-क्रियाओं… कार्यान्वित करता रहता है। इस प्रकार की क्रियाएँ अपूर्ण और अधूरी होती हैं।… क्रियाएँ ऐसी पद्धतियों की ओर जाने को अग्रसर होती हैं, जिनके द्वारा यह… से पूर्ण परिवर्तित हो सके। व्यक्ति की एक क्रिया से ऐसा अर्थ नहीं लिया… सकता जब तक कि उससे सम्बन्धित संकल्पात्मक स्वभावों या प्रवृत्तियों की … पद्धति का विकास न हो। व्यक्ति की विभिन्न संकल्पात्मक क्रियाओं को सम्बन्धि… करने वाले सिद्धान्त व्यक्ति के आचरण में विद्यमान रहते हैं, चाहे व्यक्ति को … सिद्धान्तों का ज्ञान हो या न हो। कहने का तात्पर्य यह है कि वास्तविक संकल्प… व्यक्ति के विद्यमान संकल्पों को संगठित करते हैं।

जब बोसांके वास्तविक संकल्प की बात करते हैं तो उनका अभिप्राय वास्त… संकल्प से होता है। बोसांके का मत है कि इस प्रकार के आदर्श संकल्प व्यक्ति… विद्यमान संकल्प में सन्निहित होते हैं। लेकिन कार्य का कोई भी लक्ष्य पूर्ण रूप…

1 "A fully articulated idea of the best life for man." Bosanq… quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, pp. 78-79.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...नक नहीं होता और जो कुछ हम चाहते हैं उसका प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता। ...भी तो हम वास्तव में यही भी नहीं जानते कि हम क्या चाहते हैं और आत्म-... किस प्रकार होगी।

यदि व्यक्ति अपनी वास्तविक इच्छा व वांछा को जानना चाहता है तो उसे ...क्षण अपनी अभिलाषाओं की तुलना दूसरे व्यक्तियों की अभिलाषाओं से करनी ...। इस तुलना एवं विवेचन से व्यक्ति को आदर्श जीवन की विशेषताओं का ...हो जायेगा। जब इस व्याख्या की प्रक्रिया समाप्त हो जायेगी तो व्यक्ति के ...को एक नया स्वरूप, प्राप्त हो जायेगा। यही वस्तुतः व्यक्ति का वास्तविक ...है। बोसांके के मतानुसार यही आदर्श संकल्प है। इसकी व्याख्या करते हुए ...र्ग ने लिखा है, "अतः यह संकल्प बौद्धिक या शुभ संकल्प है; ऐसा, जैसा कि ...को होना चाहिए, ऐसा संकल्प जो पूर्णता के विचार द्वारा निर्धारित होता ...और यद्यपि जिसको हम जानबूझ कर अपना लक्ष्य बनाते हैं उससे यह कहीं ...है, फिर भी यह उसमें छिपा रहता है, क्योंकि एकमात्र यही व्यावहारिक जीवन ...सार्थकता प्रदान कर सकता है।"[1]

समीक्षा (Criticism)—गिन्सवर्ग ने इस मत की समीक्षा निम्न प्रकार ...है:

(1) यदि संकल्प से तात्पर्य चेतना-निर्णय का है तो यह कहा जा सकता ...कि निर्णय करते समय व्यक्ति निश्चित उद्देश्य के पक्ष में नहीं कर सकता। ...निक मनोविज्ञान के विश्लेषण से यह सिद्ध हो गया है कि हमारे जो ...-निर्णय होते हैं वह हमारी अचेतन कामनाओं का विवेकपूर्ण छद्म मात्र हैं। वे ...विक संकल्प नहीं हैं। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि वही कामनाएँ अचेतन होती ...जिनकी सन्तुष्टि सामाजिक मापदण्डों के कारण सम्भव नहीं हो सकती। होता यह ...कि व्यक्ति उन कामनाओं को चेतन मन से निकाल कर अचेतन में डाल देता ...। इस प्रकार की कामनाएँ नग्न मूलवृत्तियों पर आश्रित होती हैं। सत्य तो यह है ...कि किसी भी अवस्था में ऐसी आन्तरिक प्रेरणाएँ व्यक्ति के विवेकपूर्ण संकल्प को ...ट नहीं कर सकतीं।

व्यक्ति की कुछ योजनाएँ, उद्देश्य एवं व्यवहार हो सकते हैं, जिन्हें वह अपनी ...कल्पनात्मक क्रियाओं की आलोचना के बाद स्वीकार करे। इस प्रकार की आलोचना ...पश्चात व्यक्ति यह बता सके कि उसकी कौन-कौन सी योजनाएँ व जीवन के

---

[1] "It is, therefore, the rational or good will, the will, as it ought to be, the will as determined by an idea of perfection, and, though it transcends by far that at which we consciously aim, it is nevertheless implied in the latter, since it alone can give significance to the practical life." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 80.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उद्देश्य थे जो उसकी संकल्पात्मक-क्रिया के आधारभूत थे। यह आवश्यक नहीं ये विवेकपूर्ण ही हों। ऐसा हो सकता है कि मनुष्य स्वयं अपने उद्देश्यों को विवेक समझे। मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि निर्णय के समय अचेतन मूलप्रवृत्तियां विशेष हाथ होता है। यह सम्भव है कि व्यक्ति को इस अचेतन क्रियाओं का ज्ञान हो और वह अपने निर्णय को विवेकपूर्ण ही समझे। इस अर्थ में हम इनको वास्तवि संकल्प नहीं कह सकते।

(2) बोसांके का जो अर्थ सामान्य संकल्प से है वह यह है कि नैतिक त राजनैतिक कर्तव्यों के आभास की व्याख्या तभी हो सकती है जब प्रत्येक व्यक्ति मन में चरम श्रेय (ultimate good) की भावना हो, चाहे वह कितनी ही धुंध क्यों न हो। इसकी पुष्टि करते हुए स्वयं बोसांके ने लिखा है, "स्वयं संकल्प क वाली इच्छा को जो अधिकार प्राप्त हैं वह हमारी आन्तरिक प्रकृति है, जिसकी हु अवहेलना नहीं कर सकते। राजनैतिक कर्तव्य-परायणता का आधार यही है।"[1] इस विरुद्ध गिन्सबर्ग का कथन है, "....यह दलील दी जा सकती है कि नैतिक दृष्टि जो कर्तव्य हैं उसे मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संकल्प का विषय बनने योग्य होना चाहि फिर भी जैसे ज्ञात वस्तु और उसका ज्ञान एक ही चीज नहीं है वैसे ही नैतिक कर्त और उसके संकल्प का विषय बनाना एक ही चीज नहीं है।"

उपर्युक्त कथन का तात्पर्य यह है कि चरम श्रेय का प्रत्यय हमारे वास्तवि संकल्प में ही निहित हो सकता है। लेकिन इसका यह तात्पर्य नहीं कि वह वास्त में संकलित है। चरम श्रेय को वास्तविक कहना उससे अधिक है जितनी कि सत्यत उसमें विद्यमान है। चरम श्रेय और सर्वोच्च शिवम् का विचार अनिश्चित धुंधला है।

कोई भी वस्तु या तो वास्तविक होती है या अवास्तविक। विद्यमान संकल्प उतना ही वास्तविक है जितना कि वास्तविक संकल्प। फिर वास्तविक संकल्प विरोध मय होकर वास्तविक से आदर्श में क्यों परिवर्तित हो जाता है।

(2) **बोसांके का सामान्य संकल्प विषयक सिद्धान्त** (Bosanquet's Theory of General Will)—बोसांके का कथन है कि वास्तविक संकल्प विवेकपूर्ण और शुद्ध होता है। वास्तविक संकल्प के गुण सभी व्यक्तियों में समान रूप से सन्निहित होते हैं। बोसांके ने वास्तविक संकल्प को ही सामान्य संकल्प माना है। सामान्य संकल्प सभी सदस्यों के संकल्पों का संयोग मात्र नहीं है, वरन् यह एक ऐसा संकल्प है जो व्यक्तिगत संकल्प के रूप में प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान रहता है। यह किसी भी व्यक्तिगत विद्यमान संकल्प से कहीं अधिक उच्च होता है।

---

[1] "The imperative claim of the will that wills itself is our own inmost nature and we cannot throw it off. This is the root of political obligation" Bosanquet, quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 81.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विवेकपूर्ण संकल्प की विषय वस्तु वे भौतिक आदर्श और उद्देश्य होते हैं जो प्रवृत्ति की पूर्ण सन्तुष्टि कर सकें। बोसांके ने आन्तरिक विषय वस्तु की समानता आधारभूत मानकर यह अनुमानित किया कि संकल्प का एक स्वतन्त्र अस्तित्व जिसमें एकता और निरन्तरता विद्यमान होती है। बोसांके ने इसी आधार पर संकल्प को एक व्यक्ति (a moi commun) मान लिया है। अतः समाज सम्पूर्ण है और व्यक्ति उसके अपूर्ण रूप हैं। व्यक्तियों की समानता के रूप में पूर्णता प्रकट होती है। समाज के प्रत्येक अपूर्ण अंग (व्यक्ति) में पूर्ण (समाज) प्रयासशील आत्मा होती है जो अपूर्ण को उसके व्यक्तित्व और एकता की प्राप्ति को प्रोत्साहित करती है। और जब वह सफल हो जाता है तो सम्पूर्ण में ही हो जाता है। अतः संकल्प व्यक्तिगत न होकर सामान्य होता है; क्योंकि सम्पूर्ण से पृथक अपना अस्तित्व नहीं बनाये रख सकता है।

समीक्षा (Criticism)—बोसांके के इस सिद्धान्त का प्रमुख दोष यह है कि पूर्व धारणा कि आन्तरिक तत्त्वों के एकीकरण में एकरूपता निहित है, उचित है; क्योंकि आन्तरिक तत्त्वों के रूप में विचार एकसे हो सकते हैं, किन्तु मानसिक कदापि एक नहीं हो सकती। अतः आन्तरिक तत्त्वों और मानसिक अवस्था में है। इसको स्वयं बोसांके ने भी प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ, यदि दो व्यक्ति सम्मुख किसी वस्तु को—मान लीजिए टेलीफोन को—देखें तो दोनों के टेलीफोन सम्बन्धी विचार एकसे होंगे, किन्तु विचार की प्रक्रिया समान नहीं होगी। कभी-बोसांके इस तथ्य को स्वीकार भी करते हैं। उन्होंने कहा है, "जिसे हमने भावनाओं का रूप-विषयक भेद कहा है उससे इन्कार करने की कोशिश कोई नहीं गा। इस भेद का मतलब यह है कि अनुभव के एक सीमित केन्द्र का दूसरे के परोक्ष अनुभव को स्वयं अपने अपरोक्ष अनुभव के रूप में ग्रहण करना असम्भव है।"

तथ्य तो यह है कि बोसांके अन्तर्वस्तु और मानसिक सत्ता के अन्तर को और नहीं मानते, वे मानसिक वास्तविकता को अस्वीकार करते हैं। बोसांके का है, "यह अनुभव के आधार नहीं केवल अवस्था है।"[1] इसके अलावा "हमारी वस्तु सम्बन्धी सम्वेदना एक ऐसी चीज है एक मानसिक अवस्था की शक्ल ग्रहण कर सकती है।"[2]

बोसांके के आन्तरिक तत्त्वों को समान और निरन्तर माना है। बोसांके के अनुसार यह सिद्धान्त विचार प्राप्त करने की क्रिया के अस्तित्व को नहीं स्वीकार करता। इसके विपरीत आन्तरिक तत्त्वों को अकारण यह सिद्धान्त सत्ता प्रदान कर देता है। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "जो कुछ कहा गया है उससे स्पष्ट हो जाता है

---

[1] "It is phase and not a stratum of experience." Bosanquet, quoted by M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 84.

[2] "All our objective apprehension is something which is capable of taking the shape of a mental state." *Ibid*, p. 84.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि मनों के संगम के अथवा एक बड़े मन में उनको सम्मिलित करने के पक्ष में जो तर्क है, वह सारी की सारी अन्तर्वस्तुओं के वास्तविक सत्ताएँ मानने के और अनुभव के कार्यों की सच्चाई से इन्कार करने के ऊपर आधारित है।"[1]

गिन्सबर्ग ने इस अवधारणा के विरुद्ध निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए हैं :

(1) आन्तरिक वस्तु कभी भी मानसिक वृत्तियाँ अथवा अवस्थाएं नहीं बन सकतीं। आन्तरिक तत्त्व सामान्य और विश्वव्यापक होते हैं जबकि मानसिक वृत्तियाँ वैयक्तिक या सांसारिक और अल्पकालिक होती हैं।

(2) विचार प्राप्त करने की प्रक्रिया से पहले आन्तरिक तत्त्वों का कोई स्वतन्त्र स्वरूप नहीं हो सकता। हमारे विचारों को प्राप्त करने की क्रिया को आन्तरिक तत्त्व कहा जाता है। इसलिए आन्तरिक तत्त्वों के लिए 'अस्तित्व' शब्द का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

(3) एक ही पदार्थ को लक्ष्य करने वाले दो व्यक्तियों की विचार प्रक्रियाएँ एक-दूसरे से मिलती-जुलती होंगी। इन दो क्रियाओं की विषय वस्तु एक समान है और अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखेगी लेकिन दो मानसिक अवस्थाओं से उत्पन्न होगी।

(4) आदर्शवादी अन्तर्वस्तु को सत्ता के रूप में मानते हैं। उनका विश्वास है कि आन्तरिक तत्त्व उद्देश्यों और आदर्श के रूप में विश्वव्यापी मन (universal mind) द्वारा सिद्ध किये जा चुके हैं। बोसांके ने अपने मत का विश्लेषण ग्रीन के उद्धरण को लेते हुए किया ने, "जिसका विकास हो रहा है वह जब स्वयं एक आत्म-चेतन व्यक्ति है, तब उसके विकास के लक्ष्य का सचमुच अस्तित्व रहना चाहिए न केवल उस आत्मचेतन के लिए, बल्कि एक आत्मचेतन के व्यक्ति के अन्दर या उसके रूप में भी। इस तरह के व्यक्ति का शाश्वत अस्तित्व होना चाहिए और समय के साथ विकास करने वाले आत्मचेतन व्यक्ति के अन्त में जिस रूप को प्राप्त करने की सम्भावना है वह यही है, इस शाश्वत व्यक्ति के रूप में मनुष्य के आत्मा का आदर्श अर्थात जो कुछ बनने की वह आकांक्षा रखता है, पूरी तरह से सिद्ध है।" इस मत का समर्थन प्रो. म्यूरहेड (Muirhead) ने इस प्रकार किया है, "उनके प्रयोजन, जहाँ तक उनके अन्दर सामंजस्य है, इन प्रयोजनों की समष्टि में शामिल हैं जो हमारे मत से केवल वहीं तक सत्य हो सकते है जहाँ तक वे सारे विश्व के मन के प्रयोजन हैं।"[2]

---

[1] "It seems clear, from what has been said, that the whole argument in favour of the confluence of minds, or their inclusion in a larger mind, is based upon a hypostatization of contents and a denial of the reality of acts of experience." Morris Ginsberg, *The Psychology of Society*. pp. 84-85.

[2] "......their purpose, so far as they are harmonized, are included in the organic system of purposes, which we have agreed, can only be real in so far as they are the purposes of a universal Mind." Quoted by Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 86.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदर्शवादियों के तर्क विचार और आदर्शों के अस्तित्व के अन्तर्भेद के इन्कार आधारित हैं। किसी आदर्श व्यक्ति के विचार ही अन्तर्वस्तु हैं। यदि यही विचार आदर्श भगवान के लिए मान लिये जायें तो उनका अमूर्त स्वरूप कैसे बदल जाता ? अतः आदर्शों का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं हो सकता चाहे आदर्श कितना ही ऊँचा न हो।

(5) यदि यह स्वीकार कर लिया जाय कि मनों के बीच एकरूपता होती है वैयक्तिक संकल्प पूर्ण संकल्प के अंग होने के नाते एक ही प्रकार की विचार प्रक्रियाएँ करते हैं; फिर भी इसका यह अर्थ नहीं हो सकता कि व्यक्ति का अस्तित्व में समाज के संकल्प के समान होता है। इसकी व्याख्या करते हुए ने लिखा है, "मेरे उद्देश्य की पूर्ति अन्य व्यक्तियों के अस्तित्व पर और के उद्देश्यों की पूर्ति मेरे अस्तित्व पर आधारित है। पर इसका यह तात्पर्य कि वह 'मैं' है और मैं 'वे' हूँ। मानसिक कार्यों की निरन्तरता, जो आत्मा की अवस्थाओं को निर्धारित करती है, अपनी अस्तित्व सम्बन्धी एकता खो नहीं बैठती; कि उसके मानसिक तत्त्व अन्य व्यक्तियों के मानसिक तत्त्वों के अनुरूप हैं।"

(6) प्रो० बोसांके के सिद्धान्त में मानवीय स्वभाव और समाज के स्वरूप में है। मानवीय स्वभाव विशेष सत्ताओं या अनेक स्वतन्त्र सत्ताओं द्वारा निर्मित है। समाज में अनेक प्रकार के व्यक्तियों का संयोग भी होता है और इसके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति का स्वतन्त्र अस्तित्व भी होता है।

बोसांके का मत है कि व्यक्तिगत मन और सामाजिक मन की उत्पत्ति एक धातु से हुई है। उनका कहना है कि जिस प्रकार व्यक्ति के मन में विचारों की पद्धति होती है, उसी प्रकार समाज के मन में भी विचारों की एक पद्धति होती है। इन पद्धतियों द्वारा किसी विशेष उद्देश्य के अन्तर्गत सम्पूर्ण के कार्यों की पूर्ति सम्भव होती है। सामाजिक संस्था अनेक मनों का सम्मिश्रण है। इसके अतिरिक्त सामाजिक समूह अपने विशेष उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु एक-दूसरे समूह की सहायता करें या एक-दूसरे के विरुद्ध हो जायें। सामाजिक समूह सामाजिक जीवन के मूल अंग और समाज एक आत्म-अनन्य (self-identical)। अतः समाज और व्यक्ति की रचना एक से ही तत्त्वों से हुई है; क्योंकि समाज व्यक्तियों के संयोग से बना है।

यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि क्रिया और अन्तर्वस्तु में भेद न माना जाय, जिसके ऊपर बोसांके का सिद्धान्त आधारित है। जिस प्रकार व्यक्ति के मन की रचना विभिन्न संवेदनाओं अथवा चेतनाओं के संयोग द्वारा होती है, उसी प्रकार सामाजिक मन की रचना सामाजिक चेतनाओं के आधार पर नहीं होती। क्योंकि एक समाज के व्यक्तित्व की कल्पना एक व्यक्ति के व्यक्तित्व के समान नहीं की जा सकती अथवा ऐसी कल्पना अवैज्ञानिक है। अतः समाज-मन की स्वतन्त्र सत्ता होना अनुचित ही नहीं असम्भव भी है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गिन्सबर्ग ने प्रोफेसर बोसांके के विचार एवं उसके सिद्धान्त के विषय में अपने विचार इस प्रकार प्रस्तुत किये हैं, "प्रत्येक सीमित व्यक्ति का समाज में एक विशिष्ट कार्य होता है—ऐसा कार्य जिसे कोई दूसरा व्यक्ति नहीं कर सकता। इस प्रकार का व्यक्ति 'सामाजिक सामान्य का एक सच्चा विशेष' रूप होगा। अगर ऐसा होता, तो प्रो० बोसांके के मत में, फिर भी आत्माओं को परस्पर पृथक मानने का कोई कारण न होता, क्योंकि तब व्यक्तिगत मनों को एक अकेली समष्टि के आवश्यक अंग मानना पड़ता, और ये आवश्यक अंग समष्टि होते, अर्थात वे रूप होते जिनमें सामान्य अपनी अभिव्यक्ति करता है या विशिष्ट रूप से ग्रहण करता है।"

जो विद्वान आदर्शवादी विचारकों और बोसांके के सिद्धान्त से सहमत नहीं हैं उनका कथन है कि अनेक और विभिन्न अंग कभी भी पूर्णतः एक-दूसरे या उनके संयोग से बनी हुई इकाई के समान नहीं होते। बोसांके के इस विचार का खण्डन गिन्सबर्ग ने इस प्रकार किया है—"व्यक्ति विभिन्न सम्बन्धों का केन्द्र है। यह सम्बन्ध सामाजिक संस्थाओं में अपूर्ण रूप से ही प्रकाशित होते हैं। अतः व्यक्ति, इस कथन से कि वह एक अद्वितीय अथवा विशिष्ट दृष्टि से समाज का ही प्रतिबिम्ब है, बहुत परे है। हमें यह कहना चाहिए कि समाज ही एक अद्वितीय अथवा विशिष्ट दृष्टि से व्यक्तियों का प्रतिबिम्ब है।"

प्रो० बोसांके का सामान्य संकल्प-विषयक सिद्धान्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित नहीं है, वरन् वास्तविक संकल्प की कल्पना पर आधारित है।

(3) **सामान्य संकल्प राज्य में मूर्तिमान** (General Will Existing in State)—प्रो० बोसांके ने सामान्य संकल्प को राज्य में मूर्तिमान माना है; किन्तु वह राज्य और समाज के स्वरूपों का स्पष्टीकरण नहीं कर पाये हैं। राज्य समाज के लिए आवश्यक है; किन्तु यह समाज की एकमात्र अवस्था है।

संगठन के रूप में उद्देश्य (end) के लिए साधन (means) मात्र है। राज्य किसी वास्तविक सकल्प के फलस्वरूप नहीं है। राज्य में सत्यम् एवं शिवम् का समावेश नहीं होता, क्योंकि राज्य जनता का दमन, शोषण और अत्याचार भी करता है। अधिकतर अधिकारों की परिभाषा में भूल करता है। अतः राज्य प्रमादशील है। इसके अतिरिक्त राज्य मानव संगठन का सर्वोत्तम स्वरूप नहीं है।

राज्य को व्यक्ति की संज्ञा देना भी उचित नहीं। आदर्शवादी सिद्धान्त के अनुसार राज्य में शनैः-शनैः व्यक्ति की सत्ता का निरूपण कर तानाशाही और नाजीवाद को समाज में ढकेल देते हैं। सत्य तो यह है कि व्यक्ति से परे राज्य की कोई सत्ता नहीं। यदि ध्यान से देखा जाये तो ज्ञात होगा कि व्यक्ति ने अपने स्वार्थ और हित की पूर्ति के लिए राज्य का निर्माण किया है।

राज्य सत्यम् एवं शिवम् का प्रतीक नहीं हो सकता; क्योंकि राज्य का विकास समाज के आर्थिक विकास पर हुआ है। इसके लिए सामान्य संकल्प का प्रतिनिधित्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ना तो दूर की बात है, यह बहुमत के संकल्प का भी प्रतिनिधित्व नहीं करता, वरन शासक वर्ग के संकल्प का प्रतिनिधित्व करता है और इसी के ऊपर आश्रित ता है।

बोसांके के सामान्य संकल्प के सिद्धान्त में हम देख चुके हैं कि सामान्य संकल्प कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता। अतः सामान्य सकल्प राज्य के रूप में मूर्तिन है, इस प्रश्न का कोई स्रोत ही नहीं है। इसलिए स्वतन्त्र सत्ता, व्यक्ति और ल्प की संज्ञा देना ठीक नहीं।

विभिन्न मतों के आधार पर निष्कर्ष
(Conclusion on the Basis of Different Theories)

सामान्य संकल्प सम्बन्धी विभिन्न सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या की जा ली है; किन्तु उपर्युक्त सिद्धान्तों में से एक भी सिद्धान्त सामान्य संकल्प का उचित न एवं महत्त्व का स्पष्टीकरण करने में सफल नहीं हुआ। फिर भी उपर्युक्त वाद-वाद के कारण संकल्प के महत्त्व और स्वरूप को समझने के लिए हम थोड़ा बहुत र्ष निकाल सकते हैं।

उपर्युक्त सिद्धान्तों द्वारा यह ज्ञात होता है कि सकल्पात्मक विशिष्ट क्रियाओं र इनके स्वभाव और प्रवृत्ति में भेद किया गया है। चाहे हम इस भेद के विश्लेषण स्वीकार करें या न करें, परन्तु यह बात निश्चित है कि संकल्पात्मक विशिष्ट एं और स्वभाव दोनों ही व्यक्तिगत होते हैं। वे सामान्य नहीं हो सकते।

विशिष्ट संकल्पात्मक क्रियाओं और स्थायीभाव तथा उद्देश्य में अन्तर है। द्देश्य वैयक्तिक भी हो सकते हैं और समान्य भी। सामान्य उद्देश्यों के लिए विचारों स्पष्टीकरण होना आवश्यक है और जनता के संकल्पों के उद्देश्य के विचार स्पष्ट हीं होते हैं। स्पष्ट विचार तो समाज में कुछ ही व्यक्तियों के होते हैं। यदि यह न लिया जाय कि उद्देश्य पूर्ण जनता का है तब भी सामान्य संकल्प का सिद्धान्त द्ध नहीं होता; क्योंकि एक समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए जो संगठित संकल्प है से सामान्य संकल्प न कहकर सामूहिक संकल्प कहा जा सकता है।

यह विश्वास करना कि वास्तविक संकल्प एक सामान्य संकल्प बन जाता है, आन्तरिक तत्त्व (content) को क्रिया (act) समझ लेने की भूल है। जो भी संकल्पित किया जाता है उससे, जिसे संकल्प करने के योग्य माना जा सकता है, अलग कर देना अनिवार्य है। जो आदर्श संकल्प है और जिसका संकल्प किया जाना चाहिए उसका स्वरूप संकल्पात्मक क्रिया पर निर्भर नहीं होता।

विशिष्ट संकल्पात्मक क्रियाएँ और स्थायीभाव सदा विवेकपूर्ण ही नहीं होते। यदि यह मान लिया जाये कि वैयक्तिक संकल्प विवेकपूर्ण होते हैं तब भी इसको सामान्य संकल्प नहीं कहा जा सकता। एकीकृत और समान हित में संलग्न संकल्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी वैयक्तिक होते हैं। इसे सामूहिक संकल्प की संज्ञा दी जा सकती है, न कि सामान्य संकल्प की। उपर्युक्त सिद्धान्तों की विषद् व्याख्या के पश्चात हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि सामान्य संकल्प कोई स्वतन्त्र सत्ता नहीं होती।

उपर्युक्त विवेचना का यह अर्थ नहीं कि व्यक्ति एकाकी और स्वतन्त्रजीवी है और अपने विकास की क्षमताओं और अवस्थाओं को स्वयं में सन्निहित रखता है। व्यक्ति की क्रियाओं का संचालन करने वाली और नियन्त्रण करने वाली शक्तियाँ समाज में विकसित होती हैं, अर्थात् सामाजिक सम्बन्धों की देन हैं; किन्तु इन मनोवैज्ञानिक शक्तियों का स्वरूप समाज में एकरूप नहीं होता। इस विषय में गिन्सबर्ग ने लिखा है, "जनता की निम्नतम अवस्थाओं में, जबकि स्थितियाँ सभी सदस्यों के लिए बहुत कुछ एकसी होती हैं और जब वर्ग विभेद थोड़ा या बिलकुल नहीं होता, सदस्यों का स्वभाव बहुत समान होता है और उनकी अनुभूतियाँ, विचार, रुचियाँ एक प्रकार की होती हैं। संस्कृति की अधिक विकसित अवस्थाओं में, यद्यपि किसी समाज के सभी सदस्यों के स्वभाव को निर्धारित करने वाले आवश्यक प्रभाव मूलतः वही बने रहते हैं और यद्यपि उनके समान प्रभाव भाषा के विकास से तथा सभ्य समाज की आध्यात्मिक सम्पत्ति की वृद्धि से बढ़ जाते हैं। तथापि भेद पैदा होने लगते हैं और समूहों की एक भारी संख्या पैदा हो जाती है, जिनमें से प्रत्येक का अपना अलग वातावरण होता है जो उसके सदस्यों के जीवन, कार्य और विचार को बदल देता है। व्यक्ति इनमें से एक या अधिक समूहों के सदस्य हो सकते हैं और होते हैं। इसके अतिरिक्त ये समूह निरन्तर गतिशील और बदलते रहते हैं तथा सामूहिक शक्तियों को उत्पन्न करते हैं. जो सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक जीवन के परिवर्तनों को निर्धारित करती है। इनमें से कुछ सामूहिक शक्तियाँ स्थायी संस्थाओं का रूप ले सकती हैं, लेकिन अन्य केवल एक अस्पष्ट, निराकार प्रकार का अस्तित्व रखती हैं और सामाजिक वर्ग विभेद, राजनैतिक दलों, धीरे-धीरे व्यवहार के प्रतिमान बन जाने वाले मूल्य सम्बन्धी निर्णयों, नियमावलियों, जनमत में रूप धारण कर लेती है।"

गिन्सबर्ग ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि असभ्य समाज की अपेक्षा सभ्य समाज में विभिन्नता अधिक है। समाज नाना प्रकार के दलों, समूहों एवं वर्गों में बँटा हुआ है। ज्यों-ज्यों यह विकास करेगा, त्यों-त्यों विभेद और विषमता भी प्रगति के मार्ग पर होगी। परन्तु वास्तविकता यह नहीं है। यह सत्य है कि सभ्यता का विकास भी राज्य की भाँति वर्गों के हितों एवं उद्देश्यों पर आश्रित हैं। समाज की प्रगति की भाँति संस्कृति भी विकसित होकर उस सीमा तक आ पहुँची है जहाँ सामाजिक उत्थान के सामान्य विकास के मार्ग द्वारा वर्ग-भेद को पार किया जा सकेगा, जिसके पश्चात सम्पूर्ण जनता उच्चतम विकास कर सकेगी; किन्तु भविष्य के विषय में या वर्तमानकाल में भी सामान्य संकल्प की अवधारणा नहीं की जा सकती।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment:.Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानव आदिकाल से सामान्य जीवन में भाग लेता रहा है, इसके साथ-साथ सामाजिक उत्थान में सहयोग देता रहा है। मनुष्यों ने समाज और अपने समूह के हितों के लिए संगठित होकर विचार किया है, आदर्शों को प्रतिष्ठित किया है और सामूहिक संकल्प द्वारा इन आदर्शों को क्रियान्वित करते रहे हैं। इसको हम एक सामूहिक संकल्प (joint will) तो कह सकते हैं, किन्तु सामूहिक संकल्प को स्वतन्त्र सत्ता देकर 'समान्य संकल्प' की कल्पना नहीं कर सकते।

प्रश्न

1. 'सामान्य इच्छा' का क्या अर्थ होता है। सामाजिक जीवन में सामान्य इच्छा के अस्तित्व एवं प्रभाव के सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।

(What is meant by 'general will'? Discuss some important theories about the existence and influence of 'general will' in social life.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

37

जनता तथा जनमत
(Public and Public Opinion)

असंगठित समूहों को हमने दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया था—(अ) भीड़ और (ब) जनता। भीड़ पर हम प्रकाश डाल चुके हैं। इस अध्याय में हम जनता पर प्रकाश डालेंगे और साथ ही साथ जनता के मत या जनमत (public opinion) पर भी विचार करेंगे।

जनता का अर्थ
(Meaning of Public)

जनता भी एक असंगठित मानव समूह है। यह किस प्रकार का समूह है और इसके सदस्यों के बीच कैसा सम्बन्ध पाया जाता है। इस पर हम यहाँ विचार करेंगे। जनता एक स्थान पर नहीं होती; वह फैली हुई हो सकती है। इसका विस्तार संसार के विभिन्न भागों में हो सकता है। इनके बीच एक मानसिक सम्बन्ध पाया जाता है। वे एक ही समस्या या प्रसंग पर विचार करते हैं। गिन्सबर्ग ने जनता की परिभाषा करते हुए लिखा है, "जनता को उन व्यक्तियों का एक असंगठित और आकारहीन जनसमूह कहा जा सकता है जो समान विचारों और इच्छाओं के द्वारा एक साथ बंधे रहते हैं, लेकिन जो संख्या में इतने अधिक होते हैं कि एक-दूसरे से व्यक्तिगत सम्बन्ध कायम नहीं कर सकते।"[1] गिन्सबर्ग की परिभाषा से भी स्पष्ट है कि यह एक असंगठित समूह है और इसका सम्बन्ध मानसिक स्तर पर है। गिन्सबर्ग ने अपनी परिभाषा में स्पष्ट लिखा है कि जनता एक असंगठित एवं आकारहीन जनसमूह है, जो संख्या में इतने अधिक होते हैं कि एक-दूसरे से व्यक्तिगत सम्बन्ध नहीं स्थापित कर सकते, पर इस जनसमूह के व्यक्ति समान विचारों और इच्छाओं के द्वारा एक साथ बंधे रहते हैं। अतः जनता की एकता एक स्थान पर होने से नहीं होती, अपितु समान विचारों

---

1 "The public may be described as an unorganized and amorphous aggregation of individuals who are bound together by common opinions and desires, but are too numerous for each to maintain personal relations with the others." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 137.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होती है। व्यक्ति कहीं भी हों, एक-दूसरे से कोसों दूर पर यदि वे समान विचार रखते हैं, तो वे एक जनता में सम्मिलित हो सकते हैं। किम्बाल यंग ने भी लिखा है, "जनता के लिए साथ-साथ होना आमने-सामने या कंधे से कंधा मिलाने का सम्बन्ध का आवश्यक नहीं है. व्यक्तियों की एक विभिन्न भागों में फैली हुई सामान्य उत्तेजना के लिए प्रतिक्रिया जो अप्रत्यक्ष एवं यांत्रिक साधनों से प्रस्तुत करती हो।"[1]

अपनी पुस्तक के नवीन संस्करण में किम्बाल यंग ने जनता के सदस्यों के सम्बन्ध का आधार समान रुचि बताया है। वह लिखते हैं, "संज्ञा के रूप में 'जनता' शब्द एक अधिक ढीले से व्यक्तियों के सामान्य अभिरुचि के साथ सुव्यवस्थित एवं संयुक्त समूह की ओर संकेत करता है।"[2]

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जनता के निर्माण में शारीरिक सम्बन्ध (जैसे— एक स्थान पर उपस्थिति, आमने-सामने के सम्बन्ध या कंधे से कंधे के सम्बन्ध) की अनिवार्यता नहीं है। वे देश के या संसार के अनेक भागों में फैले हुए हो सकते हैं। उनकी कोई न कोई रुचि समान होनी चाहिए, जिसके कारण मानसिक सम्बन्ध स्थापित हो सके। श्रीलंका से प्रसारित 'बिनाका' कार्यक्रम को भारत में भी सुना जाता है, इसलिए वे सारे लोग जो इस कार्यक्रम को रेडियो पर सुनते हैं, इस रेडियो कार्यक्रम की 'जनता' हैं। 'हिन्दुस्तान टाइम्स' दिल्ली में प्रकाशित होता है, पर सम्पूर्ण उत्तरी भारत में विशेष रूप से और दक्षिणी भारत, अमरीका एवं अन्य देशों में भी लोग इसे पढ़ते हैं। वे सारे लोग जो इसे पढ़ते हैं, वे इसकी जनता हैं। इसी प्रकार किसी समस्या पर विचार करने वाले जनता होते हैं।

उपर्युक्त परिभाषाओं के विवेचन से जनता की निम्न विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं :

(1) जनता एक ऐसा असंगठित समूह होता है, जिसका कोई आकार नहीं होता, क्योंकि इसके सदस्य पास-पास नहीं होते।

(2) जनता की संख्या बहुत अधिक होती है। जनता एक बहुत ही व्यापक समूह होता है। इसकी संख्या हजारों और लाखों में होती है। छोटे-मोटे समूह जनता नहीं बन सकते।

---

[1] "The public is not held together by face to face or shoulder to shoulder contacts; a number of people scattered in space react to common stimulus which is provided by indirect and mechanical means." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* (1951), p. 429.

[2] "As a noun the word 'public' refers to a rather loosely organized and conjoined grouping of people with a common interest." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, Revised edition (1957), p. 333.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) जनता के सदस्यों का आपस में प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता, क्योंकि वे एक-दूसरे से दूर होते हैं और उनकी संख्या भी बहुत अधिक होती है।

(4) जनता के सदस्यों की एकता समान मत, समान रुचि, समान इच्छा आदि पर आधारित होना अनिवार्य है।

(5) जनता के सदस्य एक-दूसरे से मानसिक स्तर पर बंधे होते हैं।

(6) जनता एक मनोवैज्ञानिक समूह है, जो समान मत, रुचि या इच्छा पर आधारित है।

(7) जनता के सदस्य का व्यवहार समान नहीं होता, क्योंकि इसमें बहुत दूर-दूर के सदस्य सम्बद्ध होते हैं, जो विभिन्न संस्कृतियों के हो सकते हैं।

(8) जनता का निर्माण सन्देशवाहन के साधनों; जैसे—रेडियो, टैलीविजन, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, चलचित्र आदि के द्वारा होता है।

जनता और भीड़ में भेद

(Difference Between Public and Crowd)

जनता और भीड़ में अनेक भेद हैं, उनमें से प्रमुख निम्न हैं :

(1) भीड़ के लिए शरीरिक समीपता अनिवार्य है। व्यक्ति एक स्थान पर अवश्य एकत्रित होने चाहिए। भीड़ के लिए कंधों से कंधों का सम्पर्क आवश्यक है। जनता के लिए इस प्रकार के सम्बन्ध की कोई आवश्यकता नहीं है। जनता का आधार सचार (communication) है।

(2) भीड़ में भौतिक सम्पर्क के कारण सुझावग्राह्यता बहुत बढ़ जाती है। भावनाएँ एवं उद्वेग चरम सीमा पर होते हैं। जनता में ऐसा नहीं होता। लोग एक-दूसरे से परिचित तक नहीं होते। वे एक-दूसरे से इतने पृथक होते हैं कि पारस्परिक उत्तेजना का प्रश्न ही नहीं उठता।

(3) जनता का विस्तार भीड़ के विस्तार से बहुत अधिक होता है। एक व्यक्ति एक ही समय में दो भीड़ का सदस्य नहीं हो सकता, जबकि एक ही व्यक्ति कई जनता का सदस्य हो सकता है। एक व्यक्ति एक ही समय कई समाचार पत्र पढ़ सकता है। वह एक ही समय रेडियो भी सुन सकता है और समाचार पत्र भी पढ़ सकता है।

(4) भीड़ का मानसिक स्तर निम्न होता है। जनता का मानसिक स्तर तुलनात्मक दृष्टि से निम्न नहीं होता। जनता में बुद्धि का अंग रहता है।

जनता और भीड़ में ये अन्तर अवश्य हैं, फिर भी जनता और भीड़ में कई समानताएँ हैं। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "इसलिए, यद्यपि जनता की मनोवृत्ति, कम से कम साधारण समयों में, ज्यादा विवेकपूर्ण और कम जोशीली होती है। फिर भी इसमें अनेक बातें वैसी ही होती हैं जैसी भीड़ में।"[1]

[1] M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 138.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उदाहरण के लिए गिन्सबर्ग ने सुझावग्राह्यता को ही लिया है। गिन्सबर्ग का ...ना है कि जनता में सुझाव आजकल बहुत पाया जाता है। उन्होंने लिखा है, 'फिर इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सुझावग्राह्यता कुछ दृष्टियों से जनता के ...ह की अपेक्षा बहुत ही ज्यादा बढ़कर होती है।"[1]

जनमत का अर्थ
(Meaning of Public Opinion)

साधारणतया हम कह सकते हैं कि जनमत का अर्थ है, 'जनता का मत'। पर ...से हमारा कार्य नहीं चलता। हमें इसके अर्थ को स्पष्ट रूप से समझना होगा।

जनमत की प्रकृति—जनमत की अनेक परिभाषाएँ की गयी हैं। हम यहाँ पर ...परिभाषाएँ दे रहे हैं, इससे इसकी प्रकृति पर प्रकाश पड़ेगा और इसका अर्थ ...ने में हमें सहायता मिलेगी।

राजनीतिशास्त्री यंग ने लिखा है, "जनमत स्वयं-सचेत समुदाय का किसी ...न्य अभिप्राय के प्रश्न के ऊपर विवेकपूर्ण सार्वजनिक विवेचन के बाद का सामा-...क निर्णय है।"[2]

दार्शन डेवी ने लिखा है, "संचार सामाजिक खोजबीन के परिणाम की वही ...है जैसे जनमत का निर्माण होता है।...जनमत के निर्माण के लिए निर्णय है जो ...के द्वारा निर्मित एवं अनुभव किया जाता है जो जनता और जनता के विषयों से ...न्धित है।"[3]

समाजशास्त्री पाक तथा बर्गेस ने लिखा है, "वहाँ कोई जनमत नहीं है जहाँ ...पूर्ण मत एक नहीं है परन्तु वहाँ कोई जनमत नहीं है जहाँ असमानताएँ नहीं हैं। ...मत जनता के विवेचन की पूर्व कल्पना है।"[4]

लिपमैन ने लिखा है, "मनुष्य के............मस्तिष्क के अन्दर चित्र, उनके

---

1. *Ibid*, p. 138.
2. "public opinion is the social judgment of a self-conscious community on a question of general import after rational public discussion." James T. Young, quoted in W. B. Groves (ed.), *Reading in Public Opinion*, p. 102.
3. "Communication of the results of social inquiry is the same thing as the formation of public opinion...For public opinion is judgement which is formed and entertained by those who constitute the public and is about public affairs." John Dewey, *The Public and Its Problems*, p. 177.
4. "There is no public opinion where there is no substantial agreement. But there is no public opinion where there is not disagreement. Public opinion presupposes public discussion." Robert E. Park and E.W. Burgess, *Introduction to the Science of Sociology*, p. 832.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वयं का चित्र दूसरों का, उनकी आवश्यकताओं का, प्रयोजन और सम्बन्ध ही उनके जनमत हैं।"[1]

डायसी ने लिखा है, "किसी दिए हुए समय में विश्वासों का समूह, विश्वासों, स्थायीभावों, स्वीकृत सिद्धान्तों और दृढ़ जड़ित पक्षपात जो सम्पूर्ण रूप में लिए जाते हैं एक विशेष युग के या इसे प्रभुत्व कह सकते हैं, या मत की पूर्व व्याप्त धारा ही जनमत का निर्माण करती है।"[2]

र्‌यूटर ने लिखा है, "जनमत मतैक्य या निर्णय है जिसमें तथ्य के आधार पर संघर्ष एवं विवेचन द्वारा पहुँचा जाता है।"[3]

इन परिभाषाओं से ऐसा लगता हैं कि इनमें बहुत अधिक विरोध है। यंग ने तर्कपूर्ण विवेचन पर बल दिया। इनके अनुसार समुदाय का समझौता भी महत्त्वपूर्ण है। डेवी ने जन समस्याओं पर बल दिया है। पार्क तथा बर्गेस के अनुसार विवाद आवश्यक है। लिपमैन ने आन्तरिक तत्त्वों पर बल दिया है। डायसी ने विश्वासों एवं स्थायीभावों पर प्रकाश डाला है। वास्तव में जनमत में ये सभी तत्त्व पाये जाते हैं। सर्वप्रथम कोई न कोई समस्या अवश्य होनी चाहिए। फिर इसे हल करने के लिए तर्कपूर्ण विवेचन भी आवश्यक है। विवेचन तभी होगा जब लोगों में एकमत नहीं होगा और वे भिन्न-भिन्न विचार रखते होगे। फिर वाद-विवाद एवं विवेचन के द्वारा एक निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयत्न किया जाता है। थॉम्पसन[4] ने जनमत को तीन भागों में वर्गीकृत किया: (1) सामान्य पसन्द, (2) एक निश्चित उद्देश्य की इच्छा, (3) इस उद्देश्य को प्राप्त करने के सबसे व्यावहारिक साधन के विषय में विश्वास।

एक प्रजातन्त्र में जनमत के लिए कुछ आवश्यक शर्तें हैं। इनमें से प्रमुख यह है कि एक विषय में बहुमत ने जो मत निर्धारित कर लिया, वह अल्पमत को भी स्वीकार होना चाहिए। यह स्वीकृति लादी नहीं जानी चाहिए। अल्पमत को यह अपने आप स्वेच्छा से स्वीकार करना चाहिए।

---

1 "The pictures inside the heads of......human being, the pictures of themselves, of others, of their needs, purposes, and relationships are their public opinions." Walter Lippman, *Public Opinion*, p. 29.

2 "There exist at any given time a body of beliefs, convictions, sentiments, accepted principles and firmly rooted prejudices, which taken together make up the public opinion of a particular era, or what we may call the reigning or predominant current of opinion." Dicey, *Law and Opinoin in England*, p. 19.

3 "Public opinion is a consensus or judgment arrived at through conflict and discussion on the basis of facts." Reuter.

4 "George C. Thompson, *Public Opinion and Lord Beaconsfield* p. 33.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...या है ?

...जनमत को समझने के लिए हमने 'जन' (public) शब्द का अर्थ समझा और ...की कुछ परिभाषाओं पर भी विचार किया। मत की परिभाषा करते हुए ...यंग ने लिखा है, "यह पद मत' विचार, अनुभव या विश्वास की ओर संकेत ...है, जो पूर्ण निश्चायकता का संक्षिप्त है।"[1]

जनमत इस प्रकार किसी समुदाय के अधिकांश सदस्यों को किसी विषय पर ...यह मत पूर्णरूप से समुदाय का नियम नहीं बना होता। इसे सबसे अच्छा ...समझा जाता है। यह केवल एक ही उपाय के रूप में नहीं समझा जाता।

...श्मोल्लर (Schmoller) ने जनमत का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है, "जनमत ...र वाली एक वीणा की तरह है जिसको सभी दिशाओं से आने वाली हवाएँ ...है। इससे जो स्वर निकलते हैं वे हमेशा आपस में एकता नहीं रखते। आपस ...भिन्नता रखने वाली स्वर-धाराएँ एक-दूसरी को काटती हैं। जनमत निरन्तर ...रहता है, जिन चीजों को यह अपना विषय बनाता है उनकी दृष्टि से भी ...जिन मानसिक तत्वों के द्वारा यह काम करता है उनकी दृष्टि से भी। अभी ...एक माँग रहती है और कुछ देर बाद दूसरी हो जाती है। आज यह संवेगों ...करता है, कल धैर्य के साथ विचार करने के लिए कहता है।"

जनमत की विशेषताएँ
(Characteristics of Public Opinion)

जनमत की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

(1) जनमत सदैव किसी सार्वजनिक विषय अथवा समस्या के प्रति होता है। ...किसी वर्ग विशेष या व्यक्ति-विशेष से सम्बन्धित नहीं होता है। न ही इसमें किसी ...विशेष या व्यक्ति-विशेष के हित निहित होते हैं।

(2) जनमत व्यापक रूप से स्वीकार किया हुआ मत होता है। जनमत ...बहुमत (majority opinion) नहीं होता। जनमत को अल्पसंख्यक व्यक्तियों ...द्वारा भी स्वीकृत होना चाहिए।

(3) जनमत की उत्पत्ति सामूहिक आधार पर होती है। जनमत किसी एक ...व्यक्ति, चाहे वह जितना भी महान क्यों न हो, का मत नहीं होता। जनमत के ...निर्माण के लिए किसी समस्या या विषय पर पहले विवेचन, विवाद एवं परामर्श ...होता है। इसके आधार पर जो 'सामान्य मत' विकसित होता है, उसे सब स्वीकार ...करते हैं, तब उसे जनमत कहते हैं।

---

[1] "The term 'opinion' refers to an idea, conviction, or belief which is short of complete certainty." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 333.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(4) जनमत एक स्थिर धारणा नहीं होती है। जनमत एक निश्चित का के सन्दर्भ में ही प्रभावी होता है। कुछ समय पहले जो एक समस्या के विषय जनमत है, कुछ समय बाद परिवर्तित भी हो सकता है। जनमत निरन्तर परिव होता रहता है।

(5) जनमत सामाजिक प्रक्रिया की उपज होता है। वह कई व्यक्तियों मनों (minds) की परस्पर अन्तःक्रिया से उत्पन्न होता है।

(6) जनमत सदैव तर्क संगत ही नहीं होता, प्रायः यह तर्कहीनता आधारित होता है। कभी-कभी तो जनमत की तर्कहीनता पर आश्चर्य होता है।

(7) जनमत वैसे तो समस्त जनता का सर्वमान्य मत नहीं होता है, फिर सब इसे मानते हैं और यह सबको क्रियाशील बनाने की शक्ति रखता है।

(8) जनमत जन-संस्कृति का प्रतीक होता है और उसका प्रतिनिधित्व कर है। जनमत जनता के मान्य विश्वासों, आदर्शों, मूल्यों, मान्यताओं, स्थायीभा रूढ़ियुक्तियों, पूर्वधारणाओं पर आधारित होता है।

(9) जनमत विभिन्न मतों के वाद-विवाद के उपरान्त निर्मित होता है।

(10) जनमत के निर्माण में प्रायः यह देखा गया है कि प्रभुता सम्प साधन सम्पन्न, धन सम्पन्न, शक्ति सम्पन्न, वर्गों के हितों, पसन्द आदि का प्रभाव रह है, क्योंकि ये वर्ग सन्देशवाहन के साधनों की सरलता से उपलब्धि कर सकते हैं औ उसका लाभ इन्हें प्राप्त होता है।

(11) जनमत के निर्माण में एक तरह से विचारों का प्राकृतिक प्रव (natural selection) का सिद्धान्त क्रियाशील होता है। जो 'योग्यतम' (fittes होते हैं, वही जनमत का निर्माण करते हैं।

जनमत और एकमत (Public Opinion and Unanimity)

जनमत और एकमत में अन्तर है। एकमत में सब लोग सहमत होते हैं औ कोई भी विवाद नहीं रह जाता। जनमत में समुदाय के अधिकांश व्यक्ति विचार सहमत होते हैं, कुछ लोग असहमत भी होते हैं। अधिकांश लोग नशेबन्दी के पक्ष हैं, इसलिए जनमत इसके पक्ष में है। कुछ लोग इसका विरोध भी करते हैं।

जनमत और अभिवृत्ति (Public Opinion and Attitude)

कुछ लोग जनमत और अभिवृत्ति में कोई अन्तर नहीं मानते। स्प्रॉट ने लि "यह एकल शब्द जो ठीक है शायद 'अभिवृत्ति' है।"[1]

वास्तव में जनमत और अभिवृत्ति में अन्तर है। जनमत में उतना स्थायि नहीं पाया जाता जितना अभिवृत्ति में पाया जाता है। कूले ने लिखा है, "जनम

[1] "The single word that best fits is, perhaps, 'attitude'." W. J. H. Sprott, *Social Psychology*, p. 89.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अवयव प्रक्रिया के समान मानना चाहिए, न कि समय के कुछ प्रश्नों की ...ओं की दशा के रूप में।"[1]

...बिग ने भी लिखा है, "जनमत विवादात्मक विषय का व्यक्तीकरण है।"[2]

इस प्रकार अभिवृत्ति स्थायी एवं जमी हुई वस्तु है, जबकि जनमत परिवर्तन-...है। अभिवृत्ति में कार्य को प्रेरणा देने की शक्ति होती है। व्यक्ति अभिवृत्ति के ...र कार्य करता है। जनमत केवल विचारमात्र होते हैं। कुप्पुस्वामी ने लिखा ...कि अभिवृत्ति एक क्रिया की प्रवत्ति है, मत विशेष रूप से कुछ मौखिक एवं ...त्मक है।[3]

...और स्थायीभाव (Public Opinion and Sentiment)

जनमत और स्थायीभाव में भी अन्तर है। जनमत एक चल रहा विश्वास है, उसमें अधिक निश्चितता नहीं होती। स्थायीभाव में आस्था बहुत अधिक है। यह शीघ्र परिवर्तित नहीं होता। किम्बाल यंग ने लिखा है, "मत अनुभव ...में बिलकुल निश्चित नहीं है, जो स्थायीभाव से घनिष्ठ-रूप में सम्बन्धित ...हो।"[4]

...और सामान्य संकल्प (Public Opinion and General Will)

लॉवेल जनमत और सामान्य संकल्प में कोई भेद नहीं मानते। इसके विपरीत ...जनमत में इच्छा और संकल्प का समावेश नहीं मानते। वास्तव में ये दोनों ही ...र उचित नहीं हैं।

सामान्य संकल्प का मत एक समूह मन की कल्पना करता है, जो होता ही ...। इसका विवेचन हम अध्याय 35 व 36 में कर चुके हैं। गिन्सबर्ग ने भी लिखा "सामान्य संकल्प के बारे में छानबीन से यह मालूम होता है कि जो सामान्य ह ...संकल्प नहीं और जो संकल्प है वह सामान्य नहीं।"[5]

---

1. "Public opinion should be regarded as an organic process and not as a state of agreement about some qestion of the day." Cooley, *Social Process*, p. 378.
2. "Public opinion is an expression about a controversial point." William Albig.
3. "While an attitude is a tendency to act, opinion is something verbal and symbolic in a particular way." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, pp. 221-22.
4. "An opinion is not quite so certain a conviction which is a matter closely related to a sentiment." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, (1951), p. 431.
5. "As to the general will, investigation shows that what is general is not will and what is will is not general." M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 143.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जनमत का क्षेत्र सामान्य संकल्प में अत्यधिक विस्तृत है। सामान्य संकल्प एक कल्पनामात्र है, जबकि जनमत एक सत्यता है और जिसका अनुभव हम अपने दैनिक जीवन में ही करते रहते हैं। सामान्य संकल्प का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। जनमत का कभी भी अनुमान लगाया जा सकता है।

इस विश्लेषण के उपरान्त हम जनमत के विषय में एक धारणा बना सकते हैं। जनमत में निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं :

(1) यह किसी जनसमूह से सम्बन्धित होता है।

(2) जनसमूह के प्रत्येक सदस्य को विचार व्यक्त करने का अधिकार होता है।

(3) यह जनसमूह क्षणिक एवं अस्थायी होता है।

(4) जनसमूह के सदस्य अपनी राय, विश्वास, विचार आदि का प्रकाशन करते हैं।

(5) ये मत परिवर्तनशील होते हैं।

(6) जनमत एकमत से भिन्न होता है।

(7) जनमत एक प्रकार से कार्य करने के ढंग के विषय में बहुमत और अल्पमत में एक प्रकार का समझौता है।

(8) जनमत गतिशील होता है।

जनमत के निर्माण की प्रक्रिया
(Process of the Formation of Public Opinion)

जनमत के निर्माण की प्रक्रिया में कई चरण होते हैं। जनमत के लिए एक निश्चित पृष्ठभूमि की आवश्यकता होती है। इसके लिए कुछ मान्यताएँ होना आवश्यक है। प्रमुख मान्यताएँ निम्न हैं

(1) सार्वजनिक विवेचना एवं विवाद को जनता कर्तव्य समझती है। इसके ही कारण जनमत का निर्माण होता है। जनमत के विचारों की स्वतन्त्रता होना आवश्यक है। किम्बाल यंग ने इस विषय में लिखा है, "अधिकार विशेषाधिकार के रूप में पहचाने जाते हैं, इनमें विचारणीय विषय के सार्वजनिक विवेचन की आज्ञा है और कर्तव्य के रूप में सुरक्षित है।"[1]

(2) विवेचन एवं विवाद का अधिकार एवं स्वतन्त्रता तभी हो सकती है, जबकि व्यक्ति एक-दूसरे के विचारों के प्रति सहनशील रहें। यदि हम अपने विचार

---

[1] "Rights are recognized as privileges and public discussion of issues in permitted and protected as a duty." K. Young, *A Handbook of Society, Psychology* (1957), p. 334.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रखना चाहें और दूसरों के विचार न सुनना चाहें तो विवेचन समाज में नहीं रह ता। व्यक्तियों को भी अपना उत्तरदायित्व समझना पड़ता है।

(3) प्रायः यह अवस्था प्रजातांत्रिक समाजों में ही पायी जाती है। इस प्रकार के समाजों में राजनैतिक सत्ता जनता में निहित मानी जाती है। नेताओं को जनता सत्ता सौंपती है और जनता उनको हटा भी सकती है। जनमत ऐसी ही अवस्था में स्पष्ट रूप से मिलता है।

जनमत निर्माण में चरण

जनमत निर्माण में निम्न महत्त्वपूर्ण चरण होते हैं :

(1) **कोई न कोई समस्या या विषय** (Some Problem or Issue)—जनमत सदैव किसी समस्या या विषय पर होता है। यदि समस्या या विषय ही न हो तो जनमत किस पर होगा। इसलिए जनमत निर्माण की प्रक्रिया में सर्वप्रथम चरण है किसी न किसी समस्या या विषय का होना। इसी चरण में उस समस्या को इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि उस पर विवेचन हो सके।

(2) **प्रारम्भिक एवं खोजबीन का चरण** (Preliminary and Exploratory Stage)—समस्या या विषय के प्रस्तुत हो जाने पर लोग उस पर ध्यान देते हैं और खोजबीन प्रारम्भ करते हैं। लोग प्रश्न करते हैं और उनके द्वारा समस्या को समझने का प्रयत्न करते हैं। समस्या कितनी गम्भीर है? क्या यह समस्या को हल करने का समय है? क्या समस्या को सुलझाया जा सकता है? उसी प्रकार के अनेक प्रश्न होते हैं। बातचीत, वाद-विवाद, समाज पत्र, कहानी, रेडियो एवं टेलीविजन पर कार्यक्रम इत्यादि इन प्रश्नों को अपने-अपने विचार से हल करते हैं। विशेषज्ञों की राय ली जाती है। लोग उनको काफी महत्त्व देते हैं। कुछ स्वार्थी समूह अपने विचारों का प्रचार करते हैं जिससे जनमत उनके पक्ष में विकसित हो सके।

(3) **स्पष्ट ढाँचा स्तर** (Structured Stage)—इसके बाद समस्या कुछ-कुछ एक स्वरूप ले लेती है। लोग सुझाव प्रस्तुत करते हैं। सुझाव कई तरह के हो सकते हैं। फिर लोग इन प्रस्तावों की तरफदारी करने लगते हैं। कोई किसी सुझाव के पक्ष में होता है तो कोई किसी और के। इस समय इन पर वाद-विवाद चलता है। लोग अपने-अपने विचार व्यक्त करते हैं। इस समय भीड़ व्यवहार सरीखा व्यवहार प्रारम्भ हो जाता है। इसी समय नारे एवं उद्वेगपूर्ण अपीलें पक्ष और विपक्ष में आरम्भ हो जाती हैं। अनेक अतर्कपूर्ण एवं अविवेकशील तत्त्व भी उभर आते हैं। लोग केवल बुद्धि से ही विचार नहीं करते, अपितु भावनाओं में भी बहने लगते हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "यह अवस्था महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इस समय विचारणीय विषय तेजी से खींचा हुआ होता है और प्रमुख निर्णय न केवल विवेकपूर्ण परन्तु विवेकहीन कारकों द्वारा भी नियन्त्रित हो सकते हैं।"[1]

---

[1] "This stage is important because by this time the issue is sharply drawn and the major decisions may be controlled not only by rational but by irrational factors." *Ibid*, p. 335.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(4) **मतैक्य** (The Stage of Consensus)—इसके उपरान्त लोग एक मत निर्धारित कर लेते हैं। अधिकतर लोग जिस मत को रखते हैं, वही जनमत कहलाता है। मतैक्य का अर्थ एकमत नहीं होता; लोग उससे विभिन्न मत रख सकते हैं, पर बहुमत उसके पक्ष में होता है। अल्पमत बाद को भी इसे बदलने का प्रयत्न करता रह सकता है।

इन प्रक्रियाओं से होकर जनमत का निर्माण होता है।

प्राथमिक समाज में जनमत का निर्माण
(Public Opinion Formation in Primary Societies)

प्राथमिक समाज वे होते हैं जिनमें आमने-सामने के सम्बन्ध पाये जाते हैं। लोग एक-दूसरे को व्यक्तिगत रूप में जानते हैं। उनमें आपस में घनिष्ठता पायी जाती है। उदाहरण के लिए, ग्राम एक प्राथमिक समाज है।

प्राथमिक समाज में जनमत निर्माण एक विशिष्ट शैली से होता है जो समूह समाज में जनमत के निर्माण की शैली से भिन्न है। प्राथमिक समाजों में प्रायः जनमत ग्राम या समुदाय की समस्याओं के विषय में ही होता है। ज्यादातर इसके लिए बातचीत का माध्यम रहता है। वे मिलने-जुलने वाले स्थानों पर बातचीत करते हैं। ग्राम के मन्दिर, चौपाल या अन्य स्थानों पर बैठते हैं, वहीं पर बातचीत करते हैं। प्रायः भारतीय ग्रामों में लोग हुक्का पीते रहते हैं और बातचीत करते रहते हैं। बड़े-बूढ़े लोग समस्या को स्पष्ट करते हैं और बाकी लोग फिर विचार करते हैं।

भारतीय ग्रामों में अब पंचायत भी इसमें महत्त्वपूर्ण कार्य करती है। पहले जाति पंचायतें भी इस कार्य में भाग लेती थीं। आजकल पंचायतघर एवं मनोरंजन केन्द्र भी बैठने-उठने के प्रमुख स्थान बन गये हैं। प्रजातन्त्र में पंचायतों का महत्त्वपूर्ण भाग है। जनमत का निर्णय पचायत ग्राम सभा में मत लेकर करती है।

इस प्रकार प्राथमिक समाजों में जनमत निर्माण की प्रक्रिया अत्यन्त सरल है।

समूह समाज में जनमत का निर्माण
(Public Opinion Formation in Mass Society)

समूह समाज उस समाज को कहते हैं जिसमें द्वैतीयिक सम्बन्धों की अधिकता पायी जाती है; जैसे—नगर विकसित हो गये हैं। बड़े-बड़े जन-समूह एक नगर में रहते हैं। प्राथमिक सम्बन्ध नहीं के बराबर रह गये हैं। विशिष्ट समूह विकसित हो गये हैं। जनसंख्या की गतिशीलता बढ़ गयी है। नये मूल्य एवं अभिवृत्तियाँ बन गयी हैं। जीवन के आदर्श बदल गये हैं।

इस प्रकार समूह समाज आधुनिक संसार में अपना एक पृथक अस्तित्व रखता है। जनमत के निर्माण की प्रक्रिया भी इसमें जटिल हो गयी है। आजकल समस्याओं का अधिक विस्तार हो गया है। समस्याएँ कभी-कभी तो समस्त संसार से सम्बन्ध रखती हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस जटिल एवं विस्तृत समूह समाज में प्रत्येक व्यक्ति सभी रुचियाँ नहीं रख ...। उसे इसके लिए अप्रत्यक्ष और द्वैतीयिक सूचना के स्रोतों का उपयोग करना है। समाचार पत्र, रेडियो, सिने-चित्र, टेलीविजन इत्यादि के द्वारा हमें समस्याओं ... होता है। हमें इस समाज में कल्पना अधिक करनी पड़ती है। किम्बाल यंग ...ता है, "ग्रामों में जनमत निर्माण के असमान प्रत्यक्षीकरण से ये क्रियाएँ अधिक ...नात्मक एवं कल्पनात्मक हैं।"[1]

समूह समाज में जनमत निर्माण में व्यवहार भीड़ के व्यवहार से काफी ...जुलता है। सुझावग्राह्यता भीड़ के समान जनता में भी आ जाती है। उद्वेग ...नाओं पर जनमत अधिक आश्रित रहता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "कुछ ...से हमारा व्यवहार भीड़ के सदृश्य होता है, बजाय संस्थागत और स्थिर ...क छोटे शहर के समान।"[2]

समूह समाज में प्रचार का भी महत्त्वपूण स्थान है। जनमत के निर्माण में ...बहुत प्रभाव डालता है। अभी फरवरी 1962 में आप आम चुनाव में प्रचार ...अपने देश में देख ही चुके हैं। समूह समाज में व्यक्तिगत असुरक्षा, अकेलेपन ...न, संसार की अनिश्चित अवस्था, जल्दी और हुल्लड़बाजी इत्यादि के कारण ...परिवर्तन प्रजातन्त्र एवं जनमत के निर्माण में हुए हैं।

प्रजातांत्रिक और सर्वाधिकारवादी राज्य में जनमत का निर्माण
(Formation of Public Opinion in Democratic and Totalitarian State

प्रजातांत्रिक और सर्वाधिकारवादी राज्य में जनमत का निर्माण बड़ा भिन्न ...अब हम इस पर विचार करेंगे।

...तांत्रिक राज्य में जनमत का निर्माण (Formation of Public Opinion in Democratic State)

प्रजातांत्रिक राज्य में जनता को यह अधिकार होता है कि वे किसी भी विषय ...किसी भी प्रकार के विचार व्यक्त कर सकते हैं। इसलिए प्रजातांत्रिक राज्य में वास्तविक जनमत होता है।

प्रजातांत्रिक राज्य में जनमत के निर्माण की वही प्रक्रिया है जिसका वर्णन ...ने 'जनमत के निर्माण की प्रक्रिया' के अन्तर्गत किया है।

---

[1] "Unlike public opinion formation in the village, these operations are much more inferential and imaginative than perceptual." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* (1957), p. 337.

[2] "In some ways, our behaviour and thinking resembles that of the crowd rather than that of institutionalized and stable village or small town." *Ibid*. p. 337.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वाधिकारवादी राज्य में जनमत का निर्माण (Formation of Public Opinion in Totalitarian State)

जनमत का सर्वाधिकारवादी राज्यों में वह स्थान नहीं होता जो प्रजातान्त्रिक राज्यों में होता है। यहाँ पर नेता लोग विचार व्यक्त कर देते हैं और वही जनमत होता है। वे जनता के स्थान पर बोलते हैं। भाषण की स्वतन्त्रता न होने के कारण जनता चुप ही रहती है। वास्तव में सर्वाधिकारवादी राज्यों में जनमत का कोई स्थान नहीं है।

सर्वाधिकारवादी राज्यों में शासक प्रचार के द्वारा अपने विचार जनता पर थोपते हैं। कुछ लोगों का मत है कि इन राज्यों में भी कुछ न कुछ मात्रा में तो जनता इन विचारों से सहमत रहती ही होगी, वरना वे नवीन प्रतिमानों को कैसे स्वीकार कर लेते हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "किसी भी समूह पर, जिसने स्वीकार हेतु कुछ मनोवैज्ञानिक तैयारियाँ न की हों, व्यवहार प्रतिमान पूर्णरूपेण थोपा नहीं जा सकता।" किम्बाल यंग का यह कथन वैज्ञानिक सत्य है, पर सर्वाधिकारवादी राज्यों में जो स्वीकार करवाना होता है, उसके लिए शासक वर्ग पहले से एक वातावरण बनाते हैं। पर यह जनमत निर्माण तो नहीं हुआ।

सर्वाधिकारवादी राज्यों में जनमत निर्माण की प्रक्रिया के दो चरण हैं—(i) शासक वर्ग द्वारा मत का प्रतिपादन एवं व्यक्तिकरण, और (ii) शासक वर्ग द्वारा प्रचार के साधनों के माध्यम से उस मत के पक्ष में वातावरण तैयार करना। सर्वप्रथम शासक वर्ग मत का निर्धारण कर लेता है। फिर प्रचार के माध्यमों; जैसे—सभाएँ, बैठकें, भाषण, रेडियो, समाचार पत्र आदि के द्वारा मत के पक्ष में वातावरण तैयार करते हैं और इस प्रकार अपने मत को जनमत का नाम देकर जनता पर थोप देते हैं। विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता जनता को होती नहीं है, इसलिए अन्य मतों के आने का प्रश्न नहीं रहता। अपने मन में चाहे जो सोचता रहे, पर व्यक्त नहीं कर सकता। विरोधी दल होते नहीं हैं, जो विरोध करेंगे। संचार के साधनों; जैसे—रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र सब सरकार के होते हैं, इसलिए वे मत के पक्ष में ही प्रचार करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सर्वाधिकारवादी राज्यों में शासक-मत ही जनमत होता है।

जनमत प्रजातन्त्र की एक प्रक्रिया के रूप में (Public Opinion as a Process of Democracy)

प्रजातन्त्र शासन की एक व्यवस्था है। हमें पहले यह समझ लेना आवश्यक है कि प्रजातन्त्र क्या होता है। अब्राहम लिंकन (Abraham Lincoln) जो संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति थे, ने प्रजातन्त्र की परिभाषा करते हुए लिखा है, "प्रजातन्त्र वह शासन है, जो जनता का हो, जनता के लिए हो और जनता के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चलाया जाता हो।" इस कथन से स्पष्ट है कि प्रजातन्त्र जनता पर आधारित होता है। जनता जो चाहे कर सकती है। जनता की आवाज ही है। पुन्तान्बेकर ने लिखा है, "प्रजातन्त्र शासन का वह रूप है, जिसमें समाज अपनी इच्छा तथा शक्ति को कार्यान्वित करने के लिए एक निश्चित एवं संगठित धारण कर लेता है। यद्यपि उसकी शक्ति थोड़े से लोगों के हाथों में हो सकती किन्तु वे लोग समस्त जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं, जनता के द्वारा निर्वाचित जाते हैं तथा जनता द्वारा अपने पद से अलग भी किये जा सकते हैं। उनके अधिकार नहीं होते। उनका अस्तित्व समस्त जनता के लिए होता है। वे उसी उत्पन्न होते हैं और उसी के प्रतीक होते हैं। वे शासन चलाने में इसलिए समर्थ हैं कि उन्हें बहुसंख्यक का सहयोग तथा सहमति प्राप्त होती है।"

प्रजातन्त्र में जनता को हर प्रकार के अधिकार होते हैं। हर प्रजातान्त्रिक देश संविधान में व्यक्तियों को कुछ मौलिक अधिकार, (fundamental rights) प्रदान किये जाते हैं। इन मौलिक अधिकारों में सबसे प्रमुख विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता होती है। भारत के संविधान में भी विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता प्रदान की गयी है।

जनमत-निर्माण के लिए एक निश्चित पृष्ठभूमि की आवश्यकता होती है, जिसकी कुछ आधारभूत मान्यताएँ हैं---(i) सार्वजनिक विवेचन एवं विवाद को जनता अपना कर्तव्य समझती है, (ii) विवेचन एवं विवाद का अधिकार एवं स्वतन्त्रता तभी हो सकती है जबकि व्यक्ति एक-दूसरे के विचारों के प्रति सहनशील रहें और (iii) प्रायः यह अवस्था प्रजातान्त्रिक समाजों में ही पायी जाती है। अतः प्रजातन्त्र ही जनमत के निर्माण की पृष्ठभूमि प्रदान करता है।

जनमत प्रजातन्त्र की एक प्रक्रिया है। प्रजातन्त्र चल ही नहीं सकता यदि जनमत न हो। प्रजातन्त्र के सुचारु रूप से चलने के लिए जनमत आवश्यक है। प्रजातन्त्र में हर विषय पर जनमत तैयार करना पड़ता है।

जनमत प्रजातन्त्र की एक प्रक्रिया है, क्योंकि प्रजातन्त्र जनमत पर ही आधारित है। प्रजातन्त्र में सब कार्य जनता की इच्छानुसार ही किये जाते हैं। यह इच्छा कैसे जानी जाये। इसके लिए जनमत ही मार्ग प्रदर्शित करता है।

प्रजातन्त्र में यह मान्यता है कि प्रत्येक नागरिक राष्ट्र के प्रति सजग रहेगा और मुख्य विषयों एव समस्याओं के प्रति अपने विचार व्यक्त करेगा और वाद-विवाद में भाग लेगा। इस प्रकार व्यक्तियों के वाद-विवाद से जनमत स्पष्ट होता है। अतः जनमत प्रजातन्त्र की एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रजातन्त्र अपने को चलाता है।

जनमत का प्रजातन्त्र में महत्त्व
(Importance of Public Opinion in Democracy)

जनमत का प्रजातन्त्र में अत्यधिक महत्त्व है। प्रजातन्त्र जनमत की प्रक्रिया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वारा ही अपने को प्रस्थापित एवं संचालित करता है। बिना जनमत के प्रजातन्त्र चल ही नहीं सकता। प्रजातान्त्रिक प्रणाली का आधार-स्तम्भ ही जनमत है।

जनमत प्रजातन्त्र में एक महत्त्वपूर्ण एवं प्रभावी सामाजिक नियन्त्रण है। जनमत के द्वारा ही जनता सरकार पर नियन्त्रण रखती है। सरकार को जनमत के अनुसार चलना पड़ता है। यदि सरकार जनमत के अनुसार नहीं चलती है तो जनता सरकार को प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में हटा सकती है। जनमत एक निषेधक शक्ति है जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। जनमत सरकार एवं अन्य संस्थाओं को लोकहित के विरुद्ध कार्य करने से रोकता है।

सरकारें कई बार अपने कार्यों एवं कर्तव्यों के प्रति अजागरूक एवं उदासीन हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में जनमत उन्हें जागरूक एवं कार्य करने के लिए बाध्य करता है।

जनमत के कारण सरकारें प्रजातन्त्र में स्वेच्छाचारी नहीं हो पातीं। जहाँ सरकारें स्वेच्छाचारिता की ओर झुकीं, कि जनमत उनका विरोध प्रारम्भ कर देता है और उन्हें जनमत को स्वीकार करना पड़ता है।

जनमत, प्रजातन्त्र में, जनता की नाड़ी के समान है। प्रजातन्त्र म सरकारों को जनता का सदैव ध्यान रखना पड़ता है, क्योंकि वे जनता के मतों से निर्वाचित होती हैं। इसलिए उन्हें जनता के विषय में जानकारी रखना अनिवार्य है। यह जानकारी सरकारों को जनमत द्वारा ही होती है। प्रजातन्त्र में वही सरकार चल सकती है जो जनमत का ध्यान रखे। गैंसेट ने उचित ही लिखा है, "जनमत के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु को शासन का मौतिक आधार बनाकर धरती पर कोई कभी शासन कर ही नहीं सका है।"

प्रबुद्ध जनमत के निर्माण के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ
(Conditions for the Formation of Enlightened Public Opinion)

प्रबुद्ध एवं उच्चकोटि के जनमत के निर्माण एवं विकास के लिए समाज में कुछ आवश्यक परिस्थितियाँ होनी चाहिए, तभी उसका विकास या निर्माण हो सकता है। ये आवश्यक परिस्थितियाँ प्रमुख रूप से निम्नलिखित हैं :

(1) **नागरिक साक्षर हों**—जनमत उच्चकोटि का तभी विकसित हो सकता है जबकि नागरिक समझदार हों और समस्याओं को समझ सकें। यह तभी सम्भव है जबकि नागरिक साक्षर हों। शिक्षा एक बहुत बड़ी आवश्यकता है।

(2) **आर्थिक सम्पन्नता**—दूसरी आवश्यकता है आर्थिक सम्पन्नता की। यदि आर्थिक सम्पन्नता नहीं होगी तो जनता रोटी कपड़े के चक्कर में ही फँसी रहेगी और उसे किसी ओर ध्यान देने का अवसर नहीं मिलेगा। क्रान्ति कभी अति दरिद्र समूह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं होती। न्यूनतम अनिवार्य आर्थिक स्तर की व्यवस्था उच्चकोटि के जनमत विकास के लिए आवश्यक है।

(3) **हितों की समानता**—उच्चकोटि के जनमत का विकास तभी हो सकता जबकि राष्ट्र के व्यक्तियों के हित समान हों।

(4) **संदेश वाहन के साधनों की निष्पक्षता**—उच्चकोटि के जनमत का विकास इस बात पर भी आधारित है कि सन्देशवाहन के साधन; जैसे—समाचार, पत्र, रेडियो आदि निष्पक्ष हों, क्योंकि जनमत के निर्माण में इनका बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। वास्तव में, आधुनिक समय में तो संदेशवाहन के साधन ही जनमत को दिशा प्रदान करते हैं।

(5) **राजनैतिक दलों का उद्देश्य जनकल्याण हो**—राजनैतिक दल जनमत के निर्माण में सक्रिय योगदान करते हैं और समस्याओं के प्रति सबसे अधिक जागरूक होते हैं। ये जनकल्याण से प्रेरित होंगे तो सच्चा रूप प्रस्तुत करेंगे। अन्यथा अपने स्वार्थों के अनुसार जनमत बनाना चाहेंगे। वर्ग-आधारित, व्यवसाय-आधारित, जातीय, साम्प्रदायिक आधार पर आधारित दल उचित जनमत के निर्माण में सहायक नहीं होते, क्योंकि वे संकीर्ण दृष्टि से विचार करते हैं।

(6) **अल्प संख्यकों को पूर्ण स्वतन्त्रता**—जनमत का बल बहुसंख्यक मत नहीं होता। अल्पसंख्यक भी इससे सहमत होने चाहिए। इसलिए यह अनिवार्य है कि उन्हें अपने विचारों को व्यक्त करने एवं वाद-विवाद में भाग लेने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए जिसमें कि उनके पक्ष को भी भली प्रकार से समझा जा सके।

जनमत और विवेक (Public Opinion and Rationality)

जनमत में पर्याप्त विवेक पाया जाता है। साधारण अवस्था में जनता विवेक से कार्य करती है, परन्तु असाधारण अवस्था एवं संकटकाल में मनुष्य विवेक खो बैठता है और भावनाओं एवं उद्वेगों में बह जाता है। गिन्सबर्ग ने लिखा है, "जनमत की तर्कहीनता कभी-कभी तो बड़ी आश्चर्यजनक होती है। कुछ विचारों के जम जाने और कुछ उखड़ जाने का अन्तिम कारण प्रायः उन तत्त्वों में, जो बौद्धिक नियन्त्रण के अन्दर नहीं होते, समय की उलझी हुई परिस्थितियों में, शक्तिशाली संवेगों और सहज-प्रवृत्तियों के उभरने में मिलता है, लेकिन जिन लोगों को ये प्रभावित करते हैं वे उनको थोड़ा या बिलकुल भी नहीं समझते।"[1]

जनमत के निर्माण में विवेक एवं अविवेक दोनों ही कार्य करते हैं। कभी किसी तत्त्व की अधिकता रहती है, कभी किसी की। समूह समाज में प्रचार का महत्त्व बढ़ता जा रहा है, इसके परिणामस्वरूप अविवेक एवं उद्वेगों का हाथ जनमत के

[1] M. Ginsberg, *The Psychology of Society*, p. 145.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निर्माण में बढ़ता जा रहा है। कुप्पुस्वामी ने लिखा है, "इस प्रकार जनमत के निर्माण में तार्किक एवं अतार्किक दोनों विचार पाये जाते है।"[1]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जनमत सदैव तर्क पर ही आधारित नहीं होता। ये संवेगों के प्रभाव से अधिक संचालित होता है। अतः किसी ने उचित ही लिखा है, "मनुष्य एक तर्कसंगत पशु के रूप में परिभाषित किया जाता है, पर वह मूलरूप से अतर्कसंगत है।"[2]

जनमत को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Influencing Public Opinion)

जनमत के निश्चायक (determinants) अनेक हैं। इन निश्चायकों में सर्वप्रथम वे स्रोत आते हैं जहाँ से व्यक्ति सूचना प्राप्त करते हैं। फिर व्यक्तियों के आन्तरिक मनोभाव भी अपना प्रभाव दिखाते हैं। विभिन्न समूहों का भी प्रभाव पड़ता है। नेता लोगों का भी प्रभाव पड़ता है। उस समय की घटनाएँ भी अपना असर डालती हैं। प्रचार के साधन भी महत्त्वपूर्ण प्रभावक हैं। अब हम इन पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

प्रतीतिक निश्चायक (Subjective Determinants)

प्रत्येक व्यक्ति का एक आन्तरिक व्यक्तित्व होता है। उसके सामने अपना चित्र होता है और दूसरों के बारे में भी उसका एक चित्र होता है। कुछ अभिवृत्तियाँ एवं मूल्य होते हैं। एक सांस्कृतिक प्रतिमान का प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर होता है।

प्रत्येक व्यक्ति की कुछ सूचनाएँ होती हैं। उसका अपना ज्ञान होता है। वह इनकी सहायता से ही अपना मत बनाता है। इसलिए जो वस्तुएँ उसके स्तर पर होती हैं, उन्हें वह शीघ्र समझ लेता है। जार्ज एच. स्मिथ ने एक अध्ययन के द्वारा मत और ज्ञान का सम्बन्ध जानने का प्रयत्न किया।

अभिप्रेरणाएँ, अभिवृत्तियाँ, भावनाएँ आदि भी जनमत पर प्रभाव डालती हैं।

विरोधी दबाव (Cross Pressures)—विरोधी दवाव को समझाते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "अत्यधिक जटिल समाजों में, बहुत से व्यक्तियों के पास अनेक समूहों की सदस्यता होती है। तथा इन समूहों के भी अनेक उद्देश्य एवं कार्य होते हैं जो संघर्ष में भी हो सकते हैं, इस संघर्षात्मक प्रभावों को हम विरोधी दबाव कह सकते हैं।"[3]

---

1 "Thus in the formation of public opinion both rational and considerations prevail." B. Kuppuswamy, *An Introduction of Social Psychology*, p. 227.

2 Man is define as a rational animal but fundamentally he is irrational."

3 "In a highly complex society, most people have membership in a number of groups. Frequently these groups have different aims and functions which may be in conflict. Such conflicting influences we call *cross pressure.*" K. Young, *A Handbook of Socil Psychology*, p. 340.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किम्बाल यंग ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "विरोधी दबाव का उसी व्यक्ति या समूह में दो या दो से अधिक मत का निर्धारण । ।"[1]

एक व्यक्ति पर उसके परिवार, धार्मिक समूह, राजनैतिक पार्टी, सामाजिक आदि सबका ही प्रभाव पड़ता है। ये प्रभाव एक-दूसरे के विरोधी भी हो सकते हैं।

...िक वर्ग (Social Class)

जनमत के निर्माण में सामाजिक वर्ग का भी प्रभाव पड़ता है। किम्बाल यंग ...ा है, "बहुत से आकार समूहों का, जिनमें वयस्क तादात्म्य सदस्यता स्थिर ...है, मत एवं अभिवृत्ति प्रभाव का विषय है, सामाजिक वर्ग के अतिरिक्त कोई अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं है।"[2]

सामाजिक वर्ग सामाजिक स्तरण के कारण होता है। प्रत्येक व्यक्ति की एक ...ी होती है। इसका प्रभाव उसके मतों पर पड़ता है।

आर्थिक वर्ग भी प्रभाव डालते हैं पर अधिक नहीं।

...मों पर दबाव (Pressures on Media)

प्रचार के माध्यम—समाचार पत्र, रेडियो, सिनेमा, टेलीविजन इत्यादि का ...त बनाने में बड़ा प्रभाव पड़ता है। इसलिए स्वार्थी लोग एवं समूह इन माध्यमों ...ी दबाव डालते हैं और अपनी बात कहलाते हैं। कोई भी समाचार पत्र केवल ...े पर नहीं चल सकता। उसके लिए विज्ञापन आवश्यक है। विज्ञापन सरकार या ...बड़े उद्योगपति देते हैं। इसलिए ये व्यापारी समाचार पत्र को अपने विचार प्रकट ...ने के लिए विवश करते हैं। इतना ही नहीं, अधिकांश समाचार पत्र इन बड़े-बड़े ...ारियों के ही हाथ में है। हिन्दुस्तान टाइम्स बिरला ग्रुप के हाथ में, टाइम्स ...फ इण्डिया डालमिया के और इसी प्रकार अन्य समाचार पत्र भी व्यापार के ...थ में है। कभी-कभी कोई राजनैतिक पार्टी भी इन पर अपना प्रभुत्व जमा ...ती है।

...त्व (Leadership)

नेता जनमत के निर्माण में बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस दृष्टि से निम्न तथ्य ...हत्त्वपूर्ण हैं :

---

[1] "A cross-pressure may by defined as the operation of two or more determinants of opinion on the same individual or group." *Ibid*, p. 340.

[2] "Of the many reference groups towards which adults may maintain identifying memberships and hence be subject to influence on opinion and attitudes, none is more important than social class." *Ibid*, p. 343.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) नेता सबसे पहले विषय या समस्या को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत क है। इसका कारण स्पष्ट है कि जैसा चित्र वे प्रस्तुत करेंगे उसकाप्र भाव जनता भी पड़ेगा।

(2) नता इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हैं कि वे जनता की भावनाओं को प्र भाषित करत हैं।

(3) नेता अपने स्वार्थों के लिए जनता के उद्देश्यों एवं प्रेरणाओं को रूप में रख सकते हैं और वे ऐसा करते भी हैं। वे अपने स्वार्थों की पूर्ति लगते हैं।

(4) नेता विषय या समस्या को अपने स्वार्थों के लिए गलत प्रस्तुत क हैं, यह प्रजातन्त्र के लिए बड़ा ही खतरनाक है। इस प्रकार प्रजातन्त्र में भी जन का शोषण होता है और नेता अपना स्वार्थ पूरा करते हैं। राज्य जनता का और म लेते हैं नेता लोग। जिस प्रकार धार्मिक विश्वासों का लाभ उठाकर ब्राह्मण, पं और पुजारी जनता की अप्रत्यक्ष सहमति से जनता को लूटते थे, उसी प्रकार आज राजनैतिक नेता जनता के नाम पर जनता को ही लूट रहे हैं। यह प्रजातन्त्र का बड़ा अभिशाप है।

ऊपर के लोग जनमत के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भाग लेते हैं। वे अपने विचा का प्रचार करते हैं और हर एक उपाय अपने विचार मनवाने के उपयोग में लाते हैं

प्रचार (Propaganda)

यह भी जनमत के निर्माण में महत्त्वपूर्ण है। जब वस्तुएँ स्पष्ट नहीं होतीं सरलता से लोगों को भुलावे में डाला जा सकता है। सामाजिक परिवर्तन की दि निश्चित करने में प्रचार का महत्त्व है।

प्रचार के माध्यम (Media of Propaganda)

ये भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

घटनाएँ (Events)

घटनाओं का जनमत पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। घटनाओं को 'कमा का प्रचार' (propaganda of the deed) कहते हैं। किसी की हत्या, रेलगाड़ी उल जाना, किसी को फाँसी, दंगे या अन्य घटनाएँ जिनका लोगों के मूल्यों एवं अभिवृत्ति पर प्रभाव पड़ता हो, प्रचार के लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

केंट्रिल ने अमरीका में द्वितीय महायुद्ध में 1939-41 तक एक अध्ययन किया, जिससे पता लगता है कि घटनाएँ कैसे जनमत पर प्रभाव डालती हैं। पहले लोगों का विश्वास था कि इंगलैण्ड और फ्रांस युद्ध में जीत जायेंगे। 1940 की गर्मियों में जब जर्मनी ने फ्रांस को हरा दिया, तो यह मत हो गया कि जर्मनी जीत जायेगा। कुछ दिन के बाद यह विश्वास ढीला पड़ गया; क्योंकि इंगलैण्ड जहाँ का तहाँ रहा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जनमत-निर्माण के साधन अथवा माध्यम (Agencies or Media of Public Opinion Formation)

जनमत-निर्माण की प्रक्रिया पर हम प्रकाश डाल चुके हैं। प्राथमिक समाजों (...ary societies) में जनमत-निर्माण की प्रक्रिया अति सरल है। किसी विषय ...षय पर पहले चर्चा छोटे-छोटे समूहों में चलती है। फिर यह चौपाल आदि ...िक स्थानों पर बातचीत का विषय बन जाता है। फिर पंचायत में वाद- ...के द्वारा जनमत का निश्चय कर लिया जाता है।

...पर द्वैतीयिक समाजों और समूह समाजों (mass societies) में जनमत- ...की प्रक्रिया सन्देशवाहन के साधनों के कारण अत्यन्त जटिल हो गयी है। ...के आविष्कार के बाद और बाद को तार, टेलीफोन और रेडियो के आविष्कार ...से जनमत-निर्माण की प्रक्रिया अब स्पष्टतः अप्रत्यक्ष और विविध प्रकार के ...के अधीन हो गयी है।"[1] आधुनिक समय में जनमत-निर्माण पर अनेक ...के प्रभाव पड़ते हैं। इनमें जनमत निर्माण के साधन अथवा माध्यम बहुत ...र्ण हैं। अब हम इन पर विचार करेंगे।

(1) **प्रेस और समाचार पत्र** (Press and News Papers)—जनमत-...ण में प्रेस का कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है इसे प्रायः सभी लोग जानते हैं। प्रेस के ...इश्तहार, पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तकें आदि छापी जाती हैं जिनसे साधारण एवं ...ट जनता को सूचनाएँ प्राप्त होती रहती हैं। इश्तहारों के द्वारा जनसाधारण ...न किसी भी समस्या की तरफ आकर्षित किया जा सकता है और उनसे ...ंधित साधनों से भी उन्हें अवगत कराया जा सकता है। प्रेस के माध्यम से ...विचारों को विशाल जनसमूह के सामने लाने में सुविधा रहती है। समाज का ...बहुत विस्तृत है, उसमें व्यक्तिगत रूप से मिलना और समस्या को समझाना ...समाधान निकालना कठिन है। प्रेस ही एक ऐसा माध्यम है, जिनसे कम समय, ...र्च में यह काम आसानी से हो सकता है। प्रेस से ही समाचार पत्र भी प्रकाशित ...हैं। जनमत निर्माण में स्वतन्त्र, निष्पक्ष तथा न्यायप्रिय समाचार पत्र का महत्त्व ...विदित है। ऐसे समाचार पत्र जनता को सार्वजनिक महत्त्व की घटनाओं की ...ना देते हैं तथा अपना ठोस और तार्किक मत देते हैं। समाचार पत्र वास्तव में ...ाजिक,राजनैतिक, आर्थिक आदि समस्याओं का ज्ञान कराते हैं और उसके लिए ...युक्त सुझाव भी देते हैं। समाचार पत्र शासन की भूलों तथा गलतियों की तीव्र ...लोचना करते हैं। समाचार पत्रों के द्वारा ही शासन को जनमत के प्रभाव का ज्ञान ...जाता है और उसे बाध्य होकर अपनी नीतियों में परिवर्तन करना पड़ता है।

---

[1] "With the invention of printing and later of the telegraph, telephone and radio, opinion formation became distinctly indirect and subject to greater variety and influence."

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु कुछ समाचार पत्र पूँजीपतियों, राजनैतिक दलों के होते हैं। उन पर इनका पूर्ण रूप से नियन्त्रण होता है। वे ऐसी बातों का प्रचार करते हैं जिनसे उनके स्वार्थों की सिद्धि हो सके। वे जनता को वास्तविक सूचनाएँ नहीं देते, बल्कि भ्रम में डालने वाली सूचनाएँ देते हैं। ऐसे समाचार पत्र पूँजीवादी समाजों और सर्वाधिकारवादी राज्यों में ही पाये जाते हैं। समाचार पत्रों पर नियन्त्रण होना चाहिए लेकिन इतना नियन्त्रण नहीं होना चाहिए कि वे अपने स्वयं के विचारों को जनता के सामने न ला सकें अथवा वास्तविक समाचार न प्रकाशित कर सकें। नियन्त्रण इतना ही हो कि वे अपने अधिकारों का दुरुपयोग न कर सकें। उनका पूर्णतया सरकार, राजनैतिक दल अथवा पूँजीपति के अधीन होना स्वस्थ जनमत के निर्माण में बाधा उत्पन्न करता है। ऐसी दशा में वे अपना मूल उद्देश्य भूलकर उनके हित में प्रचार करने के साधन मात्र बनकर रह जाते हैं।

(2) **टेलीफोन तथा टेलीग्राफ** (Telephone and Telegraph)—समाचार पत्रों के अलावा टेलीफोन और टेलीग्राफ भी जनमत निर्माण के महत्त्वपूर्ण साधन हैं। इनके माध्यम से समाचार कुछ ही मिनटों में देश के कोने-कोने में पहुँच जाते हैं। टेलीफोन एवं टेलीग्राफ के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान सरलता से हो जाता है। टेलीफोन के द्वारा जनता के प्रतिनिधि एक-दूसरे से बातचीत करके विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। इन्हीं के द्वारा सम्वाददाता और समाचार एजेन्सियाँ दुनिया भर के समाचार समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में भेजते रहते हैं। अतः स्पष्ट रूप से यह बात सिद्ध है कि टेलीफोन और टेलीग्राफ जनमत-निर्माण का एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

(3) **रेडियो** (Radio)—आधुनिक युग में, जनमत निर्माण में, रेडियो का महत्त्व सर्वस्वीकृत है। रेडियो के द्वारा कोई भी समाचार क्षण-भर में ही सारी दुनिया में प्रसारित किया जा सकता है। समाचार पत्रों द्वारा समाचारों की जानकारी प्राप्त करने के लिए शिक्षित होना अनिवार्य है, लेकिन रेडियो से प्राप्त समाचार शिक्षित और अशिक्षित सभी लोग जान लेते हैं। आज हमारे देश में जनमत-निर्माण के साधनों में रेडियो एक महत्त्वपूर्ण साधन है। रेडियो से विचारों के आदान-प्रदान में सुविधा रहती है। रेडियो से देश के नेता, समाज सुधारक, विशेषज्ञों आदि के मत-विचार, आलोचना आदि के कोने-कोने में सुने जा सकते हैं। रेडियो द्वारा प्रसारित सूचनाओं पर लोग अधिक विश्वास करते हैं, क्योंकि समाचार पत्र कभी-कभी पक्षपात पूर्ण सूचनाओं को प्रकाशित करता है। यदि रेडियो पर भी सरकार का अत्यधिक नियन्त्रण रहता है तो जनमत-निर्माण में रेडियो महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं अदा कर सकता।

रेडियो का ही सबसे आधुनिक रूप से टेलीविजन है। टेलीविजन के द्वारा सम्वादों और कार्यक्रम को केवल सुना ही नहीं जा सकता, बल्कि विश्व के प्रत्येक

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र होने वाले कार्यक्रमों को देखा भी जा सकता है। इस प्रकार इसमें सिनेमा ों का फायदा भी उठाया जा सकता है। टेलीविजन के द्वारा किसी भी समस्या ति के कारण तथा उनके निराकरण के तरीके को नाटक के रूप में दिखाया है, जैसे—परिवार नियोजन के लिए अक्सर टेलीविजन कार्यक्रम प्रसारित किये हैं। इससे जनता बड़े परिवार से हानियों को समझने लगी है और छोटा परिवार का प्रयास करती है।

(4) **सिनेमा या चलचित्र (Cinema or Movies)**—जनमत-निर्माण में का महत्त्व भी कम नहीं है। इसमें सुनना और देखना साथ-साथ होने के मस्तिष्क पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। सिनेमा से अशिक्षित लोग भी लाभ सकते हैं। देश की जनता को राजनैतिक तथा सामाजिक शिक्षा देने के लिए एक प्रभावशाली साधन है। सिनेमा के माध्यम से जनता को सामयिक ओं और समाचारों से अवगत कराया जा सकता है और सामाजिक समस्याओं जागरूक करने के साथ-साथ उनके वास्तविक समाधानों के सम्बन्ध में सुझाव जा सकता है। सिनेमा के पर्दे पर जनता देश में होने वाली प्रगति को देखती देश और दुनिया के महान नेताओं की बातचीत तथा विचार सुनती और देखती इन सारी बातों के कारण सिनेमा जनमत के निर्माण में सहायक सिद्ध होती है।

(5) **सार्वजनिक भाषण (Public Speeches)**—सार्वजनिक सभाओं में दिये भाषणों का जनमत-निर्माण में बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। इस सार्वजनिक का प्रभाव उपर्युक्त जनमत-निर्माण के साधनों से शीघ्र पड़ता है। सार्वजनिक ओं में सार्वजनिक हित का प्रश्न उठाया जाता है और वाद-विवाद के माध्यम से र प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जाता है। इन सार्वजनिक भाषणों में सरकार आलोचना और जनता की सुविधाओं का वर्णन आदि किया जाता है। इस प्रकार जनिक भाषण के द्वारा सामाजिक, राजनैतिक शिक्षा दी जाती है। इसे शिक्षित अशिक्षित सभी प्रकार के लोग सुनते हैं और लाभ उठाते हैं। सार्वजनिक भाषण क्ता अपनी वाकशक्ति से जनता में ऐसी भावना उत्पन्न कर देता है जो जनमत-ण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। सार्वजनिक भाषण जनतान्त्रिक देशों में मत-निर्माण का महत्त्वपूर्ण साधन है।

(6) **राजनैतिक दल (Political Parties)**—जनमत-निर्माण में राजनैतिक दलों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रजातान्त्र शासन में इन राजनैतिक दलों का होना न्त आवश्यक है। इन दलों को दो प्रमुख भागों में विभाजित किया जा सकता एक तो सत्तारूढ़ दल—जिसके हाथ में शासन की बागडोर होती है और दूसरा रोधी दल। ये दोनों ही दल जनमत को अपने-अपने ढंग से प्रभावित करते हैं। नता में राजनैतिक व सामाजिक चेतना को जागृत करने में राजनैतिक दलों का त महत्त्वपूर्ण है। राजनैतिक दल अपनी नीतियों तथा सिद्धान्तों को संवैधानिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपायों से शासन के आधारभूत तत्त्वों के रूप ढालने का प्रयत्न करते हैं। अतः अपनी नीतियों और योजनाओं के समर्थन में प्रचार करते हैं और इस प्रकार जनमत को एक निश्चित दिशा प्रदान करते हैं। उनका यह प्रचार जनता में सामाजिक और राजनैतिक जागृति पैदा करता है। वे अपने प्रचार के माध्यम से जनमत को इतना दृढ़ बना देते हैं कि सरकार को स्वीकार करना पड़ता है। श्री लॉवेल के शब्दों में "यदि राजनैतिक दल कुछ सीमा तक जनमत को सदैव मरोड़ते हैं, तो वे उत्तेजना की आकस्मिक लहरों द्वारा उत्पन्न ऐंठन को भी रोकते हैं।"[1]

जनतान्त्रिक शासन प्रणाली में विरोधी दल शासन की आलोचना करके जनमत को जागृत करते हैं जिसके परिणामस्वरूप बहुमत दल अत्याचार या मनमानी नहीं कर पाता। विरोधी दल, शासक दल के कार्यक्रमों में स्वार्थों, गलतियों और भ्रष्ठाचारों को ढूंढ़ निकालते हैं और उनके प्रति जनता का आकृष्ट करते रहते हैं। इस प्रकार जनमत-निर्माण में राजनैतिक दलों का क्या महत्त्व है, यह और भी स्पष्ट है।

(7) **शिक्षण संस्थाएँ (Educational Institutions)**—शिक्षण संस्थाओं द्वारा बताये गये विचारों और आदर्शों का विद्यार्थियों के चरित्र तथा भावी सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इन संस्थाओं के द्वारा नागरिक चेतना जागृत होती है और नागरिकों का चरित्र निर्माण होता है, जिससे वे दूसरों के भुलावे में न आकर स्वयं के विवेक और बुद्धि से काम ले सकें। उन्हें न्याय, देशहित, अधिकार और स्वतन्त्रता के लिए लड़ने की शिक्षा दी जाती है। जिस समाज में शिक्षण संस्थाएँ अपनी जिम्मेदारियों को सफलतापूर्वक निभाती हैं वहां जनमत के निर्माण में जनता स्वयं सक्रिय भाग लेती है।

(8) **धार्मिक संस्थाएँ (Religious Institutions)**—धार्मिक संस्थाओं के माध्यम से भी जनमत-निर्माण में काफी सहायता मिलती है। धार्मिक संस्थाओं द्वारा धार्मिक उपदेश पाठ, प्रवचन आदि के होते रहते हैं, जिससे धर्म के प्रति आस्था बनी रहती है। इसके द्वारा एक धर्म के अनुयायी आपस में मिलते हैं और विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। इस प्रकार धार्मिक संस्थाएँ जनमत के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं।

(9) **सांस्कृतिक तथा अन्य संस्थाएं (Cultural and other Institutions)**—इन संस्थाओं से भी जनमत-निर्माण में सहायता मिलती है। लोग जनहित के प्रश्नों पर विचार-विमर्श करने के लिए इन संस्थाओं में सम्मिलित होते हैं। यहां अनेक मस्तिष्क के मिलने से आपसी अन्तःक्रियाओं के परिणामस्वरूप नये विचार

---

1 "If political parties always distort public opinion in some degree they also prevent the still large distortion caused by sudden waves of excitement." Lowell.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...म होता है। ये संस्थाएँ अपने सदस्यों की मानसिक प्रक्रिया की गति तथा ...रता प्रदान करती है, जिससे जनमत निर्माण में सहायता मिलती है।

जनमत का माप
(Measurement of Public Opinion)

जनमत के माप की कुछ विधियाँ निम्नलिखित हैं :

(1) **अनौपचारिक विधि** (Informal Method)—यह विधि अधिक ...क नहीं है, केवल कामचलाऊ एवं व्यावहारिक है। यह जनमत के माप की सरल विधि भी है।

सर्वप्रथम, लोगों से अनौपचारिक सम्बन्ध स्थापित किया जाता है और उनमे ...त की जाती है। बातचीत के दौरान उनके समक्ष विषय या समस्या का ...छेड़ दिया जाता है। कई बार समस्या से सम्बन्धित प्रश्न भी पूछ लेते हैं। जो ...र वे व्यक्त करते हैं उनसे उनका मत प्रकट हो जाता है।

(2) **पोल विधि** (Poll Method)—जनमत के माप के लिए सबसे अधिक ...त विधि 'पोल विधि' है। यह वैज्ञानिक आधार पर भी आधारित है। सर्व- ...इसका प्रयोग डॉ० गैलप (G. H. Gallup) ने किया था, इसलिए इसे ...पोल' विधि कहते हैं।

इस विधि में विषय से सम्बन्धित कुछ प्रश्नों को निर्धारित कर उसकी अनु- ...बनायी जाती है। प्रयत्न यह किया जाता है कि प्रश्न ऐसे हों जिनके उत्तर ...या 'नहीं' अथवा संक्षिप्त हों। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रश्न सीमित प्रकार ...sed type questions) के हों। इस प्रश्नावली को डाक द्वारा भेज दिया जाता ...कभी-कभी अनुसूची के रूप में प्रयोग किया। जब अनुसूची-साक्षात्कार अपनाया ...है, तो समग्र (universe) में से निदर्शन प्रणाली (sampling method) ...'sample' ले लेते हैं।

इस प्रकार लोगों के मत प्राप्त किये जाते हैं और जनमत जानने का प्रयत्न ...या जाता है।

प्रश्न

1. "मुद्रण के आविष्कार के साथ और बाद को तार, टेलीफोन और रेडियो ...आविष्कार के कारण मत निर्माण स्पष्टतः अप्रत्यक्ष और विभिन्न प्रकार के प्रभावों ...अधीन हो गया।" अपनी आलोचना दीजिए।

("With the invention of printing and later of the telegraph, ...ephone and radio, opinion formation became distinctly indirect ... subject to greater variety and influence." Give your comments.)

2. जनमत की परिभाषा कीजिए और जनमत-निर्माण में विभिन्न साधनों ...तथा माध्यमों की विवेचना कीजिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(Define public opinion and discuss the various agencies media of public opinion formation.)

3. जनमत की परिभाषा कीजिए। जनमत निर्माण की प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

(Define public opinion. Explain the process of public opinion formation.)

4. आधुनिक प्रजातन्त्र में मत-निर्माण की प्रक्रिया का विश्लेषण कीजिए।

(Analyse the process of opinion formation in a modern democracy.)

5. जनमत-निर्माण के मनोविज्ञान का विश्लेषण कीजिए। यह प्रजातान्त्रिक और सर्वाधिकारवादी राज्यों में किस प्रकार भिन्न होती है ?

(Analyse the psychology of public opinion formation. How dose it differ in a democratic and a totalitarian state ?)

6. जनमत की परिभाषा कीजिए। यह दर्शाइए कि किस प्रकार जनमत प्रजातन्त्र की एक प्रक्रिया है ?

(Define public opinion. Show how public opinion is a process of democracy ?)

7. जनमत की परिभाषा कीजिए। एक समूह समाज में जनमत का निर्माण कैसे किया जाता है ?

(Define public opinion. How is public opinion formed in mass society ?)

8 संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(i) जनमत का प्रजातान्त्रिक समाज में महत्त्व।
(Importance of public opinion in democratic society.)

(ii) मनोवृत्ति और मत में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
(Clarify the difference between attitude and opinion.)

(iii) जनमत।
(Public opinion.)

(iv) प्रेस और जनमत।
(Press and public opinion.)

9. "आज जितनी जनताएँ हैं, उतने ही जनमत हैं।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।

("There are as many opinion as there are publics to-day?" Comment on the statement.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

10. "मनुष्य एक तर्कसंगत पशु के रूप में परिभाषित किया जाता है, पर मूलरूप में अतर्कसंगत है।" क्या आप इस विचार से सहमत हैं ? अपने उत्तर को मत-निर्माण के तरीकों के सन्दर्भ प्रस्तुत कीजिए।

("Man is defined as a rational animal but fundamentally, he is irrational." Do you agree with this view ? Illustrate you answer with reference to the modes of creating public opinion.)

11. संचार की प्रविधियों का विश्लेषण कीजिए। संचार के समूह माध्यम जनमत के निर्माण को कैसे प्रभावित करते हैं ?

(Analyze mechanisms of communication. How far do mass media of communication influence the formation of public opinion ?)

12. जनमत के निर्माण में कारकों के रूप में समाचार पत्र, रेडियो, चलचित्र कहाँ तक कार्य करते हैं ?

(How far would you regard the newspaper, the radio and the motion pictures as factors in the formation of public opinion ?)

13. "समाचार पत्र, रेडियो और चलचित्र वर्तमान संस्कृति को अभिव्यक्त और प्रभावित करते हैं।" इस कथन की आलोचना करते हुए बताइए कि जनमत के निर्माण में ये कहाँ तक प्रभाव डालते हैं ?

("The newspaper, the radio and the motion picture reflect and affect contemporary culture." Comment on this statement giving a comparative estimate of the influence of these media in the formation of public opinion.)

14. मत-निर्माण के माध्य क्या हैं ? भारतीय जनमत को परिवर्तित करने के लिए इनमें से कौन-सा माध्यम सबसे महत्त्वपूर्ण है ?

(What are the media of opinion formation ? Which of these is most effective for changing Indian public opinion ?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

38

प्रचार और प्रेस

(Propaganda and The Press)

आधुनिक युग प्रचार का युग है। प्रचार सामाजिक नियन्त्रण का एक मुख्य साधन बन गया है। आधुनिक समाज में सामाजिक नियन्त्रण का कोई भी कारक इतना प्रभावशाली नहीं है जितना प्रचार। प्रजातन्त्र में तो इसका महत्त्व और भी बढ़ गया है। समूह समाज में विशेष रूप से प्रचार का महत्त्व अधिक होता है; क्योंकि लोग एक-दूसरे के प्रत्यक्ष सम्बन्ध में नहीं रहते। इसके कारण उनके पास जो बात पहुँचती है, उसका ही महत्त्व रहता है। प्रचार एक अहिंसात्मक ढंग है। हम लोगों के विचारों, मूल्यों, अभिवृत्तियों को शब्दों के सहारे बदल सकते हैं। प्रचार एक अद्भुत वस्तु है। गुलिक ने इस सम्बन्ध में ही लिखा है :

"आधुनिक संसार में एक अन्य महत्त्वपूर्ण नया कलाकार प्रचार (propaganda) है।"[1] लूथर एच. गुलिक (Luther H. Gulick) ने आगे लिखा है कि वृहद्-स्तरीय उत्पादन (mass production) वृहद्-स्तरीय उपभोग (mass consumption) माँगता है, शक्तिशाली दबाव समूह (pressure groups) एक बड़े पैमाने पर समूह क्रिया की इच्छा करते हैं, राजनीतिज्ञ जनता के लिए नारों के जादू पर विश्वास करते हैं और राष्ट्र जनता को शामिल करने के लिए वृहद्-स्तरीय उद्वेगों (mass emotions) का सहारा लेते हैं। समाचार पत्रों की वृहद्-स्तरीय वितरण, सस्ती छपाई, अति तीव्र संचार, रेडियो और शिक्षा का गिरा हुआ स्तर एवं विश्वव्यापी बैचेनी एवं उपद्रव ने प्रचार को शिक्षा के लिए एक नया एवं आवाहनपूर्ण समस्या प्रदान की है। आधुनिक संसार में प्रचार हर क्षेत्र में छा गया है। व्यापार, विज्ञापन, चुनाव, राजनीति, युद्ध—सबमें प्रचार का महत्त्व है। आधुनिक संसार में प्रचार ही जीवन का वास्तविक आधार बन गया है। प्रचार समाज-नियन्त्रण का भी प्रमुख साधन बन गया है।

क्रच तथा क्रचफील्ड ने इसके सम्बन्ध में लिखा है, "प्रचार (मौखिक या

---

[1] "Another striking new actor in the modern world is propaganda." Gulick.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...) ने उन शक्तियों, जो मनुष्य को नियन्त्रित करती हैं में महत्त्वपूर्ण स्थान ... कर लिया है।"[1]

प्रचार का प्रभाव बहुत अधिक होता है। इसके प्रभाव पर प्रकाश डालते हुए ... तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "यह युद्ध के अस्त्र के रूप में अणुबम से अधिक ... पाया गया है और शान्ति के संयत्र के रूप में संयुक्त राष्ट्र से अधिक प्रभाव- ...ती है।"[2]

प्रचार का अर्थ
(Meaning of Propaganda)

'Propaganda' शब्द लेटिन के *'propogare'* से निकला है, जिसका अर्थ ...ता है बढ़ाना, विकास करना इत्यादि।

इस प्रकार इस शाब्दिक अर्थ से स्पष्ट है कि प्रचार एक कृत्रिम विधि है, जो ...सी वस्तु को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करती है। यह वृद्धि स्वाभाविक प्रक्रिया से नहीं ...ती, अपितु चेतन प्रक्रिया द्वारा जानबूझ कर की जाती है। लम्ले ने लिखा है, ...चार अपने आप पैदा नहीं होता, वरन यह विवश उत्पत्ति होती है।"[3]

किम्बाल यंग ने प्रचार की परिभाषा करते हुए लिखा है, "विस्तृत अर्थों में, ...ई अनुनय पद्धतियों या अन्य प्रतीकात्मक विधियों का जानबूझ कर उपयोग करना ...जिससे कि अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाया जा सके और अन्ततः क्रिया को ...भावित कर सके।"[4] उपर्युक्त परिभाषा से स्पष्ट है कि प्रचार ऐसी विधियाँ हैं ...नके द्वारा पहले अभिवृत्ति में परिवर्तन लाया जाता है और फिर क्रिया को प्रभावित ...किया जाता है। "प्रचार अनिवार्यतः अभिवृत्ति के नियन्त्रण करने की प्रविधि

किम्बाल यंग ने अपनी परिभाषा को और विस्तार देते हुए लिखा है, "प्रथम ...तों, विचारों और मूल्यों को परिवर्तित और नियन्त्रित करने और अन्ततः बाह्य

---

[1] "Propaganda (vocal and written) had attained high eminence among the 'forces' that control man. Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 316.

[2] "It has been seen as a weapon of warfare more deadly than the atom bomb and as an instrument of peace more effective than the United Nations." *Ibid*, p. 316.

[3] "Propaganda is not breeding that would take place of itself, it is forced generation." F. E. Lumely, *The Propaganda*, A Menace, p. 188.

[4] "Broadly defined, this has to do with the deliberate use of persuasive methods or other symbolic techniques to change attitudes and ultimately to effect action." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 457.

[5] "Propaganda is essentially a technique of controlling attitude."

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रियाओं को पूर्व निश्चित दिशाओं में परिवर्तित करने के उद्देश्य से विशेष रूप से सुझावों एव उससे सम्बन्धित मनोवैज्ञानिक प्रविधिया के माध्यम से प्रतीक के जान-बूझ कर आयोजित एवं क्रमबद्ध प्रयोग को प्रचार के रूप में परिभाषित कर सकते हैं।"[1] इस परिभाषा से स्पष्ट है कि प्रचार प्रतीकों का ऐसा मनोवैज्ञानिक प्रयोग है जिसके द्वारा पहले मतों, विचारों, अभिवृत्तियों, मूल्यों आदि को इच्छित पूर्व-निर्धारित दिशाओं में परिवर्तित एवं नियन्त्रित किया जाता है और फिर व्यवहार में परिवर्तन लाया जाता है। प्रचार सुझाव तथा उससे सम्बन्धित मनोवैज्ञानिक प्रविधियों का प्रयोग करता है।

डूब (Doob) ने लिखा है, "प्रचार सम्बन्धित व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के द्वारा सुझावों की सहायता से व्यक्तियों के समूहों की अभिवृत्तियों और परिणामस्वरूप उनके व्यवहारों को नियन्त्रित करने का एक व्यवस्थित प्रयत्न है।"[2] डूब ने बड़े ही सरल शब्दों में प्रचार की परिभाषा की है। प्रचार एक क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित प्रयत्न या प्रयोग है जो सुझाव की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया द्वारा व्यक्तियों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन उत्पन्न करता है और नियन्त्रित करता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्तियों की क्रियाओं एवं व्यवहारों पर नियन्त्रण किया जाता है और उनमें परिवतंन उत्पन्न किया जाता है।

लासवैल (Lasswell) ने प्रचार की परिभाषा करते हुए लिखा है, "विस्तृत अर्थों में, प्रचार प्रतिनिधित्वों (representations) के प्रयोग द्वारा मानव क्रियाओं को प्रभावित करने की प्रविधि है।"[3] प्रतिनिधित्वों का अर्थ है किसी वस्तु का प्रस्तुतीकरण। प्रचार प्रस्तुतीकरण द्वारा मानव व्यवहार को प्रभावित करता है।

ऐस (Asch)[4] के अनुसार प्रचार व्यवस्थित एवं संगठित व्यक्तियों द्वारा स्वायीभावों, मतों और अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाने का संकल्पित प्रयत्न है। प्रचार एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों के पूर्व-निश्चित एवं पूर्व-निर्धारित निश्चयों एवं संकल्पों के अनुसार अन्य व्यक्तियों की अभिवृत्तियों, मूल्यों, मतों और स्थायीभावों (sentiments)

---

1 "For our purposes we shall define propaganda as the more or less deliberately planned and systematic use of symbol chiefly through suggestion and related psychological techniques, with a view first to altering and controlling opinions, ideas and values and ultimately to changing overt actions along predetermined lines." K. Young.

2 "Propaganda is a systematic attempt by an interested individual or individuals to control the attitudes of groups of individuals through the use of suggestion and consequently, to control their action." L. W. Doob, *Propaganda*, pp. 75-76.

3 "Propaganda, in the broadest sense, is the technique of influencing human action by the manipulation of representations." H. D. Lasswell, *Propaganda*, in Encyclopaedia of Social Sciences.

4 S. E. Asch, *Social Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिवर्तन लाते हैं। प्रचार परिवर्तन के लिए विवश करता है। ये परिवर्तन सुझाव तथा अन्य मनोवैज्ञानिक प्रविधियों के प्रयोग द्वारा लाया जाता है। इस प्रकार प्रचार, सुझाव तथा अन्य मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के प्रयोग की प्रयोजनात्मक प्रविधि (technique) है। (प्रचार एक ऐसी प्रविधि है जिसके द्वारा जानबूझ कर सुव्यवस्थित एवं क्रमबद्ध ढंग से व्यक्तियों के व्यवहारों एवं क्रियाओं को परिवर्तित एवं नियन्त्रित करके इच्छित पूर्व-निर्धारित दिशा प्रदान की जाती है।) कहने का तात्पर्य यह है कि प्रचार एक ऐसी विधि है जिसके प्रयोग द्वारा मानव जिस तरह चाहे अन्य व्यक्तियों से व्यवहार कर सकता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रचार—

(i) एक प्रविधि (technique) है।

(ii) जो सुझाव (suggestion) का मुख्य रूप से और अन्य मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का सामान्य रूप से प्रयोग करता है।

(iii) और इनके प्रयोग द्वारा प्रतीकों (symbols) और प्रतिनिधित्वों (representations) को इस प्रकार प्रस्तुत करता है।

(iv) व्यक्तियों की अभिवृत्तियों (attitudes), स्थायीभावों (sentiments), मूल्यों (values) और मतों (opinions) आदि को इच्छित एवं पूर्व निश्चित दिशाओं के अनुसार नियन्त्रित एवं परिवर्तित करता है।

(v) और अन्ततः व्यक्तियों के व्यवहारों को इच्छित एवं पूर्व-निश्चित दिशा प्रदान करता है और उन्हें नियन्त्रित एवं परिवर्तित करता है।

(vi) और ये परिवर्तन जानबूझ कर जागरूक स्थिति में सम्पन्न किये जाते हैं।

(vii) और किसी एक या अधिक पूर्व-निश्चित उद्देश्य या उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किये जाते हैं।

सुझाव प्रचार की क्रियाशीलता की कुंजी है
(Suggestion is the Key to the Operation of Propaganda)

किम्बाल यंग ने लिखा है, "सुझाव प्रचार की क्रियाशीलता की कुंजी है।"[1] किम्बाल यंग का यह कथन पूर्णतया सत्य है। प्रचार की परिभाषाओं के विवेचन के संदर्भ में हम देख ही चुके हैं कि प्रचार वह प्रविधि है जो सुझाव तथा अन्य मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का प्रयोग करता है और इनमें मुख्य सुझाव ही है। प्रचार सुझाव के प्रयोग से प्रभावी होता है। अतः प्रचार की क्रियाशीलता सुझाव पर ही आधारित है। कुछ लोगों का तो यह कहना है कि प्रचार केवल प्रभावपूर्ण सुझाव है।

[1] "Suggestion is the key to the operation of propaganda." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 461.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुझाव के विषय में हम पहले ही लिख चुके हैं। सुझाव की परिभाषा मैकडूगल ने इस प्रकार की है, "सुझाव संदेशवाहन की एक प्रक्रिया है जो अतार्किक आधार पर होते हुए भी विश्वास के साथ स्वीकार कर ली जाती है।" किम्बाल यंग के अनुसार, सुझाव एक प्रकार का प्रतीक संदेशवाहक (symbol communication) का स्वरूप है, जो शब्दों, चित्रों या किसी दूसरे माध्यम द्वारा अस्पष्ट एवं अतार्किक आधार पर होते हुए भी उस बात को स्वीकार करने के लिए उद्यत करता है।" सुझाव के कारण व्यक्ति बिना कुछ सोचे-समझे बात को स्वीकार कर लेता है। प्रचार इस प्रक्रिया का प्रयोग करता है। प्रचारकर्ता भी यह ही इच्छा रखता है कि जो भी वह प्रस्तावित कर रहा है, उसे अन्य व्यक्ति बिना किसी सोच-विचार के उचित मानकर स्वीकार कर ले।

प्रचार में सुझाव को संवेगपूर्ण बनाया जाता है और संवेगों से सज्जित किया जाता है, जिससे कि शीघ्र प्रभाव हो। संवेगों में बहने के बाद व्यक्ति अतार्किक हो जाता है और केवल भावनाओं में ही संचालित होता है। सुझाव की आवश्यक दशाओं का निर्माण किया जाता है, जिसमें कि सुझाव प्रभावपूर्ण हो। सुझाव को प्रभावपूर्ण (effective) बनाने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ हैं—(i) बार-बार किसी तथ्य को दोहराना, (ii) विश्वासपूर्ण स्वर का प्रयोग, (iii) सुझाव देने वाला प्रतिष्ठित हो, (iv) अन्य व्यक्तियों की आवश्यकतानुसार आदि। प्रचार में इन सभी बातों का ध्यान रखा जाता है। प्रचार को बार-बार दोहराया जाता है, जिससे कि वह सत्य प्रतीत होने लगे। हिटलर कहा करता था कि यदि "एक झूठ को बार-बार दोहराया जाय जो वह भी सत्य प्रतीत होता है।" प्रचार में भी विश्वासपूर्ण स्वर का प्रयोग किया जाता है, जिससे लोगों को शंका का अवसर न रहे। प्रचार में प्रतिष्ठा का भी प्रयोग किया जाता है। लक्स साबुन का प्रयोग हेमामालिनी करती है और वह कहती है कि इससे रंग में निखार आता है, आप भी लक्स का ही प्रयोग करें। व्यापारिक विज्ञापनों में फिल्मी सितारों की प्रतिष्ठा का प्रयोग किया जाता है। चुनावों में राष्ट्रीय नेताओं की प्रतिष्ठा का प्रयोग किया जाता है। पिछले चुनावों में इन्दिरा गांधी के हाथ मजबूत कीजिए, कांग्रेस को वोट दीजिए' प्रतिष्ठा पर आधारित प्रचार था। प्रतिष्ठा सुझाव (prestige suggestion) प्रचार के लिए महत्त्वपूर्ण है। प्रचार लोगों की आवश्यकताओं पर आधारित सुझाव प्रस्तुत करता है। प्रचार लोगों के अन्धविश्वासों का भी लाभ उठाता है। सन् 1967 के चुनाव प्रचार में जनसंघ ने 'गो माता की रक्षा' का नारा लगाया था। यह लोगों के अन्ध विश्वास का ही लाभ उठाना था।

सुझाव प्रचार के लिए अनिवार्य तथ्य है, क्योंकि सुझाव की प्रकृति पर ही प्रचार की सफलता निर्भर करती है, इसलिए कहते हैं कि सुझाव प्रचार की क्रियाशीलता की कुंजी है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किम्बाल यंग के इस कथन की पुष्टि अन्य विद्वानों ने भी की है। लम्ले ने लिखा है: "यह (प्रचार) आलोचनात्मक शक्तियों का ह्रास कर देता है, भय और सन्देह को उत्पन्न करना है और मानसिक गुलामी को उत्पन्न करता है।" डूब ने भी लिखा है, "प्रचार लोगों के मन को बन्द करने की एक तरकीब है।"

क्रच तथा क्रचफील्ड[1] ने उपर्युक्त कथन से असहमति प्रकट की है। उनका मत है कि प्रचार में कोई विशेष मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त; जैसे—सुझाव इत्यादि का प्रयोग नहीं होता, अपितु ज्ञानात्मक पुनर्संगठन (cognitive reorganisation) के ही साधारण मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त लागू होते हैं। इनके अनुसार प्रचार केवल ज्ञानात्मक पुनर्संगठन की ओर निर्देशित करता है। उनका मत है कि सुझाव नाम की वस्तु उन्हीं नियमों का पालन करती है जो ज्ञानात्मक पुनर्संगठन या अन्य तनाव को कम करने वाली प्रक्रियाओं (tension-reduction processes) के होते हैं। सुझाव-ग्राहिता कोई भी लक्षण नहीं है, जो व्यक्ति के मौलिक व्यक्तित्व ढाँचे में पाया जाता हो।

अब यह धारणा भी बढ़ती जा रही है कि प्रचार अभिप्रेरणा पर आधारित होता है। अभिप्रेरणा (motivation) ही प्रचार का आधार है। जो लोगों की आवश्यकता हो, उसी के अनुसार यदि बातें कहीं जायें तो लोग शीघ्र प्रभावित होते हैं।

हो सकता है कि सुझाव में अन्य मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ कार्य करती हों, पर सुझाव के महत्त्व को कम नहीं किया जा सकता। सुझाव प्रचार की क्रियाशीलता के लिए आवश्यक है। अतः यह कथन कि "सुझाव प्रचार की क्रियाशीलता की कुंजी है" सत्य है। इस विषय पर कुछ प्रकाश प्रचार के मनोविज्ञान में भी डाला जायेगा।

प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार या मनोविज्ञान
(Psychology or Psychological Basis of Propaganda)

प्रचार का मनोविज्ञान (psychology of propaganda), अथवा प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार (psychological basis of propaganda) कुछ मनोवैज्ञानिक आधारों पर आधारित है।

सुझाव—प्रचार का मूलभूत मनोवैज्ञानिक आधार
(Suggestion—the Fundamental Psychological Basis of Propaganda)

अधिकांश मनोवैज्ञानिकों का मत है कि सुझाव प्रचार का मूलभूत मनोवैज्ञानिक

[1] Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Soetal Psychology*, pp. 332—34

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधार है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "सुझाव प्रचार की क्रियाशीलता की कुंजी है।"[1] सुझाव के आधार पर ही प्रचार का मनोविज्ञान आधारित है। इस विषय पर हम विस्तार में पहले ही प्रकाश डाल चुके हैं।

प्रचार के द्वारा हमारे अन्दर सुझावग्राह्यता (suggestibility) बढ़ायी जाती है और फिर सुझाव दिया जाता है जिसे हम बिना सोचे-विचारे तुरन्त स्वीकार कर लेते हैं। डूब (Doob) ने लिखा है, "प्रचार लोगों के मन को बन्द करने की एक विधि है।"[2] डूब के इस कथन का अभिप्राय यह है कि प्रचार हमारे मन (mind) को बन्द कर देता है, अर्थात सोचने-विचारने की स्थिति को समाप्त कर देता है और बिना सोचे-विचारे हम सुझाव को ग्रहण कर लेते हैं।

प्रचार—ज्ञानात्मक पुनर्संगठन की प्रक्रिया
(Propaganda—A Process of Cognitive Reorganisation)

क्रच तथा क्रचफील्ड[3] का मत है कि चूँकि प्रचार सुझाव का एक विशेष विषय है, इसलिए हमें सुझाव के प्रत्यय के विषय में विचार करना पड़ेगा। उनका कहना है कि प्रचार में कोई विशेष मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त; जैसे—सुझाव आदि का प्रयोग नहीं होता, अपितु ज्ञानात्मक पुनर्संगठन के ही साधारण मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त लागू होते हैं। उनके अनुसार प्रचार केवल ज्ञानात्मक पुनर्संगठन की ओर निर्देशित करता है। "प्रचार अनिवार्यतः ज्ञानात्मक पुनर्संगठन के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है।"

क्रच तथा क्रचफील्ड का कहना है कि सुझाव को प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार मानना उचित नहीं हैं। उनके अनुसार, (i) जिस व्यवहार को हम सुझाव कहते हैं, वह ज्ञानात्मक पुनर्संगठन के सिद्धान्तों से समझाया जा सकता है और (ii) सुझावग्राह्यता व्यक्ति के तात्कालिक मनोवैज्ञानिक क्षेत्र का प्रकार्य है, क्योंकि सुझावग्राह्यता नाम का कोई भी लक्षण व्यक्ति के मौलिक व्यक्तित्व लक्षणों में नहीं होता। उन्होंने लिखा है, "बजाय इसके कि हम विभिन्न प्रकार के लोगों में सुझावग्राह्यता के विभिन्न अंशों की खोज करें, हमें लोगों की तात्कालिक मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों के अन्तर की खोज करनी चाहिए।"[4] क्रच तथा क्रचफील्ड का मत है कि प्रचार के

---

1 "Suggestion is the key to the operation of propaganda." K. Young, *A Handbook of Social Psychology* p. 461.

2 "Propaganda is a device of closing people's mind." Doob.

3 Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*. pp. 332–34.

4 "Instead of looking for different degrees of suggestibility among different kinds of people, we must look for difference in the immediate psychological fields of all people." *Ibid.* p. 333

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैज्ञानिक आधार की खोज के लिए हमें व्यक्तियों की आवश्यकताओं, विश्वासों उद्वेगों की ओर ध्यान देना पड़ेगा ।[1]

क्रच तथा क्रचफील्ड के अनुसार प्रचार और सुझाव के कोई विशेष मनो-वैज्ञानिक सिद्धान्त नहीं हैं अपितु प्रत्यक्षीकरण (perception), ज्ञानात्मक संगठन, अभिप्रेरणा (motivation) के ही सामान्य सिद्धान्त प्रचार की व्याख्या करते हैं ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि क्रच तथा क्रचफील्ड ने प्रचार के मनोविज्ञान सम्बन्ध में मनोविज्ञान को एक नयी दिशा प्रदान की है ।

अभिप्रेरणा—प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार
(Motivation—Psychological Basis of Propaganda)

अब यह धारणा बढ़ती जा रही है कि प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार अभि-प्रेरणा है। जो लोगों की आवश्यकता होती है, उसी के अनुसार यदि बात कही जाय अथवा प्रचार किया जाय) तो लोग शीघ्र प्रभावित होते हैं और स्वीकार करते हैं । ...देशों में साम्यवादी विचारधारा सम्बन्धी प्रचार क्यों शीघ्र स्वीकार कर लिया जाता है ? उनका कारण स्पष्ट है कि वे उनकी आवश्यकता को परख कर उसके अनुसार 'गरीबी मिटाने' का नारा लगाते हैं । रोटी-रोजी, मकान, कपड़ा देने का नारा लगाते हैं । किम्बाल यंग ने लिखा है, "सबसे अधिक प्रभावी दलील वह है जो एक या अधिक मौलिक अभिप्रेरणाओं को स्पर्श करती है ।"[2]

यद्यपि ये तीन सिद्धान्तों के रूप में वर्णित किए गए हैं, परन्तु वास्तविकता यह है कि ये तीनों ही प्रचार के मनोवैज्ञानिक आधार हैं । प्रचार अभिप्रेरणाओं के अनुकूल प्रतिपादित किया जाता है, सुझाव के द्वारा ज्ञानात्मक पुनर्संगठन की प्रक्रिया को क्रियान्वित किया जाता है । किम्बाल यंग ने लिखा है कि प्रचार के किसी भी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण में हमें चार आधारों का ध्यान रखना चाहिए—(i) एक विचार, उद्देश्य या प्रेरणा जो प्रचार को प्रेरित करती है; (ii) प्रतीकात्मक सामग्री (symbolic content); (ii) प्रचार का प्रभाव और (iv) मनोवैज्ञानिक विधियाँ ।

(i) प्रचार का उद्देश्य या प्रेरणा (Purpose or Motivation of Propaganda)—किसी भी प्रकार का प्रचार उद्देश्यहीन नहीं होता, हर प्रचार का एक उद्देश्य होता है । प्रचार के लिए अनिवार्य है कि उसका एक या अधिक उद्देश्य हों ।

---

1 "Instead of analyzing the tricks of the trade, the emphasis is placed upon the needs, emotions and beliefs of the person to be propagandized." *Ibid*, p. 333.

2 "The most effective pleading is that which touches on one or more of such fundamental motivations." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 462.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उद्देश्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जबकि इन्हें व्यक्तियों की अभिप्रेरणाओं (motivations) से सम्बद्ध किया जाये। मानव की मूल अभिप्रेरणाएं हैं: भोजन, मकान, सामाजिक सुरक्षा, सार्वजनिक सुरक्षा, सामाजिक प्रतिष्ठा आदि। प्रचार के उद्देश्यों को इन अभिप्रेरणाओं से सम्बन्धित करना होगा, तभी वे प्रचार के प्रति आकर्षित होंगे। अभिप्रेरणाएँ उद्वेगों पर आधारित होती हैं। आवश्यकताएं संवेगों से सम्बन्धित होती हैं। इनकी इच्छा सदैव व्यक्तियों को रहती है।

इसीलिए हर प्रभावी प्रचार अभिप्रेरणाओं एवं आवश्यकताओं से जुड़ा रहता है। व्यक्तियों की इच्छाएँ, अभिलाषाएँ, आकांक्षाएँ आदि प्रभावी अभिप्रेरणाएँ होती हैं। 'चमत्कारी अंगूठी' के विज्ञापन में लिखा होता है कि अंगूठी पहनते ही प्रेमी या प्रेमिका या जिसको चाहें आपके वश में होगा। लोग इससे तुरन्त प्रभावित होते हैं क्योंकि यह उनकी आकांक्षा से सम्बन्धित है। यद्यपि सब जानते हैं कि ऐसा नहीं होता, फिर भी इच्छाएं एवं अभिलाषाएँ उद्वेगों से जुड़ी होती हैं। उनका तार्किक आधार नष्ट हो जाता है। इसलिए लोग इच्छाओं, अभिलाषाओं, अभिप्रेरणाओं आदि से सम्बन्धित अतार्किक तथ्यों को भी शीघ्र स्वीकार कर लेते हैं।

(ii) प्रतीकात्मक सामग्री (Symbolic Content)—प्रचार का मनोवैज्ञानिक आधार प्रतीतिक सामग्री है। प्रचार के लिए प्रतीकात्मक सामग्री का होना अनिवार्य है, यदि प्रचार को प्रभावशाली बनाना है। प्रतीक शब्दों, चित्रों, नारों आदि में किसी भी प्रकार के हो सकते हैं। प्रतीकात्मक सामग्री ऐसी होनी चाहिए कि लोगों की अभिप्रेरणाओं को आन्दोलित कर दे। प्रतीकात्मक सामग्री ऐसी होनी चाहिए कि (अ) जनता की इच्छाओं, अभिलाषाओं, आवश्यकताओं, अभिप्रेरणाओं से सम्बन्धित हो; (ब) व्यक्तियों के उद्वेगों को जागृत करने में समर्थ हो, (स) लोग प्रतीकों को सरलता से समझ सकें और (द) प्रचलित मूल्यों, आदर्शों, सांस्कृतिक तथ्यों से भाव रखते हों, उनका विरोध नहीं होना चाहिए।

जीवन बीमा निगम (Life Insurance Corporation of India) का प्रतीक है 'एक दीप दो हाथों के बीच'। इसका अभिप्राय है कि जीवन एक दीप के समान है, उसे हमें सुरक्षा प्रदान करनी चाहिए, जैसा कि दीप को हवा के झोंकों से हम सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसी प्रकार के प्रतीक प्रचार के लिए विकसित किये जाते हैं।

(iii) प्रचार का प्रभाव (Effect of Propaganda)—प्रचार का प्रभाव अत्यन्त आवश्यक है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "प्रचार को प्राप्त करने वालों पर प्रचार का प्रभाव ही उसकी वास्तविक कसौटी है।"[1]

[1] "The real test is the effect of Propaganda on its recipients." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 465.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रचार का प्रभाव तभी होता है जबकि यह व्यक्तियों की संस्कृति के अनुसार होता है। प्रचार को व्यक्तियों के मूल्यों, अभिवृत्तियों, विश्वासों आदि के अनुरूप भी होना चाहिए।

स्मिथ (Smith)[1] का कहना है कि प्रचार तभी प्रभावी होता है जबकि व्यक्तियों की अभिवृत्तियों के अनुरूप होता है। एक अनुसन्धान में रूस के पक्ष में अभिवृत्ति रखने वाले व्यक्तियों ने वही तथ्य स्वीकार किए जो इस अभिवृत्ति से सामंजस्य रखते थे। उसका कहना है कि विश्वास और अभिवृत्तियों में धनात्मक (positive) सहसम्बन्ध है।

हिटलर (Hitler) का प्रचार इसीलिए सफल हुआ क्योंकि वहाँ के लोग यहूदियों के विरुद्ध पहले से ही पूर्वधारणाएँ रखते थे। महात्मा गांधी भारत में इसलिए सफल हुए कि उन्होंने राजनीति को भी अपना धार्मिक कर्तव्य कहा। इससे स्पष्ट है कि प्रचार सांस्कृतिक सन्दर्भ में होना चाहिए।

(iv) **प्रचार की मनोवैज्ञानिक विधियाँ (Psychological Devices of Propaganda)**—अमरीका के 'Institute for Propaganda Analysis' ने प्रचार के तरीकों का विश्लेषण किया। उनमें से निम्न महत्त्वपूर्ण हैं :

(1) **नाम देना (Name Calling)**—प्रचार के लिए किसी को कोई नाम दे दिया जाता है। किसी को अगर गिराना है, तो उसे 'कम्युनिस्ट' कहिए, काम पूरा हो जायेगा। अमरीका में एक व्यक्ति कुछ क्षेत्रों में सरकार का स्वामित्व चाहता था। उसको दबाने के लिए पूँजीपतियों ने उसे 'Bolshevik' कहकर पुकारना शुरू कर दिया।

(2) **प्रमाण-पत्र (Testimonial)**—यह काम फलां बड़ा आदमी करता है। नर्गिस कहती है "वह सुन्दर क्यों है, इसलिए कि पाण्ड्स क्रीम एवं स्नो का हर रोज प्रयोग करती है।" अनेक कामों में बड़े आदमियों के नाम इस प्रकार जोड़ दिये जाते हैं। विज्ञापन में इसका बहुत प्रयोग किया जाता है।

(3) **चमकते हुए सामान्यीकरण (Glittering Generalities)**—इसमें कुछ ऐसे जोरदार प्रभावपूर्ण प्रचलित विचारों का प्रयोग किया जाता है कि लोग भुलावे में आ जाते हैं। उदाहरणतः, 'liberty, equality, fraternity', 'socialistic pattern of society', 'casteless, classless society', 'we do not want only bread but bread and butter' इत्यादि।

(4) **जनता के नाम पर (Plain Folks)**—सब लोग ऐसा करते हैं, इसलिए आप भी ऐसा कीजिए। हिन्दुस्तान के हर घर में बढ़िया भोजन डालडा वनस्पति से बनाया जाता है, आप भी······

[1] G. H. Smith, Beliefs in statements, labelled facts and rumour, in *Journal of Abnormal Psychology* (1947).

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(5) हर एक करता है (Band-Wagon)—आल्पोर्ट ने इसे 'सार्वभौमिकता की माया' (the illusion of universality) कहा है। लोग सोचते हैं कि चूँकि सब करते हैं, इसलिए हम भी करें।

किम्बाल यंग ने लिखा है, "यह अनिवार्यतः प्रत्युत्तर का तादात्म्य-प्रक्षेपण जोड़ है।"[1]

इसमें प्रचार यह स्पष्ट करता है कि यह उसका मत नहीं, अपितु बहुमत का मत है। सब ऐसा करते हैं, आप भी ऐसा ही करें। यह सम्भव है कि सब वैसा न करते हों, पर विचार की दृष्टि से ही कहा जाता है।

(6) छल-विज्ञापन सिद्धान्त (Card-stacking)—इसमें एकदम झूठ बोला जाता है और धोखा दिया जाता है। आपने सड़कों पर लोगों को दवा बेचते सुना होगा। वैसे ही इसका प्रचार में बहुत प्रयोग होता है। उदाहरण के लिए, बाजार में 'sunlight' साबुन बहुत बिकता है, तो कोई अन्य फर्म 'sonlight' साबुन चला देती है। इस प्रकार नकली माल 'sunlight' के नाम पर बिकता है।

(7) हस्तान्तरण (Transference)—आपने सुना होगा 'यदि देश को स्वतन्त्र रखना है, यदि आप पं० नेहरू के हाथ मजबूत करना चाहते हैं, तो 'भुंदू राम ओसवाल' को वोट दीजिए।

प्रचार का विशिष्ट तरीका—नारे (Slogans)

प्रचार में छोटे वाक्य बहुत प्रभावशाली होते हैं। क्रच तथा क्रचफील्ड ने नारे को 'capsules of propaganda' कहकर पुकारा है।

नारे अनेक प्रकार के होते हैं। 'Keep cool with Coolidge'; 'India for Indians'; 'हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान', 'The right to work'; 'रोटी चाहिए, राज्य नहीं" इत्यादि।

नारे मनुष्यों की आवश्यकता से जुड़े हुए होने चाहिए।

प्रचार के कुछ नियम

किम्बाल यंग ने प्रचार के निम्न नियम बताये हैं :

(1) प्रचार का प्रमुख उद्देश्य किसी बात को स्वीकार करवाना होता है, न कि विचार प्रदान करने के लिए। इसलिए प्रचार को उन लोगों की मौलिक आवश्यकताओं, उद्देश्यों या प्रेरणाओं से सम्बन्धित करना चाहिए जिनको प्रचार से प्रभावित करना है।

(2) अपीलें उद्वेगों एवं भावनाओं से भरी हुई होनी चाहिए। इनमें इच्छाओं की सन्तुष्टि का वचन होना चाहिए।

---

[1] It is essentially an identification-projection combination of respons.." K. Young, A *Handbook of Social Psychology*, p. 463.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) विषयों एवं उनके हल सरल एवं स्पष्ट होना अनिवार्य है।

(4) इन साधारण एवं मौलिक विषयों को व्यवस्थित एवं निरन्तर रूप से ...राया जाना चाहिए। बार-बार कहने से यह प्रभावपूर्ण हो जाती हैं।

(5) प्रत्यक्ष कथनों के स्थान पर गोल-मोल बात कहना अच्छा है।

(6) जब मौलिक इच्छा एक बार स्थापित हो जाय, तब प्रत्यक्ष कथन प्रस्तुत ... चाहिए। इस समय बढ़ा-चढ़ाकर एवं झूठे तथ्यों एवं आरोपों का भी प्रयोग ... चाहिए।

(7) थोड़े समय का प्रचार सबके लिए किया जा सकता है पर दीर्घकालीन ... एवं स्थायी परिवर्तन लाने के लिए प्रचार बच्चों एवं युवकों पर करना चाहिए, ...कि वे सुझाव शीघ्र स्वीकार करते हैं।

क्रच तथा क्रचफील्ड ने भी निम्न सुझाव दिये हैं :

(1) प्रचार आवश्यकता पर आधारित होना चाहिए। (किम्बाल यंग ...सं० 1)

(2) उलझी हुई एवं जटिल समस्याओं के विषय में प्रचार शीघ्र मान लिया ...ता है। 'He fishes in muddy waters' (p. 358)

(3) सुझाव जो उन लोगों के विश्वासों के अनुसार होते हैं, शीघ्र स्वीकार ... लिए जाते हैं।

...धीरे-धीरे अपनी बात को कहता जाता है और लोग मानते जाते हैं। 'He ...a man who looks toward the future.' (p. 359)

(4) विश्वास पर आक्रमण न करके, नयी बातें कहना चाहिए और अपनी ... मनवा लेना चाहिए। 'The propagandist can push people around ...d sometimes make them like it.' (p. 359)

(5) प्रचार इस आधार पर करना चाहिए कि अधिकतर लोग ऐसा करते ... 'most people' or 'band wagon' विधि का प्रयोग करना चाहिए। "This ...sometimes referred to as public relations.

(6) प्रचार में विचारों को रखने का ढंग भी महत्त्वपूर्ण होता है। प्रचार ...ने वाले की भाषा, बोलने का ढंग, कपड़े, चलने का ढंग, सभी बातें प्रभाव ...लती हैं।

(7) प्रचार का सामना विरोधी प्रचार (counter propaganda) के ...रा किया जा सकता है। विरोधी प्रचार के भी वही नियम हैं जो प्रचार के हैं। ...े विरोधी प्रचार का सबसे उत्तम तरीका यह है कि लोगों की सामाजिक और ...र्थिक व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि उनकी अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति हो ...के। किम्बाल यंग ने लिखा है, "इसलिए, उत्तम प्रकार का प्रचार है कि ऐसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था हो जो अधिकांश व्यक्तियों की अधिकतर समय अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।"[1]

प्रचार के सिद्धान्त
(Principles of Propaganda)

डूब (Doob) ने प्रचार के कुछ सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। ये सिद्धा अत्यधिक तार्किक एवं क्रमबद्ध हैं। ये सिद्धान्त निम्न हैं :

(1) **प्रचारक के उद्देश्य का सिद्धान्त** (Principle of the Intentio of the Propagandist)—हर प्रचार का कोई न कोई उद्देश्य होता है, जि प्रचारक निर्धारित करता है। प्रचारक सदैव इस उद्देश्य के प्रति सचेत रहता है प्रचार जानबूझ कर इस उद्देश्य की दृष्टि से ही किया जाता है।

(2) **प्रत्यक्षीकरण का सिद्धान्त** (Principle of Perception)—प्रचा में प्रत्यक्षीकरण स्पष्ट होना चाहिए। प्रचार सामग्री इस प्रकार की बनायी जा चाहिए कि सरलता से बोधगम्य हो और साधारण से साधारण व्यक्ति भी समझ से

(3) **प्रचार के प्रकार का सिद्धान्त** (Principle of the Type of Pro paganda)—प्रचार तीन प्रकार से प्रकट किया जा सकता है—(अ) प्रक (Revealed), (ब) देर से प्रकट (Delayed Revealed) और (स) अप्रक (Concealed or Unrevealed)।

(अ) **प्रकट प्रचार** में ऐसे प्रत्यक्ष सुझाव दिए जाते हैं कि प्रचार का उद्दे प्रारम्भ से ही स्पष्ट रहता है। (ब) **देर से प्रकट प्रचार** वह है जिसमें उद्देश्य बा में प्रकट किया जाता है। उदाहरण के लिए, पहले बँगला देश के निर्माण के पक्ष प्रचार किया गया और जनता की अधिक से अधिक सहानुभूति अर्जित की गयी फिर बाद में बँगला देश के लिए चन्दा ऐकत्रित किया गया। (स) **अप्रकट प्रचा** में प्रकट ही नहीं किया जाता। प्रचार इस विधि से किया जाता है कि ये उद्दे प्रकट किये बिना ही उद्देश्य पूरा हो जाये।

(4) **सम्बन्धित अभिवृत्तियों का सिद्धान्त** (Principle of Relate Attitudes)—अभिवृत्तियों और प्रचार का धनात्मक सहसम्बन्ध है। प्रचार अभि वृत्तियों को उभारने का प्रयत्न करता है।

(5) **वांछित संगठन का सिद्धान्त** (Principle of Desired Integra tion)—प्रचार को एक संगठित स्वरूप प्रदान करना पड़ता है। प्रचार इस प्रका

---

1 "The best kind of counter propaganda, therefore, is a social and economic system that satisfies most of the needs of most of the people at most of the time." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 360.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...त किया जाता है कि इच्छित उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके। प्रचार के सारे ...न सगठित रूप से करने पड़ते हैं।

(6) **भविष्यवाणी न कर सकने का सिद्धान्त** (Principle of Unpre-...tibility)—प्रचार के विषय में यह भविष्यवाणी नहीं की जा सकती कि उद्देश्य ...त होगा या नहीं। सफल होगा तो किस सीमा तक। इसलिए प्रचार की प्रकृति ...यी होती है। परिवर्तन हर दिशा में होता है। व्यक्तियों की अभिवृत्तियों, मूल्यों ...श्यकताओं आदि में भी परिवर्तन होता रहता है और इसका प्रभाव भी प्रचार ...वीकार करने या न करने पर पड़ता है। इन परिवर्तनशील कारकों के कारण ...र की सफलता के विषय में भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

(7) **विरोधी प्रचार का सिद्धान्त** (Principle of Counter Propa-...da)—कई बार उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विरोधी प्रचार भी किया जाता है।

(8) **अनुनय का सिद्धान्त** (Principle of Persuasion)—प्रचार ...नय पर आधारित होता है। प्रचार बार-बार अनुनय करता है। यही कारण है कि ...र में कुछ प्रमुख बातों को बार-बार दोहराया जाता है।

प्रचार के प्रकार
(Types of Propaganda)

किम्बाल यग ने प्रचार के निम्नलिखित तीन प्रकार बताये हैं:

(1) परिवर्तन करना (Conversionary),

(2) विभेद (Divisive),

(3) एकीकरण (Consolidation)।

(1) **परिवर्तन करना** (Conversionary)—विशेष रूप से इसका प्रयोग ...र्म-परिवर्तन में होता है। इसमें समझाया जाता है और फिर तर्क द्वारा अभिवृत्तियों ...ल्यों एव क्रियाओं में परिवर्तन लाया जाता है। रोमन कैथोलिक ऐसा बहुत करते ...। आजकल भी धर्म-परिवर्तन किया जाता है।

व्यापार के विज्ञापनों में भी इसका प्रयोग होता है। कोई एक प्रकार की ...स्तु का प्रयोग करता है, तो उसे उसके स्थान पर दूसरी वस्तु प्रयोग करने के लिए ...तैयार किया जाता है। 'दाम में सस्ती, काम में अच्छी' इसका एक उदाहरण है।

युद्ध के समय में तटस्थ राज्यों को अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न किया जाता है।

(2) **विभेद** (Divisive)—इस प्रकार की नीति है 'फूट डालो और विजय प्राप्त करो' (divide and conquer)। इसका प्रयोग अधिकतर राजनैतिक आन्दो-लनों एवं क्षेत्र में किया जाता है। युद्ध के समय भी इसका प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, प्रथम महायुद्ध में मित्रराष्ट्र (Allies) प्रचार करते थे "हम जर्मनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Saraswati Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लोगों के विरुद्ध युद्ध नहीं कर रहे हैं, बल्कि कैशर और साम्राज्यवादियों के विरुद्ध युद्ध कर रहे हैं।" इसी प्रकार द्वितीय महायुद्ध में प्रचार किया जाता था 'हम नाजी सिद्धान्तों एवं हिटलर से युद्ध कर रहे हैं, जर्मनी के लोगों के विरुद्ध नहीं।' इस प्रकार के प्रचार के द्वारा वे उन देशों में फूट डालना चाहते थे।

(3) **एकीकरण (Consolidation)**—इस प्रचार के द्वारा एकीकरण करने का प्रयत्न किया जाता है। युद्ध के समय अपने देश में लोगों को संगठित रखा जाता है और उनकी नैतिकता को उठाने का प्रयत्न किया जाता है।

प्रचार से बचाना
(Propaganda Prophylaxis)

प्रचार जब स्वार्थ से किया जाता है तो हानिकारक होता है और दुष्प्रचार बन जाता है। इसे रोकने के कुछ उपाय निम्न हैं :

(1) **प्रचार को पहचानने की शिक्षा (Public Should be Taught How to Recognize Propaganda)**—प्रचार को पहचानने की शिक्षा देनी चाहिए। प्रचार की तरकीबें जानने की शिक्षा देनी चाहिए। इसके कारण जनता दुष्प्रचार के दुष्परिणामों से बच सकती है। अमरीका में इस प्रकार के प्रयत्न किये भी गये हैं।

(2) **शिक्षा का प्रसार (Development of Education)**—शिक्षा का प्रसार करना चाहिए जिससे लोगों की तर्क-शक्ति बढ़ सके।

(3) **विरोधी प्रचार (Counter-Propaganda)**—प्रचार को रोकने के लिए विरोधी प्रचार भी करना चाहिए, जिससे लोग गलतफहमी में न रहें।

(4) **आवश्यकताओं की पूर्ति (Satisfying the Needs)**—लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति भी करनी चाहिए। लोग प्रचार को क्यों स्वीकार करते हैं, इसका प्रमुख कारण उनकी आवश्यकताओं की असन्तुष्टि है। क्रच तथा क्रचफील्ड ने इस तथ्य पर बहुत बल दिया है।

आधुनिक या औद्योगिक समाज में प्रचार के साधन
(Tools or Media of Propaganda in Modern or Industrial Society)

आधुनिक औद्योगिक समाज विशाल या द्वैतीयिक समाज का ही रूप है। इनका आकार बड़ा होता है और नौकरी, व्यापार, वाणिज्य, शिक्षा आदि की सुविधाएँ उपलब्ध होने के कारण विभिन्न धर्मों, जातियों, सम्प्रदायों और वर्गों के लोग इसके सदस्य होते हैं। ऐसे विशाल समाजों में व्यक्तिगत सम्बन्धों का अभाव होता है। लोग एक दूसरे को समाचार पत्र, चलचित्र, रेडियो आदि के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से जानते हैं। अतः ऐसे समाजों में प्रचार के साधन भी यही हैं। इसका अलग-अलग विवेचन निम्नलिखित हैं :

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) **प्रेस प्रचार के एक प्रमुख साधन के रूप में** (Press as an Important Medium of Propaganda)—प्रचार के साधन के रूप में प्रेस के महत्त्व को सभी लोग स्वीकार करते हैं। प्रेस के द्वारा समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, इश्तहार, पर्चे, पुस्तिकाएँ, विज्ञापन-पत्र आदि प्रकाशित किये जाते हैं जिनके द्वारा प्रचार होता है। इश्तहार के द्वारा प्रचार की वस्तु को एक विशिष्ट ढंग से प्रस्तुत करके लोगों का ध्यान आकर्षित किया जाता है। सिनेमा पोस्टर इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। इश्तहार के साथ-साथ प्रचारक विज्ञापन-पत्र भी बँटवाता है। इन विज्ञापनों के द्वारा वह अपनी बढ़ाई करता है और विरोधी की बुराइयों का प्रचार करता है। इसके द्वारा वह जनता के संवेगों को जागृत करता है और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक सुझाव प्रस्तुत कर सकता है। इनमें प्रतिष्ठा सुझाव ज्यादा सफलतापूर्वक काम कर सकता है। पत्रिकाओं में विज्ञापन देकर, लेख प्रकाशित करके एवं कार्टून छापकर प्रचार कार्य चलाया जा सकता है। परन्तु उपर्युक्त सबसे महत्त्वपूर्ण समाचार पत्र है। समाचार पत्र व्यावसायिक दृष्टि से प्रकाशित किये जाते हैं इसलिए इसमें व्यावसायिक विज्ञापन को विशेष महत्त्व दिया जाता है। समाचार पत्र प्रायः सभी शिक्षित व्यक्ति देखना पसन्द करते हैं। इसलिए इसका क्षेत्र अधिक व्यापक है। समाचार पत्रों द्वारा राजनैतिक प्रचार भी होता है। प्रमुख राजनैतिक समाचार मुखपृष्ठ पर होते हैं। उसमें शासक वर्ग के राजनैतिक विचारों का ही प्रचार प्रमुख रूप से किया जाता है। चुनाव के दिनों में समाचार पत्र चुनाव सम्बन्धी प्रचार का प्रमुख साधन बन जाता है। ये समाचार पत्र राजनैतिक दलों और पूँजीपतियों के प्रभुत्व में भी रहते हैं। अनेक राजनीतिक दलों के अपने-अपने समाचार पत्र हैं जिनके द्वारा वे प्रचार कार्य कराते हैं। पूँजीपतियों के समाचार पत्र उनके हित में ही प्रचार करते हैं और शासक वर्ग का समर्थन करते हैं। अतः ऐसा देखा जाता है कि अधिकतर समाचार पत्रों में शासक वर्ग के सिद्धान्तों, मूल्यों तथा आदर्शों तथा पूँजीपति वर्ग के हितों का प्रचार समाचार पत्रों द्वारा खूब होता है।

प्रेस के द्वारा पुस्तकें भी प्रकाशित की जाती हैं। ये पुस्तकें भी प्रचार का एक महत्वपूर्ण साधन के रूप में काम करती हैं। किसी भी नये विचार और सिद्धान्त का प्रचार पुस्तकों के माध्यम से स्थायी रूप में होता है। प्रत्येक धर्म, राजनैतिक दल अपने मतों, नीतियों और सिद्धान्तों का प्रचार अपनी विशेष पुस्तकों के द्वारा ही करता है।

(2) **चलचित्र** (Motion Picture)—आधुनिक युग में प्रचार के साधन के रूप में चलचित्रों का महत्त्व बढ़ता ही जा रहा है, क्योंकि चलचित्र अशिक्षित जनता में भी प्रचार का माध्यम बन सकता है। समाचार पत्र, पत्रिकाएँ आदि शिक्षित लोगों में ही प्रचार का साधन बन सकती हैं। चलचित्रों द्वारा किये गये प्रचार का तुरन्त प्रभाव पड़ता है क्योंकि इसमें देखना और सुनना दोनों साथ-साथ होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके अलावा सिनेमा के द्वारा हमारा सम्पर्क कुछ प्रख्यात व्यक्तियों से होता है जिनके द्वारा दिये गये सुझावों को हम स्वीकार कर लेते हैं। उदाहरण के लिए, बहुत सी फर्में प्रमुख अभिनेताओं और अभिनेत्रियों द्वारा अपनी वस्तुओं का प्रचार कराते हैं। सिनेमा प्रारम्भ होने से पहले प्रचार कार्य किया जाता है। सरकार की ओर से जो 'न्यूज रील' दिखायी जाती है वह भी सरकारी कार्यों का ही प्रचार है। सिनेमा के द्वारा भी नये विचारों, आदर्शों का मूर्तिमान और सजीव ढंग से प्रचार किया जाता है। 'अस्पृश्यता देश के माथे पर कलंक है', विधवा पुनर्विवाह का आदर्श', 'बाल विवाह की हानियाँ', 'दहेज प्रथा के दुष्परिणाम', 'देश प्रेम' आदि उच्चकोटि के चित्रों द्वारा समाज की अनेक बुराइयों के सन्दर्भ में अप्रत्यक्ष रूप से प्रचार किया जाता है।

(3) **रेडियो** (Radio)—रेडियो भी प्रचार का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। श्री बार्टलेट (Bartlett) का मत है कि रेडियो कार्यक्रम का दो-तिहाई भाग मनोरंजन और एक-तिहाई भाग शुद्ध प्रचारात्मक कार्यों के लिए निश्चित कर दिया गया है। कोई-कोई रेडियो स्टेशन तो केवल प्रचार कार्य ही करते हैं। लोगों को आकर्षित करने के लिए साथ-साथ गाने का कार्यक्रम भी चलाते रहते हैं। 'सिलोन ब्राडकास्टिंग कार्पोरेशन का विदेश विभाग' इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। रेडियो के द्वारा आवाजें कुछ ही पल में सारी दुनियाँ में फैल जाती हैं। टेलीविजन पर आवाज के साथ-साथ चित्र भी आ जाता है। रेडियो स्टेशन पर मुख्यतः सरकारी नियन्त्रण होता है, अतः सरकार की नीतियों और सिद्धान्तों का प्रचार रेडियो के माध्यम से बड़ी सरलता से होता है। रेडियो द्वारा व्यापारिक प्रचार भी होता है। युद्ध के दिनों में रेडियो का महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है।

(4) **मंच** (Platform)—प्रचार के लिए बहुधा सभाओं का आयोजन किया जाता है। इन सभाओं में वक्ता अपने भाषण के द्वारा किसी विशेष वस्तु, विचार या सिद्धान्त का प्रचार करते हैं। इन सभाओं द्वारा किये गये प्रचार का प्रभाव वक्ता की प्रतिष्ठा पर निर्भर होता है। यदि वक्ता प्रतिष्ठित व्यक्ति है तो उसके द्वारा किया गया सुझाव लोग जल्दी स्वीकार कर लेंगे। चुनाव के समय ये सभाएं प्रचार का एक महत्त्वपूर्ण साधन बन जाती हैं। कभी-कभी दवा आदि बेचने वाले एजेण्ट भी सड़क के किनारे मजमा इकट्ठा करके चीजों का प्रचार बड़े उत्साह से करते हैं। लेकिन मंच द्वारा प्रचार मुख्यतः राजनैतिक दल और श्रमिक संघ अधिक करते हैं। विद्यार्थी संघ भी मंच द्वारा ही प्रचार करते हैं। मंच द्वारा प्रचार का सबसे बड़ा गुण यह है कि इसमें प्रचारकर्ता व जनता का प्रत्यक्ष और आमने-सामने का सम्बन्ध होता है। इसलिए प्रचारकर्ता अपने हाव-भाव, वाकशक्ति, वेशभूषा से जनता को शीघ्रता से प्रभावित कर लेता है। अतः मंच प्रचार के एक महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में प्रयुक्त होता है।

(5) **लाउड स्पीकर (Loud Speaker)**—लाउड स्पीकर प्रचार का एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...य और सस्ता साधन है। किसी रिक्शे, ताँगे में बैठकर सड़क और गली-कूचों ...-घूमकर लाउड स्पीकर द्वारा प्रचार करते हम अक्सर देखते रहते हैं। लाउड ...र द्वारा वक्ता की आवाज काफी दूर-दूर तक सुनायी पड़ती है। आवाज तेज ... के कारण लोगों का ध्यान प्रचारकर्ता पर जल्दी ही आकृष्ट हो जाता है। ...त, अशिक्षित, धनी और गरीब सब लोगों तक प्रचारकर्ता का सन्देश पहुँच जाता ... इसके द्वारा कुछ ही देर में कोई भी सन्देश पूरे शहर में फैलाया जा सकता है। ... के समय इस साधन का प्रयोग बहुत अधिक किया जाता है।

(6) सांस्कृतिक कार्यक्रम (Cultural Programmes)—सांस्कृतिक कार्य- ... जैसे—नाटक, संगीत आयोजन, नौटंकी, कवि सम्मेलन, नृत्य कार्यक्रम, आदि ...ध्यम से भी प्रचार किया जाता है। इनका प्रचार में बहुत अधिक महत्त्व है।

प्रचार और शिक्षा
(Propaganda and Education)

प्रचार और शिक्षा बहुत कुछ एक-दूसरे से मिलते-जुलते हैं। इनमें भेद करना ... कठिन है। यह कहना कि कहाँ पर शिक्षा समाप्त होती है और प्रचार प्रारम्भ ... है, बड़ा कठिन है।

शिक्षा और प्रचार में कोई विशेष अन्तर नहीं है और दोनों में ही ज्ञानात्मक ...गठन (cognitive reorganisation) के समान नियम लागू होते हैं। कुछ लोगों ...े सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। फ्रीमैन ने थार्नडाइक की गणित की पुस्तक ...2 को लिया और उसका विश्लेषण किया[1]. इस पुस्तक के दो पृष्ठों में 643 ...त की समस्याएँ हैं। इनमें से प्रायः ऐसे ही प्रश्न हैं जो पूँजीवादी व्यवस्था को ... करते हैं। इतने पर खरीदा और इतने लाभ पर बेचा, इतना रुपया इतने ब्याज ... लिया इत्यादि। प्रश्न दूसरी तरह से भी बनाये जा सकते हैं। इस प्रकार यह ...क अप्रत्यक्ष रूप से प्रचार करती है। मेयर ने अमरीकन फौज के उन सिपाहियों ... जो विदेशी माता-पिता से पैदा थे, अंग्रेजी पढ़ाई। उसमें इस प्रकार से शब्दों को ...या गया कि पढने वालों में अमरीकन प्रकार का व्यवहार बढ़े। इस परीक्षण को ...ने 'Control of Conduct by Suggestion : An Experiment in ...ericanization' नाम दिया। इसमें एक छिपा हुआ चेतन प्रचार था। कुछ भी ..., मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ तो एक ही हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रचार और शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ ...ही प्रयोग होती हैं।

हमें याद ही होगा कि केरल मे कम्युनिस्ट सरकार ने पुस्तकों में ऐसी सामग्री ...ा समावेश कराया जिससे लोगों के विचार साम्यवादी बने और उनको पता भी न ...ला। इस प्रकार शिक्षा को कभी भी प्रचार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रचार का सबसे बड़ा साधन शिक्षा है। अंग्रेजों ने भारत में अंग्रेजी शिक्षा के द्वारा अंग्रेजी मूल्यों एवं विश्वासों का प्रचार किया। यही कारण है कि हम लोग अंग्रेजी रिवाजों से रह रहे हैं।

प्रचार और शिक्षा के भेद को स्पष्ट करते हुए लॉसवेल (Lasswell) ने लिखा है, "शिक्षा कुशलताओं और स्वीकृत अभिवृत्तियों को हस्तान्तरित करने की प्रक्रिया है। प्रचार उन अभिवृत्तियों, जो समुदाय तक में विवादपूर्ण होती हैं, का हस्तान्तरण करता है।"

प्रचार और शिक्षा की मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ निस्सन्देह समान हैं, पर इनके उद्देश्यों में महान अन्तर है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को समाज के अनुसार बनाना है। शिक्षा ज्ञान की वृद्धि, बुद्धि, तर्क एवं विवेक का विकास तथा सोचने-विचारने की शक्ति का विकास करती है। शिक्षा का उद्देश्य मानव के मानसिक एवं शारीरिक विकास द्वारा सर्वांगीण विकास करना है। शिक्षा तर्क को प्रोत्साहन देती है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि प्रचार अतार्किक आधार पर आधारित होता है, जबकि शिक्षा तार्किक आधार पर। शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य यथार्थ ज्ञान को प्रस्तुत करना है। शिक्षा सांस्कृतिक मूल्यों का हस्तान्तरण नयी पीढ़ी को करती है।

जहाँ उद्वेगों का सहारा शिक्षा को लेना पड़ता है, वहाँ पर प्रचार शिक्षा के लिए सहायक सिद्ध होता है।

प्रचार और शिक्षा में भेद अवश्य है, पर दोनों एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। मुख्य रूप से इनमें उद्देश्यों का ही अन्तर है। वैसे प्रचार एक तटस्थ विधि है। इसको किसी भी प्रकार के उद्देश्य की पूर्ति में लगाया जा सकता है। प्रचार का उद्देश्य शिक्षा भी हो सकता है। आधुनिक युग में प्रचार का शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोग किया जाने लगा है।

प्रचार के प्रकार्य और महत्त्व
(Functions and Importance of Propaganda)

प्रचार के अनेक प्रकार्य हैं, इसलिए इसका बहुत अधिक महत्त्व है। अब हम इसके प्रकार्यों पर प्रकाश डालेंगे।

(1) शिक्षा में प्रचार का प्रकार्य (Function of Propaganda in Education)—शिक्षा में प्रचार का बहुत अधिक प्रयोग किया जा सकता है। शिक्षा और प्रचार की मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ समान हैं, क्योंकि दोनों ही ज्ञानात्मक पुनर्संगठन की प्रक्रियाएँ एवं विधियाँ हैं। शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य है, नयी पीढ़ी में उन मूल्यों को निर्धारित एवं प्रस्थापित करना जो उस संस्कृति के हैं। इस क्षेत्र में प्रचार शिक्षा के लिए बड़ा सहायक सिद्ध हो सकता है। किम्बाल यंग ने लिखा, "शिक्षा के इस विशिष्ट क्षेत्र में प्रचार कार्य कर सकता है।" उदाहरण के लिए, हम बच्चों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ध्वज के प्रति आदर विकसित करवाना चाहते हैं । इसके लिए प्रचार व्यक्तियों गों को जागृत कर सकता है । समाज के अन्य मूल्यों; जैसे—सत्य, ईमानदारी, य-परायणता आदि के प्रति आस्था विकसित करने में प्रचार सहायक सिद्ध हो ता है ।

(2) **प्रजातन्त्र में प्रचार का प्रकार्य** (Function of Propaganda in mocracy)—प्रजातन्त्र में प्रचार का बहुत अधिक महत्त्व है । प्रजातन्त्र जनमत आधारित होता है, जिसका विशद् विश्लेषण हम जनमत के अध्याय में कर चुके जनमत के निर्माण में प्रचार की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है । प्रचार जनमत के णि को बहुत अधिक प्रभावित करता है । प्रजातन्त्र में चुनाव एक अनिवार्य या है । चुनाव तो प्रचार के बिना क्रियान्वित ही नहीं हो सकता । प्रचार के यम से ही चुनाव लड़े जाते हैं । प्रजातन्त्र में विभिन्न दल होते हैं इन राजनीतिक की अपनी विचारधाराएँ होती हैं और विभिन्न राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान हैं । इन राजनीतिक दलों के लिए आवश्यक है कि ये अपने विचार जनता तक चाएं । यह कार्य केवल प्रचार द्वारा ही सम्भव है । प्रचार राजनीतिक दलों का ख अस्त्र होता है । प्रजातन्त्र के सुचारु रूप से चलने के लिए भी अनिवार्य है कि जनीतिक दलों के विचार जनता तक पहुँचें । राजनीतिक दल भी जनमत का निर्माण ते है और वे भी प्रचार का ही सहारा लेते हैं । प्रजातन्त्र विचारों की स्वतन्त्रता पर आधारित होता है । हर व्यक्ति को अपने विचार स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त करने का धकार होता है । प्रचार के द्वारा व्यक्ति अपने विचारों का प्रसारण करते हैं । जातन्त्र में प्रचार सरकार पर सामाजिक नियन्त्रण रखने का भी कार्य करता है । कार को सदा भय बना रहता है कि यदि कोई गलती सरकार करेगी, तो प्रचार के रा जनता तक पहुंच जायेगी । सरकार के सदस्यों को भी सदैव यह भय बना रहता और निरंकुश नहीं हो पाते । प्रजातन्त्र में विधानमण्डल होते हैं । सरकार विधान डलों में होने वाली कार्यवाही से जनता को सजग रखना चाहती है क्योंकि प्रजातन्त्र सरकार का यह कर्तव्य हैं कि सरकार को गतिविधियों से जनता परिचित रहे । ह कार्य भी प्रचार द्वारा ही किया जाता है । प्रजातन्त्र में अनेक ज्ञापन सरकार को रने पड़ते हैं । इन ज्ञापनों का प्रसार भी प्रचार द्वारा ही किया जाता है । इस विवेचन से स्पष्ट है कि प्रजातन्त्र का प्रमुख आधार ही प्रचार है ।

(3) **प्रचार का अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में प्रकार्य** (Function of Propaganda in International Politics)—प्रचार का अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में महत्त्वपूर्ण कार्य है । प्रचार के द्वारा राष्ट्रीय सरकारें अन्य राष्टों की जनता तक अपनी नीतियों का प्रसारण करती हैं । कोई भी विशेष बात होती है तो प्रचार के द्वारा उसे प्रसारित किया जाता है ।

(4) **प्रचार का व्यापार एवं वाणिज्य में प्रकार्य** (Function of Propa-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ganda in Trade and Commerce)—आधुनिक व्यापार और वाणिज्य का आधार ही प्रचार है। आधुनिक औद्योगिक समाज में व्यापार और वाणिज्य वृहद् स्तर पर किया जाता है। अनेक वस्तुओं के तो अन्तरराष्ट्रीय बाजार होते हैं, उन्हें अपने ग्राहकों तक पहुँचाना पड़ता है। अपने ग्राहकों तक पहुँचने का सबसे सस्ता माध्यम प्रचार है। विज्ञापन के द्वारा वे अपने माल की प्रसिद्धि करते हैं। जिसका जितना प्रचार होगा, वह माल उतना ही बिकेगा। व्यापारिक संस्थान अपने माल के प्रचार के ऊपर लाखों रुपये व्यय करते हैं। प्रचार व्यापारिक संस्थानों के लिए इतना अधिक महत्त्वपूर्ण है कि वे प्रचार का एक पृथक विभाग स्थापित करते हैं और प्रचार की आधुनिकतम विधियों को अपनाते हैं। आधुनिक युग में बाजार प्रचार के द्वारा ही निर्माण किया जाता है। आधुनिक औद्योगिक समूह समाज मे प्रचार के बिना कोई भी व्यापारिक संस्थान सफल ही नहीं हो सकता।

(5) **प्रचार का शीत युद्ध में प्रकार्य** (Function of Propaganda in Cold War)—प्रचार का शीत युद्ध में बड़ा महत्त्व है। एक प्रकार से शीत युद्ध पूर्णरूपेण प्रचार पर ही आधारित होता है। शीत युद्ध और प्रचार में कोई विशेष भेद नहीं है। शत्रु देश एक-दूसरे के विरुद्ध प्रचार करते रहते हैं।

(6) **प्रचार का युद्ध में प्रकार्य** (Function of Propaganda in War)—युद्ध में प्रचार का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। आधुनिक समय के युद्धों में तो प्रचार का और भी अधिक महत्त्व है। युद्ध में प्रचार के द्वारा अनेक कार्य किये जाते हैं। सर्वप्रथम तो जनता के नैतिक बल को स्थापित करने के लिए प्रचार किया जाता है। सैनिकों के नैतिक बल एवं उत्साह को बढ़ाने के लिए प्रचार किया जाता हैं। राष्ट्रीय नेताओं के जोशीले भाषण प्रसारित किए जाते हैं। राष्ट्र-प्रेम सम्बन्धी गीत प्रसारित किये जाते हैं। लोगों के उद्वेगों को जागृत करने के लिए वीर रस की कविताएँ एवं गीत प्रसारित किये जाते हैं, जिससे कि हर एक राष्ट्र पर बलिदान होने को तैयार रहे। प्रचार के द्वारा शत्रु राष्ट्र के सैनिकों एवं जनता के साहस एवं विश्वास को गिराने का प्रयत्न किया जाता है। आजकल तो कई बार युद्ध प्रचार की तकनीक से ही जीत लिये जाते हैं। शत्रु सेनाओं को प्रचार के द्वारा भ्रमित किया जाता है और अवसर का लाभ उठाया जाता है। युद्ध काल में प्रचार तीव्र गति पर संचालित किया जाता है।

आधुनिक युद्ध एक राष्ट्र और दूसरे राष्ट के बीच का ही प्रश्न नहीं होता है। वास्तविक युद्ध दो राष्ट्रों के बीच भले ही चलता रहे। पर नैतिक युद्ध संसार की शक्तियों में प्रारम्भ हो जाता है। प्रचार के द्वारा मित्र राष्ट्रों की सद्भावना को प्रसारित किया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ से आवेदन-प्रतिवेदन चलते रहते हैं। आधुनिक युद्ध दो तरफा होता है—एक तरफ सैन्य शक्तियों का संघर्ष और दूसरी ओर प्रचार का युद्ध। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(7) प्रचार का सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन में कार्य (Function of Propaganda in Eradicating Social Evils)—प्रचार का सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन में भी महत्त्वपूर्ण कार्य है। सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध जनमत तैयार करने में प्रचार की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रचार जीवन के हर क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। आधुनिक समय में तो इसका महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया है। गुलिक ने उचित ही लिखा है, "आधुनिक संसार में एक अन्य महत्त्वपूर्ण कलाकार प्रचार है।"[1]

प्रचार एक अच्छा शब्द है पर बुरा बन गया है (Propaganda is a Good Word, Gone Wrong)

कैथरीन गिराउल्ड (Katherine Gerould) ने कहा है, "प्रचार एक अच्छा शब्द है, पर बुरा बन गया है।" गिराउल्ड का कहना बहुत अंशों तक सत्य है। प्रचार के कार्य एवं महत्त्व पर हम प्रकाश डाल ही चुके हैं। उससे स्पष्ट है कि प्रचार एक अच्छा शब्द है।

इतना ही नहीं, प्रचार एक प्रविधि (technique) है। प्रविधि तटस्थ होती है, वह न अच्छी होती है और न बुरी होती है। प्रचार तो एक प्रविधि है, जिसका जो चाहे वैसा प्रयोग कर सकता है। लोग इसका बुरा प्रयोग करने लगे तो प्रचार का क्या दोष है। प्रचार का प्रयोग अच्छे कामों के लिए भी किया जा सकता है। कुप्पुस्वामी ने लिखा है, "हमें इस सम्बन्ध में पूर्णतया स्पष्ट रहना चाहिए कि प्रचार एक प्रविधि है। इस प्रविधि का प्रयोग व्यक्तियों और पूर्ण समूह के कल्याण के लिए किया जा सकता है अथवा व्यक्तियों और पूर्ण समूहों को बहकाने और शोषण करने में। अतः दोष प्रचार की प्रविधियों में नहीं है, अपितु उस तरीके में है जिसमें कुछ व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह इन प्रविधियों का प्रयोग अपने स्वार्थों के लिए करते हैं, न कि सामाजिक प्रगति के लिए।"[2]

यह सत्य होते हुए भी प्रचार शब्द हेय दृष्टि से देखा जाता है। प्रचार का अभिप्राय झूठ बोलना समझा जाता है। प्रचार शब्द अप्रतिष्ठित हो गया है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "अधिक व्यक्ति इस शब्द को बुरे अर्थों में ही मानने लगे हैं।"[3]

महायुद्ध के दौरान और बाद में जर्मनी, इटली, जापान आदि ने प्रचार मन्त्रालय स्थापित किये। इनका केवल यही कार्य था कि किसी भी प्रकार लोगों को विश्वास

---

[1] "Another striking new actor in the modern world in propaganda."

[2] B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 85.

[3] "Many people have come to regard the term as one of evil and sinister connotation."

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हो जाय कि हम बड़े शक्तिशाली हैं। इसके लिए इन्होंने झूठे तथ्य प्रसारित किये। अमरीका, ब्रिटेन आदि में भी यही रवैया अपनाया गया। इसके फलस्वरूप प्रचार के नाम पर झूठ का प्रचार होने लगा। लोग प्रचार और झूठ को पर्यायवाची शब्द समझने लगे। पाकिस्तान ने भी हिन्दुस्तान-पाकिस्तान युद्ध में यही रवैया अपनाया। लोग तो रेडियो पाकिस्तान को 'रेडियो झूठिस्तान' कहने लगे थे।

केवल राजनीतिक और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ही प्रचार के विषय में ऐसी धारणा सीमित नहीं है, अपितु अन्य क्षेत्रों में भी इसका दुरुपयोग हुआ है। व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में भी झूठे विज्ञापन प्रकाशित होने लगे। वस्तु कुछ भी नहीं और प्रचार इतना कि क्या पूछें। चलचित्रों के विज्ञापन ही सत्य से बहुत परे होते हैं।

उपर्युक्त वर्णित परिस्थितियों के कारण प्रचार शब्द बुरा बन गया है।

प्रचार की सीमाएँ
(Limitations of Propaganda)

प्रचार की भी अपनी सीमाएँ हैं। यह सोचना कि प्रचार के द्वारा चाहे जो करवाया जा सकता है, केवल एक भ्रान्ति है। सभी प्रकार के प्रचार सफल नहीं होते। प्रचार की निम्नलिखित कुछ सीमाएँ हैं :

(1) **प्रचार एक विशेष परिस्थिति द्वारा नियन्त्रित होता है**—प्रत्येक प्रचार की कुछ परिस्थितियाँ होती हैं और उस विशेष सन्दर्भ में ही प्रचार सीमित होता है। परिस्थितियों के अनुकूल प्रचार ही सफल होता है। परिस्थितियों के विरुद्ध प्रचार सदैव असफल होता है।

(2) **प्रचार व्यक्तियों के ज्ञान द्वारा भी सीमित होता है**—प्रचार अज्ञानता पर आधारित है जितनी अधिक अज्ञानता होगी, प्रचार उतना ही सफल होगा। जितना अधिक व्यक्तियों को किसी विषय में ज्ञान होगा, प्रचार उतना ही सीमित होगा और उतना ही कम सफल होगा।

(3) **प्रचार अभिवृत्तियों के द्वारा भी सीमित होता है**—प्रचार व्यक्तियों की अभिवृत्तियों के द्वारा भी सीमित होता है, क्योंकि लोग वही प्रचार स्वीकार करते हैं, जो उनकी सामान्य अभिवृत्तियों के अनुकूल होते हैं।

(4) **प्रचार विरोधी प्रचार द्वारा भी सीमित होता है**—कोई भी प्रचार विरोधी प्रचार द्वारा भी सीमित होता है, क्योंकि विरोधी प्रचार उसका खण्डन करता है और लोगों को सोचने के लिए बाध्य करता है।

(5) **प्रचार प्रचलित मान्य विश्वासों से सीमित होता है**—कोई भी प्रचार जो प्रचलित मान्य विश्वासों के विरुद्ध होगा कभी भी सफल नहीं हो सकता। प्रायः प्रचार ऐसे ही विषयों एवं समस्याओं पर अधिक होता है, जो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...एवं अस्पष्ट हों। जो स्पष्ट होता है, उसके विषय में प्रचार का कोई प्रभाव नहीं ...। उदाहरण के लिए, डालडा घी का चाहे जितना प्रचार किया जाये, वह शुद्ध ...रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। डालडा घी का इतना प्रचार होने ...रान्त भी लोग यह मानने को तैयार नहीं हैं कि यह हानिकारक नहीं होता।

प्रेस और समाचार पत्र
(Press and Newspaper)

प्रेस का अभिप्राय मुद्रणालयों से है। कोई भी वस्तु जो मुद्रित हो, प्रेस से ...त होती है।

वैसे प्रचलन में, प्रेस का अभिप्राय समाचार पत्रों से है, इसलिए हम समाचार ...का विवरण देंगे।

समाचार पत्र
(Newspaper)

'समाचार' (news) का अर्थ है नवीन (novel or new)। किम्बाल ...ने समाचार की परिभाषा करते हुए लिखा है, "अपने उद्देश्यों के लिए, हम समा-...चार को एक ऐसे घटना, तथ्य, मत या मूल्य के रूप में परिभाषित करेंगे जो संचारित ...या प्रकाशित किया जाता है और जो जनता के काफी लोगों की रुचि का होता है।.... ...संक्षेप में, समाचार प्राप्तकर्ताओं के लिए नवीन माना जाता है।"[1]

समाचार पत्र का इतिहास बहुत लम्बा नहीं है। संसार का सर्वप्रथम समाचार ...'Frankfurter Journal' था, जो 1615 ई० में इम्मल (Emmel) द्वारा एक ...साप्ताहिक के रूप में निकाला गया। 18वीं शताब्दी में कुछ समाचार पत्र प्रारम्भ हुए।

...चार पत्र और उनकी अर्थव्यवस्था

समाचार पत्रों की अर्थव्यवस्था अधिकतर विज्ञापन पर आधारित है। बिक्री ...से कम आय हो पाती है। इसके कारण इन्हें बड़े-बड़े उद्योगपतियों एवं सरकार ...पर आश्रित रहना पड़ता है। इसका स्वाभाविक फल यह होता है कि इन्हें एक प्रकार ...के नियन्त्रण में रहना पड़ता है।

विज्ञापन (advertising) ने समाचार पत्र को स्वतन्त्रता भी दिलायी है। ...पहले समाचार पत्र सरकार, पूँजीपतियों या राजनैतिक दलों के सहारे चलते थे। अब ...इस व्यवस्था से मुक्ति मिल गयी है। डूब ने उचित ही लिखा है, "यह वास्तव में

[1] "For our purposes we will define news as an event, fact, opinion, or value which is communicated or made public and is of interest to a number of people......In short news must be regarded as novel to the recipients." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 356.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विज्ञापन का प्रारम्भ ही था जिसने समाचार पत्रों को ईमानदार, न्यायोचित, सम्मानित बनाया; क्योंकि व्यापारी फर्में अधिक परिचालन चाहती थीं जो घटनाओं की अपक्षपातपूर्ण विज्ञप्ति के द्वारा ही प्राप्त हुआ था।"[1]

विज्ञापन अन्य देशों में भी समाचार पत्रों की अर्थव्यवस्था को सहायता पहुँचाता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "एक व्यापार के रूप में आधुनिक अमरीकी समाचार पत्र अधिकतर विज्ञापन के द्वारा ही पोषित है।"[2]

एक पत्र के कई विभाग होते हैं। इनमें से प्रमुख—समाचार—अन्तरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय, स्थानीय समाचार, विज्ञापन (Public appointments, situations vacant, situations wanted, matrimonials, buy add sell, financial, business advertisements, etc.); सम्पादकीय, सम्पादक को पत्र, खेलकूद, बाजार भाव, ज्योतिष इत्यादि। प्रथम, तृतीय और अन्तिम पृष्ठ महत्त्वपूर्ण होते हैं। कुछ पत्रों में विशेष कालम भी होते हैं; जैसे—स्वास्थ्य, कार्टून, हास्य, गृहस्थी, बच्चों के लिए कहानियाँ इत्यादि। हिन्दुस्तान टाइम्स में 'What a Li... भी एक अच्छा लक्षण है।

इनमें से समाचारों के अतिरिक्त जनमत की दृष्टि से सम्पादकीय और सम्पादक के नाम पत्र हैं। सम्पादकीय को एक पवित्र वस्तु समझा जाता है। यह एक बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। इसके द्वारा सम्पादक जनता का एक नैतिक नेता बन जाता है और जनता परम्परा के अनुसार यह विश्वास रखती है कि सम्पादक जनता को धोखा नहीं देगा।

सम्पादकीय का अर्थ समझाते हुए किम्बाल यंग ने लिखा है, "सम्पादकीय को सूचना के एक स्रोत के बजाय एक व्याख्या, एक आलोचना अथवा तर्क माना जाता है।"[3]

सम्पादकीय का जनता पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। जिन समाचारों को इसमें लिया जाता है, जनता स्वयं भी उन पर सोचती है। वे देश की महत्त्वपूर्ण विषय या समस्याएँ समझी जाती हैं। इसके द्वारा सम्पादक जनता के पास ... पहुँचाता है।

---

[1] "It was in fact the advent of advertising that made newspapers honest, reasonable and respectable for this commercial firms required a large circulation which was achieved through the relatively unbiased report of events." Doob, *Public Opinion and Propaganda*, (1948), p. 425.

[2] "As a business venture, the modern American newspaper is largely supported by advertising."

[3] "The editorial supposed to be an interpretation, comment, and even argument rather than a source of information." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 372.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार जनता भी सम्पादक के पास पहुँचती है। 'सम्पादक के नाम पत्र' का माध्यम है। इसके द्वारा जनता सम्पादक के विचारों को प्रभावित करती है। स्वामी ने लिखा है, "जिस प्रकार सम्पादकीय से लोग प्रभावित हो सकते हैं, उसी प्रकार सम्पादक सम्पादक के नाम पत्रों से प्रभावित हो सकता है।"[1]

की स्वतन्त्रता (Freedom of the Press)

प्रजातान्त्रिक देशों में प्रेस की स्वतन्त्रता एक महत्त्वपूर्ण अधिकार है। यह व्यक्ति के भाषण के मौलिक अधिकार से सम्बन्धित है।

अमरीका में जेफरसन (Jefferson) ने प्रेस की स्वतन्त्रता पर अत्यधिक दिया। उन्होंने कहा: "Where the press is free, and every man able to read, all is safe."

भारत में भी प्रेस की स्वतन्त्रता को स्वीकार किया जाता है और संविधान में भी इसको स्पष्ट रूप से एक मौलिक अधिकार मान लिया गया है।

विरोधी विचार (Opposing View)—कुछ लोगों का कहना है कि प्रेस को पूरी स्वतन्त्रता नहीं दी जा सकती। कभी-कभी ये इसका दुरुपयोग करते हैं। जनता के हित में यह आवश्यक है कि प्रेस का नियन्त्रण रखा जाय। समाचार पत्र एक सार्वजनिक वस्तु है, व्यक्तिगत नहीं, क्योंकि यह जनमत को प्रभावित करता है।

लोगों को समाचार पत्रों के विरुद्ध कई शिकायतें हैं। पहली बात यह है कि ये अपराध सम्बन्धी समाचारों को बढ़ा-चढ़ाकर देते हैं और इसका परिणाम बच्चों एवं अन्य पाठकों पर अच्छा नहीं पड़ता। इसी प्रकार तनाव के मामलों को बढ़ा देते हैं। हिन्दू-मुस्लिम दंगों को बढ़ाने में समाचार पत्रों का भी हाथ रहता है।

समाज की रूढ़ियों का भी इन्हें ध्यान रखना पड़ेगा। लिंग सम्बन्धी समाचारों एवं विवरणों पर भी नियन्त्रण रखना पड़ेगा। कुछ देशों की आन्तरिक एवं बाह्य सुरक्षा के लिए भी इन पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है।

सरकारी नियन्त्रण (Governmental Control)—सर्वाधिकारवादी राज्यों में तो प्रेस की कोई स्वतन्त्रता नहीं होती। प्रेस ही स्वयं सरकार के होते हैं। प्रजातान्त्रिक देशों में प्रेस को स्वतन्त्रता रहती है, फिर भी कुछ नियन्त्रण तो हर देश में रखा जाता है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "Yet nowhere is there absolute freedom from some form of state control." (p. 381)

सेंसर (Censorship)—राष्ट्रीय संकट के समय या अन्य असामान्य परिस्थितियों में सरकार समाचारों पर सेंसर करती है। कभी-कभी समाचार के स्रोत पर यह सेंसर लगा दिया जाता है

---

[1] "Just as the people may be influenced by the editorials, the editor may be influenced by the letters to the editor." B. Kuppuswamy, *An Introduction to Social Psychology*, p. 246.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वास्तव में प्रेस को स्वतन्त्रता तो रहनी चाहिए, पर प्रेस को भी अपना उत्तरदायित्व निभाना चाहिए। प्रेस केवल पैसा कमाने के उद्देश्य से नहीं चलाया जा सकता। वह सार्वजनिक कर्तव्य भी रखता है। अतः उसे वह कर्तव्य निभाने का प्रयत्न भी करना चाहिए। इन दशाओं में सरकार के लिए आवश्यक है कि वह कुछ न कुछ नियन्त्रण अवश्य रखे। सरकार को भी इस नियन्त्रण का अनुचित लाभ नहीं उठाना चाहिए।

भारत में समाचार पत्र

मारत में 8,640 समाचार पत्र प्रकाशित होते हैं, जिनमें से 601 दैनिक समाचार पत्र हैं। सबसे अधिक दैनिक समाचार पत्र उत्तर प्रदेश से प्रकाशित होते हैं, जिनकी संख्या 92 है। फिर महाराष्ट्र (83) और मध्य प्रदेश (61) आते हैं। अंग्रेजी समाचार पत्रों की लोकप्रियता अभी भी भारत में अधिक है।

कुछ प्रमुख दैनिक समाचार पत्र निम्नलिखित हैं :

अंग्रेजी में

1. Indian Express (Published simultaneously from New Delhi, Ahmedabad, Bombay, Madras, Madurai, Bangalore and Vijaywada).
2. The Hindustan Times.
3. The Statesman (Published simultaneously from New Delhi and Culcutta),
4. The Times of India (Published simultaneously from New Delhi, Ahmedabad and Bombay).
5. The Hindu (Madras).
6. Amrita Bazar Patrika (Calcutta).
7. Indian Nation (Patna).
8. Hitavada (Published simultaneously from Nagpur and Bhopal).
9. Northern India Patrika (Allahabad).
10. National Herald (Published simultaneously from New Delhi and Lucknow).
11. Assam Tribune (Gauhati).
12. Tribune (Chandigarh).
13. Navhind Times (Panjim, Goa)

बँगला में

14. आनन्द बाजार पत्रिका (कलकत्ता)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

15. जुगान्तर (कलकत्ता)।
16. बासुमती (कलकत्ता)।

उड़िया में

17. समाज (कटक)।
18. मातृभूमि (कटक)।

तेलुगू में

19. आन्ध्रा प्रभा (विजयवाड़ा और बंगलौर)।
20. आन्ध्रा पत्रिका (मद्रास और विजयवाड़ा)।

असमिया में

21. दैनिक असम (गोहाटी)।

गुजराती में

22. गुजरात समाचार (अहमदाबाद)।
23. लोक सत्ता (बड़ौदा)।

मलयालम में

24. दिनामनी (क्यूलन)।
25. मलयाला मनोरमा (कोटयाम)।

तामिल में

26. दिनामनी (मद्रास और मदुराई)।
27. दैनिक थंथी (मद्रास, मदुराई, कोयमबट्टूर, तीरूनलवेली)।

मराठी में

28. सकल (पूना)।
29. केसरी (पूना)।
30. लोकसत्ता (बम्बई)।

सिंधी में

31. हिन्दुस्तान (बम्बई)।

कन्नड़ में

32. प्रजावाणी (बंगलौर)।
33. संयुक्त कर्नाटक (हुबली और बंगलौर)।

पंजाबी में

34. अकाली पत्रिका (जलंधर शहर)।
35. रंजीत (पटियाला और भटिंडा)।

हिन्दी में

36. हिन्दुस्तान (नई दिल्ली एवं बम्बई)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

37. नव भारत टाइम्स (नई दिल्ली एवं बम्बई)।
38. आर्यावर्त (पटना)।
39. आज (वाराणसी)।
40. विश्वमित्र (कलकत्ता, पटना, कानपुर, बम्बई)।
41. सैनिक (आगरा)।
42. अमर उजाला (आगरा)।

उर्दू में

43. मिलाप (दिल्ली, जलंधर, हैदराबाद)।
44. प्रताप (दिल्ली और जलंधर)।
45. वीर अर्जुन (दिल्ली।
46. हिन्द समाचार (जलंधर)।

प्रश्न

1. एक प्रजातान्त्रिक समाज में प्रोपेगेण्डा के प्रकार्यों का पर्यालोचन कीजिए।
(Discuss the functions of propaganda in a democratic society.)

2. 'सुझाव प्रचार की क्रियाशीलता की कुंजी है।" विवेचना कीजिए।
("Suggestion is the key to the operation of propaganda" Discuss.)

3. प्रचार के मनोविज्ञान पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।
(Write a short essay on the psychology of propaganda.)

4. आधुनिक प्रचार के मनोवैज्ञानिक आधार की विवेचना कीजिए।
(Discuss the psychological basis of propaganda.)

5. प्रचार के मौलिक सिद्धान्त क्या हैं ? यह बताइये कि प्रचार ज्ञानात्मक पुनर्संगठन की ओर कैसे निर्देशित करता है ?
(What are the basic principles of propaganda ? Show how propaganda leads to cognitive reorganisation.)

6. "प्रचार एक अच्छा शब्द है जो कि बुरा बन गया है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए।
("Propaganda is a good word, gone wrong." Explain.)

7. "प्रचार अनिवार्यतः अभिवृत्ति के नियन्त्रण करने की एक प्रविधि है।" प्रचार एवं जिन सिद्धान्तों पर वह आधारित है, के विषय क्षेत्र, खतरे और सीमाओं पर विचार कीजिए।
("Propaganda is essentially a techinque of controlling attitude." Consider the scope, dangers and limitations of propaganda and the priniciples on which it is based.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

8. प्रचार की परिभाषा कीजिए। आधुनिक औद्योगिक समाज में प्रचार के कौन-कौन से साधन हैं ?

(Define propaganda. What are the major tools or media of propaganda in modern industrial society ?)

9. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(i) प्रेस (Press)।

(ii) प्रचार में प्रेस का महत्त्व (Improtance of Press in Propaganda)।

(iii) प्रचार (Propaganda)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

39

पूर्वधारणा
(Prejudice)

'पूर्वधारणा' शब्द का अर्थ है कि हम बिना किसी बात की परीक्षा किए हुये किसी वस्तु, व्यक्ति, स्थान इत्यादि के सम्बन्ध में अच्छी या बुरी धारणा बना लेते हैं तो उसे 'पूर्वधारणा' कहते हैं। हम अपने सामाजिक जीवन में अनुभव करते हैं कि कुछ लोगों को देखकर बिना किसी परीक्षा के ही प्रेम करने लगते हैं और उसी के आधार पर उनके प्रति सहयोग, सहानुभूति आदि के भाव उत्पन्न हो जाते हैं। इसके विपरीत, उसी समाज के कुछ लोगों को देखकर घृणा हो जाती है और हम उन्हें गिरी हुई नजर से देखते हैं और उसी के अनुसार हमारे व्यवहार और भाव बनते हैं। ऐसे लोगों से हम द्वेष, घृणा और कभी-कभी अत्याचारपूर्ण व्यवहार भी करते हैं। इन लोगों के प्रति हमारे इन्हीं व्यवहार प्रतिमानों को 'पूर्वधारणा' कहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि 'पूर्वधारणा' अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार का होता है। जिन समूहों के प्रति सहानुभूति, स्नेह, प्रेम, रुचि होती है और उसे अनुकूल या सकारात्मक पूर्णधारणा कहते हैं। जिस समूह या व्यक्ति के प्रति द्वेष, घृणा या हीनता की भावना होती है, उसे प्रतिकूल या नकारात्मक 'पूर्वधारणा' कहते हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अतः समूहों या बाह्य समूहों के प्रति हमारे अनुकूल या प्रतिकूल मनोभावों तथा व्यवहार प्रतिमानों को ही पूर्वधारणा कहते हैं।

पूर्वधारणा का शाब्दिक अर्थ एवं परिभाषा
(The Etymological Meaning and Definition of Prejudice)

पूर्वधारणा' शब्द को अंग्रेजी में 'prejudice' कहते हैं। यह शब्द लैटिन भाषा के 'prejudicium' शब्द का बिगड़ा हुआ रूप है, जिसका अर्थ है मुकदमे से पहले ही न्यायालय में परीक्षा हो जाना। इसका मतलब है पक्षपातपूर्ण व्यवहार करना जिसका कोई तार्किक आधार न हो। उपर्युक्त विवेचन से पूर्वधारणा के सम्बन्ध में दो बातें स्पष्ट होती हैं। पहला, पक्षपात में कोई विषय या पक्ष होता है जिसके प्रति हमारी धारणा बनती है। दूसरा, उस विषय या पक्ष के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल निर्णय पहले से ही लिया जाता है। यह अनुकूल या प्रतिकूल निर्णय किसी तर्क के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आधार पर नहीं होते। इसमें संवेगात्मक मनोभाव की प्रबलता होती है। संवेगों के कारण ही पूर्वधारणा में तर्क की गुंजाइश नहीं होती। पूर्वधारणा वह अतार्किक व संवेगात्मक मनोभाव है जो एक समूह के लोगों को दूसरे समूह के लोगों के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल व्यवहार करने को बाध्य करती है।

पूर्वधारणा' की परिभाषा करते हुए ऑगबर्न (Ogburn) ने लिखा है कि पूर्वधारणा जल्दबाजी में किया गया एक ऐसा निर्णय या मत है जो बिना परीक्षण किए ही हो जाता है।"[1] इस परिभाषा में कई कमियाँ हैं। कोई भी पूर्वधारणा एक ही रात में नहीं हो जाती। यह सामाजिक अन्तःक्रिया के दौरान पनपती है। अतः इसे जल्दबाजी में लिया गया निर्णय नहीं कहा जा सकता। यह परिभाषा इस पक्ष की ओर भी ध्यान नहीं देती कि पूर्वधारणाओं में भावनाओं का भी योग होता है।

श्री जेम्स ड्रेवर की परिभाषा के अनुसार "पूर्वधारणा एक ऐसी मनोवृत्ति है जो संवेगात्मक रंग में रंगी होती है, जो किन्हीं क्रियाओं, वस्तुओं, व्यक्तियों और सिद्धान्तों के प्रति प्रतिकूल होती है।"[2] इस परिभाषा से पूर्वधारणा की निम्न विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं—पहली विशेषता यह है कि पक्षपात एक मनोवृत्ति है। इन मनोवृत्तियों पर संवेगों का रंग चढ़ा होता है। दूसरी विशेषता यह है कि पूर्वधारणा किसी वस्तु या व्यक्ति के सम्बन्ध में ही नहीं बल्कि क्रियाओं और सिद्धान्तों के प्रति भी होता है। तीसरी विशेषता यह है कि मनोवृत्ति पक्ष में भी हो सकती है और विपक्ष में भी हो सकती है। किम्बाल यंग ने पूर्व धारणा की परिभाषा इस प्रकार की है, "पूर्वधारणा रुढ़ि प्रक्रियाओं, लोकगाथाओं तथा पौराणिक कथाओं के संगठन से बनता है जिसमें एक व्यक्ति समूह का समग्र रूप में वर्गीकरण करने, उसकी विशेषताएँ ज्ञात करने तथा परिभाषित करने में समूह संज्ञा या प्रतीक का प्रयोग किया जाता है।"[3] इस परिभाषा में पूर्वधारणा तथा रूढ़ियुक्तियों और लोकगाथाओं का घनिष्ठ सम्बन्ध दिखाया गया है।

---

[1] "Prejudice is a hasty judgement or an opinion formed without due examination." W. F. Ogburn, "Bias; Psycho-analysis and the Subjection in Relation to the Sciences." Proceeding of the American Sociological Society. 1922, p. 17.

[2] "Prejudice is an attitude, usually within emotional colouring, hostile to or in favour of actions or subjects of certain kinds, certain persons and certain doctrines." James Drever, *Dictionary of Pyschology*, p. 216.

[3] "A prejudice is a composite of stereotypes, myths and legends in which a group label or symbol is used to classify, characterise, and define an individual or a group considered as a totality." Kimbal Young, *A Handbook of Social Psychology*, Routledge and Kegan Paul Ltd. London, 1948, p. 258.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वधारणा की विशेषताएँ
(Characteristics of Prejudice)

उपर्युक्त परिभाषाओं से 'पूर्वधारणा' की निम्नलिखित विशेषताएँ ज्ञात होती हैं, जिनका वर्णन निम्नलिखित है :

(1) **पूर्वधारणा सीखे जाते हैं** (Prejudices Learned)—पूर्वधारणा जन्मजात प्रवृत्ति नहीं है, यह सीखे जाते हैं। अनेक विद्वानों में पूर्वधारणा को एक मनोवृत्ति माना है। मनोवृत्ति का विकास सामाजिक अन्तःक्रियाओं के परिणामस्वरूप होता है। इन अन्तःक्रियाओं के कारण ही हमारे मनोभाव और व्यवहार प्रतिमान बनते हैं, अतः यह बात स्पष्ट है कि 'पूर्वधारणा' का संक्रमण वंश परम्परागत नहीं होता है।

(2) **पूर्वधारणा मुख्यतः अचेतन होते हैं** (Prejudice are Largely Unconsious)—पूर्वधारणा किसी भी वस्तु, व्यक्ति, समूह या सिद्धान्त के प्रति अज्ञात रूप से बन जाती है; जैसे—कुछ लोग गरीबों और भिखारियों के प्रति दया भाव रखते हैं और उनकी मदद करते हैं, यह अचेतन रूप से करते रहते हैं ऐसा वे क्यों करते हैं इसका कोई तार्किक आधार नहीं होता। हरिजनों को छूना भी लोग पसन्द नहीं करते, उनसे घृणा करते हैं और हेय दृष्टि से देखते हैं। यह पूर्वधारणा के कारण ही है।

(3) **पूर्वधारणा का सत्यता से कोई सम्बन्ध नहीं होता** (Prejudice is Unrelated to Reality)—पूर्वधारणा तर्कहीन होती है। पूर्वधारणा के आधार पर किसी विषय के सम्बन्ध में वास्तविकता की जानकारी नहीं की जा सकती। यदि किसी व्यक्ति, समूह, वस्तु इत्यादि के प्रति अनुकूल पूर्वधारणा है तो हर स्थिति में उसके अनुकूल धारणा ही पनपेगी, यदि प्रतिकूल पूर्वधारणा है तो उसे हम हर प्रकार से हेय या निम्न कोटि का मानते हैं, चाहे वास्तविकता इसके विपरीत ही क्यों न हो। अमरीका में कहा जाता है कि नीग्रो द्वितीय श्रेणी के खिलाड़ी हैं, पर वास्तविकता यह है कि वे दुनिया भर में श्रेष्ठ खिलाड़ियों के रूप में गिने जाते हैं।

(4) **पूर्वधारणा हमें सन्तोष प्रदान करते हैं** (Prejudices are Satisfying us)—पूर्वधारणा यद्यपि एक प्रकार की सामूहिक बुराई है फिर भी लोग इसे बनाये रखते हैं, क्योंकि इसके माध्यम से इन्हें सन्तोष प्राप्त होता है। इससे अनेक सामाजिक बुराइयों का एक बहाना मिल जाता है।

(5) **पूर्वधारणा को पूर्वधारणा के सम्पर्क से सीखा जाता है न कि अन्य समूहों के सम्पर्क द्वारा** (Prejudice is Learned Through Contact with Prejudice not Through Contact with other Groups)—पूर्वधारणा वातावरण के अनुकूल ही पनपती है। जब एक ब्राह्मण का लड़का बचपन से ही ऐसे समूह के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में रहता है जहाँ कुल लोगों को अस्पृश्य कहकर छुआ तक नहीं जाता और प्रति अवहेलनापूर्ण व्यवहार किया जाता है तो ऐसे समाज या समूह में चलने बच्चा भी वैसा ही पक्षपातपूर्ण व्यवहार करने लगता है।

पूर्वधारणाओं के निर्माण में मनोवैज्ञानिक तत्त्व (Psychological Elements in the Formation of Prejudices)

पूर्वधारणा के निर्माण में निम्नलिखित मनोवैज्ञानिक तत्त्व उत्तरदायी हैं :

(1) **रूढ़ियुक्तियाँ** –किसी भी एक विषय से सम्बन्धित वास्तविकताएँ पूर्वधारणा के निर्माण में महत्त्व नहीं रखतीं। यह मनुष्य या समूह की कल्पनाओं पर आधारित होता है। इसके अतिरिक्त यह रूढ़ियों के कारण भी उत्पन्न होता है। कुछ रूढ़ियाँ एक समूह को दूसरे समूह के हृदय में अवहेलना पैदा कर देती हैं जिसके कारण घृणा का भाव पैदा हो जाता है और पूर्वधारणा का निर्माण हो जाता है।

(2) **असामान्यता**—मनुष्य सामान्य और असामान्य दो प्रकार के व्यवहार करता है। जब वह प्रेम, सहयोग, सहानुभूति आदि को प्रदर्शित करता है तो इसे सामान्य व्यवहार कहते हैं और जब वह घृणा व अत्याचारपूर्ण व्यवहार करता है। इस तरह का असामान्य व्यवहार असामान्य समूह के सदस्य ही कर सकते हैं। इस प्रकार असामान्यता भी पूर्वधारणा के निर्माण में एक मनोवैज्ञानिक कारक है।

(3) **असफलता की भावना**—व्यक्ति की कुछ स्वाभाविक आवश्यकताएँ होती हैं। यदि अनेक प्रयास के बावजूद भी किसी आवश्यकता की सन्तुष्टि नहीं होती तो उस व्यक्ति में निराशा का जन्म हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप उसमें विरोधी भावनाएँ पनप जाती हैं। कुछ समय के बाद यही भावनाएँ पूर्वधारणा का अंग बन जाती हैं। उदाहरणार्थ, हम पूँजीपति और श्रमिकों का उदाहरण दे सकते हैं। पूँजीपति वर्ग श्रमिकों का आर्थिक शोषण करते हैं, जिससे श्रमिक वर्ग अपनी आवश्यक आवश्यकताओं को भी कठिनाई से पूरा करता है। ऐसी स्थिति में श्रमिकों में असफलता का भाव उत्पन्न हो जाता है और श्रमिक, पूँजीपतियों का अनादर, घृणा, अवज्ञा करने लगता है। ऐसी पूर्वधारणा उनके मस्तिष्क में बन जाती है।

(4) **सांस्कृतिक निषेध**—प्रत्येक समाज के सदस्यों को सांस्कृतिक नियमों तथा निषेधों का पालन करना अनिवार्य होता है। ये नियम या निषेध किसी भी समूह या समूह के सदस्यों के विरुद्ध हो सकते हैं। इन नियमों का बार-बार पालन करने से पूर्वधारणा का निर्माण हो जाता है। कुछ सांस्कृतिक निषेध जानबूझ कर पनपाया जाता है; जैसे—जाति-प्रथा के अन्तर्गत ब्राह्मण और हरिजनों के बीच की सामाजिक दूरी, हरिजनों पर परम्परागत लादी हुई अनेक निर्योग्यताएँ हैं। यह दूरी परम्परागत बनी रहती है। प्रत्येक जाति के कुछ जातीय नियम होते हैं जिनका पालन करना उनको अनिवार्य होता है। यही नियम उनके बीच की दूरी बनाये रखने में सहायक सिद्ध होते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(5) **जटिल परिस्थितियाँ**—जटिल परिस्थितियाँ भी पूर्वधारणा के निर्माण में सहायक सिद्ध होती हैं। उदाहरणार्थ, अनाज की कमी होने पर जब व्यक्ति अपना पेट भरने के लिए भी अनाज नहीं मिलता तो वे अत्यधिक मानसिक उलझन में फँस जाते हैं और सरकार को दोषी ठहराते हैं।

(6) **श्रेष्ठता की भावना**—कभी-कभी यह समूह दूसरे समूह से अपने को श्रेष्ठ समझने लगते हैं। इस श्रेष्ठता के आधार तार्किक और अतार्किक दोनों हो सकते हैं। यदि इस प्रकार की भावना पनप गयी तो समूह के सदस्य इस प्रकार की भावना को बनाये रखने का प्रयत्न हमेशा करते रहते हैं और दूसरे समूह को निम्न समझने लगते हैं, इस प्रकार पूर्वधारणा का निर्माण हो जाता है। उदाहरणार्थ, श्वेत जातियाँ नीग्रो प्रजाति के लोगों से अपने को श्रेष्ठ मानती हैं। यद्यपि इसका कोई तार्किक आधार नहीं है फिर भी श्वेत जातियों में श्रेष्ठता की पूर्वधारणा पायी जाती है।

(7) **समाज से अनुकूलन की इच्छा**—प्रत्यक व्यक्ति अपने समाज के रीति-रिवाजों या आदर्श नियमों के साथ अनुकूलन करता है। समाज में रहने के लिए इस प्रकार का अनुकूलन अनिवार्य है। इस अनुकूलन में वह इन सामाजिक नियमों के साथ-साथ समूह में स्थित पूर्वधारणा को भी स्वीकार कर लेता है। वह यह समझने लगता है उसका समूह श्रेष्ठ है और उसकी तुलना में दूसरे समूह निम्न हैं। यही भावना 'पूर्वधारणा' की आधारशिला बनती है। किसी भी समूह का सदस्य अपने समाज से अनुकूलन तभी कर सकता है, जब वह अन्य सदस्यों की भाँति अपने समूह में स्थित 'पूर्वधारणा' को अपना लेता है।

पूर्वधारणा के प्रकार
(Kinds of Prejudice)

पूर्वधारणा अनेक प्रकार के हो सकते हैं, परन्तु उनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं :

(1) **प्रजातीय पूर्वधारणा** (Racial Prejudice)—प्रजातीय पूर्वधारणा उसे कहते हैं जिसमें एक प्रजाति के सदस्य दूसरी प्रजातियों से अपने को श्रेष्ठ समझते हैं और बाह्य प्रजाति के प्रति घृणा, अवहेलना, द्वेष, सामाजिक अन्याय और अनादर का भाव रखते हैं। प्रजातीय पूर्वधारणा का प्रारम्भ आर्य प्रजाति की श्रेष्ठता की धारणा के कारण होता है। ऐसा समझा जाता है कि उच्च सभ्यता का विकास आर्य प्रजाति द्वारा ही हुआ है, क्योंकि सभ्यता के विकास के लिए जिन योग्यताओं और क्षमताओं की आवश्यकता होती है वह केवल आर्य प्रजाति में ही पायी जाती है अर्थात् आर्य प्रजाति ही सर्वश्रेष्ठ प्रजाति है। इस श्रेष्ठता की धारणा के आधार पर ही नार्डिकवाद (Nordicism) का विकास हुआ, जिसमें यह प्रचार किया गया कि विशुद्ध आर्य जाति यूरोप के उत्तरी भाग में रहती है जिसे नार्डिक प्रजाति कहते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को ऐसा विश्वास दिलाया गया कि उच्चतम सभ्यता, नेता, कलाकार, वैज्ञानिक को इसी नार्डिक प्रजाति ने ही जन्म दिया। इसी के आधार पर ही जर्मनी के ने जर्मनी के निवासियों को सर्वश्रेष्ठ शासक प्रजाति घोषित किया। उन्होंने प्रजातीय विशुद्धता को बनाये रखने के लिए ही यहूदियों को अपने देश से बाहर दिया।

आधुनिक काल में प्रजातीय पूर्वधारणा के कारण ही एक प्रजातीय समूह घृणा करते है। पूर्वधारणा के कारण ही एक प्रजाति अपने से निम्न प्रजाति कि सम्बन्ध नहीं रखती। उन्हें अनेक सुविधाओं से वंचित रखा जाता है, कि उन्हें शिक्षा प्राप्त करने की भी उचित सुविधाएँ नहीं प्राप्त हो पातीं। उदाहरण आज भी अमरीका तथा अफ्रीका में श्वेत प्रजाति का नीग्रो प्रजाति पाये जाने वाली अवहेलना की भावना है। अमरीका में आज भी नीग्रो लिए रेलगाड़ियों में अलग डिब्बे (compartments) तथा अलग प्रतीक्षालय ng room) होते हैं। 'कानून के सम्मुख समानता' (equality before law) सिद्धान्त रूप में ही माना जाता है। नीग्रो लोगों को छोटे-छोटे अपराधों भी कठोर दण्ड दिये जाते हैं। सन् 1951 में एक अमरीकी स्त्री के साथ र करने के अपराध में सात नीग्रो लोगों को मृत्यु दण्ड की सजा दी गयी। अफ्रीका में 'जंगली' नीग्रो शासन के क्षेत्र से बहिष्कृत कर दिये गये हैं। वहाँ कमी होने पर किसी भी अंग्रेज मरीज से बिना पूछे अन्य प्रजाति का रक्त राध है। उन्हें इस बात का डर रहता है कि कहीं उनका विशुद्ध रक्त हो जाय।

तीय पूर्वधारणा के आधारों का मूल्यांकन (Evaluation of the Cases ial Prejudices)— प्रजाति पक्षपात के चार प्रमुख आधार हैं—उत्तम की उत्तमता, मानसिक योग्यता तथा सांस्कृतिक श्रेष्ठता। इनका संक्षिप्त निम्नलिखित है :

(1) प्रजातीय पूर्वधारणा का पहला आधार उत्तम रंग है। रंग के आधार समूहों में ऊँच-नीच का संस्तरण किया जा सकता है। परन्तु त्वचा का कुछ जलवायु और पर्यावरण पर निर्भर है और इस आधार पर प्रजातीय अवैज्ञानिक है।

(2) रक्त की उच्चता और शुद्धता के आधार पर भी यह निर्बल प्रतीत । क्योंकि आज वैज्ञानिक अनुसन्धानों से रक्त को चार श्रेणियों में विभाजित या है, परन्त इनमें उच्च-और निम्न, उत्तम और अधम की कोई पहचान कौन-सा रक्त किससे श्रेष्ठ है, इसका कोई प्रमाण नहीं है।

(3) मानसिक योग्यता के आधार पर भी यह उपयुक्त सिद्ध नहीं होता है। कहा जाता है कि नीग्रो लोगों से श्वेत लोगों की बौद्धिक क्षमता उच्च होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु बुद्धि का प्रजाति से कोई सम्बन्ध नहीं। आधुनिक विद्वानों ने यह बात सिद्ध दी है कि यदि पर्यावरण (environment) एकसा हो तो विभिन्न प्रजातिय मानसिक योग्यता में विशेष अन्तर नहीं होगा।

(4) सांस्कृतिक श्रेष्ठता को भी प्रजातीय पूर्वधारणा का आधार नहीं जा सकता। विभिन्न देशों की संस्कृति और सभ्यता के विकास के सम्बन्ध वैज्ञानिक तथ्य उपलब्ध हुए, उनके आधार पर किसी भी प्रजाति की सांस्कृतिक श्रे प्रमाणित नहीं होती। ऐसा कहा जाता है कि गोरी प्रजाति श्रेष्ठ है, लेकिन जब के लोग नंगे जंगलों में घूमा करते थे। उस समय चीन, मिश्र और भारत सभ्यताएँ पर्याप्त विकसित हो चुकी थीं।

उपर्युक्त मूल्यांकन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि प्रजातीय पूर्वधारण कोई औचित्य नहीं है।

(2) **धार्मिक भिन्नता के आधार पर पूर्वधारणा** (Prejudice Invol Religious Differences)—धार्मिक भिन्नता के आधार पर भी 'पूर्वधा का निर्माण होता है। जब धार्मिक विश्वासों के आधार पर विभिन्न धर्म समू श्रेष्ठता या निम्नता पायी जाती है तो उसे धार्मिक पूर्व धारणा कहते हैं। इ आधार पर एक धार्मिक समूह दूसरे से घृणा, अवहेलना या अनादर का भाव करता है। प्रत्येक धर्म में एक अलौकिक शक्ति पर विश्वास किया जाता है उससे सम्बन्धित अनेक प्रकार के धार्मिक आचारों, कृत्यों, नियमों, आदर्शों, उप विश्वासों का पालन किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने ही धर्म को श्रेष्ठ मान और धर्म के नियमों, आदर्शों का ढोंग समझते हैं। इस प्रकार की मनोवृत्ति का परि यह होता है कि विभिन्न धर्म के मानने वाले एक-दूसरे के प्रति अश्रद्धा, असहनशी असहयोग तथा अनादर करने लगते हैं। कभी-कभी तो यह तनाव इतना बढ़ है कि संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। उदाहरण के लिए, हिन्दू-मुस्लिम को ही हम देखते हैं।

अन्य प्रकार का पूवधारणा (Other Types of Prejudices)—(अ) पूर्वधारणाओं में जातीय पूर्वधारणा उल्लेखनीय है। जातीय संरचना में ब्रा जाति को सबसे ऊँचा स्थान प्राप्त है और शूद्रों को सबसे निम्न। ब्राह्मण को अधिक जातीय अधिकार प्राप्त हैं और शूद्रों को समस्त सामाजिक, आर्थिक व धा अधिकारों से वंचित कर दिया गया है। प्रत्येक जाति अपनी जाति के सदस्यों अधिकतम सुविधाएँ प्रदान करने का प्रयत्न करती है। नौकरी, नियुक्तियों एवं चु में भी जातिवाद का प्रभाव स्पष्ट दिखायी देता है।

(ब) राजनैतिक पूर्वधारणा भी पूर्वधारणा का एक दूसरा रूप है। प्र राजनैतिक दल का सदस्य अपने दल के आदर्शों, नियमों और सिद्धान्तों को ही श्रेष्ठ मानता है और अन्य दलों को भ्रष्टाचार और घृणित बताता है। इस प्र की पूर्वधारणा सत्तारूढ़ दल में ज्यादा होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ह) भाषा के आधार पर भी पूर्वधारणा का निर्माण होता है। प्रत्येक भाषा करने वाला समूह अपनी भाषा को ही अन्य भाषाओं में श्रेष्ठ समझता है। हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करने में सबसे बड़ी रुकावट यही है। भाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं की बुराइयों के सम्बन्ध में प्रचार

(द) आर्थिक वर्गों में सर्वहारा या श्रमिक वर्ग के मन में पूँजीपति वर्ग के पूर्ण मनोभाव पाये जाते हैं। यह आर्थिक पक्षपात के कारण ही पाया जाता कों की यह धारणा होती है कि हमारे परिश्रम से पूँजीपति वर्ग दिन पर दिन जा रहा है और हम निम्न होते जा रहे हैं। हमारे सारे कष्टों का त्व पूँजीपति वर्ग को ही है, क्योंकि वे परिश्रम के अनुसार पारिश्रमिक नहीं सी धारणा के कारण श्रमिक वर्ग में कटुता का भाव पैदा हो जाता है और वर्ग भी श्रमिकों के प्रति अवहेलना और अनादर का भाव रखने लगते हैं।

पूर्वधारणा के कारण
(Causes of Prejudice)

पूर्वधारणा के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या करने से इसके कारणों के सम्बन्ध कुछ स्पष्टीकरण हो गया है, फिर भी उनकी अलग-अलग व्याख्या करना नहीं होगा। पूर्वधारणा के निम्नलिखित कारण हैं :

(1) पूर्वधारणा के निर्माण के कारण यह हैं कि हम अपने अन्तःसमूह के प्रति प्रकार का मनोभाव रखते हैं। श्री मुज्जे (Muzzey) ने लिखा है कि हमारे विचार सही मालूम होते हैं या वे हमारे अपने विचार होते ही नहीं। स्वीकार करता है कि हमारे समूह का सब कुछ अच्छा है, वह हमारा मित्र है; उन्हें अस्वीकार करता है, वह हमारी दया का भी पात्र नहीं है। हम उसे जाते हैं और उसके प्रति विशेष प्रतिकूल मनोभाव विकसित कर लेते हैं।

(2) अशिक्षा व कुसंस्कार के कारण भी पूर्वधारणाओं का निर्माण होता है इन दोनों कारणों से दृष्टिकोण संकुचित हो जाता है।

(3) सामाजिक प्रथाओं, निषेधों एवं नियमों के कारण भी पूर्वधारणा का होता है। ये व्यक्ति से एक निश्चित ढंग से व्यवहार करने की आशा करते यह व्यवहार प्रत्येक समूह के अनुकूल नहीं हो सकते हैं, ऐसी अवस्था में पूर्व-पनप जाती है।

(4) धार्मिक रूढ़िवादिता के कारणा भी पूर्वधारणा का निर्माण होता है, इस आधार पर हम अपने ही धर्म को सर्वोत्तम समझ लेते हैं जबकि दूसरे प्रति अश्रद्धा और अनादर का भाव रखते हैं।

(5) आर्थिक और सामाजिक असमानता के कारण भी पूर्वधारणा का जन्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है। इन असमानताओं के कारण सामाजिक दूरी बढ़ती है और वे एक दूसरे निकट से पहचान नहीं पाते।

(6) जातीय अथवा प्रजातीय विभेदों के कारण भी पूर्वधारणा का होता है। कुछ जातियों या प्रजातियों में श्रेष्ठता की भ्रान्ति पनप जाती है और दूसरी जातियों के प्रति पक्षपातपूर्ण व्यवहार करने लगते हैं।

(7) सामाजिक रुचि, व्यवहार शिष्टाचार आदि की भावनापूर्ण धार को बढ़ावा देती हैं। कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो उच्च स्तर की सामाजिक रुचि रखते हैं और दूसरे की रुचियों को निम्न दृष्टि से देखते हैं। ऐसे ही कुछ वास्तवि या काल्पनिक व्यवहार भी श्रेष्ठता की भावना को जन्म देते हैं; जैसे—शहर लोग गाँव वालों को गँवार कहते हैं।

क्या पूर्वधारणा जन्मजात प्रवृत्ति है ?
(Is Prejudice an Inborn Tendency)

पहले ऐसा समझा जाता था कि पूर्वधारणा एक जन्मजात प्रवृत्ति है, पर आधुनिक अध्ययनों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि पूर्वधारणा सीखा हुआ व्यवह है। पूर्वधारणा भी एक प्रकार का सामाजिक व्यवहार है और अन्य सामाजि व्यवहार सीखे जाते हैं, अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि पूर्वधारणाओं को सीखा जाता है। पूर्वधारणाओं की रूपरेखा कैसी होगी, यह पर्यावरण पर नि है। पूर्वधारणा के सम्पर्क में रहकर हम में भी पूर्वधारणा का निर्माण होगा। कि भी पूर्वधारणा का विवेचन करने के लिए उसकी सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि समझना नितान्त आवश्यक है। ब्राह्मण परिवार में पैदा हुआ बच्चा हरिजनों के प्र पूर्वधारणा निर्मित कर सकता है, लेकिन उसी परिवार का बच्चा जन्म के बाद यदि अमरीका भेज दिया जाय तो वह हरिजनों से नहीं बल्कि नीग्रो प्रजाति के प्र ऐसी पूर्वधारणा निर्मित करेगा।

पूर्वधारणा जन्मजात प्रवृत्ति नहीं है, इस बात को प्रमाणित करने के लि अमरीका में अनेक अध्ययन किये गये। एक अध्ययन में प्राइमरी कक्षाओं में पढ़ने वा सभी प्रजातियों के बच्चों से पूछा गया कि तुम किसके साथ बैठना पसन्द करोगे। इ अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि बच्चों की पसन्द का कोई भी सम्बन्ध प्रजाति धर्म से नहीं था। नीग्रो बच्चों के साथ अमरीकी बच्चे भी बैठने को तैयार थे।

पूर्वधारणा के परिणाम
(Consequences of Prejudice)

पूर्वधारणा राष्ट्र कल्याण के लिए हानिकारक है, क्योंकि यह एक सामाजि व्यवहार है। इसलिए इसका प्रभाव सम्पूर्ण सामाजिक जीवन पर पड़ता है। इस कारण व्यक्तिगत सम्बन्ध के साथ सामाजिक विघटन भी होने लगता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वधारणा के कारण समाज अनेक खण्डों में विभक्त हो जाता है और प्रत्येक के सदस्यों के हृदय में दूसरे समूहों के प्रति घृणा, द्वेष अश्रद्धा आदि के भाव जाते हैं जिसके कारण सामाजिक एकता व संगठन पनप नहीं पाते ।

पूर्वधारणाओं के कारण औद्योगिक विकास एवं आर्थिक उन्नति के रास्ते में वटें पैदा होती हैं । पूर्वधारणा के कारण ही श्रमिक और पूँजीपति वर्ग में संघर्ष होता रहता है और हड़ताल, तालाबन्दी इत्यादि सामान्य घटनाएँ हो हैं। इस प्रकार आर्थिक उन्नति में भी पूर्वधारणा हानिकारक है ।

प्रजातन्त्र क विकास में भी-'पूर्वधारणा' एक बहुत बड़ी भाषा है, क्योंकि इसका अल्पसंख्यक वर्ग पर ही होता है । अल्पसंख्यकों के प्रति घृणा या अवहेलना रखने से वे अपने को राष्ट्र से अलग समझने लगते हैं । इस प्रकार न तो स्वाभाविक विकास हो पाता है और न प्रजातन्त्र का स्वस्थ विकास ही ता है ।

(Conclusion)

उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट हो गयी कि सामाजिक, राष्ट्रीय प्रगति और निर्माण के लिए 'पूर्वधारणा' एक बहुत बड़ी रुकावट है । इसको दूर करने की कता है । इसके लिए इस प्रकार की शिक्षा दी जाय कि लोगों के मस्तिष्क से इस की संकीर्णताएँ दूर हो सकें । यदि विभिन्न समूहों में आपस में वैवाहिक सम्बन्ध किए तो इस प्रकार की संकीर्णता बहुत कम हो जाती है। धर्म की इस प्रकार दी जाय कि उनके कुसंस्कार, रूढ़िवादिता और धार्मिक संकीर्णता दूर हो सके । जनमत के निर्माण के द्वारा प्रजातीय श्रेष्ठता को दूर करने का भी प्रयास होना । संक्षेप में, यह कहना उचित होगा कि पूर्वधारणा समाज के लिए घातक है । इसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए ।

प्रश्न

1. पूर्वधारणा का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कीजिए ।
(Give a psychological analysis of prejudice.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

40

रूढ़युक्तियाँ
(Stereotypes)

रूढ़युक्तियाँ (stereotypes) शब्द का प्रयोग मनोविज्ञान में सर्वप्रथम सन् 1920 में वाल्टर लिपमैन (Walter Lippman) ने अपनी पुस्तक 'पब्लिक ओपिनियन' में किया। इसका शाब्दिक अर्थ होता है—'एक तश्तरी जो साँचे का काम करती है। एक साँचा उस प्रकार की अनेक वस्तुओं को ढाल सकता है, जो सब एक सी ही होती हैं। मनोवैज्ञानिकों ने इसे उन शारीरिक मुद्राओं, मुख-मुद्राओं तथा शब्दों के लिए प्रयोग किया जो डिमैन्शिया प्रीकौक्स (dementia precox) मानसिक रोग से ग्रसित रोगी बार-बार दुहराता है। लिपमैन ने इसी भाव को और भी अधिक विकसित किया। उसने इसका प्रयोग उन विचारों तथा वृत्तियों के लिए किया जो एक बार जागृत होते ही हमारे मस्तिष्क में एक चित्र एवं प्रतिमा अंकित कर देती हैं। लिपमैन ने सम्पूर्ण मानसिक सम्बन्धों (the whole apperceptive mass) के रूप में प्रयोग किया।

रूढ़युक्तियाँ की परिभाषा
(Definition of Stereotypes)

समाज मनोविज्ञान में इसका अर्थ मानसिक प्रत्यय से है। किम्बाल यंग ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "इसकी सबसे अच्छी परिभाषा इस रूप में की जा सकती है कि यह एक प्रत्यय (concept) है, जिसके द्वारा हम (अन्य व्यक्तियों) का एक मिथ्या वर्गीकरण कर देते हैं। एवं इसके साथ सदैव हमारी रुचि, अथवा अरुचि तथा स्वीकृति अथवा अस्वीकृति की तीव्र संवेगात्मक भावनाएँ जुड़ी रहती हैं।"[1] चार्ल्स बर्ड ने लिखा है : "Stereotyped responses are perception or meaningful arrangement of ideas having their origin primarily in feelings and emotions rather than in some characteristics of the stimulating circumstances."[2]

---

1 "......it is best defined as a false classificatory concept to which as a rule, some strong emotional feeling tone of like or dislike approval disapproval, is attached." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 275.

2 Charles Bird, *Social Psychology*, p. 289.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक मनोविज्ञान में यह मानसिक तस्वीर का बोधक होता है। मस्तिष्क तस्वीर बन जाती है और व्यक्ति उसी के अनुसार कार्य करता है।

इसके अनेक उदाहरण हैं जिनके द्वारा इसे समझा जा सकता है। रूढ़युक्ति एक का मिथ्या प्रत्यय है। हमारे मस्तिष्क में एक चित्र बन जाता है और हम उसी अनुसार बिना सोचे-समझे व्यवहार करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई हमसे कि 'ये सज्जन मोगांव के रहने वाले हैं' तो हम उसे बेवकूफ समझते हैं। रपुर भी मूर्खता के लिए बदनाम है। बिना सोचे-समझे हम इन लोगों को मूर्ख लेते हैं।

कानपुर, इलाहाबाद, लखनऊ, वाराणसी की ओर यदि कोई असभ्य व्यवहार ता है तो कहते हैं 'बलियाटिक है, अर्थात बलिया का रहने वाला है। इसका प्राय यही है कि हमारे मस्तिष्क में यह चित्र बना हुआ है कि बलिया के लोग भ्य होते हैं। यह यद्यपि सत्य नहीं है, फिर भी एक चित्र बन गया है।

इसी प्रकार विभिन्न समूहों या व्यक्तियों के लिए ऐसी रूढ़युक्तियाँ बन जाती एक हिन्दू जब मुसलमान या ईसाई को देखता है तो पहले 'म्लेच्छ' चित्र उसके स्तिष्क में आता है। फिर यह कि इसका नाम नवाजखाँ या विलियम है। इसी कार एक मुसलमान जब हिन्दू को देखता है तो पहले 'काफिर' का चित्र आता है र फिर यह कि यह श्यामनारायण है या सुशीलनारायण। इसी प्रकार अन्य देशों भी होता है। अमरीका में नीग्रों को ही लीजिए। पहले उसे श्वेत लोग 'निगर' हेंगे और फिर उसका नाम इत्यादि। किम्बाल यंग ने लिखा है, "A Negro is ot Mr. Thomas Johnson, but first a 'Nigger' and than Tom. In he south, white, men seldom if ever consider that Negroes have family names."[1] इसी प्रकार इटली के निवासियों को यूरोप में 'वाप' (wop) ढ़युक्ति से सम्बोधित करते हैं। किम्बाल यंग ने लिखा है, "...... ...a person is a wop' first and than Signor Geoletti, the merchant, or a coloured man is a 'Nigger" first and then an individual."[2]

रूढ़युक्तियाँ बड़ी प्रबल होती हैं। हमारे देश में अस्पृश्यता एवं जात-पात हटाने का इतना प्रयत्न हुआ है फिर भी एक केन्द्रीय मन्त्री के बारे में लोग आज भी कहते सुने जाते हैं, 'देखो चमरट्टे को क्या मिलता है!'

रूढ़युक्ति और अभिवृत्ति
(Stereotype and Attitude)

रूढ़युक्ति और अभिवृत्ति में घनिष्ठ सम्बन्ध है। ये दोनों ही मानसिक

---

1 K, Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 275.
2 *Ibid*, p. 275.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धारणाएँ हैं। संवेगात्मक भाव दोनों में पाया जाता है। मनुष्य के व्यवहार पर दोनों ही प्रभाव डालते हैं :

अभिवृत्ति मानसिक झुकाव है और रूढ़युक्ति वह चित्र है जिसमें अभिवृ... व्यक्त होती है। दोनों एक ही प्रक्रिया के दो सम्बन्धित पक्ष हैं। अभिवृत्ति पक्ष... विपक्ष में होती है। अभिवृत्ति के आधार पर रूढ़युक्ति का निर्माण होता है।

रूढ़युक्ति की मानसिक तस्वीर की नींव बड़ी गहरी एवं मजबूत होती है... यह निरन्तर बनी रहती है और बड़ी कठिनाई से समाप्त होती है। इसे हम लकी... का फकीर भी कह सकते हैं।

रूढ़युक्ति और पूर्वधारणा
(Stereotype and Prejudice)

रूढ़युक्ति और पूर्वधारणा में बहुत साम्यता है और इनमें प्रकार का अन्त... नहीं है। इनमें मात्रा का अन्तर है। पूर्वधारणाएँ रूढ़युक्तियों की विस्तृत रूप हैं। ज... जनसमूह के सम्बन्धित रूढ़युक्तियों के साथ पौराणिक कथाएँ, ऐतिहासिक घटना... लोक गाथाएँ इत्यादि जुड़ जाती हैं, तथा वे जनसमूह में व्यापक हो जाती हैं, तो उन... पूर्वधारणाएँ कहने लगते हैं। रूढ़युक्तियाँ पूर्वधारणा का प्रकाशन करती हैं। पूर्व... धारणा वह मानसिक क्रिया है जिनका प्रकाशन रूढ़युक्ति द्वारा होता है। इस प्रका... इन दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है।

रूढ़युक्तियाँ और वास्तविकता
(Stereotypes and Reality)

रूढ़युक्तियों के कुछ उदाहरण—"पुलिस वाले घूसखोर होते हैं, कम्यूनिस्ट... बेईमान होते हैं, अपराधियों के चेहरे भयानक होते हैं, जजों के ललाट चौड़े और ऊँचे... होते हैं, बनिया कंजूस होता है, शूद्र नीच व गन्दे होते हैं, इत्यादि।"

हमारे मस्तिष्क में कुछ मानसिक चित्र बन जाते हैं। कुछ हद तक इनमें सच्चाई भी हो सकती है, पर हम इनका सामान्यीकरण कर देते हैं। इस कारण ये... वास्तविकता से दूर हो जाते हैं। जिनके मस्तिष्क में ये चित्र बन जाते हैं, वे इन्हें सच्चा समझते हैं।

कभी-कभी कोई रूढ़युक्ति सच्ची भी हो सकता है, जो तर्कों पर आधारित हो, पर ऐसा बहुत कम होता है। प्रायः एक या दो व्यक्तियों के व्यवहार को लेकर सामान्यीकरण कर दिया जाता है। उसके पीछे वैज्ञानिक आधार नहीं होता।

रूढ़युक्तियों के प्रकार

रूढ़युक्तियाँ दो प्रकार की होती हैं : (1) व्यक्तिगत और (2) सामूहिक। हम कहते हैं कि 'मुसलमान गन्दे होते हैं, यह सामूहिक रूढ़युक्ति है। सभी हिन्दू इसी प्रकार सोचते हैं। कृष्ण की धारणा है कि अध्यापक अत्याचारी होते हैं। यह व्यक्तिगत रूढ़युक्ति है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूढ़युक्तियों का निर्माण

रूढ़युक्तियों का निर्माण निम्न कारकों पर आधारित है :

(1) अज्ञानता (ignorance);
(2) सूचना का अभाव (lack of information);
(3) असफलता (failure);
(4) प्रतिष्ठा सुझाव (prestige suggestion);
(5) सांस्कृतिक परम्परा (cultural tradition);
(6) कटु अनुभव (bitter experience)·
(7) समय का अभाव (lack of time);
(8) सम्बन्धों का अभाव (lack of contract)।

इन कारकों के कारण रूढ़युक्तियों का निर्माण होता है। हम बचपन से जो ...ते हैं, उसे मान लेते हैं और उस पर विशेष विचार नहीं करते।

...में रूढ़युक्तियों का लाभ

रूढ़युक्तियों का समाज में लाभ भी है। मुख्य लाभ निम्न हैं:

(1) **रूढ़युक्तियाँ मानव व्यवहार की निर्देशक हैं**—रूढ़युक्तियाँ मानव ...व्यवहार को निर्देशित करती हैं। व्यक्ति के पास आजकल अधिक समय नहीं है और ...तरह-तरह के लोगों से मिलता है। ऐसे अवसरों पर ये व्यवहार को निर्देशित ...ती हैं।

(2) **रूढ़युक्तियाँ प्रतिमाएँ प्रदान करती हैं**—रूढ़युक्तियाँ व्यक्ति को प्रति...एँ प्रदान करती हैं। 'पंजाबी झगड़ालू होते हैं' यह तस्वीर हमें व्यवहार करने में ...हायता करती है। पंजाबी से जरा सँभलकर ही व्यवहार करते हैं। उत्तर प्रदेश ...राजस्थान में लोग पंजाबियों को अपना मकान तक किराये पर नहीं देते थे।

(3) **रूढ़युक्तियाँ भविष्यवाणी करने में सहायक होती हैं**—भविष्यवाणी ...रूढ़युक्तियों के सहारे की जा सकती है। उदाहरण के लिए, 'गुरखे अच्छे बहादुर ...सिपाही होते हैं' इस रूढ़युक्ति के सहारे गुरखों के सम्बन्ध में भविष्यवाणी की जा ...ती है।

(4) **रूढ़युक्तियाँ व्यवहार पर नियन्त्रण करती हैं**—रूढ़युक्तियाँ हमारे ...व्यवहार पर नियन्त्रण भी करती हैं। हम उनके अनुसार अपना व्यवहार रखते हैं।

(5) **रूढ़युक्तियाँ प्रचार में सहायक होती हैं**—(अ) 'नन्दा के सौन्दर्य का ...रहस्य—लक्स टॉयलेट साबुन' (ब) 'अशोक कुमार की सदा बहार जवानी—...रालिक्स'।

इस प्रकार व्यावसायिक प्रचार करते हैं और रूढ़युक्तियों का सहारा लेते हैं। रूढ़युक्तियाँ तर्क पर आधारित नहीं होतीं। जोसेफ कानरेट (Joseph)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Conrad) ने कहा था, "He who want to persuade should put trust not in the right argument, but in the right word........Give me the right word and the right accent, and I will move the world."

रूढ़युक्तियों का प्रयोगात्मक अध्ययन

राइस (Rice) ने अपने अध्ययन से यह सिद्ध किया कि रूढ़युक्ति रूपी मानसिक प्रतिमाएँ हमारे मस्तिष्क में रहती हैं।[1] राइस ने कुछ चित्र छाँटे, जिनके व्यवसाय थे—यूरोप के देश का प्रधानमन्त्री, श्रमिकों का नेता, रूस का राजदूत, साहूकार, गवर्नर, अमरीका की सीनेट का सदस्य, मिल मालिक। उसने ये तस्वीरें अपने विषयों (subjects) को दिखायीं और व्यवसाय भी बता दिये। फिर उनसे पूछा कि बताइए कौन-सा चित्र किस व्यवसाय वाले का है। लोगों के मन में कुछ चित्र पहले से ही रहते हैं। उदाहरण के लिए, राजदूत दाढ़ी और मूँछों वाले होते हैं; मिल मालिक अच्छे कपड़ों में होगा इत्यादि। लोगों ने इन्हीं प्रचलित रूढ़युक्तियों के आधार पर चित्रों को पहचाना। इस अध्ययन से स्पष्ट है कि हमारे मस्तिष्क में पहले से ही तस्वीरें रहती हैं।

शेरिफ ने भी एक ऐसा ही परीक्षण किया।[2] लिखी हुई सामग्री कई बार तटस्थ होती हैं और लेखक के नाम पर हम उसे अच्छा या बुरा कहते हैं। शेरिफ ने स्टीवेन्सन के लेखों में से कुछ भाग छाँटे और उन्हें 16 लेखकों के नामों के साथ जोड़ दिया। लोगों ने वही लेख पसन्द किये जिनके साथ उनकी पसन्द के लेखकों के नाम जुड़े हुए थे। वास्तव में सब एक ही लेखक के थे। इससे स्पष्ट है कि हमारे मस्तिष्क में रूढ़युक्तियाँ रहती हैं।

कैज तथा ब्रेली ने भी एक प्रयोग किया।[3] इन्होंने यह सिद्ध किया है कि विश्वविद्यालयों में विद्यार्थी भिन्न-भिन्न प्रजाति तथा राष्ट्र के लोगों को कुछ विशेषणात्मक सम्बोधन देते हैं। इन्होंने प्रिस्टन विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से ऐसे विशेषणों की सूची माँगी जो उनका चित्रण कर सके। इस प्रकार प्राप्त किए 84 विशेषण उन्होंने 100 विद्यार्थियों के सम्मुख रखे और विभिन्न राष्ट्रों पर लागू होने वाले विशेषणों को लिखने को कहा। इस प्रकार भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के लोगों के गुणों का चित्रण करने वाले विशेषणों के निरीक्षण के आधार पर वह दोनों लेखक इस परिणाम

---

1 S. A. Rice, *Stereotypes—A Source of Error in Judging Human Character*, J. Person Res. (1926), 5, pp 267-76).

2 Sherif, *An Experimental Study of Stereotype*, J. Abn. Soc. Psy. (1935), 29, pp. 371-75.

3 Katz and Braly, *Racial Stereotypes of 100 College Students*, J. *Abn. Soc. Psy.* (1933), 20, pp. 280-90.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुँचे कि छात्रों द्वारा दिये गए विशेषण विभिन्न समाचार पत्रों में प्रयोग किये विशेषणों से मिलते थे। इससे सिद्ध होता है कि रूढ़युक्तियाँ हमारे मस्तिष्क में ती हैं।

लम्ब्रासो (Lombroso) ने, अपराधियों के चेहरे पर दाग होते हैं, के लिए सामग्री एकत्रित की थी।

होरोविजों (E. L. Horowitz and R. E. Horowitz) के अध्ययन में ने एक फोटो में बदसूरत औरत को एक सजे-सजाये कमरे में दिखाया। बच्चों कि उन्होंने फोटो में क्या देखा। उन्होंने जवाब दिया कि एक नीग्रो औरत है और नौकरानी का काम कर रही है। इन बच्चों के अनुसार नीग्रो औरत के कार्य के अलावा क्या कर सकती हैं? अमरीकन बच्चों के मन में यह युक्ति विराजमान ।

प्रश्न

1. रूढ़युक्तियाँ क्या होती हैं? इनकी समाज में क्या उपयोगिता है? (What are stereotypes ? What is the utility of stereotypes in society ?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

41

जनप्रवाद (अफवाह)
(Rumour)

औरत ने कहा
औरतों ने कहा
औरतों ने औरतों से कहा
औरतों ने और औरतों से कहा
और औरतों ने और और औरतों से कहा
और और औरतों ने और और औरतों से कहा—शहर में हैजा फैल गया।

—कैलाश बाजपेयी

जनप्रवाद एक सामूहिक व्यवहार है। कभी-कभी हममें से बहुत से लोग एक आतंकित परिस्थिति या समस्या को समझने के लिए व्याकुल हो उठते हैं। ऐसी स्थिति में जनप्रवाद का जन्म होता है। जनप्रवाद के उत्पन्न होने के पश्चात जनसमूह का प्रत्येक सदस्य उस आतंकित परिस्थिति के कारणों को समझने का प्रयास करता है। समूह के सभी सदस्य उस परिस्थिति के कारणों को जानने के विषय में सूचनाएँ इकट्ठी करने लगते हैं। इस सूचना इकट्ठी करने की प्रक्रिया के अन्तर्गत समूह के सदस्यों में आपस में सूचनाओं का आदान-प्रदान होने लगता है। इस आदान-प्रदान के कारण ही पूर्ण समूह जनप्रवाद से प्रभावित हो जाता है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि समूह का कोई सदस्य समूह के सम्मुख एक नया विचार प्रस्तुत करता है, जो उस आतंकित परिस्थिति के कारणों पर थोड़ा या बहुत प्रकाश डालता हो। उस समूह के बहुत से सदस्य उस विचार को स्वीकार कर लेते हैं। केवल स्वीकार ही नहीं करते, वरन इस विषय में अपनी जानकारी को समूह के सदस्यों से कहने के इच्छुक भी होते हैं। समूह के सदस्य उनकी इन जानकारियों को इतना अतार्किक रूप में यूँ स्वीकार कर लेते हैं कि उस समय अमुक परिस्थिति के सम्बन्ध में किसी प्रकार की सूचना प्राप्त होनी दुर्लभ होती है। अतः यही कारण है कि सूचनाओं के आदान-प्रदान के परिणामस्वरूप समूह का प्रत्येक सदस्य जनप्रवाद से प्रभावित हो जाता है।

इतिहास के किसी भी युग को उठाकर देख लीजिए जनप्रवादों के विषय में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उदाहरण मिलेंगे। भारत में द्वितीय विश्वयुद्ध के अवसर पर सन् 1942 में छोड़ो' सत्याग्रह के अवसर पर और 1947 में भारत-विभाजन के अवसर पर प्रकार के जनप्रवादों के उदाहरण मिलते हैं। अभी पिछले साल ही अष्टग्रह होने और प्रलय होने की सुनी जा रही थी। अतः कहने का तात्पर्य यह है कि समाज में कोई महत्त्वपूर्ण जटिल समस्या उद्दीप्त होती है, उस समय जनप्रवाद दुर्भाव होता है। अब हम अगले पृष्ठों में समाज मनोविज्ञान की दृष्टि से वाद का अध्ययन करेंगे।

जनप्रवाद का अर्थ
(Meaning of Rumour)

जब कभी समाज में कोई महत्त्वपूर्ण जटिल समस्या उत्पन्न हो जाती है उस समाज के संगठन के प्रतिकूल सामाजिक व्यवस्था होने की सम्भावना रहती है। में एक प्रकार का असामान्य तनाव निहित होता है। कभी-कभी उस समस्या रण तनाव इस हद तक बढ़ जाता है कि युद्ध के बादल मंडराते हुए प्रतीत होते ऐसी स्थिति में समाज के सदस्यों की एक अनोखी परिस्थिति होती है। प्रत्येक उस समस्या के हल करने में उत्सुक-सा दिखायी पड़ता है। उस समस्या का धान करने के लिए समाज में एक व्यक्ति दूसरे से वार्तालाप करता है। व्यक्ति समस्या के कारणों को जानने का प्रयास करते हैं। कारणों को संग्रहीत करने क सूचनाएँ संग्रह करते हैं। कभी-कभी समस्या इतनी गम्भीर और जटिल हो जाती सूचनाओं के संग्रह करने और आदान-प्रदान करने में भी रुकावट पायी जाती केवल यही नहीं, सदस्यों के मिलने-जुलने पर भी रुकावट होती है। ऐसी परि- स्थितियों में व्यक्ति सूचनाएँ अपने मन से गढ़ने लगते हैं। यही नहीं, वरन वे उन गढ़न्त सूचनाओं को और बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन करने लगते हैं। ऐसी ही मनगढ़न्त सूचनाओं को जनप्रवाद कहते हैं। यह अवश्य है कि इन सूचनाओं में कुछ सत्य का होता है किन्तु उन्हें प्रमाणित नहीं किया जा सकता।

जनप्रवाद की परिभाषाएँ
(Definitions of Rumour)

जनप्रवाद की परिभाषा करते हुए जेम्स ड्रीवर ने लिखा हैं, "जनप्रवाद एक प्रमाणित कहानी होती है जो किसी घटना के होने के सम्बन्ध में फैलती है।"[1]

पोस्टमैन तथा आलपोर्ट ने जनप्रवाद की परिभाषा इन शब्दों में की है "A rumour is a specific (or topical) preposition for belief.

---

[1] Rumour is an unverified story, circulating in a community, alleging the occurrence of a certain event." J. A. Drever, *Dictionary of Psychology*, p. 250.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

passed along from person to person, usually by word of mouth without secure standards of evidence being present."[1]

उपर्युक्त दोनों परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जनप्रवाद का प्रसार उस समय स्वाभाविक हो जाता है जब कोई विशेष जटिल समस्या जनता के प्रमुख आ जाए और जनता यह न समझ सके कि अब आगे क्या होगा। ऐसी स्थिति में जनप्रवाद बड़ी तीव्र गति से फैलता है। जनप्रवाद को प्रमाणित नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त जनप्रवाद फैलने की एक मुख्य आधारशिला विश्वास है। यदि कोई व्यक्ति किसी सूचना के विषय में विश्वास न करे तो उसके ऊपर जनप्रवाद का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। जनप्रवाद के प्रसार का मुख्य साधन वार्तालाप है। उदाहरण, 'किसी औरत ने किसी और औरत से कहा।'

किसी और औरत ने किसी दूसरी और औरत से कहा, किसी दूसरी और औरत ने किसी तीसरी और औरत से कहा—इस प्रकार जनप्रवाद बहुत तीव्र गति से फैलता जाता है। यद्यपि जनप्रवाद को फैलाने वाला व्यक्ति यह तो कह देता है कि 'किसी से सुना है' यह कभी नहीं कह सकता कि अपनी आँखों से देखा और अपने कानों से सुना है। किन्तु जनप्रवाद फैलाने वाले का उद्देश्य यह होता है कि जो कुछ वह कह रहा है उसमें सत्यता का अंश अवश्य सम्मिलित है।

जनप्रवाद की विशेषताएँ
(Characteristics of Rumour)

जनप्रवाद में निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैं :

(1) **महत्त्वपूर्ण तथा जटिल समस्या का उत्पन्न होना** (Growth of Important and Ambiguous Problems)—जनप्रवाद की उत्पत्ति के लिए किसी महत्त्वपूर्ण और जटिल समस्या का उपलब्ध होना अति आवश्यक है। दंगा फसाद, अकाल, भूकम्प, युद्ध आदि के कारण जनप्रवाद का प्रादुर्भाव होता है।

(2) **समस्या को हल करने में सहयोगात्मक प्रक्रिया** (Co-operational Process to Solve the Problem)—जब किसी समूह के सम्मुख कोई विशेष महत्त्वपूर्ण और जटिल समस्या उत्पन्न हो जाती है तो समूह के सब सदस्य उसको हल करने में सक्रिय भाग लेने के लिए उत्सुक रहते हैं। इस समस्या का समाधान करने के लिए सहयोगात्मक प्रतिक्रिया होती है। समूह के सभी सदस्य समस्या के हल करने के विषय में चिन्तन शुरू कर देते हैं और इस विषय में सूचनाएँ संगृहीत की जाती हैं और इनका व्यक्तियों में आदान-प्रदान आरम्भ हो जाता है।

(3) **आदान-प्रदान प्रक्रिया में सूचना का विकृत रूप** (Modified Form of Information in the Process of Media)—सूचना की आदान-प्रदान

1 G. W. Allport and L. Postman, *The Psychology of Rumour* (1948), p. 9.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रिया में वास्तविक सूचना का स्वरूप परिवर्तित हो जाता है क्योंकि जब कोई समस्या या घटना के विषय में किसी दूसरे व्यक्ति से बढ़ा-चढ़ाकर कहता रा व्यक्ति तीसरे को, तीसरा चौथे को उससे अधिक बढ़ा-चढ़ाकर बताता यही कारण है कि वास्तविक स्थिति के तथ्य अत्यन्त विकृत रूप धारण कर है।

(4) **समाज कल्याण की भावना** (**Feeling of Social Walfare**)—वाद की एक विशेषता यह भी होती है कि इसकी आदान-प्रदान की प्रक्रिया में कल्याण की भावना भी निहित होती है। क्योंकि एक समूह के सभी व्यक्ति समय एक प्रकार के सामान्य वातावरण में होते हैं और एक सदस्य समूह के दूसरे सदस्य को अपना साथी समझकर या अपनी सहानुभूति उसके प्रति दिखा उस अमुक दुर्घटना से बचने की भावना के विषय में उसको सूचना देता है। अतः तीसरे को और तीसरा चौथे को बता देता है। संक्षेप में, जनप्रवाद समाज ण की भावना से भी प्रेरित होकर फैलता है।

जनप्रवाद को फैलाने वाली परिस्थितियाँ
(Situations Leading to Spread Rumours)

उपर्युक्त विवरण में अभी हमने जनप्रवाद के स्वरूप और उसकी विशेषताओं ध्ययन किया है। अब हम उन परिस्थितियों का अध्ययन करेंगे जो जनप्रवाद के ण और प्रसार में सहायक होती हैं। ये परिस्थितियाँ तीन हैं :

(क) समाज सम्बन्धी समस्या (general issue);
(ख) महत्त्व (importance);
(ग) जटिलता (ambiguity)।

(क) **समाज सम्बन्धी समस्या** (**General Issue**)—जनप्रवाद का निर्माण सार किसी व्यक्तिगत समस्या के कारण नहीं होता। जनप्रवाद फैलने के लिए ऐसी समस्या होनी चाहिए जो समाज से सम्बन्धित हो। अतः जनप्रवाद का र्भाव किसी व्यक्तिगत कारण स्वरूप न होकर समाज सम्बन्धी समस्या के कारण ा है। अकाल, भूकम्प, युद्धादि समस्याओं के कारण जनप्रवाद का प्रादुर्भाव होता योंकि इन समस्याओं का सम्बन्ध किसी समाज या राष्ट्र से होता है। अतः प्रवाद का मुख्य आधार कोई सामान्य समस्या (general issue) होती है। इसी ार पर जनप्रवाद का निर्माण और प्रसार होता है।

(ख) **महत्त्व** (**Importance**)—सामान्य समस्या के साथ-साथ परिस्थिति समस्या का महत्त्व जनप्रवाद के प्रसार व निर्माण के लिए बहुत आवश्यक होता । जिस परिस्थिति या समस्या के आधार पर जनप्रवाद का प्रसार होता है, वह माजिक, आर्थिक, नैतिक एवं राजनैतिक आदि दृष्टिकोण से बहुत महत्त्वपूर्ण होती । इसी कारण प्रत्येक सदस्य समाज में जनप्रवाद के प्रसार और निर्माण में भाग ता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ग) जटलत (Ambiguity)—तीसरी महत्त्वपूर्ण परिस्थिति, जिसके कारण जनप्रवाद का निर्माण व प्रसार होता है, परिस्थिति की जटिलता है। उस परिस्थिति में वास्तविक घटना को बढ़ा-चढ़ाकर अर्थात विकृत रूप में वर्णन किया जाता है, क्योंकि समस्या के वास्तविक कारणों का ज्ञान नहीं होता। समस्या का वास्तविक रूप न मालूम होने के कारण समस्या जटिल हो जाती है और लोगों के आदान-प्रदान की प्रतिक्रिया में समस्या के वास्तविक तथ्यों में और जटिलता आ जाती है। इसके कारण व्यक्ति निरर्थकता के अन्धकार में फँस जाता है। अत: उस निरर्थकता को दूर करने के लिए वह स्वकल्पित रूप से व्याख्या करने का प्रयास करता है। ऐसी ही परिस्थितियाँ सन् 1942 के आन्दोलन और सन् 1947 के हिन्दू-मुस्लिम दंगे के अवसर पर उत्पन्न हो गयी थीं। उस समय ऐसी जटिल परिस्थितियों में जनप्रवाद प्रचलित हो गये थे।

इस प्रकार जनप्रवाद के निर्माण व प्रसार में सामान्य समस्या, महत्त्व और जटिलता होती है। वास्तव में जनप्रवाद को पूर्णतया निराधार या एक कथामात्र नहीं समझा जा सकता। उसमें कुछ न कुछ सत्यता का अंश भी अवश्य होता है; किन्तु वह सत्य वार्तालाप के आदान-प्रदान में इतना विकृत हो जाता है कि उस परिस्थिति के सत्य को असत्य से पृथक करना असम्भव हो जाता है। इस विषय में आल्पोर्ट ने लिखा है, "To be sure, in rumour, there is after some residual particle of news, a 'Kernel of truth' but in the course of transmission it has become so overlaid with fanciful elaboration it is no longer separable or detectable."[1]

जनप्रवाद का वर्गीकरण
(Classification of Rumour)

जनप्रवाद के निम्नलिखित वर्गीकरण किए जाते हैं :

(1) भय जनप्रवाद (Fear or Bogy Rumours);

(2) दिवास्वप्नमय जनप्रवाद (Pipe-dream Rumours);

(3) युयुत्सात्मक जनप्रवाद (Wedge-drivers),

(4) औत्सुक्यात्मक जनप्रवाद (Curiosity Rumours)।

(1) भय जनप्रवाद (Fear or Bogy Rumours)—भय जनप्रवाद के निर्माण में भय और सुरक्षा की भावना मूल आधार होती है। क्योंकि भयानक परिस्थिति के कारण और वास्तविक सूचनाओं के अभाव के कारण व्यक्ति की कल्पना सक्रिय हो जाती है। वह हर समय घटना के विषय में सूचनाएँ प्राप्त करना चाहता

1 G. W. Allport and L. Postman, *The Psychology of Rumour* (1948), p. 33.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मी 6 अक्टूबर 1961 के अलीगढ़ वाले दंगे में, जो अलीगढ़ विश्वविद्यालय न हुआ था, अलीगढ़ विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों और अन्य कालेजों के थियों के प्रियजन व सम्बन्धी उनके जीवन की सुरक्षा के सम्बन्ध में चिन्तित थे; जनप्रवाद इतने विकृत रूप में फैल गये थे कि वे सुगमता से ही समझ में आ थे।

(2) दिवास्वप्नमय जनप्रवाद (Pipe-dream Rumours)—दिवास्वप्नमय ाद के प्रादुर्भाव की पृष्ठभूमि में इच्छा और कल्पना निहित होती है। इस ाद के अन्तर्गत लोग अपनी कल्पना और इच्छा के अनुसार जिस बात को हैं उसी प्रकार की कल्पनात्मक सूचनाएँ फैलाते हैं। जैसे, अभी कुछ दिन हुए फवाह उड़ी थी कि भारत और पाकिस्तान एक हो जायेंगे। 18 दिसम्बर को यह अफवाह उड़ी कि गोआ जीत लिया गया जबकि गोआ दो तीन रोज जीता गया था। इस प्रकार की अनेक जनकथाएँ लोगों की इच्छाओं के कारण में आती हैं। कारण यह है कि हम यह चाहते हैं कि हमारी इच्छानुसार कोई प्रकार की घटना घटित हो। इसलिए हम अपनी इच्छा की तृप्ति मनगढ़न्त गढ़ कर करते हैं और उन कथाओं का प्रसार करते हैं। अतः संक्षेप में दिवा-नमय जनप्रवाद के आधार इच्छा और कल्पना हैं।

(3) युयुत्सात्मक जनप्रवाद (Wedge Drivers)—इस प्रकार के जनप्रवाद युत्सात्मक एवं घृणात्मक प्रेरणाएँ निहित होती हैं। इस प्रकार की युयुत्सात्मक घृणात्मक प्रेरणाएँ व्यक्ति में सामाजिक संघर्ष और प्रतियोगिता में उत्पन्न हो हैं। उदाहरण के लिए, जब श्रीमान 'क' अनेक या किसी कारणवश श्रीमान से घृणा करने लगते हैं किन्तु प्रत्यक्ष रूप में उनसे घृणा नहीं कर पाते तो वह र ही अन्दर उस घृणा को दबाये रखते हैं। जब उनका धैर्य समाप्त हो जाता व वह उस घृणा का अप्रत्यक्ष रूप में जनप्रवादों द्वारा प्रचार करके अपनी प्रेरणा सन्तुष्टि कर लेते हैं। जैसे—

"सुरेश तुमने सुना कुछ !"

"नहीं तो।"

"तुम भी अजीब आदमी हो, आफिस आते हो मगर आफिस की दुनिया में नहीं रहते। तुम्हें मालूम है हमारा अफसर कल रिश्वत लेते हुए पकड़ा गया और बरखास्त कर दिया गया।"

"अरे! होश में तो हो?"

"हाँ भाई, होश में हूँ और ठीक कह रहा हूँ। वह आदमी इसी काबिल था। हें नहीं मालूम, वह तो बहुत बदमाश और कमीना है। एक बार मुझे आफिस आने 4 मिनट की देर हो गयी, तो आधे दिन की तनख्वाह काट ली। अब जायेंगे जेल। कोई जैसा करेगा वैसा ही तो भरेगा!"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि अमुक व्यक्ति को अपने अफसर का व्यवहार किसी समय अच्छा न लगा या अफसर उससे बहुत सख्ती से पेश आया। जिसके परिणामस्वरूप उस व्यक्ति को अपने अफसर से घृणा हो गयी और अवसर पाने पर अपने विरोधी (अफसर) पर प्रत्याघात कर बैठा।

(4) औत्सुक्यात्मक जनप्रवाद (Curiosity Rumours)—औत्सुक्यात्मक जनप्रवादों का निर्माण अतृप्त उत्सुकता के ऊपर आधारित होता है। इस प्रकार के प्रवादों की उत्पत्ति व्यक्ति की उत्सुकता के कारण ही होती है। इसलिए इसको औत्सुक्यात्मक जनप्रवाद अथवा उत्सुकताजनक जनप्रवाद कहते हैं। इस प्रकार के जनप्रवाद की उत्पत्ति कुछ ऐस समस्याओं अथवा घटनाओं से होती है जो हमारे लिए महत्त्वपूर्ण होती हैं। जब उन घटनाओं या समस्याओं के सम्बन्ध में हमको पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं होता तो हम सुनी-सुनायी बातों पर विश्वास करने लगते हैं; क्योंकि वे हमारे लिए महत्त्वपूर्ण हैं स्वयं उन घटनाओं का प्रचार अपने मिलने-जुलने वालों में करने लगते हैं।

उदाहरणार्थ :

पहला—"सुना है कि मेरठ के जिलाधीश का तबादला हो रहा है?"

दूसरा—"क्यों ? वह तो योग्य शासक था।"

पहला—"सुना गया है कि उन्होंने इसी चुनाव में बड़ी सख्ती के साथ कानून पालन करवाया था।"

दूसरा—"अरे ! यह तो बुरा हुआ।"

जन-प्रवाद के निर्धारक तत्त्व
(Determinants of Rumour)

जनप्रवाद के मुख्य निर्धारक तत्त्व निम्नलिखित हैं :

(1) परिस्थिति (Situation)—जनप्रवाद के निर्माण में परिस्थिति एक महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्त्व है। परिस्थिति जटिल, सार्वजनिक एवं महत्त्वपूर्ण होती है जिसके कारण लोग उस परिस्थिति की ओर आकर्षित होते हैं। चूँकि परिस्थिति सार्वजनिक होती है। इसलिए समाज का प्रत्येक सदस्य इसमें भाग लेता है। यही कारण है कि इसका क्षेत्र विस्तृत हो जाता है। सदस्यों का क्षेत्र विस्तृत हो जाने के कारण परिस्थिति के विषय मे कथोपकथन की लाइन लग जाती है जिसके फलस्वरूप कल्पित और मनगढ़न्त कथनों की भरमार होती है। इसी कारण जनप्रवाद का जो वास्तविक पुट होता है। वह एक व्यक्ति से दूसरे, दूसरे से तीसरे और तीसरे से चौथे व्यक्ति तक पहुँचते-पहुँचते, इतना कपोलकल्पित (fabricated) और विकृत हो जाता है कि उसका वास्तविक रूप समझना बहुत कठिन होता है; क्योंकि एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को अपनी वास्तविक सुनी हुई या देखी हुई सूचना से कुछ बढ़ा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर ही वर्णन करता है। उदाहरण के लिए, वास्तविक सूचना यह है कि 'रमेश मित्र कैलाश बीमार है।'

पहली परिस्थिति यह है कि "रमेश का मित्र कैलाश बीमार है।"

दूसरी परिस्थिति—जब यह सूचना किसी एक व्यक्ति को मिलती है तो यह किसी मिलने वाले से कहता है कि "रमेश का मित्र कैलाश बहुत बीमार है।"

तीसरी परिस्थिति—जब दूसरा व्यक्ति किसी तीसरे व्यक्ति से मिलता है तो ता है कि "अमुक व्यक्ति बहुत ज्यादा बीमार है। शायद ही बच सके।"

चौथी परिस्थिति—जब तीसरा व्यक्ति रमेश से मिलता है तो कहता है कि लाश आखिरी साँस ले रहा है।"

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि वास्तव में तथ्य तो केवल यह था कि क व्यक्ति बीमार है; किन्तु आदान-प्रदान में परिस्थिति यहाँ तक जटिल हो गयी प्रत्येक व्यक्ति ने अपनी ओर से कुछ न कुछ मनगढन्त बातें जरूर जोड़ दीं जिसके रण अमुक व्यक्ति साधारण बीमारी से मरणासन्न अवस्था तक पहुँचा दिया गया, पि वह केवल बीमार ही था। अतः प्रत्येक व्यक्ति घटना या परिस्थिति का वर्णन ते समय अपने मन से थोड़ा या बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कहता है जिसके कारण सूचना विकृत रूप प्रकट होने लगता है।

(2) मनोवैज्ञानिक तत्त्व (Psychological Factors)—दूसरा जनप्रवाद निर्धारक तत्त्व मनोवैज्ञानिक तत्त्व है। प्रत्येक जनप्रवाद में कोई न कोई समस्या विषय पायी जाती है जिसमें कोई प्रेरणा निहित होती है। इसी प्रेरणा व मनोवृत्ति आधार पर जनप्रवाद का निर्माण होता है; क्योंकि उस अमुक समस्या से प्रेरित कर व्यक्ति उस समस्या अथवा घटना के सम्बन्ध में बातचीत करने लगते हैं और उस समस्या के हल करने में चिन्तन करने लगते हैं। इसके लिए वे सूचनाओं को संगृहीत करते हैं और फिर उनका प्रसार करते हैं। खबरों का प्रसार प्रत्येक व्यक्ति अपनी मनोवृत्ति के अनुकूल ही गढ़कर करता है। इसी प्रकार मनोवैज्ञानिक तत्त्वों में कल्पना का रोल बहुत प्रभावकारी होता है। जटिल और महत्त्वपूर्ण समस्या या परिस्थिति के कारण जब व्यक्ति को उसको हल करने के विषय में कोई सूचना प्राप्त नहीं होती और इसके साथ-साथ सूचना मिलने की कोई आशा नहीं होती तो वह स्वयं कल्पित खबरों को गढ़कर उनका प्रसार करने लगता है। जटिल परिस्थिति में जब किसी प्रकार की सूचना का अनुमान नहीं होता, उस समय लोग उन खबरों पर बिना किसी तर्क के ही विश्वास करने लगते हैं। अतः जनप्रवाद के निर्माण व प्रसार में मनोवैज्ञानिक तत्त्वों का बहुत महत्त्वपूर्ण रोल पाया जाता है।

( ) जनप्रवाद की जाँच न होने वाली प्रकृति (Unverified Nature of Rumour)—जब जनप्रवाद की आधारशिला इतनी महत्त्वपूर्ण हो कि उसके कारण जनप्रवाद देहातों व नगरों में फैल जाये, तो इस प्रकार जनप्रवाद का क्षेत्र बड़ा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यापक हो जाता है। यह भी एक प्रकार की विशेषता है। जब जनप्रवाद सूचनाएँ फैलती हैं तो वे सूचनाएँ कुछ इस प्रकार की होती हैं कि उनकी जाँच वैज्ञानिक दृष्टिकोण से नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए, इसी साल के आरम्भ ज्योतिषियों ने, अष्टग्रहों के इकट्ठे होने पर, पृथ्वी पर प्रलय होने की भविष्यवाणी की थी। ऐसी खबरों की वैज्ञानिक जाँच नहीं की जा सकती। ऐसी स्थिति में लोगों ने परिस्थिति की जटिलता को देखते हुए अपना संवेगात्मक सन्तुलन खो दिया। कारण उनकी विवेचनात्मक बुद्धि क्षीण हो गयी और सुगमतापूर्वक बिना किसी तर्क के जनप्रवाद में विश्वास करने लगे। जनप्रवाद से केवल अशिक्षित व्यक्ति प्रभावित नहीं होते, वरन शिक्षित होते हैं। वे अपनी प्रतिष्ठा को बचा ले जाते हैं; जैसे—मैं वास्तव में, तो इन सूचनाओं में विश्वास नहीं करता किन्तु फिर भी आप लोगों को सावधान कर देता हूँ। अतः इस प्रकार की सूचनाओं की वैज्ञानिक जाँच नहीं की जा सकती।

जनप्रवाद के प्रसार करने के साधन
(The Media of Propagation of Rumour)

जनप्रवाद के प्रसार करने वाले मुख्य साधन निम्नलिखित हैं :

(1) **वार्तालाप** (Gossiping and Talking)—जनप्रवाद को फैलाने वाला सबसे महत्त्वपूर्ण साधन वार्तालाप है। जटिल और महत्त्वपूर्ण समस्या के समाधान के लिए प्रत्येक व्यक्ति समस्या के कारणों को जानना चाहता है। इसलिए सूचनाओं को इकट्ठा करने के लिए व्यक्ति इस विषय में एक-दूसरे से बातचीत करते हैं। इसके पश्चात् बातचीत द्वारा खबरों का आदान-प्रदान करते हैं, जिसके परिणाम-स्वरूप जनप्रवाद का प्रचार होता है।

(2) **सरकारी साधनों द्वारा**—प्रत्येक देश में सरकार सन्देशवाहन और समाचार भेजने के लिए डाक, तार, टेलीफोन आदि का प्रबन्ध करती है। अधिकतर इन साधनों द्वारा जनप्रवाद का प्रसार होता है। डाक, तार व टेलीफोन आदि के द्वारा एक व्यक्ति सूचना को दूसरे तक पहुँचाता है और दूसरे से सूचना प्राप्त भी करता है। अतः इन साधनों द्वारा जनप्रवाद का बहुत प्रचार होता है।

(3) **प्रेस** (Press)—प्रेस भी जनप्रवाद के प्रचार में अत्यधिक सहायक होता है। समाचार पत्र, पत्रिकाएँ व पुस्तकों द्वारा भी सूचना बड़े विस्तृत रूप में प्रसारित की जाती है। इन पत्रिकाओं व समाचार पत्रों द्वारा जनप्रवाद बहुत तीव्र गति से फैलता है; क्योंकि लोग समाचार पत्र आदि की सूचनाओं में बहुत विश्वास करते हैं।

(4) **रेडियो और चलचित्र** (Radio and Cinema)—रेडियो और चलचित्र द्वारा भी जनप्रवाद का प्रचार किया जाता है। अभी हाल ही में रेडियो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अष्टग्रह के सम्बन्ध में जनप्रवाद का प्रचार जनता में तीव्र गति से हुआ। इसी प्रकार चलचित्र के द्वारा भी जनप्रवादों का प्रचार किया जाता है।

जनप्रवाद के प्रसार में अवरोध
(Checks on the Propagation of Rumour)

जनप्रवाद को रोकने के लिए उसके प्रसार के साधनों पर अवरोध सम्भव है। जनप्रवाद के प्रसार को रोकने के लिए निम्नलिखित अवरोध काम में लाये जा सकते हैं :

(1) **कठोर दण्ड (Deterrent Punishment)**—जनप्रवाद के प्रसार को सरकार कठोर दण्ड देकर रोक सकती है। सरकार को यह घोषणा कर देनी चाहिए कि जो भी व्यक्ति जनप्रवाद का प्रसार करता हुआ पकड़ा जायेगा उसको कठोर से कठोर दण्ड दिया जायेगा। ऐसी परिस्थिति में जनप्रवाद की शक्ति कम हो जाती है।

(2) **डाक, तार व टेलीफोन आदि सुविधाओं पर अवरोध (Check on Facilities of Post, Telegraph and Telephone etc.)**—जिस समय जनप्रवाद अत्यधिक फैल रहा हो उस समय सरकारी साधनों द्वारा जनप्रवाद पर अवरोध लगाया जा सकता है। डाक, तार व टेलीफोन आदि सुविधाएँ जनप्रवाद के समय बन्द कर दी जायें जिससे जनप्रवाद सम्बन्धी सूचनाएँ एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को न प्राप्त हो सकें। फलस्वरूप जनप्रवाद की गति एवं शक्ति शिथिल हो जायेगी।

(3) **पारस्परिक सम्बन्ध का अभाव (Lack of Mutual Relations)**—आदान-प्रदान तथा पारस्परिक सम्बन्धों का अभाव भी जनप्रवाद के प्रचार में बाधक होता है। क्योंकि जब किसी समूह के व्यक्तियों में पारस्परिक सम्बन्ध हों न हों, अर्थात वे सब आपस में एक-दूसरे से अधिक परिचित न हों तो वे एक-दूसरे से भी कम मिलेंगे। इसके फलस्वरूप जनप्रवाद के विस्तार की सीमा बहुत संकुचित हो जाती है। इस कारण भी जनप्रवाद की शक्ति शिथिल पड़ जाती है।

(4) **जनप्रवाद से संभ्रान्त न होना (To be Rumour-wise)**—जो व्यक्ति Rumour-wise होते हैं वे समझ जाते हैं कि अमुक प्रकार की परिस्थितियों में जनप्रवाद फैल सकते हैं। इसलिए वे उपयुक्त परिस्थितियों में संवेगात्मक सन्तुलन को नहीं खोते। अपनी बुद्धि का ह्रास नहीं होने देते और विश्लेषणात्मक सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि-कोण बनाये रखते हैं जिसके परिणामस्वरूप वे जनप्रवाद के प्रभाव से संभ्रान्त नहीं होते और उससे विमुक्त रहते हैं।

प्रश्न

1. जनप्रवाद का मनोविज्ञान क्या है ?
   (What is the psychology of rumour ?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

42

शीत युद्ध
(Cold War)

मनोवैज्ञानिक युद्ध
(The Psychological War)

समूह संचार एवं प्रचार का यह युग है। इस युग में सैनिक युद्ध तो कुछ समय ही होता है, पर शीत युद्ध या मनोवैज्ञानिक युद्ध राष्ट्रों के बीच सदैव चलता रहता है। विरोधी राष्ट्र एक-दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयत्न करते रहते हैं। आज अणुयुग (atom age) है। इस समय खुले युद्ध का तात्पर्य होता है संसार का विनाश। नागासाकी व हीरोशिमा इसके स्पष्ट उदाहरण हैं। इसलिए सभी राष्ट्र डरते हैं और खुले युद्ध को प्रारम्भ नहीं करते। इसलिए शीत युद्ध का महत्त्व और भी बढ़ गया है। शीत युद्ध सैनिक युद्ध के समय भी चलता रहता है। शीत युद्ध बन्द नहीं होता।

शीत युद्ध का आधार—प्रचार
(Basis of Cold War—Propaganda)

शीत युद्ध का आधार प्रचार है। यह अधिकतर प्रचार के द्वारा लड़ा जाता है। प्रचार के साधन इसके हथियार होते हैं। शब्द गोला बारूद का काम करते हैं।

अमरीका में प्रचार के लिए प्रथम महायुद्ध के समय जार्ज करील को रखा गया। उन्होंने लाखों पर्चे बँटवाये। इन पर्चों ने कागज की गोलियों (paper bullets) का काम किया। इनका वास्तविक गोलियों से भी अधिक प्रभाव हुआ।

जो प्रचार शीत युद्ध में किया जाता है उसके प्रमुख उद्देश्य दो होते हैं : (1) किसी भी प्रकार शत्रु के राष्ट्र के नागरिकों का नैतिक पतन करना और (2) तटस्थ राष्ट्रों को अपने साथ रखना। उन्हें ऐसी बातें बताना जिससे वे शत्रु के विरोधी रहें।

अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में प्रचार आजकल शीत युद्ध का ही रूप लिये हुए है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों से सम्बन्धित प्रचार वास्तव में वर्तमान प्रभुत्व सम्पन्न राज्यों में विस्तृत संघर्ष का एक भाग है। सम्पूर्ण युद्ध का अब

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक अविभाज्य अंग बन गया है। कुछ क्षेत्रों में इसे 'मनोवैज्ञानिक युद्ध' कहा जाने लगा है। परन्तु हर व्यवस्था में देश में प्रयोग की गयी समस्त प्रचार प्रविधियों का प्रयोग, युद्ध के समय प्रचार एवं खुले व सैनिक युद्धों के बीच, शान्ति काल में शीत युद्ध में होता है।[1]

मनोवैज्ञानिक युद्ध के विषय में जर्मनी के दो प्रमुख नाजी प्रचारकों का कहना है "क्रिया का प्रारम्भिक साधन प्रचार है।"[2]

मनोवैज्ञानिक युद्ध के उद्देश्य, उनके अनुसार, निम्नलिखित हैं :

(1) ससार की नजरों में शत्रु की शक्ति को नगण्य सिद्ध करना। शत्रु देश निवासियों को यह विश्वास दिला देना कि उनका उद्देश्य व्यर्थ है। शत्रु देश में गृह युद्ध उत्पन्न कर देना। साथ ही शत्रु देश की जनता में यह विश्वास फैला देना कि शान्ति सरलता से स्थापित हो सकती है, पर उनकी स्वयं की सरकार शान्ति नहीं चाहती।

(2) तटस्थ देशों को यह पुष्ट कर देना कि हम शान्ति में विश्वास करते हैं और हमारा उद्देश्य सही एवं उचित है। साथ ही, शत्रु देश को आक्रमणकारी और अप्रिय सिद्ध कर देना। राष्ट्रों को यह भी सिद्ध कर देना है कि शत्रु संसार के राष्ट्रों के लिए एक खतरा है, जिससे सबको सजग रहना चाहिए। इन कारणों के आधार पर तटस्थ राष्ट्रों के मन में यह बात उत्पन्न कर देनी चाहिए कि शत्रु देश को समाप्त करने में ही संसार का कल्याण है।

(3) अपने देश की जनता के विश्वास को शक्तिशाली बनाना चाहिए और उन्हें विश्वास हो जाना चाहिए कि विजय हमारी ही होगी। अपने उद्देश्य के औचित्य के विषय में जनता को विश्वास दिलाना आवश्यक है। साथ ही जनता को इस प्रकार संवेगात्मक अपीलों के द्वारा युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए सब कुछ न्योछावर करने को तैयार कर लेना चाहिए।

प्रचार शक्ति बहुत बड़ी है। यह वह कार्य करती है जो सैनिक युद्ध भी नहीं कर पाता। क्रच तथा क्रचफील्ड ने लिखा है, "यह युद्ध के अस्त्र के रूप में अणु बम से अधिक घातक अस्त्र पाया गया है।"[3]

---

1. "Propaganda concerned with international relations is really a part of the larger conflict between comtemporary sovereign states. It has now become an integral part of total war. In some quarters the phrase 'psychological warfare' has been substituted. But in any case, all the techniques of propaganda used on the domestic front are used in wartime propaganda and in the cold war of the years of peace between overt military actions." K. Yong, *A Handbook of Social Psychology*, p. 476.
2. "The intial means of action is propaganda."
3. "It has been as a weapon of warfare more deadly than the atom bomb......" Krech and Crutchfield, *Theory and Problems of Social Psychology*, p. 316.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शीत युद्ध में प्रचार का प्रयोग खूब होता है। आजकल संसार में शीत युद्ध तेजी से हो रहा है। साम्यवादी देश, रूस व चीन के नेतृत्व में व पूंजीवादी एवं प्रजातन्त्रवादी देश अमरीका व ब्रिटेन के नेतृत्व में इस शीत युद्ध में भाग ले रहे हैं। तमाम पत्र, पत्रिकाएँ, रेडियो ब्राडकास्ट इत्यादि दोनों गुट निकालते हैं और एक-दूसरे पर आरोप लगाते रहते हैं। हिन्दुस्तान एवं पाकिस्तान में भी शीत युद्ध चल रहा है। यदि हिन्दुस्तान में छोटा-सा दंगा हो जाये तो पाकिस्तान उसे खूब बढ़ा-चढ़ाकर प्रचार करता है। पाकिस्तान कहता है कि हिन्दुस्तान हमला करने की तैयारी कर रहा है और हिन्दुस्तान कहता है कि पाकिस्तान हमला करने की तैयारी कर रहा है। रेडियो पर घण्टों विदेशों के लिए कार्यक्रम प्रसारित किये जाते हैं और उनका उद्देश्य यही रहता है कि दूसरे देश पर आरोप लगाया जाय और वहाँ की जनता की आँखों में वहाँ की सरकार को दोषी ठहराया जाय। संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O) तो शीत युद्ध का अखाड़ा बना हुआ है। एक प्रकार से वहाँ पर सदैव प्रचार ही होता रहता है।

शीत युद्ध का अर्थ
(Meaning of Cold War)

शीत युद्ध का अर्थ है बिना बाह्य सैनिक लड़ाई के शत्रु राष्ट्र को नीचा दिखाना। इसका प्रमुख साधन प्रचार है। यह शान्ति काल में होता है। प्रचार युद्धकाल में भी होता है, उसे हम युद्धकालीन प्रचार (wartime propaganda) कह सकते हैं।

शीत युद्ध में अनुरोध (persuasion) के द्वारा शत्रु राष्ट्र को प्रभावित किया जाता है। वहाँ की जनता को प्रचार के द्वारा यह समझाने का प्रयत्न किया जाता है कि वहाँ की सरकार गलत कार्य कर रही है।

शीत युद्ध में प्रचार एक प्रमुख साधन है, पर वही एक साधन नहीं है। राजदूतावास के द्वारा प्रयत्न, संगठन बनाकर प्रयत्न, पंचमांगियों का जाल, व्यापार पर प्रतिबन्ध एवं अन्य तरीके हैं जिनके द्वारा दूसरे राष्ट्र की शक्ति को कम करने का प्रयत्न किया जाता है।

संसार में सबसे बड़ा शीत युद्ध का प्रयत्न—साम्यवाद की विचारधारा का फैलाना है। इसके द्वारा दूसरे राष्ट्र के लोग स्वयं अपनी सरकार का साथ नहीं देते और क्रान्ति करके अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्र को रूस के अधीन कर देते हैं। भारत में ही देखिए, कम्युनिस्ट चीन का साथ देते हैं। 'China To-day' साम्यवादी पार्टी के प्रेस से छपता है और उसमें भारत के विरुद्ध प्रचार रहता है।

मनोवैज्ञानिक युद्ध के उद्देश्य
(Aims of the Psychological Warfare)

मनोवैज्ञानिक युद्ध के उद्देश्य निम्न में से एक या अधिक हो सकते हैं:

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) प्रत्येक राष्ट्र की एक विचारधारा होती है। इस विचारधारा की पूर्ण और शत्रु राष्ट्रों की विचारधारा को दूषित करना।

(2) अन्य राष्ट्रों के मनोवैज्ञानिक युद्ध से बचना और अपने राष्ट्र के नैतिक को ऊँचा करना।

(3) अपने से साम्य विचार रखने वाली सरकार एवं लोगों को बनाये रखने प्रयत्न।

(4) शत्रु राष्ट्रों में अपने आदर्शों का प्रचार।

(5) अपने से विरोध रखने वाली सरकारों को नष्ट करने का प्रयत्न।

(6) तटस्थ राष्ट्रों को अपनी ओर मिलाये रखने का प्रयत्न।

शीत युद्ध के कारण
(Causes of Cold War)

(1) **विरोधी राजनैतिक विचारधाराएँ**—शीत युद्ध का प्रमुख कारण विरोधी राजनैतिक विचारधाराएँ हैं। ये विरोधी राजनैतिक विचारधाराएँ अपना-अपना प्रभुत्व एवं प्रसार चाहती हैं। वे एक दूसरे का विरोध करती रहती हैं। पूंजीवाद और साम्यवाद की सदैव टक्कर चलती रहती है। हर विषय पर वे एक-दूसरे के स्थायी शत्रु हैं। दोनों ही अन्य तटस्थ राष्ट्रों को अपने पक्ष में करना चाहते हैं, जिसके लिए अनिवार्य है कि शीत युद्ध चालू रखा जाये।

(2) **आधुनिक युद्ध की भयंकरता का भय**—आधुनिक समय में वास्तविक युद्ध बड़ा भयंकर एवं विनाशकारी है। कोई भी वास्तविक युद्ध में सरलता से नहीं कूदना चाहता। अणु बम और हाइड्रोजन बम तथा अन्य विनाशकारी अस्त्रों के कारण वास्तविक युद्ध में समस्त संसार नष्ट हो सकता है। वास्तविक युद्ध के परिणामों से बचने के लिए शीत युद्ध का सहारा लिया जाता है।

(3) **महान राष्ट्रों की नीति**—अमरीका और रूस आज संसार के सबसे शक्तिशाली राष्ट्र हैं। यदि संसार में युद्ध हो, तो सबसे अधिक हानि महान राष्ट्रों को ही होगी, इसलिए महान राष्ट्र अस्त्र-शस्त्र का युद्ध नहीं करना चाहते। वे अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में एक-दूसरे को शीत युद्ध के द्वारा नीचा दिखाना चाहते हैं। महान राष्ट्रों की इस नीति का अन्य राष्ट्र भी अनुसरण करते हैं। शीत युद्ध आधुनिक अन्तरराष्ट्रीय राजनीति की एक अनिवार्यता है।

(4) **महान राष्ट्रों द्वारा अन्तरराष्ट्रीय तनाव को बनाये रखने की नीति**—महान राष्ट्र अनेक स्वार्थों के कारण अन्तर्राष्ट्रीय तनाव को बनाये रखते हैं। इससे उनको अनेक लाभ हैं। प्रथमतः अन्य छोटे राष्ट्र भय के कारण उनकी सहायता की याचना करते रहते हैं और महान राष्ट्र उनका शोषण करते रहते हैं। महान राष्ट्र वृहद स्तर पर सैन्य सामग्री का उत्पादन करते हैं। अन्तरराष्ट्रीय तनाव के कारण हर राष्ट्र को अपनी सैन्य-शक्ति को स्थापित रखना पड़ता है और उन्हें महान राष्ट्रों से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अस्त्र-शस्त्र खरीदने पड़ते हैं । महान राष्ट्र इस व्यापारिक दृष्टि को सदैव ध्यान में रखते हैं । इस अन्तरराष्ट्रीय तनाव को बनाये रखने के लिए महान राष्ट्र शीत युद्ध को चालू रखते हैं ।

(5) **प्रचार के माध्यम का विकास**—आधुनिक समय में प्रचार के माध्यमों का अत्यधिक विकास हो गया है । राष्ट्र इसका भरपूर प्रयोग शीत युद्ध में करते हैं। उन्हें यह भी विश्वास हो गया है कि बिना रक्तपात किये और सैन्य-शक्ति को प्रयोग में लाये भी शत्रु पर विजय प्राप्त की जा सकती है । इसलिए सब राष्ट्र ही शीत युद्ध को प्राथमिकता देते हैं ।

शीत युद्ध की प्रविधियाँ
(Techniques of Cold War)

शीत युद्ध को मनोवैज्ञानिक युद्ध (psychological warfare) भी कहते हैं क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक स्तर पर क्रियाशील होता है और लड़ा जाता है । शीत युद्ध या मनोवैज्ञानिक युद्ध की प्रमुख प्रविधि एवं आधार प्रचार है ।

(1) **प्रचार**—प्रचार शीत युद्ध का आधारभूत अस्त्र है । शीत युद्ध प्रचार पर आधारित होता है । इसके विषय में हम अध्याय के प्रारम्भ में लिख ही चुके हैं ।

(2) **अपनी सैन्य-शक्ति का प्रदर्शन एवं प्रचार कर धाक जमाना**—शीत युद्ध की एक प्रविधि यह है कि अपनी सैन्य-शक्ति का प्रदर्शन व प्रचार कर संसार के अन्य राष्ट्रों को भयभीत करना और अपनी धाक जमाना भी है । सैन्य-शक्ति के प्रदर्शन से अन्य राष्ट्रों की सेनाएँ और जनता का नैतिक पतन होता है और वे विरोध करने का साहस नहीं करतीं । अनेक प्रकार के नये-नये सैन्य सम्बन्धी परीक्षण, शस्त्रों का संचय आदि इसमें सहायता करता है ।

(3) **तटस्थ देशों को प्रभावित करना एवं उन्हें अपने गुट में सम्मिलित करने का प्रयत्न करना**—शीत युद्ध का यह एक अनिवार्य अंग है कि तटस्थ राष्ट्रों को प्रभावित किया जाय और उन्हें अपने गुट में सम्मिलित करने का प्रयत्न किया जाय । अनेक सैनिक समझौते किये जायें और सैनिक गुट का निर्माण किया जाये ।

अन्तरराष्ट्रीय तनावों को कम करने में मनोवैज्ञानिकों की भूमिका
(Role of Psychologists in Reducing International Tensions)

आधुनिक वर्तमान समय में ऐसी परिस्थितियाँ हैं कि सैन्य-युद्ध से सभी भयभीत हैं । महान और शक्तिशाली राष्ट्र भी युद्ध नहीं करना चाहते । यह स्थिति होते हुए भी यह खतरा बना रहता है कि कब विश्वयुद्ध छिड़ जाये । संसार की महान शक्तियाँ नये-नये परीक्षण कर रही हैं और विनाशकारी अस्त्र-शस्त्रों एवं बमों का निर्माण कर रही हैं । हर राष्ट्र अपनी सैन्य-शक्ति बढ़ाने में लगा हुआ है । इन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रिस्थितियों के कारण अन्तरराष्ट्रीय तनाव बढ़ता ही जा रहा है। कहा नहीं जा सकता किस दिन विस्फोट हो जाये।

सामाजिक वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक अन्तरराष्ट्रीय तनावों को कम करने में सहायक हो सकते हैं। मनोवैज्ञानिक मानसिक प्रक्रियाओं का सामाजिक सन्दर्भ में अध्ययन करते हैं। वे अन्तरराष्ट्रीय तनाव के मनोवैज्ञानिक कारणों का अध्ययन कर उनकी रूपरेखा प्रस्तुत कर सकते हैं। साथ ही, वे उन मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं की ओर भी संकेत कर सकते हैं जिनके द्वारा संगठनात्मक प्रवृत्तियों का उदय हो। इन अध्ययनों के द्वारा सामाजिक मनोवैज्ञानिक संसार के राष्ट्रों के सामने अन्तरराष्ट्रीय तनाव को कम करने का कार्यक्रम प्रस्तुत कर सकते हैं। हो सकता है कि राष्ट्रों की सरकारें इस कार्यक्रम को क्रियान्वित करने का प्रयत्न प्रारम्भ करें। अन्तरराष्ट्रीय तनाव को कम करने में जनमत और प्रचार की भूमिका बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण हो सकती है। सामाजिक मनोवैज्ञानिक उन मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं एवं प्रविधियों को बताने में सहायक हो सकते हैं जिनके द्वारा अन्तरराष्ट्रीय तनाव को कम करने के पक्ष में जनमत तैयार किया जा सके। जनमत में बड़ी शक्ति होती है। यदि जनमत यह चाहे कि अन्तरराष्ट्रीय तनावों को कम किया जाये तो सरकारों को जनमत के आगे झुकना पड़ेगा। इसी प्रकार प्रचार की विषय सामग्री मनोवैज्ञानिक तैयार कर सकते हैं।

मनोवैज्ञानिक ज्ञानात्मक संगठन के पुनर्निर्माण में सहायक हो सकते हैं। संसार के लोगों की अभिवृत्तियाँ, प्रेम, सहिष्णुता और बन्धुत्व की भावना किस प्रकार बनायी जाएँ, इसमें मनोवैज्ञानिक दिशा प्रदान कर सकते हैं।

प्रश्न

1. शीत युद्ध के मनोविज्ञान की विवेचना कीजिए। अन्तरराष्ट्रीय तनावों को कम करने में एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक क्या कार्य कर सकता है?

(Discuss the psychology of cold war. What role can a social psychologist play in reducing international tensions?)

2. शीत युद्ध से आप क्या समझते हैं? इस युद्ध में प्रचार का क्या कार्य है?

(What do you understand by cold war? What is the role of propaganda in this warfare?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

43

युद्ध का मनोविज्ञान
(The Psychology of War)

युद्ध भी मानव समाज की एक महत्त्वपूर्ण संस्था है। इसे अनिवार्य बुराई कहते हैं। युद्ध सामाजिक विघटन का भयंकरतम लक्षण है। युद्ध के कारण समस्त सामाजिक व्यवस्था नष्ट हो जाती है। युद्ध मनुष्यों पर अनेक मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालता है।

दुर्भाग्य से मानव समाज के लिए युद्ध की संस्था वृहत सामाजिक संस्थाओं में से एक है। सृष्टि के प्रारम्भ से युद्ध किसी न किसी रूप में बराबर चलता चला आ रहा है। यहाँ तक कि आधुनिक राज्यों में भी मनुष्य प्रायः एक-दूसरे के साथ पशुओं की तरह लड़ते हैं, एक-दूसरे की हत्या कर देते हैं, और प्रजातीय वर्ग, समूह और अन्य दूसरे समूह हिंसात्मक युद्धों में लगे रहते हैं। युद्ध के लिए सामग्री एवं अस्त्र-शस्त्रों की आवश्यकता प्रारम्भ से ही हो रही है। यदि यह कहा जाय कि मानव इतिहास का एक बहुत बड़ा भाग केवल अस्त्र-शस्त्र और उनके प्रयोग का इतिहास है तो अतिशयोक्ति न होगी।

युद्ध का चक्र एवं प्रक्रिया
(Cycle and Process of War)

युद्ध का चक्र (Cycle of War)

युद्ध का चक्र है—युद्ध, शान्ति और फिर युद्ध। लोगों का कहना है कि शान्ति युद्ध के लिए तैयारी का समय है।

युद्ध की प्रक्रिया (Process of War)

युद्ध की प्रक्रिया भी अन्य संघर्षों के समान है। वह निम्न है :

(1) पहले कोई समस्या या विवाद खड़ा हो जाता है। राज्य इसे कूटनीतिक ढंग से सुलझाने का प्रयत्न करते हैं। जब वह सुलझ नहीं पाता तो दूसरा चरण प्रारम्भ हो जाता है।

(2) इस अनसुलझी समस्या को लेकर धमकियाँ देना प्रारम्भ हो जाता है और युद्ध का बुखार चढ़ने लगता है। राष्ट्रीय एकता दृढ़ होने लगती है और शत्रु के विरुद्ध प्रचार प्रारम्भ हो जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) जब युद्ध प्रारम्भ हो जाता है तब,

(अ) सैनिक आवश्यकताओं को प्राथमिकता दी जाती है।

(ब) सैनिक एवं अन्तरराष्ट्रीय नीतियों को गृह नीतियों पर प्राथमिकता दी जाती है।

(स) बोलने एवं एकत्रित होने की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लगा दिये जाते हैं।

(द) परिवार, शिक्षा, मनोरंजन, एवं अन्य सामुदायिक जीवन के अंगों पर प्रभाव पड़ने लगता है।

(4) युद्ध समाप्त होता है और लोग सामान्य (normal) अवस्था को प्राप्त करने के लिए व्याकुल हो जाते हैं।

युद्ध के उपरान्त अनेक कार्यक्रम बनाये जाते हैं जिससे युद्ध के समय में पड़े प्रभावों को कम किया जा सके।

युद्ध का अर्थ
(Meaning of War)

युद्ध की परिभाषा हॉबेल ने इन शब्दों में की है, "युद्ध से तात्पर्य एक सामाजिक समूह के द्वारा दूसरे समूह पर जीवन और सामान के निश्चयपूर्वक संहार द्वारा दूसरे के मूल्य पर एक के हितों के विस्तार हेतु किया गया संगठित आक्रमण है।"[1]

क्वीन्सी राइट ने युद्ध को "राष्ट्रीय संस्कृतियों का, जिनमें से प्रत्येक चरम बिन्दु से समान रूप से समीप है, मान्य विचारों, प्रचलित भावनाओं और अस्त्र-शस्त्र से सज्जित व्यक्तियों का समकालीन संघर्ष कहा है।"[2]

जयदेवसिंह ने युद्ध की परिभाषा निम्न प्रकार की है, "युद्ध सामूहिक समाजों (mass societies) का संघर्ष में एक स्पष्टीकरण है।"[3]

विश्वज्ञान कोष (Encyclopaedia) के अनुसार युद्ध की परिभाषा इस प्रकार है, "चेतन इकाइयों, जैसे प्रजातियों अथवा जन-जातियों, राज्य अथवा छोटी भौगोलिक इकाइयों, धार्मिक अथवा राजनैतिक दल, आर्थिक वर्गों से निर्मित जन संख्यात्मक

---

1 "By war is meant organised assault by one social group upon another with the intent to further the interest of the one group at the expense of the other through the willful destruction of life and goods." E. Adamson Hoebel, *Man in the Primitive World*, p. 508.

2 "A simultaneous conflict of armed forces, popular feelings, jural dogmas and rational culture so nearly equal as to lead to an extreme intensification of each." Quincy Wright, *A Study of War*, quoted by Bogardus, '*Sociology*', p. 433.

3 "A war is an expression of mass societies in conflict." Jaideo Singh, *Social Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समूहों के अन्तर्गत शस्त्रात्मक संघर्ष के लिए साधारण रूप से 'युद्ध' शब्द का प्रयोग किया जाता है।"[1]

इलियट और मेरिल ने भी युद्ध की निम्न परिभाषा दी है. "युद्ध राष्ट्रों के आपस में शान्ति के समय की (अशान्त) अनुरूपता में बाँधने वाले सम्बन्धों का औपचारिक तोड़फोड़ है।"[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं को देखने से ज्ञात होगा कि युद्ध वह कार्य है जिसमें विरोध की भावना के कारण दो समूह आपस में घात-प्रतिघात करते हैं और विभिन्न अस्त्र-शस्त्रों की सहायता से दोनों समूह एक-दूसरे को जीवन और सम्पत्ति की हानि पहुँचाते हैं।

युद्ध के स्वरूप
(Forms of War)

इतिहास के रंगमंच का पर्दा उठाते ही हमें प्रथम जो दृश्य दृष्टिगोचर होगा वह होगा मानवों का युद्ध में संलग्नता का दृश्य। मार्क्स ने यहाँ तक कहा है कि समस्त इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास मात्र है। युद्ध और उसकी सामग्री—अस्त्र-शस्त्रों की इतनी प्रधानता रही है कि प्रारम्भिक सभ्यता और संस्कृति इसके सम्बन्ध में विशेष जागरूक दिखायी देती है। इसी बात को हॉबेल ने इस प्रकार व्यक्त किया है, "वास्तव में सामाजिक संगठन और भौतिक संस्कृति के इतिहास का बड़ा भाग मृत्युकारक शस्त्रों एवं मानव मात्र के विकास का इतिहास रहा है।"[3]

वास्तव में आदिकालीन समय से युद्ध की संस्था किसी न किसी रूप में बराबर चलती चली आ रही है और इसीलिए युद्ध के विभिन्न स्वरूप हैं। जिनका वर्णन हम नीचे कर रहे हैं।

(1) विकास की दृष्टि से युद्ध के स्वरूप

मैलिनॉस्की ने विकास की दृष्टि से युद्ध के स्वरूपों को छह विभागों में बाँटा है :

---

[1] "The term war is generally applied to armed conflict between population groups conceived of as organic unities, such as races or tribes, states or lesser geographic units, religious or politicial parties, economic classes." *Encyclopaedia of Social Sciences*, Vo. XV, p. 331

[2] "War is formal disruption of the relationships that bind' nations together in (uneasy) peace time harmony." Elliott and Merrill, *Social Disorganisation*, p. 707.

[3] "Indeed, a large part of the history of material culture and social organisation has been the history of the development of lethal weapons and their application to human beings." E. A. Hoebel, *Man in the Primitive World*, p. 508.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(अ) व्यक्तियों का मुष्टि-प्रहार द्वारा युद्ध का एक सरल रूप।
(ब) अस्त्र-शस्त्र सहित समूहों का संगठित संग्राम।
(स) गुप्त संगठित समूहों द्वारा बाहरी सीमाओं में शस्त्रों सहित आक्रमण युद्ध।
(द) शासन द्वारा संगठित सैन्य शक्ति द्वारा शत्रुओं से युद्ध।
(य) दो राष्ट्रों का एक-दूसरे पर अच्छे एवं सज्जित शस्त्रों की शक्ति द्वारा ...ण एवं युद्ध।
(र) संहार के यन्त्रीकृत साधनों का प्रयोग करते हुए संसार के सभी राष्ट्रों ...ा बरबादी वाला मृत्युकारक युद्ध।

समूहों के दृष्टिकोण से युद्ध के रूप

समूहों के दृष्टिकोण से युद्ध को निम्न रूपों में विभाजित किया जा सकता है:

(1) **वैयक्तिक युद्ध** (Personal War)—व्यक्ति अपने व्यक्तिगत द्वेष के ...अन्य व्यक्तियों से युद्ध करते हैं। उन्हें हम इस श्रेणी में रख सकते हैं। ये ...भी-कभी चुनौती देकर, स्थान व समय निश्चित करके भी आयोजित किये ...।

(2) **पारिवारिक युद्ध** (Family War)—विभिन्न कारणों से परिवार के ...ों में युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। यद्यपि इस प्रकार के संघर्षों को हम परिभाषा ...सार युद्ध के अन्तर्गत नहीं ले सकते, फिर भी ये संघर्ष कभी-कभी बड़े ही ...रूप में सामने आते हैं। पारिवारिक संघर्षों में पति-पत्नी, पिता-पुत्र और ...रूप से भाई-भाई का संघर्ष जितना घातक रूप लेता है उतना घातक परिवार ...य सदस्यों का संघर्ष नहीं होता। इन संघर्षों के साथ ही साथ कुछ संघर्ष ऐसे ...ते हैं जो परिवारों के मध्य बराबर चले आते हैं और उनमें बराबर द्वेष बना ...है।

(3) **गोत्र युद्ध** (Clan War)—यद्यपि गोत्र युद्धों का रूप आधुनिक समाज ...ं पाया जाता, किन्तु जन-जातीय समाजों में इस प्रकार के संघर्ष आज भी ...ते हैं। एक गोत्र दूसरे गोत्र के साथ युद्ध में संलग्न हो जाते हैं। इन युद्धों में ...आदि का भी प्रमुख स्थान रहता है।

(4) **जाति युद्ध** (Caste War)—दो जातियों में जो संघर्ष रहता है उसे ...ति युद्ध कहते हैं। यह कभी-कभी दो जातियों के मध्य छोटे-छोटे कारणों से ...ड़ा होता है और बड़ा रूप धारण कर लेता है।

(5) **वर्ग युद्ध** (Class War)—आधुनिक युग में वर्ग युद्ध बहुत प्रचलित ...मजदूर-मालिक वर्ग का संघर्ष बहुत ही प्रचलित रहा है। अमरीका, इंगलैण्ड ...देशों में यह समस्या बहुत भयंकर रूप लिये हुए है।

(6) **समुदाय युद्ध** (Community War)—इस प्रकार के युद्ध दो समुदायों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में होते हैं जैसे हिन्दू-मुस्लिम युद्ध। इनमें तनिक-सी बात पर संघर्ष उठ खड़ा होता है और बहुत ही घातक रूप ले लेता है।

(7) **प्रजाति युद्ध** (Race War)—प्रजातियों में पाया जाने वाला ... प्रजाति युद्ध कहलाता है। उदाहरण के रूप में प्रजाति और श्वेत प्रजाति के सं... को सामने रखना अनुचित न होगा।

(8) **राष्ट्रीय युद्ध** (National War)—एक ही राष्ट्र के नागरिकों ... विभिन्न कारणों में होने वाला संघर्ष राष्ट्रीय युद्ध के रूप में सामने आता है। ... हम गृह युद्ध (civil war) भी कहते हैं।

(9) **अन्तरराष्ट्रीय युद्ध** (International War)—इस प्रकार का ... विभिन्न राष्ट्रों के मध्य होता है। यह युद्ध का सबसे वृहत रूप है। इसमें ला... व्यक्ति मौत के घाट उतार दिये जाते हैं। करोड़ों रुपयों का सामान नष्ट हो जा... है। युद्ध के पश्चात प्रत्येक देश की आर्थिक दशा बिगड़ जाती है। पिछले दो वि... युद्धों से समस्त विश्व एक पाठ ले चुका है।

(3) काल के दृष्टिकोण से युद्ध का स्वरूप

इस वैज्ञानिक युग में कुछ सामाजिक संस्थाओं का रूप तो इतना बदल ... है कि उनका आविर्भाव एक नयी वस्तु लगने लगी है। वैज्ञानिक साधनों की सहा... से युद्ध का स्वरूप भी अपनी चरम सीमा के समीप है। इसी वैधानिकता को ध्... में रखकर युद्ध को भी दो प्रमुख विभागों में विभाजित कर दिया गया है :

(अ) **प्राचीन युद्ध** (Pre-modern War)—वैज्ञानिक साधनों के वि... के पूर्व जितने भाँति के युद्ध थे उन्हें इस शीर्षक के अन्तर्गत रखा गया है। इन ... का आधार सीमित था, साधन सीमित थे। संघर्ष छोटे-छोटे समूहों से होते ... कुछ संघर्ष मूल प्रवृत्तियों पर भी आधारित होते थे। अधिकतर युद्ध व्यक्तिगत ... युद्धों (personal war) के रूप में होते थे। युद्ध समान स्तर के लोगों, जैसे व्य... व्यक्ति को, जमींदार-जमींदार को, राजा-राजा को चुनौती देकर निश्चित समय ... स्थान पर होते थे। धीरे-धीरे इनका रूप समूहों के रूप में भी परिवर्तित हो गया।

प्राचीन काल में आज की भाँति नागरिक सेना का विचार उत्पन्न नहीं ... था। आज की भाँति विशाल जल, थल, नभ सेनाएँ संगठित नहीं की जाती ... अधिकतर व्यक्तियों के परम्परागत शत्रु होते थे। युद्ध का समय प्रायः प्रातःका... सायंकाल तक सूर्य के प्रकाश में होता था, बाकी समय योद्धागण शान्ति के ... बैठकर भोजन, वार्तालाप आदि में संलग्न रहते थे। युद्ध में निश्चित प्रकार के ... का ही प्रयोग होता था क्योंकि नवीन अस्त्र किसी दल को विशेष लाभ पहुँचा ... था। इसके पश्चात विजय युद्ध अथवा आक्रमणों का रूप सामने आया। इसमें वि...

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सेना सहित आकस्मिक एवं नृशंस आक्रमण करते हैं। लेकिन इन आक्रमणों के भी जनता अपना कार्य करती रहती थी और सेनाएँ खेतों से बिना हानि गुजर जाती थीं।

क्रान्तिकारी युद्ध पश्चिमी यूरोप में बहुत प्रचलित हुआ। ये युद्ध बिना नियमों के लड़े जाते थे। पश्चिमी यूरोप में वर्गों एवं धार्मिक समूहों में प्रायः होते रहते थे। ये युद्ध विनाशकारी होते थे।

(ब) आधुनिक युद्ध (Modern War)—प्राचीन काल में क्रान्तिकारी के अतिरिक्त सभी युद्ध समूह संघर्षों के रूप में थे। आधुनिक युग में वैज्ञानिक के विकास एवं प्रयोग के कारण युद्ध का स्वरूप ही परिवर्तित हो गया है। काल के व्यक्तियों को उसकी कल्पना भी नहीं थी। आधुनिक राष्ट्र इतने भयंकर शस्त्रों के निर्माण की ओर अग्रसर हैं कि बड़े राष्ट्रों को भी भय है कि कहीं महायुद्ध होने पर समस्त संसार ही धूल में परिणत न हो जाय।

आधुनिक युग में संसार के सभी राष्ट्र एक-दूसरे पर निर्भर हैं। वे आर्थिक, जिक, राजनैतिक समस्याओं को साथ में बैठकर सुलझाते हैं। लेपियर ने निक युद्ध की परिभाषा इस प्रकार की है, "आधुनिक युद्ध, दूसरी ओर, अन्तः-समूहों के राजनैतिक दृष्टि से भौतिक संघर्ष है।"[1] युद्ध आज भौतिक संघर्ष के रूप हैं। इन युद्धों के अतिरिक्त आधुनिक राष्ट्रों में जो हत्याएँ, घाव आदि जो युद्धों में प्रजातियों, वर्गों अथवा अन्य समूहों में शान्ति के समय हो जाते हैं, राष्ट्र-के समान महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। आधुनिक राष्ट्रों के युद्ध ही भयंकर होते हैं। ने युद्ध के शस्त्र निर्माण करने में इतनी प्रगति कर ली है कि युद्ध के द्वारा वह को राख में परिणत कर दे। अतः युद्ध एक साधारण समस्या न रहकर एक गम्भीर समस्या बन गयी है। इसलिए अन्य सब समस्याओं को छोड़कर हमारी बड़ी समस्या शान्ति स्थापित करने की है।

आधुनिक युद्ध की विशेषताए
(Characteristics of Modern War)

द्वितीय महायुद्ध ने युद्ध के स्वरूप एवं उसकी विशेषताएँ हमारे सामने स्पष्ट रखी हैं, जिसे रखने में प्रथम महायुद्ध भी असफल रहा। आधुनिक युद्ध की विशेषताएँ हैं :

(1) **सैनिक प्रणालियां और कौशल** (Military Technique and cs)—आधुनिक युद्ध की प्रमुख विशेषता है उसकी सैनिक प्रणाली। युद्ध का म प्रायः सैनिक प्रणाली और चतुरता पर आधारित होता है। नेपोलियन अपने

[1] Modern wars, on the other hand, are physical conflicts between politically discrete but otherwise interdependent groups." R. T. Lapiere, *Sociology*, p. 491.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सैन्य संगठन म विशेषता के कारण ही विजयी हो सका और इसी विशेषता के प्रचा हो जाने पर उसे हारना भी पड़ा। सैनिक शस्त्रों, चतुरता, युद्ध-कौशल का विक भी संस्कृति के एक अंग के रूप में हुआ है। आधुनिक सैनिक शस्त्रों एवं प्रणालि में भी आवागमन, संचार, वाहन आदि की भाँति क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। सै कुशलता, सैनिक शस्त्रों के संचालन, प्रयोग आदि से सम्बन्ध रखती है। युद्ध शान्ति के समय सैनिक को भलीभाँति शस्त्र-संचालन एवं युद्ध-कौशल में प्रशि किया जाता है। आक्रमण प्रतिरक्षा, कुटिलता आदि क्रियाओं का भी उचित प्रशि सेना को दिया जाता है। युद्ध-कौशल वायुयानों, टैंकों, पनडुब्बी, जलयानों आ आवागमन के साधनों के प्रयोग की प्रणालियों पर भी निर्भर करता है और सैनि को भलीभाँति इनके संचालन में प्रशिक्षित किया जाता है। सैनिकों को प्रशि प्रणालियों का रूढ़िगत पालन करने के लिए विवश किया जाता है और यह रूढ़ि पालन सैनिक संगठन की एक विशेषता समझी जाती है। युद्ध-प्रणाली के विकास अधिकांश भाग वास्तव में शान्ति के समय प्रणालियों का प्रयोग है जैसे ट्रक, वायुय ट्रैक्टर, रेडियो, पनडुब्बी आदि साधनों का शान्ति के समय का प्रयोग ही युद्ध में प्र होता है। कुछ साधन ऐसे भी हैं जिनका आविष्कार केवल युद्ध के दृष्टिकोण से होता है जसे बन्दूक, अणु बम, परमाणु बम, बारूद, हाइड्रोजन बम कारतूस आ

(2) **यन्त्रीकरण** (Mechanization)—आधुनिक युद्ध में यन्त्रीकृत सा प्रयोग में लाये जाते हैं। आज भी ये यन्त्र सैनिक कुशलता पर निर्भर करते हैं। इन यन्त्रों की उत्कृष्टता के बावजूद भी युद्ध कौशल की आवश्यकता है। युद्ध के में वायुयान, राकेट, जेट, जलयान, पनडुब्बी, टैंक, ट्रैक्टर आदि यन्त्रों के साथ साथ अणुबम, परमाणुबम, हाइड्रोजन बम, मशीनगन, बन्दूक, कारतूस आदि य का आविष्कार हो चुका है और इनकी प्रचुरता बहुत अधिक बढ़ गयी हैं जिसके क औद्योगीकरण पर भी पूरा प्रभाव पड़ा है। औद्योगीकरण के साथ ही साथ श्रम अधिकता भी इन यन्त्रों के निर्माण कार्य में लगी है।

(3) **सेना की अनिवार्य भर्ती** (Military Conscription)—आधु युद्ध के लिए सेना की आवश्यकता की पूर्ति के लिए सैनिकों की भर्ती अनिवार्य दी गयी है जिससे एक वृहत सेना स्थायी रूप से रखी जा सके और आवश्य के समय प्रयोग की जा सके। युद्ध कौशल की दृष्टि से भी पूर्व एकीकृत सैनिक सं (integrated military organisation) आवश्यक है जिसके लिए नागरिकों व्यावसायिक सेनाओं में भर्ती करना अनिवार्य है। केवल एक छोटी सेना पर निर्भर नहीं कर सकता और न राष्ट्र की आर्थिक स्थिति वृहत सेनाओं को रखने अनुमति ही देती है। अतः राष्ट्र के सभी नागरिकों को सैनिक शिक्षा लेना अनिवार्य दिया है जिससे कि आवश्यकता के समय उनका उपयोग किया जा सके। व्यावसा सैनिकों के अतिरिक्त नागरिक सेनाओं का यह विचार नैपोलियन का आविष्का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कारण उसने यूरोप पर अपना अधिकार किया था। विभिन्न राष्ट्रों में सैनिक अनिवार्य कर दी गयी है। भारत में इस सम्बन्ध में एन. सी. सी., ए. सी. सी., टिंग आदि प्रयत्न प्रारम्भिक प्रयत्नों के रूप में प्रयोग किये जा रहे हैं।

(4) सार्वभौमिकता (Universality)—आधुनिक युद्ध की विशेषता भौमिकता है। प्राचीन काल में होने वाले समस्त युद्ध सीमित होते थे, किन्तु क युद्धों का युद्ध क्षेत्र समस्त संसार है और संसार के किसी भाग को बम गिराकर नष्ट किया जा सकता है। शत्रु से तात्पर्य विपक्षी सेनाएँ ही नहीं विपक्षी राष्ट्रों के बालक, युवक, युवतियाँ एवं समस्त नागरिक भी हैं जो अपने र शान्तिपूर्वक अपना कार्य करते रहते हैं। युद्ध शस्त्रों के यन्त्रीकरण होने के समस्त जनसंख्या का संघर्ष में भाग लेना आवश्यक हो गया है। युद्ध की भौमिकता ने सशक्त मनुष्य के सेना में भर्ती होने की अनिवार्यता के तत्त्व को दिया है। अतः आधुनिक युद्ध शक्ति का युद्ध न होकर उत्पादन प्रणालियों का हो गया है। युद्ध क्षेत्र और घर के सामने के मैदान में कोई अन्तर नहीं रह है।

(5) संगठन का विस्तार (Regimentation)—आधुनिक युद्धों का संगठन छोटे से समय में नहीं किया जा सकता, अतः इसके संगठन के लिए अधिक समय आवश्यकता है। प्रायः देखा यह गया है कि समस्त शान्ति का समय युद्ध के न एवं तैयारियों में ही बीतता है। शस्त्रों का उत्पादन और उनकी प्रणालियों विकास शान्ति के समय ही सम्पादित होता है। ऐसे संगठन की स्थापना के लिए अपने नागरिकों पर नियन्त्रण प्रारम्भ से ही करता है। उत्पादन की प्रकृति, के लिए वस्तुओं के क्रय की शर्तें, नये करों द्वारा व्यक्तिगत आय को कम , एक व्यक्ति के कार्य प्रकार का नियन्त्रण, निश्चित मूल्य, ऋण-व्यवस्था का त्रण, नागरिक उपभोग में कमी आदि कार्यों पर सरकार युद्ध प्रारम्भ कर देती र युद्ध के समय तो विशेष रूप से ऐसा होता ही है। इस तरह आधुनिक युद्धों ठन का विस्तार हो गया है।

आधुनिक युद्ध की सीमाएँ
(Criteria of Modern Wars)

युद्ध एक क्लिष्ट संस्था है जिसमें एक निश्चित उद्देश्य और प्रमाणित संगठित ण निहित रहते हैं। इसी दृष्टिकोण से टर्नी हाई ने युद्ध की चार दिशाएँ रित की हैं :

(i) वैयक्तिक उद्देश्य के स्थान पर एक सामूहिक उद्देश्य।

(ii) नेतृत्व (दिशा-दर्शन एवं नियन्त्रण)।

(iii) चातुर्यपूर्ण कार्य करने की प्रणाली (योद्धाओं को युद्ध की सामूहिक ाओं में लाने वाली युक्तिपूर्वक कार्यशीलता)।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(iv) प्रमाणित आक्रमणों की निरन्तरता के (जब तक कि युद्ध के उच्चतर स्तर के युद्ध के द्वारा) उद्देश्य को प्राप्त न कर लिया जाय, योजना बनाने और उसे विभिन्न ढाँचों से पूर्ण करने की योग्यता।

आधुनिक युद्ध एवं सामाजिक प्रवरण
(Modern War and Social Selection)

प्राकृतिक प्रवरण के द्वारा शक्तिहीन प्राणी प्रकृति के द्वारा समाप्त कर दिये जाते हैं और जो जीवन संघर्ष के योग्य होते हैं वे बच रहते हैं किन्तु सामाजिक प्रवरण इससे विपरीत होता है। इसमें सामाजिक दशाओं से संघर्ष में आने वाला व्यक्ति समाप्त हो जाता है। युद्ध सामाजिक प्रवरण का एक साधन है जिसके द्वारा समाज के योग्य, शक्तिशाली युवक चुन लिये जाते हैं और समाप्त हो जाते हैं, बाकी केवल वृद्ध, निर्बल, रोगी व्यक्ति बच रहते हैं। इस तरह समाज को बहुत हानि होती है।

युद्ध-एक चाक्रिक प्रक्रिया है। युद्ध, शान्ति और पुनः युद्ध। इस तरह युद्ध की प्रक्रिया सदैव चलती रहती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर एक फ्रांसीसी व्यंगकार (cartoonist) ने प्रक्रिया के सैनिक को लिखा, "शान्ति क्या है? शान्ति युद्ध की तैयारियों का समय है।"[1]

सामाजिक प्रवरण का प्रथम मौलिक स्वरूप युद्ध है। लापौज (Lopouge) का मत है कि सभ्यता और प्रगति के साथ-साथ युद्ध बढ़ते हैं, घटते नहीं। मनुष्य पशुओं से अधिक युद्धप्रिय होता है। युद्ध जनसंख्या के सबसे अधिक स्वस्थ, शक्तिशाली और वीर व्यक्तियों का प्रवरण करता है जिसके फलस्वरूप समाज को हानि होती है। युद्ध के घायल व्यक्ति भी कई रोग समाज में फैला देते हैं। बमों आदि द्वारा दूषित वायु से आसपास के प्रदेशों में नये-नये रोगों का प्रसार हो जाता है और जनसंख्या का एक बड़ा भाग नष्ट हो जाता है।

युद्ध के कारण
(Causes of War)

किसी भी युद्ध के मुख्य कारण केवल एक या दो होते हैं, और ये सामयिक कारण कोई विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं होते। युद्ध की तैयारियाँ हर समय ही होती रहती हैं। केवल चिनगारी के रूप में ये सामयिक कारण कार्य करते हैं। प्रत्येक युद्ध के कुछ मूल कारण होते हैं जिनके कारण कि युद्ध की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। युद्ध के कारण साधारण रूप से केवल व्यक्तियों की मनोवृत्तियों पर ही निर्भर नहीं होते वरन ये सामाजिक संगठन पर भी आधारित होते हैं। सामाजिक संगठन में भी

---

1 "What is peace? Peace is the period of preparation of war." Quoted by Alex Comfort, *Authority and Delinquency in the Modern State.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और आर्थिक व्यवस्था पर ही आधारित नहीं सामाजिक समस्याओं पर भी रित होते हैं। इनमें से कुछ प्रमुख कारण निम्न हैं :

मनोवैज्ञानिक कारण

(i) घृणा, असुरक्षा, अशान्ति आदि भावनाओं का विस्तार।
(ii) बदले की भावना का बढ़ जाना।
(iii) वास्तविक अथवा झूठी ईर्ष्या व द्वेष।
(iv) प्रत्यक्ष स्वाभाविक घृणा का उत्पन्न होना।

सामाजिक कारण

(i) धार्मिक अथवा जादुई विचारों में मतभेद होने के कारण भी बहुत से का सम्पादन हुआ। 16वीं-17वीं शताब्दी के लगभग तीस वर्षीय युद्ध भी एक युद्ध ही था।

(ii) प्रजाति, संस्कृति या भाषा सम्बन्धी विभिन्नता भी बहुत से युद्धों का है। प्रजाति संघर्ष, वर्ग संघर्ष ब्रिटिशों में स्पेनियों और फ्रांसीसियों के लिए विक घृणा की भावना आदि इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

(3) जनसंख्या की वृद्धि ने भी युद्ध के लिए सहायता पहुँचायी है। जैसे न में जनसंख्या की वृद्धि के कारण भूमि की कमी पड़ने लगी और उसने चीन से किया।[1]

(4) पूँजीवाद की भावना ने भी विभिन्न युद्धों को प्रोत्साहन दिया।

(5) विभिन्न देशों में अपने अधिक माल के लिए बाजार प्राप्त करने की ना ने भी कई युद्धों को जन्म दिया जिनमें अंग्रेजों और फ्रांसीसियों, जर्मनों के प्रसिद्ध हैं।

राजनैतिक कारण

मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कारण से तो आधुनिक युद्ध के लिए पृष्ठभूमि होती है; किन्तु किसी राजनैतिक कारण के द्वारा ही युद्ध की परिस्थिति उत्पन्न है और युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। कुछ प्रमुख राजनैतिक कारण निम्न हैं :

(1) **राष्ट्रीय एकीकरण की भावना** (Unification)—राष्ट्र के बिखरे हुए का एकीकरण करने की भावना भी युद्ध का कारण होती है। उदाहरण के लिए यी के एकीकरण के लिए डेनमार्क, आस्ट्रिया और फ्रांस के विरुद्ध युद्ध।

(2) **स्वतन्त्रता प्राप्ति की भावना** (Independence)—दूसरों के अधीन राष्ट्र हैं वे अपनी स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए कुछ प्रयत्न करते हैं और इसके लिए न युद्धों का आयोजन होता है जैसे अमरीका का स्वतन्त्रता संग्राम, भारत का त्रा संग्राम (1857) आदि इस भावना के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

---

1. L. L. Bernard, *War and Its Causes*, Henry Holt and Company, New York (1944), Ch. 16.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) दास प्रथा को दूर करने के प्रयत्न—दास प्रथा आदि प्रथाओं को दू करने के प्रयत्न भी युद्ध के प्रमुख कारण बन जाते हैं जैसे, अमरीका का गृह-युद्ध।

(4) साम्राज्यवाद या उपनिवेशवाद (Imperialism or Colonization)—19वीं शताब्दी में साम्राज्यवाद अथवा उपनिवेशवाद अपने पूर्ण उभार था और इन्हीं कारणों से यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों में युद्ध हुए जैसे अंग्रेजों और फ्रांसीसियों के युद्ध।[1]

(5) शक्ति वृद्धि की भावना—शक्ति बढ़ाने के लिए भी मध्यकाल बहुत से राजा फ्यूडल सरदार समय-समय पर अपने पड़ोसी सरदारों से युद्ध किय करते थे।

(6) साम्राज्य सम्बन्धी प्रतिस्पर्धा—जो मुख्य तथा प्रसारण और शोषण अवसरों से उत्पन्न हो जाती है, युद्ध के लिए एक प्रमुख कारण बन जाती है।

(7) भय की भावना—पूर्व युद्धों की ईर्ष्या पर आधारित एक-दूसरे राष्ट्र के प्रति भय की भावना भी युद्ध के लिए एक प्रमुख कारण है।

(8) राष्ट्रीय शस्त्रों का अधिक विस्तार—जो राष्ट्रों का एक-दूसरे के प्रति भय बढ़ा देता है, युद्ध के लिए प्रेरित करता है।

(9) जनमत की शान्ति के माँग का अभाव—साधारण जनमत की शान्ति की अवस्था के लिए माँग का अभाव भी युद्ध के लिए एक प्रमुख कारण है।

(10) अन्तरराष्ट्रीय संठगन के प्रभाव का अभाव—और राष्ट्रों की अप स्वयं-रक्षा का अधिकार न देने की इच्छा को भी युद्ध के लिए प्रेरित करती है।

(11) राष्ट्रीयता की भावना भी युद्ध का एक प्रमुख कारण है—विभि राष्ट्रों मे ऐसे समूह होते हैं जो अपनी संस्कृति, अपनी जाति, अपने रक्त को उच समझते हैं और इसका प्रचार करते हैं। राष्ट्रीय श्रेष्ठतावाद भी युद्ध के लिए ए बड़ी सीमा तक उत्तरदायी है।[2]

युद्ध के परिणाम
(Consequences of War)

मानव इतिहास की साक्षी देकर कुछ व्यक्ति आधुनिक युद्ध की हानियों प विचार न करते हुए युद्ध की महत्ता प्रदर्शित करते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं है युद्ध मानव इतिहास का प्रमुख अंग रहा है और प्राचीन काल में व्यक्तियों की ए संख्या केवल युद्धों के द्वारा ही अपना जीवन निर्वाह करती थी; किन्तु आधुनिक यु प्राचीन युद्धों से किसी भी दृष्टिकोण में समानता नहीं रखते। आधुनिक युद्ध सर्वग्रा

---

1. *Ibid*, Ch. 16.
2. Quincy Wright, *Study of War*, University of Chicago Pre Chicago (1942), Ch. 27, 'Nationalism and war.'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त लिये हुए हमारे सामने आता है जो अपने उदर में समस्त संसार और उसकी ति एवं सभ्यता को समावेश कर लेना चाहता है। यदि इसी तरह युद्ध चलते तो वह दिन दूर नहीं है जब यह संसार और यह मनुष्य जो ईश्वर की उत्कृष्टतम है, सम्पूर्ण रूप से इस पृथ्वी से अदृश्य हो जायेंगे और ये ऊँची-ऊँची अट्टालिकाएँ में परिणत होकर पृथ्वी को वीरान बना देंगी।

और सामाजिक विघटन

सामाजिक विघटन का सबसे तीव्रतम रूप युद्ध है। युद्ध राष्ट्रों को आपस में त वाले सम्बन्धों का तोड़-फोड़ है। युद्ध विश्व बाजारों, अन्तरराष्ट्रीय व्यापार, ारों के मुक्त आदान-प्रदान को नष्ट-भ्रष्ट कर देता है। यह केवल अन्तरराष्ट्रीय न्धों को ही नहीं तोड़ पाता वरन परिवारों को भी नष्ट कर देता है। समुदायों छिन्न-भिन्न कर देता है और व्यक्तियों को चरित्रहीन बना देता है। युद्ध के णामस्वरूप जो अवस्थाएँ आती हैं वे नागरिकों एवं सैनिकों पर समान रूप से ा प्रभाव दिखाती हैं। कई पीढ़ियों तक युद्ध के परिणाम से जनता संतप्त रहती सम्पत्ति का विनाश, भूमि का नष्ट-भ्रष्ट हो जाना और मानव जीवन की हानि परिणाम में होती है कि उसके प्रभाव से बच रहना किसी व्यक्ति की शक्ति से र है।

युद्ध के कारण समाज की स्थिरता समाप्त हो जाती है, चारों ओर भय, थरता आदि भावनाएँ फैल जाती हैं। विश्व विघटन का अन्तिम स्तर युद्ध है। युद्ध केवल व्यावसायिक सैनिकों के मध्य संघर्ष न रहकर राष्ट्रों का एक मृत्यु-क संघर्ष बन गया है जिसमें प्रजातियों, जनता, प्रत्येक पुरुष, प्रत्येक स्त्री अथवा क प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सम्मिलित है। समस्त संसार में शायद ही कोई व्यक्ति रहा हो जिसने द्वितीय विश्व युद्ध के प्रभाव का अनुभव न किया हो। की अवस्था समस्त सामाजिक ढाँचे पर विनाशकारी प्रभाव डालती है जिसके ण राष्ट्रीय अन्त: समूहों मे भी संघर्ष की भावना उत्पन्न हो जाती है।

युद्ध से सामाजिक ढाँचे को जो हानि होती है वह इतनी अधिक मात्रा में ी है कि आने वाले कई वर्षों तक समाज उससे ग्रसित रहता है। पुन: उसी स्थिति ाने के लिए कई वर्ष व्यय हो जाते हैं और जो हानि हो जाती है, उसके प्रभाव टकारा नहीं होता और न वह हानि ही पूरी होती है। अब हम सामाजिक ढाँचे विभिन्न अंगों पर युद्ध के प्रभाव को देखेंगे।

ाजिक ढांचा एवं युद्ध (Social Structure and War)

युद्ध सामाजिक ढाँचे को बहुत अधिक प्रभावित करता है। समाजिक संगठन -व्यस्त हो जाता है। समाज के विभिन्न समूहों से संघर्ष उठ खड़े होते हैं। ाजिक जीवन अशान्तिपूर्ण हो जाता है। समाज की प्रत्येक संस्था पारस्परिक न्धों पर निर्भर करती है और ये पारस्परिक सम्बन्ध युद्ध द्वारा विघटित हो जाते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। अतः प्रत्येक संस्था युद्ध के द्वारा विघटित हो जाती हैं। इलियट तथा मेरिल ने लिखा है, "सम्पूर्ण युद्ध एक राष्ट्र के सम्पूर्ण संस्थात्मक जीवन को प्रभावित करता है।"[1] सामाजिक ढाँचे पर प्रमुख प्रभाव निम्न हैं :

(1) **सामाजिक परिवर्तन की दर में वृद्धि** (Increase in the Rate of Social Change)—युद्ध के कारण सामाजिक परिवर्तन तीव्र गति से होने लगते हैं। यह सामाजिक परिवर्तन अधिकांश सामाजिक समूहों के सम्बन्धों को विघटित कर देता है।[2] युद्ध के कारण नये आविष्कार होने लगते हैं। नयी राजनैतिक व्यवस्था—प्रजातान्त्रिक अथवा एकतन्त्रीय आ जाती है। प्राद्योगिकी में परिवर्तन होने लगता है जिसके कारण कई प्रकार के सामाजिक परिवर्तन हो जाते हैं। युद्ध पारिवारिक जीवन को भी प्रभावित करता है। युद्ध जनसंख्या की गतिशीलता, स्थानान्तरण, टूटे परिवारों की वृद्धि, गृह-समस्या, आदि तत्त्वों में परिवर्तन उपस्थित कर देता है।

(2) **सामाजिक रूढ़ियां** (Social Mores)—युद्ध परम्परागत व्यवहारों को परिवर्तित करके सामाजिक रूढ़ियों पर भी आघात करता है। युद्ध एक लम्बे समय से चले आ रहे व्यवहार प्रतिमानों पर भी आघात करता है। युद्ध के कारण इतने सामाजिक परिवर्तन उपस्थित होते हैं जिनमें कि पुरानी रूढ़ियाँ ठीक से अपना कार्य नहीं कर पातीं, सामाजिक रूढ़ियों का नियन्त्रण समाप्त हो जाता है।

(3) **अपराधों की वृद्धि** (Increase of Crimes)—युद्ध के परिणामस्वरूप अपराधों की संख्या बढ़ जाती है। युद्ध के कारण सामाजिक ढांचे में तीव्र परिवर्तन आते हैं। व्यक्तियों की आर्थिक दशा गिर जाती है, सामाजिक रूढ़ियों का नियन्त्रण शिथिल हो जाता है। जिसके परिणामस्वरूप अपराधों की संख्या बढ़ जाती है। नागरिक जोश में आकर मार-पीट कर बैठते हैं। पारिवारिक सम्पर्क टूटने के कारण वेश्यावृत्ति बढ़ जाती है। बाल अपराधों की संख्या बढ़ जाती है। विजित राष्ट्रों में भूख और निराशा संघर्ष के लिए प्रेरित करती है।

(4) **निम्न चरित्र स्तर** (Low Standard of Character)—युद्ध व्यक्तियों के नैतिक चरित्र को गिरा देता है। रूढ़ियों के नियन्त्रण के शिथिल होने के कारण व्यक्ति मनमानी करने लगता है। कालाबाजारी (black marketing) बढ़ जाती है। भोजन एवं अन्य सुविधाओं पर नियन्त्रण होने के कारण कई संस्थाएं कालाबाजारी के आधार पर सुविधाएँ करने को बन जाती हैं। सरकार भी विरोध फैलने के कारण कुछ सुधारात्मक कदम नहीं उठा पाती। वेश्यावृत्ति बढ़ जाती है, अनैतिक यौन सम्बन्ध बढ़ जाते हैं। अनैतिक सन्तानों की दर बढ़ जाती है।

---

1 "Total war affects the total institutional life of a nation." Elliott and Merrill, *Social Disorganisation*, p. 720.

2 बिस्तार के लिए देखिए रामबिहारीसिंह तोमर की 'समाजशास्त्र की रूपरेखा'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(5) संघर्ष की दर में वृद्धि (Increase in Rate of Conflicts)—युद्ध के संघर्षों की दर बढ़ जाती है। राष्ट्र के अन्तर्गत वर्ग, प्रजाति एवं अन्य भाँति उठ खड़े होते हैं। युद्ध के कारण श्रमिकों को उत्पादन का कार्य अधिक पड़ता है और उन्हें वेतन वही मिलता है तो लाभ न मिलने के कारण इनमें प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है और संघर्ष उत्पन्न हो जाते हैं। युद्ध का एक प्रमुख "कामरोको" आन्दोलन है। युद्ध राष्ट्र के उत्पादन को अस्थायी रूप से कम है। यह एक नये विलासी वर्ग का निर्माण करता है। यह विलासी वर्ग युद्ध में अत्यधिक आर्थिक लाभ प्राप्त करता है। इस वर्ग के प्रति भी श्रमिकों में उत्पन्न हो जाता है और संघर्ष उत्पन्न हो जाते हैं।

(6) मानव जीवन का विनाश (Destruction of Human Life)—युद्ध जीवन का बहुत अधिक विनाश करता है। यह केवल सैनिक व्यक्तियों के ही का विनाश नहीं करता वरन नागरिक जीवन का भी इससे बहुत अधिक विनाश है। द्वितीय महायुद्ध में लगभग 10 अरब सैनिक और प्रथम महायुद्ध में लगभग अरब सैनिक मारे गये। इसके अतिरिक्त मारे गये नागरिकों की संख्या भी है तीय महायुद्ध में लगभग 12 अरब है। मानव जीवन की इस क्षति ने सामाजिक को भी क्षति पहुँचायी है; क्योंकि मारे गये व्यक्तियों में से प्रत्येक व्यक्ति किसी सामाजिक समूह का सदस्य था। इलियट तथा मेरिल ने लिखा है, "सैनिकों गरिकों दोनों में जीवन की क्षति, सामाजिक विघटन के अर्थों में अन्य किसी मति को दूर तक ढँक देती है।"[1]

(7) रोग वृद्धि (Increase of Diseases)—युद्ध केवल मानव जीवन की नहीं करता, वरन विभिन्न प्रकार के रोगों को भी परिणाम में देता जाता है। मार-काट, खून-खराबी के दृश्य अनेक सैनिकों का मानसिक सन्तुलन नष्ट कर है। वे पागल हो जाते हैं। उन्हें विभिन्न प्रकार के मानसिक रोग हो जाते हैं। रोगों के अतिरिक्त शारीरिक रोगों की संख्या भी कम नहीं होती। नागरिक निक सभी इन शारीरिक रोगों के शिकार होते हैं। आधुनिक युद्ध में प्रयोग में वाले विभिन्न बमों से वायु ऐसी जहरीली हो जाती है कि नागरिक स्वास्थ्य को अधिक हानि पहुंचाती है। नागासाकी और हिरोशिमा पर गिराये गये अणु बमों bombs) के कारण मीलों तक वायु जहरीली हो गयी जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति कुरूप हो गए। उन्हें विभिन्न प्रकार के रोगों ने घेर दबोचा। युद्ध रोगों का प्रसार करता है।

(8) शिक्षण संस्थाओं का विघटन (Disorganization of Educational tions)—युद्ध का शिक्षण संस्थाओं पर भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

The loss of life, among both soldiers and civilians, over-shadowed y other loss in terms of social disorganisation." Elliott and errill, *Social Disorganisation*, p. 713.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युद्ध क्षेत्रों के समीप की शिक्षण संस्थाएँ तो पूर्ण रूप से बन्द कर दी जाती हैं। अ विद्यार्थी युद्ध के समय शिक्षक पाठ्यक्रम में रुचि न लेकर युद्ध समाचारों में रुचि लगते हैं। अनेक विद्यार्थी युद्ध में रेडक्रास, स्काउटिंग, एन.सी.सी., ए.सी.सी., संस्थाओं द्वारा सहायता पहुँचाते हैं और अध्ययन नहीं कर पाते। द्वितीय महायुद्ध अमरीका के लाखों बच्चे स्कूल नहीं जा सके। अनेक विद्यार्थियों के लिए विषम पर स्कूल लगते थे जिसमें प्रशिक्षित अध्यापकों का भी अभाव रहा। दैनिक कार्य की अनेक क्रियाओं को हटा दिया गया। युद्ध के समय स्कूलों में उपस्थिति बहुत हो गयी। संयुक्त राज्य अमरीका के शिक्षा कार्यालय की सूचना के अनुसार 1940 की उपस्थिति से तुलना करने पर राष्ट्र के कई हाई स्कूलों में 1943-44 लगभग 1 करोड़ विद्यार्थियों का प्रवेश कम था।

परिवार एव युद्ध

परिवार समाज की इकाई है। सामाजिक विघटन का सबसे पहले प्र परिवार पर होता है केन्द्रीय संस्था होने से परिवार ही सबसे अधिक विघटित है। युद्ध में काम करने वाले सैनिक किसी न किसी परिवार के सदस्य होते हैं। मरने से परिवार की जो हानि होती है वह किसी भी भाँति से पूरी नहीं की सकती। इन मृत्युओं से परिवार की संस्था बहुत ही विघटित हो जाती है। परि पर युद्ध प्रमुखतः निम्न प्रभाव डालता है :

(1) पृथक्करण (Separation)—युद्ध के कारण परिवार के सदस्य पृथ हो जाते हैं। कई व्यक्ति तो युद्ध के समय सैनिक रूप से व कई व्यक्ति युद्ध उ में नियुक्त होने के कारण अपने परिवारों से बहुत दूर चले जाते हैं जिसके का परिवार अपने मूल कार्यों को उचित ढंग से पूर्ण नहीं कर पाता। पिछले द्वि महायुद्ध में अमरीका के 3 से 4 लाख परिवारों में पृथक्करण की अवस्था आयी

(2) मृत्यु (Deaths)—युद्ध के कारण बहुत से परिवारों के सदस्य को प्राप्त होते हैं जिसके कारण परिवार टूट जाते हैं।

(3) तलाक (Divorce)—युद्ध परिवार को तलाक के द्वारा भी विघ करता है। पृथक्करण के कारण तलाक की संख्या बढ़ जाती है; क्योंकि परिवा मूल कार्यों में बाधा पहुँचती है। युद्ध तलाक के लिए साधारण कारणों को प्रस्तुत देता है। युद्ध से लौटने पर सैनिकों के मानसिक स्तर में परिवर्तन होने से तलाक अवस्था उत्पन्न हो जाती है। युद्ध के समय पति पत्नी से दूर रहता है और इस के काल में सन्तानोत्पत्ति से पिता अपनी सन्तान से व्यवस्था न कर पाने के का तलाक दे देता है और इस भाँति तलाक की दर में वृद्धि हो जाती है।

(4) स्थानान्तरण (Migration)—युद्ध के कारण बहुत से परिवार स्थान से दूसरे स्थान को चले जाते हैं। युद्ध उद्योगों में नियुक्ति हो जाने व भ कारण व्यक्ति अपने परिवारों के साथ ऐसे स्थानों को चले जाते हैं जिससे स्थानान्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्था उपस्थित हो जाती है। स्थानान्तरण से परिवार में विघटन की अवस्था रूप से आ जाती है; क्योंकि नये पड़ोस व नये स्थान में व्यवस्था स्थापित आसान नहीं होता। बच्चों के शिक्षण एवं मकानों की समस्या उत्पन्न हो है।

(5) **विचारहीन विवाह**—युद्ध के समय विवाहों की संख्या बढ़ जाती है और हीन एवं शीघ्र विवाह होने लगते हैं। ये विवाह इतनी शीघ्रता से होते हैं कि सम्बन्ध में पूर्ण रूप से विचार नहीं किया जा सकता।

(6) **यौन-आदर्श की कमी (Lack of Sex Morality)**—युद्ध के समय नी पृथक हो जाते हैं जिसका एक स्वाभाविक परिणाम यौन सम्बन्धों का रुक है। ऐसे समय यौन प्रवृत्ति को न रोक पाने के कारण लोगों में अनैतिकता बढ़ है। लोग यौन-स्वतन्त्रता की ओर अग्रसर होते हैं। इसके अतिरिक्त सैनिक बस्तियों में जाते हैं वहीं अपनी उत्तेजना को शान्त करने का प्रयास करते हैं स्वाभाविक परिणाम अनैतिकता का बढ़ जाना है।

(7) **अनैतिक सन्तानों की दर में वृद्धि (The Increased Rates of Illegi-te Children)**—यौन स्वतन्त्रता के कारण और अनैतिकता के बढ़ जाने के अनैतिक सन्तानों की दर भी बढ़ जाती है।

(8) **परिवार के कार्यों का पतन**—युद्ध के समय परिवार के कार्य छिन्न-भिन्न ते हैं। परिवार के सदस्यों के पृथक हो जाने के कारण परिवार अपने प्राणी-य (यौन सन्तुष्टि आदि) कार्य पूर्ण नहीं कर पाता। इसके अतिरिक्त परिवार अन्य कार्यों जैसे; मनोरंजन, आर्थिक, शैक्षणिक आदि कार्यों को पूरा करने में रहता है और परिवार विघटित हो जाता है।

(9) **कार्य का आधिक्य (Heavy Work)**—युद्ध के समय कार्य का आधिक्य के कारण परिवार के सदस्यों को रात्रि को भी कार्य करना पड़ता है जिससे स्वास्थ्य गिरता है। माता-पिता अपने बालकों पर पूर्णरूप से अनुशासन करने मर्थ रहते हैं। कई पिताओं को औद्योगिक कार्य अधिक समय तक करना पड़ता तः वे अपने परिवारों पर अधिक ध्यान नहीं दे पाते और पारिवारिक तनाव ily tension) उत्पन्न हो जाते हैं।

(10) **स्त्रियों का कार्य करना**—युद्ध के समय कार्य की माँग बढ़ जाने के स्त्रियाँ एवं माताएं भी कार्य करने लगती हैं। इससे परिवार में परिवर्तन पत होता है। माताएँ अपने बालकों पर अधिक ध्यान नहीं दे पातीं। स्त्रियाँ कार्यों को भी अपनाती हैं। वे युद्ध सम्बन्धी कार्यों में भी संलग्न हो जाती हैं वे अपने पारिवारिक कार्यों को पूर्ण रूप से सम्पन्न नहीं कर पातीं।

(11) **बालकों में अनुशासनहीनता (Lack of Control Among Child-**—माताओं के काम में लग जाने के कारण बालकों में अनुशासन की कमी आ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाती है। वे मनमाना व्यवहार करने लगते हैं। बालकों को माताओं के नौकरी लग जाने के कारण भावनात्मक चोट पहुँचती है।

(12) बाल अपराधी प्रवृत्ति बढ़ना (The Tendency Towards Juvenile Delinquency Increased)—बालकों में युद्ध के समय बाल अपराधी प्रवृत्ति बढ़ जाती है। यह विशेष रूप से 15 से 20 वर्ष की आयु के बालकों में होती है। लड़कों से भी अधिक लड़कियों में विशेष रूप से अपराधी प्रवृत्ति बढ़ती है। पिछले महायुद्ध में यह प्रवृत्ति बढ़ी हुई पायी गयी।

(13) बालकों में घृणा की भावना की वृद्धि—घृणा की प्रवृत्ति बालकों में शुरू से ही दबाकर दूसरी ओर मोड़ दी जाती है। किन्तु युद्ध के समय यह प्रवृत्ति बाह्य समूह (out group) के प्रति उठ खड़ी होती है जिसका परिणाम वर्ग संघर्ष, प्रजाति संघर्ष अथवा धार्मिक संघर्ष एवं बाल अपराधों के रूप में उभरता है।

(14) माता-पिता एवं बालकों में संघर्ष (Conflict Between Children and their Parents)—युद्ध के समय कार्य के आधिक्य के कारण बालक भी श्रमिक के रूप में भर्ती कर लिए जाते हैं। बालकों में ऐसे समय में अपने महत्त्व का ज्ञान आता है और वे माता-पिता के अनुशासन के प्रति विद्रोह भी कर देते हैं। माता-पिता एवं बालकों में व्यवस्था की समस्या उत्पन्न हो जाती है।

परिवार पर पड़े प्रभाव सारे समाज पर प्रभाव डालते हैं। ऊपर प्रमुख प्रभावों का वर्णन किया गया है।

आर्थिक संरचना एवं युद्ध

युद्ध और आर्थिक संरचना का बहुत गहरा सम्बन्ध है। युद्ध में जन-हानि के साथ-साथ आर्थिक हानि भी बहुत अधिक मात्रा में होती है। यन्त्रीकरण के पश्चात् वस्तुओं का मूल्य बहुत अधिक बढ़ गया है। युद्ध में सामाजिक पूँजी को समाप्त करने के साथ ही साथ प्राकृतिक पूंजी को भी समाप्त करने की प्रवृत्ति पायी जाती है। आर्थिक अव्यवस्था को समाप्त करने के कोई साधन नहीं रहते। यहाँ तक कि आधुनिक युद्ध में विजयी राष्ट्र भी आर्थिक हानि उठाता है। विजय के मूल्य के लिए उसे आर्थिक मूल्य चुकाना होता है। आधुनिक युद्ध का आर्थिक संरचना पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। प्रमुख प्रभाव निम्न हैं :

(1) सम्पत्ति का विनाश (Destruction of Property)—युद्ध में बम आदि गिरने से भौतिक सम्पत्ति का अधिक मात्रा में विनाश होता है। घर, फैक्टरियाँ, मैदान आदि सभी स्थल युद्ध के द्वारा क्षति-ग्रस्त अथवा नष्ट होते हैं। द्वितीय महायुद्ध में जापान के सारे उद्योगों को समाप्त कर दिया गया। हिरोशिमा और नागासाकी विनाश के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

(2) मूल्यों का बढ़ जाना (Increase in Costs)—युद्ध के कारण हुई हानि के कारण वस्तुओं का मूल्य बढ़ जाता है। युद्ध के समय अधिकांश वस्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...कों के प्रयोग के लिए रख ली जाती हैं और बाजार में मांग की अपेक्षा उत्पादन ...हुई वस्तुएँ कम भेजी जाती हैं जिससे मूल्य बढ़ जाते हैं। युद्ध के समय उत्पादन ...हीन स्तर तक बढ़ जाता है किन्तु युद्ध के बाद उत्पादन बहुत गिर जाता है। ...त मूल्य बढ़ जाते हैं।

(3) ऋणग्रस्तता (Indebtedness)—युद्ध के समय शस्त्रों आदि के ...णि एवं अन्य युद्ध सामग्री के लिए धन की आवश्यकता होती है और राज्य के ... इतना धन जमा नहीं रहता कि वह युद्ध को सुचारु रूप से चला सके। अतः ...अपने नागरिकों एवं सहयोगी राष्ट्रों से ऋण लेता है जिससे राष्ट्र ऋणग्रस्त हो ...ता है।

(4) कर-वृद्धि (Increase in Taxes)—सम्पत्ति-नाश और सैनिकों एवं ...के परिवारों को सहायता आदि देने का परिणाम यह हो जाता है कि राष्ट्र के ...धन का नितान्त अभाव हो जाता है; परिणामस्वरूप वह ऋणग्रस्त हो जाता ... राष्ट्र इस ऋण से मुक्ति पाने का प्रयत्न करता है और वह जनता पर विभिन्न ...र के कर लगाता है जिससे राष्ट्रीय आय बढ़ जाये और आर्थिक अव्यवस्था समाप्त ...जाए। कर वृद्धि में चुंगी बढ़ जाना, नये कर लगा दिये जाना आदि सम्मिलित ...ते हैं।

(5) अव्यवस्थित मुद्रा विनिमय (Currency Disorders)—युद्ध के कारण ... विनिमय में अव्यवस्था उत्पन्न हो जाती है। युद्ध के कारण राष्ट्र को मुद्रा ...तार (inflation) करना आवश्यक हो जाता है। मुद्रा विस्तार के कारण उत्पा... कम होता है और जनता की क्रय शक्ति भी कम हो जाती है। युद्ध के कारण ...द्रा का मूल्य कम हो जाता है अतः युद्ध मुद्रा विनिमय में अव्यवस्था उत्पन्न कर ...ता है।

(6) औद्योगिक केन्द्रों में जनसंख्या की वृद्धि (Increase of Population Industrial Centres)—युद्ध के कारण औद्योगिक केन्द्रों में जनसंख्या की वृद्धि ...जाती है। उत्पादन के कार्य पर बहुत अधिक बल दिये जाने के कारण, गाँव व नगर ... जनसंख्या औद्योगिक केन्द्रों में आकार एकत्रित हो जाती है और उत्पादन का कार्य ...जाता है। युद्ध के परिणामस्वरूप औद्योगिक केन्द्रों में जनसंख्या बढ़ जाती है। ...-उद्योगों के क्षेत्रों में भी जनसंख्या की वृद्धि हो जाती है।

(7) दरिद्रता में वृद्धि (Increase in Poverty)—युद्ध में अत्यधिक धन ...य होने के कारण, युद्ध के पश्चात्, देश में दरिद्रता बढ़ जाती है। युद्ध के समय ...धाधुन्ध व्यय होता है। इस व्यय को रोकने का कोई साधन नहीं है। परिणाम-...रूप देश में दरिद्रता फैल जाती है। सम्पत्ति का विनाश, कर वृद्धि, बढ़े हुए मूल्य, ...व्यवस्थित मुद्रा आदि सभी तत्त्व दरिद्रता बढ़ाने में योग देते हैं।

(8) बेकारी (Unemployment)—देश में युद्ध बेकारी भी फैला देता ...। युद्ध के समय सैनिक युद्ध कार्य में लगे रहते हैं। श्रमिक युद्ध के कार्य में लगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहते हैं। किन्तु युद्ध समाप्त होते ही सैनिक बेकार हो जाते हैं। देश में गरीबी की समस्या के साथ-साथ बेकारी की समस्या भी अत्यन्त व्यापक रूप में उठ खड़ी होती है।

(9) अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था का विघटन (Disorganization of International Economy)—युद्ध किसी देश की भीतरी आर्थिक व्यवस्था को ही विघटित नहीं करता, वरन वह अन्तरराष्ट्रीय व्यापार को भी प्रभावित करता है। युद्ध के कारण अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था विघटित हो जाती है। आधुनिक ढंग में सभी राष्ट्र एक-दूसरे पर आर्थिक रूप से निर्भर हैं। आयात-निर्यात एवं कच्चे माल के लिए राष्ट्रों में अन्तर्निर्भरता पायी जाती है। सभी राष्ट्र आपस में व्यापारिक सम्बन्धों का निर्माण करते हैं। युद्ध इन व्यापारिक सम्बन्धों को भंग कर देता है। अन्तरराष्ट्रीय असमानता नये रूपों में समक्ष आती है। युद्ध प्राचीन अच्छे ग्राहकों एवं अन्तरराष्ट्रीय ढाँचे को नष्ट कर देता है और अन्तरराष्ट्रीय ऋण की अवस्था ला देता हैं। उत्पादन के विश्वव्यापी विशेषीकरण की प्रवृत्ति युद्ध के कारण नहीं बन पाती और युद्ध इसे हतोत्साहित ही करता है। युद्ध का भय प्रत्येक देश को आत्मनिर्भरता का पाठ पढ़ाता है।

राजनैतिक संरचना एवं युद्ध

युद्ध के कारणों का वर्णन करते हुए हम देख ही आये हैं कि युद्ध के कारणों में प्रमुखत: राजनैतिक संरचना सम्बन्धी कारक अधिक होते हैं। युद्ध प्रमुखत: राजनैतिक अथवा अन्तरराष्ट्रीय संघर्ष है। युद्ध राजनैतिक संरचना को बहुत अधिक प्रभावित करता है। राजनैतिक संरचना पर युद्ध के निम्न प्रभाव पड़ते हैं :

(1) **राज्य की शक्ति में वृद्धि** (Increase of Power of State)—युद्ध राज्य की शक्ति को बढ़ा देता है। युद्ध सैनिक सरकार के समक्ष अपने प्रजातन्त्र को बलिदान ही नहीं करता वरन राज्य सरकार की शक्ति को भी बढ़ा देता है। सैनिक सरकार को प्रजातन्त्र के अधिकार मिल जाते हैं। युद्ध के अवसर पर प्रजातन्त्र समाप्त हो जाता है। राष्ट्र में अपने राष्ट्र की सुरक्षा की भावना बढ़ जाती है। वेबर का कथन है कि "सैनिक अनुशासन सभी भाँति के अनुशासनों को जन्म देता है।"[1] युद्ध के समय देश में राज्य का नियन्त्रण बढ़ जाता है। युद्ध राज्य के लिए स्वास्थ्य है। इसी भाँति के विचार रेन्डोल्फ बोर्ने ने प्रकट किये हैं, "युद्ध राज्य का स्वास्थ्य है।"[2] इस स्वास्थ्य से तात्पर्य उन राज्यों के लिए है जो युद्ध में विजयी होते हैं। हारे हुए राष्ट्रों की शक्ति तो वैसे ही दूसरे राष्ट्र के हाथों में चली जाती है।

---

1 "The discipline of the army gives birth to all disciplines." Max Weber, *Essays in Sociology*. Translated by Gerth and Mills, New York ; Cxford University Press (1946), p. 261.

2 "War is the health of the state." Randolph Bourne : Unfinished fragment on the State In untimely Papers ; B. W. Huesch, New York, 1919; quoted by Elliott and Merrill, *Social Disorganisation*, p. 721.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज्य की शक्ति में वृद्धि कई रूपों में होती है। जनता पर राज्य का नियन्त्रण जाता है। उद्योग शक्ति पर राज्य का नियन्त्रण बढ़ जाता है और अधिकतम दन युद्ध के समय किया जाता है। नागरिक जनसंख्या पर नियन्त्रण बढ़ जाते माल के उपभोग पर राशन लग जाता है। मूल्यों पर नियन्त्रण हो जाता है। वार्य बचत योजना प्रस्तावित होती है। श्रम-संगठनों पर सरकार का नियन्त्रण हो है। समस्त राष्ट्र लड़ने वाली एक इकाई बन जाता है। राज्य की वैधानिक न्यायिक शक्तियाँ बढ जाती हैं।

(2) नागरिक अधिकारों में कमी (Decrease in Civil Rights)— के कारण नागरिक अधिकारों में कमी हो जाती है। नागरिकों को सुविधाएँ कम होती हैं। उपभोग की वस्तुओं पर नियन्त्रण होता है। अतः वे कम मात्रा में होती हैं। मुक्त भाषण एवं मुक्त एकत्रण की सुविधा नहीं रहती। नागरिकों पूर्ण रूप से सुरक्षा नहीं प्रदान की जा सकती, क्योंकि अधिकांश सैनिक शक्ति युद्ध दानों में रहती है। राजनैतिक विचारधाराओं एवं विषयों पर मत प्रकाशन की न्त्रता नहीं रहती।

(3) समूह की दृढ़ता (Solidarity of Group)—युद्ध के कारण सामूहिक ता बढ़ जाती है। युद्ध समूह के सम्बन्धों के प्रति सदस्यों की चेतना केन्द्रित देता है और सामूहिक कार्यों में भाग लेने की क्रियाओं में भी वृद्धि कर देता है। री संघर्ष (दूसरे समूह से) अपने समूह की एकता को बढ़ाता है और समूह का करण भी करता है। समूह के प्रति एकता की भावना बढ़ जाती है। समूह में ता आ जाती है।

स्कृतिक संस्थाएँ एवं युद्ध

युद्ध के समय सांस्कृतिक संस्थाओं में भी विघटन आ जाताहै जनता स्कृतिक सस्थाओं की ओर ध्यान न देकर युद्ध की ओर ध्यान देती है। साहित्य, ति, कला आदि के क्षेत्रों में प्रगति रुक जाती है। राष्ट्रवादी साहित्य का निर्माण ता है। युद्ध के पश्चात भी सांस्कृतिक कार्यक्रमों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता। रंजन की सुविधा भी पूर्ण रूप से उपलब्ध नहीं हो पाती। धार्मिक कार्यक्रमों में चि कम हो जाती है। व्यक्ति का नैतिक व आध्यात्मिक आदर्शों का पतन होने से र्म से विमुखता आ जाती है। धर्म शान्ति का उपदेश देता है। उसे सुनने के लिए सी को भी अवकाश प्राप्त नहीं होता। धर्मभीरु व्यक्तियों को धर्म के द्वारा आश्रय प्राप्त होता है। अन्य सांस्कृतिक तत्त्वों पर भी युद्ध का पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। द्ध के परिणामस्वरूप ऐतिहासिक स्मृति चिन्ह, मन्दिर, चर्च, मस्जिद, पुस्तकालय दि बम आदि से नष्ट हो जाते हैं। युद्ध के समय प्रचलित आदर्शों, रीति-रिवाजों, थाओं एवं संस्थाओं का पालन पूर्ण रूप से नहीं होता।

नव जाति एवं युद्ध

युद्ध का मानव प्रजाति पर भी अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। मानव जीवन का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विनाश हो जाता है और मानव प्रजाति की संख्या युद्ध के परिणामस्वरूप कम हो जाती है। युद्ध सामाजिक प्रवरण (social selection) का एक प्रमुख यन्त्र है जिसके द्वारा समाज के शक्तिशाली युवकों एवं योग्य व्यक्तियों के जीवन का विनाश हो जाता है और मानव समाज में अयोग्य, वृद्ध एवं निर्बल बच रहते हैं। कई स्त्रियाँ पतियों की मृत्यु के कारण विधवा हो जाती हैं और सुयोग्य सन्तानों की उत्पत्ति से वंचित हो जाती हैं। युद्ध द्वारा युवकों एवं शक्तिशाली व्यक्तियों के जीवन-विनाश के परिणामस्वरूप कई स्त्रियों को उपयुक्त वर प्राप्त नहीं होते और उन्हें कौमार्यावस्था में रहना होता है और वह सुयोग्य सन्तान उत्पत्ति के अयोग्य हो जाती हैं। इस भाँति मानव प्रजाति को दोहरी क्षति पहुँचती है। निर्बल एवं वृद्धों द्वारा उत्पन्न बच्चे भी निर्बल होते हैं। प्राणीशास्त्रीय सिद्धान्तों के आधार पर मानव प्रजाति को बहुत अधिक हानि युद्ध द्वारा होती है। युद्ध की इस विनाश प्रवृत्ति से मानव प्रजाति के यौन-सन्तुलन (sex-balance) को भी धक्का पहुँचता है। पुरुषों की संख्या कम हो जाती है और स्त्रियों की संख्या बढ़ जाती है। यह असन्तुलन आयु में भी हो जाता है। वृद्धों की संख्या अधिक व युवकों की संख्या घट जाती है। इस भाँति युद्ध मानव प्रजाति को प्राणीशास्त्रीय दृष्टिकोण से भी बहुत हानि पहुँचाता है। नवम्बर 1957 में जब श्रीमती इन्दिरा गांधी जापान-यात्रा से लौटकर आयीं तो उन्होंने बताया कि हिरोशिमा, जहाँ पहला परमाणु बम गिरा है, को उन्होंने देखा है। उसका परिणाम भी उन्होंने बम गिरने के 10 वर्ष बाद देखा है कि वहाँ पर कई स्त्रियाँ आज भी कुरूप बच्चों को जन्म देती हैं।[1]

युद्ध का समाजशास्त्रीय महत्त्व
(Sociological Significance of War)

युद्ध के उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो गया कि राष्ट्रीय समुदायों के बीच होने वाले संघर्ष को हम युद्ध कहते हैं। युद्ध का रूप आधुनिक युग में बड़ा विकराल हो गया है। प्रथम व द्वितीय महायुद्धों का नग्न चित्र अभी भी संसार के सम्मुख है। तृतीय महायुद्ध के विकराल रूप के भय से लोग इसे प्रारम्भ नहीं करते फिर भी उसकी आशंका सदैव बनी रहती है। परमाणु बमों के परीक्षण आजकल हो रहे हैं। नेवादा (Navada) में किये जाने वाले परीक्षणों के विरोध में जापान ने विशेष रूप में विरोध प्रकट किया है, यद्यपि संसार के अधिकांश राष्ट्र इसके पक्ष में नहीं हैं।

---

1 "On her return from Japan Smt. Gandhi said that the horrors of atom wars were already a reality to the women of Japan and she had seen with her own eyes the ravages on human beings even 10 years after the bomb fell. Many women had given birth to, deformed children also." Stretchout from the editorial, '*Social Welfare*' Vol. IX, No. 9, Dec. 1954, p. 2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युद्ध का भी लाभदायक पक्ष है। यद्यपि इससे हानि अधिक है। बीसंज और बीसंज ने लिखा है, फिर भी अधिक संघर्ष विनाशकारी होता है और जितनी समस्याओं को सुलझाता है उससे कहीं अधिक समस्याओं को जन्म देता है।"[1] युद्ध का रूप विनाशकारी तो है ही, परन्तु समूह के अन्दर अधिक चेतना एवं संगठन उत्पन्न करता है।

ग्रीन ने उचित ही लिखा है, "युद्ध सामूहिक चेतना तथा सामूहिक समानता को बढ़ाता है।"[2] ग्रीन के इस कथन में बड़ी सत्यता है। पाकिस्तान सरकार रचनात्मक कार्यों के द्वारा पाकिस्तान के निवासियों में एकता स्थापित करने में असफल रही है। इसलिए आन्तरिक कलह एवं फूट को एकता में परिवर्तित करने के लिए काश्मीर समस्या को लेकर भारत के विरुद्ध जिहाद का नारा बुलन्द कर देती है। इस युक्ति के द्वारा वहाँ की सरकार पाकिस्तान के आन्तरिक समूह में एकता एवं शान्ति बनाये रखती है यद्यपि युद्ध न होने के कारण वे पूर्णतया अपने इस उद्देश्य में सफल नहीं होते। किंग्सले डेविस ने ठीक ही लिखा है, "इसलिए आन्तरिक एकता और बाह्य संघर्ष एक ही काल के प्रतिकूल पक्ष हैं।"[3]

प्रश्न

1. मनोविज्ञान युद्ध या मद्य-निषेध की समस्याओं पर क्या प्रकाश डालता है?

(What light does psychology throw on the problems of war or prohibition?)

2. युद्ध के समय एक ही वस्तु के प्रति घृणा एवं प्रेम की मिश्रित आदतों एवं अभिवृत्तियों का क्या महत्त्व है?

(Show the importance of ambivalent habits and attitudes in times of war)

3. टिप्पणी लिखिए : युद्ध का मनोविज्ञान।

(Write short note on : Psychology of war.)

---

[1] "Much conflict, however, is destructive and breeds more problems than it solves." Biesanz and Biesanz, *Modern Society*, p. 93.

[2] "War lightens group awareness and group identity." Green, *Sociology*, p. 54.

[3] "Internal harmony and external conflict are therefore opposite sides of the same shield." K. Davis. *Human Society*, p. 160

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

44

क्रान्ति का मनोविज्ञान

(Psychology of Revolution)

क्रान्ति प्रायः ऐसे परिवर्तनों को कहते हैं जो एकदम से होते हैं। 'क्रान्ति' शब्द राजनैतिक क्रान्ति एवं विप्लव से इतना अधिक सम्बद्ध है कि प्रायः लोग क्रान्ति से राजनैतिक क्रान्ति ही समझते हैं और हिंसा (violence) से सम्बद्ध समझते हैं। यही कारण है कि क्रान्ति की प्रकृति हिंसक मानी जाती है। पर यह धारणा समाजशास्त्रीय दृष्टि से उचित नहीं है। सामाजिक क्रान्ति का प्रत्यय अत्यधिक विस्तृत है। इसके अन्तर्गत सब प्रकार की क्रान्ति आती हैं—उदाहरण के लिए राजनैतिक क्रान्ति के अतिरिक्त आर्थिक क्रान्ति, औद्योगिक क्रान्ति, वैज्ञानिक क्रान्ति, सांस्कृतिक क्रान्ति, सामाजिक संरचना एवं संगठन में क्रान्ति इत्यादि। आखिर क्रान्ति का अभिप्राय क्या है ?

क्रान्ति भी एक प्रकार का सामाजिक परिवर्तन है। सामाजिक क्रान्ति वह सामाजिक परिवर्तन है जो तीव्र गति से होता है और आमूलचूल परिवर्तन लाता है और जिसके परिणामों की दिशा (direction) निश्चित नहीं होती है। ऑगबर्न तथा निमकॉफ ने भी लिखा है, "क्रान्ति संस्कृति में महत्त्वपूर्ण प्रकार के तीव्र परिवर्तन को कहते हैं।"[1] ऑगबर्न तथा निमकॉफ ने यहाँ संस्कृति शब्द का व्यापक अर्थों में प्रयोग किया है। संस्कृति के अन्तर्गत राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक इत्यादि सब ही क्षेत्र आ जाते हैं। अतः राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक तथा अन्य क्षेत्रों में होने वाले महत्त्वपूर्ण प्रकार के तीव्र परिवर्तन को क्रान्ति कहते है। कोई भी क्रियात्मक परिवर्तन विचारों एवं मूल्यों में परिवर्तन के बिना सम्भव नहीं है। पहले विचारों एवं मूल्यों में परिवर्तन होता है। ब्रिन्टन ने क्रान्ति की परिभाषा इसी आधार पर की है। उसने लिखा है, "समाजशास्त्रीय अर्थ में, क्रान्ति वर्तमान सामाजिक संरचना के प्रति धारणाओं एवं मूल्यों मे आमूलचूल परिवर्तन को कहते हैं।"[2]

---

1 "Revolution is a rapid change of some magnitude in culture." Ogburn and Nimkoff, *A Handbook of Sociology*. p. 603.

2 In sociological terms, "revolution in transvaluation of attitudes and values towards the existing social structure." Crane Brinton, *The Anatomy of Revolution*, pp. 2-3.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रान्ति तीव्र परिवर्तन का द्योतक है। क्रान्ति का अर्थ सामाजिक परिवर्तन की उस तीव्र प्रक्रिया से है जिसके परिणामस्वरूप किसी समाज के सदस्य वर्तमान सामाजिक संरचना, सामाजिक संस्थाओं राजनैतिक संस्थाओं, सामाजिक प्रमापों (norms) एवं मूल्यों, सामाजिक अभिवृत्तियों एवं विश्वासों के प्रति नये दृष्टिकोण विकसित कर लेते हैं। इसका प्रभाव समाज के सब क्षेत्रों पर ही होता है।

क्रान्ति की प्रकृति (Nature of Revolution)

(1) **अचेतन, अवचेतन तथा चेतन प्रक्रिया** (Unconscious, Sub-conscious, and Conscious Process)—क्रान्ति एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें अचेतन (unconscious), अवचेतन (sub-conscious) तथा चेतन (conscious) तीनों स्तर पाये जाते हैं। अचेतन प्रक्रिया चलती रहती है। किसी व्यवस्था के प्रति असन्तोष अचेतन रूप से उसमें परिवर्तन के लिए प्रेरित करती है। किसी नये विचार अथवा मूल्य को कई बार अवचेतन में व्यक्ति स्वीकार कर लेते हैं और फिर उस दिशा में परिवर्तन लाना चाहते हैं। कोई भी क्रान्ति एकदम से नहीं होती है। क्रान्ति की कुछ पूर्व दशाएँ (pre-conditions) होती हैं। जो अचेतन एवं अवचेतन दशा में कार्य करती रहती हैं और फिर किसी समय विस्फोट हो जाता है। विस्फोट के कारण ही क्रान्ति का तीव्र परिवर्तन समझा जाता है, परन्तु विस्फोट बहुत पहले से अचेतन एवं अवचेतन दशा में प्रक्रिया चलती रहती है। किम्बाल यग ने उचित ही लिखा है, "वास्तव में कोई भी क्रान्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि पहले विश्वासों, अभिवृत्तियों और आदतों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन न हुए हों। अन्य कुछ भी इस तथ्य से परे नहीं हो सकता है कि क्रान्ति का एकदम जन्म होता है और नये मूल्यों एवं व्यवहारों को एकदम स्वीकार कर लिया जाता है।"[1]

अचेतन एवं अवचेतन प्रक्रियाओं से गुजरकर चेतन प्रक्रिया के द्वारा भी क्रान्ति होती है। अनेक क्षेत्रों में हम समाज में आमूलचूल परिवर्तन करना आवश्यक समझते हैं, उन दिशाओं में चेतन प्रयत्न किये जाते हैं। भारत में स्त्रियों की स्थिति अति दयनीय थी। इस दिशा में चेतन प्रयत्नों के द्वारा क्रान्ति लायी गयी है। इसी प्रकार अनेक क्षेत्रों में जानबूझकर क्रान्ति लायी जाती है। विशेष रूप से राजनैतिक क्षेत्र में तो क्रान्तियाँ चेतन प्रयत्नों से ही लायी जाती हैं। निश्चित कार्यक्रम होते हैं और उनके द्वारा क्रान्ति आती है। अनेक देशों ने सतत संघर्ष करके अपने देशों की स्वतन्त्रता प्राप्त की है।

---

1 "Actually on revolution can take place unless a tremendous alteration in beliefs attitudes and habits has gone before. Nothing is farther from the truth than that a revolution is the sudden birth and acceptance of absolutely novel values and practices." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 313.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(2) अनिरन्तर प्रक्रिया (Intermittent Process)—क्रान्ति एक अनिरन्तर प्रक्रिया है। यह एक बार प्रारम्भ होकर चलती रहती है और फिर एकदम तीव्र परिवर्तन उत्पन्न करने के उपरान्त रुक जाती है।

(3) ज्वालामुखीय प्रक्रिया (Volcanic Process)—क्रान्ति की प्रक्रिया ज्वालामुखी के समान होती है। यह आन्तरिक रूप से अन्दर ही अन्दर विकसित होती रहती है और फिर किसी विशेष समय अथवा स्थिति पर प्रस्फुटित हो पड़ती है। इसके बाह्य स्वरूप का ज्ञान तीव्र अवस्था में ही होता है।

(4) दिशा अनिश्चित (Direction Indefinite)—क्रान्ति की प्रक्रिया की दिशा अनिश्चित होती है। यह निश्चय नहीं रहता है कि परिणाम क्या होंगे। क्रान्ति पर इसकी तीव्रता के कारण मानव नियन्त्रण नहीं रह पाता। यह किसी भी दिशा में ले जा सकती है।

(5) सार्वभौमिक प्रक्रिया (Universal Proc)—क्रान्ति की प्रक्रिया सार्वभौमिक है। यह हर समाज में पायी जाती है। सम समय पर प्रायः हर समाज में ही क्रान्ति होती रहती है।

(6) हिंसक तथा अहिंसक दोनों ही (Violence and Non-violence both)—क्रान्ति हिंसक भी होती है और अहिंसक भी। कभी-कभी क्रान्ति लाने के लिए हिंसा का भी प्रयोग करना पड़ता है। प्रमुख रूप से राजनैतिक क्रान्तियों में हिंसा का प्रयोग किया जाता है। सशस्त्र क्रान्तियाँ भी होती हैं। अहिंसा के द्वारा भी क्रान्तियाँ होती हैं। राजनैतिक क्षेत्र को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में अहिंसा के द्वारा ही क्रान्तियाँ होती हैं। भारत में महात्मा गाँधी राजनैतिक क्रान्ति भी अहिंसा के द्वारा ही लाये।

(7) एकदम परिवर्तन (Sudden Change)—क्रान्ति की प्रक्रिया एकदम परिवर्तन लाती है। वैसे तो हर क्षेत्र में ही क्रान्ति होती है, परन्तु महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों को ही क्रान्ति कहते हैं।

(अ) राज्य सत्ता में एकदम परिवर्तन (Sudden Change in Political Set-up)—क्रान्ति राज्य सत्ता में यकायक परिवर्तन को भी कहते हैं। जो शासन आज इस समय है, वह एकदम से परिवर्तित हो जाता है।

(ब) यकायक सांस्कृतिक परिवर्तन (Abrupt Cultural Change)—संस्कृति में भी यकायक परिवर्तन हो जाते हैं। ये इस प्रकार के परिवर्तन होते हैं जो सांस्कृतिक संरचना में आमूलचूल परिवर्तन लाते हैं। इन आमूलचूल परिवर्तनों के कारण संस्कृति में मूलभूत परिवर्तन आ जाते हैं।

(स) सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में यकायक मूलभूत परिवर्तन (Sudden Fundamental Changes in the Social Order)—कभी-कभी समाज में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तत्त्व पनपते हैं कि सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में यकायक मूलभूत परिवर्तन आ ते हैं। औद्योगिक क्रान्ति के कारण देशों की सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में मूलभूत परिवर्तन हो गये। समस्त सामाजिक संस्थाओं एवं सामाजिक सम्बन्धों के प्रतिमानों परिवर्तन हो गये। नयी व्यवस्था उत्पन्न हो गयी।

उद्विकास और क्रान्ति में भेद (Difference Between Evolution and volution)—उद्विकास और क्रान्ति में अनेक भेद हैं। उद्विकास एक आन्तरिक क्रिया है जो कि शनैः-शनैः एक निश्चित दिशा में परिवर्तन लाती है। इसके विपरीत न्ति एक आन्तरिक एवं बाह्य प्रक्रिया है जो तीव्र परिवर्तन लाती है और जिसकी शा निश्चित नहीं होती है। क्रान्ति एक प्रकार से प्राणीशास्त्रीय जगत के उत्परिवर्तन (mutation) की प्रक्रिया के समान है। प्राणीशास्त्रीय क्षेत्र में भी उद्विकास ता है, परन्तु कभी-कभी यकायक नवीन परिवर्तन हो जाते हैं। वाहकाणुओं में यकायक परिवर्तन को उत्परिवर्तन (mutation) कहते हैं। इसी प्रकार सामाजिक क्षेत्र में उद्विकास की प्रक्रिया तो चलती ही रहती है परन्तु कभी-कभी यकायक परिवर्तन अथवा महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो जाते हैं, इन्हें क्रान्ति कहते हैं। उत्परिवर्तन के ही समान क्रान्ति की भी दिशा निश्चित नहीं होती है। उद्विकास चेतन प्रयत्नों से नहीं होता है, क्रान्ति में चेतन प्रयत्न भी महत्त्वपूर्ण हैं। उद्विकास के परिणाम प्रायः सम्भावित होते हैं, परन्तु क्रान्ति के परिणाम सम्भावित नहीं होते हैं।

उद्विकास और क्रान्ति के भेद निम्न तालिका से और भी अधिक स्पष्ट हो जाते हैं :

उद्विकास (Evolution)	क्रान्ति (Revolution)
1. उद्विकास की प्रक्रिया शनैः-शनैः परिवर्तन लाती है।	1. क्रान्ति की प्रक्रिया यकायक परिवर्तन लाती है।
2. उद्विकास की प्रक्रिया की एक निश्चित दिशा (direction) होता है, इसके कारण परिवर्तन उस निश्चित दिशा में ही होते हैं।	2. क्रान्ति की प्रक्रिया की कोई निश्चित दिशा नहीं होती है, जिसके परिणाम स्वरूप परिवर्तन किसी भी दिशा में हो सकते हैं।
3. उद्विकास की प्रक्रिया की दिशा निश्चित होने के कारण परिणाम सम्भावित होते हैं।	3. क्रान्ति की प्रक्रिया की दिशा अनिश्चित होने के कारण परिणाम असम्भावित होते हैं। परिणामों के विषय में कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उद्विकास (Evolution)	क्रान्ति (Revolution)
4. उद्विकास की प्रक्रिया आन्तरिक होती है और प्रत्यक्ष रूप से दृष्टि-गोचर नहीं होती है।	4. क्रान्ति की प्रक्रिया ज्वालामुखी समान होती है। यह आन्तरिक रूप से पनपती रहती है और एकदम यकायक इसका विस्फोट होता है।
5. उद्विकास की प्रक्रिया अचेतन होती है।	5. क्रान्ति की प्रक्रिया अचेतन, अवचेतन और चेतन तीनों ही स्तरों पर होती है।
6. उद्विकास की प्रक्रिया स्वतः (spontaneous) होती है और इसके लिए चेतन प्रयत्नों की आवश्यकता नहीं होती है।	6. क्रान्ति की प्रक्रिया में चेतन प्रयत्नों की आवश्यकता होती है। नेतृत्व का क्रान्ति लाने में महत्त्वपूर्ण योग होता है।
7. उद्विकास की प्रक्रिया की प्रकृति निरन्तर होती रहती है।	7. क्रान्ति की प्रक्रिया अनिरन्तर होती है। एक बार विस्फोट होकर रुक जाती है।
8. उद्विकास की प्रक्रिया अहिंसक होती है।	8. क्रान्ति की प्रक्रिया की प्रकृति अहिंसक एवं हिंसक दोनों ही होती हैं। हिंसा और सामाजिक एवं राजनैतिक क्रान्ति का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है।

क्रान्ति का अर्थ
(Meaning of Revolution)

क्रान्ति की प्रकृति की व्याख्या करते हुए हमने उद्विकास और क्रान्ति के अन्तर को समझाने का प्रयत्न किया, अब हम क्रान्ति के अर्थ को समझने का प्रयत्न करेंगे। किम्बाल यंग ने क्रान्ति की परिभाषा करते हुए लिखा है, "राष्ट्र-राज्य विशेष के अन्दर ही राज्य-शक्ति का नये प्रकार की शक्ति या सत्ता द्वारा हथिया लिया जाना ही क्रान्ति है।"[1] किम्बाल यंग की परिभाषा राजनैतिक क्रान्ति की परिभाषा है। प्रायः जब 'क्रान्ति' शब्द का उपयोग बिना किसी विशेषण के होता है, तो इसका अभिप्राय राजनैतिक क्रान्ति से ही होता है। उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार राजनैतिक

---

1 "Revolution is an abrupt shift to new forms of power or authority within a nation state." K. Young, *A Handbook of Social Psychology*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में यकायक अथवा आकस्मिक परिवर्तन को क्रान्ति कहते हैं। किम्बाल यंग ने और भी स्पष्ट करते हुए लिखा है, "क्रान्ति एक ऐसा आकस्मिक सामाजिक परिवर्तन है, जो साधारणतया वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था को बलपूर्वक उलट देने का कारण होता है और जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक तथा कानूनी नियन्त्रण के स्वरूपों की स्थापना होती है।"

क्रान्ति भी एक प्रकार का परिवर्तन है। जब सामाजिक परिवर्तन एकदम हैं, और बाह्य शक्तियाँ भी अपना योग देती हैं, तो उसे क्रान्ति कहते हैं। ऑगबर्न निमकॉफ ने इसकी परिभाषा करते हुए लिखा है, "क्रान्ति संस्कृति में महत्वपूर्ण परिवर्तन को कहते हैं।"[1]

...और क्रान्ति (Violence and Revolution)

प्रायः हिंसा और क्रान्ति अत्यधिक सम्बन्धित हैं और हिंसा क्रान्ति का एक ...त्वपूर्ण लक्षण समझा जाता है। अधिकतर क्रान्तियाँ हिंसा के सहारे होती हैं। ...नैतिक क्रान्तियाँ हिंसा के ही आधार पर ही होती हैं। चूंकि क्रान्ति का अर्थ ...नैतिक क्रान्तियों से ही लगाया जाता है, इसलिए हिंसा को भी क्रान्ति का एक ...ण माना जाता है। अल्फ्रेड म्यूसेल (Alfred Meusel) ने इस सम्बन्ध में लिखा "उन्नीसवीं शताब्दी में राजनीतिशास्त्र में क्रान्ति शब्द का अकेले प्रयोग का अर्थ ...नैतिक क्रान्ति ही माना जाता था। यही कारण है कि क्रान्ति और हिंसा शब्द ...-दूसरे से सम्बद्ध हैं। इसका कारण यह है कि राजनैतिक व्यवस्था को शान्तिपूर्ण ... से हटाया नहीं जा सकता और उसके हटाने के लिए हिंसा की आवश्यकता ...ती है।"[2]

वास्तव में हिंसा क्रान्ति का एक प्रमुख लक्षण नहीं है। किम्बाल यंग ने लिखा "बाह्य हिंसा क्रान्ति का एक अनिवार्य लक्षण नहीं है।

वास्तव में क्रान्ति के सफल होने के लिए हिंसा के अतिरिक्त कई कारकों की ...श्यकता पड़ती है। कोई भी क्रान्ति उस समय तक सफल नहीं हो सकती, जब ... जनता मनोवैज्ञानिक रूप से उसका साथ न दे।

क्रान्ति के कारक
(Factors of Revolution)

क्रान्ति के क्या कारक होते हैं? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। अनेक विद्वानों इस पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है। पहले हम उन कारणों को जानने का ...त्न करेंगे जो क्रान्ति की आधारशिला हैं।

"Revolution is a rapid change of some magnitude in culture."
Ogburn and Nimkoff, *A Handbook of Sociology*, p. 616.
Encyclopaedia of Social Science, Vol. XIII, p. 367.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पृष्ठभूमि सम्बन्धी कारक (Back Ground Factors)

ले बाँ ने, जो एक फ्रेंच पत्रकार-मनोवैज्ञानिक था, लिखा है कि क्रान्ति भीड़ व्यवहार (mob behaviour) से सम्बन्धित है। इसमें अचेतन एवं निम्न कोटि के उद्वेगों की अभिव्यक्ति होती है। निम्न वर्ग इनका प्रदर्शन करते हैं और उच्च वर्ग से सत्ता छीनने का प्रयत्न करते हैं।

फ्रायड के अनुयायियों का मत है कि क्रान्ति का तात्पर्य राज्य एवं अन्य अधिकारों के स्वरूपों को नष्ट करने की अचेतन इच्छाओं का उभरना होता है।

सोरोकिन पैवलॉव के विचारों के समर्थक हैं। सोरोकिन ने इस सम्बन्ध में लिखा है, "क्रान्ति अनियन्त्रित छिपे हुए अभिप्रेरणाओं का निकलना है।"[1]

एडवर्ड्स ने भी क्रान्ति का कारण सत्ता, अधिकार इत्यादि भी मौलिक इच्छाओं का दमन कहा है।

कुछ विद्वानों के अनुसार क्रान्ति का प्रमुख कारण आर्थिक अन्याय है। आर्थिक कारण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

क्रेन ब्रिन्टन के अनुसार क्रान्ति एक प्रकार का विघटन या व्याधिकी (pathology) है। उसने इसे बुखार के समान बताया है।[2]

क्रान्ति का कोई एक कारण नहीं कहा जा सकता। वास्तव में अनेक कारणों के फलस्वरूप क्रान्तियाँ होती हैं। इनमें सामाजिक-सांस्कृतिक (social-cultural) और सामाजिक-मनोवैज्ञानिक (social-psychological) अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

क्रान्ति के लिए अनेक कारक उत्तरदायी होते हैं। सर्वप्रथम पुरानी संस्थाएँ अपने कार्यों में असफल रहती हैं, क्योंकि नवीन दशाओं से वे सामंजस्य नहीं कर पातीं। सामाजिक दशाओं में परिवर्तन होता रहता है। इन परिवर्तनों के कुछ भी कारण हों, परन्तु पुरानी संस्थाएँ इनके अनुरूप नहीं होतीं। इसके साथ-साथ प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार एवं शोषण प्रारम्भ हो जाता है। ये पुरानी संस्थाओं को और भी बदनाम कर देते हैं। इन सबके फलस्वरूप जनता अपनी आवाज उठाती है। समय-समय पर तरह-तरह के प्रदर्शन होते रहते हैं। दंगे, हड़तालें, तोड़-फोड़ इत्यादि भी होते रहते हैं। निम्न एवं मध्यम वर्गों में से कुछ ऐसे लोग निकल आते हैं, जो उच्च वर्ग से सत्ता छीनने को उत्सुक होते हैं। यही लोग सशस्त्र दलों का निर्माण करते हैं।

अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लक्षण (Master Symptoms)

अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लक्षण की व्याख्या करते हुए एडवर्ड्स ने लिखा है -

---

1 "Revolution is a release of inhibited unconditioned responses." Sorokin, *The Sociology of Revolution*, p. 383.

2 Crane Brinton, *The Anatomy of Revolution*.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"Master symptom is one which, in a marked degree, condi-
ns others and without which a great revolution is impossible."[1]
महत्वपूर्ण लक्षण (master symptoms) वे लक्षण होते हैं जो प्रमुख एव आधार-
होते हैं और जिन पर अन्य कारक आधारित होते हैं। एडवर्ड्स ने इस तरह के
लक्षण बताये हैं : (1) आर्थिक विघटन (economic disorganization), (2)
न सामाजिक किंवदन्तियों (social myth) का विकास। किम्बाल यंग ने इसमें
कारक और जोड़े हैं—(1) सशस्त्र अल्पमत (militant minority) का विकास
(2) उचित एवं योग्य नेतृत्व का विकास।

आर्थिक विघटन एवं आर्थिक शोषण (Economic Disorganization and Economic Exploitation)

क्रान्ति और आर्थिक संस्थाओं एवं दशाओं में घनिष्ट सम्बन्ध है। आर्थिक
व्यवस्था से असन्तुष्टि क्रान्ति को जन्म देती है। धन एवं पूंजी का असमान वितरण,
दरिद्रता, आर्थिक शोषण, भ्रष्टाचार, अकाल, असमान कर, वेकारी—ये सब समाज
आर्थिक विघटन उत्पन्न करते हैं और क्रान्ति की चिनगारी को सुलगाने में सहायता
करते हैं।

किसान जमींदार के विरुद्ध हो जाता है; क्योंकि परिश्रम वह करता है और
लाभ जमींदार लेता है। इस पर भी जमींदार तरह-तरह के अत्याचार करता है।
इसी प्रकार नगरों में मजदूर बड़े-बड़े कल-कारखानों एवं मिलों में खून-पसीना एक
कर देते हैं और लाभ का अधिक भाग मिलता है मिल मालिकों एवं पूंजीपतियों को।
इतना परिश्रम करते हुए भी उसे सदैव यह भय बना रहता है कि कहीं उसका
काम न चला जाय, नौकरी न छूट जाय। यह असुरक्षा की भावना उसके लिए भयं-
कर होती है। इस प्रकार दयनीय आर्थिक दशाएँ क्रान्ति का कारण बनती हैं। फिर
भी यह स्मरण रखना चाहिए कि बिलकुल गिरी हुई आर्थिक दशाओं में क्रान्ति
नहीं होती। एडवर्ड्स ने भी इस सम्बन्ध में लिखा है, "वह उद्वेग, जो क्रान्ति को
चालक शक्ति प्रदान करता है, आशा है, निराशा नहीं।"[2]

जुझारू अल्पसंख्यकों (Militant Minorities) का विकास

क्रान्तियाँ स्वतः नहीं होतीं; इसके लि सगठन की आवश्यकता होती है।
क्रान्ति पहले विचारों में होती है। कुछ विचारक एवं लेखक उत्पन्न होते हैं, जो
लोगों में यह भावना भरते हैं कि उनके साथ अन्याय हो रहा है और उन्हें अपने
अधिकारों के लिए लड़ना चाहिए। जैसे-जैसे यह भावना तीव्र होती है, लोगों का
रोष बढता जाता है।

---

[1] Edwards, *The Natural History of Revolution*. p. 90.

[2] "The emotion which furnishes the driving power of revolution is hope, not despair." Edwards, *The Natural History of Revolution*, p. 35.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके साथ ही साथ कुछ ऐसे लोग उत्पन्न होते हैं, जो सैन्य-शक्ति में विश्वास रखते हैं। यद्यपि ऐसे लोगों की संख्या कम होती है और वे अल्पसंख्यक होते हैं, फिर भी क्रान्ति की दृष्टि से वे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते हैं। वे गुप्त से गुप्त कार्य करते हैं। उनके छोटे संगठन होते हैं और उनमें अत्यधिक अनुशासन पाया जाता है। जब क्रान्ति प्रारम्भ होती है, तो वे राजनैतिक दलों के रूप में सामने आते हैं।

नेतृत्व

नेतृत्व भी क्रान्ति के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। पहले नेतृत्व बुद्धिजीवियों (intellectuals) के हाथ में रहता है, फिर वह क्रान्तिकारी सैनिकों के हाथ में चला जाता है।

सामाजिक किंवदन्तियाँ और नवीन प्रतीक

रूढ़युक्तियाँ (stereotypes), किंवदन्तियाँ (myths) और पौराणिक कथाएँ (legends) भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती हैं। क्रान्ति के लिए नवीन किंवदन्तियों की आवश्यकता पड़ती है। किम्बाल यंग ने लिखा है, "पूर्णरूप से हार जाना और ध्वस्त हो जाना और इस दशा को स्वीकार कर लेना कभी भी क्रान्ति की ओर अग्रसर नहीं करेगा, अपितु समाप्ति की ओर। क्रान्तियाँ उन कुचले हुए समूहों द्वारा नहीं की जातीं जो और अधिक दमन का मुकाबला नहीं कर सकते और न ही करेंगे। (Revolutions are not made by down trodden masses who cannot and will not stand any more repression.) स्थिति के सुधार में विश्वास होना अनिवार्य है, इतना दमन भी नहीं हो सकने देना है कि क्रान्ति सफल ही न हो सके और नेतृत्व एवं नवीन किंवदन्ती होनी चाहिए।

पहले वर्तमान सामाजिक व्यवस्था की आलोचना एव निन्दा की जाती है। सारे दोषों को धनिकों एव शासकों पर थोपा जाता है। शासकों का उपहास किया जाता है और उन्हें तरह-तरह के नामों से पुकारा जाता है। इस विषय में खूब प्रचार होता है और चर्चा की जाती है। किम्बाल यग ने लिखा है, "यह बातचीत अशान्ति के एक प्रकार के तापमापी का कार्य करता है।"[1]

इसक बाद एक नया विचार प्रस्तुत किया जाता है। कार्यक्रम भी रखा जाता है। नवीन समाज की रूपरेखा भी प्रस्तुत की जाती है। भविष्य के समाज का एक कल्पित चित्र रखा जाता है। लोग इसके निर्माण के लिए प्रत्येक त्याग करने को तत्पर हो जाते हे। इस प्रकार ये विचार क्रान्ति को उत्पन्न करते है।

क्रान्ति का कारण
(Causes of Revolution)

क्रान्ति के अनेक कारक हात है। इनमे से प्रमुख कारक निम्न हैं :

1. "This talk serves as a kind of thermometer of unrest." *Ibid*, p. 576.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(1) **मनोवैज्ञानिक कारक** (Psychological Factors)—क्रान्ति प्रमुख रूप से मनोवैज्ञानिक कारक पर आधारित है। क्रान्ति का जन्म पहले मानव के मन में होता है। अधिकांश मनोवैज्ञानिकों का मत है कि क्रान्ति मानव की मूलभूत मूल प्रवृत्तियों (primary instincts) के दमन का परिणाम होती है। सोरोकिन[1] का यही विचार है कि क्रान्ति मानव की मूलभूत मूल प्रवृत्तियों के सन्तुष्ट न होने पर होती है। मूल प्रवृत्तियों की सन्तुष्टि अनिवार्य है। जब किसी विशिष्ट समूह अथवा समाज-व्यवस्था के द्वारा इन मूलभूत मूल प्रवृत्तियों का दमन किया जाता है, तो उससे उत्पन्न असन्तोष मानव के अचेतन मन में चला जाता है। ऊपर से ऐसा प्रतीत होता है कि दमन करने वाले दमन करने में सफल हुए हैं, परन्तु वस्तुस्थिति यह होती है कि दमन से उत्पन्न असन्तोष अचेतन मन में स्थिर रहता है। अचेतन मन मानव का प्रमुख चालक है। जब भी कोई ऐसी स्थिति आती है कि व्यक्ति दमन करने वाली शक्तियों का मुकाबला करने में समर्थ होते हैं तभी अचेतन मन से यह असन्तोष फूट पड़ता है और उग्र रूप धारण कर लेता है। इससे प्रेरित व्यवहार भीड़-व्यवहार के समान होता है। व्यक्ति कुछ भी कर सकते हैं। कोई भी निश्चय नहीं होता कि असन्तोष किस प्रकार से व्यवहार में प्रकट होगा।

(2) **आर्थिक कारक** (Economic Factors)—आर्थिक विषमता (economic disparity) भी क्रान्ति का एक प्रमुख कारक है। मार्क्स का तो यह मत है कि क्रान्ति आर्थिक कारणों से ही होती है। मार्क्सवादियों के अनुसार समाज में पूँजीवादी और श्रमिक दो प्रमुख वर्ग होते हैं। इन दोनों वर्गों के बीच आर्थिक विषमता पायी जाती है। पूँजीवादी अपनी स्थिति का लाभ उठाते हैं और श्रमिकों का शोषण करते हैं। जैसे-जैसे यह शोषण बढ़ता जाता है वैसे-वैसे ही श्रमिकों में असन्तोष बढ़ता जाता है। समय पाकर श्रमिक वर्ग क्रान्ति कर बैठता है। मार्क्स के अनुसार क्रान्ति के बीज पूँजीवादी व्यवस्था में ही निहित होते हैं।

आर्थिक व्यवस्था में विषमता के कारण एक वर्ग प्रचुरता एवं धनधान्य से पूर्ण होता है और अधिकतर जनता दरिद्रता में कंगालों के समान जीवन व्यतीत करती है, तो जनता में असन्तोष पनपता रहता है। ऐसी स्थिति में मानव क्या करे? वह विवश होकर वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित हो जाता है। जमींदार और किसान, पूँजीपति और श्रमिक इसके उदाहरण हैं।

राजनैतिक कारक (Political Factors)—राजनैतिक कारक भी क्रान्ति के लिए महत्त्वपूर्ण कारक हैं। प्रायः जब देश पराधीन होता है और विदेशी राज्य होता है तब तो मनोवैज्ञानिक रूप से देश और समाज की हर समस्या विदेशी राज्य के कारण प्रतीत होती ही है। अकाल, भूकम्प, बाढ़, महामारी या अन्य प्रकार

---

[1] P. A. Sorokin, *The Sociology of Revolution*, p. 383.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की प्राकृतिक आपदाएँ भी विदेशी सरकार के कारण ही प्रतीत होती हैं। व्यक्ति अपने देश को स्वतन्त्र देखना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त विदेशी सरकार जनता का अधिक से अधिक शोषण भी करती ही है। शासक वर्ग और शासित वर्ग में अनेक प्रकार की विषमताएँ होती हैं, जिनके कारण असन्तोष बढ़ता जाता है। ये सब क्रान्ति के कारण बनते हैं।

जब देश स्वतन्त्र होता है, तब भी क्रान्तियाँ होती हैं। देश में विषमताएँ उत्पन्न हो जाती हैं। भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी तथा शोषण बढ़ जाता है। जो वर्ग शासन चला रहा होता है, वह केवल अपने वर्ग की ही अधिक चिन्ता करता है और जनता का शोषण करता है, तो जनता में असन्तोष पैदा होता है और वे इस व्यवस्था के विरोध में कार्य करने लगते हैं। कई बार सेना भी जनता का साथ देती है।

राजनैतिक व्यवस्था पर आर्थिक व्यवस्था तथा अन्य संस्थाएँ आधारित होती हैं। राज्य व्यवस्था में परिवर्तन करके ही कई बार अन्य व्यवस्थाओं में परिवर्तन लाये जा सकते हैं। राजनैतिक विचारधाराओं में आर्थिक सामाजिक व्यवस्था के प्ररूपों का स्पष्ट विवरण होता है। उदाहरण के लिए पूँजीवादी राज्य व्यवस्था के अन्तर्गत पूँजीवादी हितों के लिए राज्य के द्वारा विशेष संरक्षण होता है। इन हितों को तब तक नहीं समाप्त किया जा सकता जब तक राज्य व्यवस्था में परिवर्तन न किया जाय। वामपंथी साम्यवादियों का यही कहना है कि जब तक पूँजीवादी सरकार नहीं समाप्त होगी, उस समय तक आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। उनका भी मत है कि ऐसे देशों में मत (vote) के द्वारा भी सरकार में परिवर्तन नहीं लाया जा सकता, क्योंकि पूँजीवादी अपने धन के प्रभाव से चुनाव को प्रभावित कर लेते हैं।

(4) **सांस्कृतिक कारक** (Cultural Factors)—संस्कृति एवं सांस्कृतिक कारकों में परिवर्तन क्रान्ति को जन्म देता है। सांस्कृतिक कारक क्रान्ति के लिए बड़े महत्त्वपूर्ण होते हैं। हम लिख ही चुके हैं कि क्रान्ति का बीज सर्वप्रथम मानव के मन तथा विचारों में उदय होता है। विचारों, विश्वासों, अभिवृत्तियों, धारणाओं इत्यादि में परिवर्तन क्रान्ति का महत्त्वपूर्ण कारक होता है। आख्यान (myth) नयी आशाओं का संचार करता है। लोग सोचने लगते हैं कि उनका जीवन अधिक सुखकारी हो जायेगा। किम्बाल यंग ने लिखा है, "एक नवीन सामाजिक आख्यान के उदय का तात्पर्य होता है कि व्यक्तियों की इच्छाओं, विश्वासों, अभिवृत्तियों तथा आदतों में परिवर्तन हो गया है। नवीन आख्यान एक नये स्वर्ग एवं एक नये संसार का आश्वासन होता है।"[1] किम्बाल यंग का तात्पर्य यह है कि एक नया आख्यान (myth) तभी

---

1 "The rise of new social myth means that the desires, beliefs, attitudes and habits of the people have been altered. The new myth is the promise of new heaven, and new earth. K. Young, *A Handbook of Social Psychology*, p. 323.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यक्तियों द्वारा स्वीकार किया जाता है जबकि व्यक्तियों के पुराने विश्वास, विचार, आदतें और अभिवृत्तियाँ परिवर्तित हो जाती हैं और उनके स्थान पर नवीन आख्यान का समर्थन करने वाले नये विश्वास, विचार, आदतें तथा अभिवृत्तियाँ उदय हो जाती हैं। इस प्रकार का प्रत्येक नवीन आख्यान नवीन आशाओं से परिपूर्ण होता है। लोग सोचते हैं कि इसके द्वारा उन्हें एक नवीन जीवन, नवीन सुखी संसार प्राप्त होगा। इसी की प्राप्ति के लिए वे परिवर्तन चाहते हैं और क्रान्ति लाने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि सांस्कृतिक कारक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।

सामाजिक संरचना एवं संगठन में परिवर्तन भी क्रान्ति के द्योतक हैं। जब लोगों को सामाजिक संरचना एवं संगठन से असन्तोष उत्पन्न हो जाता है, तो वे उसको बदल डालना चाहते हैं। जब सामाजिक व्यवस्था एक वर्ग विशेष के हित में ही होती है, तो अन्य वर्गों में असन्तोष उत्पन्न हो जाता है। पुरानी व्यवस्था के प्रति असन्तोष उसे परिवर्तित करने के लिए बाध्य करता है। चेम्बरलेन ने लिखा है, "क्रान्ति तब होती है जब उच्च वर्ग पुरानी व्यवस्था को चला नहीं पाते हैं और निम्न वर्ग उसे चलने नहीं दे सकता है।"[1]

(5) **जनसंख्यात्मक कारक** (Demographic Factors)—जनसंख्यात्मक कारक भी कभी-कभी क्रान्ति का कारण बन जाते हैं। जनसंख्या में अधिक तेजी से वृद्धि अथवा ह्रास के कारण अनेक परिवर्तन घटित होते हैं। जनसंख्या में परिवर्तन के कारण समाज की संरचना में अनेक परिवर्तन उत्पन्न हो जाते हैं और उसके परिणामस्वरूप सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन हो जाता है।

(6) **युद्ध** (War)—युद्ध समाजों में ऐसी अव्यवस्था उत्पन्न करता है कि समाज में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव होने लगती है। युद्ध का काल क्रान्तियों के लिए एक उपयुक्त अवसर भी प्रदान करता है।

(7) **सुरक्षात्मक तनाव** (Security Tension)—जब किसी सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति असुरक्षा का अनुभव करने लगते हैं, तो वह ऐसी व्यवस्था में परिवर्तन करके सुरक्षा प्राप्त करना चाहता है।

(8) **स्वतन्त्रता से सम्बन्धित तनाव** (Freedom Tensions)—स्वतन्त्रता से सम्बन्धित तनाव क्रान्ति का महत्त्वपूर्ण कारक है। हर समाज और व्यक्ति स्वतन्त्रता की आकांक्षा करता है और रखता है। जिस समाज में व्यक्ति को इसमें बाधा अनुभव होती है, वहाँ वह असन्तुष्ट रहने लगता है और उसमें परिवर्तन लाना चाहता है।

---

1 "A revolution occurs when the upper classes cannot and the lower classes will not continue the old system."—Chamberlain.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस प्रकार हम देखते हैं कि क्रान्ति के अनेक कारण हैं। इनमें मनोवैज्ञानिक असन्तोष बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

क्रान्ति की पूर्व-दशाएँ (Pre-conditions of Revolution)

हम लिख ही चुके हैं कि क्रान्ति का बाह्य रूप तो यकायक प्रकट होता है, परन्तु आन्तरिक रूप से यह काफी समय पूर्व से विकसित होती रहती है। क्रान्ति की कुछ पूर्व-दशाएँ होती हैं। क्रान्ति के पूर्व ऐसी शान्ति होती है जैसे, तूफान आने के पूर्व हवा एकदम बन्द हो जाती है। इसी शान्ति में क्रान्ति पनपती रहती है। क्रान्ति की पूर्व-दशाएं थामस तथा जैननकी[1] के अनुसार निम्न हैं :

(1) व्यक्ति सम्पूर्ण सामाजिक संरचना के लिए नवीन सामाजिक मूल्यों की आवश्यकता का अनुभव करने लगते हैं।

(2) अधिकांश व्यक्ति वर्तमान परम्परागत सामाजिक संरचना एवं सामाजिक संगठन को समाप्त करने के पक्ष में होते हैं और उस दिशा में चेतन रूप से प्रयत्न प्रारम्भ कर देते हैं।

(3) परम्परागत सामाजिक संस्थाएँ व्यक्तियों की आवश्यकताएँ सन्तुष्ट करने में असमर्थ हो जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप लोगों में असन्तोष व्याप्त रहता है और अचेतन एवं अवचेतन में व्याप्त अन्य असन्तोष इस असन्तोष को प्रोत्साहन देते हैं।

सोरोकिन[2] ने भी इस पूर्व दशा को बड़ा महत्त्वपूर्ण माना है। उन्होंने भी कहा है कि क्रान्ति के लिए व्यक्तियों की आवश्यकता का सामाजिक व्यवस्था द्वारा सन्तुष्ट न होना और मूल्यों एवं लक्ष्यों में असन्तुलन महत्त्वपूर्ण पूर्व-दशाएँ हैं।

इन पूर्व-दशाओं के परिणामस्वरूप क्रान्ति का बीज पनपता रहता है और विकसित होते-होते ज्वालामुखी के समान एकदम फट जाता है।

क्रान्ति का काल
(The Revolution Itself)

प्रारम्भ के पूर्व (The Preliminaries)

प्रारम्भ में विचार ज़ोर पकड़ते हैं। बुद्धजीवी प्रचार करते हैं। इसके उपरान्त नेतृत्व उग्र दल के लोगों के हाथ में आ जाता है। जनता का व्यवहार एक उद्वेगात्मक भीड़ के समान होता है। हड़तालें प्रारम्भ हो जाती हैं। प्रदर्शन होते हैं। शासकों में एक हीनता की भावना विकसित हो जाती है।

---

1 Thomas and Znaniecki, *The Polish Peasant in Europe and America.*
2 Sorokin, *Social and Cultural Dynamic.*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

...का प्रारम्भ (The Beginning of Revolution)

क्रान्ति किसी भी घटना से प्रारम्भ हो सकती है। घटना का कोई विशेष ...व नहीं होता। वह तो केवल एक बहाना होता है। उपद्रव प्रारम्भ हो जाते हैं।

...उग्र दल के हाथ में (The Shift to Left)

पहले सत्ता नरम दल के लोगों के हाथ में आती है। ये लोग जनता को ...न्त्रित नहीं कर पाते इसलिए अयोग्य सिद्ध होते हैं। उग्र दल इनसे सत्ता अपने ...में ले लेता है। निरंकुश एवं स्वतन्त्र शासन की आवश्यकता प्रतीत होती है। ...क सत्ता की आवश्यकता रहती है। इस प्रकार उग्र दल सत्ता हथियाने में सफल ...जाता है।

...क का साम्राज्य (The Reign of Terror)

अब आतंक का साम्राज्य होता है। लोगों को कठोर दण्ड दिये जाते हैं। ...धियों को हर प्रकार से कुचलने का प्रयत्न किया जाता है। आतंक के द्वारा वे ...नी सत्ता को मजबूत बनाते हैं। भय के कारण एक व्यवस्था उत्पन्न हो जाती है ...र शान्ति स्थापित हो जाती है।

...नैतिक सत्ता का एकीकरण (Consolidation of Political Power)

अब राजनैतिक सत्ता का एकीकरण किया जाता है और राज्य संगठित हो ...ता है।

क्रान्ति के दुष्परिणाम
(Evil Consequences of Revolution)

(1) **क्रान्ति सामाजिक विघटन को जन्म देती है**—क्रान्ति के कारण अचानक ...ाज की व्यवस्था को एक धक्का लगता है जिससे सामाजिक व्यवस्था अस्त-व्यस्त ...जाती है और सामाजिक व्यवस्था पूर्ण रूप से परिवर्तित हो जाती है। अच्छे और ...दोनों ही प्रकार के मूल्य उखाड़ फेंक देता है। क्रान्ति के फलस्वरूप सामाजिक ...ुलन समाप्त हो जाता है। क्रान्ति में हिंसात्मक साधनों का खुलेतौर पर प्रयोग ...ा जाता है जिसमें अनेक व्यक्ति घायल या मृत्यु के शिकार होते हैं। जिससे ...क्तिगत विघटन के साथ-साथ पारिवारिक विघटन भी होता है। इसी प्रकार ...न्ति के फलस्वरूप राज्य और नागरिकों के बीच तनावपूर्ण सम्बन्ध पनप जाते हैं। ...तनावपूर्ण स्थिति को राज्य दमन नीति द्वारा ठीक करने का प्रयास कर सकता है ...ससे सामाजिक विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(2) **सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार को खतरा**—क्रान्ति के समय सुरक्षा ...वस्था अस्त-व्यस्त हो जाती है। इससे बहुत से ऐसे लोग सामने आ जाते हैं जो ...न्ति की परिस्थिति का पूरा लाभ उठाते हैं। वे लोगों की चल-सम्पत्ति को लूटपाट द्वारा जुटाने में लग जाते हैं। कानून इस समय कायम नहीं रहता और पूर्ण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अराजकता फैल जाती है जिससे लोगों को दूसरे की सम्पत्ति हथियाने का अधिक अवसर मिल जाता है।

(3) **क्रान्ति यौन-उच्छृंखलता को बढ़ाती है**--क्रान्ति के समय सामाजिक नियम ढीले हो जाते हैं जिससे यौन-सम्बन्धी प्रतिबन्ध भी समाप्त हो जाते हैं फलस्वरूप समाज में यौन व्यभिचार फैलते हैं। क्रान्ति की विघटनात्मक स्थिति का लाभ उठाकर बुरे लोग अपनी भावुकता की सन्तुष्टि करने में लग जाते हैं। वे कितनी ही माताओं, बहनों को वेश्याओं की स्थिति में घसीट लाते हैं। फ्रांस की क्रान्ति के समय पेरिस की वेश्याओं की संख्या में तीव्रता से बढ़ोतरी हुई। इसी प्रकार रूस के गृह युद्ध के समय भी वेश्यावृत्ति और यौन उच्छृंखलता बहुत बढ़ी। क्रान्ति के समय विवाह विच्छेद की भी स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(4) **क्रान्ति मानव जीवन का नाश करती है**—क्रान्ति का सबसे बड़ा दुष्परिणाम यह होता है कि अनेक व्यक्तियों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ता है। इस समय जीवन का कोई मूल्य नहीं रह जाता है। चारों ओर आतंक, रक्तपात तथा हत्याओं का साम्राज्य हो जाता है। बहुधा क्रान्ति का आधार ही हिंसा और हिंसात्मक साधनों का प्रयोग होता है। अतः स्पष्ट है कि क्रान्ति मानव जीवन का नाश करती है।

(5) **क्रान्ति धर्म पर भी आघात करती है**—क्रान्ति में नवीन परिवर्तन के लिए इतना उतावलापन होता है कि जो भी क्रिया रूढ़िवादी और परम्परागत दिखाई देती है उसी का विरोध किया जाता है और उसे समाप्त कर देने का प्रयत्न किया जाता है। इसीलिए धर्म भी इस आघात से बच नहीं पाता। वास्तव में क्रान्तिकारी नेताओं का ऐसा विश्वास होता है कि क्रान्ति की सफलता के लिए धर्म को नष्ट करना परम आवश्यक है। इसीलिए वे धर्म पर आघात पहुँचाते हैं। फ्रांस और रूस की क्रान्ति से यह बात सिद्ध हो चुकी है। अतः स्पष्ट है कि क्रान्ति धर्म के लिए घातक है।

प्रश्न

1. सामाजिक मनोविज्ञान की दृष्टि से क्रान्ति के महत्त्वपूर्ण पक्षों की विवेचना कीजिए।

(Discuss the important aspects of revolution from the point of view of social psychology.)

2. टिप्पणी लिखिए : (i) क्रान्ति का मनोविज्ञान।

(Write short note on : psychology of revolution.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

45

सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास के मनोवैज्ञानिक कारक

(Psychological Factors in Social and Cultural Growth)

मानव जीवन क प्राणिशास्त्रीय आधार के अतिरिक्त दो प्रमुख आधार और जिन्हें समाज और संस्कृति कहते हैं। व्यक्ति अपने समाज और संस्कृति से घनिष्ट रूप से सम्बद्ध है। व्यक्ति को निकालकर समाज या संस्कृति के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता है। प्रस्तुत अध्याय में हम समाज और संस्कृति के विकास के मनोवैज्ञानिक कारकों के सम्बन्ध में व्याख्या करेंगे। इसकी व्याख्या से पूर्व समाज और संस्कृति शब्द का अर्थ समझ लेना आवश्यक है।

'समाज' सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। इन सम्बन्धों का आधार मानव के बीच होने वाली अन्त:क्रियाएँ हैं और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यक्ति इन अन्त:क्रियाओं को करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होने के कारण अनेक आवश्यकताओं से घिरा रहता है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह स्वयं तो कार्य करता ही है साथ-साथ अन्य कार्यरत व्यक्तियों का सहयोग भी करता है। ऐसा वह इसलिए करता है कि कोई भी व्यक्ति अपनी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति अकेले नहीं कर सकता। इस प्रकार व्यक्ति आवश्यकता की पूर्ति के लिए क्रिया करता है और साथ ही क्रिया करने वाले अन्य लोगों का सहयोग भी करता है। इसके परिणामस्वरूप समाज के सदस्यों में अन्त:क्रिया की स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसके आधार पर वे एक-दूसरे से सम्बन्धित हो जाते हैं। इनके बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों के जाल को समाज कहते हैं। इस प्रकार सामाजिक जीवन की उत्पत्ति व विकास व्यक्तियों के बीच होने वाली अन्त:क्रियाएँ और इनके बीच पाये जाने वाले सम्बन्धों के फलस्वरूप ही होता है। इन सम्बन्धों और अन्त:क्रियाओं का आधार मनोवैज्ञानिक होता है।

श्री किम्बाल यंग ने संस्कृति के लिए भी लिखा है कि संस्कृति का वास्तविक आधार मनोवैज्ञानिक है, क्योंकि संस्कृति का स्थायित्व, निरन्तरता और क्रियाशीलता मानव विचार तथा क्रिया पर निर्भर करता है न कि उपकरण, मशीन या भौतिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वस्तुओं के अस्तित्व पर। संस्कृति की परिभाषा करते हुए श्री हॉबेल (Hoebel) ने लिखा है, "संस्कृति सम्बन्धित सीखे हुए व्यवहार प्रतिमानों का सम्पूर्ण योग है...।" हॉबेल की परिभाषा के अनुसार संस्कृति सीखे हुए व्यवहार प्रतिमानों का योग है। सीखने की प्रक्रिया में मनोवैज्ञानिक कारक महत्त्वपूर्ण हैं और व्यवहार स्वयं सामाजिक मनोविज्ञान का अध्ययन विषय है। अतः यह बात स्पष्ट है कि संस्कृति का आधार मनोवैज्ञानिक है। इसी को मैलिनोवस्की ने लिखा है कि संस्कृति वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। मनुष्य की अनेक आवश्यकताएँ होती हैं जिनकी पूर्ति के लिए वह धर्म, भाषा, कला, प्रविधि, साहित्य तथा अन्य भौतिक और अभौतिक वस्तुओं का सहारा लेता है। इन सबका आधार मनोवैज्ञानिक इसलिए है क्योंकि धर्म, कला, साहित्य, प्रथा, संस्कृति के सभी तत्त्व भावना, विचार, आदर्श आदि को व्यक्त करते हैं। संस्कृति में जो संगठन और व्यवस्था देखने को मिलती है उसका भी कारण यह है कि मानव की आवश्यकताएँ एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं और इनकी उत्पत्ति मानव और उसके व्यवहार से होती है।

उपर्युक्त व्याख्या से स्पष्ट है कि सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास में मनोवैज्ञानिक कारकों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन सभी कारकों का संक्षिप्त विवेचन निम्नलिखित है :

सामाजिक व सांस्कृतिक विकास के मनोवैज्ञानिक कारक
(Psychological Factors in Social and Cultural Growth)

सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में सहयोग देने वाले प्रमुख मनोवैज्ञानिक कारक निम्नलिखित हैं

(1) **प्रेरणा (Motivation)**—हमारे प्रत्येक व्यवहार के मूल में कोई न कोई प्रेरक वृत्ति अवश्य होती है। इसीलिए प्रो. शर्मा ने लिखा है कि प्रेरणा हमारे सक्रिय जीवन का आधार है। प्रेरणा को मनोशारीरिक (Psycho-physical) दशा कहा जाता है। प्रेरणा व्यक्ति की आन्तरिक स्थिति है जिसकी उत्पत्ति शारीरिक या मानसिक असन्तुलन उत्पन्न होने पर होती है। उदाहरणार्थ, जब किसी व्यक्ति को भूख लगती है तो वह शारीरिक असन्तुलन का अनुभव करता है और वह अपने को सन्तुलित रखने के लिए प्रयत्न करता है। यह प्रयत्न भोजन प्राप्ति की दिशा में होता है। भोजन प्राप्त हो जाने पर यह प्रयास समाप्त हो जाता है क्योंकि भूख की सन्तुष्टि के बाद भोजन की आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकार प्रेरक वृत्ति के दो प्रमुख कार्य हैं : (1) हमारे अन्दर प्रयासों का आविर्भाव करना, (2) उन प्रयासों को लक्ष्य की ओर तब तक निर्देशित करना जब तक खोये हुये सन्तुलन की प्राप्ति न हो जाय। ये दोनों ही प्रकार के कार्य व्यक्ति को इस प्रकार के कार्य करने को प्रेरित करते हैं जिनसे सामाजिक और सांस्कृतिक विकास होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मनुष्य में दो प्रकार की प्रेरक वृत्ति होती हैं—जन्मजात और अर्जित या ...माजिक। सामाजिक या अर्जित प्रेरकों के अन्तर्गत आत्म-स्थापन (self assertion) ...मुदायिकता (gregariousness) अर्जनात्मक प्रेरक (acquisitiveness) आदि। ...सामाजिक प्रेरक सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में सहायक सिद्ध होती हैं। ...दाहरण के लिए, अर्जनात्मक प्रेरक वृत्ति के कारण व्यक्ति उन चीजों का संग्रह करता ...जो मानव जीवन की रक्षा के लिए आवश्यक है। इसी प्रेरक वृत्ति के कारण संस्कृति ...उन तथ्यों को संरक्षित रखा जाता है जो जीवन रक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। ...ी प्रकार सामुदायिकता की भावना के कारण व्यक्ति समूह में ही रहना पसन्द ...रता है और अपनी इसी प्रवृत्ति के कारण वह अनेक समूहों और समितियों का ...र्माण करता है। ये समूह और समितियाँ सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में सहयोग ...ी हैं। उपर्युक्त विवरण से यह बात स्पष्ट होती है कि सामाजिक और सांस्कृतिक ...कास में प्रेरणा का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

(2) **मूलप्रवृत्तियाँ** (Instincts)—सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में ...प्रवृत्तियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये जन्मजात क्षमताएँ होती हैं जो प्राणी को ...क विशेष ढंग से एक परिस्थिति या वस्तु का बोध करने, एक विशेष उद्वेग का ...नुभव करने तथा एक विशिष्ट ढंग से कार्य करने को प्रेरित करती हैं। डॉ. मैकडूगल (McDougall) के अनुसार मूलवृत्तियाँ मानव के समस्त व्यवहारों की प्रमुख चालक ..., यदि इन्हें निकाल दिया जाय तो मनुष्य एक ऐसी घड़ी की भाँति हो जाय जिसका ...ई मुख्य पुर्जा टूट गया हो। डॉक्टर ट्राटर का मत है कि सम्पूर्ण सामाजिक व्यवहार ...यात मूलप्रवृत्ति के कारण ही घटित होते हैं। इस मूलप्रवृत्ति की क्रियाशीलता के ...रण ही व्यक्ति समूह में रहता है और एक-दूसरे से सहयोग करता है। इन विद्वानों ... मूलप्रवृत्ति के महत्त्व को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत किया है। फिर भी इतना तो ...ीकार करना ही पड़ेगा कि ये जन्मजात प्रवृत्तियाँ मानव व्यवहार के निर्धारण में ...हुत ही उच्च स्थान रखती हैं। मूलप्रवृत्तियों के कारण कार्य करने की शक्ति प्राप्त ...ती है, जबकि उस कार्य की प्रकृति व दिशा का निर्धारण बाहरी परिस्थितियों के ...रा होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मूलप्रवृत्तियाँ मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं को ...भावित करती हैं और इनका प्रभाव सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में अप्रत्यक्ष ...प से पड़ता है।

(3) **संवेग** (Emotions)—सामाजिक और सांस्कृतिक विकास पर संवेगों ...ा गहरा प्रभाव पड़ता है। डॉ शर्मा के अनुसार संवेगों का घनिष्ट सम्बन्ध हमारे ...भावात्मक पहलू से होता है। संवेग तर्क और बुद्धि से अधिक शक्तिशाली होता है। ...ानव जीवन में मस्तिष्क और हृदय में संघर्ष होता रहता है। इन संवेगों का ज्यादा ...सम्बन्ध हृदय से होता है। संवेगों के कारण ही व्यक्ति में सहानुभूति, प्रेम, दया आदि ...े भाव पैदा होते हैं। देश, जाति और धर्म के नाम पर अपने को अर्पित कर देने की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भावना संवेगों के कारण ही पैदा होती है। किसी व्यक्ति या समाज को प्रभावित करने के लिए तर्क का सहारा कम लिया जाता है, बल्कि संवेगों को जागृत किया जाता है। संवेगों के आधिक्य के कारण ही कला, साहित्य और संगीत आदि विकसित होते हैं। सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में जो भी विचार, आदर्श विकसित होते हैं उनके एक भावात्मक आधार भी होता है और उस भावात्मक आधार को संवेग ही प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए, यदि हम राष्ट्र की प्रगति चाहते हैं तो उसके लिए हम अपना सर्वस्व त्यागने के लिए तैयार रहते हैं। यह त्याग की भावना भावनात्मक है इसलिए इसके लिए कोई न कोई संवेग अवश्य ही क्रियाशील होता है। इसी तरह धर्म का उदाहरण भी दिया जा सकता है। धर्म का अस्तित्व हमारी भावनाओं के कारण है। धर्म में एक अलौकिक शक्ति पर विश्वास किया जाता है। यह अलौकिक शक्ति वास्तविक नहीं होती है, इसका आधार हमारे विश्वास और भावनाएँ हैं। हम अलौकिक शक्ति पर विश्वास करते हैं इसलिए धर्म का अस्तित्व बना हुआ है। धर्म के प्रति इसी भावनात्मक लगाव के कारण हम अपने धर्म का विस्तार व विकास चाहते हैं। जो बात धर्म के लिए लागू होती है वही सामाजिक व सांस्कृतिक विकास के लिए भी लागू होती है।

(4) प्रत्यक्षीकरण (Perception)—सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में प्रत्यक्षीकरण का भी महत्त्व कम नही है। प्रत्यक्षीकरण का सबसे सरल अर्थ प्रत्यक्ष ज्ञान है। यह ज्ञान वस्तु, स्वर, स्पर्श, गन्ध या स्वाद के सम्बन्ध में हो सकता है। प्रत्यक्षीकरण में पूर्व अनुभव के आधार पर किसी भी वस्तु, स्वर, स्पर्श, गन्ध और स्वाद आदि के सम्बन्ध में व्याख्या की जाती है। प्रत्यक्षीकरण के कारण ही व्यक्ति अपने व्यवहार और क्रिया के सम्बन्ध में निर्णय लेता है और उसी के अनुसार कार्य करता है। इस प्रकार व्यक्ति का व्यवहार व उस व्यवहार का प्रकार और दिशा प्रत्यक्षीकरण के द्वारा निर्धारित होती है। प्रत्यक्षीकरण कोई विशुद्ध मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया नहीं है। इसके निर्धारण में व्यक्ति का अनुभव तथा अन्य सामाजिक कारण उत्तरदायी हैं। कहने का मतलब यह है कि व्यक्ति जो कुछ भी करता है उसके निर्धारण में प्रत्यक्षीकरण का महत्त्वपूर्ण योगदान ही होता है। एक उदाहरण द्वारा इस बात की ओर अच्छी तरह स्पष्ट किया जा सकता है। हमारे देश में प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद योजना आयोग द्वारा पंचवर्षीय योजना की रूपरेखा तैयार की जाती है जिसका उद्देश्य सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन के प्रत्येक पक्ष में प्रगति लाना है, अर्थात उन योजनाओं को क्रियान्वित करना जिनसे प्रगति के पथ में आने वाली बाधाएँ दूर हो सकें। इन पंचवर्षीय योजनाओं के बनाने से पहले योजना आयोग के सदस्य सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के क्षेत्र में आने वाली बाधाओं तथा सुधार के लिए प्रत्यक्षीकरण करते हैं। उन सारे साधनो का प्रत्यक्षीकरण करते हैं जिनसे योजना सफल हो सके। साथ ही साथ पिछली योजनाओं की सफलता अथवा विफलता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्व अनुभव उन्हें होता है। इसी के आधार पर वे वर्तमान याजना के सम्भावित णामों के सम्बन्ध में भविष्यवाणी भी करते हैं। इस उदाहरण से स्पष्ट है कि वर्षीय योजनाओं का आधार प्रत्यक्षीकरण ही है। उपर्युक्त व्याख्या से सामाजिक र सांस्कृतिक विकास के क्षेत्र में प्रत्यक्षीकरण का महत्त्व स्पष्ट हो जाता है।

(5) चिन्तन (Thinking)—सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में चिन्तन महत्त्व उल्लेखनीय है। इसी चिन्तन की प्रक्रिया के कारण मानव पशु से भिन्न मानव चिन्तन एक जटिल मानसिक प्रक्रिया है। इसका महत्त्व हमारे जीवन के ग्ण, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सम्बन्धों और समस्याओं से हमारा सामाजिक जीवन उसी प्रकार का होगा जैसा हम उसके बारे में सोचते चिन्तन करते हैं। यदि हम या सरकार पूँजीवादी व्यवस्था के पक्ष में चिन्तन गे तो देश में पूँजीवाद का विकास होगा। इसी प्रकार हमारे चिन्तन के ढंग के रण ही विभिन्न जाति, धर्म, प्रजाति, राजनैतिक व साम्प्रदायिक दलों में भेद और र्ष देखने को मिलते हैं। यह चिन्तन ही प्रगति की दिशा निश्चित करती है। उदा-णार्थ, हम भारत और पाश्चात्य देशों के धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन ले सकते हैं। भारत की चिन्तन की दिशा आध्यात्मवादी है जबकि पाश्चात्य शों की भौतिकवादी। इसलिए भारतवासी ईश्वर, शान्ति, अहिंसा, स्वर्ग व नर्क, , सद्भावना, त्याग और तपस्या की दिशा में चिन्तन करते हैं। जबकि पाश्चात्य वासी भौतिक सुख के साधनों के सम्बन्ध में चिन्ता करते हैं। यही कारण है कि रत में धर्म का विस्तार हुआ है और पाश्चात्य देशों में विज्ञान की प्रगति हुई है। सी भी प्रकार की प्रगति तभी सम्भव है जब खूब सोच-विचार कर प्रयत्न किया ता है। इस प्रकार प्रगति का आधार ही चिन्तन है। हमारी चिन्तनधारा में रिवर्तन के परिणामस्वरूप ही आज हम 'विश्वप्रगति' और 'विश्वशान्ति' के लिए यत्नशील हैं।

प्रगति, आविष्कार का फल है। प्रत्येक आविष्कार प्रगति का पक्ष प्रशस्त रती है। आविष्कारों से ज्ञान और विज्ञान का विस्तार होता है और ज्ञान और ज्ञान के बढ़ने से सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति स्वयं हो जाती है। ये आविष्कार न्तन पर ही आधारित होते हैं। मनुष्य के पास यदि चिन्तन-शक्ति न होती तो भी समस्त आविष्कारों के श्रेय से वंचित रहता।

(6) बुद्धि (Intelligence)—जीवन के किसी भी क्षेत्र में बुद्धि के महत्त्व । अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। श्री वुडरो (Woodrow) के अनुसार, योग्यता प्राप्त करने की योग्यता ही बुद्धि है।" बुद्धि के द्वारा ही हम बाह्य परिस्थि-यों से अनुकूलन करते हैं और उन परिस्थितियों पर नियन्त्रण करते हैं। सामाजिक र सांस्कृतिक जीवन की अनेक समस्याओं का हल ढूंढ़ने और उनको दूर करने में द्धि की सहायता अनिवार्य है। कुछ विद्वानों ने समस्या पूर्ति की क्षमता को बुद्धि ो संज्ञा दी है। जिस व्यक्ति में बुद्धि की कमी होती है वह अपने व्यक्तित्व का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्ण विकास नहीं कर पाता। इसके विपरीत एक बुद्धिमान व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास अपनी बौद्धिक क्षमता के कारण सरलता से कर लेता है। बुद्धि के द्वारा जिस प्रकार व्यक्तित्व का विकास होता है उसी प्रकार सामाजिक और सांस्कृतिक विकास भी आसानी से होता है। वास्तव में सामाजिक और सांस्कृतिक विकास मानसिक अन्तःक्रियाओं का परिणाम है और इन मानसिक क्रियाओं में बुद्धि का महत्त्व सर्वविदित है।

(7) **अनुकरण (Imitation)**—सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में अनुकरण का स्थान महत्त्वपूर्ण है। टार्डे ने समाज को अनुकरण कहा है। यद्यपि टार्डे का यह कथन अतिशयोक्ति है फिर भी अनुकरण की उपयोगिता को सभी लोग स्वीकार करते हैं। अनुकरण की प्रेरणा की भाँति मनोशारीरिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति या समूह दूसरे के व्यवहार की नकल करते हैं। अनुकरण की क्रिया प्रत्येक समाज व संस्कृति में पायी जाती है। बच्चा अनुकरण के द्वारा दूसरे के व्यवहारों को सीखता है। अनुकरण के ही द्वारा वह भाषा, आदर्श, नियम प्रथा व परम्परा, धार्मिक क्रियाएँ इत्यादि सीखता है। अनुकरण के द्वारा ही ये एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती हैं और यह सामाजिक व सांस्कृतिक जीवन के अस्तित्व के लिए ही नहीं विकास के सभी क्षेत्रों में सहायक सिद्ध होती हैं। दो सांस्कृतिक समूहों के बीच अनुकरण के द्वारा ही सांस्कृतिक तत्त्व एक समूह से दूसरे समूह में फैलता है। इस प्रकार का सांस्कृतिक प्रसार सामाजिक व सांस्कृतिक विकास के महत्त्वपूर्ण कारक हैं। इसके अतिरिक्त अनुकरण प्रक्रिया के कारण ही आविष्कार विश्व के एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैल जाता है और प्रत्येक आविष्कार सामाजिक और सांस्कृतिक विकास का महत्त्वपूर्ण कारक है। अनुकरण के द्वारा ही समाज के व्यक्तियों के व्यवहार में एकरूपता देखी जाती हैं। इस एकरूपता के कारण समाज में व्यवस्था बनी रहती है जो सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महत्त्वपूर्ण योग देती है।

(8) **मनोवृत्ति (Attitude)**—मनोवृत्ति मस्तिष्क की वह चेतन दशा है जो व्यक्ति को एक विशेष प्रकार से सोचने या व्यवहार करने को प्रेरित करती है। इसका मतलब यह है कि मनोवृत्ति में प्रेरणात्मक, संवेगात्मक (emotional), प्रत्यक्षात्मक (perceptual) और ज्ञानात्मक (cognitive) प्रक्रियाएँ विद्यमान रहती हैं। मनोवृत्ति के आधार पर व्यक्ति एक परिस्थिति या वस्तु के विषय में जो कुछ सोचता है या जानता है (ज्ञानात्मक) और उसे जिस दृष्टिकोण से देखता है (प्रत्यक्षात्मक) या उसके प्रति जो (संवेग) मनोभाव, जैसे—घृणा, भय, प्रेम आदि रखता है वही उस व्यक्ति की मनोवृत्ति है। यह मनोवृत्ति मनुष्य को एक विशेष प्रकार का व्यवहार करने को प्रेरित करती है। उपर्युक्त व्याख्या से ही यह बात स्पष्ट हो गयी होगी कि सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में मनोवृत्ति का किस सीमा तक योगदान है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिस सामाजिक समूह, समिति और संस्था के प्रति हमारा दृष्टिकोण अनुकूल होगा उसके विकास के लिए हम हमेशा प्रयत्नशील रहेंगे और सम्पूर्ण समाज और संस्कृति को लाभ पहुँचता है। मनोवृत्ति अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार की होती है। यदि अनुकूल मनोवृत्ति है तभी वास्तविक लाभ हो सकता है। प्रतिकूल मनोवृत्तियाँ सामान्यतः हानिकारक होती हैं। मनोवृत्ति के अध्ययन द्वारा ही सामाजिक समस्याओं के प्रति लोगों के दृष्टिकोणों के सम्बन्ध में हम जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और हम लोगों की क्रियाओं के सम्बन्ध में भविष्यवाणी कर सकते हैं। इसके अलावा हम समस्या को इस प्रकार निर्देशित और नियन्त्रित कर सकते हैं जिससे सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में सहायता मिल सके।

उपर्युक्त विवेचन से यह बात सिद्ध होती है कि सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में मनोवैज्ञानिक कारकों का योगदान रहता है। इस सम्बन्ध में दो बातों को स्मरण रखना नितान्त आवश्यक है। प्रथम, तो यह सोचना गलत है कि सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में किसी एक मनोवैज्ञानिक कारक का योगदान रहता है। किसी भी विकास में जटिल मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का योगदान रहता है। इसी कारण किसी एक कारक के आधार पर इसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। दूसरा, यह भी सोचना गलत है कि सामाजिक और सांस्कृतिक विकास केवल मनोवैज्ञानिक कारकों के कारण ही होता है। मनोवैज्ञानिक कारकों के साथ-साथ सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक कारकों का सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महत्त्वपूर्ण सहयोग होता है। सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में इन कारकों का एक अन्तःक्रियात्मक प्रभाव होता है।

प्रश्न

1. मानव समूहों के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के मनोवैज्ञानिक कारकों का संक्षेप में विश्लेषण कीजिए।

(Analyze briefly the psychological factors in social and cultural growth of human groups.)

2. संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए :

(i) सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास के मनोवैज्ञानिक कारक।

(Psychological factors in social and cultural growth.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

46

सामाजिक विघटन

(Social Disintegration)

सामाजिक संगठन का अर्थ

(Meaning of Social Organization)

संगठन उन सम्बन्धों को द्योतित करता है जो एक समूह के व्यक्तियों के बीच पाये जाते हैं। सामाजिक संगठन की परिभाषा करते हुए इलियट और मेरिल ने लिखा है कि "सामाजिक सगठन वह दशा या स्थिति है जबकि एक समाज में विभिन्न संस्थाएँ अपने-अपने पूर्व-निश्चित एवं मान्य उद्देश्यों के अनुसार कार्य कर रही होती हैं।"[1]

ऑगबर्न और निमकाफ लिखते हैं, "संगठन किसी कार्य को करवाने की प्रभावपूर्ण सामूहिक युक्ति है।"[2] संगठन के द्वारा किसी कार्य को सरलता से और कम प्रयत्न में किया जा सकता है। यदि एक व्यक्ति की कार्य-शक्ति 'क' है, तो सौ संगठित व्यक्ति केवल 100 'क' ही कार्य नहीं करेंगे, परन्तु ये संगठित व्यक्ति 100 'क' से कई गुना अधिक कार्य करेंगे। गणितशास्त्र में इसका कोई महत्त्व नहीं है, परन्तु समाजशास्त्र में इस समस्या का बड़ा महत्त्व है। सामाजिक जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए संगठन बड़ा आवश्यक है।

सामाजिक संगठन की परिभाषा र्‍यूटर और हार्ट ने निम्न शब्दों में की है, "सामाजिक संगठन ने हमारी सम्पूर्ण सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाएँ और उनके बीच के सम्बन्ध और समूह के असंगठित कार्य भी सम्मिलित हैं, तात्पर्य है।"[3] संस्थाओं पर इन्होंने भी जोर दिया है।

---

1 "Social organization is a state of being, a condition in which the various institutions in a society are functioning in accordance with their recognized, or implied purposes.' Elliott, Mobe, A. and Merrill, Francis, E., *Social Disorganization* (1950), p. 4.

2 "Organization is an effective group device for getting something done." Ogburn, William F. and Nimkoff, Meyer F., *A Handbook of Sociology*, p. 364.

3 "By social organization is meant the totality of the social and cultural institutions and their interrelationships together with the body of the unorganized activities characteristic of the group." Reuter, E. B. and Hart, C. W., *Intrbductionto Sociology*, p. 161.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राणिशास्त्रीय दृष्टिकोण से संगठन एक 'पूर्णता' को कहते हैं। यह 'पूर्णता' छोटे-छोटे अवयवों से मिलकर बनती है। शरीर को ही लीजिये, शरीर का प्रत्येक अवयव एक विशिष्ट कार्य करता है, परन्तु प्रत्येक अवयव स्वतन्त्र होते हुए भी परतन्त्र है। इसका अभिप्राय यह है कि विशिष्ट कार्य के क्षेत्र में प्रत्येक अवयव स्वतन्त्र है, परन्तु सब एक-दूसरे पर आधारित हैं। मस्तिष्क सबको निर्देशन देता है या नेता के रूप में पथ-प्रदर्शन करता है। सामाजिक संगठन और जीवित प्राणियों में तुलना करने के अनेक प्रयत्न किये गये हैं। संगठन छोटे-छोटे भागों से मिलकर बनता है। लूमले ने सामाजिक संगठन की परिभाषा करते हुए उचित ही लिखा है, "सामाजिक संगठन एक समष्टिन है जो सहयोग करने वाले विशेष उपयुक्त भागों से मिलकर बनती है।"[1]

सामाजिक संगठन एक ऐसी दशा या स्थिति नहीं है जैसी कि एक जटिल प्रक्रिया है जो समाज के विभिन्न क्षेत्रों में व्यवस्था एवं सम्बन्ध स्थापित करते हुए समाज को सुचारु रूप से चलाने में सहायता पहुँचाती है।[2] सामाजिक संगठन वह सहयोग है जो मनुष्यों के अंगणित कार्यों के बीच सम्बन्ध स्थापित करता है और संघर्ष से बचता है।

अतः सामाजिक संगठन वह सहयोग की व्यवस्था है जिसके कारण मनुष्य समाज में एक-दूसरे के साथ कार्य करता है और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। वह सदैव परिवर्तित होता रहता है।

सामाजिक संगठन वह जटिल प्रक्रिया है जो विभिन्न सामाजिक सम्बन्धों में निश्चित सम्बन्धों की व्यवस्था करती है और इस कारण मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति समाज में करता है।

सामाजिक संगठन की प्रकृति
(Nature of Social Organization)

अधिकांश सामाजिक संगठन जागरूक प्रयत्नों के फल हैं। उदाहरणस्वरूप, सरकार, लोकसभा, समितियाँ इत्यादि। परन्तु बहुत से संगठन स्वतः उत्पन्न हुए हैं और उनके लिए कोई भी जागरूक योजना नहीं बनायी गयी है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण भाषा का व्याकरण है। अधिकांश लोग यह नहीं जानते कि उनकी बोली जाने वाली भाषा व्याकरण के संगठन द्वारा व्यवस्थित है। व्याकरण का जन्म एवं विकास किसी भी जागरूक योजना द्वारा नहीं हुआ है। इसी प्रकार से परिवार की संस्था के विषय में भी कहा जा सकता है। परिवार का संगठन कुछ समूहों में बड़ा ही

---

1 "Social organization is a whole composed of co-operating specialized parts." Lumley, Frederick E., *Principles of Sociology*, p. 143.

2 Case, C. M., *Outlines of Introductory Sociology* (1924), p. 580.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जटिल एवं महत्त्वपूर्ण है, फिर मी इसका विकास उस प्रकार आयोजित नहीं है, जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.) का है।

सामाजिक संगठन मनुष्यों की सामान्य इच्छाओं पर आधारित है। यदि छोटे छोटे लौहकण (iron fillings) एक कागज पर डाल दिये जायें तो किसी प्रकार का मी आकार (pattern) नहीं बनेगा, परन्तु कागज के नीचे एक अश्वनाल चुम्बक (horseshoe magnet) रख दीजिए और तब लौहकण कागज पर डालिए तो ये लौहकण एक निश्चित आकार में हो जायेंगे। बिलकुल यही एक समूह के सदस्यों के लिए मी सत्य है। जिस प्रकार से चुम्बक लौहकणों को एक निश्चित सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बाध्य करता है उसी प्रकार से मनुष्यों की सामान्य इच्छाएं उनके विभिन्न कार्यों के बीच सम्बन्ध स्थापित करती हैं और निश्चित आकार एवं सामाजिक प्रतिमान (social pattern) का निर्माण करती हैं। यही व्यवस्था की स्थिति सामाजिक संगठन कहलाती है। लोग पहले मार्ग मे चलने में किसी मी नियम का पालन नहीं करते होंगे, परन्तु उन्हें इसमें कष्ट होता होगा और अनेक दुर्घटनाएं होती होंगी, अतः उन्होंने यह निश्चित किया कि दायीं ओर चलना चाहिए। अमरीका में दायीं ओर चलते हैं। पाकिस्तान ने मी अमरीका का अनुकरण किया था, परन्तु सफल न हो सका। तात्पर्य यह है कि चाहे दायीं ओर हो या बायीं ओर, परन्तु कोई न कोई ऐसी संगठित व्यवस्था बनानी होती है जो सामान्य इच्छाओं द्वारा बनती है और सर्वमान्य होती है।

सामाजिक संगठन अमूर्त है
(Social Organization is Abstract)

यहाँ हमने सामाजिक संगठन के अर्थ एवं प्रकृति पर विचार किया। इससे स्पष्ट है कि सामाजिक संगठन अमूर्तमान है। एक सम्पूर्ण संगठित समाज की केवल कल्पनामात्र की जा सकती है। परन्तु उसे संसार में वस्तुतः भौतिक एवं मूर्त रूप में नहीं पाया जा सकता है।

सामाजिक संगठन और सामाजिक ढाँचा
(Social Organization and Social Structure)

सामाजिक ढाँचे से हमारा तात्पर्य उस विशिष्ट व्यवस्था से है जो सम्बन्धित संस्थाओं, सामाजिक प्रतिमानों और साथ ही साथ सामाजिक स्थिति (social status) और कार्यों (roles) के बीच सामजस्य स्थापित करती है और उसे बनाये रखती है।

सामाजिक संगठन सामाजिक ढांचे (social structure) के स्वरूप (type) पर आधारित होता है। सामाजिक संगठन कार्य करेगा या नहीं। यह इस पर आधारित है कि समूह के सदस्य अपनी स्थितियों और कार्यों को पूरा करते हैं अथवा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं, साथ ही साथ सामाजिक संस्थाओं का पारस्परिक सहयोग भी अत्यन्त वांछनीय है। जैसे, धार्मिक संस्थाएँ, राज्य, आर्थिक संस्थाएँ, कल्याणकारी संस्थाएँ, शिक्षण संस्थाएँ, परिवार एवं दूसरी संस्थाएँ परस्पर सम्बन्धित हैं। प्राचीन समय में धर्म-प्रधान सामाजिक संगठन भारत में पाया जाता था। इस कारण से सारी अन्य संस्थाएँ उससे सम्बन्धित थीं। आज राज्य का महत्त्व बढ़ता जा रहा है और अन्य संस्थाएँ उसके अनुसार अपने को सम्बन्धित करती जा रही हैं।

सामाजिक संगठन के आवश्यक तत्त्व
(Essentials of Social Organization)

(1) मतैक्य (Consensus)—सामाजिक संगठन का सर्वप्रथम एवं महत्त्वपूर्ण तत्त्व मतैक्य है। जब तक सामान्य सामाजिक मतैक्य, विभिन्न मौलिक समस्याओं पर नहीं होगा, तब तक समाज ही नहीं हो सकता। डी. टाकविले ने लिखा है, "एक समाज तभी जीवित रह सकता है जबकि उसके अधिकांश व्यक्ति अधिकतर वस्तुओं के विषय में एक ही दृष्टिकोण से विचार करते हों एवं वे बहुत से विषयों के विषय में एक मत रखते हों और जबकि एक प्रकार की घटनाएँ उनके मस्तिष्क पर समान विचार और प्रभाव डालती हों।"[1]

किसी भी सामूहिक कार्य को करने के लिए कुछ न कुछ विचारों की एकता की आवश्यकता रहती है। जब तक किसी कार्य के विषय में अधिकांश व्यक्ति सहमत नहीं हो जाते वह कार्य उचित रूप से नहीं किया जा सकता। दैनिक जीवन में इसका सब अनुभव करते हैं। यदि कोई कार्य शक्ति के द्वारा अनिच्छापूर्वक करवाया जाता है और करने वालों का मतैक्य नहीं होता, तो वह कार्य वास्तविक एवं इच्छित फल नहीं देता। अनेक राज्यों के अध्यापकों के लिए यह अनिवार्य है कि वे रात्रि में प्रौढ़-शिक्षा एवं सामाजिक शिक्षा के केन्द्रों का आयोजन करें। अध्यापकों का इस योजना के प्रति मतैक्य न होने से वे इस योजना को अनिच्छापूर्वक विवश होकर चलाते हैं। इसका फल यह होता है कि जो परिणाम निकलने चाहिए वे नहीं निकलते।

मतैक्य का अर्थ साधारण भाषा में समान विचार की प्रक्रिया से है। समाज के अधिकांश व्यक्ति जीवन के महत्त्वपूर्ण विषयों पर समान दृष्टिकोण से विचार करते हैं। मतैक्य (consensus) स्वतः जन्म लेता है और विकास पाता है। इसे शक्ति के प्रयोग से उत्पन्न नहीं किया जा सकता। यह समाज के आन्तरिक जीवन का प्रदर्शन है।

मतैक्य सामाजिक संगठन का एक आवश्यक तत्त्व है। इसके बिना समाज अर्थहीन एवं निरर्थक होता है। समाज मतैक्य पर ही आधारित है। समाज में

1. Allexis De-Tacqueville, *Democracy in America* (1899), Vol. I, p. 398.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मतैक्य प्रत्येक क्षेत्र में होना चाहिए, तभी यह समाज संगठित कहलायेगा। जैसे ही यह मतैक्य लुप्त होता जाता है, वैसे ही समाज विघटित होने लगता है।

(2) **सामाजिक नियन्त्रण** (Social Control)—सामाजिक नियन्त्रण सामाजिक संगठन का दूसरा आवश्यक तत्त्व है। आदतें, जनरीतियाँ, प्रथाएँ, रूढ़ियाँ विधियाँ एवं संस्थाएँ सामाजिक संगठन को बनाये रखने में सहायता करती हैं और मतैक्य को उत्पन्न करती हैं।

सामाजिक विघटन का अर्थ

(Meaning of Social Disintegration)

सामाजिक विघटन उस समय उत्पन्न होता है जबकि परिवर्तन के कारण शक्तियों का सन्तुलन समाप्त हो जाता है। इसके फलस्वरूप सामाजिक ढाँचा (social structure) धराशायी हो जाता है और मान्यता प्राप्त सामाजिक नियन्त्रणों (social controls) का कोई प्रभाव नहीं रहता। सामाजिक संगठन के अर्थ पर हमने पूर्व अध्याय में विचार किया था, इसलिए यहाँ हम उस पर विस्तार में प्रकाश नहीं डालेंगे। सामाजिक संगठन उस दशा या स्थिति को कहते हैं जिसमें एक समाज की विभिन्न संस्थाएँ, मान्यता प्राप्त उद्देश्यों की पूर्ति, एक-दूसरे के सहयोग से करती हैं। सामाजिक विघटन सामाजिक संगठन का विलोम (opposite) शब्द है। सामाजिक संगठन के विपरीत सामाजिक विघटन वह दशा या स्थिति है जिसमें समाज की विभिन्न संस्थाएँ मान्यता प्राप्त उद्देश्यों की पूर्ति करने में अयोग्य सिद्ध होती हैं और एक-दूसरे के साथ सहयोग के स्थान पर संघर्ष करती हैं। इलियट और मेरिल ने सामाजिक विघटन की परिभाषा इन शब्दों में की है : "सामाजिक विघटन वह प्रक्रिया है जिसके कारण एक समूह के सदस्यों के बीच स्थापित सम्बन्ध टूट जाते हैं या समाप्त हो जाते हैं"[1]

विभिन्न भागों में सन्तुलन की स्थिति को संगठन कहते हैं। इसे मानव शरीर के उदाहरण द्वारा सुन्दरता से समझाया जा सकता है। शरीर में अनेक अंग होते हैं, कोई भोजन को चबाना है कोई हवा को अन्दर खींचता है और कोई मलमूत्र बाहर फेंकता है। कोई सुनने का काम करता है, तो कोई देखने एवं सूँघने का। वातनाड़ी मण्डल (nervous system) सबको प्रेरणा देता है और सबका नियन्त्रण करता है। इस प्रकार सम्पूर्ण सन्तुलन (total equilibrium) रहता है। जब प्रत्येक अंग ठीक प्रकार से अपने निश्चित कार्यों की पूर्ति करता रहता है सन्तुलन बना रहता है, और शरीर प्राणी को सुख एवं आनन्द का अनुभव कराता रहता है। किसी कारण से जिह्वा अपना कार्य करने में असमर्थ हो जाय तो सन्तुलन बिगड़ जाता है। इस

1 'Social disorganization is the process by which the relationships bet een members of a group are broken or dissolved." Elliott, Mobel, A. and Merrill, Francis E., *Social Disorganization*, p. 20.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार समाज में भी सन्तुलन रहता है। समाज की अन्य संस्थाएँ होती हैं। इन संस्थाओं में जब तक सन्तुलन रहता है उस समय तक हम समाज को संगठित कहते हैं और जैसे ही वह सन्तुलन डगमगाने लगता है, वैसे ही सामाजिक विघटन प्रारम्भ हो जाता है। अतः सामाजिक असन्तुलन (social disequilibrium) ही सामाजिक विघटन कहलाता है।

सामाजिक विघटन कार्यों के उचित रूप से पूर्ण न होने को कहते हैं। फॅरिस ने लखा है, "सामाजिक विघटन मनुष्यों के बीच कार्य-सम्बन्धों के उस सीमा तक टूट जाने को कहते हैं जिसके कारण समूह के मान्य कार्यों के करने में बाधा पड़ती है।"[1] इस प्रकार सामाजिक विघटन उस प्रक्रिया को कहते हैं जो स्थापित एवं मान्य व्यवस्था में बाधा उत्पन्न करती है।

जब किसी समाज में संगठन रहता है, तो उसकी संस्थाएँ उचित रूप से निश्चित कार्य करती हैं और मनुष्य इन संस्थाओं के नियमों का पालन करता रहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य के व्यवहार पर पूर्ण नियन्त्रण रहता है और समाज का कार्य मान्य रीतियों मे चलता रहता है। जब ये नियन्त्रण ढीले पड़ जाते हैं और मनुष्य के व्यवहार को नियन्त्रित नहीं कर पाते, तो सामाजिक विघटनप्रारम्भ हो जाता हैं। थामस और जेनिकी ने इस बात पर बड़ा जोर दिया है और सामाजिक विघटन की परिभाषा करते हुए उन्होंने लिखा है कि 'सामाजिक विघटन : "समूह के व्यक्तिगत सदस्यों पर वर्तमान व्यवहार के सामाजिक नियमों के प्रभाव का कम होना है।"[2]

जब समाज में संगठन रहता है तो सामाजिक सम्बन्ध व्यवस्था के अनुसार होते हैं और इसके कारण जीवन सुख एवं आनन्द से पूर्ण होता है। इसके विपरीत जब सामाजिक संगठन का अभाव होता है, तो सम्बन्ध व्यवस्था के अनुसार नहीं होते और इसका परिणाम क्लेश, दुख इत्यादि होता है। क्वीनबोडनहाफर-हार्पर ने सामाजिक विघटन को सरल शब्दों में समझाने का प्रयत्न किया है। वे लिखते हैं, "यदि सामाजिक संगठन का तात्पर्य सम्बन्धों का इस प्रकार विकास समझा जाता है जिन्हें मनुष्य और समूह परस्पर सन्तोषजनक पाते हैं, तो विघटन का तात्पर्य उन

---

[1] 'Social disorganization is the disruption of the functional relations among persons to a degree that interferes with the performance of the accepted tasks of the group." Faris Robert E. L., *Social Disorganization*, (1948), p. 19.

[2] "Social disorganization is a decrease of the influence of existing social rules of behaviour upon individual members of the group." Thomas William I. and Znaniecki, Florian, *The Polish Peasant in Europe and America*, Vol. 4, p. 2.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सम्बन्धों का ऐसे सम्बन्धों द्वारा पूर्ति होना है जो कि निराशा, उदासीनता, झुंझलाहट और दुख लाते हैं।[1]

सामाजिक संगठन और सामाजिक विघटन को हम क्रमशः स्वास्थ्य और रोग के उदाहरण द्वारा भली प्रकार से समझा सकते हैं। जिस प्रकार मनुष्य के शरीर होता है, उसी प्रकार समाज के भी शरीर होता है, जिसे हम सामाजिक ढाँचा (social structure) कहते हैं। शरीर के ही समान सामाजिक ढाँचे के भी विभिन्न अंग होते हैं। जब ये सारे अंग मान्य व्यवस्था के अनुसार कार्य करते रहते हैं, तो संगठन की दिशा रहती है। शरीर के सब अंग जब तक अपना कार्य करते रहते हैं, तब तक हम उस शरीर का स्वस्थ समझते हैं। स्वास्थ्य वह दशा है जिसमें विभिन्न अंग सामान्य रूप से कार्य करते रहते हैं। इस कार्य में जरा भी विघ्न उत्पन्न होने ही रोग प्रारम्भ हो जाता है। इसी प्रकार सामाजिक विघटन भी रोग के समान सामाजिक व्यवस्था में विघ्न उत्पन्न होने का द्योतक है। अतः सामाजिक संगठन समाज का स्वास्थ्य है और सामाजिक विघटन रोग है।

किसी भी समूह या समाज के संगठन को बनाये रखने वाली शक्ति मतैक्य (consensus) होती है। समाज के महत्वपूर्ण विषयों पर अधिकांश सदस्यों की विचारधारा एकसी होनी चाहिए। यह विचारों की एकता मतैक्य बनाये रखने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इस मतैक्य पर ही सामाजिक ढाँचा खड़ा रहता है। मतैक्य समाप्त होते ही ढांचा टूटने लगता है और सामाजिक विघटन प्रारम्भ हो जाता है। मतैक्य का अभाव सामाजिक विघटन को जन्म देता है।

सामाजिक ढाँचा सामाजिक स्थिति और इससे सम्बन्धित कार्यों का समूह है। समाज प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक निश्चित स्थिति निर्धारित करता है और प्रत्येक स्थिति से सम्बन्धित निश्चित कार्य रहते हैं जो उस स्थिति वाले मनुष्य को करने पड़ते हैं। किसी भी समाज में जब तक सामाजिक स्थिति स्पष्ट रूप से परिभाषित रहती है और लोग इसके अनुसार कार्य करते रहते हैं तब तक वह समाज संगठित कहलाता है। ज्योंही इसके विपरीत स्थिति होती है। अर्थात सामाजिक स्थिति और कार्य अनिश्चित एवं अस्पष्ट होते हैं, त्योंही सामाजिक विघटन प्रारम्भ हो जाता है। इस प्रकार सामाजिक स्थिति और कार्यों के अनिश्चित एवं अस्पष्ट होने को सामाजिक विघटन कह सकते हैं।

---

1 "If social organization means the development of relationships which persons and groups find mutually satisfactory, then disorganization means their replacement by relationships which bring disappointment, thwarted wishes, irritation and unhappiness." Queen Stuart, A. Bondenhafer, Walter B. and Harper, Ernest. B., *Social Organization and Social Disorganization*, p. 53.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक विघटन एक प्रक्रिया है
(Social Disorganization and Disintegration is a Process)

जो कार्य निरन्तर होता रहता है और जिसका अन्त नहीं होता, उसे प्रक्रिया ते हैं। सामाजिक विघटन भी एक प्रक्रिया है, कोई पूर्ण अवस्था नहीं। समाज में भी इतना विघटन नहीं पाया जाता कि सम्पूर्ण सामाजिक नियन्त्रण समाप्त जाये और चाहे जितनी भी अगतिशील एवं रूढ़िवादी व्यवस्था हो, उनमें भी पूर्ण न नहीं पाया जाता। चूँकि न तो सामाजिक संगठन और न सामाजिक विघटन र्ण अवस्था है, इसलिए यह उचित होगा कि हम उन्हें सामाजिक प्रक्रियाओं प में मानें। सामाजिक संघटन की प्रक्रिया एकता का निर्माण करती है सामाजिक विघटन की प्रक्रिया पृथकता की ओर ले जाती है।

सामाजिक विघटन सामाजिक संगठन के ही समान एक सामान्य प्रक्रिया है। प्रत्येक समाज में हर समय किसी न किसी अंश में अवश्य पायी जाती है। सामा- विघटन कोई अपवाद नहीं है जो किसी विशेष काल या समाज में ही पाया हो। समाजशास्त्री सामाजिक विघटन को व्याधि (malady) नहीं मानते, क प्रत्येक सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित स्वाभाविक प्रक्रिया (natural cess) मानते हैं। सामाजिक विघटन कुछ समय के लिए अस्थायी रूप से वर्तमान ाजिक व्यवस्था को हानि पहुँचाता है, इसलिए साधारण व्यक्ति चिन्ता में पड़ हैं और इसे भयंकर व्याधि समझ लेते हैं। वास्तव में सामाजिक विघटन जिस ान व्यवस्था को विघटित करता है, उसके स्थान पर भविष्य में नवीन व्यवस्था मूल्यों के अनुसार स्थापित हो जाती है और समाज में पुनः सन्तुलन हो जाता इस प्रकार यह प्रक्रिया समाज में सदैव चलती रहती है।

सामाजिक विघटन कई बार हानि के स्थान पर लाभ पहुँचाता है। रोग जिस र शरीर का विकार निकाल देता है उसी प्रकार सामाजिक विघटन समाज में हुए असन्तोष एवं अशान्ति को मिटा देता है। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि ाजिक विघटन सदैव हितकर ही होता है, इसलिए उसका कोई उपचार नहीं ा चाहिए। सामाजिक विघटन कभी-कभी बड़ा भयंकर होता है और उसे यदि त दिशा की ओर निर्देशित न किया जाय तो वह समाज को बड़ी क्षति पहुँचाता सामाजिक विघटन उस जिन्द (भूत) के समान होता है जिसे प्रति क्षण कार्य ए और यदि उसे कार्य न दिया गया तो वह अपने मालिक का ही विनाश आरम्भ देता है।

सामाजिक विघटन के लक्षण
(Symptoms of Social Disorganization and Disintegration)

सामाजिक विघटन के भी उसी प्रकार के लक्षण होते हैं जिस प्रकार रोग के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुआ करते हैं। लक्षणों को देखकर यह निश्चयपूर्वक बताया जा सकता है कि रोगी किस रोग से ग्रस्त है। डाक्टर के समान समाजशास्त्री समाज का रोग-निदान वैज्ञानिक पद्धतियों से करने का प्रयत्न करते हैं। सामाजिक विघटन के भी कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं। अब हम उनमें से कुछ प्रमुख एवं सरलता से पहुँचाने जाने वाले लक्षणों पर प्रकाश डालेंगे।

(1) **रूढ़ियों और संस्थाओं का संघर्ष** (Conflict of Mores and Institutions)—सामाजिक विघटन का एक प्रमुख लक्षण रूढ़ियों तथा संस्थाओं का संघर्ष है। विभिन्न संस्थाएँ एक-दूसरे के साथ असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ कर देती हैं। परिवार की संस्था का दृष्टिकोण कुछ और होता है जबकि स्कूल तथा समुदाय किसी दूसरी ओर निर्देशित करते हैं। इसका स्वाभाविक फल संघर्ष होता है। जब समूह की विभिन्न संस्थाओं में सामंजस्य नहीं पाया जाता तो सामाजिक विघटन आरम्भ हो जाता है। उदाहरण के लिए, हम भारत में पायी जाने वाली वर्तमान संस्थाओं को ले सकते हैं। परिवार, उत्तराधिकार के नियम, विवाह संस्था एवं धार्मिक संस्था इत्यादि एक विशिष्ट प्राचीन रूढ़िवादी आधार लिये हुए हैं। दूसरी ओर आर्थिक संस्थाएँ एवं शिक्षा संस्थाएँ इत्यादि पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली पर आधारित हैं। इसका फल संघर्ष होता है। पढ़े-लिखे नवयुवकों एवं उद्योग-धन्धों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए बड़ी कठिनाई होती है। वे यह सरलता से निश्चय नहीं कर पाते कि किन संस्थाओं का निर्देश न मानना चाहिए और किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए। इसके फलस्वरूप दोनों ही प्रकार की संस्थाओं का नियन्त्रण ढीला हो जाता है और व्यक्ति मनमाना व्यवहार करने लगते हैं। यह सामाजिक विघटन का लक्षण है।

(2) **एक समिति से दूसरी समिति के कार्यों का हस्तान्तरण** (Transfer of Functions from one Association to another)—एक विशिष्ट सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न समितियों के निश्चित कार्य होते हैं जो समाज की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक समिति के कार्य निश्चित होते हैं। जब सामाजिक विघटन प्रारम्भ होता है, तो वर्तमान व्यवस्था उसी रूप में नहीं रह पाती और विभिन्न समितियों के कार्यों में भी परिवर्तन होने प्रारम्भ हो जाते हैं। आधुनिक युग में प्राचीन व्यवस्था पर आक्रमण हुआ और वह धीरे-धीरे टूटने लगी। यह व्यवस्था धर्म प्रधान थी एवं परिवार की इकाई पर आधारित थी। धार्मिक समितियों और परिवार के अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य थे, परन्तु धीरे-धीरे ये कार्य अन्य समितियों को हस्तान्तरित होते जा रहे हैं। परिवार के स्थान पर राज्य का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। राज्य से अनेक कार्यों का हस्तान्तरण एक समिति से दूसरी समिति या समितियों को होने लगता है। अतः यह सामाजिक विघटन का प्रमुख लक्षण है।

द्वितीय महायुद्ध का चित्र अभी हमारे स्मृति पटल पर अंकित है। हमें या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि युद्ध के समय में अनेक कार्य, जो साधारण समय में दूसरी समितियाँ करती थीं, राज्य ने ले लिये थे। मूल्यों का नियन्त्रण करना, आवश्यक खाद्य-सामग्री एवं अन्य आवश्यक वस्तुओं का एकत्रीकरण एवं वितरण करना, युद्ध सामग्री का उत्पादन करना, साधारण नियमों के स्थान पर विशेष नियमों का लागू करना इत्यादि कार्य राज्य करने लगा था। कार्यों के हस्तान्तरण से स्पष्ट है कि भयकर सामाजिक विघटन संगठन प्रारम्भ हो गया था। जैसे ही युद्ध समाप्त हुआ वैसे ही ये कार्य शनैः-शनैः अपनी पूर्व समितियों के पास पहुँचने लगे।

(3) **वैयक्तिक व्यक्तिकरण** (Personal Individuation)—वैयक्तिक व्यक्तिकरण से हमारा तात्पर्य यह है कि मनुष्य प्रत्येक निर्णय व्यक्तिगत आधार पर वैयक्तिक स्वच्छन्दता का अनुभव करते हुए करता है और उसे समाज की कोई चिन्ता नहीं रहती। एक व्यक्ति इस प्रकार की स्वतन्त्रता का अनुभव दो निम्न कारणों में से किसी एक के कारण करता है।

(अ) जब मनुष्य का संस्कृति से इतना सामंजस्य होता है कि उसे किसी भी संघर्ष की कल्पना नहीं होती और वह यह अनुभव करता है कि जो कुछ भी वह कर रहा है वह आन्तरिक प्रेरणा के कारण कर रहा है। दूसरे शब्दों में समाज और व्यक्ति एक रूप हो जाते हैं।

(ब) दूसरी अवस्था वह होती है जब मनुष्य अपने को सम्पूर्ण सामाजिक बन्धनों में मुक्त समझता है और यह विश्वास करता है कि वह अपना मार्ग निश्चित करने में स्वतन्त्र है।

पहली अवस्था एक सुदृढ़ एवं संगठित समाज का लक्षण है और दूसरी अवस्था एक निर्बल एवं विघटित समाज का। इस प्रकार एक स्वतंत्र व्यक्ति कठिनाई में पड़ जाता है, उसकी समझ में नहीं आता कि उसे क्या करना चाहिए। व्यक्ति और समाज में इस प्रकार के भावुक सम्बन्ध का अभाव' सामाजिक विघटन का प्रमुख लक्षण है। जब व्यक्ति के व्यवहार पर सामाजिक नियन्त्रण (social control) नियन्त्रण करने में असमर्थ सिद्ध होता है तब इस प्रकार की अवस्था पायी जाती है।

(4) **स्थिति और कार्य में परिवर्तन** (Change in Status and Role)—सामाजिक विघटन का एक प्रमुख लक्षण स्थिति और कार्य में परिवर्तन होना है। प्रत्येक समाज में स्पष्ट रूप से परिभाषित स्थिति और उससे सम्बन्धित कार्य होते हैं। जिस समाज में स्पष्ट रूप से परिभाषित स्थिति और उससे सम्बन्धित कार्य पाये जाते हैं, वह संगठित समाज होता है। इस प्रकार की अवस्था अगतिशील समाजों में पायी जाती है, परन्तु गतिशील (dynamic) समाज में स्थिर प्रतिमान (patterns) सदैव परिवर्तन होने के कारण नहीं बन पाते। ऐसी दशा में स्थिति और कार्य दोनों परिवर्तित होते रहते हैं। इसका फल यह होता है कि व्यक्ति को निर्णय करने में कठिनाई होती है और सामाजिक विघटन प्रारम्भ हो जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विघटित समाज में ऐसी अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं। प्रमुख स्थितियों से सम्बन्धित कार्यों का अनिश्चित होना और भी भयंकर है। उदाहरण के लिए पत्नी की स्थिति लीजिए। आज की पत्नी यह निश्चिय पूर्वक नहीं जानती कि उसे कौनसा कार्य करना चाहिए—माता का, नव-विवाहित वधू का, मालकिन का, कमाने वाली स्त्री का या दिल बहलाने वाली संगिनी का। इनमें से कुछ कार्य एक-दूसरे के सहायक हैं और कुछ विरोधी। ऐसी दशा में पति किसी और प्रकार के कार्य की इच्छा रखता है तो पत्नी किसी दूसरे प्रकार का कार्य करती है। दोनों ही एक-दूसरे को प्रसन्न करना चाहते हैं, परन्तु संघर्ष उत्पन्न होता है। आजकल के शिक्षित युवक अपनी पत्नियों से उन कार्यों की आशा करते हैं जो पाश्चात्य पत्नी करती हैं। वे चाहते हैं कि उनकी पत्नी उनकी संगिनी एवं मित्र बने और उसी प्रकार के कार्य करे। स्त्रियों की शिक्षा अधिक न होने के कारण वे जो कुछ भी पत्नी के कार्य रीतिरिवाजों के अनुसार समझती हैं, करती है। वे अपने पतियों को देवता समझती हैं और उसी प्रकार से उनकी पूजा करना चाहती हैं, परन्तु शिक्षित युवक पूजा एवं सेवा के स्थान पर प्रेम एवं मित्रता के व्यवहार की आशा करते हैं। इस प्रकार दृष्टिकोणों की भिन्नता के कारण वे एक-दूसरे को प्रसन्न नहीं कर पाते।

विघटित समाज में जिस प्रकार के कार्यों की रीतिरिवाजों के अनुसार आशा की जाती है, उस प्रकार के कार्य लोग नहीं करते हैं, क्योंकि सामाजिक परिवर्तन स्थिति को बिलकुल परिवर्तित कर देता है। गतिशील समाजों में जो कुछ कहा जाता है और जो व्यवहार किया जाता है, उसमें बड़ा अन्तर होता है। इसके कारण व्यक्तियों का विश्वास उठ जाता है और वे मनमाना व्यवहार करने लगते हैं।

सामाजिक विघटन के कारण
(Causes of Social Disorganization and Disintegration)

सामाजिक विघटन के कारणों की खोज अनेक विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से की है। कुछ लोगों का कहना है कि धर्म का लोप हो रहा है और अधर्म का साम्राज्य बढ़ रहा है और अधर्म के कारण ही सामाजिक विघटन हो रहा है। कुछ का कहना है कि अनैतिकता सामाजिक विघटन की जननी है। कुछ लोग इसका कारण राज्य की बढ़ती हुई शक्ति बताते हैं।

आधुनिक युग में आज भी ऐसे व्यक्ति हैं जो यह विश्वास करते हैं कि सामाजिक विघटन का जन्म मनुष्य के पापों के कारण हुआ है। कुछ लोगों का मत है कि यह वर्तमान आर्थिक व्यवस्था के कारण है। उत्तम सन्तानोत्पत्तिवादियों (engenists) का मत है कि यदि शारीरिक एवं मानसिक रूप से अयोग्य व्यक्तियों को समाप्त कर दिया जाय तो सामाजिक विघटन जैसी कोई समस्या नहीं रहेगी।

ये सारे लोग सामाजिक विघटन का केवल एक ही कारण बताते हैं. परन्तु यह उनकी भयंकर भूल है। हम पहले ही लिख चुके हैं कि सामाजिक विघटन एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रिया है, इसलिए इसके अनेक कारण हो सकते हैं। सामाजिक विघटन का कोई एक सार्वभौमिक कारण नहीं माना जा सकता। अब हम इसके प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालेंगे।

(1) सामाजिक परिवर्तन—सामाजिक विघटन का प्रमुख कारण सामाजिक परिवर्तन है। ऑगबर्न ने इस पर बड़ा बल दिया है। इलियट और मेरिल ने भी इसे सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख कारण बताया है। सामाजिक परिवर्तन के कारण विभिन्न तत्त्वों में, विभिन्न अंशों में परिवर्तन होता है।

(2) युद्ध (War)—युद्ध औद्योगिक आविष्कारों से अधिक सामाजिक विघटन को जन्म देता है। युद्ध एक ऐसा आपत्तिकाल होता है, जबकि समाज सामान्य कार्यों की ओर ध्यान न देकर केवल अपनी रक्षा को महत्त्व देता है। सम्पूर्ण समाज की शक्ति युद्ध में लग जाती है। लोग घरबार छोड़कर सेना में भर्ती हो जाते हैं और स्थान-स्थान पर असाधारण जीवन व्यतीत करते हैं। उन्हें शिविरों में अपने परिवारों से बहुत दूर रहना पड़ता है। ये सारे परिवर्तन समाज में उथल-पुथल मचा देते हैं। इसके कारण सामाजिक विघटन प्रारम्भ हो जाता है। युद्ध सामाजिक मूल्यों को भी क्षति पहुँचाता है। हत्याएँ अधिक होने लगती हैं, क्योंकि युद्ध के कारण जीवन का कोई महत्त्व मनुष्य के मस्तिष्क में नहीं रहता।

(3) संकट (Crisis)—यद्यपि सामाजिक विघटन एक प्रक्रिया है फिर भी संकट की परिस्थिति के कारण इसके अनेक स्वरूप उत्पन्न हो जाते हैं। सामाजिक संकट सामाजिक विघटन का प्रमुख कारण है। सामाजिक संकट अनेक व्यक्तिगत संकटों को जन्म देते हैं, क्योंकि बहुत से लोग प्राचीन व्यवहार को छोड़कर अज्ञात व्यवहार को करने के लिए बाध्य होते हैं। सामाजिक संकट के काल में सक्रिय एवं बुद्धिमान व्यक्ति नयी परिस्थितियों से अनुकूलन कर लेते हैं, परन्तु साधारण व्यक्ति के लिए ऐसा करना बड़ा दुष्कर कार्य होता है।

सामाजिक सकट समूह के सामान्य कार्यों में घोर बाधा उत्पन्न होने को कहते हैं जिसके कारण आदतों, रीतिरिवाजों और अन्य सामूहिक व्यवहारों में परिवर्तन की आवश्यकता अनिवार्य होती जाती है। संकट की परिभाषा थामस ने इस प्रकार की है, "संकट वह घटना है जो सुचारु रूप से पालित रीतिरिवाजों के पालन करने में बाधा उपस्थित करती है और सारा ध्यान सघर्ष की स्थिति पर केन्द्रित कर देती है"[1] सामाजिक संकट निम्न दो प्रकार के होते हैं:

(अ) प्रबल संकट (precipitate crisis)।
(ब) सचयी संकट (cumulative crisis)।

---

[1] "Crisis is any occurence which interrupts smoothly running habits by focussing attention upon a conflict situation. Thomas William I, *Source Book for Social Origins*, p. 16.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(अ) प्रबल संकट (Precipitate Crisis)—प्रबल संकट वह संकट है जबकि समूह के व्यवहार में एक परिवर्तन होता है और बहुत से सदस्यों को एकदम नये कार्य (roles) करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। प्रबल संकट के अन्तर्गत नेताओं की मृत्यु, दुर्घटनाएँ, अकाल और ईश्वर के द्वारा डाली गयी अन्य विपत्तियाँ आती हैं। योजना बनाने के लिए समय नहीं होत। है और कुछ न कुछ युक्ति तुरन्त निकालनी पड़ती है और यदि ऐसा न किया जाय तो समाज समाप्त हो जाता है। महात्मा गाँधी की हत्या भारतवासियों के लिए एक ऐसा ही संकट था।

(ब) संचयी संकट (Cumulative Crisis)—संचयी संकट वह संकट है जो धीरे-धीरे लगातार होने वाली घटनाओं के फलस्वरूप पनपता और विकसित होता रहता है। दो संस्कृतियों के लोग एक स्थान पर रहते हैं, तो उनमें धीरे-धीरे संघर्ष होते रहते हैं और ये ही संघर्ष बाद में संकट बन जाते हैं। भारत में हिन्दू और मुसलमान सम्प्रदायों में रीतिरिवाजों की भिन्नता के कारण सघर्ष होते रहते हैं। धीरे-धीरे इन संघर्षों की नींव शक्तिशाली होती गयी और घृणा एवं दोष संचित होता गया। बाद में यही संकट बन गया।

(4) सामाजिक मूल्य (Social Values)—सामाजिक मूल्य मनुष्यों के लिए एक आवश्यक तत्त्व होता है और मनुष्य की आशाएँ, आकांक्षाएं और प्रेरणाएँ उन्हें एक महत्त्वपूर्ण अर्थ से सुसज्जित कर देती हैं। सामाजिक मूल्य प्रत्येक समाज में पाये जाते हैं। वे समूह की सांस्कृतिक सम्पत्ति के महत्त्वपूर्ण भाग होते हैं। उनके ही द्वारा यह निश्चित होता है कि समाज किस बात को महत्त्वपूर्ण समझता है और उस समाज के सदस्य किन तत्त्वों की रक्षा करेंगे। जब इन मूल्यों पर आघात होता है तो सामाजिक विघटन की प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। सामाजिक मूल्यों का बड़ा महत्त्व है। इलियट और मेरिल ने लिखा है, "सामाजिक मल्यों के बिना न तो सामाजिक संगठन और न सामाजिक विघटन का कोई अस्तित्व होगा।"[1]

(5) सामाजिक धारणाओं में परिवर्तन (Changes in Social Conceptions)—सामाजिक धारणा मस्तिष्क की एक स्थिति या दशा है। मस्तिष्क की यह दशा जीवन के रहन-सहन के तरीकों एवं विभिन्न वस्तुओं एवं परिस्थितियों के अनुभवों का फल होता है। शनै.-शनै मनुष्य यह सीख लेता है।

सामाजिक धारणाओं एवं मूल्यों में परिवतन सामाजिक परिवर्तन का परिणाम होता है। समाज विरोधी धारणाएँ सामाजिक विघटन को जन्म देती हैं। ये समाज विरोधी धारणाएँ व्यक्ति अपने समूह में सीखता है। वृहद समूह को इन धारणाओं से क्षति पहुँचती है। समाज विरोधी धारणाएँ पहले वर्तमान व्यवहार के नियमों की

---

1 "Without social values, neither social organization nor social disorganization would exist." Elliott and Merrill, *Social Disorganization*, p. 29.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ता को नष्ट करती हैं और फिर धीरे-धीरे सामाजिक संस्थाओं का गला घोंट ती हैं। इस प्रकार सामाजिक धारणाओं में परिवर्तन सामाजिक विघटन का पूर्ण कारण है।

सामाजिक विघटन के घातांक[1]

(Indices of Social Disorganization and Disintegration)

सामाजिक विघटन के सामान्य लक्षणों (symptoms) का विवरण हम दे हैं, अब हम विशेष चिह्नों (घातांकों) पर विचार करेंगे। ये चिह्न विभिन्न त्यों के लिए विभिन्न हो सकते हैं क्योंकि ये सामाजिक मूल्यों पर आधारित हैं। कुछ प्रमुख चिन्हों पर विचार करने के पूर्व यह समझ लेना आवश्यक है कि चिन्ह dex) और सामाजिक विघटन की प्रक्रिया में क्या सम्बन्ध है।

सामाजिक विघटन के अर्थ को हमने भलीप्रकार समझ लिया है। एक चिन्ह जा सकता है। चिन्ह की परिभाषा करते हुए इलियट और मेरिल ने लिखा है, चिन्ह तुलनात्मक रूप से साधारण घटना होती है जो (समाज में) एक अधिक ल घटना की उपस्थित की ओर संकेत करती है।"[2] इस प्रकार चिन्ह सामाजिक टन की जटिल प्रक्रिया का द्योतक है।

चिन्ह को एक-दूसरे प्रकार से भी समझाया जा सकता है। सदरलैण्ड तथा ने लिखा है, "·········चिन्ह ऐसी वस्तु है जिसे आप नाप सकते हैं और वह न्ह) उस वस्तु को नापता है जिसे आप नहीं नाप सकते।" इसको समझाने के एक उदाहरण दिया जा सकता है। हम ताप के परिवर्तन को नहीं नाप सकते, पं अनुभव कर सकते हैं। इसे नापने के लिए हम पारे के घटने-बढ़ने को नापते क्योंकि इसे हम नाप सकते हैं और इसकी नाप से ताप का अनुमान लगा सकते है। का फैलना और ताप का परिवर्तन एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। इसलिए मीटर एक चिन्ह है।

सामाजिक विघटन के चिन्ह समाज में मतैक्य की भावना के अभाव को त करते हैं। जैसे ही इन चिन्हो का समाज में पाया जाना आरम्भ हो सामाजिक टन की प्रक्रिया से सावधान हो जाना चाहिए। वैयक्तिक विघटन (Personal organization) के घातांक बाल-अपराध अपराध, पागलपन, वेश्यावृत्ति, पान, आत्महत्या इत्यादि की सांख्यिकी (statistics) है। पारिवारिक विघटन के ाक विवाह-विच्छेद, अवैध बालक मैथुन-सम्बन्धी राग इत्यादि की संख्याएं हैं। दायिक विघटन के घातांक अपराध; अशिक्षा, बेकारी, निधनता, रोग इत्यादि हैं।

---

[1] घातांक का अर्थ विशेष चिन्ह होता है।

[2] "An index is thus a relatively simple phenomenon which indicates the presence of a more complicated phenomenon." Elliott and Merrill, *Social Disorganization*, p. 32.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सामाजिक विघटन के परिणाम
(Consequences of Social Disorganization and Disintegraiton)

सामाजिक विघटन के विषय में हम पहले ही लिख चुके हैं कि वह एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। यह रोग समाज के विकारों को निकाल देता है, परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि सामाजिक विघटन समूह को कोई हानि ही नहीं पहुँचाता है। सामाजिक विघटन कई बार समाज को भारी क्षति पहुँचाता है। जिस प्रकार कुछ सक्रामक बीमारियाँ मनुष्य समूह को मृत्यु का ग्रास बना देती हैं, उसी प्रकार सामाजिक विघटन भी समाज को नष्ट-भ्रष्ट कर देती है।

सामाजिक विघटन का परिणाम समाज के प्रत्येक सदस्य को भोगना पड़ता है। यह हजारों मनुष्यों के प्राण ले लेता है और यह प्रक्रिया फिर भी चलती रहती है। सामाजिक विघटन के कारण सुख और चैन का लोप हो जाता है और दुख एवं क्लेश का साम्राज्य फैल जाता है।

हम इसके परिणामों का आगे सविस्तार वर्णन करेंगे।

सामाजिक विघटन के प्रमुख रूप
(Significant Forms of Social Disorganization and Disintegration)

सामाजिक विघटन के इतने रूप हैं कि उनका पूर्ण विवरण देने के लिए एक पृथक पुस्तक की आवश्यकता पड़ेगी। आधुनिक गतिशील समाज में अनेक परिवर्तन प्रतिदिन हुआ करते हैं और इनके कारण सामाजिक विघटन होता रहता है। एक गतिशील समाज अपने में ही सामाजिक विघटन के तत्त्व रखता है। इस पर सामाजिक विघटन के प्रमुख रूपों से परिचित होना समाजशास्त्र के विद्यार्थी के लिए अनिवार्य है। सामाजिक विघटन के प्रमुख रूपों को चार भागों में विभाजित किया जा सकता है। यह विभाजन कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता, क्योंकि एक रूप से पूर्णतया पृथक नहीं किया जा सकता। यह वर्गीकरण केवल सरलता की दृष्टि से किया गया है।

(1) व्यक्तिगत विघटन (Individual Disorganization)—इसके अन्तर्गत किशोरावस्था की समस्याएँ, बाल अपराध, अपराध के अन्य रूप, लिंग सम्बन्धी अपराध, वेश्यावृत्ति, मद्यपान, पागलपन एवं आत्महत्या इत्यादि आते हैं।

(2) पारिवारिक विघटन (Family Disorganization)—इसके अन्तर्गत परिवार से सम्बन्धित विघटन जैसें परिवार में अनुशासनहीनता, पारिवारिक तनाव, विवाह-विच्छेद, अन्य वैवाहिक समस्याएँ इत्यादि आते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(3) पारिवारिक विघटन (Community Disorganization)—सामुदायिक विघटन से हमारा अभिप्राय उन सामाजिक विघटनों से है जो सम्पूर्ण समुदाय से विशेष रूप से सम्बन्धित हैं। इसके उदाहरण, राजनैतिक भ्रष्टाचार, अपराध, बेकारी, निर्धनता, धर्म तथा अन्य आधारों पर प्रभेद एवं अत्याचार, व्यावसायिक मनोरंजन इत्यादि हैं।

(4) अन्तरराष्ट्रीय विघटन (International Disorganization)—इसके अन्तर्गत क्रान्ति, युद्ध, साम्राज्यवाद, सर्वाधिकारवाद इत्यादि आते हैं।

प्रश्न

1. सामाजिक विघटन से आप क्या समझते हैं ? सामाजिक विघटन के प्रमुख कारकों की विवेचना कीजिए।

(What do you understand by social disintegration ? Discuss the factors of social disintegration.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

47

समूह तनाव एवं साम्प्रदायिक तनाव
(Group Tensions and Communal Tensions)

'तनाव' विस्फोट के पूर्व की स्थिति को कहते हैं। 'तनाव' (tension) एक प्रकार से धुआँ देता हुआ ज्वालामुखी के समान होता है, जो कभी भी उग्र रूप धारण कर विस्फोट की स्थिति में आ सकता है।

समूह तनाव
(Group Tensions)

समूह तनाव वह तनाव है, जो समूहो के बीच उत्पन्न होता है। समूह तनाव के अनेक उदाहरण हो सकते हैं, जैसे श्रमिक तनाव (labour tensions), युवकों का तनाव (youth tensions), विद्यार्थियों का तनाव (students' tensions) जातियों के तनाव (caste tensions) आदि।

श्रमिक तनाव (Labour Tensions)—श्रमिक तनाव श्रमिकों और पूंजीपतियों के बीच पाया जाता है। श्रमिक यह समझते हैं कि मिल मालिक और पूंजीपति उनका शोषण करते हैं। श्रमिक तनाव का शान्त रूप हड़ताल है। मिल मालिक तालाबन्दी (lock-out) के रूप में अपने तनाव को प्रदर्शित करते हैं। श्रमिक तनाव के अनेक कारण (causes) हैं, इनमें से प्रमुख हैं: (i) अति अल्प वेतन, (ii) बढ़ती हुई महँगाई, (iii) महँगाई भत्ते की वृद्धि में कमी, (iv) कार्य की असन्तोषपूर्ण दशाएँ एवं शोषण, (v) बोनस एवं लाभांश का उचित स्तर पर न दिया जाना, (vi) अधिकारियों एव मालिकों का दुर्व्यवहार, (vii) सवेतन छुट्टी में कटौती, (viii) श्रमिक संघों (trade unions) को मान्यता न देना या उसके कार्य में विघ्न डालना, (ix) छँटनी, (x) राजनीतिक दलों द्वारा भड़काया जाना व अपने उद्देश्यों के लिए श्रमिकों का उपयोग आदि। श्रमिक तनाव के भयकर परिणाम (results) होते हैं, इनमें से कुछ निम्न हैं: (i) अशान्ति, (ii) दंगे फिसाद, (iii) आर्थिक हानि, (iv) श्रमिकों की बेकारी एवं परिणामस्वरूप आर्थिक दुर्दशा, (v) औद्योगिक उत्पादन में कमी आदि। श्रमिक तनाव देश के लिए एक गहरी चिन्ता का विषय है। इसके कारण सार्वजनिक सुरक्षा को सदैव खतरा बना रहता है। श्रमिक तनावों को दूर करने के लिए अनेक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पद्धतियाँ एवं उपाय अपनाये जा सकते हैं, कुछ उपाय निम्न हैं (i) श्रमिक संगठनों (trade union) का विकास और उचित मार्गदर्शन, (ii) श्रमिकों और मिल मालिकों में प्रत्यक्ष सम्बन्ध और मध्यस्थलों की समाप्ति, (iii) समझौता समितियों की स्थापना, जो समझौते के द्वारा विवादों को तय कर दें, (iv) संयुक्त समझौता समितियों की स्थापना, जिसमें मिल मालिक, श्रमिक और जनता के प्रतिनिधि हों, (v) त्रिपक्षीय समितियों की स्थापना, जिसमें मिल मालिक, श्रमिकों और सरकार के प्रतिनिधि हों, (vi) श्रमिक कल्याण की योजनाओं को क्रियान्वित करना और (vii) श्रमिक शिक्षा, जिससे उन्हें उचित मार्गदर्शन प्राप्त हो सके।

युवक तनाव (Youth Tensions)—इस समय भारत के युवकों में बहुत अधिक तनाव पाया जाता है, विशेष रूप से विद्यार्थियों में। विद्यार्थी विक्षोभ (students unrest) की विशेष समस्या इस समय चल रही है।

युवक तनाव अनेक रूपों में प्रदर्शित होता है। विद्यालय एवं महाविद्यालयों में हड़तालें, मारपीट, शोरगुल मचाना, बसों को जला देना, दूकानों को लूट लेना, पुलिस पर पत्थर फेंकना, अधिकारियों एवं मंत्रियों का घेराव करना आदि।

युवक तनाव के सामान्य कारण हैं—(i) दोषपूर्ण रूढ़िवादी परम्परात्मक शिक्षा प्रणाली (ii) उद्देश्य हीनता, (iii) मूल्यों में विरोध (iv) नैतिक और धार्मिक शिक्षा का अभाव, (v) पारिवारिक नियन्त्रण में कमी, (vi) राजनैतिक दलों द्वारा युवकों का दुरुपयोग, (vii) शिक्षण संस्थाओं का कुप्रबन्ध, (viii) अध्यापकों का गिरा हुआ स्तर एवं उनकी राजनीति, (ix) छात्र सघों का अनुचित मार्गदर्शन, (x) भावी बेकारी का भय, (xi) चित्रपट और अश्लील साहित्य का कुप्रभाव, (xii) राजनैतिक नेताओं का गलत आदर्श आदि।

युवक तनाव को दूर करने के लिए यह अनिवार्य है कि शिक्षा प्रणाली को सुधारा जाये और ऐसी शिक्षा प्रणाली अपनायी जाय, जो युवकों का समुचित विकास कर सके और उनकी भावी आकांक्षाओं एवं आशाओं को पूरा करने में सहायक हो सके। तकनीकी शिक्षा के साथ-साथ ऐसी शिक्षा अवश्य प्रदान की जानी चाहिए। साथ ही, बेकारी और विशेष रूप से शिक्षित बेकारी को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। युवक को भविष्य की सुरक्षा का भाव भी प्राप्त होना चाहिए। योग्य अध्यापक होने चाहिए। शिक्षण संस्थाओं को सगठित होना चाहिए। युवकों के लिए उचित मनोरंजन की व्यवस्था होनी चाहिए। नैतिक आदर्शों को उनमें भर देना चाहिए। युवकों के मार्गदर्शन के लिए मनोवैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों को एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार करना चाहिए, जिससे युवक भटकें नहीं। युवक एवं किशोर कल्याण पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। युवक राष्ट्र की भावी निधि है, यह विचार रखकर प्रयत्न प्रारम्भ होने चाहिए।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साम्प्रदायिक तनाव
(Communal Tensions)

साम्प्रदायिक तनाव वे होते हैं जो सम्प्रदायों के बीच पाये जाते हैं। भारत में साम्प्रदायिक तनाव एक भयंकर समस्या बनी हुई है। मुख्य रूप से हिन्दू और मुसलमानों के बीच सदैव तनाव बना रहता है और साम्प्रदायिक दंगे जीवन की एक सामान्य बात हो गयी है। पंजाब में हिन्दू और सिक्खों के बीच भी साम्प्रदायिक तनाव बना रहता है।

भारत में साम्प्रदायिकता अंग्रेजी शासन की नीति की देन है। हिन्दू तथा मुसलमान अपनी पृथक-पृथक संस्थाएँ बनाने लगे। 1931 में सम्पूर्ण भारत में भीषण साम्प्रदायिक दंगे हुए। इसके उपरान्त तो साम्प्रदायिक दंगों का दौर ही प्रारम्भ हो गया। सन् 1940 में मोहम्मद अली जिन्ना ने मुस्लिम लीग में द्वि राष्ट्र का सिद्धान्त घोषित किया। उन्होंने भारत से पृथक पाकिस्तान की माँग की। 1946 में मुस्लिम लीग ने सीधी कार्यवाही की नीति अपनायी और बंगाल में भीषण साम्प्रदायिक दंगे हुए। अन्ततः 1947 में पाकिस्तान की माँग को काँग्रेस ने स्वीकार कर लिया और देश का विभाजन हो गया। विभाजन के उपरान्त भी भीषण साम्प्रदायिक दंगे हुए और हजारों व्यक्ति दोनों सम्प्रदायों के मारे गये।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति और हिन्दुस्तान-पाकिस्तान बनने के उपरान्त भी साम्प्रदायिकता की स्थिति वैसी ही बनी हुई है। कहना यूं चाहिए कि कटुता बढ़ी ही है, घटी नहीं है। साम्प्रदायिकता का विकराल स्वरूप अभी भी पाया जाता है। साम्प्रदायिक आधार पर राजनैतिक दलों का निर्माण अभी भी होता है। भारत में प्रमुख साम्प्रदायिक राजनैतिक दल हैं—हिन्दू महासभा, अकाली दल, जमीयत-उल-उलेमा, मुस्लिम लीग आदि।[1]

भारत में साम्प्रदायिकता के कारण (causes) प्रमुख रूप से मनोवैज्ञानिक हैं। सम्प्रदायों के सदस्यों के मन में यह भावना जमी हुई है कि वे एक-दूसरे से भिन्न हैं और एक-दूसरे से घृणा करते हैं। पूर्व धारणाएँ (prejudices) और रूढ़ियुक्तियाँ (stereotypes) इस अभिवृत्ति (attitude) के लिए उत्तरदायी हैं। सामान्य रूप से, इसके ऐतिहासिक, राजनैतिक एवं सामाजिक कारण भी हैं। जो कुछ देश में 1931 के बाद हुआ, वह लोगों को भूलता नहीं है और एक सामाजिक दूरी बनी हुई है। राजनैतिक स्वार्थों के लिए भी राजनैतिक दल साम्प्रदायिकता की भावना को पनपाते रहते हैं। सामाजिक क्षेत्र में, हिन्दू और मुस्लिम का सामाजिक जीवन एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं।

1 प्रायः जनता में जो चित्र जनसंघ का है, वह एक साम्प्रदायिक राजनैतिक दल के रूप में ही है। पर जनसंघ अपने को साम्प्रदायिक नहीं मानता और कुछ मुसलमान इसके सदस्य भी हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साम्प्रदायिकता तथा साम्प्रदायिक तनावों को दूर करने के लिए निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं :

(1) **राष्ट्रीय इतिहास का निर्माण एवं प्रचार**—साम्प्रदायिकता और साम्प्रदायिक तनावों को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रीय इतिहास का निर्माण किया जाय और 1857 एवं स्वतन्त्रता आन्दोलन के उन पक्षों का विस्तृत विवेचन किया जाय जिनमें हिन्दू और मुसलमानों ने कन्धे से कन्धा मिलाकर कुर्बानियाँ की थीं।

(2) **राष्ट्रीय एकात्मकता समिति का गठन**--बिहार, काश्मीर तथा अहमदाबाद (गुजरात) के साम्प्रदायिक दंगों ने अपनी ओर ध्यान आकर्षित करवाया था। चूँकि यह एक गूढ़ विषय है, अतः इसका हल खोजने की कोशिश की जा रही है। इसी दृष्टिकोण से एक केन्द्रीय समिति बनायी गयी जिसमें प्रत्येक दल के सदस्य थे। इस समिति का मूल उद्देश्य साम्प्रदायिकता को निर्मूल साबित करना था। साथ ही यह फैसला लिया गया कि शिक्षा प्रणाली को अपनाने में यह अधिक नहीं पनपेगी क्योंकि सुशिक्षित लोग वृहत मस्तिष्क से काम लेकर संकीर्ण दृष्टिकोण नहीं अपनायेंगे।

(3) **समस्या का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण**—"बुद्धि जीवी और साम्प्रदायकता का विनाश" नामक शीर्षक "हिन्दुस्तान टाइम्स" ने दिया था। उसमें यह सुझाव दिया था कि यदि बहुसंख्यक (हिन्दू) अल्पसंख्यकों को सहयोग दें तो इस समस्या का निराकरण हो सकता है। साथ ही यदि वैज्ञानिक अनुसंधान किया जाय तो हल निकल सकता है। इस सम्बन्ध में डॉ जोशी ने कहा है कि साम्प्रदायिकता का विनाश बुद्धि-जीवी आन्दोलन से होगा।

(4) **साहित्य निर्वजन**—हमें इस प्रकार के साहित्य का जो कि साम्प्रदायिकता को बढ़ावा देता हो, उस पर पूर्णरूपेण प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए। साथ ही ऐसे साहित्य का सृजन होना चाहिए जो कि राष्ट्रीय एकता को जागरूक रखने में सहायक हो।

(5) **साम्प्रदायिक राजनीतिक दलों पर प्रतिबन्ध**—प्रत्येक इस प्रकार की पार्टी जो कि अपनी स्वार्थ लिप्सा के कारण ही जनता में साम्प्रदायकता फैलाती है उन पर प्रतिबन्ध लगा देने चाहिए या पूर्णरूपेण उन्मूलन होना चाहिए। ऐसे नारों को जो कि खास तौर पर साम्प्रदायिकता पर चोट करते हों पूर्णतया बन्द कर देने चाहिए।

(6) **सह-साम्प्रदायिक संगठन की स्थापना**—भारत में साम्प्रदायिकता समाप्त करने हेतु सरकार ने बहुमूल्य योगदान यह सुझाव देकर किया है कि प्रत्येक पार्टी या आम जनता अस्थायी रूप से ऐसी समितियों का गठन करें जो कि समान रूप से विभिन्न जातियों तथा समुदाय के त्योहारों तथा दूसरे कार्यक्रमों में भाग लेकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सद्भावना उत्पन्न कर सकें। यह राष्ट्रीय उपसमितियों ने 22 मई 1969 की बैठक में निर्णय लेकर प्रत्येक राज्य को प्रेषित किया।

(7) **प्रशासनिक नियन्त्रण**—भारत में अक्सर साम्प्रदायिक झगड़े पनपते रहते हैं। सन् 1969 में ही 310 झगड़े हुए जिनमें से कुछ और ही दूसरे मामलातों को लेकर हुए। दूसरे मामलातों से मतलब धार्मिक न होकर त्यौहार, विवाह इत्यादि से शुरू हुए। सरकार भारतीय दण्ड विधान धारा 153 और 505 में अधिक विस्तार देना चाहती है जिससे अपराधी चुनाव में प्रत्याशी न बन सकें तथा साम्प्रदायिक झगड़ों से सम्बन्धित साहित्य पर कठोर प्रतिबन्ध लगाया जा सके।

(8) **एकात्मक सम्बन्धी गीत**—भारतीय सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय ने इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय एकता सम्बन्धी गीतों को आकाशवाणी से प्रसारित करने की योजना बनायी है।

(9) **सम्प्रदाय विरोधी विचार**—केन्द्रीय मन्त्री ने अप्रैल 1969 में दिल्ली नागरिक शान्ति परिषद और अखिल भारतीय साम्प्रदायिकता विरोधी समिति के भाषण में कहा था कि वह समय आ गया है जब हम जातियुक्त सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था के विरुद्ध क्रान्ति कर सकें। जाति व्यवस्था पर चोट के अलावा साम्प्रदायिकता दूर कराने का दूसरा उपाय नहीं।

(10) **स्त्रियों में जागृति**—स्त्रियों को संगठन बनाकर दूसरी बस्तियों में जाकर सद्भावना उत्पन्न करने में अपना योगदान देना चाहिए। वे देश की महत्त्वपूर्ण इकाई हैं। यह भारतीय प्रधान मन्त्री के उद्गार हैं।

(11) **चलचित्र समितियाँ**—केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मन्त्री श्री सत्यनारायण सिन्हा ने आश्वासन दिया कि राष्ट्रीय एकात्मक चलचित्र आम जनता में राष्ट्रीय भावना जगाने में समर्थ रहेंगे। उन्होंने इसी सम्बन्ध में सामुदायिक टेलीविजन योजना (Community Television Scheme) शुरु करने का भी प्रस्ताव पास किया।

(12) **धार्मिक सहिष्णुता**—राष्ट्रीय स्तर पर यदि सभी त्यौहार या मुख्य त्यौहारों का आयोजन किया जाय, जिनका संचालन राष्ट्रीय ट्रस्टों के हाथमें हो अत्यधिक सफल रहेंगे। ऐसा विचार किया जाता है।

(13) **अल्प संख्यकों में सुधार**—'हिन्दुस्तान टाइम्स' ने लिखा है कि यदि अल्प संख्यकों की दशा राजनैतिक और प्रशासनिक स्तर पर सँभल जाय तो साम्प्रदायिकता पर इसका बड़ा प्रभाव होगा। विशाल दृष्टिकोण ही सफलता प्राप्त कर सकेगा। इसके लिए शिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होगी। अल्पसंख्यकों को असुरक्षा नहीं अनुभव करनी चाहिए।

(14) **स्वयं-सेवी संस्थाओं का योगदान**—अखिल भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम उठाया है। क्योंकि इससे शिक्षा और शिक्षा से सोचने-विचारने में वृहत स्तर का निर्माण होता है। इस प्रकार यह स्वयं सेवी संस्थान साम्प्रदायिकता हटाने में अत्यन्त सहायक हो सकता है।

(15) **नैतिकता का प्रचार**—शिक्षा प्रणाली देश की कर्णधार है। सांस्कृतिकरण की प्रक्रिया के माध्यम से व्यापक नैतिक शिक्षा के द्वारा देश में एकता स्थापित हो सकती है। ऐसा सर्वोदय नेता जयप्रकाश नारायण का मत है। जब देश का नैतिक स्तर ऊँचा हो जायेगा तब अपने आप ही साम्प्रदायिकता समाप्त हो जायेगी।

प्रश्न

1. समूह तनाव किसे कहते हैं। युवकों के तनाव के क्या कारण हैं और उसे किस प्रकार समाप्त किया जा सकता है?

(What is group tension? What are the causes of youth tensions and how can it be eradicated?)

2. साम्प्रदायिक तनाव क्या होते हैं? हिन्दू और मुस्लिम सम्प्रदायों के साम्प्रदायिक तनाव को किस प्रकार समाप्त किया जा सकता है?

(What are communal tensions? How can the communal tension between Hindus and Muslims be ended?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

48

विचारवादी संघर्ष
(Ideological Conflicts)

विचारवादी संघर्ष वे संघर्ष होते हैं जो विचारों के आधार पर समूहों में पाये जाते हैं। आधुनिक संसार 'वादों' (isms) का संसार है। राज्य और आर्थिक व्यवस्थाएँ वादों के आधार पर संचालित होती हैं। अनेक वाद हैं—अराजकतावाद (anarchism), समाजवाद (socialism), श्रमिक संघवाद (guild socialism), श्रेणीमूलक समाजवाद (guild socialism), मार्क्स समाजवाद (marxian socialism), साम्यवाद (cmmunism), पूँजीवादी (capitalism) आदि। पूंजीवाद और साम्यवाद आज संसार का सबसे बड़ा संघर्ष का आधार हैं। पहले हम संक्षेप में कुछ वादों को समझने का प्रयत्न करेंगे

अराजकतावाद (Anarchism)—"अराजकतावाद वह सिद्धान्त है जिसके अनुसार राजनैतिक सत्ता प्रत्येक रूप में अनावश्यक और अवांछनीय है।" इस सिद्धान्त के अनुसार राज्य एक विकार है और यह सामाजिक तथा नैतिक बुराइयों का स्रोत है। उनके अनुसार राज्य को समाप्त कर देना चाहिए। इनके अनुसार समाज पर आन्तरिक अथवा बाह्य नियन्त्रण नहीं रखना चाहिए।

अराजकतावाद का दर्शन यह है कि राज्य विहीन समाज में ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से विकास किया जा सकता है। इनके दर्शन के अनुसार पूंजीवाद, राज्य और धर्म मानव पर बाह्य अंकुश हैं इसलिए इन्हें समाप्त कर मानव को मुक्त करना चाहिए। ये राज्य को अनावश्यक बुराई (unnecessary evil) मानते हैं। वैयक्तिक सम्पत्ति (property) को भी यह हटा देना चाहते हैं। ये हर दृष्टि से मनुष्य को स्वतन्त्र चाहते हैं।

समाजवाद (Socialism)—हम्फ ने समाजवाद की परिभाषा करते हुए लिखा है, "समाजवाद एक सामाजिक व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत जीवन के साधनों पर सम्पूर्ण समाज का स्वामित्व होता है और पूरा समाज सामान्य कल्याण का परिवर्धन करने के उद्देश्य से उनका विकास और प्रयोग करता है।"

समाजवाद के मौलिक सिद्धान्त हैं—(i) व्यक्ति से अधिक समाज के महत्त्व को स्थापित करना, (ii) समानता लाना, (iii) पूँजीवाद को समूल नष्ट करना,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(iv) भूमि के स्वामियों को समाप्त करना, (v) वैयक्तिक सम्पदा का उन्मूलन करना. (vi) स्पर्धा (competition) का अन्त करना।

समाजवादी समाजों की समाज व्यवस्था के निम्न प्रमुख लक्षण होते है :

(अ) समाज की प्रकृति लोकतान्त्रिक होती है। वैयक्तिक स्वतन्त्रता को उच्च स्थान दिया जाता है। वैयक्तिक स्वतन्त्रता पर तब तक काइ बाधा नहीं पहुँचायी जाती है जब तक वह दूसरे व्यक्तियों की वैयक्तिक स्वतन्त्रता में बाधा नहीं पहुँचाती अथवा समाज के हितों को क्षति नहीं पहुँचाती है।

(ब) राज्य की प्रकृति प्रजातान्त्रिक होती है। राज्य प्रजा के प्रतिनिधियों द्वारा संचालित होता है। सरकार के कार्यों की जनता द्वारा आलोचना की जाती है। जनमत का प्रतिष्ठित स्थान होता है। अधिकतर कार्य जनमत पर आधारित होते हैं।

(स) सामाजिक न्याय (social justice) और सामाजिक समानता (social equality) को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। न्यायिक समानता पर भी बल दिया जाता है। कानून के सामने सब समान होते हैं।

(द) आर्थिक व्यवस्था समाजवादी होती है। कुछ क्षेत्रों मे राष्ट्रीयकरण होता है और कुछ क्षेत्र व्यक्तिगत होते हैं। उद्योगों एवं वाणिज्य को तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है—प्रथम, वे उद्योग जो सार्वजनिक महत्त्व के होते हैं और राष्ट्रीय आय को अत्यधिक प्रभावित करते हैं और मौलिक होते हैं सार्वजनिक क्षेत्र में आते हैं। इनका संचालन राज्य के द्वारा होता है। द्वितीय, वे उद्योग जो बड़े होते हैं परन्तु कुछ कम महत्त्व के होते हैं, वे राज्य और व्यक्ति मिलकर चलाते हैं अथवा व्यक्तिगत हाथों में ही रहता है परन्तु राज्य सहायता करता रहता है। तृतीय, ऐसे उद्योग जिनका संचालन व्यक्तिगत स्वामित्व में ही अधिक लाभप्रद होता है। इसके अन्तर्गत लघु उद्योग भी आते हैं।

(य) व्यक्तियों के बीच आय के अन्तर को दूर करने के लिए प्रगतिशील कर प्रणाली (progressive taxation system) का उपयोग किया जाता है। इस प्रणाली का अभिप्राय यह है कि जैसे-जैसे आय बढ़ती जाय, वैसे-वैसे ही कर की दर; भी बढ़ती जाय। धनी लोगों से आयकर (income tax) के अतिरिक्त अन्य कर जैसे—सुपर टैक्स, अधिक-लाभ कर (excess profit tax), मृत्यु कर (death tax), उपहार कर (gift tax), धन कर (wealth tax) इत्यादि भी लिये जाते हैं।

साम्यवाद (Communism)—साम्यवादी व्यवस्था के निम्न तत्त्व प्रमुख हैं:

(अ) राज्य को जनता का रूप माना जाता है।

(ब) राज्य का देश की समस्त भूमि, उत्पादन सामग्री, उद्योग, कल-कारखाने,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यापार तथा अन्य सम्पत्ति पर अधिकार होगा। समस्त सम्पत्ति राष्ट्र की है, व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं होती।

(स) चूँकि व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं होती है और नही किसी को उत्तराधिकार में कोई व्यक्तिगत सम्पत्ति प्राप्त होती है, अतः हर व्यक्ति को आय के लिए श्रम करना पड़ता है। बिना श्रम किये कोई भी व्यक्ति आय नहीं कर सकता।

(द) हर व्यक्ति को कोई न कोई कार्य करना पड़ता है। कार्य योग्यता के अनुसार दिया जाता है। कार्य देना राज्य का उत्तरदायित्व है। बेकारी का प्रश्न ही नहीं उठता।

(य) समस्त उत्पादन राष्ट्र के लिए होता है, किसी एक व्यक्ति या समूह के लिए नहीं। उत्पादन का उद्देश्य उपभोग (consumption) है, लाभ (profit) कमाना नहीं।

(र) धर्म का कोई महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं है।

(ल) सरकार सर्वहारा वर्ग अथवा श्रमिकों की तानाशाही है। श्रमिकों के प्रतिनिधि सरकार का निर्माण करते हैं।

(व) देश में एक ही दल होता है—साम्यवादी दल।

(श) वर्ग नहीं पाये जाते हैं। सब श्रम करते हैं, इसलिए सब श्रमिक हैं।

गांधीवाद या सर्वोदय (Gandhism or Sarvodaya)—साधारण रूप में सबका उदय, सबका विकास, सबकी प्रगति ही 'सर्वोदय' है। जीवमात्र के लिए समस्त प्राणियों के प्रति आदर भाव एवं सहानुभूति सर्वोदय का मार्ग है। सर्वोदय दर्शन पाश्चात्य विद्वान रस्किन (Ruskin) से अत्यधिक प्रभावित है। रस्किन ने अपनी पुस्तक 'Unto this Last' में तीन बातों पर अत्यधिक बल दिया है—(1) सम्पूर्ण समाज के उत्कर्ष में ही मनुष्य की प्रगति निहित है, (2) सबको अपने जीवन-यापन के लिए अपने अनुकूल व्यवसाय अपनाने का अधिकार है, अतः वकील हो या नाई, सबके कार्य का समान मूल्य है और (3) किसान, मजदूर और कारीगर का जीवन ही सच्चा और सर्वोत्कृष्ट जीवन है।

सर्वोदय 'साम्य योग' पर आधारित है। सारा समाज एक रूप हो, मनुष्य मात्र में समानता हो, यही साम्य योग है। 'साम्यवाद' में 'वाद' होता है और 'वाद' संघर्ष को जन्म देता है। 'योग' में प्रतिकार नहीं होता, अतः संघर्ष की भी सम्भावना नही होती। साम्य योग को परिभाषित करते हुए आचार्य विनोबा भावे ने लिखा है; "हर व्यक्ति अपनी शक्ति समाज को अर्पण करे और समाज की ओर से जो मिले उसे प्रसाद के रूप में ग्रहण करे।"[1]

सर्वोदय के सिद्धान्त हैं—(i) अक्षम को सक्षम बनाना (fitting the unfit to survive), (ii) प्रेम और अहिंसा (love and non-violence) और

---

1 आचार्य विनोबा भावे, सर्वोदय के आधार, पृष्ठ 11।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(iii) मानवीय मूल्यों की स्थापना (establishment of human values)। दादा धर्माधिकारी ने लिखा है, "सर्वोदय समाज निरपेक्ष, शाश्वत और व्यापक मूल्यों की स्थापना करना चाहता है और बाधक मूल्यों का निराकरण करना चाहता है।"[1]

सर्वोदय सामाजिक नियोजन के प्रमुख लक्ष्य निम्न हैं :

(अ) **सत्ता का विकेन्द्रीकरण** (Decentralisation of power)—सर्वोदय के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति समान रूप से स्वतन्त्र होगा। विविध संस्थाओं द्वारा सत्ता का प्रयोग समाप्त अथवा कम कर दिया जायेगा। सत्ता का विकेन्द्रीकरण करके बल प्रयोग न करने वाली छोटी-छोटी संस्थाओं को सामाजिक व्यवस्था करने का अधिकार दे दिया जावेगा। घोषित किया गया है, "सर्वोदय समाज एक ऐसी व्यवस्था होगी जिसमें समाज की एकता अथवा प्रगति के लिए सत्ता को धारण और उपयोग करने की जरूरत नहीं पड़ेगी।"[2]

(ब) **आत्म-संयम** (Self-restraint) मानव में आत्म-संयम का विकास किया जायेगा। इस आत्म-संयम के कारण शक्ति के उपयोग की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

(स) **पूर्ण-अवधि उपयुक्त आजीविका** (Full-time and necessary employment)—सर्वोदय व्यवस्था में हर व्यक्ति को पेट भरने योग्य रुचिकर रोजगार दिया जायेगा।

(द) **अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति** (Satisfaction of necessaries)—मानव के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए उसकी तमाम अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति की जायेगी।

(य) **प्रादेशिक स्वावलम्बन** (Regional self-sufficiency)—जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सर्वोदय व्यवस्था में कोशिश होगी कि प्रत्येक क्षेत्र स्वावलम्बी हो।

(र) **उत्पादन में प्राणी-मात्र का आदर** (Production without disrespect to any Living being)—उत्पादन में किसी भी प्राणी को कष्ट नहीं दिया जायेगा।

(ल) **सभ्य और सुसंस्कृत समाज का नि** (Formation of a civilized Society)—एक सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज का निर्माण किया जायेगा। इसमें सबल और निर्बल सबका आदर होगा। हर एक-दूसरे के अधिकारों की रक्षा करेगा

(व) **व्यक्ति का वकास** (Development of man)—मानव के व्यक्तित्व के विकास पर सबसे अधिक बल दिया जायेगा। मानव को विकार और

---

[1] दादा धर्माधिकारी, **सर्वोदय दर्शन**, पृष्ठ 39।

[2] **सर्वोदय संयोजन**, पृष्ठ 48।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वासनाओं से दूर रखा जायेगा। मानव को आध्यात्मिक शिक्षा दी जायेगी। विनोबा भावे ने लिखा है, "सर्वोदय विचार में यह तत्त्व मुख्य है कि अपने मन को वश में रखना चाहिए इन्द्रियों को काबू में रखना चाहिए।" सत्य और अहिंसा मानव के व्यापक मूल्य होंगे। अस्तेय (non-stealing) की शिक्षा दी जायेगी। आकांक्षा को रोककर स्थिति के अनुरूप अपने ही साधनों से प्राप्त वस्तु के अतिरिक्त दूसरी वस्तु की इच्छा न करना अस्तेय है। अपरिग्रह पाठ मानव को पढ़ाया जायेगा। अपरिग्रह का अर्थ है अपनी आवश्यकताओं से अधिक संचय न करना। ब्रह्मचर्य से मानव को रहना सिखाया जायेगा। शारीरिक श्रम का महत्त्व प्रत्येक व्यक्ति के लिए होगा। अस्वाद का विकास मानव को सिखाया जायेगा। शरीर श्रम करना किन्तु बदले में कुछ विशेष की कामना न करना अस्वाद है। सबके सहयोग से जो कुछ प्राप्त हुआ है, उसे पहले सबको उनकी इच्छानुसार वितरित कर देना, अपने लिए यदि न भी बचे तो सन्तोष करना, मानव की वृत्ति होनी चाहिए। यह अस्वाद का व्रत है। स्वदेशी का व्रत व्यक्ति को करना चाहिए। व्यक्ति सब धर्मों को समान समझेगा।

सर्वोदय की कार्य विधि—इस पद्धति की कार्य विधि की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं

(अ) **अहिंसक क्रान्ति** (Non-violent revolution)—अहिंसा इसका मूल मन्त्र है। किसी प्रकार का भी बल प्रयोग नहीं किया जायेगा।

(ब) **वैचारिक उदारता** (Bioas-mindedness)—विचार सत्यनिष्ठ होने चाहिए। सत्य व्यापक है। वैचारिक उदारता रखनी चाहिए।

(स) **सत्याग्रह** (Satyagraha)—सत्यनिष्ठा के साथ बड़े, छोटे, अमीर गरीब सबके पास जाकर सहजीवन अपनाने का आग्रह करना सत्याग्रह है। लोगों के हृदय परिवर्तन करके कार्यक्रम को स्वीकार करवाना चाहिए।

(2) **भूदान, ग्रामदान, सम्पत्तिदान और जीवनदान का आवाहन (Call for Bhoodan, Gramdan, Sampathidan and Jeewandan)**—यह पद्धति लोगों से दान लेकर व्यवस्था कराना चाहती है। दान का अभिप्राय है स्वेच्छा से समाज के हित के लिए देना।

भूदान इसका प्रथम पत्र है। हर व्यक्ति अपनी भूमि का छटा भाग भूदान में दे। यह भूमि भूमिहीनों में वितरित कर दी जाती है। भूदान आन्दोलन एक प्रमुख तत्त्व है। बाबू जयप्रकाश नारायण ने लिखा है, "भूदान आन्दोलन केवल भूमि संग्रह और भूमि वितरण मात्र नहीं हैं। यह तो विशाल सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक क्रान्ति की दिशा में प्रथम पत्र है।"[1]

---

[1] "Bhoodan is not a programme of merely collecting and distributing lands. It is rather the first step towards a total revolution-social, political and economic." J. P. Narain, *A Picture of Sarvodaya Social Order* p. 1

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्रामदान भूदान का दूसरा पत्र है। ग्रामदान सम्पूर्ण ग्राम को एक इकाई मानकर सारा प्रबन्ध ग्राम सभा के हाथ में देने की व्यवस्था चाहता है। यह सामूहिक अस्तित्व का आवाहन करता है

सम्पत्तिदान भूमि के अतिरिक्त धन तथा अन्य वस्तुओं का दान है। प्रत्येक सम्पत्ति सम्पन्न व्यक्ति को निर्धनों की सहायता के लिए कुछ अंश देना है।

जीवनदान का अर्थ है सर्वोदय समाज की स्थापना में सारा समय देकर जीवन पर कार्य करना।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सर्वोदय मानव के सद्मूल्यों पर अधिक बल देती है और मानव के हृदय परिवर्तन से ही सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने के पक्ष में है।

पूंजीवाद (Capitalism)—पूंजीवाद पूंजी में विश्वास करता है और व्यक्ति को समाज से ऊपर मानता है। यह अबन्धनीति (laissez-faire) में विश्वास करते हैं। वैयक्तिक स्वतन्त्रता को अत्यधिक महत्त्व देते हैं। राज्य किसी भी क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करता है।

ऊपर अनक 'वादों' के मुख्य सिद्धान्तों का संक्षेप में वर्णन किया गया है। इन विचारों में विभिन्नता होने के कारण विचारवादी संघर्ष (ideological conflicts) उत्पन्न होते हैं।

प्रश्न

1. विचारवादी संघर्ष से आप क्या समझते हैं ? कुछ मुख्य वादों के सिद्धान्त का वर्णन कीजिए।

(What do you understand by ideoloical conflicts ? Describe some important ideologies.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

49

सामाजिक परिवर्तन और सामाजिक तनाव
(Social Change and Social Tensions)

परिवर्तन सदैव होता रहता है। परिवर्तन की क्रिया एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं करती। मनुष्य बच्चे के रूप में जन्म लेता है और शिशु, किशोर, युवा, वृद्धावस्था को प्राप्त करते हुए मृत्यु का आलिंगन करता है। प्रत्येक क्षण उसमें परिवर्तन होता रहता है। इसी प्रकार हर क्षेत्र में परिवर्तन होता रहता है। समाज भी इस परिवर्तन की प्रक्रिया से बच नहीं पाता। उसमें भी अनेक परिवर्तन होते रहते हैं। समाज में होने वाले परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। परिवर्तन की ही भाँति सामाजिक परिवर्तन भी सतत होता रहता है।

सामाजिक परिवर्तन का अर्थ
(Meaning of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन के अर्थ को समझने के पूर्व परिवर्तन शब्द को समझना अत्यन्त आवश्यक है। मान लीजिए आप की कलाई पर घड़ी बँधी हुई है। आपने उसे उतार दिया तो घड़ी उतारते ही एक परिवर्तन हो गया। आप चश्मा लगाते हैं, एक दिन न लगाइए तो लोगों को आपके मुख में परिवर्तन प्रतीत होगा। एक मेज लाल रंग से रंगी हुई है उसे नीले रंग से रंग दिया जाता है तो उस मेज में परिवर्तन आ गया। इसी प्रकार परिवर्तन के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं। इस आधार पर परिवर्तन की एक सामान्य परिभाषा की जा सकती है। जब किसी वस्तु में किसी भी प्रकार का अन्तर उसकी भूत अवस्था से वर्तमान अवस्था में होता है तो इस अन्तर को परिवर्तन कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जब कोई घटती (depreciation) या बढ़ती (appreciation, किसी वस्तु की अवस्था में होती है, तो इसे परिवर्तन कहते हैं।

फिक्टर ने परिवर्तन की परिभाषा करते हुए लिखा है, "परिवर्तन को संक्षिप्त रूप में पहले की अवस्था या अस्तित्व के प्रकार में अन्तर को कहते हैं।"[1]

"Change is defined briefly as a variation from a previous or mode of existence." Fichter, *Sociology* p. 340.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इससे स्पष्ट है परिवर्तन किसी भी प्रकार के अन्तर (variation) को कहते हैं। सामाजिक परिवर्तन समाज से सम्बन्धित है। जब सामाजिक सम्बन्धों (समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है) में अन्तर होता है तो हम उसे सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि सामाजिक संगठन, सामाजिक ढांचा, सामाजिक सम्बन्ध या समाज में होने वाले अन्तरों को सामाजिक परिवर्तन कहेंगे। सामाजिक परिवर्तन का अर्थ निम्न परिभाषाओं से और भी अधिक स्पष्ट हो जायेगा।

सामाजिक परिवर्तन की परिभाषाएँ
(Definition of Social Change)

"सामाजिक परिवर्तन वह शब्द है जो सामाजिक प्रक्रियाओं, सामाजिक प्रतिमानों, सामाजिक अन्तःक्रिया या सामाजिक संगठन के किसी अंग में अन्तर या रूपान्तर को वर्णित करने के लिए प्रयोग किया जाता है।"[1] —जोंस

"सामाजिक परिवर्तन से केवल वे ही परिवर्तन समझे जाते हैं जो सामाजिक संगठन अर्थात समाज के ढाँचे एवं कार्यों में घटित होते हैं।"[2] —डेविस

"सामाजिक परिवर्तन से मैं सामाजिक संरचना में परिवर्तन समझता हूँ। उदाहरण के लिए समाज के आकार में, उसकी सजावट अथवा भागों के सन्तुलन में अथवा उसके संगठन के स्वरूपों में।"[3] —गिन्सबर्ग

"अपने मौलिक अर्थ में, सामाजिक परिवर्तन का तात्पर्य होता है सामाजिक संरचना में परिवर्तन।"[4] —जॉन्सन

"सामाजिक परिवर्तन के द्वारा हम उसे संकेत करते हैं जो समय के साथ-साथ कार्यों, संस्थाओं अथवा उन व्यवस्थाओं में होता है जो सामाजिक संरचना एवं उसकी उत्पत्ति, विकास एवं पतन से सम्बन्धित होता है।"[5] —गर्थ तथा मिल्स

---

1 "Social change is a term used to describe variations in, or modifications of, any aspect of social processes, social patterns, social interaction, or social organisation." Jones, *Basic Sociological Principles*, p. 96.

2 "By 'social change' is meant only such alterations as occur in social organization—that is, the structure and functions of society." Davis, *Human Society*, p 622.

3 "By social change, I understand a change in social structure, *e.g.*, the size of a society, the composition or balance of its parts or the type of its organization." M. Ginsberg, *Social Change British Journal of Sociology*, 1. 205-29 (Sept. 1958), p. 205

4 In its basic sense, then, social change means change in social structure." H. M. Johnson, *Sociology*, p. 626.

5 "By social change we refer to whatever may happen in the course of time to the robs, the institution, or the orders comprising a social structure : their emergence, growth and decline" H. Gerth and C. W. Mills, *Character and Social Structure*, p. 398.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सामाजिक परिवर्तन उन अन्तरों (variations) या रूपान्तरों (modifications) को कहते हैं जो समाज या सामाजिक संरचना में घटित होते हैं। समाज की परिभाषा विस्तृत रूप से हम कर ही चुके हैं, यहाँ पर इतना ही संकेत करना पर्याप्त होगा कि 'समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल' है। समाज अमूर्त होता है और अन्तःक्रिया (interactions) में निहित होता है। अन्तःक्रिया के स्वरूपों को हम सामाजिक प्रक्रियाएँ (social processes) कहते हैं। जोंस (Jones) ने सामाजिक परिवर्तन की परिभाषा में स्पष्ट रूप से लिखा है कि सामाजिक परिवर्तन उन अन्तरों या रूपान्तरों को कहते हैं जो सामाजिक प्रक्रियाओं, सामाजिक प्रतिमानों, सामाजिक अन्तःक्रियाओं, सामाजिक संगठन अथवा उसके भागों में होते हैं। जोंस ने अति स्पष्ट एवं विस्तृत अर्थों में सामाजिक परिवर्तन की परिभाषा प्रस्तुत की है। किंग्सले डेविस ने भी सामाजिक परिवर्तनों को सामाजिक संगठन या समाज के ढाँचे एवं कार्यों में अन्तर बताया है। गिन्सबर्ग तथा जॉनसन ने भी सामाजिक परिवर्तन को सामाजिक संरचना (social structure) में परिवर्तन माना है। गर्थ तथा मिल्स ने भी इसे सामाजिक संरचना में परिवर्तन कहा है। उन्होंने सामाजिक संरचना को भी स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। इसीलिए सामाजिक संरचना (social structure) के साथ-साथ कार्यों (roles) तथा संस्थाओं (institutions) का भी उल्लेख किया है। सामाजिक संरचना संस्थात्मक ढाँचे पर आधारित होती है। कार्य ही मानव के व्यावहारिक प्रतिमानों (patterns of behaviour) अथवा सामाजिक प्रतिमानों (social patterns) की आधारभूत शिलाएँ हैं।

सामाजिक संरचना क्या है? सामाजिक संरचना मानव व्यवहार के प्रतिमान हैं जो सापेक्ष दृष्टि से स्थायी हो जाते हैं और जो एक-दूसरे से मिलकर एक संस्था का रूप धारण कर लेते हैं। मानव व्यवहार के प्रतिमानों को कार्य भी कहते हैं। इस प्रकार सामाजिक संरचना कार्यों के प्रतिमानों एवं संस्थाओं पर आधारित होता है। मानव सदैव कुछ न कुछ कार्य अपनी स्थिति के अनुसार करता है। हर मनुष्य की समाज में एक स्थिति होती है। इन परिभाषित स्थितियों और कार्यों में भी परिवर्तन होता रहता है। ये परिवर्तन भी सामाजिक परिवर्तन कहलाते हैं। उदाहरण के लिए पहले भारतीय समाज में गुरु-शिष्य की स्थितियाँ थीं और कुछ कार्य करते थे। आज इन स्थितियों एवं कार्यों में परिवर्तन हो गया है। यह सामाजिक परिवर्तन है। कुछ वर्ष पूर्व भारत की स्त्रियों की एक विभिन्न प्रकार की स्थिति थी। वे घर की चहार-दीवारी में बन्द रखी जाती थीं, घूंघट करती थीं, पुरुषों से बात नहीं करती थीं, अपने पति से घरवालों के सामने बात नहीं करती थीं इत्यादि। आज उनकी स्थिति इस प्रकार की नहीं है। अब ये स्वतन्त्र रूप से घर के बाहर निकल सकती है, घूंघट नहीं निकालती हैं, पुरुषों से बातचीत कर सकती हैं,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पने पति से सबके सामने बातचीत कर सकती हैं इत्यादि। यह स्त्रियों की स्थिति एवं कार्यों में परिवर्तन है। इसे भी सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। इसी प्रकार जनरीतियों, प्रथाओं, रूढ़ियों एवं संस्थाओं में परिवर्तन को भी सामाजिक परिवर्तन कहते हैं। संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि सामाजिक परिवर्तन सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक अन्तःक्रियाओं, सामाजिक प्रक्रियाओं, सामाजिक संगठन, सामाजिक संरचना में अन्तर या रूपान्तर को कहते हैं। सामाजिक परिवर्तन समाज या सामाजिक सम्बन्धों में अन्तर या रूपान्तर को कहते हैं।

सामाजिक परिवर्तन के कारण
(Causes of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन अनेक कारणों से उत्पन्न होता है। उन कारणों में से निम्न प्रमुख हैं :

(1) मनोवैज्ञानिक कारक (Psychological Factor)—सामाजिक परिवर्तन का एक प्रमुख कारण मनोवैज्ञानिक है। परिवर्तन मनुष्य की प्रकृति में ही निहित है। यह नवीनता का रसास्वादन करना चाहता है। यद्यपि मनुष्य रूढ़िवादी होता है तथापि उसमें नवीन खोज की लगन होती है। वर्तमान सामाजिक संगठन से भिन्न किसी नवीन व्यवस्था को प्राप्त करने की इच्छा मनुष्य में बनी रहती है। मनोवैज्ञानिकों ने इसे जिज्ञासा की मूल प्रवृत्ति (inquisitive instinct) का नाम दिया है। इस प्रवृत्ति के कारण मनुष्य सदैव नवीन खोज एवं अन्वेषण करता रहता है और इसके फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तन होता रहता है।

(2) भौतिक पर्यावरण (Physical Environment)—भौतिक पर्यावरण सदैव परिवर्तित होता रहता है। ऋतुएँ परिवर्तित होती रहती हैं, तूफान, बाढ़ और भूचाल आते रहते हैं। इसी प्रकार के अन्य परिवर्तन भी होते रहते हैं। भौतिक पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन सामाजिक संगठन एवं व्यवस्था में भी परिवर्तन उत्पन्न करते हैं। भौतिक पर्यावरण से अनुकूलन करना मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

(3) जनसंख्यात्मक कारक (Demographic Factor)—सामाजिक परिवर्तन जनसंख्या के घटने-बढ़ने एवं घनत्व पर भी आधारित है। ग्रामों और नगरों के जीवन में महान अन्तर पाया जाता है। इस अन्तर का प्रमुख कारण जनसंख्या का घनत्व है। और भी अनेक प्रकार से जनसंख्या की मात्रा सामाजिक परिवर्तन के लिए भूमि निर्मित करती है।

(4) प्राणीशास्त्रीय कारक (Biological Factor)—प्राणीशास्त्रीय कारक भी सामाजिक परिवर्तन को चालित करता है। प्राणीशास्त्रीय कारक का अर्थ है जनसंख्या के गुणात्मक पक्ष, जो आनुवंशिकता के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक नयी पीढ़ी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक नवीन वस्तु होती है, क्योंकि वह माता और पिता के परिवर्तनों के कारण सामाजिक वाहकाणुओं का नवीन जोड़ होता है। नयी पीढ़ी के अनुभव भी नवीन होते हैं। परिवर्तन भी होता है।

(5) **सांस्कृतिक कारक (Cultural Factor)**—सांस्कृतिक कारक भी सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न करता है। प्रत्येक नवीन मूल्य एवं धारणा सामाजिक संगठन एवं व्यवस्था को प्रभावित करता है। मूल्यों एवं धारणाओं पर ही कार्य आधारित होते हैं और उनके परिवर्तित होते ही कार्य की दिशा भी परिवर्तित हो जाती है। सांस्कृतिक परिवर्तन और सामाजिक परिवर्तन में घनिष्ट सम्बन्ध है और वे एक-दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं।

(6) **प्रौद्योगिकीय कारक (Technological Factor)**—प्रौद्योगिकीय कारक सांस्कृतिक कारक का एक अंग है, परन्तु इसके महत्त्व के कारण इसे एक पृथक कारक के रूप में मान लिया गया है। प्रौद्योगिकीय कारक सामाजिक परिवर्तन को अत्यधिक प्रभावित करता है। औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप भीषण सामाजिक परिवर्तन हुए हैं।

इन कारकों के अतिरिक्त और भी अनेक कारक हैं जो सामाजिक परिवर्तन को जन्म देते हैं। स्वयं एक सामाजिक परिवर्तन दूसरे सामाजिक परिवर्तन को जन्म देता है। इसके अतिरिक्त ये कारक एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं और एक-दूसरे पर आधारित हैं।

सामाजिक परिवर्तन के कारकों का पारस्परिक सम्बन्ध (Inter-relationship of the Factors of Social Change)—सामाजिक परिवर्तन के कारक एक-दूसरे से अत्यधिक सम्बन्धित हैं। यदि एक कारक में कोई परिवर्तन होता है तो वह केवल उसी कारक तक सीमित नहीं रहता, अपितु अन्य कारकों पर भी प्रभाव डालता है। मनुष्य के पर्यावरण में होने वाला प्रत्येक परिवर्तन सामाजिक सम्बन्धों में भी परिवर्तन उत्पन्न करता है। उदाहरण के लिए, भौतिक पर्यावरण के किसी परिवर्तन से अनुकूलन करने के लिए मनुष्य किसी नवीन यन्त्र की खोज करता है। इस यन्त्र की खोज का प्रभाव प्रौद्योगिक क्षेत्र में ही नहीं रहता, बल्कि मनुष्य के रहन-सहन एवं धारणाओं को भी प्रभावित करता है। कई बार इसका प्रभाव जन-संख्यात्मक और प्राणीशास्त्रीय क्षेत्रों में भी पड़ता है। सामाजिक परिवर्तन भी इसके फलस्वरूप होता है।

सामाजिक परिवर्तन की सार्वभौमिकता
(Universality of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया निरन्तर रूप से प्रत्येक समय हर स्थान पर होती रहती है। परिवर्तन अवश्यम्भावी (inevitable) है। डॉसन और गेटिस ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खा है, "क्रिया और परिवर्तन सदैव उपस्थित रहने वाले सार्वभौमिक तथ्य हैं।"[1] ले ने भी लिखा है, "कई कारणों से सामाजिक परिवर्तन अवश्यम्भावी, जिसे टाला हीं जा सकता, रहा है और है।"[2]

सामाजिक परिवर्तन की सार्वभौमिक प्रकृति को सिद्ध करने के लिए अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं, परन्तु समस्त संसार में होने वाला एक परिवर्तन ग्रामीण-जीवन से नागरिक-जीवन अत्यन्त सरल है, जिसे साधारण व्यक्ति भी समझ सकते हैं। औद्योगिक क्रान्ति के उपरान्त यह प्रक्रिया संसार के प्रत्येक भाग में शनैः-शनैः प्रारम्भ हुई और आजकल प्रत्येक स्थान पर यह प्रक्रिया कार्य कर रही है। यूरोप, अमरीका, आस्ट्रेलिया इत्यादि देशों में तो नागरीकरण तीव्रता से हो रहा है। एशिया और अफ्रीका में भी यह प्रक्रिया कार्य कर ही रही है। भारत जैसे ग्रामीण देश में भी यह परिवर्तन प्रारम्भ हो गया है और 18·00 प्रतिशत जनसंख्या सन् 1961 की गणना के अनुसार नगरों में रहती है।

मानवशास्त्रियों के द्वारा अन्य जातियों पर जो प्रकाश पड़ा है उससे भी यही ज्ञात होता है कि सामाजिक परिवर्तन सदैव होता रहता है।

किसी भी देश की सामाजिक व्यवस्था का विश्लेषण करने पर हमें ज्ञात होता है कि वह बिलकुल वही नहीं है जो 25, 50 या 100 वर्ष पूर्व थी। साधारण परिवर्तन तो प्रत्येक अवस्था में होते रहते हैं, परन्तु यातायात एवं आवागमन के साधनों की वृद्धि के फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तन की गति बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए, आधुनिक युग को लीजिए। इतने अधिक सामाजिक परिवर्तन अति अल्प समय में हो जाते हैं कि मनुष्य अपनी स्थिति और कार्यों को जीवन भर निश्चित नहीं कर पाता है। आधुनिक जीवन सामाजिक परिवर्तनों से पूर्ण है और मनुष्य इन्हें जीवन का एक भाग समझने लगा है। ग्रीन ने उचित लिखा है, "परिवर्तन का उत्साहपूर्ण स्वागत प्रायः जीवन का एक ढंग हो गया है।"[3] आधुनिक जीवन में अधिक रूढ़िवादिता से कार्य नहीं चल सकता। आधुनिक युग में मनुष्य के व्यक्तित्व का सबसे बड़ा गुण यही है कि वह परिवर्तित अवस्थाओं से सामंजस्य स्थापित कर ले। सामाजिक सहिष्णुता वर्तमान सभ्यता का मूल्यवान आभूषण है। कहने का तात्पर्य यह है कि आधुनिक युग की सफलता की कुंजी सामाजिक परिवर्तनों के साथ-साथ पग बढ़ाने में है। आधुनिक संसार और सामाजिक परिवर्तन का घनिष्ठ सम्बन्ध

---

1 "Activity and change are ever present universal facts." Dawson and Gettys, *An Introduction to Sociology*, p. 553.

2 "Social change has been and is inevitable-unevadable for many reasons." Lumley, *Principles of Sociology*, p. 355.

3 "The enthusiastic reception of change has become almost a way of life." Green, *Sociology*, p. 520.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। वेनबर्ग और शाबत ने ठीक ही लिखा है, "सामाजिक परिवर्तन आधुनिक संसार के हृदय में निवास करता है।"[1]

सामाजिक परिवर्तन के परिणाम

(Results of Social Change)

सामाजिक परिवर्तन का परिणाम यह होता है कि समाज का सन्तुलन बिगड़ जाता है और सामाजिक संगठन में अनेक कमियाँ आ जाती हैं। सामाजिक विघटन सामाजिक परिवर्तन का सीधा एवं प्रत्यक्ष परिणाम है। इसमें सन्देह नहीं है कि पुनर्गठन की प्रक्रियाएँ भी प्रारम्भ हो जाती हैं, पर काफी समय तक तो सामाजिक विघटन (social disorganisation) की ही स्थिति रहती है। जब सामाजिक परिवर्तन की गति तीव्र होती है, तब और भी अधिक सामाजिक विघटन होता है। सामाजिक परिवर्तन से उत्पन्न सामाजिक विघटन के कुछ उदाहरण दिये जा सकते हैं :

बेकारी—बेकारी वर्तमान समाज की सबसे भयकर समस्या है। जब नयी प्रौद्योगिकी प्रारम्भ होती है, तो पुराने काम करने वाले बेकार हो जाते हैं। भारत में वर्तमान उद्योगीकरण के कारण लाखों जुलाहे एवं हाथ से काम करने वाले बेकार हो गये। यह प्रक्रिया चलती ही रहती है। व्यापार में मन्दी के कारण भी बेकारी बढ़ती है। जब-जब समाज में परिवर्तन होते हैं, लोगों को पुराने व्यवसाय छोड़ने पड़ते हैं, वे बेकार हो जाते हैं, फिर नये कामों में लगते हैं।

दरिद्रता—दरिद्रता भी सामाजिक परिवर्तन का एक परिणाम है। नयी दशाओं से सामंजस्य करने में लोगों को कठिनाई होती है और उसके फलस्वरूप वे दरिद्र हो जाते हैं। बेकारी तो प्रत्यक्ष रूप से दरिद्रता को उत्पन्न करती है।

पारिवारिक विघटन—सामाजिक परिवर्तन का परिणाम पारिवारिक विघटन भी होता है। आजकल शिक्षा में परिवर्तन हुआ है, नागरीकरण एवं उद्योगीकरण की प्रक्रियाएं तीव्रता से बढ़ रही हैं, नये विचार उत्पन्न हो गये हैं। इनके फलस्वरूप परिवार विघटित होता जा रहा है। परिवार के अनेक काम अन्य समितियों ने ले लिये हैं। परिवार की शक्ति कम हो गयी है। परिवार का नियन्त्रण भी कम हो गया है। पहले परिवार निवास और कार्य दोनों का स्थान था, आज केवल निवास रह गया है। स्त्रियों की शिक्षा भी बढ़ गयी है और वे समानता का दावा करती हैं। पति तथा पत्नी में सम्बन्धों की अनेक समस्याएँ हैं। लिंग सम्बन्धी नैतिकता में भी अनेक प्रकार के परिवर्तन आ गये हैं। भौतिकवादी तथा व्यक्तिवादी दर्शन का प्रभाव बढ़ रहा है। प्रेम में स्वतन्त्रता तथा व्यक्तिगत आनन्द साथी विवाह, प्रयोगात्मक

---

1. "Social change lies at the heart of the modern world." Weinberg and Saba *Society and Man*, p. 172.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाह इत्यादि नये दर्शन परिवार को अनेक प्रकार से प्रभावित कर रहे हैं। इन माजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप पारिवारिक विघटन बढ़ता जा रहा है।

इसी प्रकार सामाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप अनेक प्रकार का सामाजिक घटन उत्पन्न होता है। सामाजिक विघटन सामाजिक परिवर्तन से घनिष्ठ रूप से म्बन्धित है।

सामाजिक परिवर्तन के अवरोध
(Resistances to Social Change).

सामाजिक परिवर्तन के अनेक अवरोध भी हैं, इनमें से प्रमुख निम्न हैं :

(i) अपरिचित और भय—जब कभी कोई नयी वस्तु आती है, तो उसका वाभाविक भय होता है कि पता नहीं क्या है? यह वस्तु अच्छी भी हो सकती है, ौर बुरी भी, इसलिए पुरानी वस्तु का ही प्रयोग करना उचित समझते हैं। ामाजिक परिवर्तन नवीन वस्तु या विचार को लाता है, अत: इसका विरोध होता है और लोग उसे स्वीकार करने में हिचकते हैं।

(ii) कमियों के प्रति असहनशीलता—जब कोई वस्तु नयी होती है तो उसमें कई कमियाँ भी होती हैं, शनै:-शनै ये कमियाँ एवं असुविधाएँ समाप्त ो जाती हैं। लोग प्रारम्भ की इन कमियों के प्रति सहनशील नहीं होते।

(iii) आदत—हम नयी वस्तुओं के आदी हो जाते हैं। कुछ वस्तुएँ उतनी अच्छी नहीं होती हैं, फिर भी आदत के कारण ही हम उनका प्रयोग करते हैं। यह ानव स्वभाव की मौलिक प्रकृति है। जब कभी सामाजिक परिवर्तन होता है, तो ुरानी आदतें बाधक सिद्ध होती हैं।

(iv) रूढ़िवादिता—हर समाज के लोग रूढ़िवादिता में विश्वास करते हैं। ो हमारे बाप-दादा के समय में विचार होते हैं, वही हम लोगों को अधिक अच्छे गते हैं। हम प्रयासों एवं नियमों का पालन करते हैं। जिस प्रकार हमारे पूर्वज कार्य रते थे, वही हमारी रूढ़ियाँ बन जाती हैं। रूढ़ियों को हम शक्तिशाली एवं सत्य ानते है। रूढ़ियाँ सामाजिक परिवर्तन का विरोध करती हैं और उनके मार्ग में बाधा त्पन्न करती हैं।

(v) भूत के प्रति आदर एवं श्रद्धा—हमारी अभिवृत्ति होती है कि हम भूत े प्रति आदर एवं श्रद्धा रखते हैं। भूत की जो सुखकारी स्मृतियाँ होती हैं वे हमें ाद रहती हैं और जो दुखकारी होती हैं उन्हें हम भूल जाते हैं। इस कारण भूत के ति एक आदर होता है। यह अभिवृत्ति नयी वस्तुओं का विरोध करती है।

(vi) निहित स्वार्थ—हर समाज में कुछ ऐसे लोग होते हैं जिनका कुछ व्यवस्थाओं में स्वार्थ निहित होता है। जमींदारी व्यवस्था में जमींदारों का स्वार्थ निहित था। जब जमींदारी को समाप्त करने का प्रयत्न किया गया, तो इन जमींदारों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने इसका विरोध किया। जब कभी भी कोई व्यवस्था बदली जाती है, तो जिन लोगों का निजी स्वार्थ निहित होता है वे उसमें परिवर्तन नहीं आते देना चहाते। इन निहित स्वार्थी (vested interests) की शक्ति भी बहुत होती है, क्योंकि समाज में उनकी प्रतिष्ठा होती है।

यह आवश्यक नहीं है कि निहित स्वार्थी केवल धन के लाभ से ही प्रेरित होते हैं, वे सत्ता एवं प्रतिष्ठा इत्यादि के लोभ से भी प्रेरित होते हैं। उदाहरण के लिए, शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रकार के निहित स्वार्थी हैं जो अनेक परिवर्तन केवल इसलिए नहीं होने देते, क्योंकि उससे उनकी सत्ता एवं प्रतिष्ठा में कमी आ जायेगी।

सामजिक परिवर्तन और सामाजिक तनाव
(Social Change and Social Tensions)

सामाजिक तनाव तथा विघटन का प्रमुख कारण सामाजिक परिवर्तन है। ऑगबर्न ने इस पर बड़ा बल दिया है। इलियट और मेरिल ने भी इसे सामजिक परिवर्तन का मुख्य कारण बताया है। सामाजिक परिवर्तन के कारण विभिन्न तत्त्वों में, विभिन्न अशों में परिवर्तन होता है। कुछ तत्त्वों में परिवर्तन अन्य तत्त्वों की तुलना में तीव्र गति से होता है। संस्कृति के अभौतिक तत्त्व (non-material elments) में परिवर्तन शीघ्र नहीं होता; क्योंकि वे शताब्दियों के प्रयत्नों से स्थापित होते हैं। इसके प्रति एक विचित्र भावना बन जाती है और उन्हें हम शीघ्र परिवर्तित नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए, नये-नये आविष्कार होते जा रहे हैं और हम उन्हें तुरन्त स्वीकार कर लेते हैं, परन्तु अपने रीतिरिवाज उसके अनुसार परिवर्तित नहीं करते। आजकल मोटरकार, विद्युत-चालित रेलगाड़ी एवं अन्य तेज चलने वाले आवागमन के साधन हमने अपना लिए हैं परन्तु परदा प्रथा अभी भी स्थापित है। बम्बई में मैंने देखा कि प्लेटफार्म पर विद्युत-चालित रेलगाड़ी बिजली के समान आयी और तूफान के समान चली गयी। परदाधारी स्त्रियाँ मुँह ताकती रह गयीं। ऐसा अनेक क्षेत्रों में होता है। जब संस्कृति के कुछ तत्त्व परिवर्तित हो जाते हैं और उनसे सम्बन्धित अन्य तत्त्व इन परिवर्तनों के अनुसार अपने को नहीं बना पाते, तो इस स्थिति को सांस्कृतिक बिलम्बना कहते हैं।

अधिकांश सामाजिक तनाव तथा विघटन अभौतिक संस्कृति का भौतिक संस्कृति के साथ पैर न मिला सकने के कारण होता है। जितनी मन्द गति से विचार परिवर्तित होते हैं, उतनी मन्द गति से कुछ भी परिवर्तित नहीं होता। विचार एक बार स्वीकार करने के उपरान्त बड़ी कठिनता से परिवर्तित होते हैं। लोग अपने विश्वासों की रक्षा के लिए प्राणों का भी बलिदान कर देते हैं। भौतिक सस्कृति के लाभ सरलता से समझ में आ जाते हैं। उदाहरण के लिए, बैलगाड़ी के स्थान पर मोटर और घोड़े के स्थान पर रेलगाड़ी हर व्यक्ति प्रयोग करना चाहेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधिकांश औद्योगिक अन्वेषण समाज में सांस्कृतिक विलम्बना को जन्म देते हैं, क्योंकि वे सामाजिक परिवर्तन होने के पूर्व ही समाज पर छा जाते हैं। इस परिस्थिति को एक और प्रकार से भी व्यक्त किया जा सकता है। प्रत्येक नवीन आविष्कार संस्कृति में अपना स्थान बना लेता है और ज्योंही वह अपना स्थान बनाता है, समाज इस नये तत्त्व के अनुसार विभिन्न परीक्षणों द्वारा अनुकूलन करने का प्रयत्न करता है। विभिन्न परीक्षण करके समाज अति उत्तम अनुकूलन खोज निकालता है। इस अति उत्तम अनुकूलन को खोजने में और विभिन्न परीक्षण करने में समय लगता है। यह प्रश्न किया जा सकता है कि इतना समय क्यों लगता है और क्या आविष्कार का पहला प्रयोग तुरन्त अनुकूलन को प्रदर्शित नहीं करता? यह सत्य है, परन्तु एक आविष्कार का प्रथम अनुकूलन उन सारे अनुकूलनों को प्रदर्शित नहीं करता जो अनेक संस्थाओं को करना चाहिए। इसे एक उदाहरण द्वारा सरलता से समझाया जा सकता है। एक कार का अन्वेषण हुआ। जैसे ही कोई इस कार में बैठा कि अनुकूलन हो गया। एक कार में बैठने का यह तात्पर्य नहीं है कि समाज ने पूर्ण अनुकूलन कर लिया, बल्कि यह तो अनुकूलन की प्रक्रिया का श्रीगणेश मात्र है। कार से अनुकूलन रेल, फैक्ट्री, सड़कें, पुलिस, अवकाश का आनन्द लेने वाले होटल, न्यायालय, राज्य, विद्यालय, बाजार, स्वास्थ्य विभाग और इसी प्रकार की अनेक सामाजिक समितियों द्वारा किया जाना शेष है। ये समितियाँ एकदम से अनुकूलन नहीं करतीं, बल्कि काफी समय लेती हैं। संस्कृति के एक आविष्कार से अनुकूलन करने में बहुत अधिक समय लेती हैं, जबकि उस आविष्कार का प्रयोग समाज तुरन्त करने लगता है।

वर्तमान समाज में टेलीफोन, मोटरकार, बेतार का तार, सिनेमा, विद्युत-चालित, कृषि यन्त्र, छपाई, फोटोग्राफी, विद्युत-वाहक हवाई जहाज, टेलीविजिन इत्यादि। आविष्कार सांस्कृतिक विलम्बना उत्पन्न करते हैं। ये सामाजिक संस्थाओं, रीतिरिवाजों और विचारधाराओं को प्रभावित करते हैं, जिसका परिणाम सामाजिक तनाव तथा विघटन होता है।

प्रश्न

1. सामाजिक परिवर्तन से आप क्या समझते हैं? सामाजिक परिवर्तन किस प्रकार सामाजिक तनाव उत्पन्न करते हैं?

(What do you understand by social change? How social change produce social tensions?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

50

भारतीय सामाजिक जीवन की कुछ वर्तमान समस्याएँ और उनको कम करने में सामाजिक वैज्ञानिकों की भूमिका

(Some Current Problems of Indian Social Life and Role of Social Scientists in Their Reduction)

भारतीय सामाजिक जीवन की कुछ महत्त्वपूर्ण वर्तमान समस्याएँ हैं—साम्प्रदायिकता (communalism), भाषावाद (linguism) प्रान्तवाद (provincialism), क्षेत्रवाद (regionalism), युवक विक्षोभ (youth unrest), भ्रष्टाचार (corruption), राष्ट्रीय एकता की समस्या (problem of national integration) आदि।

साम्प्रदायिकता (Communalism)—इस समस्या पर हम पहले ही प्रकाश डाल चुके हैं।

भाषावाद (Linguism)—भारत एक बहुत बड़ा देश है, इसलिए यहाँ अनेक भाषाएँ प्रचलित हैं। भाषाओं का होना और प्रचलन कोई समस्या नहीं है, परन्तु भारत में भाषावाद की समस्या खड़ी हो गयी है। भाषाओं के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन भी कर दिया गया है। पर राजनैतिक दलों एवं निहित स्वार्थों के कारण भाषा को लेकर विवाद खड़े होते रहते हैं। राष्ट्रभाषा हिन्दी के विरोध में आन्दोलन चलते रहते हैं। यह बड़ी गम्भीर समस्या है।

प्रान्तवाद (Provincialism)—भारत में प्रान्तवाद की समस्या भी बड़ी भयंकर है। प्रान्तवाद राजनीति, सामाजिक जीवन तथा प्रशासन सबमें घुसा हुआ है। प्रान्त के आधार पर अनेक पक्षपात किये जाते हैं। प्रान्तवाद के कारण राष्ट्रीय एकता में बड़ी बाधा पड़ती है। सांस्कृतिक एकीकरण के लिए प्रान्तवाद बड़ा घातक सिद्ध हो रहा है।

क्षेत्रवाद (Regionalism)—प्रान्तवाद के ही समान क्षेत्रवाद की भी समस्या है। एक प्रान्त में भी सब एक नहीं हैं। आन्ध्र प्रदेश में क्षेत्रवाद के आधार पर आजकल 'पृथक तैलंगाना' का आन्दोलन चल रहा है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

युवक क्षोभ (Youth Tensions) इस पर हम पीछे लिख चुके हैं।

भ्रष्टाचार (Corruption)—प्राचीन काल में भी भ्रष्टाचार का बोलबाला था ऐसा उस समय के साहित्य से मालूम होता है। परन्तु यह सत्य है कि उस समय भ्रष्टाचार इतना बढ़ा-चढ़ा नहीं था। उसका मुख्य कारण यह था कि पदाधिकारी वंशानुक्रमानुसार होते थे। उनके अधिकार भी उसी प्रकार (parental) होते थे। परन्तु आज के समय में, जहाँ गद्दी को नमस्कार किया जाता है, वहाँ हर पग पर भ्रष्टाचार देखने को मिलता है। भ्रष्टाचार पुलिसकर्मी, राजनैतिक, आर्थिक या व्यापार से सम्बन्धित हर क्षेत्र में पाया जाता है। इसके लिए सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि वास्तव में भ्रष्टाचार क्या है ?

भ्रष्टाचार की परिभाषा (Definition of Corruption)—एक बहुमुखी जटिल विषय को किसी सीमित क्षेत्र में बांधना आसान नहीं होता, अतः भ्रष्टाचार को भी इस दायरे में बाँधना उतना ही मुश्किल है। इसमें सभी प्रकार के लोग चाहे वे किसी भी कार्य से सम्बन्धित हों, जो कि कानून और नियम भंग करते हैं, आते हैं। ये श्वेत वस्त्रधारी अपराधी (white collar criminals) भी हो सकते हैं। उदाहरणार्थ, यदि किसी अनैतिक कार्य के लिए एक कर्मचारी केवल एक सिगरेट लेता है तथा दूसरा एक बड़ी रकम ले लेता है, तो भी तोनों ही बराबर दोषी हैं। दोनों ही भ्रष्टाचारी हैं। भ्रष्टाचार विरोध कमेटी (Committee on Prevention of Corruption) का मत है कि "शब्द के व्यापक स्वगुणार्थ (connatation) में, एक सार्वजनिक पद (office) अथवा जन-जीवन में उपलब्ध एक विशेष स्थिति (position) के साथ संलग्न शक्ति तथा प्रभाव का अनुचित या स्वार्थपूर्ण प्रयोग ही भ्रष्टाचार है।" जबकि प्रोफेसर मुहार का कहना है, "भ्रष्टाचार कई रूप धारण कर सकता है। इसका आशय राजनैतिक या अन्य किसी प्रकार के अनुचित प्रभाव (undue influence) का उपयोग सार्वजनिक कार्य तंग या अधिकारी (public funtionary) पर करना मात्र भी हो सकता है अथवा यह किसी अदृश्य पारिवारिक या जातिगत बन्धनों (bonds) का परिणाम भी हो सकता है और यह कुछ आर्थिक प्रलोभनों (financial inducements) के कारण भी हो सकता है। इसका स्वरूप कोई भी हो सकता है, किन्तु इसमें आवश्यक तत्त्व बाहरी ओर से उचित या साधारण प्रक्रिया (due process) को प्रभावित करने का प्रयास होता है। इसका परिणाम अल्प होता है भले ही प्रभाव सुधार (correction) कार्य-साधन या पृथक्करण (deprivation) की दशा में ही क्यों न हो।"[1]

भ्रष्टाचार के स्थान पर दूसरा शब्द 'अनुचित लाभ' (graft) का भी प्रयोग होता है। भ्रष्ट साधनों द्वारा अनुचित लाभ उठाना ही 'graft' कहलाता है। भ्रष्टाचार का ही विशेष रूप अनुचित लाभ (graft) है।

---

1 Mugar, P. S., "Corruption in the Public Services in India." Aspects of Administration, (Ed.) Avasthi, A. and Verma, S. N. (1964), p. 145.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भ्रष्टाचार के मुख्य कारण (Main Causes of Corruption)

(1) राजनैतिक संस्थाओं का विशाल रूप और प्रभाव (large area and approach of political parties);

(2) बड़े-बड़े व्यापारियों और राजनीतिज्ञों का आपसी गठबन्धन (close and mutual-connection between big buiseness man and politics);

(3) प्रजातन्त्र शासन में दल के समर्थकों को सार्वजनिक पद प्रदान करने का अनुमति (the spoil system of democratic government);

(4) सरकार के व्यापक क्रियाकलाप (expanding activities of the government);

(5) मूल्यों के उतार-चढ़ाव (change in values);

(6) मुद्रा अर्थव्यवस्था का प्रसारण (expansion of money economy);

(7) भ्रष्टाचार के उन्मूलन सम्बन्धा कार्य करने वाले किसी सक्षम संगठन का अभाव (lack of adequate machinery to deal with corruption)।

राष्ट्रीय एकता की समस्या
(Problem of National Integration)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हमारे उत्तरदायित्वों में वृद्धि हुई है। इन उत्तरदायित्वों के निभाने में हमारे सम्मुख अनेक समस्याएँ हैं। यदि इन समस्याओं का समाधान नहीं हुआ तो राष्ट्रहित या राष्ट्रीयता के मार्ग में एक अवरोध उत्पन्न होगा। इन विभिन्न समस्याओं में भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता के निर्माण की समस्या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कुछ विघटनकारी तत्त्व हमारी राष्ट्रीय एकता को नष्ट करने का प्रयत्न कर रहे हैं। अतः यह आवश्यक है कि राष्ट्र की अखण्डता, स्वतन्त्रता एवं प्रभुसत्ता की रक्षा एवं विकास के लिए यथाशीघ्र आवश्यक कदम उठाये जायें। आज राष्ट्र की सुरक्षा का भार केवल शासक और सैनिकों पर ही नहीं है। इसके लिए प्रबल राष्ट्रीय मनोबल की आवश्यकता है। जब तक देश का प्रत्येक निवासी धर्म, जाति, सम्प्रदाय, ऊँच-नीच का भेदभाव भूलकर यह अनुभव नहीं करता कि 'यह हमारा देश है, इसका सम्मान हमारा सम्मान है और इसका अपमान हमारा अपमान है', तब तक लाखों बलिदानों के बाद प्राप्त स्वतन्त्रता का हम ठीक उपभोग नहीं कर सकते। इसके लिए भाषा, जाति, धर्म, प्रादेशिकता आदि के नाम पर आधारित संकीर्ण भावना को दबाकर सद्भावना, प्रेम एवं बन्धुत्व के द्वारा राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने के लिए तैयार रहना आवश्यक है।

देश की भावात्मक और राष्ट्रीय एकता की स्थापना की समस्या पर जब हम ध्यान देते हैं तो कुछ तत्त्व स्पष्ट दिखायी देते हैं जो राष्ट्रीय एकता को कमजोर बनाने के लिए उत्तरदायी हैं। प्रथम यह कि देश को स्वतन्त्र हुए 25 वर्ष हो गये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु भारतीयों में अभी भी राष्ट्रीय भावना का अभाव दृष्टिगोचर होता है। महात्मा गाँधी ने अंग्रेजी शासन के विरुद्ध देशव्यापी स्वतन्त्रता आन्दोलन प्रारम्भ किया, जिसमें किसान, उद्योगपति, विद्यार्थी तथा वकील सभी के रगों में देश-प्रेम की लहर दौड़ गयी। परन्तु यह राष्ट्र-प्रेम की भावना भारतीयों के हृदय में जड़ न जमा सकी। फलतः स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्रीय भावना संकुचित स्वार्थों की पूर्ति के सम्मुख नष्ट-भ्रष्ट हो गयी। अभी हाल ही में ऐसे कुछ उदाहरण सामने आये जब देश के सभ्य एवं सुशिक्षित नागरिकों ने शत्रु देशों की गुप्तचरी की और सुरक्षा सम्बन्धी गुप्त बातों की सूचना शत्रु देशों के हाथ बेच दी। जिन-जिन देशों ने तीव्र गति से प्रगति की वहाँ के नागरिकों में प्रबल राष्ट्रीयता की भावना पायी गयी; जर्मनी, रूस, जापान, इटली, इंग्लैण्ड आदि देश इसके उदाहरण हैं।

राष्ट्रीय एकता की धारणा

राष्ट्रीय एकता में विभिन्न धार्मिक समूह हिन्दू, मुस्लिम, पारसी, ईसाई, क्षेत्रीय समूह (महाराष्ट्रियन, केरलाई, बंगाली, मद्रासी आदि) भाषायी समूह (पंजाबी, सिन्धी, गुजराती) एवं सामाजिक व सांस्कृतिक समूह (जातियाँ, जन-जातियाँ आदि) व्यक्तिगत कल्याण के लिए नहीं, बल्कि देश के कल्याण व उन्नति के लिए मिलकर कार्य करते हैं।

राष्ट्रीय एकता में बाधक कारक

देश के भूतपूर्व शिक्षामन्त्री डॉ. वी. के. आर. वी. राव ने पण्डित जवाहर लाल के इस कथन को दोहराते हुए देशवासियों को चेतावनी दी कि सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद और जातिवाद राष्ट्र के ये चार घोरतम शत्रु हैं। इनमें प्रत्येक का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है :

(1) **क्षेत्रवाद (Regionalism)**—क्षेत्रवाद के आधार पर प्रक्रियावादी और विघटनकारी शक्तियाँ देश के विशाल जनसमूह में प्रादेशिकता की भावनाओं के आधार पर फूट पैदा करते हैं। किसी भी फेडरल संविधान में राज्यों के पारस्परिक सम्बन्धों एवं केन्द्र और राज्य के मध्य असामंजस्य की समस्या उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है। भारत में यह सामंजस्य और भी सम्भव है, क्योंकि यहाँ राज्यों का निर्माण व संगठन भाषा के आधार पर हुआ है। इस संगठन में क्षेत्रीय संस्कृति को महत्त्व नहीं दिया गया जिसके परिणामस्वरूप कुछ राज्यों में असन्तोष उत्पन्न हुआ। यह असन्तोष ही आज बहुत से राज्यों के परस्पर संघर्ष का कारण है।

कुछ राज्य यह भी समझते हैं कि आर्थिक विकास एवं प्रौद्योगिक योजनाओं में उनकी उपेक्षा की जा रही है, इसलिए भी उनमें क्षेत्रवाद की भावना उत्पन्न हो जाती है। इसी प्रकार कृषि क्षेत्र में और बिजली के उपभोग में क्षेत्रीय विभेदीकरण मिलता है। सन् 1959-60 में भारत की कुल प्रयोग की गयी बिजली में से 60 प्रतिशत केवल उत्तर प्रदेश में उपयुक्त हुई।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन सब कारणों से क्षेत्रवाद की भावना बढ़ती है और राष्ट्रवाद या राष्ट्रीयता की भावना का लोप हो जाता है। इन्हीं कारणों से कुछ राज्यों में पृथक होने की माँग बढ़ती जा रही है। कुछ राजनैतिक दलों में भी क्षेत्रीय विकास की भावना अधिक मिलती है और राष्ट्रीय भावना कम मिलती है। राज्यों के आपसी मतभेद के अतिरिक्त दक्षिणी भारत और उत्तरी भारत में मतभेद देखा जाता है। दक्षिणी भारत के लोग यह सोचते हैं कि उत्तर के साथ पक्षपात हो रहा है।

(2) **भाषावाद (Linguism)**—राष्ट्रीय एकता में जितनी क्षेत्रवाद की समस्या गम्भीर है उतनी ही भाषावाद की समस्या भी जटिल है। भाषावाद से तात्पर्य है देश में पाये जाने वाले विभिन्न भाषायी समूहों द्वारा अपने भाषायी सांस्कृतिक जीवन को सुरक्षित रखने एवं विकसित करने के लिए प्रयत्नशील होना। भाषायी संघर्षों का उदाहरण सन् 1968-69 के अंग्रेजी विरोधी छात्र आन्दोलन को ले सकते हैं। हिन्दी भाषी राज्यों में अंग्रेजी का विरोध और दक्षिणी भारत में हिन्दी का विरोध। भारत में 25 से भी अधिक ऐसी भाषाएँ पायी जाती हैं जिनमें प्रत्येक को 5 लाख से भी अधिक व्यक्ति बोलते हैं। इनमें 9 भाषाएँ ऐसी हैं जिन्हें 1 करोड़ से भी ज्यादा लोग बोलते हैं। भाषाओं की भिन्नता के कारण राज्यों के संगठन की समस्या के साथ-साथ राज्य प्रशासन में क्षेत्रीय भाषा को अपनाने तथा शिक्षा का माध्यम बनाने के लिए भी समस्या उत्पन्न होती जा रही है।

(3) **सम्प्रदायवाद (Communalism)**—साम्प्रदायिकता भी राष्ट्रीय एकता में बाधक है। साम्प्रदायवाद धार्मिक समुदायों में कलह भेद और विवाद को प्रोत्साहित करता है। यह कलह हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों में अधिक मिलता है। हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगे आये दिन हुआ करते हैं। सम्प्रदायवाद धार्मिक संकीर्णता के कारण उत्पन्न होता है। साम्प्रदायिकता के कारण अपने सम्प्रदाय के प्रति निष्ठा और स्वार्थ की भावना पैदा हो जाती है और राष्ट्रीय एकता की भावना का लोप हो जाता है।

(4) **जातिवाद (Casteism)**—जातिवाद भी राष्ट्रीय एकता में बाधक है। जातिवाद द्वारा एक-भाषायी क्षेत्र भी अनेक टुकड़ों में विभक्त हो जाता है। जातिवाद में व्यक्ति अपनी जाति के प्रति निष्ठा रखता है। राजनीति एवं प्रशासन में भी जातिवाद का आदेश हो गया है। मतदान, विधान सम्बन्धी कार्यक्रम और यहाँ तक कि मन्त्रियों की नियुक्तियों में भी जातिवाद का प्रमुख तत्त्व पाया जाता है।

राष्ट्रीय एकता प्राप्ति के उपाय—देश में भावात्मक व राष्ट्रीय एकता प्राप्त करने एवं जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि भावनाओं को समाप्त करने के लिए भारत सरकार ने कुछ कानून बनाये जिनमें प्रमुख इस प्रकार हैं—शैक्षणिक संस्थाओं में धार्मिक उपदेश नहीं दिये जायेंगे; साम्प्रदायिक आधार पर मतदाताओं की सूची नहीं बनायी जायेगी; संसद व राज्य विधानसभाओं में चुनाव के लिए प्रत्येक निर्वाचन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2

क्षेत्र के लिए एक ही व्यापक मतदाता सूची होगी; प्रत्येक व्यक्ति को अपनी इच्छा-नुसार धार्मिक विचारों के मनन, चिन्तन व्याख्या और प्रचार करने की स्वतन्त्रता होगी सार्वजनिक स्थानों में उपयोग के लिए कोई धार्मिक, जातीय लिंगीय, भाषीय आदि भेदभाव नहीं होगा; लोक-सेवाओं में भर्ती में भाषा व प्रादेशिकता आदि के विभेद के विनाश के व्यक्तियों को बराबर अवसर प्राप्त होगे तथा शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश के लिए भेदभाव नहीं होगा इत्यादि ।

उपर्युक्त कानूनों द्वारा राष्ट्रीय एकता उत्पन्न करने का सरकार ने प्रयत्न किया। साथ ही एक राष्ट्रीय एकीकरण परिषद भी स्थापित किया, जिसका प्रमुख उद्देश्य आर्थिक विषमता और क्षेत्रीय विभेदों को दूर करने का उपाय ढूंढना है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय एकता में बाधक सम्प्रदायवाद, क्षेत्रवाद आदि को दूर करने के लिये तीन उपसमितियाँ स्थापित की हुई हैं : (i) साम्प्रदायवाद सम्बन्धों पर कमेटी, क्षेत्रीय विभेदीकरण की समस्याओं सम्बन्धी कमेटी और शैक्षणिक एवं जनसमूह संचार से सम्बन्धित कमेटी। इन उपसमितियों ने अपने निर्धारित उद्देश्यों से सम्बन्धित अनेक सुझाव दिये जिन्हें स्वीकार कर लिया गया और ये उपसमितियाँ अपने-अपने क्षेत्र में हमेशा क्रियाशील रहती हैं।

भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता के लिए समाज में धर्मनिर्पेक्षता (secularism) की भावना विकसित करना भी नितान्त आवश्यक है। राष्ट्रीय एकता की समस्या को दूर करने के लिए क्षेत्रवाद, भाषावाद और सम्प्रदायवाद को समाप्त करने के लिए ठोस कदम उठाये जायें। क्षेत्रवाद को समाप्त करने के लिए देश की अर्थव्यवस्था मे विभिन्न क्षेत्रों में सन्तुलित विकास, भाषावाद समाप्त करने के लिए विभिन्न भाषायी समूहों का इच्छानुसार समन्वय, जातिवाद को समाप्त करने के लिए जाति-प्रथा को शक्तिहीन बनाना और सभी धर्मों और सम्प्रदायों को समान स्थान देकर साम्प्रदायिकता समाप्त करना, राष्ट्रीय एकता के लिए आवश्यक कदम हैं।

समस्याएं और सामाजिक वैज्ञानिक की भूमिका
(Problems and Role of Social Scientists)

ऊपर हमने भारतीय सामाजिक जीवन की कुछ समस्याओं की ओर संकेत किया है। इन समस्याओं को कम करने या हल करने में सामाजिक वैज्ञानिकों की महत्त्वपूण भूमिका हो सकती है।

सर्वप्रथम इन समस्याओं के बाह्य अवलोकन से ही स्पष्ट है कि ये समस्याएँ सामाजिक-मनोविज्ञानिक (socio-psychological) पृष्ठभूमि लिये हुए हैं। समस्याएँ सामाजिक तो हैं ही, पर मनोवैज्ञानिक अधिक हैं।

सबसे पहला कार्य जा सामाजिक वैज्ञानिक इन समस्याओं को कम करने में कर सकते हैं, वह यह है कि इन समस्याओं का निष्पक्ष (objective) वैज्ञानिक अध्ययन करें और उन कारकों का पता लगायें जिनके कारण ये समस्याएँ विकसित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होती हैं और फलती-फूलती हैं। वैज्ञानिक अध्ययन के द्वारा ही इन समस्याओं का गहन अध्ययन किया जा सकता है। समय की शक्तियों से बिना डरे इनके कारण को स्पष्ट करना चाहिए। इन समस्याओं के अध्ययन के लिए अन्तर्विषयी दृष्टिको और विधि (inter-disciplinary point of view and method) अपनाने चाहिए जिससे कि हर पक्ष से समस्याओं का अध्ययन किया जा सके।

अध्ययन के उपरान्त उन मूलभूत तथ्यों का पता लगाना चाहिए जिनके कर से ये समस्याएं हल की जा सकती हैं। इस आधार पर इनको कम करने का ए व्यवस्थित कार्यक्रम बनाना चाहिए। सामाजिक वैज्ञानिक चूंकि इन पक्षों का वैज्ञानि अध्ययन करते हैं, इसलिए उनके लिए वह उपचार ढूंढ़ सकते हैं।

समाज वैज्ञानिकों के कथन का जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि यह प्रतिष्ठा-सुझाव का काम करेगा। प्रचार में भी समाज वैज्ञानिकों के नाम क प्रयोग लाभप्रद रहेगा।

समस्याएँ मानव प्रकृति, पूर्वधारणाओं, रूढ़ियुक्तियों और अभिवृत्तियों अधिक सम्बन्धित हैं। सामाजिक वैज्ञानिक अपने परीक्षणों के आधार पर इन परिवनर्तन लाने के तरीकों के विषय में सुझाव दे सकते हैं। इस प्रकार इन समस्याओं के हल करने के लिए वैज्ञानिक कार्यक्रम प्राप्त हो सकेगा।

प्रश्न

1. भारतीय सामाजिक जीवन की कुछ वर्तमान समस्याओं का उल्लेख कीजिए और बताइए कि सामाजिक वैज्ञानिकों की इनको कम करने में क्या भूमिका हो सकती है?

(Illustrate some current problems of Indian social life an show the role of social scientists in their reduction ?)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon